दुनिया के मजदूरो, एक हो !

माओ त्सेतुङ

की

संकलित रचनाएं

ग्रन्थ २

विदेशी भाषा प्रकाशन-गृह
पेकिङ १९७३

पहला संस्करण १९७३

यह ग्रन्थ जन प्रकाशन-गृह, पेकिङ द्वारा अगस्त १९५२ में प्रकाशित "माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ २ के चीनी संस्करण का हिन्दी अनुवाद है। विदेशी भाषा संस्करण की आवश्यकता के अनुसार नोटों में कुछ फेर-बदल किए गए हैं।

[illegible]
चीन लोक गणराज्य में मुद्रित

विषय-सूची

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का काल (१)

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का काल (१)

जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए नीतियां, उपाय और सम्भावनाएं*

२३ जुलाई १९३७

१. दो नीतियां

८ जुलाई को, लूकओछ्याओ घटना[1] के एक दिन बाद चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने समूचे राष्ट्र के नाम एक घोषणापत्र जारी किया जिसमें प्रतिरोध-युद्ध चलाने का आवाहन किया गया। घोषणापत्र का एक अंश इस प्रकार है :

> देशबन्धुओ ! पेफिङ और थ्येनचिन खतरे में हैं ! उत्तरी चीन खतरे में है ! चीनी राष्ट्र खतरे में है ! समूचे राष्ट्र द्वारा प्रतिरोध-युद्ध चलाया जाना ही एकमात्र रास्ता है। हमारी मांग है कि फौरन आक्रमणकारी जापानी सेनाओं का दृढ़ता से प्रतिरोध किया जाए तथा सभी प्रकार की संकटपूर्ण स्थितियों

---

*७ जुलाई १९३७ को जापानी साम्राज्यवादियों ने सशस्त्र शक्ति से समूचे चीन को हड़प लेने के लिए लूकओछ्याओ घटना रच डाली। समूची चीनी जनता ने एक स्वर से जापान के खिलाफ युद्ध करने की मांग की। लेकिन जब इस बात को दस दिन बीत गए तब कहीं च्याङ काई-शेक ने लूशान में विलम्बपूर्वक एक सार्वजनिक वक्तव्य के जरिए यह ऐलान किया कि जापान का सशस्त्र प्रतिरोध

का सामना करने के लिए फौरन तैयारियां की जाएं। ऊपर से नीचे तक समूचे राष्ट्र को चाहिए कि वह जापानी आक्रमणकारियों के सामने घुटने टेककर कायम की गई शान्ति की स्थिति में रहने का विचार फौरन त्याग दे। देशबन्धुओ! हमें फङ्‌ च-श्रान की फौजों द्वारा किए गए वीरतापूर्ण प्रतिरोध की सराहना करनी चाहिए और उसका समर्थन करना चाहिए। हमें उत्तरी चीन के स्थानीय अधिकारियों के इस ऐलान की कि वे आखिरी दम तक अपनी मातृभूमि की रक्षा करेंगे, सराहना करनी चाहिए और उसका समर्थन करना चाहिए। हम मांग करते हैं कि जनरल सुङ चे-य्वान को चाहिए कि वह समूची २९वीं फौजी कोर[१] को फौरन गोलबन्द करे और उसे कार्यवाही के लिए मोर्चे पर भेज दे। नानकिङ स्थित केन्द्रीय सरकार से हम यह मांग करते हैं: २९वीं फौजी कोर की कारगर रूप से मदद

किया जाएगा। उसने ऐसा समूची जनता के दबाव के कारण तथा चीन में जापानी आक्रमण द्वारा बरतानवी व अमरीकी साम्राज्यवादियों के हितों पर और बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े पूंजीपतियों के वर्ग, जिनका प्रतिनिधित्व प्रत्यक्ष रूप से च्याङ काई-शेक करता था, के हितों पर की गई भारी चोट के परिणामस्वरूप किया। लेकिन साथ ही च्याङ काई-शेक सरकार ने जापानी आक्रमणकारियों से बातचीत जारी रखी और यहां तक कि उन तथाकथित शान्तिपूर्ण समझौतों को भी स्वीकार कर लिया जिन्हें जापानी आक्रमणकारियों ने स्थानीय अधिकारियों के साथ कर लिया था। जब जापानी आक्रमणकारियों ने १३ अगस्त को शांघाई पर एक बड़ा हमला किया और इस प्रकार च्याङ काई-शेक के लिए दक्षिण-पूर्वी चीन में अपना शासन कायम रखना असम्भव बना दिया, तब कहीं जाकर च्याङ काई-शेक को मजबूरन सशस्त्र प्रतिरोध करना पड़ा; लेकिन १९४४ तक च्याङ काई-शेक जापानी आक्रमणकारियों के साथ चोरी-छिपे सुलह करने की कोशिश करता रहा। प्रतिरोध-युद्ध के समूचे काल में च्याङ काई-शेक ने व्यापक लोकयुद्ध का, जिसमें समूची जनता को गोलबन्द किया जाता है, विरोध किया तथा जापान का निष्क्रिय प्रतिरोध करने और कम्युनिस्ट पार्टी व जनता का सक्रिय विरोध करने की प्रतिक्रियावादी नीति अपनाई; इस प्रकार उसकी कारगुजारियों ने उसके अपने लूशान वक्तव्य का पूर्ण उल्लंघन किया, जिसमें कहा गया था कि "जहां एक बार युद्ध छिड़ गया, तो हर व्यक्ति को, चाहे वह जवान हो या बूढ़ा, उत्तर में हो या दक्षिण में, जापान का प्रतिरोध करने और हमारी मातृभूमि की रक्षा करने की जिम्मेदारी उठा लेनी चाहिए।" कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस लेख में जिन दो नीतियों, दो तरह के उपायों और दो सम्भावनाओं की चर्चा की है, वे प्रतिरोध-युद्ध के दौरान कम्युनिस्ट पार्टी की कार्यदिशा और च्याङ काई-शेक की कार्यदिशा के बीच के संघर्ष को प्रतिबिम्बित करते हैं।

करो। जन-समुदाय के देशभक्तिपूर्ण आन्दोलनों पर से प्रतिबन्ध फौरन हटा लो तथा सशस्त्र प्रतिरोध के लिए जनता के उत्साह का पूर्ण विकास करो। देश की समस्त स्थल-सेना, नौसेना और वायु-सेना को कार्यवाही के लिए फौरन गोलबन्द करो। चीन में छिपे हुए सभी देशद्रोहियों और जापानी एजेंटों का फौरन सफाया कर दो और इस प्रकार हमारे पृष्ठभाग को मजबूत बनाओ। हम समूचे देश की जनता का आवाहन करते हैं कि वह जापान के विरुद्ध आत्मरक्षा के लिए चलाए जाने वाले पवित्र युद्ध में अपनी समूची शक्ति लगा दे। हमारे नारे ये हैं: पेपिङ, थ्येनचिन और उत्तरी चीन की हथियार उठाकर रक्षा करो! अपने खून की आखिरी बूंद बाकी रहने तक मातृभूमि की रक्षा करते रहो! समूची जनता, सरकार और सशस्त्र सेनाएं एक हो जाएं तथा जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने

के लिए एक सुदृढ़ लम्बी दीवार के रूप में एक राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करें! क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच घनिष्ठ सहयोग कायम हो जाए तथा वे दोनों ही जापानी आक्रमण-कारियों के नए हमलों का प्रतिरोध करें! जापानी आक्रमण-कारियों को चीन के बाहर खदेड़ दो!

यह एक नीति सम्बन्धी ऐलान है।

१७ जुलाई को श्री च्याङ काई-शेक ने लूशान में एक वक्तव्य जारी किया। प्रतिरोध-युद्ध की तैयारी की नीति प्रस्तुत करने वाला यह वक्तव्य, अनेक वर्षों के दौरान वैदेशिक मामलों के बारे में क्वोमिन्ताङ का पहला सही घोषणापत्र है, तथा परिणामस्वरूप इसका हमारे सभी देशबन्धुओं ने और खुद हमने भी स्वागत किया है। वक्तव्य में लूकओछ्याओ घटना के निपटारे के बारे में चार शर्तें बताई गई हैं:

(१) ऐसा कोई निपटारा नहीं होना चाहिए जो चीन की प्रभुसत्ता व प्रादेशिक अखण्डता का उल्लंघन करता हो; (२) हूपे और छाहाड़ प्रान्तों के प्रशासनिक ढांचे में कोई गैर-कानूनी परिवर्तन नहीं होना चाहिए; (३) दूसरे लोगों की मांग पर, केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त स्थानीय अफसरों को बरखास्त नहीं किया जाना चाहिए या उनके स्थान पर दूसरों को नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए; (४) जिस क्षेत्र में आजकल २६वीं फौजी कोर तैनात है, वहां दूसरों को हस्तक्षेप करने की इजाजत नहीं होनी चाहिए।

वक्तव्य के अन्त में कहा गया:

लूकओछ्याओ घटना के बारे में सरकार ने एक ऐसी नीति और एक ऐसे दृष्टिबिन्दु को अपनाया है जिन पर वह हमेशा कायम रहेगी। हम इस बात को समझते हैं कि जब समूचा राष्ट्र युद्ध में शामिल हो जाएगा तो अन्त तक बलिदान देने के लिए तैयार रहना होगा, तथा हमें इस बात की जरा भी आशा नहीं करनी चाहिए कि यह रास्ता आसान होगा। जहां एक बार युद्ध छिड़ गया, तो हर व्यक्ति को, चाहे वह जवान हो या बूढ़ा, उत्तर में हो या दक्षिण में, जापान का प्रतिरोध करने और हमारी मातृभूमि की रक्षा करने की जिम्मेदारी उठा लेनी चाहिए।

यह भी एक नीति सम्बन्धी ऐलान है।

यहां लूकओछ्याओ घटना के बारे में हमारे सामने दो ऐतिहासिक राजनीतिक ऐलान मौजूद हैं, एक कम्युनिस्ट पार्टी का और दूसरा क्वोमिन्ताङ का। इनमें एक बात समान रूप से मौजूद है: दोनों ही प्रतिरोध-युद्ध को दृढ़ता से चलाने का पक्षपोषण करते हैं तथा सुलह-समझौते करने और रियायतें देने का विरोध करते हैं।

जापानी आक्रमण का मुकाबला करने के लिए यह एक प्रकार की नीति है, सही नीति है।

लेकिन एक अन्य प्रकार की नीति अपनाए जाने की सम्भावना भी मौजूद है। पिछले चन्द महीनों में पेफिङ-थ्येनचिन क्षेत्र के देशद्रोहियों व जापान-परस्त तत्वों ने बहुत सरगर्मी दिखाई है, वे इस बात की कोशिश करते रहे हैं कि स्थानीय अधिकारी जापान

की मांगों के सामने झुक जाएं, वे प्रतिरोध-युद्ध को दृढ़ता से चलाने की नीति की जड़ काटते रहे हैं तथा सुलह-समझौते करने और रियायतें देने की पैरवी करते रहे हैं। ये बेहद खतरनाक लक्षण हैं।

सुलह-समझौते करने और रियायतें देने की नीति प्रतिरोध-युद्ध को दृढ़ता से चलाने की नीति के बिलकुल विपरीत है। अगर इस नीति को जल्दी ही न बदला गया तो पेफिङ, थ्येनचिन और समूचा उत्तरी चीन दुश्मन के कब्जे में चला जाएगा और समूचा राष्ट्र गम्भीर खतरे में पड़ जाएगा। हर आदमी को इससे सतर्क रहना चाहिए।

२९वीं फौजी कोर के देशभक्त अफसरो व सिपाहियो, एक हो जाओ! सुलह-समझौते करने और रियायतें देने का विरोध करो तथा दृढ़ता से सशस्त्र प्रतिरोध करो!

पेफिङ, थ्येनचिन और उत्तरी चीन के देशभक्त बन्धुओ, एक हो जाओ! सुलह-समझौते करने और रियायतें देने का विरोध करो तथा दृढ़ता से सशस्त्र प्रतिरोध करने का समर्थन करो!

समूचे देश के देशभक्त बन्धुओ, एक हो जाओ! सुलह-समझौते करने और रियायतें देने का विरोध करो तथा दृढ़ता से सशस्त्र प्रतिरोध करने का समर्थन करो!

श्री च्याङ काई-शेक और क्वोमिन्ताङ के सभी देशभक्त सदस्यो! हम उम्मीद करते हैं कि आप लोग अपनी नीति पर दृढ़ता से कायम रहेंगे, अपने वायदों को पूरा करेंगे, सुलह-समझौते करने और रियायतें देने का विरोध करेंगे, दृढ़ता से सशस्त्र प्रतिरोध करेंगे तथा इस प्रकार शत्रु के जुल्मों का जवाब अपनी करनी के जरिए देंगे।

देश की सभी सशस्त्र सेनाएं, जिनमें लाल सेना भी शामिल है, श्री च्याङ काई-शेक के ऐलान का समर्थन करें, सुलह-समझौते करने और रियायतें देने का विरोध करें तथा दृढ़ता से सशस्त्र प्रतिरोध करें!

हम कम्युनिस्ट पूरे दिल से और ईमानदारी के साथ अपने घोषणा-पत्र पर अमल कर रहे हैं, तथा साथ ही हम श्री च्याङ काई-शेक के ऐलान का भी दृढ़ता से समर्थन करते हैं; क्वोमिन्ताङ के सदस्यों और अपने सभी देशबन्धुओं के साथ मिलकर हम अपने खून की आखिरी बूंद बाकी रहने तक अपनी मातृभूमि की रक्षा करने को तैयार हैं; हम हर तरह की हिचकिचाहट, ढुलमुलपन, सुलह-समझौते या रियायत का विरोध करते हैं तथा दृढ़ता से सशस्त्र प्रतिरोध करते रहेंगे।

२. दो तरह के उपाय

प्रतिरोध-युद्ध को दृढ़ता से चलाने की नीति का मकसद हासिल करने के लिए यह आवश्यक है कि सिलसिलेवार अनेक उपाय अपनाए जाएं।

ये उपाय क्या हैं? इनमें मुख्य उपाय इस प्रकार हैं:

१. समूचे देश की तमाम सशस्त्र शक्तियों को गोलबन्द करो। हमारी २० लाख से ज्यादा स्थाई सशस्त्र सेनाओं को, जिनमें स्थल-सेना, नौसेना और वायु-सेना, केन्द्रीय सेना, स्थानीय सेना और लाल सेना शामिल हैं, गोलबन्द करो, तथा मुख्य सैन्य-शक्तियों को राष्ट्रीय प्रतिरक्षा-पंक्तियों पर फौरन भेज दो और कुछ सैन्य-शक्तियों

को पृष्ठभाग में व्यवस्था बनाए रखने के लिए रख छोड़ो। विभिन्न मोर्चों की कमान ऐसे जनरलों के हाथ में दो जो राष्ट्रीय हितों के प्रति वफादार हों। एक राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद बुलाओ जिसमें रणनीति सम्बन्धी फैसले किए जाएं तथा फौजी कार्यवाहियों में उद्देश्य की एकता कायम की जाए। फौज में राजनीतिक कार्य का रूपान्तर करो, ताकि अफसरों और सिपाहियों के बीच तथा सेना और जनता के बीच एकता कायम की जा सके। यह उसूल कायम करो कि छापामार युद्ध को रणनीतिक कार्य के एक पहलू का उत्तर-दायित्व निभाना चाहिए, तथा छापामार युद्ध और नियमित युद्ध के बीच समुचित तालमेल कायम करने की गारन्टी करो। सेना के बीच से देशद्रोहियों को निकाल बाहर करो। रिजर्व सैनिकों को पर्याप्त संख्या में बुला लो तथा उन्हें मोर्चे पर सेवा करने के लिए ट्रेनिंग दो। सशस्त्र सेनाओं के साज-सामान व सप्लाई की समुचित मात्रा में क्षतिपूर्ति करो। दृढ़ता से प्रतिरोध-युद्ध चलाने की आम नीति के अनुरूप, इन्हीं बातों के आधार पर अपनी फौजी योजनाएं बनाई जानी चाहिए। चीन की फौजों की तादाद कम नहीं है, लेकिन जब तक इन योजनाओं पर अमल नहीं किया जाएगा तब तक वे दुश्मन को परास्त नहीं कर पाएंगी। अगर राजनीतिक और भौतिक तत्वों को मिला दिया गया, तो हमारी सशस्त्र सेनाएं पूर्वी एशिया में अपराजेय हो जाएंगी।

२. समूची जनता को गोलबन्द करो। देशभक्तिपूर्ण आन्दोलनों पर से प्रतिबन्ध हटा लो, राजनीतिक बन्दियों को रिहा करो, "गण-राज्य को खतरे में डालने वाली कार्यवाहियों से निपटने के लिए आपत्कालीन आदेश"[३] तथा "प्रेस सेन्सरशिप विनियम"[४] को रद्द

करो, मौजूदा देशभक्तिपूर्ण संगठनों को कानूनी दर्जा दो, इन संगठनों को मजदूरों, किसानों, व्यापारियों और बुद्धिजीवियों में फैलाओ, आम जनता को आत्मरक्षा के लिए और सेना के साथ तालमेल बिठा कर की जाने वाली कार्यवाहियों के लिए हथियारबन्द करो। संक्षेप में, जनता को अपनी देशभक्ति प्रकट करने की आजादी दो। जनता और सेना अपनी संयुक्त शक्ति के जरिए जापानी साम्राज्यवाद पर घातक प्रहार करेंगी। इसमें सन्देह नहीं कि विशाल जन-समुदाय पर निर्भर रहे बिना किसी भी राष्ट्रीय युद्ध में विजय प्राप्त नहीं की जा सकती। अबीसीनिया के पतन[५] से हमें सचेत हो जाना चाहिए। जो कोई भी दृढ़ता से प्रतिरोध-युद्ध चलाने में ईमानदार है, वह इस बात को नजरअन्दाज नहीं कर सकता।

३. सरकारी ढांचे में सुधार करो। राजकीय मामलों का संयुक्त रूप से संचालन करने के लिए सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों के प्रतिनिधियों और सार्वजनिक नेताओं को सरकार में शामिल करो तथा सरकार के अन्दर छिपे हुए जापान-परस्त तत्वों और देश-द्रोहियों को निकाल बाहर करो, ताकि सरकार जनता के साथ एकरूप हो जाए। जापान का प्रतिरोध करना एक बेहद भारी कार्य है जिसे केवल चन्द व्यक्तियों द्वारा कतई पूरा नहीं किया जा सकता। अगर वे इस कार्य को केवल अपने ही हाथ में रखने पर अड़े रहे, तो इसे वे बिलकुल चौपट कर देंगे। अगर सरकार को एक सच्ची राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार बनना है, तो उसे आम जनता पर निर्भर रहना चाहिए तथा जनवादी केन्द्रीयता पर अमल करना चाहिए। उसमें जनवाद भी होना चाहिए और केन्द्रीयता भी; सिर्फ इसी तरह की सरकार अत्यन्त शक्तिशाली होती है। राष्ट्रीय एसेम्बली को

जनता का सच्चा प्रतिनिधि होना चाहिए ; उसे सत्ता का सर्वोच्च संगठन होना चाहिए, राज्य की मुख्य नीतियों को निर्धारित करना चाहिए तथा जापान का प्रतिरोध करने और देश को विनाश से बचाने के लिए नीतियों और योजनाओं का निर्णय करना चाहिए।

४. जापान-विरोधी विदेश नीति अपनाओ। जापानी साम्राज्यवादियों के लिए कोई अनुकूल स्थिति अथवा सुविधा मुहय्या न करो, इसके विपरीत उनकी जायदाद को जब्त कर लो, उनसे लिए हुए ऋण को रद्द कर दो, उनके गुर्गों को निकाल बाहर कर दो और उनके जासूसों को बाहर खदेड़ दो। सोवियत संघ के साथ तुरन्त एक फौजी व राजनीतिक संश्रय कायम करो तथा सोवियत संघ के साथ, जो एक अत्यन्त विश्वसनीय, अत्यन्त शक्तिशाली और जापान का प्रतिरोध करने में चीन की मदद करने की सबसे अधिक सामर्थ्य रखने वाला देश है, घनिष्ठ एकता कायम करो। जापान का प्रतिरोध करने के हमारे कार्य के लिए बरतानिया, अमरीका और फ्रांस की सहानुभूति प्राप्त करो, और उनकी मदद हासिल करो बशर्ते कि इससे हमारी प्रादेशिक भूमि अथवा प्रभुत्वाधिकारों को कोई हानि न पहुंचे। हमें जापानी आक्रमणकारियों को परास्त करने के लिए मुख्य रूप से अपनी खुद की शक्ति पर निर्भर रहना चाहिए ; लेकिन विदेशी सहायता को छोड़ा नहीं जा सकता, तथा एक अलगाववादी नीति से सिर्फ दुश्मन को ही फायदा होगा।

५. जनता के रहन-सहन में सुधार करने के लिए एक प्रोग्राम का ऐलान करो, तथा उस पर तुरन्त अमल करना शुरू कर दो। निम्नलिखित न्यूनतम बातों से आरम्भ करो : बेजा टैक्सों और तरह-तरह की लेवियों को खतम कर दो, जमीन का लगान कम कर दो, सूदखोरी पर अंकुश लगाओ, मजदूरों के वेतन बढ़ाओ, सिपाहियों व जूनियर अफसरों के रहन-सहन में सुधार करो, दफ्तरों के छोटे कर्मचारियों के रहन-सहन में सुधार करो, तथा प्राकृतिक विपत्तियों से पीड़ित लोगों की सहायता करो। इन नए कदमों को उठाने से जनता की क्रय-शक्ति बढ़ेगी तथा व्यापारिक और वित्तीय क्षेत्र में खुशहाली की स्थिति पैदा हो जाएगी, न कि देश की वित्त-व्यवस्था घोटाले में पड़ेगी, जैसा कि कुछ लोग तर्क करते हैं। इन नए कदमों को उठाने से जापान का प्रतिरोध करने की हमारी शक्ति असीमित रूप से बढ़ जाएगी तथा सरकार की बुनियाद मजबूत हो जाएगी।

६. शिक्षा को राष्ट्रीय प्रतिरक्षा की सेवा में लगा दो। वर्तमान शिक्षा-नीति और शिक्षा-व्यवस्था में आमूल परिवर्तन कर दो। वे तमाम काम जो फौरी न हों और वे तमाम उपाय जो उपयुक्त न हों, छोड़ दिए जाएं। समाचारपत्रों, पुस्तकों व पत्रिकाओं, फिल्मों, नाटकों, साहित्य व कला इन सभी को राष्ट्रीय प्रतिरक्षा की सेवा करनी चाहिए। देशद्रोहपूर्ण प्रचार पर पाबन्दी लगा देनी चाहिए।

७. जापान का प्रतिरोध करने वाली वित्तीय व आर्थिक नीतियों को अपनाओ। वित्तीय नीति का आधार यह उसूल होना चाहिए कि जिन लोगों के पास धन है वे धन दें तथा जापानी साम्राज्यवादियों और चीनी देशद्रोहियों की जायदाद को जब्त कर लिया जाए, तथा आर्थिक नीति का आधार यह उसूल होना चाहिए कि जापानी माल का बायकाट किया जाए और स्वदेशी माल को बढ़ावा दिया जाए—हर चीज का मकसद जापान का प्रतिरोध करना होना चाहिए। वित्तीय बोझ गलत उपायों की उपज है तथा जनता के हितों

की सेवा करने वाली नई नीतियों को अपनाकर उस पर अवश्य काबू पाया जा सकता है। यह कहना बिलकुल वाहियात है कि इतने विशाल प्रदेश तथा इतनी विशाल आबादी वाला देश वित्तीय और आर्थिक दृष्टि से असहाय है।

८. एक अभेद्य लम्बी दीवार के रूप में राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का निर्माण करने के लिए समूची चीनी जनता, सरकार और सशस्त्र सेनाओं को एकताबद्ध करो। सशस्त्र प्रतिरोध करने की नीति और उपर्युक्त उपायों पर अमल करना इसी संयुक्त मोर्चे पर निर्भर है। इसकी कुंजी है क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच घनिष्ठ सहयोग। सरकार, सशस्त्र सेनाओं, सभी राजनीतिक पार्टियों और समूची जनता को चाहिए कि वे दोनों पार्टियों के बीच इस प्रकार के सहयोग के आधार पर एकताबद्ध हो जाएं। इस नारे को कि "राष्ट्रीय संकट का मुकाबला करने के लिए सच्चे दिल से एकता कायम करो" महज रोचक शब्दावली तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए बल्कि शानदार कारनामों के रूप में भी प्रकट करना चाहिए। एकता सच्ची होनी चाहिए ; धोखाधड़ी से काम नहीं चलेगा। राजकीय मामलों का संचालन करने में अधिक विशाल-हृदयता और अधिक उदारता की भावना से काम लेना चाहिए। टुच्चे जोड़तोड़ों, ओछी तिकड़मों, नौकरशाही और आह्क्यू-वाद से कतई कोई फायदा नहीं होगा। ये सब शत्रु के खिलाफ बेकार हैं ही, अपने देशबन्धुओं के खिलाफ इन पर अमल करना तो बिलकुल ही हास्यास्पद है। हर चीज में बड़े और छोटे उसूल मौजूद रहते हैं तथा सभी छोटे उसूल बड़े उसूलों के मातहत होते हैं। हमारे देशबन्धुओं को चाहिए कि वे चीजों के बारे में बड़े उसूलों की रोशनी

में सावधानी से विचार करें, क्योंकि सिर्फ तभी वे अपने खुद के विचारों और अपनी कार्यवाहियों को उचित दिशा दे सकेंगे। आज जिस किसी के मन में एकता की सच्ची आकांक्षा मौजूद नहीं है, उसे रात की खामोशी में अपना दिल टटोलना चाहिए और जरा शर्म महसूस करनी चाहिए, चाहे कोई दूसरा उसकी निन्दा करे अथवा न करे।

दृढ़ता से सशस्त्र प्रतिरोध करने के लिए जिन उपायों की शृंखला की चर्चा ऊपर की गई है, उन्हें आठसूत्री कार्यक्रम का नाम भी दिया जा सकता है।

दृढ़ता से प्रतिरोध-युद्ध चलाने की नीति के साथ इन उपायों की शृंखला को भी अपनाया जाना चाहिए, अन्यथा विजय हरगिज प्राप्त नहीं की जा सकेगी तथा चीन के खिलाफ जापानी आक्रमण को कदापि खत्म नहीं किया जा सकेगा, जबकि जापान का विरोध करने में चीन अपने को असमर्थ पाएगा और वह भी अबीसीनिया जैसी हालत में पड़ने से बच नहीं सकेगा।

जो कोई भी दृढ़ता से प्रतिरोध-युद्ध चलाने की नीति को सच्चे दिल से अपनाना चाहता है, उसे उपायों की इस शृंखला को भी अमल में लाना चाहिए। और वह दृढ़ता से सशस्त्र प्रतिरोध करने का कार्य सच्चे दिल से करना चाहता है अथवा नहीं, इसे परखने की कसौटी यह है कि वह उक्त उपायों की शृंखला को स्वीकार करता है अथवा नहीं और अमल में लाता है अथवा नहीं।

उपायों की एक अन्य शृंखला भी है, जो हर लिहाज से इस शृंखला के विपरीत है।

सशस्त्र शक्तियों को पूर्ण रूप से गोलबन्द करने के बजाय उन्हें बेहरकत कर देना अथवा पीछे हटा लेना।

जनता को आजादी देने के बजाय उसका उत्पीड़न करना।

जनवादी केन्द्रीयता पर आधारित राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार के बजाय नौकरशाहों, दलाल-पूंजीपतियों और बड़े जमींदारों की तानाशाही सरकार कायम करना।

जापान का प्रतिरोध करने की विदेश नीति के बजाय जापान की चापलूसी करने की विदेश नीति अपनाना।

जनता के रहन-सहन को सुधारने के बजाय उसकी लूट-खसोट जारी रखना, जिससे वह उनके जुए के नीचे कराहती रहेगी और जापान का प्रतिरोध करने में असमर्थ हो जाएगी।

शिक्षा को राष्ट्रीय प्रतिरक्षा की सेवा में लगाने के बजाय उसे राष्ट्रीय गुलामी के लिए इस्तेमाल करना।

जापान का प्रतिरोध करने के लिए वित्तीय व आर्थिक नीतियां निर्धारित करने के बजाय उन्हीं पुरानी अथवा उनसे भी बदतर वित्तीय व आर्थिक नीतियों को जारी रखना जो दुश्मन को फायदा पहुंचाती हैं, न कि हमारे देश को।

जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का एक लम्बी दीवार के रूप में निर्माण करने के बजाय उसे गिरा देना अथवा बड़ी मक्कारी से बातें तो एकता की करना लेकिन उसे बढ़ाने के लिए कभी कोई कोशिश न करना।

उपायों का जन्म नीति से होता है। अगर नीति प्रतिरोध न करने की हो, तो सभी उपायों से प्रतिरोध न करना जाहिर होगा; यह सबक हमने पिछले छै वर्षों में सीखा है। अगर नीति दृढ़ता से प्रतिरोध-युद्ध चलाने की है, तो यह अनिवार्य हो जाता है कि समुचित उपायों की एक शृंखला – आठसूत्री कार्यक्रम को अपनाया जाए।

३. दो सम्भावनाएं

सम्भावनाएं क्या हैं? हर व्यक्ति इसी बात की फिक्र में है।

अगर पहली नीति अपनाई जाएगी और उपायों की पहली शृंखला लागू की जाएगी, तो यह सम्भावना निश्चित है कि जापानी साम्राज्यवाद को बाहर खदेड़ दिया जाएगा और चीन को मुक्ति प्राप्त हो जाएगी। क्या इसके बारे में अब भी सन्देह रह गया है? मैं समझता हूं, नहीं रह गया है।

अगर दूसरी नीति अपनाई जाएगी और उपायों की दूसरी शृंखला लागू की जाएगी, तो यह सम्भावना निश्चित है कि चीन पर जापानी साम्राज्यवादियों का कब्जा हो जाएगा और चीनी जनता को लद्दू जानवर और गुलाम बना दिया जाएगा। क्या इसके बारे में अब भी सन्देह रह गया है? मैं समझता हूं, इसमें भी कोई सन्देह नहीं रह गया है।

४. निष्कर्ष

यह आवश्यक है कि पहली नीति अपनाई जाए, उपायों की पहली शृंखला लागू की जाए तथा पहली सम्भावना के लिए प्रयत्न किया जाए।

यह आवश्यक है कि दूसरी नीति का विरोध किया जाए, उपायों की दूसरी शृंखला को ठुकरा दिया जाए तथा दूसरी सम्भावना से बचने की कोशिश की जाए।

क्वोमिन्ताङ के सभी देशभक्त सदस्यों और कम्युनिस्ट पार्टी

के सभी सदस्यों को एक हो जाना चाहिए तथा दृढ़ता के साथ पहली नीति पर चलना चाहिए, उपायों की पहली शृंखला को अपनाना चाहिए तथा पहली सम्भावना के लिए प्रयत्न करना चाहिए ; उन्हें दृढ़ता से दूसरी नीति का विरोध करना चाहिए, उपायों की दूसरी शृंखला को ठुकरा देना चाहिए तथा दूसरी सम्भावना से बचने की कोशिश करनी चाहिए।

सभी देशभक्त बन्धुओं, देशभक्त सशस्त्र सेनाओं और देशभक्त पार्टियों व ग्रुपों को एकदिल हो जाना चाहिए तथा दृढ़ता से पहली नीति पर चलना चाहिए, उपायों की पहली शृंखला को अपनाना चाहिए तथा पहली सम्भावना के लिए प्रयत्न करना चाहिए ; उन्हें दृढ़ता से दूसरी नीति का विरोध करना चाहिए, उपायों की दूसरी शृंखला को ठुकरा देना चाहिए तथा दूसरी सम्भावना से बचने की कोशिश करनी चाहिए।

राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध जिन्दाबाद !

चीनी राष्ट्र की मुक्ति जिन्दाबाद !

नोट

[1] ७ जुलाई १९३७ को जापानी आक्रमणकारी फौजों ने पेकिङ नगर के दक्षिण-पश्चिम में कोई १० किलोमीटर दूर लूकओछ्याओ स्थित चीनी फौजों पर हमला किया। समूचे देश की जनता के जापान-विरोधी आन्दोलन के प्रचण्ड उभार से प्रभावित होकर चीनी फौजों ने प्रतिरोध किया। इस घटना से जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की शुरुआत हो गई, जिसे चीनी जनता ने आठ वर्ष तक वीरतापूर्वक चलाया।

[2] २९वीं फौजी कोर, जो पहले फ़ङ य्वी-श्याङ के अधीन क्वोमिन्ताङ की उत्तर-पश्चिमी सेना का एक अंग थी, उस समय हपे और छाहाड़ प्रान्तों में तैनात थी। सुङ चे-य्वान उसका कमाण्डर और फ़ङ च-आन उसका डिवीजनल कमाण्डर था।

[3] क्वोमिन्ताङ सरकार ने तथाकथित "गणराज्य को खतरे में डालने वाली कार्यवाहियों से निपटने के लिए आपत्कालीन आदेश" ३१ जनवरी १९३१ को जारी किया था, जिसमें "गणराज्य के लिए खतरा पैदा करने" के झूठे आरोप का इस्तेमाल देशभक्तों व क्रान्तिकारियों पर जुल्म ढाने और उनकी हत्या करने के लिए किया गया। इस आदेश के अन्तर्गत जुल्म ढाने के बेहद खूंखार उपाय अपनाए गए।

[4] "प्रेस सेन्सरशिप विनियम" "प्रेस सेन्सरशिप के आम उपाय" का ही दूसरा नाम था, जिसे क्वोमिन्ताङ सरकार ने अगस्त १९३४ में जनता की आवाज को दबाने के लिए जारी किया था। उसने यह नियम बना दिया कि "तमाम अखबारों की पाण्डुलिपियां सेन्सरशिप के लिए भेजी जाएं"। इस विनियम के अन्तर्गत, क्वोमिन्ताङ क्षेत्रों के अखबारों में प्रकाशित होने वाली सभी पाण्डुलिपियों को जांच-पड़ताल के लिए क्वोमिन्ताङ के सेन्सर विभाग के पास भेजना पड़ता था जिन्हें मनमाने ढंग से काटने-छांटने या दबा देने का उसे हक हासिल था।

[5] देखिए : "जापानी-आक्रमण-विरोधी काल में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्य" का आठवां अंश ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए राष्ट्र की समूची शक्तियों को गोलबन्द करने का प्रयत्न करो*

२५ अगस्त १९३७

१ क. ७ जुलाई की लूकग्रोछ्याग्रो घटना चीन में लम्बी दीवार के दक्षिण में जापानी साम्राज्यवाद के भरपूर आक्रमण की शुरुआत थी। लूकग्रोछ्याग्रो में चीनी फौजों द्वारा दुश्मन से डटकर लोहा लिया जाना चीन के राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध-युद्ध की शुरुआत थी। जापानियों का धुंआंधार हमले करना, समूची जनता का अविचल संघर्ष करना, राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का जापान-प्रतिरोध की तरफ झुकाव होना, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा एक जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति का पुरजोर प्रतिपादन करना और उसे दृढ़ता से लागू करना, तथा इस नीति को राष्ट्रव्यापी समर्थन प्राप्त होना – इन सभी बातों ने चीनी अधिकारियों को मजबूर

---

* यह प्रचार-कार्य व आन्दोलन-कार्य की रूपरेखा है, जिसे कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के प्रचार-संगठनों के लिए अगस्त १९३७ में तैयार किया। इसे उत्तरी शेनशी के लोछ्वान नामक स्थान में हुई केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की विस्तृत मीटिंग में स्वीकार किया गया था।

कर दिया है कि वे १८ सितम्बर १९३१ की घटना के बाद से चली आई प्रतिरोध न करने की नीति को लूकओछ्याओ घटना के बाद सशस्त्र प्रतिरोध करने की नीति में बदल दें, तथा चीनी क्रान्ति को ९ दिसम्बर आन्दोलन के बाद की मंजिल से, यानी गृहयुद्ध बन्द करने और प्रतिरोध-युद्ध की तैयारी करने की मंजिल से आगे बढ़ाकर वास्तविक प्रतिरोध-युद्ध की मंजिल में पहुंचा दिया है। क्वोमिन्ताङ की नीति में हुए प्रारम्भिक परिवर्तन, जिनका प्रस्थान-बिन्दु शीआन घटना और क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी का तीसरा पूर्ण अधिवेशन था, जापान का प्रतिरोध करने के सवाल के बारे में श्री च्याङ काई-शेक द्वारा १७ जुलाई को लूशान में जारी किया गया वक्तव्य और उनके द्वारा राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए अपनाए गए अनेक उपाय, ये सभी काबिले तारीफ हैं। मोर्चे पर तैनात सभी सैनिकों ने, वे चाहे स्थल-सेना और वायु-सेना के हों अथवा स्थानीय फौजी यूनिटों के, बड़े साहस के साथ प्रतिरोध-युद्ध किया है और चीनी राष्ट्र की शौर्य-भावना का परिचय दिया है। राष्ट्रीय क्रान्ति के नाम पर, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी समूचे चीन के देशभक्त सैनिकों और बन्धुओं का हार्दिक अभिवादन करती है।

ख. लेकिन दूसरी तरफ, ७ जुलाई की लूकओछ्याओ घटना के बाद भी, क्वोमिन्ताङ अधिकारी १८ सितम्बर की घटना से चली आई अपनी गलत नीति पर अमल कर रहे हैं, सुलह-समझौते कर रहे हैं और रियायतें दे रहे हैं[1], देशभक्त सेनाओं के उत्साह पर पानी फेर रहे हैं तथा देशभक्त जनता के राष्ट्रीय पुनरुद्धार आन्दोलन का दमन कर रहे हैं। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि

पेफिङ और थ्येनचिन पर कब्जा करने के बाद जापानी साम्राज्य-वाद, अपनी खुद की बर्बर सैन्य-शक्ति पर निर्भर रहते हुए और साथ ही जर्मन और इटालवी साम्राज्यवाद का समर्थन प्राप्त करते हुए और बरतानवी साम्राज्यवाद के ढुलमुलपन और व्यापक मेहनतकश जन-समुदाय से क्वोमिन्ताङ के अलगाव का फायदा उठाते हुए, बड़े पैमाने पर आक्रमणात्मक कार्यवाही करने की नीति को आगे बढ़ाएगा, अपनी पहले से ही निर्धारित युद्ध-योजना का दूसरा और तीसरा कदम उठाएगा, तथा समूचे उत्तरी चीन और अन्य क्षेत्रों पर भीषण हमले करेगा। छाहाड़ और शांघाई में युद्ध की ज्वालाएं भड़क चुकी हैं। हमारी मातृभूमि को बचाने के लिए, शक्तिशाली आक्रमणकारियों के हमलों का प्रतिरोध करने के लिए, उत्तरी चीन व समुद्रतट की रक्षा करने के लिए और पेफिङ, थ्येनचिन व उत्तर-पूर्वी चीन को वापस लेने के लिए, समूची जनता और क्वोमिन्ताङ अधिकारियों को चाहिए कि वे उत्तर-पूर्वी चीन, पेफिङ व थ्येनचिन को गंवा बैठने की घटना से पूरी तरह सबक सीखें, अबीसीनिया के पतन से सबक सीखें और चेतावनी लें, सोवियत संघ द्वारा अतीत काल में अपने विदेशी शत्रुओं पर प्राप्त की गई विजयों[2] से सीखें, मैड्रिड की सफलतापूर्वक रक्षा करने[3] में स्पेन के वर्तमान अनुभव से सीखें, तथा मातृभूमि की रक्षा करने के लिए अन्त तक लड़ने के हेतु दृढ़ता से एकताबद्ध हो जाएं। अब से हमारा कार्य यह है : "प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए राष्ट्र की समूची शक्तियों को गोलबन्द करो", तथा इसे पूरा करने की कुंजी है क्वोमिन्ताङ की नीति में सम्पूर्ण और आमूल परिवर्तन करना। प्रतिरोध-युद्ध के मसले पर क्वोमिन्ताङ ने जो कदम आगे

बढ़ाया है, वह सराहनीय है ; यही वह चीज है जिसकी चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और समूचे देश की जनता बरसों से उम्मीद करती आई हैं, और हम लोग इसका स्वागत करते हैं। लेकिन क्वोमिन्ताङ ने जन-समुदाय को गोलबन्द करने और राजनीतिक सुधार करने जैसे मामलों के बारे में अपनी नीतियां अभी तक नहीं बदलीं। वह अब भी बुनियादी तौर पर इस बात के लिए राजी नहीं है कि जापान-विरोधी जन-आन्दोलन पर से पाबन्दी हटा ली जाए, और इस बात के लिए भी तैयार नहीं है कि सरकारी ढांचे में उसूली परिवर्तन कर दिया जाएगा, उसने अब भी जनता के रहन-सहन को सुधारने की नीति नहीं अपनाई तथा अब भी कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सहयोग करने में काफी ईमानदारी नहीं दिखाई। हमारे राष्ट्र के लिए जिन्दगी और मौत की इस नाजुक घड़ी में, यदि क्वोमिन्ताङ अपनी पुरानी लीक पर चलती रही और उसने अपनी उपरोक्त नीति को तुरन्त न बदला, तो इससे प्रतिरोध-युद्ध को भारी आघात पहुंचेगा। क्वोमिन्ताङ के कुछ सदस्यों का कहना है : "राजनीतिक सुधार विजय के बाद किए जाएं"। वे समझते हैं कि जापानी आक्रमणकारियों को केवल सरकार के सशस्त्र प्रतिरोध से ही परास्त किया जा सकेगा, लेकिन उनका खयाल गलत है। केवल सरकार द्वारा लड़े जाने वाले प्रतिरोध-युद्ध में चन्द लड़ाइयां जीतना तो मुमकिन है, लेकिन जापानी आक्रमणकारियों को मुकम्मिल तौर पर पछाड़ देना नामुमकिन है। यह सिर्फ तभी मुमकिन है जब समूचे राष्ट्र द्वारा पूर्ण सशस्त्र प्रतिरोध किया जाए। लेकिन इस प्रकार के युद्ध की यह मांग है कि क्वोमिन्ताङ की नीति में सम्पूर्ण और आमूल परिवर्तन किया जाए, तथा जापान का मुकम्मिल प्रतिरोध करने

के एक प्रोग्राम को, यानी राष्ट्रीय पुनरुद्धार के एक ऐसे प्रोग्राम को जिसे डा० सुन यात-सेन द्वारा क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग के प्रथम काल में व्यक्तिगत रूप से निर्धारित क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्तों और तीन महान नीतियों की भावना के अनुरूप तैयार किया गया, कार्यान्वित करने के लिए ऊपर से नीचे तक समूचे राष्ट्र द्वारा संयुक्त रूप से प्रयत्न किया जाए।

ग. चीनी कम्युनिस्ट पार्टी सच्चे दिल से क्वोमिन्ताङ के सामने, समूचे देश की जनता के सामने, समस्त राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों के सामने, सभी व्यवसायों की जनता के सामने और समस्त सैन्य-दलों के सामने, जापानी आक्रमणकारियों को पूरी तरह शिकस्त देने के उद्देश्य से, देश को बचाने का एक दससूत्री कार्यक्रम पेश करती है। उसे पक्का यकीन है कि इस कार्यक्रम को पूर्ण रूप से, ईमानदारी से और दृढ़ता से कार्यान्वित करके ही हमारी मातृभूमि की रक्षा की जा सकेगी और जापानी आक्रमणकारियों को शिकस्त दी जा सकेगी। वरना उन लोगों को जिम्मेदार ठहराया जाएगा जो टालमटोल से काम लेंगे और परिस्थिति को बिगड़ने देंगे ; जब एक बार देश का बेड़ा गर्क हो गया, तो पछताने और सिर धुनने से कोई फायदा नहीं होगा। दससूत्री कार्यक्रम इस प्रकार है :

१. जापानी साम्राज्यवाद का तख्ता उलट दो।

जापान के साथ राजनयिक सम्बन्ध तोड़ दो, जापानी अफसरों को बाहर निकाल दो, जापानी एजेन्टों को गिरफ्तार कर लो, चीन में जापानी जायदाद को जब्त कर लो, जापान से लिए हुए ऋण को रद्द कर दो, जापान के साथ की गई सन्धियों को रद्द कर

दो तथा जापानियों को पट्टे पर दी गई तमाम बस्तियों को वापस ले लो।

उत्तरी चीन और समुद्रतट की रक्षा करने के लिए आखिरी दम तक लड़ते रहो।

पेफिङ, थ्येनचिन और उत्तर-पूर्वी चीन को वापस लेने के लिए आखिरी दम तक लड़ते रहो।

जापानी साम्राज्यवादियों को चीन के बाहर खदेड़ दो।

हर तरह के ढुलमुलपन और सुलह-समझौते का विरोध करो।

२. समूचे देश की फौजी शक्ति को गोलबन्द करो।

समूची स्थल-सेना, नौसेना और वायु-सेना को राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध के लिए गोलबन्द करो।

विशुद्ध रक्षा करने की निष्क्रिय सामरिक नीति का विरोध करो तथा सक्रिय, स्वतंत्र सामरिक नीति को अपनाओ।

एक स्थाई राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद की स्थापना करो, जो राष्ट्रीय प्रतिरक्षा योजनाओं और सामरिक नीति के बारे में विचार-विमर्श और निर्णय करे।

जनता को हथियारों से लैस करो और जापान-विरोधी छापामार युद्ध का विकास करो ताकि मुख्य सैन्य-शक्तियों की कार्यवाहियों के साथ तालमेल कायम किया जाए।

सशस्त्र सेनाओं में अफसरों व सिपाहियों के बीच एकता कायम करने के लिए राजनीतिक कार्य में सुधार करो।

सेना और जनता के बीच एकता कायम करो तथा सेना की सरगर्मी का विकास करो।

उत्तर-पूर्व की जापान-विरोधी संयुक्त सेना का समर्थन करो तथा

दुश्मन के पृष्ठभाग को तहस-नहस कर दो।

प्रतिरोध-युद्ध में लड़ने वाले सभी सैन्य-दलों के साथ समानता का बरताव करो।

देश के सभी भागों में फौजी क्षेत्र कायम करो, समूचे राष्ट्र को युद्ध में शामिल होने के लिए गोलबन्द करो तथा इस प्रकार भाड़े के सैनिकों की व्यवस्था को कदम-ब-कदम अनिवार्य भरती की व्यवस्था में बदल दो।

३. समूचे देश की जनता को गोलबन्द करो।

देशद्रोहियों को छोड़कर, देश की समूची जनता को जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के लिए भाषण देने, प्रकाशन करने, सभा करने और संगठन कायम करने और हथियार उठाकर दुश्मन का मुकाबला करने की आजादी होनी चाहिए।

उन तमाम पुराने कानूनों व फरमानों को रद्द कर दो जो जनता के देशभक्तिपूर्ण आन्दोलनों पर अंकुश लगाते हैं, तथा नए क्रान्तिकारी कानून व फरमान जारी करो।

तमाम देशभक्त और क्रान्तिकारी राजनीतिक बन्दियों को रिहा कर दो तथा राजनीतिक पार्टियों पर से प्रतिबन्ध हटा लो।

समूचे देश की जनता को गोलबन्द हो जाना चाहिए, हथियार उठा लेने चाहिए और प्रतिरोध-युद्ध में शामिल हो जाना चाहिए। जिन लोगों के पास श्रम-शक्ति है वे श्रम-शक्ति दें, जिन लोगों के पास धन है वे धन दें, जिन लोगों के पास बन्दूकें हैं वे बन्दूकें दें, तथा जिन लोगों के पास ज्ञान है वे ज्ञान दें।

जातीय आत्मनिर्णय और स्वायत्त-शासन के उसूल के अनुरूप, मंगोल, ह्वेइ और अन्य अल्पसंख्यक जातियों को जापान के खिलाफ

मुश्तरका लड़ाई में शामिल होने के लिए गोलबन्द करो।

४. सरकारी ढांचे में सुधार करो।

एक ऐसी राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाओ जिसमें जनता के सच्चे प्रतिनिधि शामिल हों, और जिसमें एक सच्चा जनवादी संविधान स्वीकार किया जाए, जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के लिए नीतियों का निर्णय किया जाए तथा एक राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार चुनी जाए।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार को चाहिए कि वह सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों और जन-संगठनों के क्रान्तिकारियों को अपने अन्दर शामिल कर ले और जापान-परस्त तत्वों को बाहर निकाल दे।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार जनवादी केन्द्रीयता पर अमल करेगी, तथा जनवादी होने के साथ-साथ केन्द्रीय भी होगी।

राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने की क्रान्तिकारी नीतियों को अपनाएगी।

स्थानीय स्वशासन कायम करो, भ्रष्टाचारी अफसरों को बाहर निकाल दो तथा साफ-सुथरी हुकूमत की स्थापना करो।

५. जापान-विरोधी विदेश नीति अपनाओ।

उन तमाम देशों के साथ जो जापानी आक्रमण का विरोध करते हैं, आक्रमण-विरोधी संश्रय कायम करो और जापान-विरोधी पारस्परिक फौजी सहायता करार करो, बशर्ते कि इससे हमें अपने प्रदेश अथवा प्रभुत्वाधिकारों को न गंवाना पड़े।

अन्तरराष्ट्रीय शान्ति मोर्चे का समर्थन करो और जर्मनी, जापान व इटली के आक्रमणकारी मोर्चे का विरोध करो।

जापानी साम्राज्यवाद का मुकाबला करने के लिए कोरिया व जापान के मजदूर व किसान जन-समुदाय के साथ एकता कायम करो।

६. युद्धकालीन वित्तीय व आर्थिक नीतियों को अपनाओ।

वित्तीय नीति का आधार यह उसूल होना चाहिए कि प्रतिरोध-युद्ध का खर्चा चलाने के लिए, जिन लोगों के पास धन है, वे धन दें, तथा देशद्रोहियों की जायदाद को जब्त कर लिया जाए। आर्थिक नीति के अन्तर्गत प्रतिरक्षा उत्पादन को पुनर्व्यवस्थित करना चाहिए और उसका विस्तार करना चाहिए, देहाती अर्थव्यवस्था का विकास करना चाहिए तथा युद्धकालीन माल की दृष्टि से आत्मनिर्भर बनने की गारन्टी कर देनी चाहिए। चीनी वस्तुओं के इस्तेमाल को प्रोत्साहन दो और स्थानीय उत्पादनों को सुधारने की कोशिश करो। जापानी माल पर पूरी पाबन्दी लगा दो, मुनाफाखोर व्यापारियों को दबाओ और बाजार में सट्टेबाजी व तिकड़मबाजी पर पाबन्दी लगा दो।

७. जनता के रहन-सहन में सुधार करो।

मजदूरों, दफ्तर के कर्मचारियों और अध्यापकों की तथा जापान के खिलाफ लड़ने वाले सैनिकों की स्थिति में सुधार करो।

जापान के खिलाफ लड़ने वाले सैनिकों के परिवारों को तरजीह दो।

बेजा टैक्सों और तरह-तरह की लेवियों को खत्म कर दो।

लगान व सूद कम करो।

बेरोजगार लोगों की सहायता करो।

अनाज की सप्लाई का नियमन करो।

प्राकृतिक विपत्तियों से ग्रस्त लोगों की मदद करो।

८. जापान-विरोधी शिक्षा नीति को अपनाओ।

मौजूदा शिक्षा-व्यवस्था और पाठ्यक्रम को बदल दो और एक नई शिक्षा-व्यवस्था और पाठ्यक्रम पर अमल करो, जिसका मकसद जापान का प्रतिरोध करना और देश को बचाना हो।

९. देशद्रोहियों और जापान-परस्त तत्वों का सफाया कर दो तथा पृष्ठभाग को मजबूत बनाओ।

१०. जापान के खिलाफ राष्ट्रीय एकता कायम करो।

क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग के आधार पर, सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों, सभी व्यवसायों की जनता तथा सभी सैन्य-दलों के जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का निर्माण करो, ताकि प्रतिरोध-युद्ध का नेतृत्व किया जा सके, शुद्धहृदयता से एकता कायम की जा सके और राष्ट्रीय संकट का मुकाबला किया जा सके।

घ. यह अनिवार्य है कि केवल सरकार द्वारा ही सशस्त्र प्रतिरोध किए जाने की नीति का त्याग कर दिया जाए, तथा समूचे राष्ट्र द्वारा पूर्ण सशस्त्र प्रतिरोध किए जाने की नीति को अपनाया जाए। सरकार को जनता के साथ एकता कायम करनी चाहिए, डा० सुन यात-सेन की क्रान्तिकारी भावना को पूर्ण रूप से पुनर्स्थापित करना चाहिए, उक्त दससूत्री कार्यक्रम को कार्यान्वित करना चाहिए तथा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में पूर्ण विजय प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। अपने नेतृत्व में चलने वाले जन-समुदाय और सशस्त्र सेनाओं के साथ मिलकर, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी इस कार्यक्रम पर दृढ़ता से कायम रहेगी तथा प्रतिरोध-युद्ध की सबसे अगली पांतों में खड़ी रहेगी और अपने खून की आखिरी बूंद रहते

मातृभूमि की रक्षा करती रहेगी। अपनी अविचल नीति के अनुरूप चीनी कम्युनिस्ट पार्टी मुजरिमाना जापानी आक्रमणकारियों को शिकस्त देने और एक स्वाधीन, स्वतंत्र व खुशहाल नए चीन का निर्माण करने के लिए एक राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की सुदृढ़ लम्बी दीवार बनाने में क्वोमिन्ताङ और अन्य राजनीतिक पार्टियों के कन्धे से कन्धा मिलाकर खड़ी होने तथा उनके साथ एकता कायम करने को तैयार है। इस मकसद को हासिल करने के लिए हमें आत्मसमर्पण व सुलह-समझौते के देशद्रोहपूर्ण सिद्धान्तों का दृढ़ता से खण्डन करना चाहिए, तथा राष्ट्रीय पराजयवाद का दृढ़ता से मुकाबला करना चाहिए, जो यह कहता है कि जापानी आक्रमण-कारियों को शिकस्त देना असम्भव है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को पक्का यकीन है कि जापानी आक्रमणकारियों को निश्चित रूप से शिकस्त दी जा सकती है, बशर्ते कि उक्त दससूत्री कार्यक्रम को कार्यान्वित किया जाए। अगर हमारे देश के समस्त ४५ करोड़ देशबन्धु भरपूर शक्ति से प्रयत्न करेंगे, तो चीनी राष्ट्र की अन्तिम विजय निश्चित है!

जापानी साम्राज्यवाद का नाश हो!

राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध जिन्दाबाद!

स्वाधीन, स्वतंत्र और खुशहाल नया चीन जिन्दाबाद!

नोट

१ देखिए : "जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए नीतियां, उपाय और सम्भावनाएं" नामक लेख का शीर्षक-नोट।

¹ देखिए: "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) का इतिहास, संक्षिप्त कोर्स", अध्याय ८।

² १९३६ में फासिस्ट जर्मनी और इटली ने स्पेन के फासिस्ट युद्ध-सरदार फ्रेंको का इस्तेमाल करके स्पेन के खिलाफ एक आक्रमणकारी युद्ध छेड़ दिया। स्पेनी जनता ने जन-मोर्चा सरकार के नेतृत्व में, लोकशाही की रक्षा करने और आक्रमण का मुकाबला करने के लिए बड़ी बहादुरी से प्रतिरोध-युद्ध किया। इस समूचे युद्ध में स्पेन की राजधानी मैड्रिड की रक्षा की लड़ाई सबसे ज्यादा भीषण थी, जो अक्तूबर १९३६ में शुरू हुई और दो वर्ष पांच महीने तक जारी रही। मार्च १९३९ में मैड्रिड का पतन हो गया क्योंकि बरतानिया, फ्रांस और अन्य साम्राज्यवादी देशों ने "हस्तक्षेप न करने" की अपनी पाखण्डपूर्ण नीति के जरिए आक्रमणकारियों की मदद की तथा जन-मोर्चे में फूट पड़ गई।

उदारतावाद का विरोध करो

७ सितम्बर १९३७

हम सक्रिय विचारधारात्मक संघर्ष का समर्थन करते हैं क्योंकि यह एक ऐसा हथियार है जो हमारे संघर्ष के हित में पार्टी की एकता और क्रान्तिकारी संगठनों की एकता की गारन्टी कर देता है। हर कम्युनिस्ट और क्रान्तिकारी को चाहिए कि वह इस हथियार का उपयोग करे।

लेकिन उदारतावाद विचारधारात्मक संघर्ष से इनकार करता है और सिद्धान्तहीन शान्ति का समर्थन करता है; इस तरह यह एक सड़े-गले, अधकचरे रुख को जन्म देता है और पार्टी व क्रान्तिकारी संगठनों की कुछ इकाइयों और व्यक्तियों को राजनीतिक पतन की ओर ले जाता है।

उदारतावाद विभिन्न रूपों में सामने आता है।

यह मालूम होते हुए भी कि सम्बन्धित व्यक्ति स्पष्टत: गलत है, लेकिन चूंकि वह पुरानी जान-पहचान का है, एक ही इलाके का है, स्कूली दोस्त है, घनिष्ठ मित्र है, प्रियजन है, पुराना सहकर्मी है या पहले मातहत रह चुका है, इसलिए उससे सिद्धान्त के आधार पर तर्क न करना, बल्कि शान्ति और मित्रता बनाए रखने के लिए मामले को घिसटने देना। या फिर मामले को महज ऊपरी तौर पर

छू देना, उसका पूरी तरह समाधान न करना जिससे कि अच्छे सम्बन्ध बने रहें। नतीजे के तौर पर संगठन तथा सम्बन्धित व्यक्ति दोनों को नुकसान पहुंचाना। यह पहली किस्म का उदारतावाद है।

संगठन के सामने सक्रिय रूप से अपने सुझाव पेश न करके एकांत में गैर-जिम्मेदारी के साथ आलोचना करना। लोगों के मुंह पर तो कुछ न कहना लेकिन पीठ पीछे बुराई करना, या सभा में तो चुप्पी साधे रहना लेकिन बाद में अनाप-शनाप बकना। सामूहिक जीवन के सिद्धान्तों को कतई नजरअन्दाज करते हुए खुद अपनी मर्जी के मुताबिक चलना। यह दूसरी किस्म का उदारतावाद है।

किसी बात से अगर अपना सीधा ताल्लुक न हो, तो फिर उसकी तरफ से बिलकुल उदासीन हो जाना; यह अच्छी तरह जानते हुए कि क्या गलत है, उस बारे में कम से कम बोलना; दुनियादारी से काम लेना और अपनी चमड़ी बचाने की कोशिश करना तथा सिर्फ यह कोशिश करते रहना कि कहीं इलजाम अपने सर पर न आ जाए। यह तीसरी किस्म का उदारतावाद है।

आदेशों का पालन न करना बल्कि खुद अपनी राय को सर्वोपरि रखना। संगठन से अपने प्रति विशेष व्यवहार की मांग करना, पर उसके अनुशासन को मानने से इनकार करना। यह चौथी किस्म का उदारतावाद है।

एकता बढ़ाने, प्रगति करने या काम सुचारु रूप से चलाने के उद्देश्य से गलत विचारों के विरुद्ध संघर्ष या वाद-विवाद करने के बजाय व्यक्तिगत आक्षेप करना, झगड़ा मोल लेना, व्यक्तिगत शिकवे-शिकायतों को सामने लाना या बदला लेना। यह पांचवीं किस्म का उदारतावाद है।

गलत विचारों को सुनकर भी उनका विरोध न करना और यहां तक आगे बढ़ जाना कि क्रान्ति-विरोधी बातों को सुनकर भी उनके बारे में नेतृत्व को खबर तक न देना, बल्कि उन्हें चुपचाप बरदाश्त कर लेना, मानो कुछ हुआ ही न हो। यह छठी किस्म का उदारतावाद है।

जनता के बीच रहकर भी प्रचार और आन्दोलन न करना, अथवा भाषण न देना या जांच-पड़ताल और पूछताछ न करना, बल्कि जनता से कोई वास्ता ही न रखना, उसकी सुख-सुविधाओं की तरफ कतई ध्यान न देना; यह भूल जाना कि वह एक कम्युनिस्ट है और इस तरह व्यवहार करना मानो वह कोई मामूली सा गैर-कम्युनिस्ट हो। यह सातवीं किस्म का उदारतावाद है।

यह देखकर भी कि कोई जनता के हितों को नुकसान पहुंचा रहा है, क्रोध अनुभव न करना, ऐसे आदमी को मना न करना या न रोकना, अथवा उसे न समझाना-बुझाना, बल्कि उसे यह सब करने देना। यह आठवीं किस्म का उदारतावाद है।

बिना किसी निश्चित योजना या निर्देशन के बेमन से काम करना; लापरवाही से किसी न किसी तरह अपनी ड्यूटी पूरी करते जाना और जैसे-तैसे दिन बिता देना – "जब तक मैं बौद्ध भिक्षु हूं, घंटी बजाता रहूंगा।" यह नवीं किस्म का उदारतावाद है।

अपने बारे में ऐसा समझना कि मैंने क्रान्ति के लिए भारी योगदान किया है, बहुत तजरबेकार होने की शेखी बघारना, बड़े काम करने के अयोग्य होना मगर फिर भी छोटे कामों को हिकारत की नजर से देखना, काम के प्रति लापरवाह होना और अध्ययन में ढील आने देना। यह दसवीं किस्म का उदारतावाद है।

अपनी गलतियों को जानते हुए भी उन्हें सुधारने का प्रयास न करना और खुद अपने प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाना। यह ग्यारहवीं किस्म का उदारतावाद है।

हम उदारतावाद के और भी अनेक रूप गिना सकते हैं। लेकिन ये ग्यारह मुख्य हैं।

ये सब उदारतावाद के ही रूप हैं।

क्रान्तिकारी संगठनों के लिए उदारतावाद अत्यन्त हानिकारक होता है। उदारतावाद एक ऐसा घुन है जो एकता को खा जाता है, भाईचारे को कमजोर बना देता है, काम में निष्क्रियता ला देता है और मतभेद पैदा कर देता है। यह क्रान्तिकारी पांतों को ठोस संगठन व कठोर अनुशासन से वंचित कर देता है, नीतियों को पूर्णतया लागू होने से रोक देता है और पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली जनता को पार्टी-संगठनों से अलग कर देता है। यह एक हद दर्जे की बुरी प्रवृत्ति है।

उदारतावाद का जन्म निम्न-पूंजीपति वर्ग की स्वार्थपरता से होता है। यह व्यक्तिगत हितों को सर्वोपरि रखता है और क्रान्ति के हितों को दूसरा स्थान देता है, और यह स्थिति विचारधारात्मक, राजनीतिक व संगठनात्मक उदारतावाद को उत्पन्न कर देती है।

उदारतावादी लोग मार्क्सवाद के सिद्धान्तों को महज खोखले अड़सूत्रों के रूप में देखते हैं। वे मार्क्सवाद को स्वीकार तो करते हैं, लेकिन उस पर अमल करने या पूर्णतया अमल करने के लिए तैयार नहीं होते। वे अपने उदारतावाद को हटाकर मार्क्सवाद को अपनाने के लिए तैयार नहीं होते। ऐसे लोगों के पास मार्क्सवाद होता तो है, किन्तु साथ ही साथ उनके पास उदारतावाद भी होता

है – वे बातें तो मार्क्सवाद की करते हैं पर अमल उदारतावाद पर करते हैं; वे दूसरों पर तो मार्क्सवाद लागू करते हैं, और खुद अपने लिए उदारतावाद बरतते हैं। उनके झोले में दोनों ही तरह का माल रहता है, जहां जैसा मौका देखा वहां उस तरह का माल भिड़ा दिया। कुछ लोगों का दिमाग इसी तरह काम करता है।

उदारतावाद अवसरवाद का ही एक रूप है और मार्क्सवाद का उससे बुनियादी विरोध है। उसका स्वरूप नकारात्मक है और वस्तुगत रूप में वह शत्रु के लिए सहायक बन जाता है; यही कारण है कि शत्रु हमारे बीच उदारतावाद के बने रहने का स्वागत करता है। जब उसका स्वरूप इस तरह का है, तो फिर क्रान्तिकारी पांतों में उसे कोई जगह नहीं मिलनी चाहिए।

उदारतावाद पर, जो एक नकारात्मक भावना है, विजय पाने के लिए हमें मार्क्सवाद का, जो एक सकारात्मक भावना है, इस्तेमाल करना चाहिए। एक कम्युनिस्ट का हृदय विशाल होना चाहिए और उसे निष्ठावान व सक्रिय होना चाहिए, क्रान्ति के हितों को उसे अपने प्राणों से भी ज्यादा मूल्यवान समझना चाहिए और अपने व्यक्तिगत हितों को क्रान्ति के हितों के मातहत रखना चाहिए; उसे हर जगह और हमेशा सही सिद्धान्तों पर डटे रहना चाहिए और सभी गलत विचारों और कामों के विरुद्ध अथक संघर्ष चलाना चाहिए ताकि पार्टी की सामूहिक जिन्दगी और अधिक ठोस बने तथा पार्टी और जन-समुदाय के बीच की कड़ियां और अधिक मजबूत हों; उसे किसी व्यक्ति-विशेष से अधिक पार्टी और जन-समुदाय की चिन्ता होनी चाहिए और अपने से अधिक दूसरों का

ध्यान रखना चाहिए। सिर्फ तभी उसे एक कम्युनिस्ट माना जाएगा।

तमाम वफादार, ईमानदार, सक्रिय व सच्चे कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे एकताबद्ध होकर हमारे बीच कुछ लोगों के अन्दर पैदा हुई उदारतावादी प्रवृत्तियों का विरोध करें और उन्हें सही रास्ते पर ले आएं। यह विचारधारात्मक मोर्चे पर हमारे कार्यों में से एक है।

क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग की स्थापना के बाद फौरी कार्य

२९ सितम्बर १९३७

काफी पहले १९३३ में ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने घोषणा की थी कि वह क्वोमिन्ताङ सेना के किसी भी हिस्से के साथ इन तीन शर्तों पर जापान-विरोधी समझौता करने को तैयार है कि लाल सेना पर होने वाले आक्रमण को बन्द कर दिया जाए, जनता को आजादी दी जाए और जनता को हथियारबन्द किया जाए। यह घोषणा इसलिए की गई थी क्योंकि १८ सितम्बर १९३१ की घटना के बाद जापानी साम्राज्यवादी आक्रमण का प्रतिरोध करना चीनी जनता का प्राथमिक कार्य बन गया था। लेकिन हम अपने उद्देश्य सफल न हो पाए।

अगस्त १९३५ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी लाल सेना ने सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों तथा तमाम देशबन्धुओं का आवाहन किया कि वे एक साथ मिलकर जापानी साम्राज्यवाद का मुकाबला करने के लिए एक जापान-विरोधी संयुक्त सेना तथा राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार संगठित करें।[1] उसी वर्ष दिसम्बर में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के साथ मिलकर जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा गठित करने के सम्बन्ध में

एक प्रस्ताव[२] स्वीकृत किया। मई १९३६ में लाल सेना ने एक खुला तार[३] प्रकाशित किया जिसमें नानकिङ सरकार से गृहयुद्ध बन्द करने और जापान का मुश्तरका प्रतिरोध करने की मांग की गई थी। उसी वर्ष अगस्त में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के पास एक पत्र[४] भेजा जिसमें क्वोमिन्ताङ से यह मांग की गई कि जापानी साम्राज्यवाद का मिलकर प्रतिरोध करने के लिए गृहयुद्ध बन्द कर दिया जाए और दोनों पार्टियों का एक संयुक्त मोर्चा बनाया जाए। उसी वर्ष सितम्बर में कम्युनिस्ट पार्टी ने चीन में एकीकृत जनवादी गणराज्य की स्थापना के बारे में एक प्रस्ताव[५] पास किया। उपर्युक्त घोषणा, खुले तार, पत्र और प्रस्तावों के अलावा हमने अनेक अवसरों पर क्वोमिन्ताङ के लोगों से बातचीत चलाने के लिए अपने प्रतिनिधि भेजे। लेकिन यह सब निष्फल रहा। शीआन घटना के बाद ही, १९३६ के अन्त में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के पूर्णाधिकारी प्रतिनिधि और क्वोमिन्ताङ के प्रमुख जिम्मेदार व्यक्ति के बीच उस समय के एक महत्वपूर्ण राजनीतिक मसले पर, यानी दोनों पार्टियों के बीच गृहयुद्ध को बन्द करने के सवाल पर, समझौता हो सका, और शीआन घटना का शान्तिपूर्ण समाधान निकाला जा सका। चीन के इतिहास में यह एक भारी महत्व की बात थी। इसके फलस्वरूप दोनों पार्टियों के बीच फिर से सहयोग कायम होने के लिए पूर्वशर्त तैयार हो गई।

इसी वर्ष १० फरवरी को, क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण अधिवेशन के ऐन पहले, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने दोनों पार्टियों के बीच ठोस सहयोग कायम

करने के लिए एक तार[६] के जरिए पूर्ण अधिवेशन के सामने एक सुव्यवस्थित प्रस्ताव रखा। उस तार में हमने मांग की कि क्वोमिन्ताङ कम्युनिस्ट पार्टी को निम्नलिखित पांच बातों का आश्वासन दे: गृहयुद्ध बन्द करना, जनवादी आजादी प्रदान करना, राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाना, जापान का प्रतिरोध करने की तैयारियों को तेज करना और जनता की जीवन-स्थिति में सुधार करना। साथ ही कम्युनिस्ट पार्टी ने क्वोमिन्ताङ को निम्नलिखित चार बातों का आश्वासन दिया: दोनों शासन-व्यवस्थाओं के बीच की शत्रुता खत्म करना, लाल सेना का फिर से नामकरण करना, क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में नव-जनवादी व्यवस्था को लागू करना और जमींदारों की जमीन की जब्ती को बन्द कर देना। यह भी एक महत्वपूर्ण राजनीतिक कदम था, क्योंकि इसके बिना दोनों पार्टियों के बीच सहयोग कायम करने में विलम्ब होगा, जो जापान का प्रतिरोध करने की तैयारी तेज करने में पूरी तरह हानिकारक सिद्ध होगा।

इसके बाद से दोनों ही पार्टियां अपनी समझौता-वार्ता में एक दूसरे के एक कदम और निकट आ गई हैं। कम्युनिस्ट पार्टी ने दोनों ही पार्टियों के मुश्तरका राजनीतिक कार्यक्रम के सम्बन्ध में, जन-आन्दोलन पर से प्रतिबन्ध हटाने और राजनीतिक बन्दियों की रिहाई के सम्बन्ध में तथा लाल सेना का फिर से नामकरण करने के सम्बन्ध में और भी ठोस सुझाव दिए हैं। अभी तक मुश्तरका कार्यक्रम जारी नहीं किया गया, न ही जन-आन्दोलन पर से प्रतिबन्ध हटाया गया है और न क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में स्थापित नई व्यवस्था को मान्यता दी गई है। अलबत्ता, पेकिङ और थ्येनचिन के पतन के लगभग एक महीने बाद यह आदेश निकाला गया है कि

लाल सेना का नाम राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना की आठवीं राह सेना रख दिया जाए (जापान-विरोधी समर-व्यवस्था में इसे अठारहवीं ग्रुप-सेना भी कहा जाता है)। दोनों पार्टियों के बीच सहयोग की स्थापना के सम्बन्ध में हमारी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की घोषणा, जिसे क्वोमिन्ताङ के पास १५ जुलाई को ही भेज दिया गया था, और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को कानूनी मान्यता देने के सम्बन्ध में च्याङ काई-शेक का वक्तव्य, जिसे पहले की सहमति के अनुसार घोषणा के साथ-साथ प्रकाशित होना था, इन दोनों को एक लम्बे अरसे के विलम्ब के बाद—यह विलम्ब निस्सन्देह खेदजनक है—आखिरकार क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय समाचार-एजेन्सी ने २२ और २३ सितम्बर को क्रमशः तब प्रकाशित किया जब अग्रिम मोर्चे पर हालत बिलकुल नाजुक हो चुकी थी। कम्युनिस्ट पार्टी की घोषणा तथा च्याङ काई-शेक के वक्तव्य ने दोनों पार्टियों के बीच सहयोग की स्थापना का ऐलान कर दिया और दोनों पार्टियों द्वारा संयुक्त रूप से राष्ट्र को बचाने के महान लक्ष्य के लिए आवश्यक बुनियाद डाल दी। कम्युनिस्ट पार्टी की घोषणा में न केवल दोनों पार्टियों के बीच एकता का उसूल निहित है, बल्कि उसमें समूचे देश की जनता की महान एकता का बुनियादी उसूल भी निहित है। यह एक अच्छी बात है कि च्याङ काई-शेक ने अपने वक्तव्य द्वारा पूरे चीन में कम्युनिस्ट पार्टी को कानूनी मान्यता दी है और राष्ट्र को बचाने के लिए एकता की आवश्यकता की बात कही है; फिर भी उसने क्वोमिन्ताङी अहंकार को नहीं त्यागा है और न किंचित आवश्यक आत्म-आलोचना ही की है, और हमें इससे सन्तोष नहीं है। फिर भी, दोनों पार्टियों के बीच संयुक्त मोर्चे

की स्थापना की घोषणा कर दी गई है। चीनी क्रान्ति के इतिहास में इससे एक नए युग का सूत्रपात हुआ है। चीनी क्रान्ति पर इसका व्यापक और गहरा प्रभाव पड़ेगा और जापानी साम्राज्यवाद को हराने में यह निर्णायक भूमिका अदा करेगा।

१९२४ से ही क्वोमिन्ताङ और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के बीच के सम्बन्धों ने चीनी क्रान्ति में निर्णायक भूमिका अदा की है। १९२४-२७ की क्रान्ति एक निश्चित कार्यक्रम के आधार पर दोनों ही पार्टियों के बीच के सहयोग का परिणाम थी। केवल दो-तीन वर्षों में ही उस राष्ट्रीय क्रान्ति ने महान सफलताएं प्राप्त कीं जिसके लिए डा० सुन यात-सेन ने अपने जीवन के चालीस वर्ष अर्पित किए थे और जो फिर भी अधूरी रह गई थी। क्वाङतुङ में क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र की स्थापना और उत्तरी अभियान में प्राप्त विजय इसी क्रान्ति की सफलताएं थीं। ये सफलताएं दोनों पार्टियों के संयुक्त मोर्चे की स्थापना का ही फल थीं। लेकिन ऐन ऐसे मौके पर जब क्रान्ति विजय के निकट थी, कुछ लोगों ने, जो क्रान्तिकारी उद्देश्य के हामी न थे, दोनों पार्टियों के संयुक्त मोर्चे को तोड़ दिया और इस प्रकार उन्होंने क्रान्ति को असफल बना दिया तथा विदेशी आक्रमण के लिए दरवाजा खुला छोड़ दिया। यह दोनों पार्टियों के संयुक्त मोर्चे के टूटने का ही परिणाम था। अब दोनों पार्टियों के बीच स्थापित नए संयुक्त मोर्चे ने चीनी क्रान्ति के लिए एक नए युग का सूत्रपात कर दिया है। अभी भी कुछ ऐसे लोग हैं जो संयुक्त मोर्चे की ऐतिहासिक भूमिका और उसके महान भविष्य को नहीं समझते और इसे केवल परिस्थिति-जन्य सामयिक कामचलाऊ साधन-मात्र समझते हैं। लेकिन, इस संयुक्त मोर्चे के द्वारा, इतिहास

का रथ-चक्र चीनी क्रान्ति को एक बिलकुल ही नई मंजिल पर पहुंचा देगा। चीन अपने को इतने गम्भीर राष्ट्रीय और सामाजिक संकट से निकाल पाएगा या नहीं, यह इस बात पर निर्भर है कि इस संयुक्त मोर्चे का विकास किस प्रकार होता है। इस बात की अच्छी-खासी सम्भावनाओं के सम्बन्ध में नए तथ्य सामने आए हैं। पहला तथ्य तो यह है कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा ज्यों ही संयुक्त मोर्चे की नीति पेश की गई, सारे देश की जनता ने उसकी पुष्टि कर दी। यह जनता की प्रबल आकांक्षा की स्पष्ट अभिव्यक्ति है। दूसरा तथ्य यह है कि शीआन घटना को शान्तिपूर्वक हल करने और दोनों पार्टियों के बीच गृहयुद्ध बन्द करने के फौरन बाद, देश की सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों, सभी व्यवसायों के लोगों और सभी सशस्त्र सेनाओं के बीच अभूतपूर्व एकता स्थापित हो गई है। अलबत्ता यह एकता जापान का प्रतिरोध करने की आवश्यकताओं को देखते हुए अभी भी बिलकुल नाकाफी है, खास तौर पर इसलिए कि सरकार और जनता के बीच एकता की समस्या अभी भी बुनियादी तौर पर हल नहीं हो सकी है। तीसरा तथ्य, जो कि सबसे ज्यादा उल्लेखनीय है, यह है कि राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध-युद्ध शुरू हो गया है। हम प्रतिरोध-युद्ध की मौजूदा स्थिति से सन्तुष्ट नहीं हैं, क्योंकि यद्यपि इसका स्वरूप राष्ट्रीय है, फिर भी यह अभी तक सरकार और सशस्त्र सेनाओं के दायरे तक ही सीमित है। जैसा कि हम बहुत पहले ही बता चुके हैं, इस प्रकार के प्रतिरोध-युद्ध के द्वारा जापानी साम्राज्यवाद को हराया नहीं जा सकता। लेकिन फिर भी पिछले सौ वर्षों में चीन पहली बार किसी विदेशी आक्रमण के विरुद्ध एक सच्चा राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध-युद्ध कर रहा है, और

ऐसी स्थिति अन्दरूनी शान्ति तथा दोनों पार्टियों के सहयोग के बिना नहीं आ सकती थी। अगर दोनों पार्टियों के संयुक्त मोर्चे के विघटन के दौरान जापानी आक्रमणकारी बिना एक भी गोली चलाए उत्तर-पूर्व के चार प्रान्तों पर अधिकार कर सकते थे, तो अब संयुक्त मोर्चे की पुनर्स्थापना के बाद वे बिना रक्त-रंजित लड़ाइयों के चीन की धरती पर किंचितमात्र भी अधिकार नहीं कर सकेंगे। चौथा तथ्य है अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर संयुक्त मोर्चे का प्रभाव। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की स्थापना करने का जो सुझाव रखा उसका सारी दुनिया के मजदूरों और किसानों तथा कम्युनिस्ट पार्टियों ने समर्थन किया है। क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच सहयोग की स्थापना के बाद विभिन्न देशों की जनता और विशेषकर सोवियत संघ चीन की और अधिक सक्रिय सहायता करेंगे। चीन और सोवियत संघ ने अनाक्रमण सन्धि[७] कर ली है, और आशा की जा सकती है कि इनके बीच के सम्बन्ध और अच्छे होंगे। इन सब तथ्यों के आधार पर हम निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि संयुक्त मोर्चे का विकास चीन को एक प्रकाशमय और महान भविष्य की ओर ले जाएगा, यानी जापानी साम्राज्यवाद की पराजय और एकीकृत जनवादी गणराज्य की स्थापना की ओर ले जाएगा।

किन्तु, संयुक्त मोर्चा इस महान कार्य को अपनी आज की स्थिति में पूरा न कर सकेगा। दोनों पार्टियों के संयुक्त मोर्चे को और अधिक विकसित करना चाहिए, क्योंकि अपनी मौजूदा स्थिति में यह काफी व्यापक और सुदृढ़ नहीं है।

क्या जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को क्वोमिन्ताङ

और कम्युनिस्ट पार्टी तक ही सीमित रहना चाहिए? नहीं, इसे समूचे राष्ट्र का संयुक्त मोर्चा होना चाहिए, और इन दोनों पार्टियों को तो केवल इसका अंगमात्र होना चाहिए। जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को तमाम पार्टियों व ग्रुपों, सभी व्यवसायों के लोगों और सभी सशस्त्र सेनाओं का संयुक्त मोर्चा होना चाहिए, तमाम देशभक्तों – मजदूरों, किसानों, सैनिकों, बुद्धिजीवियों और व्यापारियों – का संयुक्त मोर्चा होना चाहिए। सच तो यह है कि अभी तक यह संयुक्त मोर्चा दो पार्टियों तक ही सीमित रहा है, और व्यापक मजदूरों, किसानों, सैनिकों, शहरी निम्न-पूंजीपतियों और अन्य बहुत से देशभक्तों को अभी तक जागृत नहीं किया गया है, उन्हें अभी तक आन्दोलित, संगठित या हथियारबन्द नहीं किया गया है। वर्तमान काल में यह सबसे गम्भीर समस्या है। गम्भीर इसलिए कि इसके कारण लड़ाई के मोर्चे पर जीतें हासिल करना असम्भव हो जाता है। उत्तरी चीन और च्याङसू व चच्याङ प्रान्तों में लड़ाई के मोर्चों की गम्भीर स्थिति को अब और छिपाया नहीं जा सकता, न उसे छिपाने की आवश्यकता ही है; समस्या यह है कि स्थिति को सम्भाला कैसे जाए। सम्भालने का एक ही रास्ता है डा० सुन यात-सेन के वसीयतनामे पर अमल करना – "व्यापक जन-समुदाय को जागृत करना"। अपनी मृत्यु-शय्या पर की गई इस वसीयत में डा० सुन यात-सेन ने घोषणा की थी कि ४० वर्षों के अनुभव के आधार पर उन्हें यह पक्का विश्वास हो गया है कि सिर्फ इसी तरीके से क्रान्ति के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। इस वसीयतनामे पर अमल करने से हठपूर्वक इनकार करने का क्या कारण हो सकता है? जब राष्ट्र का भाग्य ही दांव पर लगा हो, उस समय

इस पर अमल करने का बीड़ा न उठाने का क्या कारण हो सकता है? हर व्यक्ति जानता है कि तानाशाही और दमन "व्यापक जन-समुदाय को जागृत करने" के उसूल के विरुद्ध हैं। महज सरकार और सेना द्वारा होने वाले प्रतिरोध से ही जापानी साम्राज्यवाद को कदापि नहीं हराया जा सकता। इस वर्ष मई में ही हमने सत्तारूढ़ क्वोमिन्ताङ को पूरी गम्भीरता से यह चेतावनी दी थी कि प्रतिरोध के लिए यदि व्यापक जन-समुदाय को आन्दोलित न किया गया तो चीन भी विनाश के उसी रास्ते पर जाएगा जिस पर अबीसीनिया गया। यह बात केवल चीनी कम्युनिस्टों ने ही नहीं बल्कि देशभर के प्रगतिशील लोगों और स्वयं क्वोमिन्ताङ के अनेक समझदार सदस्यों ने भी कही है। फिर भी एकतंत्री शासन की नीति अपरिवर्तित बनी हुई है। फलत: सरकार जनता से अलग है, सेना जनता से अलग है और सैनिक कमान साधारण सैनिकों से अलग-थलग है। संयुक्त मोर्चे में आम जनता को शामिल करके जब तक उसे नई शक्ति नहीं दी जाएगी तब तक अग्रिम मोर्चों पर संकट घटने की जगह अवश्यम्भावी तौर पर अधिक गहरा होता जाएगा।

क्वोमिन्ताङ की एकतंत्री शासन की नीति का स्थान लेने वाले एक राजनीतिक कार्यक्रम का अभाव अभी भी जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे के सामने है – ऐसा कार्यक्रम जिसे दोनों पार्टियों ने स्वीकृति प्रदान की हो और जिसे बाजाब्ता तौर पर जारी किया गया हो। जन-समुदाय के प्रति क्वोमिन्ताङ का व्यवहार पिछले १० वर्षों से एक जैसा चला आ रहा है; मोटे तौर पर, सरकारी ढांचे, सैन्य-व्यवस्था और नागरिकों के प्रति नीति से लेकर वित्तीय, आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी नीतियों तक इन सभी क्षेत्रों में पिछले

१० वर्षों से कोई परिवर्तन नहीं हुआ और सब कुछ ज्यों का त्यों बना हुआ है। परिवर्तन तो हुए हैं और वे काफी बड़े भी हैं—गृहयुद्ध को बन्द कर दिया गया है और जापान के विरुद्ध एकता कायम की गई है। दोनों पार्टियों ने गृहयुद्ध को बन्द कर दिया है और जापान के विरुद्ध राष्ट्रीय प्रतिरोध-युद्ध की शुरुआत भी हो चुकी है—ये शीआन घटना के बाद चीन के राजनीतिक मंच पर महान परिवर्तन के द्योतक हैं। लेकिन अभी तक व्यवहार की उपर्युक्त शृंखला में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, तथा जो चीजें बदली हैं और नहीं बदलीं उनमें असामंजस्य है। पुराना अमल तो विदेशी शक्तियों के साथ समझौता करने और देश के भीतर क्रान्ति को दबाने के लिए ही उपयुक्त है, जापानी साम्राज्यवादी आक्रमण का मुकाबला करने के लिए यह हर प्रकार से अनुपयुक्त है और इसमें तरह-तरह की अपर्याप्तताएं प्रकट हो जाती हैं। अगर हम जापान का प्रतिरोध न करना चाहते तो कहानी कुछ दूसरी ही होती ; लेकिन चूंकि हम प्रतिरोध करना चाहते हैं और वह वास्तव में शुरू भी हो चुका है, चूंकि एक गम्भीर संकट सामने आ चुका है, इसलिए नए अमल से इनकार करना एक अकल्पनीय, गम्भीरतम खतरे को ला खड़ा करेगा। जापान का प्रतिरोध करने की मांग है एक विशाल संयुक्त मोर्चा कायम करना, और इसलिए उसमें शामिल होने के लिए सारे देश की जनता को जत्थेबन्द करना चाहिए। जापान का प्रतिरोध करने की मांग है एक सुदृढ़ संयुक्त मोर्चा कायम करना, और उसके लिए आवश्यकता है एक मुश्तरका कार्यक्रम की। मुश्तरका कार्यक्रम संयुक्त मोर्चे के अमल का मार्गदर्शक होगा, और साथ ही उसका अनुशासनसूत्र भी होगा जो एक रस्सी की तरह, संयुक्त

मोर्चे में शामिल होने वाली सभी पार्टियों व ग्रुपों, सभी व्यवसायों के लोगों तथा सभी सशस्त्र सेनाओं को, यानी सभी संगठनों और व्यक्तियों को मजबूती से एक साथ बांधे रखेगा। सिर्फ इसी प्रकार हम सुदृढ़ एकता की बात कर सकते हैं। हम पुराने किस्म के अनुशासनसूत्रों के विरोधी हैं, क्योंकि वे राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध के लिए अनुपयुक्त हैं। पुराने अनुशासनसूत्रों के स्थान पर हम नए अनुशासनसूत्रों की आशा करते हैं—यानी मुश्तरका कार्यक्रम को जारी करना और क्रान्तिकारी व्यवस्था की स्थापना करना। अन्य कुछ भी प्रतिरोध-युद्ध के लिए उपयुक्त न होगा।

मुश्तरका कार्यक्रम क्या होना चाहिए? यह कार्यक्रम है डा० सुन यात-सेन के तीन जन-सिद्धान्त और इसी वर्ष २५ अगस्त को कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रस्तावित जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने का दससूत्री कार्यक्रम[५]।

क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग के बारे में अपने घोषणापत्र में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने यह कहा था कि "डा० सुन यात-सेन के जिन तीन जन-सिद्धान्तों की आज चीन को जरूरत है, उन्हें पूर्ण रूप से कार्यान्वित करने के लिए संघर्ष करने को हमारी पार्टी तैयार है।" कुछ लोगों को इस बात पर अचरज होता है कि कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्ताङ के तीन जन-सिद्धान्तों पर अमल करने को तैयार है। मिसाल के लिए शांघाई के चू छिङ-लाइ[६] ने एक स्थानीय पत्रिका में इस पर सन्देह व्यक्त किया है। ये लोग समझते हैं कि कम्युनिज्म और तीन जन-सिद्धान्तों के बीच कोई सामंजस्य नहीं है। यह महज औपचारिक रवैया है। कम्युनिज्म को क्रान्ति के विकास की भावी मंजिल में अमल में उतारा जाएगा ; उसे मौजूदा

मंजिल में प्राप्त करने का कोई भ्रम कम्युनिस्टों को नहीं है, और अभी तो वे राष्ट्रीय व जनवादी क्रान्ति को, जो इतिहास का तकाजा है, पूरा करने का प्रयत्न कर रहे हैं। कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे और एकीकृत जनवादी गणराज्य की स्थापना का प्रस्ताव पेश किए जाने का बुनियादी कारण यही है। जहां तक तीन जन-सिद्धान्तों की बात है, दस वर्ष पहले दोनों पार्टियों के प्रथम संयुक्त मोर्चे के समय कम्युनिस्ट पार्टी व क्वोमिन्ताङ ने क्वोमिन्ताङ की प्रथम राष्ट्रीय कांग्रेस के जरिए उन्हें लागू करने का संयुक्त निर्णय किया था, और हर वफादार कम्युनिस्ट तथा क्वोमिन्ताङ के हर वफादार सदस्य की व्यक्तिगत कोशिशों द्वारा १९२४-२७ के बीच देश के एक बड़े भाग में उन पर अमल किया गया था। दुर्भाग्य से वह संयुक्त मोर्चा १९२७ में टूट गया और क्वोमिन्ताङ ने बाद के दस वर्षों में तीन जन-सिद्धान्तों पर अमल करने का विरोध किया। लेकिन जहां तक कम्युनिस्ट पार्टी का सम्बन्ध है, पिछले दस वर्षों में उसने जो भी नीतियां अपनाई हैं, वे मूल रूप से डा० सुन यात-सेन के तीन जन-सिद्धान्तों और तीन महान नीतियों की क्रान्तिकारी भावना के अनुकूल रही हैं। कोई ऐसा दिन नहीं गुजरा जब कम्युनिस्ट पार्टी ने साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष न किया हो — इसका अर्थ हुआ राष्ट्रवाद के सिद्धान्त का पूर्ण रूप से पालन। मजदूर-किसानों का जनवादी अधिनायकत्व और कुछ न होकर जनवाद के सिद्धान्त का ही पूर्ण रूप से पालन है। भूमि-क्रान्ति जन-जीविका के सिद्धान्त का ही पूर्ण रूप से पालन है। लेकिन कम्युनिस्ट पार्टी ने मजदूर-किसानों के जनवादी अधि-नायकत्व को समाप्त करने और जमींदारों की जमीन की जब्ती

को बन्द करने की घोषणा अब क्यों की है? जैसा कि कुछ समय पहले हमने स्पष्ट कर दिया था, इसका कारण यह नहीं कि इस सिलसिले में अब कोई गलत बात हो गई है, बल्कि बात यह है कि जापानी साम्राज्यवाद के सशस्त्र आक्रमण के कारण देश के अन्दर वर्ग-सम्बन्धों में परिवर्तन हो गया है, जिससे जापानी साम्राज्यवाद के खिलाफ देश के तमाम वर्गों की एकता न केवल आवश्यक हो गई है, बल्कि ऐसा कर सकने की सम्भावना भी पैदा हो गई है। फासिज्म के विरुद्ध मुश्तरका संघर्ष करने के लिए फासिस्ट-विरोधी संयुक्त मोर्चा कायम करना न केवल चीन में, बल्कि सारी दुनिया के पैमाने पर आवश्यक और सम्भव है। इसलिए हम चीन में राष्ट्रीय व जनवादी संयुक्त मोर्चे की स्थापना के हामी हैं। इसी आधार पर हमने मजदूर-किसानों के जनवादी अधिनायकत्व की जगह सभी वर्गों के संश्रय पर आधारित जनवादी गणराज्य की स्थापना का प्रस्ताव रखा है। भूमि-क्रान्ति ने "जमीन जोतने वालों को" के उसूल पर अमल किया और बिलकुल यही प्रस्ताव डा० सुन यात-सेन ने भी रखा था। अब हमने जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध और अधिक संख्या में लोगों को एकताबद्ध करने की दृष्टि से उसे छोड़ दिया है, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि चीन को अपनी भूमि-समस्या हल करने की कोई जरूरत ही नहीं है। नीति में परिवर्तनों के वस्तुगत कारणों और समय के सम्बन्ध में हमने अपना दृष्टिकोण बिना किसी लाग-लपेट के स्पष्ट कर दिया है। मार्क्स-वादी उसूलों के आधार पर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी निरन्तर ही प्रथम क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट संयुक्त मोर्चे के मुश्तरका कार्यक्रम — क्रान्ति-कारी तीन जन-सिद्धान्तों — पर टिकी रही और उसने उन्हें विकसित

किया। यही कारण है कि कम्युनिस्ट पार्टी एक ऐसे राष्ट्रीय संकट के समय जबकि शक्तिशाली हमलावर शत्रु हमारे देश पर हमला कर रहा है, देश को बचाने की एकमात्र नीति के रूप में राष्ट्रीय व जनवादी संयुक्त मोर्चा बनाने का प्रस्ताव समयानुकूल रखने में समर्थ हुई है और उसने इस पर अमल करने का अथक प्रयत्न किया है। सवाल अब यह नहीं है कि कम्युनिस्ट पार्टी क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्तों पर विश्वास करती है कि नहीं या उन पर अमल करती है कि नहीं, बल्कि यह है कि क्वोमिन्ताङ उन सिद्धान्तों पर विश्वास करती है कि नहीं या उन पर अमल करती है कि नहीं। आज का कार्य यह है कि सारे देश में डा० सुन यात-सेन के तीन जन-सिद्धान्तों की क्रान्तिकारी भावना को फिर से जगाया जाए और इसके आधार पर निश्चित कार्यक्रम और नीतियां बनाकर उन पर अमल किया जाए – ईमानदारी के साथ न कि आधे मन से, दिल से न कि ऊपरी तौर पर, द्रुतगति से न कि खरामा-खरामा। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दिन-रात इसी के लिए प्रार्थना करती रही है। इसी कारण, लूकओछ्याओ घटना के बाद चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने का दससूत्री कार्यक्रम पेश किया। दससूत्री कार्यक्रम मार्क्सवाद के अनुरूप है और सच्चे क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्तों के अनुरूप भी है। यह चीनी क्रान्ति की मौजूदा मंजिल, यानी जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध की मंजिल, का प्रारम्भिक कार्यक्रम है। केवल इसी कार्यक्रम पर अमल करके ही चीन को बचाया जा सकता है। इस कार्यक्रम के आड़े आने वाले मार्ग पर चलने का हठ करने वालों को इतिहास दण्ड देगा।

इस कार्यक्रम पर क्वोमिन्ताङ की सहमति के बिना सारे देश में अमल नहीं हो सकता, क्योंकि आज भी देश की सबसे बड़ी पार्टी क्वोमिन्ताङ ही है और राजसत्ता भी उसी के हाथ में है। हमारा विश्वास है कि वह दिन आएगा जब क्वोमिन्ताङ के समझदार सदस्य इस कार्यक्रम से सहमत होंगे। क्योंकि यदि वे इसे ठुकरा देंगे, तो तीन जन-सिद्धान्त महज कोरी बातें बने रहेंगे, तथा डा० सुन यात-सेन की क्रान्तिकारी भावना को फिर से जगाना असम्भव हो जाएगा, जापानी साम्राज्यवाद को पराजित करना असम्भव हो जाएगा और चीनी जनता के लिए विदेशी सत्ता का दास बनने से बचना असम्भव हो जाएगा। क्वोमिन्ताङ का कोई वास्तविक समझदार सदस्य हरगिज ऐसा नहीं होने देना चाहेगा और सारे देश की जनता कभी भी अपने को दास नहीं बनने देगी। इसके अलावा, २३ सितम्बर के अपने वक्तव्य में श्री च्याङ काई-शेक ने घोषणा की है :

> मेरा विचार है कि हम लोगों को, जो क्रान्ति के हामी हैं, व्यक्तिगत शिकवे-शिकायतों और पूर्वाग्रहों को त्याग देना चाहिए और तीन जन-सिद्धान्तों की सफलता के लिए लगन से जुट जाना चाहिए। जिन्दगी और मौत की इस संकटपूर्ण घड़ी में हमें "बीती ताहि बिसार दे" पर और भी अमल करना चाहिए और तमाम राष्ट्र के साथ मिलकर फिर से एक नई शुरुआत करनी चाहिए तथा अपने देश के जीवन और अस्तित्व को बनाए रखने के लिए एकता कायम करने का जी-तोड़ प्रयास करना चाहिए।

यह नितान्त सत्य है। इस समय सबसे फौरी कार्य है तीन जन-सिद्धान्तों की सफलता के लिए कोशिश करना, व्यक्तिगत या गुटबन्दी के पूर्वाग्रहों को त्याग देना, पुराने अमलों को बदलना, फौरन ही तीन जन-सिद्धान्तों के अनुरूप क्रान्तिकारी कार्यक्रम पर अमल करना और तमाम राष्ट्र के साथ मिलकर बिलकुल ही नई शुरुआत करना। आज केवल यही रास्ता है। और देर की गई, तो व्यर्थ हाथ मलते रह जाना पड़ेगा।

लेकिन तीन जन-सिद्धान्तों और दससूत्री कार्यक्रम पर अमल करने के लिए किसी साधन की आवश्यकता होगी – सरकार और सेना में सुधार की समस्या इसी से उठती है। मौजूदा सरकार अभी भी क्वोमिन्ताङ की एक पार्टी के अधिनायकत्व वाली सरकार है, न कि राष्ट्रीय जनवादी संयुक्त मोर्चे की सरकार। राष्ट्रीय जनवादी संयुक्त मोर्चे की सरकार के बिना तीन जन-सिद्धान्तों और दससूत्री कार्यक्रम पर अमल करना असम्भव है। क्वोमिन्ताङ की मौजूदा सैन्य-व्यवस्था अब भी पहले की ही जैसी पुरानी है और इस व्यवस्था के अन्तर्गत संगठित सेनाओं द्वारा जापानी साम्राज्यवाद को पराजित करना असम्भव है। सभी सेनाएं इस समय प्रतिरोध में जुटी हुई हैं और उन सबके लिए हमारे मन में बड़ी प्रशंसा और आदर है, विशेषकर उनके लिए जो मोर्चे पर लड़ रही हैं। लेकिन पिछले तीन महीनों में प्रतिरोध-युद्ध के जो सबक हासिल हुए हैं उनसे यह स्पष्ट हो गया है कि क्वोमिन्ताङ की सैन्य-व्यवस्था को बदल दिया जाना चाहिए, क्योंकि जापानी आक्रमणकारियों को पूर्णतः पराजित करने और तीन जन-सिद्धान्तों तथा क्रान्तिकारी कार्यक्रम पर सफलतापूर्वक अमल करने के लिए वह बिलकुल ही अनुपयुक्त है। यह

परिवर्तन अफसरों और सिपाहियों के बीच एकता, तथा सेना और जनता के बीच एकता के उसूलों के आधार पर ही किया जाना चाहिए। क्वोमिन्ताङ की मौजूदा सैन्य-व्यवस्था बुनियादी तौर पर इन दोनों ही उसूलों के विरुद्ध है। वफादारी और साहस के बावजूद, इस व्यवस्था की जकड़ में आकर व्यापक अफसर और सिपाही प्रतिरोध कार्य में अपना भरपूर योग नहीं दे पाते, इसलिए इस व्यवस्था को सुधारने की फौरन शुरुआत की जानी चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं कि जब तक व्यवस्था में सुधार न हो, तब तक के लिए लड़ाई को बन्द रखा जाए; लड़ाई के चलते रहते भी व्यवस्था में सुधार किया जा सकता है। यहां केन्द्रीय कार्य है सेना की राजनीतिक भावना तथा उसके राजनीतिक कार्य में परिवर्तन लाना। उत्तरी अभियान के दिनों की राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना इसका एक प्रशंसनीय उदाहरण है, क्योंकि आम तौर पर उस सेना में अफसरों और सिपाहियों के बीच तथा सेना और जनता के बीच एकता स्थापित हो गई थी। उन दिनों की भावना को फिर से जगाना नितान्त आवश्यक है। चीन को स्पेन के युद्ध से सबक लेना चाहिए, जहां रिपब्लिकन सेना का निर्माण बहुत ही प्रतिकूल परिस्थितियों में हुआ। चीन स्पेन से बेहतर स्थिति में है, लेकिन चीन में एक व्यापक आधार वाले और सुदृढ़ संयुक्त मोर्चे का अभाव है, संयुक्त मोर्चे की ऐसी सरकार का अभाव है जो सम्पूर्ण क्रान्तिकारी कार्यक्रम को लागू कर सके, और बड़ी संख्या वाली ऐसी सेनाओं का भी अभाव है जिन्हें नई व्यवस्था के अनुरूप गठित किया गया हो। चीन को चाहिए कि वह इन त्रुटियों को दूर करे। जहां तक समूचे प्रतिरोध-युद्ध का प्रश्न है, उसमें चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने

वाली लाल सेना अभी भी केवल हिरावल भूमिका ही अदा कर सकती है, देशव्यापी पैमाने पर निर्णायक भूमिका नहीं। फिर भी लाल सेना की राजनीतिक, सामरिक और संगठनात्मक श्रेष्ठताएं पूरे देश की हमारी मित्र-सेनाओं के लिए ग्रहण करने योग्य हैं। प्रारम्भिक काल में लाल सेना भी ऐसी नहीं थी जैसी कि वह आज है। वह भी अनेक सुधारों से होकर गुजरी है, और ये सुधार मुख्य तौर पर थे सेना के अन्दर सामन्ती तौर-तरीकों का खात्मा करना और अफसरों व सिपाहियों के बीच तथा सेना व जनता के बीच एकता स्थापित करना। सारे देश की मित्र-सेनाएं इस अनुभव का फायदा उठा सकती हैं।

सत्तारूढ़ क्वोमिन्ताङ पार्टी के जापान-विरोधी साथियो! राष्ट्र को विनाश से बचाने तथा उसे जीवित रखने के उत्तरदायित्व में हम आपके साथ हैं। आपने हमारे साथ जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चा बनाया है। यह बहुत अच्छी बात है। आपने जापान का प्रतिरोध करना शुरू कर दिया है। यह भी बहुत अच्छी बात है। लेकिन पुरानी ही लीक पर चलने वाली आपकी अन्य नीतियों का हम समर्थन नहीं करते। हम सबको चाहिए कि संयुक्त मोर्चे को विकसित और विस्तारित करें और उसमें जन-समुदाय को शामिल करें। संयुक्त मोर्चे को सुदृढ़ बनाना और एक मुश्तरका कार्यक्रम पर चलना अत्यन्त आवश्यक है। राजनीतिक व्यवस्था और सैन्य-व्यवस्था में दृढ़तापूर्वक सुधार करना अत्यन्त आवश्यक है। एक नई सरकार का निर्माण करना अत्यन्त आवश्यक है, केवल ऐसी सरकार ही क्रान्तिकारी कार्यक्रम पर अमल कर सकती है और समूचे देश में सेनाओं को सुधार सकती है। हमारा यह प्रस्ताव

आज के समय की पुकार है। आपकी पार्टी के भी अनेक लोग यह महसूस करते हैं कि इस पर अमल करने का यही समय है। अपने जमाने में डा० सुन यात-सेन ने एक बार फैसला करके राजनीतिक व्यवस्था और सैन्य-व्यवस्था में सुधार किया था और इस प्रकार १९२४-२७ की क्रान्ति की बुनियाद रखी थी। अब इसी प्रकार के सुधार को लागू करने की जिम्मेदारी आपके कन्धों पर है। हमारा विश्वास है कि क्वोमिन्ताङ का कोई भी वफादार और देशभक्त सदस्य हमारे प्रस्ताव को असामयिक न मानेगा। हमारा दृढ़ विश्वास है कि यह प्रस्ताव आज की वस्तुगत जरूरतों के अनुकूल है।

हमारे राष्ट्र का भाग्य कसौटी पर है – क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी को घनिष्ठता से एकताबद्ध हो जाना चाहिए! तमाम देशवासियों को, जो दास नहीं बनना चाहते, क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट एकता के आधार पर घनिष्ठता से एकताबद्ध हो जाना चाहिए! आज चीनी क्रान्ति का सबसे फौरी कार्य है तमाम मुश्किलों पर काबू पाने के लिए हर आवश्यक सुधार को लागू करना। इस कार्य को पूरा करके हम निश्चय ही जापानी साम्राज्यवाद को पराजित कर सकते हैं। अगर हम भरपूर प्रयास करेंगे, तो हमारा भविष्य उज्ज्वल होगा।

नोट

[1] देखिए: "जापानी-आक्रमण-विरोधी काल में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्य", नोट २ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

[2] वही, नोट ३।

[3] वही, नोट ४।

[4] देखिए : "च्याङ काई-शेक के वक्तव्य के बारे में वक्तव्य", नोट ७ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

[5] देखिए : "जापानी-आक्रमण-विरोधी काल में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्य", नोट ६ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

[6] वही, नोट ७।

[7] चीन गणराज्य और सोवियत समाजवादी लोकतंत्र संघ के बीच यह अनाक्रमण सन्धि २१ अगस्त १९३७ को सम्पन्न हुई थी।

[8] दससूत्री कार्यक्रम के लिए देखिए इसी ग्रन्थ में "प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए राष्ट्र की समूची शक्तियों को गोलबन्द करने का प्रयत्न करो" शीर्षक रचना।

[9] चू छिङ-लाइ "नेशनल सोशलिस्ट पार्टी" (प्रतिक्रियावादी जमींदारों, नौकरशाहों तथा बड़े पूंजीपतियों के वर्ग द्वारा संगठित एक छोटा गुट) के सरगनाओं में से एक था। बाद में वह गद्दार वाङ चिङ-वेइ सरकार का सदस्य बन गया।

बरतानवी पत्रकार जेम्स बर्ट्राम को इन्टरव्यू

२५ अक्तूबर १९३७

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध

जेम्स बर्ट्राम : चीन-जापान युद्ध छिड़ने से पहले और बाद में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने कौन-कौन से विशिष्ट ऐलान किए हैं?

माओ त्सेतुङ : युद्ध छिड़ने से पहले चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने समूचे राष्ट्र को बार-बार आगाह किया था कि जापान से युद्ध अवश्यंभावी है और "शान्तिपूर्ण समझौते" की जापानी साम्राज्य-वादियों की तमाम बातें और जापान के कूटनीतिज्ञों की तमाम सुन्दर शब्दावली युद्ध की उनकी तैयारियों के लिए महज धोखे की टट्टी की तरह हैं। हमने बार-बार इस बात पर जोर दिया कि संयुक्त मोर्चे को सुदृढ़ किए बिना और क्रान्तिकारी नीति को लागू किए बिना विजयपूर्वक राष्ट्रीय मुक्ति-युद्ध नहीं चलाया जा सकता। इस क्रान्तिकारी नीति की सबसे प्रमुख बात यह है कि आम जनता को जापान-विरोधी मोर्चे में शामिल होने के लिए गोलबन्द करने के उद्देश्य से चीन सरकार को जनवादी सुधार लागू करने चाहिए। हमने बार-बार उन लोगों की त्रुटि की ओर इंगित किया जो जापान की "शान्ति-प्रतिज्ञा" पर विश्वास करते थे और जो यह समझते

थे कि युद्ध से बचा जा सकता है, या यह विश्वास रखते थे कि ग्राम जनता को गोलबन्द किए बिना ही जापानी आक्रमणकारियों का प्रतिरोध किया जा सकता है। युद्ध के छिड़ने और विकसित होने से यह साबित हो गया है कि हमारे विचार सही थे। लूकओछ्याओ घटना के एक दिन बाद ही कम्युनिस्ट पार्टी ने समूचे देश के नाम एक घोषणापत्र जारी किया। इस घोषणापत्र में हमने देश की तमाम राजनीतिक पार्टियों और ग्रुपों तथा तमाम सामाजिक तबकों का आवाहन किया कि वे एकदिल होकर जापानियों के आक्रमण का प्रतिरोध करें और राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को मजबूत बनाएं। इसके शीघ्र बाद ही हमने "जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के दससूत्री कार्यक्रम" का ऐलान किया, जिसमें हमने उन नीतियों को सामने रखा जिन्हें जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में चीन सरकार को अपनाना चाहिए। क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग की स्थापना के समय हमने एक अन्य महत्वपूर्ण घोषणा जारी की। यह सब इस बात का प्रमाण है कि हम संयुक्त मोर्चे को मजबूत करके और क्रान्तिकारी नीति पर अमल करके प्रतिरोध-युद्ध को चलाने के उसूल के दृढ़ समर्थक हैं। मौजूदा काल में हमारा बुनियादी नारा है "समूचे राष्ट्र द्वारा सम्पूर्ण प्रतिरोध"।

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की स्थिति और उसके सबक

प्रश्न : आपकी राय में युद्ध के अब तक क्या नतीजे हुए हैं?

उत्तर : इसके दो मुख्य पहलू हैं। एक ओर, हमारे नगरों पर

अधिकार करके, हमारी धरती को छीनकर, बलात्कार, लूट, आगजनी और कत्लेआम के द्वारा जापानी साम्राज्यवादियों ने चीनी जनता को राष्ट्रीय दासता के खतरे के बिलकुल सामने ला खड़ा किया है। और दूसरी ओर इसके फलस्वरूप चीनी जनता का बहुमत इस बात के प्रति बहुत अधिक जागरूक हो उठा है कि बिना और अधिक एकता कायम किए और बिना समूचे राष्ट्र के प्रतिरोध के इस संकट पर काबू नहीं पाया जा सकता। साथ ही साथ, दुनिया के शान्तिप्रिय देश जापानी खतरे के विरुद्ध प्रतिरोध की आवश्यकता के प्रति जागरूक हो रहे हैं। अभी तक युद्ध से यही नतीजे निकले हैं।

प्रश्न : आपकी राय में जापान के उद्देश्य क्या हैं और वह उन्हें किस हद तक प्राप्त कर चुका है?

उत्तर : जापान की योजना पहले कदम के तौर पर उत्तरी चीन और शांघाई पर अधिकार कर लेने और फिर चीन के अन्य क्षेत्रों पर अधिकार करने की है। जहां तक यह सवाल है कि जापानी आक्रमणकारियों ने अपनी योजना को किस हद तक पूरा कर लिया है, स्थिति यह है कि उन्होंने तेजी से हपे, छाहाड़ और स्वेय्वान पर अधिकार कर लिया है और अब शानशी पर उनका खतरा मंडरा रहा है। इसका कारण यह है कि चीन का प्रतिरोध-युद्ध अभी तक सरकार और सेना द्वारा होने वाले प्रतिरोध तक ही सीमित रहा है। इस संकट पर तभी काबू पाया जा सकता है जब आम जनता और सरकार द्वारा संयुक्त रूप से प्रतिरोध किया जाए।

प्रश्न : आपकी राय में, क्या चीन ने अपने प्रतिरोध-युद्ध में कुछ सफलताएं प्राप्त की हैं? और उससे अगर सबक ग्रहण किए जाने हैं तो वे क्या हैं?

उत्तर : मैं इस प्रश्न के सम्बन्ध में आपको कुछ तफसील से बताऊंगा। सबसे पहले, सफलताएं मिली हैं और महान सफलताएं भी मिली हैं। उन्हें इन बातों के रूप में देखा जा सकता है : (१) चीन के विरुद्ध साम्राज्यवादी आक्रमण की शुरुआत के समय से अब तक, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के मुकाबले का कोई युद्ध नहीं हुआ। भौगोलिक दृष्टि से यह युद्ध एक असली देशव्यापी युद्ध है। इस युद्ध का स्वरूप क्रान्तिकारी है। (२) इस युद्ध के कारण एक ऐसा राष्ट्र जिसमें एकता का अभाव था, अपेक्षाकृत एकताबद्ध हो गया है। क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग इस एकता का आधार है। (३) विश्व-लोकमत की इस युद्ध के प्रति सहानुभूति है। जो लोग कभी चीन को उसके अप्रतिरोध के कारण उपेक्षा की दृष्टि से देखते थे, वे अब उसके प्रतिरोध के कारण उसका आदर करने लगे हैं। (४) इस युद्ध ने जापानी आक्रमणकारियों को भारी क्षति पहुंचाई है। कहा जाता है, रोज ही उन्हें दो करोड़ येन की साधन-सामग्री फूंकनी पड़ती है, और ठीक संख्या मालूम न होने पर भी उनके हताहतों की संख्या निस्सन्देह बहुत भारी है। यद्यपि जापानी आक्रमणकारियों ने बिना कष्ट उठाए आसानी से हमारे चार उत्तर-पूर्वी प्रान्तों पर अधिकार कर लिया, लेकिन अब वे रक्तपातपूर्ण लड़ाइयों के बिना चीन की धरती पर अधिकार न कर सकेंगे। जापानी आक्रमणकारी चीन में अपनी लालसा पूरी कर लेना चाहते हैं, लेकिन चीन द्वारा किया जाने वाला दीर्घकालीन प्रतिरोध जापानी साम्राज्यवाद को पतन के रास्ते पर पहुंचा देगा। इस प्रकार, चीन केवल अपनी रक्षा के लिए ही नहीं लड़ रहा, बल्कि वह विश्व के फासिस्ट-विरोधी मोर्चे के प्रति भी अपने महान कर्तव्य

को पूरा कर रहा है। इस युद्ध का क्रान्तिकारी स्वरूप यहां भी स्पष्ट है। (५) इस युद्ध के द्वारा हमें कुछ सबक हासिल हुए हैं। इनके लिए हमें अपने प्रदेश तथा रक्त का मूल्य चुकाना पड़ा है।

जहां तक सबकों का ताल्लुक है, वे भी बहुत गम्भीर हैं। कई महीनों के युद्ध ने चीन की अनेक कमजोरियों को स्पष्ट कर दिया है। ये कमजोरियां सबसे पहले राजनीतिक क्षेत्र में प्रकट हुई हैं। यद्यपि भौगोलिक दृष्टि से सारा देश युद्ध में सम्मिलित है, फिर भी समूचा राष्ट्र युद्धरत नहीं है। पहले की ही तरह अब भी सरकार व्यापक जन-समुदाय को युद्ध में हिस्सा नहीं लेने देती, और इस प्रकार यह युद्ध जनव्यापी युद्ध नहीं बन पाता। व्यापक जन-समुदाय के हिस्सा लिए बिना जापानी साम्राज्यवादी आक्रमण के विरुद्ध प्रतिरोध-युद्ध कतई सफल नहीं हो पाएगा। कुछ लोग कहते हैं : "यह युद्ध एक सम्पूर्ण युद्ध का रूप ले चुका है।" लेकिन यह कथन केवल इसी अर्थ में सच है कि देश के विशाल हिस्से इस युद्ध में सम्मिलित हैं। युद्ध में शामिल होने वाले तत्वों के लिहाज से यह प्रतिरोध-युद्ध अभी भी आंशिक है क्योंकि इसे अभी भी केवल सरकार तथा सेना द्वारा चलाया जा रहा है, न कि जनता द्वारा। पिछले कुछ महीनों में अनेक फौजी पराजयों और धरती के एक बड़े हिस्से के छिन जाने का मुख्य कारण ठीक यही रहा है। इसलिए, यद्यपि मौजूदा सशस्त्र प्रतिरोध अपने स्वरूप में क्रान्तिकारी है, फिर भी उसका स्वरूप सम्पूर्ण रूप से क्रान्तिकारी नहीं है क्योंकि वह अब भी जन-व्यापी युद्ध नहीं बन पाया है। एकता की समस्या यहां पर भी मौजूद है। यद्यपि राजनीतिक पार्टियां और ग्रुप पहले के मुकाबले अपेक्षाकृत एकताबद्ध हो गए हैं, फिर भी एकता की जितनी आवश्य-

कता आज है उसके हिसाब से यह कहीं कम है। अधिकांश राजनीतिक कैदियों की रिहाई अभी तक नहीं हुई और राजनीतिक पार्टियों पर से पाबन्दियां पूरी तरह नहीं हटाई गई हैं। सरकार और जनता, सेना और जनता, अफसरों और सैनिकों के बीच के सम्बन्ध अभी भी बहुत खराब हैं और यहां एकता की जगह पृथकता दिखाई पड़ती है। यह एक बुनियादी समस्या है। इसे हल किए बिना विजय प्राप्त करने का सवाल ही नहीं उठता। इसके अलावा, फौजी गलतियां भी जन-हानि होने और हमारे प्रदेशों के हाथ से निकल जाने का एक बड़ा कारण हैं। जो युद्ध लड़े गए हैं वे अधिकांशत: नकारात्मक रहे हैं–फौजी भाषा में इन्हें "निरी रक्षा" ही कहा जा सकता है। इस प्रकार की लड़ाई से हम कभी विजयी नहीं हो सकते। विजय के लिए राजनीतिक और फौजी दोनों ही क्षेत्रों में आज की नीतियों से नितान्त भिन्न नीतियां अपनाई जानी चाहिए। हमने ये ही सबक हासिल किए हैं।

प्रश्न : तो फिर आवश्यक राजनीतिक और फौजी पूर्वशर्तें क्या हैं?

उत्तर : राजनीतिक क्षेत्र में पहले, मौजूदा सरकार को संयुक्त मोर्चे की एक ऐसी सरकार में रूपान्तरित कर देना चाहिए जिसमें जन-प्रतिनिधियों की अपनी भूमिका हो। इस सरकार को जनवादी और केन्द्रीयतावादी दोनों होना चाहिए। उसे आवश्यक क्रान्तिकारी नीतियों को लागू करना चाहिए। दूसरे, भाषण देने, प्रकाशन करने, सभा करने, संगठन बनाने और शत्रु के विरुद्ध सशस्त्र प्रतिरोध करने की आजादी जनता को मिलनी चाहिए, जिससे यह युद्ध एक जनव्यापी युद्ध बन सके। तीसरे, भारी टैक्सों और तरह-तरह की

लेवियों को खत्म करके, लगान और सूद को कम करके, मजदूरों, छोटे अफसरों और सैनिकों की हालत को बेहतर बनाकर, जापान-विरोधी सैनिकों के परिवारों के साथ विशेष बरताव करके, तथा प्राकृतिक प्रकोपों के शिकार लोगों और युद्ध-शरणार्थियों को सहायता देकर, जनता के रहन-सहन की हालत में सुधार करना जरूरी है। सरकार की वित्तीय व्यवस्था इस उसूल पर आधारित होनी चाहिए कि आर्थिक बोझ का उचित रूप से बंटवारा हो, जिसका अर्थ यह है कि जिनके पास धन है, वे धन दें। चौथे, विदेश नीति सकारात्मक होनी चाहिए। पांचवें, संस्कृति व शिक्षा सम्बन्धी नीति में परिवर्तन किया जाना चाहिए। छठवें, गद्दारों को सख्ती से दबा देना चाहिए। यह समस्या अति गम्भीर हो चुकी है। गद्दार लोग बेलगाम हो गए हैं। युद्ध-क्षेत्र में वे शत्रु की सहायता कर रहे हैं; पृष्ठभागीय क्षेत्र में वे तोड़फोड़ कर रहे हैं। इनमें से कुछ लोगों ने तो जापान-विरोधी बाना तक पहन रखा है और वे देशभक्तों को गद्दार कहकर उनकी निन्दा कर रहे हैं तथा उन्हें गिरफ्तार करवा रहे हैं। जनता जब सरकार के साथ सहयोग करने के लिए स्वतंत्र होगी, तभी गद्दारों को प्रभावशाली रूप से कुचला जा सकता है। फौजी क्षेत्र में भी सर्वांगीण सुधारों की आवश्यकता है। इनमें मुख्य रूप से ये परिवर्तन किए जाने हैं : रणनीति और कार्यनीति में निरी रक्षा से बदलकर सक्रिय आक्रमण का उसूल अपनाना, पुरानी तरह की सेनाओं के स्थान पर नई तरह की सेनाएं गठित करना, जबरिया भरती के तरीके को बदलकर जनता को मोर्चे पर जाने के लिए आन्दोलित करने का तरीका अपनाना, बंटी हुई कमान के स्थान पर एकीकृत कमान बनाना, सेना को जनता

से विमुख कर देने वाली अनुशासनहीनता के स्थान पर जनहित का उल्लंघन करने पर कतई रोक लगाने वाला सचेत अनुशासन लाना, और नियमित सेना द्वारा अकेले लड़ने की स्थिति को बदलकर ऐसी स्थिति लाना जिसमें नियमित सेना की फौजी कार्यवाहियों से तालमेल कायम करके बड़े पैमाने पर जनव्यापी छापामार युद्ध को विकसित किया जा सके, आदि-आदि। इन सब राजनीतिक और फौजी पूर्वशर्तों की तालिका हमारे द्वारा जारी किए गए दससूत्री कार्यक्रम में दी गई है। ये सभी डा० सुन यात-सेन के तीन जन-सिद्धान्तों, उनकी तीन महान नीतियों तथा उनके वसीयतनामे के अनुरूप हैं। इन पर अमल करने से ही युद्ध में विजय प्राप्त की जा सकती है।

प्रश्न : इस कार्यक्रम पर अमल करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी क्या कर रही है?

उत्तर : अथक रूप से वर्तमान स्थिति का स्पष्टीकरण करते जाना तथा जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को विस्तृत करने व उसे सुदृढ़ बनाने के लिए तथा तमाम शक्तियों को जत्थेबन्द करने और प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए क्वोमिन्ताङ तथा अन्य देशभक्त राजनीतिक पार्टियों और ग्रुपों के साथ एकता स्थापित करना – इसे हम अपना कार्य समझते हैं। जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की परिसीमा अभी भी बहुत संकुचित है और उसे विस्तृत करना आवश्यक है, यानी जैसा कि डा० सुन यात-सेन ने अपने वसीयतनामे में "व्यापक जन-समुदाय को जागृत करने" का आवाहन किया था, उसी प्रकार निचले सामाजिक तबकों की आम जनता को संयुक्त मोर्चे में शामिल होने के लिए जत्थेबन्द

करना। संयुक्त मोर्चे को सुदृढ़ बनाने का अर्थ है ऐसे मुश्तरका कार्यक्रम पर अमल करना जिस पर तमाम राजनीतिक पार्टियां और ग्रुप अपनी कार्यवाहियों के दौरान बंधे रहेंगे। डा० सुन यात-सेन के क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्तों, तीन महान नीतियों और वसीयतनामे को हम तमाम राजनीतिक पार्टियों और सामाजिक तबकों के संयुक्त मोर्चे का मुश्तरका कार्यक्रम मानने को तैयार हैं। लेकिन अभी तक सभी पार्टियों ने इस कार्यक्रम को स्वीकृत नहीं किया। और सबसे बड़ी बात यह है कि क्वोमिन्ताङ ने इस मुकम्मिल कार्यक्रम के ऐलान के सम्बन्ध में अपनी सहमति प्रदान नहीं की। जापान का प्रतिरोध करने से यह बात तो जाहिर है कि क्वोमिन्ताङ ने डा० सुन यात-सेन के राष्ट्रवाद के सिद्धान्त पर आंशिक रूप से अमल किया है। लेकिन डा० सुन यात-सेन के जनवाद के सिद्धान्त और जन-जीविका के सिद्धान्त पर अमल नहीं हुआ, और प्रतिरोध-युद्ध में उत्पन्न गम्भीर संकट इसी का नतीजा है। युद्ध-स्थिति के इतने गम्भीर हो जाने के कारण अब यही अवसर है जब क्वोमिन्ताङ को तीन जन-सिद्धान्तों पर पूरी तरह अमल करना चाहिए, वरना फिर बाद में रोना-धोना बेकार साबित होगा। कम्युनिस्ट पार्टी का यह कार्य है कि वह अपनी आवाज उठाए और क्वोमिन्ताङ तथा सम्पूर्ण राष्ट्र को अथक रूप से समझाने-बुझाने का काम करे जिससे कि सच्चे क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्तों, तीन महान नीतियों और डा० सुन यात-सेन के वसीयतनामे को सारे देश में मुकम्मिल तौर पर और पूरी तरह लागू किया जा सके और जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को विस्तृत और सुदृढ़ बनाया जा सके।

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में आठवीं राह सेना

प्रश्न : कृपया मुझे आठवीं राह सेना के बारे में, जिसमें इतने अधिक लोग दिलचस्पी रखते हैं, उसकी रणनीति और कार्यनीति के बारे में और उसके राजनीतिक कार्य आदि के बारे में बताइए।

उत्तर : निस्सन्देह जब से लाल सेना को आठवीं राह सेना का नाम दिया गया है और जब से वह मोर्चे पर गई है, तब से अनेक लोगों की दिलचस्पी उसकी गतिविधियों में बढ़ गई है। अब मैं आपको उसके बारे में आम ब्यौरा देता हूं।

पहले उसकी सामरिक कार्यवाहियों के बारे में बताता हूं। रणनीतिक दृष्टि से आठवीं राह सेना की कार्यवाहियां शानशी में केन्द्रित हैं। जैसा कि आप जानते हैं, उसने अनेक जीतें हासिल की हैं। उदाहरण के लिए फिङशिङक्वान की लड़ाई, चिङफिङ, फिङलू और निङऊ पर पुनः अधिकार, लाएय्वान तथा क्वाङलिङ को फिर से हासिल करना, चिचिङक्वान पर अधिकार, जापानी सेनाओं के तीन मुख्य सप्लाई-मार्गों (ताथुङ और येनमनक्वान के बीच, वेईश्येन और फिङशिङक्वान के बीच तथा श्वोश्येन और निङऊ के बीच) को काट देना, येनमनक्वान के दक्षिण में जापानी सेनाओं के पृष्ठभागीय क्षेत्र पर हमला, फिङशिङक्वान और येनमनक्वान पर दो-दो बार अधिकार और छ्वीयाङ तथा थाङश्येन पर हाल में फिर से कब्जा। रणनीतिक दृष्टि से, शानशी में आठवीं राह सेना और अन्य चीनी सेनाएं जापानी सेनाओं को घेर रही हैं। हम यह निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि जापानी सेनाओं को उत्तरी

चीन में जोरदार प्रतिरोध का सामना करना पड़ेगा। यदि वे शानशी में सवारी गांठने की कोशिश करेंगी, तो उन्हें निश्चय ही पहले से कहीं बड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा।

अब मैं रणनीति और कार्यनीति के बारे में बताता हूं। हम वह कर रहे हैं जो अन्य चीनी सेनाओं ने नहीं किया है, यानी मुख्यतः शत्रु के पार्श्वों और पृष्ठभागीय क्षेत्र में कार्यवाहियां करना। सामने की निरी रक्षा की तुलना में इस प्रकार का युद्ध-कौशल काफी भिन्न होता है। सामने से मोर्चा लेने के लिए सैन्य-शक्ति के एक अंश को लगाने के हम विरुद्ध नहीं हैं ; यह आवश्यक है। लेकिन अपनी मुख्य सैन्य-शक्ति को हमें शत्रु के पार्श्वों में इस्तेमाल करना चाहिए और शत्रु पर स्वतंत्रतापूर्वक तथा पहलकदमी के साथ आक्रमण करने के लिए हमें उसकी घेरेबन्दी करने तथा पार्श्वों से कतराकर निकल जाने की कार्यनीति अपनानी चाहिए। शत्रु की सैन्य-शक्ति को नष्ट करने और अपनी सैन्य-शक्ति को सुरक्षित रखने का यही एक तरीका है। इसके अलावा, अपनी सैन्य-शक्ति के एक अंश को शत्रु के पृष्ठभागीय क्षेत्र में लगाना विशेष रूप से प्रभावशाली होता है, क्योंकि वह शत्रु के सप्लाई-मार्गों और अड्डों को तोड़-फोड़ सकता है। सामने से मोर्चा लेने वाली सेनाओं को भी मुख्यतः "धावे को जवाबी हमले के जरिए निष्फल करने" पर निर्भर रहना चाहिए, न कि निरी रक्षा पर। पिछले कुछ महीनों में फौजी पराजयों का एक मुख्य कारण लड़ाई के अनुपयुक्त तरीकों का इस्तेमाल रहा है। आठवीं राह सेना द्वारा अपनाए गए लड़ाई के तरीकों को हम स्वतंत्र रूप से और पहलकदमी के साथ अपनाया गया छापामार और चलायमान युद्ध-कौशल कहते हैं। ये तरीके उसूली तौर पर

वही हैं जिनका इस्तेमाल हमने गृहयुद्ध के दौरान किया था, लेकिन कुछ अन्तर भी है। मिसाल के लिए, विशाल इलाके में शत्रु के पार्श्वों और पृष्ठभागीय क्षेत्र पर आकस्मिक आक्रमण करने की सुविधा के लिए अब हम अपनी सैन्य-शक्ति का केन्द्रीकरण करने के मुकाबले ज्यादातर उसका बंटवारा कर देते हैं। चूंकि देश की सैन्य-शक्ति संख्या की दृष्टि से विशाल है, इसलिए उसमें से कुछ को सामने के रक्षात्मक मोर्चे के लिए इस्तेमाल करना चाहिए और कुछ को छापामार कार्यवाहियों के लिए बिखेर देना चाहिए, लेकिन मुख्य सैन्य-शक्ति को बराबर शत्रु के पार्श्वों के विरुद्ध केन्द्रित रखना चाहिए। युद्ध में पहली महत्वपूर्ण बात है अपने को सुरक्षित रखना और दुश्मन को नष्ट करना, तथा इसके लिए स्वतंत्रतापूर्वक और पहलकदमी के साथ छापामार और चलायमान युद्ध चलाना चाहिए और सब तरह की निष्क्रिय और गैर-लचकीली कार्यनीति से बचना चाहिए। यदि सैनिकों की बहुत बड़ी संख्या चलायमान युद्ध चलाए और आठवीं राह सेना छापामार युद्ध के द्वारा उसकी सहायता करे, तो विजय निश्चित रूप से हमारी होगी।

अब राजनीतिक कार्य के बारे में बताता हूं। आठवीं राह सेना का राजनीतिक कार्य उसकी एक अन्य बेहद महत्वपूर्ण और अलग विशिष्टता है। इसके तीन बुनियादी उसूल हैं। पहला, अफसरों और सिपाहियों के बीच एकता का उसूल, जिसका अर्थ है सेना में सामन्ती तौर-तरीकों का खात्मा करना, गाली-गलौज और मार-पीट की रीति पर रोक लगाना, सचेत अनुशासन का निर्माण करना और सुख-दुख में भागीदार बनना – फलतः समूची सेना पूर्ण रूप से एकताबद्ध हो गई है। दूसरा, सेना और जनता के बीच एकता

का उसूल, जिसका अर्थ है ऐसे अनुशासन को बनाए रखना जो जनहित के किंचितमात्र उल्लंघन पर रोक लगाता हो, जनता के बीच प्रचार-कार्य करना और उसे संगठित व सशस्त्र करना, उसके आर्थिक बोझ को हल्का करना और सेना व जनता को हानि पहुंचाने वाले गद्दारों और देशद्रोहियों को कुचलना – फलतः समूची सेना जनता के साथ पूर्ण रूप से एकताबद्ध हो गई है और हर जगह उसका स्वागत होता है। तीसरा, शत्रु-सेनाओं को विघटित करने और युद्धबन्दियों के साथ नरम बरताव करने का उसूल। हमारी विजय न केवल हमारी फौजी कार्यवाहियों पर निर्भर है बल्कि शत्रु-सेनाओं के विघटन पर भी निर्भर है। शत्रु-सेनाओं को विघटित करने तथा युद्धबन्दियों के साथ नरमी का बरताव करने का अभी यद्यपि कुछ स्पष्ट परिणाम नहीं निकला, फिर भी भविष्य में इसका परिणाम अवश्य निकलेगा। इसके अलावा, तीनों उसूलों में से दूसरे उसूल के अनुरूप आठवीं राह सेना अपनी शक्ति बढ़ाने में जनता के प्रति जोर-जबरदस्ती के तरीके नहीं अपनाती, बल्कि मोर्चे पर जाने के लिए जनता को आन्दोलित करने के कहीं अधिक प्रभावशाली तरीके अपनाती है।

यद्यपि हपे, छाहाड़ और स्वेय्वान तथा शानशी का एक अंश छिन गया है, फिर भी हम किंचितमात्र भी निरुत्साहित नहीं हैं। हम दृढ़तापूर्वक समूची सेना का आवाहन करते हैं कि वह मित्र-सेनाओं के साथ अपनी कार्यवाहियों का तालमेल कायम करे और शानशी की दृढ़तापूर्वक रक्षा करने और छिनी हुई धरती को वापस लेने के लिए अन्तिम विजय तक लड़ती रहे। शानशी में प्रतिरोध जारी रखने के लिए आठवीं राह सेना अन्य चीनी सेनाओं के साथ

अपनी कार्यवाहियों का तालमेल कायम करेगी। यह समूचे युद्ध के लिए, और खास तौर पर उत्तरी चीन के युद्ध के लिए बहुत महत्वपूर्ण बात होगी।

प्रश्न : आपकी राय में आठवीं राह सेना की ये खूबियां क्या चीन की अन्य सेनाओं द्वारा अपनाई जा सकती हैं?

उत्तर : निश्चय ही वे इन्हें अपना सकती हैं। १९२४-२७ में क्वोमिन्ताङ सेनाओं की मोटे तौर पर वैसी ही भावना थी जैसी कि आज आठवीं राह सेना की है। उस समय एक नए प्रकार की सेना के गठन के लिए कम्युनिस्ट पार्टी और क्वोमिन्ताङ ये दोनों परस्पर सहयोग कर रही थीं – शुरू में यह सेना केवल दो रेजीमेन्टों की थी, लेकिन उसने अपने आसपास अनेक सशस्त्र सेनाओं को जुटा लिया और छन च्युङ-मिङ को हराकर अपनी पहली जीत हासिल की। इसके बाद यह सेना एक फौजी कोर का रूप लेती गई और पहले से कहीं अधिक सेनाएं उसके प्रभाव के अन्तर्गत आ गईं। तब जाकर ही उत्तरी अभियान हो सका। उस समय इस सेना में एक नई भावना व्याप्त थी, आम तौर पर अफसरों और सिपाहियों के बीच, सेना और जनता के बीच एकता मौजूद थी तथा सेना क्रान्तिकारी जुझारूपन की भावना से परिपूर्ण थी। चीन में पहली बार सेना में पार्टी-प्रतिनिधियों और राजनीतिक विभागों की व्यवस्था स्थापित होने के कारण सेना का रंग-रूप ही बदल गया था। १९२७ में संस्थापित लाल सेना और आज की आठवीं राह सेना ने इस व्यवस्था को विरासत में पाया है और उसे विकसित किया है। १९२४-२७ के क्रान्तिकारी काल में, नई भावना से ओतप्रोत सेना ने स्वभावत: अपने राजनीतिक दृष्टिकोण

से सुसंगत लड़ाई का तरीका अपनाया – निष्क्रिय और गैर-लचकीले रूप से कार्यवाही करने का नहीं, बल्कि पहल करके और उत्सुकता से आक्रमणात्मक कार्यवाही करने का तरीका। फलत: उत्तरी अभियान में उसने विजय प्राप्त की। आज प्रतिरोध-युद्ध की रणभूमि में हमें ऐसी ही सेना की दरकार है। ऐसे लोगों की दसियों लाख की तादाद में जरूरी तौर पर आवश्यकता नहीं है; यदि इस प्रकार के कई लाख सैनिक एक शक्ति-केन्द्र बन जाएं, तो जापानी साम्राज्यवाद को पराजित किया जा सकता है। प्रतिरोध-युद्ध के प्रारम्भ से ही देशभर में सैन्य-दलों ने जो वीरतापूर्ण कुरबानियां की हैं उनके कारण वे हमारी गहरी श्रद्धा के पात्र हैं। लेकिन रक्तपातपूर्ण लड़ाइयों के दौरान प्राप्त किए गए अनुभवों से हमें सबक सीखना चाहिए।

प्रश्न : जापानी सेना में जैसा अनुशासन है, उसे देखते हुए, युद्धबन्दियों के प्रति नरमी बरतने की आपकी नीति क्या प्रभावहीन साबित नहीं होगी? मिसाल के लिए, हो सकता है कि जापानी कमान आपके द्वारा रिहा किए गए युद्धबन्दियों की हत्या कर दे और समूची जापानी सेना आपकी नीति का अर्थ न समझ पाए।

उत्तर : यह असम्भव है। वे जितनी ही अधिक हत्याएं करेंगे, जापानी सिपाहियों के मन में चीनी सिपाहियों के प्रति उतनी ही सहानुभूति जागृत होती जाएगी। इस प्रकार के तथ्य व्यापक सिपाहियों से छिपाए नहीं जा सकते। अपनी इस नीति पर हम अविचल रूप से कायम रहेंगे। मिसाल के लिए जापानी सेना यदि आठवीं राह सेना के विरुद्ध जहरीली गैस का प्रयोग करने की अपनी घोषणा को अमल में लाती है, तो भी हम इस नीति को नहीं बदलेंगे। जापानी

युद्धबन्दियों के प्रति, जिनमें हमसे लड़ने को मजबूर किए गए जूनियर अफसर भी शामिल हैं, हम नरमी का बरताव करते रहेंगे। हम न तो उन्हें अपमानित करेंगे और न उनके साथ गाली-गलौज करेंगे, बल्कि दोनों ही देशों की जनता के हितों की एकरूपता की बात स्पष्ट करके हम उन्हें रिहा कर देंगे। जो वापस नहीं जाना चाहेंगे, वे आठवीं राह सेना में सेवा कर सकते हैं। प्रतिरोध-युद्ध की रणभूमि में यदि कोई "अन्तरराष्ट्रीय ब्रिगेड" उतरता है, तो वे उसमें शामिल होकर जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध हथियार उठा सकते हैं।

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में आत्मसमर्पणवाद

प्रश्न : मुझे मालूम है कि जापान युद्ध चलाने के साथ ही साथ शांघाई में शान्ति-सम्बन्धी अफवाहें भी फैला रहा है। उसका वास्तविक उद्देश्य क्या है?

उत्तर : जापानी साम्राज्यवादी अपनी कुछ योजनाओं में सफल हो जाने के बाद तीन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए फिर एक बार शान्ति का धूमावरण खड़ा करेंगे। उनके तीन उद्देश्य ये हैं : (१) जीते गए मोर्चों को सुदृढ़ बनाना, ताकि आगामी आक्रमणों के लिए रणनीतिक आधार के रूप में उनका इस्तेमाल किया जा सके ; (२) चीन के जापान-विरोधी मोर्चे में फूट डालना ; और (३) चीन-समर्थक अन्तरराष्ट्रीय मोर्चे को तोड़ना। मौजूदा शान्ति-सम्बन्धी अफवाहें केवल धुआं-बम फेंकने की शुरुआत हैं। खतरा

यह है कि चीन में कुछ ढुलमुल तत्व हैं जो शत्रु की चाल में फंसने के लिए तैयार हैं, और गद्दार व देशद्रोही तत्व उनके बीच सक्रिय होकर जापानी आक्रमणकारियों के सामने चीन का आत्मसमर्पण करवाने के प्रयास में तरह-तरह की अफवाहें फैला रहे हैं।

प्रश्न : आपके विचार में इस खतरे का परिणाम क्या हो सकता है?

उत्तर : इसके केवल दो परिणाम हो सकते हैं। चीनी जनता या तो इस आत्मसमर्पणवाद को परास्त कर देगी, या फिर आत्म-समर्पणवाद खुद उस पर ही सवार हो जाएगा, जिसके फलस्वरूप चीन के जापान-विरोधी मोर्चे में फूट पड़ जाएगी और चीन अव्यवस्था का शिकार हो जाएगा।

प्रश्न : इन दो में से किसकी अधिक सम्भावना है?

उत्तर : समूची चीनी जनता जापान के विरुद्ध अन्त तक युद्ध करने की मांग कर रही है। यदि शासक गुट का एक हिस्सा आत्म-समर्पणवाद की राह अपनाता है, तो फिर बाकी लोग निश्चय ही दृढ़तापूर्वक इसका विरोध करेंगे और जनता के साथ मिलकर प्रतिरोध-युद्ध जारी रखेंगे। बेशक, चीन के जापान-विरोधी मोर्चे के लिए यह एक दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी। लेकिन मेरा विश्वास है कि आत्म-समर्पणवादी जन-समर्थन प्राप्त नहीं कर सकेंगे और जनता आत्म-समर्पणवाद को परास्त करके युद्ध पर डटी रहेगी तथा विजय प्राप्त करेगी।

प्रश्न : क्या मैं जान सकता हूं कि आत्मसमर्पणवाद को कैसे परास्त किया जा सकता है?

उत्तर : कथनी और करनी दोनों के द्वारा ; कथनी के द्वारा यानी आत्मसमर्पणवाद के खतरे का पर्दाफाश करके और करनी

के द्वारा यानी आत्मसमर्पणवादी कार्यवाहियों को रोकने के लिए जनता को संगठित करके। आत्मसमर्पणवाद की जड़ें राष्ट्रीय पराजयवाद यानी राष्ट्रीय निराशावाद में हैं – अर्थात इस विचार में कि कुछ लड़ाइयों में पराजित हो जाने के बाद अब चीन में जापान से लड़ सकने की शक्ति नहीं रह गई। ये निराशावादी लोग यह नहीं समझते कि असफलता ही सफलता की जननी है, असफलताओं से प्राप्त सबक ही भावी विजय की बुनियाद बनते हैं। वे प्रतिरोध-युद्ध में पराजय को ही देखते हैं, उसकी उपलब्धियों को नहीं देखते, और खास तौर पर यह समझने में असमर्थ हैं कि हमारी पराजयों में विजय के तत्व निहित हैं, जबकि शत्रु की विजयों में उसकी पराजय के तत्व निहित हैं। जन-समुदाय के सामने हमें युद्ध की विजयपूर्ण सम्भावना को स्पष्ट करना चाहिए और उसे यह समझने में सहायता करनी चाहिए कि हमारी हारें और कठिनाइयां अस्थाई हैं और तमाम पराजयों के बावजूद अगर हम संघर्ष जारी रखेंगे तो अन्तिम विजय हमारी ही होगी। जन-आधार से वंचित होने पर आत्मसमर्पणवादियों के पास तिकड़में करने का कोई अवसर न रहेगा और जापान-विरोधी मोर्चा सुदृढ़ बन जाएगा।

जनवाद और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध

प्रश्न : कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में व्यक्त "जनवाद" का क्या अर्थ है? क्या इसका "युद्धकालीन सरकार" की धारणा से टकराव तो नहीं है?

उत्तर : बिलकुल नहीं। अगस्त १९३६ में ही कम्युनिस्ट पार्टी ने "जनवादी गणराज्य" का नारा दिया था। राजनीतिक और संगठनात्मक दृष्टि से इस नारे का महत्व है : (१) राज्य और सरकार को एक ही वर्ग का न होकर जापान-विरोधी तमाम वर्गों के सहयोग पर आधारित होना चाहिए, जिसमें गद्दार और देशद्रोही शामिल न किए जाएं और मजदूर, किसान तथा निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्से अवश्य शामिल किए जाएं। (२) ऐसी सरकार का संगठनात्मक रूप जनवादी केन्द्रीयता पर आधारित होना चाहिए, जो जनवादी होने के साथ-साथ केन्द्रीकृत भी हो और जिसमें जनवाद और केन्द्रीयता ये दो परस्पर विरोधी लगने वाली वस्तुएं एक निश्चित रूप में बंधी हुई हों। (३) यह सरकार जनता को तमाम आवश्यक राजनीतिक आजादियां प्रदान करेगी, खास तौर पर संगठन बनाने, प्रशिक्षण प्राप्त करने और आत्मरक्षा के लिए हथियारबन्द होने की आजादियां। इन तीन मामलों में जनवादी गणराज्य का "युद्धकालीन सरकार" की धारणा से टकराव नहीं होता, बल्कि राज्य तथा सरकार की ठीक यही व्यवस्था प्रतिरोध-युद्ध के लिए लाभदायक है।

प्रश्न : "जनवादी केन्द्रीयता" क्या अपने आपमें एक अन्तर-विरोधपूर्ण अभिव्यक्ति नहीं है?

उत्तर : हमें केवल अभिव्यक्ति पर ही नहीं, बल्कि वास्तविकता की ओर ध्यान देना चाहिए। जनवाद और केन्द्रीयता के बीच कोई अलंघ्य खाई नहीं है, चीन के लिए ये दोनों ही आवश्यक हैं। एक ओर तो हम ऐसी सरकार चाहते हैं जो जनमत की वास्तविक प्रति-निधि हो, जिसे देश के विशाल जन-समुदाय का समर्थन प्राप्त हो

ग्रौर जिसका समर्थन करने के लिए जनता स्वतंत्र हो तथा जिसकी नीतियों को प्रभावित करने के लिए उसे हर प्रकार का अवसर प्राप्त हो। जनवाद का यही मतलब है। दूसरी ओर प्रशासन-शक्ति का केन्द्रीकरण भी आवश्यक है। एक बार यदि जनता द्वारा मांगे गए नीति-सम्बन्धी उपाय उसकी प्रतिनिधि-संस्थाओं द्वारा उसकी अपनी चुनी हुई सरकार तक प्रेषित कर दिए जाएं, तो सरकार स्वयं ही उन पर अमल करेगी और निश्चय ही जब तक वह जनमत पर आधारित नीति के विरुद्ध नहीं जाती, तब तक वह आसानी से उन पर अमल करती रहेगी। केन्द्रीयता का यही मतलब है। केवल जनवादी केन्द्रीयता को अपनाकर ही सरकार सचमुच शक्तिशाली हो सकती है, और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में चीन की राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार को निश्चित रूप से ऐसी ही व्यवस्था अपनानी चाहिए।

प्रश्न : यह व्यवस्था युद्धकालीन मंत्रिमण्डल से तो मेल नहीं खाती, खाती है क्या ?

उत्तर : यह व्यवस्था पिछले जमाने के कुछ युद्धकालीन मंत्रिमण्डलों से मेल नहीं खाती।

प्रश्न : क्या कभी कुछ ऐसे युद्धकालीन मंत्रिमण्डल भी बने हैं जिनसे यह व्यवस्था मेल खाती है ?

उत्तर : हां, युद्धकाल की प्रशासन-व्यवस्थाओं को आम तौर पर दो प्रकार की व्यवस्थाओं में बांटा जा सकता है – यह युद्ध के स्वरूप द्वारा निर्धारित होता है – एक प्रकार की व्यवस्था है जनवादी केन्द्रीयता और दूसरी प्रकार की व्यवस्था है निरंकुश केन्द्रीयता। इतिहास में हुए तमाम युद्धों को उनके स्वरूप के अनुसार दो प्रकार

के युद्धों में बांटा जा सकता है – न्यायपूर्ण युद्ध और अन्यायपूर्ण युद्ध। मिसाल के लिए लगभग बीस साल पहले का योरपीय महायुद्ध एक अन्यायपूर्ण, साम्राज्यवादी युद्ध था। साम्राज्यवादी देशों की सरकारों ने जनता को साम्राज्यवाद के हितों के लिए लड़ने को विवश किया था और इस प्रकार वह युद्ध जनहित के विरुद्ध था। इन परिस्थितियों के अनुरूप बरतानिया में लायड जार्ज की जैसी सरकार बनी। लायड जार्ज ने बरतानवी जनता का दमन किया, साम्राज्यवादी युद्ध के विरुद्ध कुछ भी बोलने पर रोक लगा दी और युद्ध के विरुद्ध जनमत की अभिव्यक्ति करने वाले संगठनों तथा सभाओं को अवैध घोषित कर दिया। यद्यपि पार्लियामेण्ट बनी रही, लेकिन वह महज एक ऐसी पार्लियामेण्ट थी जो युद्ध-बजट पर मोहर लगाती थी और जो साम्राज्यवादियों के एक गुट का हथियार थी। युद्ध के दौरान सरकार और जनता के बीच एकता न होने की स्थिति में निरंकुश केन्द्रीयता वाली सरकार का उदय होता है, जिसके अन्तर्गत पूर्ण केन्द्रीयता ही होती है, जनवाद बिलकुल नहीं। लेकिन इतिहास में क्रान्तिकारी युद्ध भी हुए हैं, जैसे फ्रांस में, रूस में और आज के स्पेन में। इस प्रकार के युद्धों में सरकार को जनता के विरोध का भय नहीं रहता, क्योंकि इस प्रकार के युद्धों को चलाने के लिए जनता पूरी तरह तैयार रहती है। ऐसी सरकारें जनता के स्वेच्छापूर्ण समर्थन पर आधारित होती हैं, इसलिए उन्हें जनता से भयभीत होने के बदले जनता को जागृत करना चाहिए और उसे अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, जिससे वह युद्ध में सक्रिय रूप से भाग ले सके। चीन के राष्ट्रीय मुक्ति-युद्ध को जनता का पूर्ण समर्थन प्राप्त है और उसके शामिल

हुए बिना इस युद्ध में विजय नहीं प्राप्त की जा सकती ; इसलिए जनवादी केन्द्रीयता एक आवश्यकता बन जाती है। १९२६-२७ के उत्तरी अभियान के दौरान भी इसी जनवादी केन्द्रीयता के द्वारा जीतें हासिल की गई थीं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जब जनहित प्रत्यक्ष रूप से युद्ध के उद्देश्यों में प्रतिबिम्बित होता है, तो सरकार जितनी ही अधिक जनवादी होती है, युद्ध को उतने ही प्रभावशाली ढंग से चलाया जा सकता है। ऐसी सरकार को इस बात का भय नहीं होना चाहिए कि जनता युद्ध का विरोध करेगी, इसके उल्टे उसे तो चिंता इस बात की होनी चाहिए कि कहीं जनता युद्ध के प्रति निष्क्रिय या उपेक्षापूर्ण न बनी रहे। युद्ध का स्वरूप ही सरकार और जनता के सम्बन्धों को निर्धारित करता है — यह इतिहास का एक नियम है।

प्रश्न : सरकार की ऐसी व्यवस्था स्थापित करने के लिए आप कौन से कदम उठाने जा रहे हैं?

उत्तर : मुख्य समस्या है क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच का सहयोग।

प्रश्न : क्यों ?

उत्तर : चीन में पिछले १५ वर्षों में क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के सम्बन्धों की स्थिति एक निर्णायक राजनीतिक तत्व रही है। १९२४-२७ के दौरान दोनों पार्टियों में सहयोग के फलस्वरूप प्रथम क्रान्ति में जीतें हासिल की गई थीं। १९२७ में दोनों पार्टियों के बीच फूट पड़ जाने के फलस्वरूप पिछले १० वर्षों की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति आई। अलबत्ता, इस फूट की जिम्मेदारी हम पर नहीं है। हमें तो क्वोमिन्ताङ द्वारा किए गए दमन का विवश होकर प्रतिरोध

करना पड़ा। हम तो चीन की मुक्ति के गौरवशाली फरहरे को ऊंचा उठाए रखने के लिए बराबर डटे रहे। और अब तीसरी मंजिल आई है, जब जापान का प्रतिरोध करने और राष्ट्र को बचाने के लिए एक निश्चित कार्यक्रम के आधार पर दोनों पार्टियों को पूरी तरह सहयोग करना चाहिए। हमारे निरन्तर प्रयासों के फलस्वरूप अन्ततोगत्वा सहयोग की स्थापना का ऐलान कर दिया गया है। लेकिन मुख्य बात है दोनों पक्षों द्वारा एक मुश्तरका कार्यक्रम को स्वीकृत करना और उस पर अमल करना। ऐसे कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग है एक नई व्यवस्था पर आधारित सरकार की स्थापना करना।

प्रश्न : इन दोनों पार्टियों के सहयोग से नई व्यवस्था की स्थापना कैसे की जा सकती है?

उत्तर : हम सरकारी ढांचे और सैन्य-व्यवस्था के पुनर्गठन का प्रस्ताव पेश कर रहे हैं। मौजूदा संकटकालीन स्थिति का मुकाबला करने के लिए हमारा यह सुझाव है कि एक अस्थाई राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाई जाए। इस एसेम्बली के लिए प्रतिनिधि विभिन्न जापान-विरोधी राजनीतिक पार्टियों, जापान-विरोधी सैन्य-दलों तथा जापान-विरोधी जन-संगठनों और व्यापारिक संगठनों से उचित अनुपात के मुताबिक चुने जाने चाहिए, मोटे तौर पर उसी तरह जैसा कि १९२४ में डा० सुन यात-सेन ने सुझाव दिया था। इस एसेम्बली को सत्ताधिकार की एक ऐसी सर्वोच्च संस्था के रूप में कार्य करना चाहिए जो राष्ट्र को बचाने की नीति निर्धारित करे, वैधानिक कार्यक्रम को स्वीकार करे और सरकार को चुने। हमारा विचार है कि प्रतिरोध-युद्ध एक नाजुक मोड़ पर पहुंच चुका है और

केवल एक ऐसी राष्ट्रीय एसेम्बली को, जो सत्ताधिकार-सम्पन्न होने के साथ-साथ जनमत की प्रतिनिधि भी हो, अविलम्ब बुलाकर ही चीन के राजनीतिक जीवन का पुनरुत्थान किया जा सकता है और मौजूदा संकट पर काबू पाया जा सकता है। हम इस सुझाव के सम्बन्ध में क्वोमिन्ताङ से विचारों का आदान-प्रदान कर रहे हैं और हमें आशा है कि हम उसकी सहमति प्राप्त कर लेंगे।

प्रश्न : क्या राष्ट्रीय सरकार ने राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाने की बात को त्याग देने का ऐलान नहीं किया है?

उत्तर : उसका त्याग देना ही सही था। जिस राष्ट्रीय एसेम्बली को बुलाने की बात त्याग दी गई है उसकी तैयारी क्वोमिन्ताङ कर रही थी। क्वोमिन्ताङ की पूर्वशर्तों के अनुसार इस एसेम्बली के पास रत्तीभर भी अधिकार न होते और उसके चुनाव की विधि जनमत के बिलकुल विरुद्ध थी। हमने और समाज के विभिन्न व्यवसायों के लोगों ने एक साथ इस प्रकार की राष्ट्रीय एसेम्बली का विरोध किया। जिस अस्थाई राष्ट्रीय एसेम्बली को बुलाने की बात हम कर रहे हैं, वह उससे बिलकुल भिन्न है जिसे बुलाने का विचार त्याग दिया गया है। इस अस्थाई राष्ट्रीय एसेम्बली को बुलाना निस्सन्देह सारे देश में एक नई जान डाल देगा और सरकारी ढांचे और सैन्य-व्यवस्था का पुनर्गठन करने तथा समूची जनता को गोलबन्द करने के लिए यह एक आवश्यक पूर्वशर्त साबित होगा। प्रतिरोध-युद्ध की स्थिति का अनुकूल दिशा में मुड़ना इसी पर निर्भर है।

शांघाई और थाएय्वान के पतन के बाद जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की परिस्थिति और कार्य*

१२ नवम्बर १९३७

१. वर्तमान परिस्थिति आंशिक प्रतिरोध से पूर्ण प्रतिरोध में संक्रमण करने की है

१. जापानी साम्राज्यवाद के आक्रमण के विरुद्ध हर किस्म के प्रतिरोध-युद्ध का हम समर्थन करते हैं, चाहे वह आंशिक ही क्यों न हो। कारण, आंशिक प्रतिरोध की स्थिति प्रतिरोध न करने की स्थिति से एक कदम आगे है, तथा किसी हद तक इसका स्वरूप क्रान्तिकारी है और यह मातृभूमि की रक्षा के लिए किया जाने वाला युद्ध है।

२. लेकिन आंशिक प्रतिरोध करने वाला एक ऐसा युद्ध जिसे

*यह कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा नवम्बर १९३७ में येनान में आयोजित पार्टी के सक्रिय कार्यकर्ताओं की मीटिंग में प्रस्तुत रिपोर्ट की रूपरेखा है। पार्टी के भीतर मौजूद दक्षिणपंथी अवसरवादियों ने इसका तुरन्त विरोध किया, तथा अक्तूबर १९३८ में आयोजित छठी केन्द्रीय कमेटी के छठे पूर्ण अधिवेशन में ही इस दक्षिणपंथी भटकाव पर बुनियादी रूप से काबू पाया जा सका।

केवल सरकार चलाती है और जिसमें व्यापक जन-समुदाय शामिल नहीं होता, निश्चित रूप से असफल रहेगा, जैसा कि हम पहले बता चुके हैं (इस वर्ष अप्रैल में येनान में आयोजित पार्टी के सक्रिय कार्यकर्ताओं की मीटिंग में, मई में आयोजित पार्टी के राष्ट्रीय सम्मेलन में और अगस्त में केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव[१] में)। कारण, यह एक पूर्ण राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध नहीं होता, एक लोकयुद्ध नहीं होता।

३. हम ऐसे पूर्ण राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध का पक्षपोषण करते हैं जिसमें समूची जनता को गोलबन्द किया जाता है, दूसरे शब्दों में हम पूर्ण प्रतिरोध का पक्षपोषण करते हैं। कारण, केवल इसी प्रकार का प्रतिरोध लोकयुद्ध कहलाता है और मातृभूमि की रक्षा करने के लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

४. हालांकि आंशिक प्रतिरोध का युद्ध भी, जिसका पक्षपोषण क्वोमिन्ताङ द्वारा किया जाता है, राष्ट्रीय युद्ध कहलाता है और किसी हद तक उसका स्वरूप भी क्रान्तिकारी है, लेकिन उसका क्रान्तिकारी स्वरूप पूर्णता से दूर है। आंशिक प्रतिरोध से युद्ध में अनिवार्य रूप से शिकस्त हासिल होती है; इससे मातृभूमि की रक्षा करने में हरगिज कामयाबी हासिल नहीं होती।

५. प्रतिरोध के बारे में कम्युनिस्ट पार्टी के दृष्टिबिन्दु और क्वोमिन्ताङ के वर्तमान दृष्टिबिन्दु के बीच यही उसूली फर्क है। अगर कम्युनिस्टों ने इस उसूली फर्क को भुला दिया, तो वे प्रतिरोध-युद्ध का सही मार्गदर्शन करने में असमर्थ रहेंगे, क्वोमिन्ताङ के एकांगीपन पर काबू पाने में असमर्थ रहेंगे, तथा वे पतित होकर अपने उसूलों को छोड़ने की स्थिति में पहुंच जाएंगे और अपनी पार्टी को गिराकर

क्वोमिन्ताङ के स्तर पर पहुंचा देंगे। यह पवित्र राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध और मातृभूमि के रक्षा-कार्य के खिलाफ एक अपराध होगा।

६. एक पूर्ण राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध में, एक पूर्ण प्रतिरोध के युद्ध में, यह आवश्यक है कि कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रस्तुत जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के दससूत्री कार्यक्रम को कार्यान्वित किया जाए, तथा यह आवश्यक है कि एक ऐसी सरकार व सेना हो जो इस कार्यक्रम को मुकम्मिल तौर पर लागू करे।

७. शांघाई और थाएय्वान के पतन के बाद की परिस्थिति इस प्रकार है :

(१) उत्तरी चीन में नियमित युद्ध, जिसमें क्वोमिन्ताङ ने मुख्य भूमिका अदा की, समाप्त हो गया है तथा छापामार युद्ध ने, जिसमें कम्युनिस्ट पार्टी मुख्य भूमिका अदा कर रही है, प्रमुख स्थान ले लिया है। च्याङसू और चच्याङ प्रान्तों में जापानी आक्रमणकारियों ने क्वोमिन्ताङ की युद्ध-पंक्तियों को तोड़ दिया है तथा वे नानकिङ और याङत्सी घाटी की ओर बढ़ रहे हैं। यह स्पष्ट हो चुका है कि क्वोमिन्ताङ द्वारा किया जाने वाला आंशिक प्रतिरोध अब ज्यादा दिनों तक नहीं टिक सकता।

(२) अपने खुद के साम्राज्यवादी हितों को देखते हुए, बरतानिया, अमरीका और फ्रांस की सरकारों ने संकेत दिया है कि वे चीन की मदद करेंगी, लेकिन अब तक उनसे सिर्फ जबानी हमदर्दी ही हासिल हुई है और कोई अमली इमदाद हासिल नहीं हुई।

(३) जर्मन और इटालवी फासिस्ट, जापानी साम्राज्यवाद की हर तरह से मदद कर रहे हैं।

(४) क्वोमिन्ताङ अब भी अपनी एक पार्टी की तानाशाही और जनता पर अपने एकतंत्री शासन में, जिनके जरिए वह आंशिक प्रतिरोध कर रही है, कोई बुनियादी परिवर्तन करने को तैयार नहीं है।

यह परिस्थिति का एक पहलू है।

दूसरा पहलू इस प्रकार है :

(१) कम्युनिस्ट पार्टी और आठवीं राह सेना का राजनीतिक प्रभाव बड़ी तेजी से दूर-दूर तक फैलता जा रहा है, तथा "राष्ट्र के उद्धारक" के रूप में उनकी समूचे देश में प्रशंसा हो रही है। कम्युनिस्ट पार्टी और आठवीं राह सेना उत्तरी चीन में छापामार युद्ध जारी रखने के लिए कृतसंकल्प हैं, ताकि समूचे देश की रक्षा की जा सके, जापानी आक्रमणकारियों को उलझाए रखा जा सके तथा उन्हें मध्यवर्ती मैदानों और उत्तर-पश्चिम पर हमला करने से रोका जा सके।

(२) जन-आन्दोलन एक कदम और आगे बढ़ गया है।

(३) राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग वाम पक्ष की ओर झुक रहा है।

(४) समकालीन स्थिति में सुधार करने का पक्षपोषण करने वाली शक्तियां क्वोमिन्ताङ के भीतर बढ़ रही हैं।

(५) जापान का विरोध करने और चीन की मदद करने का आन्दोलन दुनिया की जनता में फैलता जा रहा है।

(६) सोवियत संघ चीन को अमली इमदाद देने की तैयारी कर रहा है।

यह परिस्थिति का दूसरा पहलू है।

८. इसलिए वर्तमान परिस्थिति आंशिक प्रतिरोध से पूर्ण प्रतिरोध में संक्रमण करने की है। जहां एक ओर आंशिक प्रतिरोध ज्यादा दिन नहीं टिक सकेगा, वहां दूसरी ओर पूर्ण प्रतिरोध अभी शुरू नहीं हुआ। एक स्थिति से दूसरी स्थिति में संक्रमण करने का यह समय का फासला खतरे से खाली नहीं है।

९. इस काल में, चीन द्वारा किया जाने वाला आंशिक प्रतिरोध इन तीन दिशाओं में से किसी एक दिशा में बढ़ेगा :

पहली दिशा है आंशिक प्रतिरोध को समाप्त करना और उसकी जगह पूर्ण प्रतिरोध पर अमल करना। राष्ट्र के अधिकांश लोगों की यही मांग है, लेकिन क्वोमिन्ताङ ने अभी तक इसके बारे में कोई फैसला नहीं किया।

दूसरी दिशा है प्रतिरोध को समाप्त करना और उसकी जगह आत्मसमर्पण कर देना। जापानी आक्रमणकारियों, चीनी गद्दारों और जापान-परस्त तत्वों की यही मांग है, लेकिन अधिकांश चीनी लोग इसका विरोध करते हैं।

तीसरी दिशा है चीन में प्रतिरोध और आत्मसमर्पण का सह-अस्तित्व। यह जापानी आक्रमणकारियों, चीनी गद्दारों और जापान-परस्त तत्वों द्वारा चीन के जापान-विरोधी मोर्चे में दरार पैदा करने के लिए उस समय रची जाने वाली साजिशों का परिणाम होगा जब उनके लिए दूसरी दिशा में बढ़ना असम्भव हो जाएगा। वे लोग

इस समय इसी प्रकार की साजिश रच रहे हैं। सचमुच यह खतरा अत्यन्त गम्भीर है।

१०. वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए ऐसा लगता है कि उन घरेलू और अन्तरराष्ट्रीय तत्वों का, जो आत्मसमर्पणवाद को हावी होने से रोकते हैं, पलड़ा भारी है। इन तत्वों में ये शामिल हैं: जापान द्वारा चीन को गुलाम बनाने की नीति पर अड़े रहना, जिसके परिणामस्वरूप चीन के सामने लड़ने के सिवाय और कोई चारा नहीं; कम्युनिस्ट पार्टी और आठवीं राह सेना की मौजूदगी; चीनी जनता की आकांक्षाएं; क्वोमिन्ताङ के अधिकांश सदस्यों की आकांक्षाएं; बरतानिया, अमरीका और फ्रांस की यह परेशानी कि कहीं क्वोमिन्ताङ के आत्मसमर्पण से उनके हितों को हानि न पहुंचे; सोवियत संघ की मौजूदगी और चीन को मदद देने की उसकी नीति; सोवियत संघ से चीनी जनता को भारी उम्मीदें होना (जो निराधार नहीं हैं)। इन तत्वों को समुचित रूप से और संयुक्त रूप से इस्तेमाल करके न सिर्फ आत्मसमर्पणवाद और फूटपरस्ती को नाकाम किया जा सकेगा बल्कि आंशिक प्रतिरोध से आगे बढ़ने के रास्ते की रुकावटों को भी दूर किया जा सकेगा।

११. इसलिए आंशिक प्रतिरोध से पूर्ण प्रतिरोध में संक्रमण करने की सम्भावना अवश्य मौजूद है। इस सम्भावना के लिए प्रयत्न करना सभी चीनी कम्युनिस्टों, क्वोमिन्ताङ के सभी प्रगतिशील सदस्यों तथा समूची चीनी जनता का फौरी मुश्तरका कार्य है।

१२. चीन का जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध इस समय एक गम्भीर संकट का सामना कर रहा है। हो सकता है कि यह संकट लम्बे अरसे तक जारी रहे अथवा काफी जल्दी ही दूर

हो जाए। निर्णयात्मक तत्व ये हैं: देश के भीतर क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग और इस सहयोग के आधार पर क्वोमिन्ताङ की नीति में परिवर्तन, तथा मजदूर व किसान जन-समुदाय की शक्ति; देश के बाहर, सोवियत संघ की मदद।

१३. क्वोमिन्ताङ का राजनीतिक व संगठनात्मक सुधार करना आवश्यक भी है और सम्भव भी।[२] इसके मुख्य कारण हैं जापान का दबाव, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की संयुक्त-मोर्चा नीति, चीनी जनता की आकांक्षाएं तथा क्वोमिन्ताङ के भीतर नई शक्तियों का विकास। हमारा कार्य है क्वोमिन्ताङ में इस सुधार के लिए प्रयत्न करना ताकि सरकार और सेना में सुधार करने के लिए एक आधार बन जाए। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसे सुधार के लिए क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी की सहमति आवश्यक है, तथा हम तो केवल अपना सुझाव ही दे सकते हैं।

१४. सरकार में सुधार होना चाहिए। हमने एक अस्थाई राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाने का प्रस्ताव रखा है, जो आवश्यक भी है और सम्भव भी। इसमें सन्देह नहीं कि इस सुधार के लिए भी क्वोमिन्ताङ की सहमति आवश्यक है।

१५. सेना में सुधार करने के कार्य के अन्तर्गत नई सेनाओं का निर्माण करने और पुरानी सेनाओं में सुधार करने के कार्य आते हैं। अगर एक नई राजनीतिक भावना से लैस सेना का, जिसमें २,५०,००० से ३,००,००० तक सैनिक हों, छै से बारह महीने तक की अवधि में निर्माण किया जा सका, तो जापान-विरोधी रणभूमि की परिस्थिति बदलनी शुरू हो जाएगी। इस प्रकार की नई सेना सभी पुरानी सेनाओं पर असर डालेगी तथा उनको अपने

चारों ओर गोलबन्द कर लेगी। इससे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में रणनीतिक प्रत्याक्रमण शुरू करने के लिए फौजी आधार तैयार हो जाएगा। इस सुधार के लिए भी क्वोमिन्ताङ की सहमति प्राप्त करना जरूरी है। इस सुधार के दौरान आठवीं राह सेना को ऐसी भूमिका अदा करनी चाहिए जिससे एक मिसाल कायम की जा सके। आठवीं राह सेना का खुद का भी विस्तार किया जाना चाहिए।

२. पार्टी के भीतर और समूचे देश में, दोनों ही जगह आत्मसमर्पणवाद का विरोध किया जाना चाहिए

पार्टी के भीतर वर्ग-आत्मसमर्पणवाद का विरोध करो

१६. १९२७ में छन तू-श्यू के आत्मसमर्पणवाद के परिणामस्वरूप क्रान्ति असफल रही। खून से लिखा गया यह ऐतिहासिक सबक हमारी पार्टी के किसी भी सदस्य को हरगिज नहीं भूलना चाहिए।

१७. जहां तक पार्टी की जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की कार्यदिशा का सवाल है, लूकओछ्याओ घटना के पहले पार्टी के भीतर मुख्य खतरा "वामपंथी" अवसरवाद यानी रुद्धद्वारवाद था, जिसका मुख्य कारण यह था कि क्वोमिन्ताङ ने अभी जापान का प्रतिरोध करना शुरू नहीं किया था।

१८. लूकओछ्याओ घटना के बाद, पार्टी के भीतर मुख्य खतरा "वामपंथी" रुद्धद्वारवाद नहीं रहा बल्कि दक्षिणपंथी अवसरवाद यानी आत्मसमर्पणवाद बन गया, जिसका मुख्य कारण यह है कि

क्वोमिन्ताङ ने जापान का प्रतिरोध करना शुरू कर दिया है।

१९. अप्रैल में पार्टी के सक्रिय कार्यकर्ताओं की येनान में आयोजित मीटिंग में, उसके बाद मई में पार्टी के राष्ट्रीय सम्मेलन में, तथा खास तौर पर अगस्त में केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की मीटिंग (लोछ्वान मीटिंग) में, हम यह सवाल पेश कर चुके हैं: संयुक्त मोर्चे में क्या पूंजीपति वर्ग का नेतृत्व सर्वहारा वर्ग करेगा अथवा सर्वहारा वर्ग का नेतृत्व पूंजीपति वर्ग? क्या क्वोमिन्ताङ कम्युनिस्ट पार्टी को अपनी तरफ खींचेगी अथवा कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्ताङ को? मौजूदा ठोस राजनीतिक कार्य की दृष्टि से इस सवाल का मतलब यह है: क्या क्वोमिन्ताङ को जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के दससूत्री कार्यक्रम के स्तर तक, पूर्ण प्रतिरोध के स्तर तक, जिसका पक्षपोषण कम्युनिस्ट पार्टी करती है, ऊपर उठाया जाए? अथवा कम्युनिस्ट पार्टी को क्वोमिन्ताङ की जमींदार वर्ग व पूंजीपति वर्ग की तानाशाही के स्तर तक, आंशिक प्रतिरोध के स्तर तक गिरा दिया जाए?

२०. आखिर क्या वजह है कि हमने यह सवाल इतने तीक्ष्ण शब्दों में पेश किया है? इसका जवाब यह है:

एक तरफ तो हमारे सामने ये चीजें मौजूद हैं – चीनी पूंजीपति वर्ग का सुलह-समझौता करने का रुझान; भौतिक शक्ति की दृष्टि से क्वोमिन्ताङ का बरतर स्थिति में होना; क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के तीसरे पूर्ण अधिवेशन का ऐलान और उसके फैसले, जिनमें कम्युनिस्ट पार्टी पर लांछन लगाए गए हैं और उसका अपमान किया गया है तथा "वर्ग-संघर्ष का अन्त करने" की चीख-पुकार मचाई गई है; क्वोमिन्ताङ की यह लालसा कि "कम्युनिस्ट

पार्टी आत्मसमर्पण कर दे" तथा इस उद्देश्य के लिए उसके द्वारा किया जाने वाला व्यापक प्रचार ; च्याङ काई-शेक द्वारा कम्युनिस्ट पार्टी को अपने नियंत्रण में रखने के लिए की जाने वाली कोशिशें ; लाल सेना और जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्रों पर अंकुश लगाने और उन्हें कमजोर बनाने की क्वोमिन्ताङ नीति ; जुलाई में क्वोमिन्ताङ के लूशान ट्रेनिंग कोर्स[१] के दौरान बनाई गई यह षड्यंत्रकारी योजना कि "जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान कम्युनिस्ट पार्टी की शक्ति को पांच में से दो हिस्से घटा दिया जाए" ; कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं को शोहरत व दौलत, शराब व औरत के जरिए आचरणभ्रष्ट करने की क्वोमिन्ताङ की कोशिशें ; निम्न-पूंजीपति वर्ग के चन्द उग्रवादियों (जिनका प्रतिनिधित्व चाङ नाए-छी[४] करता था) का राजनीतिक आत्मसमर्पण ; वगैरह-वगैरह।

दूसरी तरफ हमारे सामने ये चीजें मौजूद हैं – कम्युनिस्टों का असमान सैद्धान्तिक स्तर ; यह तथ्य कि हमारे बहुत से पार्टी-सदस्यों में उन अनुभवों की कमी है जो उत्तरी अभियान के दौरान दोनों पार्टियों के बीच के सहयोग से प्राप्त हुए हैं ; यह तथ्य कि पार्टी-सदस्यों की एक बड़ी तादाद निम्न-पूंजीपति वर्ग से आई है ; कुछ पार्टी-सदस्यों में कठिन संघर्ष की जिन्दगी बिताते रहने की अरुचि ; संयुक्त मोर्चे में क्वोमिन्ताङ के साथ गैरउसूली समझौता करने की प्रवृत्ति ; आठवीं राह सेना में एक नए किस्म के युद्धपतिवाद की प्रवृत्ति का उदय ; क्वोमिन्ताङ सरकार में कम्युनिस्ट पार्टी के शामिल होने की समस्या का पैदा होना ; जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्रों में बेहद सुलह-समझौते करने की प्रवृत्ति का उदय ; वगैरह-वगैरह।

उपर्युक्त गम्भीर परिस्थितियों को देखते हुए, हमें यह सवाल अत्यन्त तीक्ष्ण रूप से उठाना चाहिए कि नेतृत्व किसके हाथ में रहेगा, तथा आत्मसमर्पणवाद का दृढ़ता से विरोध करना चाहिए।

२१. पिछले कई महीनों से और खास तौर पर प्रतिरोध-युद्ध छिड़ने के बाद से, कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी और उसके सभी स्तरों के पार्टी-संगठनों ने आत्मसमर्पणवादी प्रवृत्तियों के खिलाफ, चाहे वे वास्तविक हों अथवा सम्भावित, एक निश्चित और अविचल संघर्ष चलाया है, उनके खिलाफ विभिन्न प्रकार की आवश्यक सावधानी बरती है तथा अच्छे नतीजे हासिल किए हैं।

कम्युनिस्टों के सरकार में शरीक होने के सवाल के बारे में केन्द्रीय कमेटी ने एक प्रस्ताव का मसौदा[५] जारी किया है।

आठवीं राह सेना में नए युद्धपतिवाद की प्रवृत्ति के खिलाफ संघर्ष शुरू कर दिया गया है। यह प्रवृत्ति उन चन्द व्यक्तियों में जाहिर होती है जो लाल सेना का नाम बदलने के बाद से पूरी तरह कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने को तैयार नहीं हैं, व्यक्तिगत शौर्यवाद की भावना के शिकार हो गए हैं, क्वोमिन्ताङ द्वारा की जाने वाली नियुक्तियों पर (जैसे अफसर बनने पर) गर्व अनुभव करते हैं, वगैरह-वगैरह। इस नए किस्म के युद्धपतिवाद की प्रवृत्ति की जड़ भी वही है (कम्युनिस्ट पार्टी को नीचे गिराकर क्वोमिन्ताङ के स्तर पर पहुंचा देना) और इसका परिणाम भी वही है (जन-समुदाय से पृथक हो जाना), जैसा कि पुराने किस्म के युद्धपतिवाद की प्रवृत्ति का था, जो जनता को मारने-पीटने और गालियां देने, अनुशासन भंग करने इत्यादि के रूप में प्रकट होता था ; फिर भी यह प्रवृत्ति खास तौर पर खतरनाक है क्योंकि यह क्वोमिन्ताङ-

कम्युनिस्ट संयुक्त मोर्चे के काल में प्रकट हो रही है, तथा इसलिए इसकी ओर विशेष ध्यान देना और इसका डटकर विरोध करना जरूरी है। राजनीतिक कमिसार व्यवस्था, जिसे क्वोमिन्ताङ के हस्तक्षेप के कारण खत्म कर दिया गया था, तथा राजनीतिक विभाग व्यवस्था, जिसका नया नाम इसी कारण "राजनीतिक ट्रेनिंग कार्यालय" रख दिया गया था, अब फिर से कायम कर दी गई हैं। हमने "पहलकदमी अपने हाथ में रखते हुए स्वतंत्र रूप से पहाड़ी क्षेत्रों में छापामार युद्ध चलाने" के नए रणनीतिक उसूल का प्रतिपादन किया है और दृढ़ता से उस पर अमल किया है, तथा इस प्रकार फौजी कार्यवाहियों में और अन्य कार्यों में आठवीं राह सेना की सफलता की बुनियादी गारन्टी कर दी है। हमने क्वोमिन्ताङ की इस मांग को ठुकरा दिया है कि आठवीं राह सेना की यूनिटों में कार्यकर्ताओं के रूप में क्वोमिन्ताङ के सदस्यों को भेजा जाए, तथा हम आठवीं राह सेना पर केवल कम्युनिस्ट पार्टी का पूर्ण नेतृत्व कायम करने के उसूल पर कायम रहे हैं। इसी प्रकार हमने क्रान्तिकारी जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों में "संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता और पहलकदमी" के उसूल का प्रतिपादन किया है। हमने "संसदवाद" (बेशक, दूसरी इन्टरनेशनल का संसदवाद नहीं जो चीनी पार्टी में मौजूद नहीं है) की प्रवृत्ति[६] को सुधार लिया है; हम डाकुओं, दुश्मन के जासूसों और तोड़फोड़ करने वालों के खिलाफ अपने संघर्ष में भी कायम रहे हैं।

शीआन में हमने क्वोमिन्ताङ के साथ अपने सम्बन्धों के क्षेत्र में बेउसूली की प्रवृत्ति (बेहद सुलह-समझौते करने की प्रवृत्ति) को सुधार लिया है तथा जन-संघर्ष का नए सिरे से विकास किया है।

पूर्वी कानसू में हमने कुल मिलाकर वही किया है जो कुछ शीआन में किया है।

शांघाई में हमने "कम आवाहन करने और ज्यादा सुझाव देने" की चाङ नाए-छी की कार्यदिशा की आलोचना की है तथा देश को विनाश से बचाने के आन्दोलन के कार्य में अत्यधिक सुलह-समझौता करने की प्रवृत्ति को सुधारना शुरू कर दिया है।

दक्षिण के छापामार क्षेत्रों में – ये क्षेत्र क्वोमिन्ताङ के खिलाफ हमारे दस साल के रक्तपातपूर्ण युद्ध की उपलब्धियों के एक अंश, दक्षिण के सभी प्रान्तों में हमारे जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध के रणनीतिक गढ़ों और हमारी उन सैन्य-शक्तियों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिन्हें क्वोमिन्ताङ ने शीआन घटना के बाद भी "घेरा डालने और विनाश करने" की कार्यवाही के जरिए नेस्तनाबूद करने की कोशिश की तथा जिन्हें क्वोमिन्ताङ ने लूकओछ्याओ घटना के बाद भी "बाघ को प्रलोभन देकर पहाड़ों से बाहर निकालने" के नए तरीके से कमजोर बनाने की कोशिश की – हमने इस बात की विशेष सावधानी बरती है कि (१) परिस्थिति का खयाल किए बगैर अपनी सैन्य-शक्ति को केन्द्रित करने (जिससे क्वोमिन्ताङ को हमारे ये गढ़ नष्ट करने में सहायता मिलेगी) से बचा जाए, (२) क्वोमिन्ताङ द्वारा भेजे गए व्यक्तियों को ठुकरा दिया जाए, तथा (३) एक अन्य हो मिङ घटना के खतरे के प्रति (यानी क्वोमिन्ताङ की घेरेबन्दी में फंसने और निहत्थे किए जाने के खतरे के प्रति)[७] सावधान रहा जाए।

"मुक्ति साप्ताहिक"[८] में हमने लगातार गम्भीरतापूर्वक और समुचित रूप से आलोचना करने का रुख अपनाया है।

२२. सशस्त्र प्रतिरोध में अविचल रहने और अन्तिम विजय प्राप्त करने तथा साथ ही आंशिक प्रतिरोध को पूर्ण प्रतिरोध में बदल देने के लिए यह आवश्यक है कि जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की कार्यदिशा पर कायम रहा जाए तथा संयुक्त मोर्चे का विस्तार किया जाए और उसे सुदृढ़ बनाया जाए। क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट संयुक्त मोर्चे को तहस-नहस करने वाले किसी भी विचार को बरदाश्त नहीं किया जाएगा। हमें अब भी "वामपंथी" रुद्ध-द्वारवाद से सतर्क रहना चाहिए। लेकिन साथ ही हमें संयुक्त मोर्चे से सम्बन्धित अपने समूचे कार्य में स्वतंत्रता और पहलकदमी के उसूल पर मजबूती से कायम रहना चाहिए। क्वोमिन्ताङ और अन्य किसी भी पार्टी के साथ हमारा संयुक्त मोर्चा एक निश्चित प्रोग्राम को कार्यान्वित करने पर आधारित है। इस आधार के बिना कोई संयुक्त मोर्चा कायम नहीं किया जा सकता, और ऐसी हालत में सहयोग गैरउसूली होगा और आत्मसमर्पणवाद की अभिव्यक्ति बन जाएगा। इस प्रकार जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध में विजय प्राप्त करने की कुंजी है "संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता और पहलकदमी" के उसूल को समझाना, उसे लागू करना और उस पर कायम रहना।

२३. यह सब करने का हमारा मकसद क्या है? एक लिहाज से हमारा मकसद है उस आधार-भूमि पर कायम रहना जिसे हम प्राप्त कर चुके हैं, कारण, यह आधार-भूमि हमारा रणनीतिक प्रस्थान-बिन्दु है तथा इसे खो बैठने का मतलब होगा सब कुछ खो बैठना। लेकिन हमारा मुख्य मकसद है अपनी आधार-भूमि का विस्तार करना तथा "जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में शामिल होने के लिए और जापानी साम्राज्यवाद का तख्ता उलट देने के लिए कोटि-कोटि जनता को गोलबन्द करने" के सकारात्मक उद्देश्य को प्राप्त करना। अपनी आधार-भूमि पर कायम रहना और उसका विस्तार करना, ये दोनों एक दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। पिछले कुछ महीनों में, निम्न-पूंजीपति वर्ग के अनेक अन्य वामपक्षी सदस्य हमारे प्रभाव के अन्तर्गत एकताबद्ध हो गए हैं, क्वोमिन्ताङ के खेमे में मौजूद नई शक्तियां बढ़ गई हैं, शानशी में जन-संघर्ष का विकास हुआ है तथा हमारे पार्टी-संगठनों का अनेक स्थानों में विस्तार हुआ है।

२४. लेकिन यह बात हमें स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि समूचे देश के पैमाने पर हमारी पार्टी की संगठनात्मक शक्ति आम तौर पर अब भी काफी थोड़ी है। समूचे देश के पैमाने पर जन-समुदाय की शक्ति भी काफी थोड़ी है, मजदूर व किसान – जन-समुदाय के बुनियादी हिस्से – अभी संगठित नहीं हो पाए। इन सब बातों का कारण है एक तरफ तो क्वोमिन्ताङ की नियंत्रण व दमन की नीति, और दूसरी तरफ हमारे अपने काम का अपर्याप्त होना, यहां तक कि उसका बिलकुल अभाव होना। मौजूदा जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध में यह हमारी पार्टी की बुनियादी कमजोरी है। जब तक हम इस कमजोरी को दूर नहीं कर लेंगे, तब तक जापानी साम्राज्यवाद को शिकस्त नहीं दी जा सकेगी। यह मकसद हासिल करने के लिए हमें "संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता और पहलकदमी" के उसूल पर चलना चाहिए तथा आत्मसमर्पण और अत्यधिक सुलह-समझौते की तमाम प्रवृत्तियों पर काबू पा लेना चाहिए।

पूरे देश के पैमाने पर राष्ट्रीय आत्मसमर्पणवाद का विरोध करो

२५. ऊपर जो बातें कही गई हैं, वे वर्ग-आत्मसमर्पणवाद के बारे में हैं। यह प्रवृत्ति सर्वहारा वर्ग को पूंजीपति वर्ग के सुधारवाद और अपूर्णता के सांचे में ढलने की तरफ ले जाएगी। जब तक इस प्रवृत्ति पर काबू नहीं पाया जाएगा, तब तक हम जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध को आगे बढ़ाने, आंशिक प्रतिरोध को पूर्ण प्रतिरोध में बदलने और मातृभूमि की रक्षा करने में कामयाब नहीं हो सकेंगे।

लेकिन एक अन्य प्रकार का आत्मसमर्पणवाद, यानी राष्ट्रीय आत्मसमर्पणवाद भी है, जो चीन को जापानी साम्राज्यवाद के हितों के अनुरूप बनने की तरफ ले जाएगा, चीन को जापानी साम्राज्यवाद का उपनिवेश बना देगा तथा तमाम चीनियों को विदेशी राष्ट्र का गुलाम बना देगा। यह प्रवृत्ति अब जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के दक्षिण पक्ष में प्रकट हो रही है।

२६. जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के वाम पक्ष में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाला जन-समुदाय है जिसमें सर्वहारा वर्ग, किसान और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग शामिल हैं। हमारा कार्य है इस पक्ष का विस्तार करने और इसे सुदृढ़ बनाने की भरपूर कोशिश करना। इस कार्य को सम्पन्न करना क्वोमिन्ताङ में, सरकार में और सेना में सुधार करने के लिए, एक एकीकृत जनवादी गणराज्य की स्थापना करने के लिए, आंशिक प्रतिरोध को पूर्ण प्रतिरोध में बदल देने के लिए तथा जापानी

साम्राज्यवाद का तख्ता उलट देने के लिए बुनियादी पूर्वशर्त है।

२७. जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के मध्यवर्ती भाग में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग की उच्च श्रेणी हैं। जिन लोगों की आवाज शांघाई के प्रमुख समाचारपत्र बने हुए हैं, वे लोग अब वाम पक्ष की तरफ झुक रहे हैं,[९] जबकि फ़ू शिङ सोसायटी के कुछ सदस्यों ने ढुलमुलपन दिखाना शुरू कर दिया है और सी० सी० गुट के कुछ अन्य सदस्य भी डावांडोल हो रहे हैं।[१०] जापान का प्रतिरोध करने वाली सेनाएं गम्भीर सबक सीख चुकी हैं, तथा उनमें से कुछ ने अपने यहां सुधार शुरू कर दिया है अथवा उसकी तैयारी शुरू कर दी है। हमारा कार्य है इस मध्यवर्ती हिस्से को आगे बढ़ने और अपना दृष्टिबिन्दु बदलने में मदद करना।

२८. जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के दक्षिण पक्ष में बड़े जमींदारों का वर्ग और बड़े पूंजीपतियों का वर्ग है, तथा यह राष्ट्रीय आत्मसमर्पणवाद का नाड़ी-केन्द्र है। इन लोगों का झुकाव आत्मसमर्पणवाद की तरफ होना अनिवार्य है, क्योंकि ये लोग युद्ध में अपनी सम्पत्ति के नष्ट होने और जन-समुदाय के उठ खड़े होने से डरते हैं। इनमें बहुत से लोग पहले से ही गद्दार बन चुके हैं, बहुत से लोग जापान-परस्त बन चुके हैं अथवा बनने को तैयार हैं, बहुत से लोग ढुलमुलपन दिखा रहे हैं, तथा सिर्फ चन्द लोग ऐसे हैं जो कुछ विशेष परिस्थितियों के कारण दृढ़ता से जापान-विरोधी बन गए हैं। इनमें से कुछ लोग दबाव के कारण अनिच्छा से राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में अस्थाई रूप से शामिल हो गए हैं। आम तौर पर, ज्यादा समय बीतने से पहले ही ये लोग राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे से अलग हो जाएंगे। इस समय बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के

वर्ग के बहुत से बदतरीन तत्व जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में फूट डालने की साजिश रच रहे हैं। वे लोग अफवाहें उड़ा रहे हैं, तथा उनके द्वारा फैलाई जाने वाली इस प्रकार की मनगढ़न्त बातें कि "कम्युनिस्ट बगावत फैला रहे हैं" और "आठवीं राह सेना पीछे हट रही है", दिन-ब-दिन बढ़ती जाएंगी। हमारा कार्य है राष्ट्रीय आत्मसमर्पणवाद का दृढ़ता से विरोध करना, तथा इस संघर्ष के दौरान वाम पक्ष का विस्तार करना और उसे सुदृढ़ बनाना तथा मध्यवर्ती हिस्से को आगे बढ़ने और अपना दृष्टिबिन्दु बदलने में मदद करना।

वर्ग-आत्मसमर्पणवाद और राष्ट्रीय आत्मसमर्पणवाद का आपसी सम्बन्ध

२६. वर्ग-आत्मसमर्पणवाद वास्तव में जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध में राष्ट्रीय आत्मसमर्पणवाद की रिजर्व शक्ति है; यह एक अत्यन्त घृणित प्रवृत्ति है जो दक्षिण पक्ष के खेमे का समर्थन करती है तथा युद्ध को पराजय की ओर ले जाती है। चीनी राष्ट्र और मेहनतकश जनता की मुक्ति प्राप्त करने के लिए तथा राष्ट्रीय-आत्मसमर्पणवाद-विरोधी संघर्ष में नई जान डालने के लिए, हमें कम्युनिस्ट पार्टी और सर्वहारा वर्ग के अन्दर वर्ग-आत्मसमर्पणवाद की प्रवृत्ति का विरोध करना चाहिए तथा अपने कार्य के हर क्षेत्र में इसका विरोध करना चाहिए।

नोट

१ यहां "वर्तमान परिस्थिति और पार्टी के कार्यों के बारे में प्रस्ताव" का हवाला दिया गया है, जिसे चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो द्वारा उत्तरी शेनशी के लोछ्वान में २५ अगस्त १९३७ को आयोजित अपनी मीटिंग में स्वीकार किया गया था। प्रस्ताव का पूरा मजमून इस प्रकार है:

(१) लूकओछ्याओ में जापानी हमलावरों द्वारा उकसावा दिया जाना और पेफिङ व थ्येनचिन पर उनके द्वारा कब्जा किया जाना, लम्बी दीवार के दक्षिण में उनके बड़े पैमाने के आक्रमण की शुरुआत है। जापानी हमलावरों ने युद्ध के लिए अपनी राष्ट्रीय लामबन्दी शुरू कर दी है। उनका यह प्रचार कि "परिस्थिति को बिगाड़ने का कोई इरादा नहीं", केवल अपने हमलों के लिए तैयार किया गया धूमावरण मात्र है।

(२) जापानी हमलावरों के हमलों और जनता के रोष के दबाव के कारण नानकिङ सरकार प्रतिरोध करने के लिए राजी होने लगी है। आम प्रतिरक्षा व्यवस्था की और कुछ स्थानों में वास्तविक प्रतिरोध की शुरुआत हो गई है। चीन और जापान के बीच बड़े पैमाने का युद्ध होना अनिवार्य है। ७ जुलाई को लूकओछ्याओ में किया गया प्रतिरोध चीन के राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध-युद्ध की शुरुआत है।

(३) इस प्रकार चीन की राजनीतिक परिस्थिति में अब एक नई मंजिल की, यानी प्रतिरोध-युद्ध चलाने की मंजिल की शुरुआत हो गई है। प्रतिरोध-युद्ध की तैयारी की मंजिल खत्म हो चुकी है। मौजूदा मंजिल का केन्द्रीय कार्य है प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए राष्ट्र की सभी शक्तियों को गोलबन्द करना। जनवाद की प्राप्ति का कार्य, जिसे पिछली मंजिल में क्वोमिन्ताङ की अनिच्छा और जनता के पर्याप्त रूप से गोलबन्द न होने के कारण पूरा नहीं किया जा सकता था, प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए चलाए जाने वाले संघर्ष के दौरान अवश्य पूरा किया जाना चाहिए।

(४) इस नई मंजिल में, क्वोमिन्ताङ और अन्य जापान-विरोधी ग्रुपों के साथ हमारा मतभेद और विवाद अब इस बारे में नहीं है कि प्रतिरोध-युद्ध चलाया जाए अथवा नहीं, बल्कि इस बारे में है कि विजय कैसे प्राप्त की जाए।

(५) प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने की कुंजी है मौजूदा प्रतिरोध-युद्ध को, जो शुरू हो चुका है, समूचे राष्ट्र के पूर्ण प्रतिरोध-युद्ध में विकसित कर देना। केवल इसी प्रकार के प्रतिरोध-युद्ध द्वारा अन्तिम विजय प्राप्त की जा सकती है। जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के दससूत्री कार्यक्रम में, जिसे हमारी पार्टी ने अब प्रस्तुत किया है, प्रतिरोध-युद्ध में अन्तिम विजय प्राप्त करने का रास्ता ठोस रूप से बता दिया गया है।

(६) प्रतिरोध-युद्ध की वर्तमान स्थिति में एक भारी खतरा मौजूद है। इस खतरे का मुख्य कारण यह है कि क्वोमिन्ताङ अब भी युद्ध में भाग लेने के लिए समूची जनता को जागृत करने को तैयार नहीं है। इसके विपरीत, वह समझती है कि युद्ध सिर्फ सरकार का मामला है, तथा हर दौर में इस बात से डरती है कि जनता कहीं युद्ध में शामिल न हो जाए और उस पर अंकुश लगाती है, सरकार व सेना को जनता के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने से रोकती है, जनता को जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के जनवादी अधिकार देने से इनकार करती है, तथा सरकारी ढांचे में मुकम्मिल सुधार करने और सरकार को समूचे राष्ट्र की एक राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार में बदलने से इनकार करती है। हो सकता है कि इस प्रकार का प्रतिरोध-युद्ध आंशिक जीतें हासिल कर ले, लेकिन अन्तिम जीत हरगिज हासिल नहीं कर सकता। इसके विपरीत, इसका अन्त एक गम्भीर पराजय के रूप में हो सकता है।

(७) मौजूदा प्रतिरोध-युद्ध में गम्भीर कमजोरियां होने की वजह से उसके रास्ते में क्षति उठाने, पीछे हटने, भीतरी फूट, विश्वासघात, अस्थाई व आंशिक सुलह-समझौते, आदि जैसी अनेक प्रतिकूल स्थितियों का सामना करना पड़ेगा। इसलिए हमें यह समझ लेना चाहिए कि यह युद्ध एक कठिन और दीर्घकालीन युद्ध होने जा रहा है। लेकिन हमारा विश्वास है कि जो

प्रतिरोध-युद्ध शुरू हो गया है, वह हमारी पार्टी और तमाम जनता के प्रयत्नों के जरिए निश्चय ही सभी विघ्न-बाधाओं को पार करके अपनी प्रगति और विकास को जारी रखेगा। हमें सभी कठिनाइयों को दूर कर देना चाहिए और हमारी पार्टी द्वारा प्रतिरोध-युद्ध की विजय के लिए प्रस्तुत दससूत्री कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए दृढ़ता से संघर्ष करना चाहिए। हमें उन तमाम गलत नीतियों का दृढ़ता से विरोध करना चाहिए जो इस कार्यक्रम के विपरीत हैं, साथ ही निराशा और निरुत्साह से भरे राष्ट्रीय पराजयवाद का विरोध करना चाहिए।

(८) कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों और पार्टी के नेतृत्व में चलने वाले जन-समुदाय व सशस्त्र सेनाओं को चाहिए कि वे सक्रियतापूर्वक संघर्ष की सबसे अगली कतार में खड़े रहें, राष्ट्र के प्रतिरोध का केन्द्र बन जाएं तथा पूरी शक्ति से जापान-विरोधी जन-आन्दोलन का विकास करें। जन-समुदाय के बीच प्रचार करने और उसे संगठित व हथियारबन्द करने के लिए एक क्षण की भी देरी हरगिज नहीं करनी चाहिए तथा एक भी मौका हाथ से नहीं निकलने देना चाहिए। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में विजय अवश्य प्राप्त होगी, बशर्ते कि कोटि-कोटि जनता को राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में सचमुच संगठित कर लिया जाए।

२ प्रतिरोध-युद्ध के आरम्भिक काल में, क्वोमिन्ताङ और च्याङ काई-शेक ने जनता के दबाव में विभिन्न प्रकार के सुधार करने के लिए अनेक वायदे किए, लेकिन जल्दी ही वे एक के बाद एक वायदा तोड़ते गए। इस बात की "सम्भावना" कि क्वोमिन्ताङ समूची जनता द्वारा वांछित सुधार लागू करेगी, वास्तविकता नहीं बन पाई। जैसा कि कामरेड माओ त्सेतुङ ने बाद में "मिलीजुली सरकार के बारे में" नामक रचना में कहा :

समस्त जनता, जिसमें कम्युनिस्ट और जनवादी व्यक्ति भी शामिल थे, पूरी आशा लगाए थी कि क्वोमिन्ताङ सरकार इस अवसर का, जबकि राष्ट्र खतरे में था और जनता उत्साह से भरपूर थी, फायदा उठाकर जनवादी सुधार करेगी और डा० सुन यात-सेन के क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्तों पर अमल करेगी। लेकिन उनकी ये आशाएं व्यर्थ साबित हुईं।

[३] लूशान ट्रेनिंग कोर्स को च्याङ काई-शेक ने च्याङशी प्रान्त के लूशान में आयोजित किया था, जिसके जरिए क्वोमिन्ताङ पार्टी व सरकार के उन उच्च व मझोले रैंक के अफसरों को प्रशिक्षित किया जाता था जो उसके प्रतिक्रियावादी शासन की धुरी थे।

[४] वाङ नाए-छी उस समय "कम आवाहन करने और ज्यादा सुझाव देने" की पैरवी कर रहा था। लेकिन क्वोमिन्ताङ को सिर्फ "सुझाव" देना व्यर्थ साबित होता, क्योंकि वह जनता का उत्पीड़न करने की नीति पर चल रही थी। ऐसी हालत में इस बात के लिए जन-समुदाय का प्रत्यक्ष आवाहन करना जरूरी था कि वह क्वोमिन्ताङ के खिलाफ संघर्ष करने के लिए उठ खड़ा हो। अन्यथा जापान के खिलाफ युद्ध जारी रखना अथवा क्वोमिन्ताङ की प्रतिक्रियावादिता का प्रतिरोध करना असम्भव हो जाता। इस सम्बन्ध में वाङ नाए-छी गलती पर था और बाद में उसने कदम-ब-कदम अपनी गलती महसूस कर ली।

[५] यहां "सरकार में कम्युनिस्ट पार्टी के शामिल होने के सवाल के बारे में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के प्रस्ताव के मसौदे" का हवाला दिया गया है, जिसे २५ सितम्बर १९३७ को तैयार किया गया था। प्रस्ताव का पूरा मजमून इस प्रकार है :

(१) जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की वर्तमान परिस्थिति की यह फौरी मांग है कि जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की सरकार, समूचे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने वाली सरकार, कायम की जाए, क्योंकि केवल ऐसी ही सरकार कारगर रूप से जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध का नेतृत्व कर सकती है और जापानी साम्राज्यवाद को शिकस्त दे सकती है। कम्युनिस्ट पार्टी इस प्रकार की सरकार में शामिल होने को तैयार है, यानी वह ऐसी सरकार में प्रत्यक्ष रूप से और अधिकृत रूप से प्रशासनिक जिम्मेदारियां सम्भालने को तथा उसमें सक्रिय भूमिका अदा करने को तैयार है। लेकिन आज ऐसी सरकार मौजूद नहीं है। जो सरकार आज मौजूद है, वह अब भी क्वोमिन्ताङ की एक पार्टी की तानाशाही वाली सरकार ही है।

(२) चीनी कम्युनिस्ट पार्टी इस सरकार में सिर्फ तभी शामिल हो सकती है जब इसे क्वोमिन्ताङ की एक पार्टी की तानाशाही वाली सरकार

से बदलकर समूचे राष्ट्र की संयुक्त मोर्चा सरकार बना दिया जाएगा, यानी जब वर्तमान क्वोमिन्ताङ सरकार (क) हमारी पार्टी द्वारा प्रस्तुत जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के दससूत्री कार्यक्रम की बुनियादी बातों को स्वीकार कर लेगी तथा उनके अनुरूप एक प्रशासनिक प्रोग्राम का ऐलान करेगी ; (ख) अपनी करनी के जरिए यह जाहिर करने लगेगी कि वह इस प्रोग्राम को कार्यान्वित करने के लिए ईमानदारी से कोशिश करती है, तथा निश्चित नतीजे हासिल करने लगेगी ; (ग) कम्युनिस्ट पार्टी के संगठनों के कानूनी अस्तित्व की इजाजत देगी तथा कम्युनिस्ट पार्टी को इस बात की आजादी देगी कि वह जन-समुदाय को गोलबन्द करे, संगठित करे और शिक्षित करे।

(३) इससे पहले कि पार्टी की केन्द्रीय कमेटी केन्द्रीय सरकार में शामिल होने का फैसला करे, कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को चाहिए कि वे साधारणतया किसी भी स्थानीय सरकार में अथवा किसी भी ऐसी प्रशासनिक परिषद या कमेटी में शामिल न हों जो सरकार के केन्द्रीय या स्थानीय प्रशासनिक संगठनों से सम्बद्ध हो। कारण, उनके द्वारा इस प्रकार शामिल होने से कम्युनिस्ट पार्टी की सुस्पष्ट विशेषताएं धुंधली हो जाएंगी, क्वोमिन्ताङ का तानाशाही शासन ज्यादा दिनों तक कायम रहेगा तथा एकीकृत जनवादी सरकार की स्थापना करने में सहायता मिलने के बजाय बाधा ही खड़ी होगी।

(४) लेकिन कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य किन्हीं ऐसे खास क्षेत्रों, जैसे युद्ध-क्षेत्रों, की स्थानीय सरकारों में शामिल हो सकते हैं जहां पुराने अधिकारियों के लिए पहले की तरह शासन चलाना असम्भव हो गया है और वे बुनियादी तौर पर कम्युनिस्ट पार्टी की नीतियों पर चलने को तैयार हैं, जहां कम्युनिस्ट पार्टी को खुलेआम सरगर्मियां चलाने की आजादी है तथा जहां जनता और सरकार दोनों के विचार से वर्तमान संकटपूर्ण स्थिति में कम्युनिस्टों का सरकार में शामिल होना आवश्यक है। जापान-अधिकृत क्षेत्रों में, कम्युनिस्ट पार्टी के लिए यह और भी आवश्यक है कि वह जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चा सरकारों को संगठित करने के लिए खुलेआम सामने आए।

(५) इससे पहले कि कम्युनिस्ट पार्टी सरकार में औपचारिक रूप से

शामिल हों, पार्टी-सदस्यों को इस बात की उसूली तौर पर इजाजत है कि वे प्रतिनिधि संगठनों में, जैसे अखिल चीन राष्ट्रीय एसेम्बली में, जहां जनवादी संविधान पर और देश को बचाने की नीतियों पर विचार-विनिमय किया जाता है, शामिल हो जाएं। इस प्रकार कम्युनिस्ट पार्टी को चाहिए कि वह इस तरह की एसेम्बलियों में अपने सदस्यों के चुने जाने की पूरी कोशिश करे और इन एसेम्बलियों को पार्टी के विचारों का प्रचार करने वाले माध्यम के रूप में इस्तेमाल करे, ताकि जनता को गोलबन्द किया जा सके और पार्टी के चारों ओर एकत्रित किया जा सके तथा एक एकीकृत जनवादी सरकार की स्थापना के कार्य को आगे बढ़ाया जा सके।

(६) एक निश्चित मुश्तरका प्रोग्राम और पूर्ण समानता के उसूल के आधार पर कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी अथवा उसके स्थानीय पार्टी-संगठन, क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी अथवा उसके स्थानीय सदर-मुकामों के साथ संयुक्त मोर्चा संगठनों, जैसे विभिन्न संयुक्त कमेटियों (मिसाल के लिए राष्ट्रीय क्रान्तिकारी लीगों, जन-आन्दोलन कमेटियों और युद्ध-क्षेत्रों में लामबन्दी के लिए स्थापित कमेटियों) की स्थापना कर सकते हैं, तथा कम्युनिस्ट पार्टी को इस प्रकार की संयुक्त कार्यवाहियों के जरिए क्वोमिन्ताङ के साथ सहयोग कायम करना चाहिए।

(७) जब लाल सेना का फिर से नामकरण करके उसे राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना का एक अंग बना दिया जाएगा तथा लाल राजनीतिक सत्ता के संगठन को विशेष क्षेत्रीय सरकार में बदल दिया जाएगा, तो उनके प्रतिनिधि अपनी कानूनी हैसियत के जरिए उन तमाम फौजी संगठनों व जन-संगठनों में शामिल हो सकेंगे जो जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के कार्य को आगे बढ़ाते हैं।

(८) यह निहायत जरूरी है कि पहले की लाल सेना में और सभी छापामार यूनिटों में कम्युनिस्ट पार्टी का बिलकुल स्वतंत्र नेतृत्व बनाए रखा जाए, तथा इस उसूली मामले में कम्युनिस्टों को जरा भी ढुलमुलपन नहीं दिखाना चाहिए।

१ "संसदवाद" का तात्पर्य यहां कुछ पार्टी-कामरेडों के इस प्रस्ताव से है

कि क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में राजनीतिक सत्ता की व्यवस्था – जन-प्रतिनिधि सम्मेलनों की व्यवस्था को बदलकर उसे पूंजीवादी देशों की संसदीय व्यवस्था का रूप दे दिया जाए।

७ अक्तूबर १९३४ में जब केन्द्रीय लाल सेना ने उत्तर की तरफ कूच किया, तो लाल सेना की छापामार यूनिटें दक्षिण के च्याङशी, फूच्येन, क्वाङतुङ, हुनान, हूपे, हनान, चच्याङ और आनह्वेइ नामक आठ प्रान्तों के चौदह क्षेत्रों में रह गईं तथा उन्होंने अत्यन्त कठिन परिस्थितियों में छापामार युद्ध जारी रखा। जब जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध शुरू हुआ, तो इन यूनिटों ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के आदेश पर, गृहयुद्ध बन्द करने के लिए क्वोमिन्ताङ के साथ समझौता-वार्ता शुरू की तथा अपने आपको एक फौजी कोर में (यानी नई चौथी सेना में, जिसने बाद में याङत्सी नदी के दक्षिणी और उत्तरी किनारों पर जापानियों के छक्के छुड़ा दिए) संगठित कर लिया तथा जापान का प्रतिरोध करने के लिए मोर्चे की तरफ अभियान कर दिया। लेकिन च्याङ काई-शेक ने इस समझौता-वार्ता का फायदा उठाकर छापामार यूनिटों का सफाया करने की साजिश रच डाली। हो मिङ, फूच्येन-क्वाङतुङ सीमान्त क्षेत्र का, जो चौदह छापामार क्षेत्रों में से एक था, एक छापामार नेता था। वह च्याङ काई-शेक की उक्त साजिश के प्रति सतर्क नहीं रहा, जिसके परिणामस्वरूप उसकी कमान में मौजूद एक हजार से ज्यादा छापामारों को, उनके एकत्रित होने के बाद, क्वोमिन्ताङ फौजों ने घेर लिया और उनके हथियार छीन लिए।

८ "मुक्ति साप्ताहिक" की स्थापना १९३७ में येनान में की गई थी और यह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का मुखपत्र था। १९४१ में इसका स्थान "मुक्ति दैनिक" ने ले लिया।

९ यह राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का वह हिस्सा था जिसके विचारों का प्रतिनिधित्व शांघाई के "शन पाओ" जैसे अखबार करते थे।

१० फू शिङ सोसायटी और सी० सी० गुट क्वोमिन्ताङ के भीतर मौजूद दो फासिस्ट संगठन थे, जिनके सरगना क्रमशः च्याङ काई-शेक और छन ली-फू थे। ये बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के अल्पतंत्रीय शासन के हितों की सेवा करते थे। लेकिन इनमें बहुत से निम्न-पूंजीपति वर्ग के तत्व ऐसे

भी थे जो मजबूर होकर अथवा धोखे से शामिल हो गए थे। लेख में फू शिङ सोसायटी के उस हिस्से का उल्लेख किया गया है जिसमें मुख्य रूप से क्वोमिन्ताङ सेना के छोटे अथवा मध्यम दर्जे के अफसर शामिल थे, तथा सी० सी० गुट के उस हिस्से का उल्लेख किया गया है जिसमें मुख्य रूप से वे सदस्य शामिल थे जिनके हाथ में सत्ता नहीं थी।

शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र की सरकार और आठवीं राह सेना के पृष्ठभागीय कार्यालय का ऐलान*

१५ मई १९३८

यह ऐलान किया जाता है : लूकओछ्याओ घटना के बाद से हमारे तमाम देशभक्त स्वदेश-बन्धु दृढ़तापूर्वक प्रतिरोध-युद्ध चला रहे हैं। मोर्चे पर अफसर और सैनिक अपने रक्त का तर्पण कर रहे हैं और अपने प्राणों की आहुति दे रहे हैं। सभी राजनीतिक पार्टियां और ग्रुप शुद्धहृदयता से एकताबद्ध हो गए हैं। राष्ट्र को बचाने के लिए जनता के सभी तबके मिलजुल कर प्रयास कर रहे हैं। यह चीनी राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य का संकेत है और जापान पर विजय प्राप्त करने की पक्की गारन्टी है। हमारे तमाम स्वदेश-बन्धुओं को इसी प्रगति-पथ पर चलते रहना चाहिए। शेनशी-कानसू-निङश्या

* च्याङ काई-शेक गुट की फूटपरस्त कार्यवाहियों का विरोध करने के लिए शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र की सरकार और आठवीं राह सेना के पृष्ठभागीय कार्यालय का यह ऐलान कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा लिखा गया था। क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग की स्थापना के कुछ ही दिन बाद च्याङ काई-शेक गुट कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली क्रान्तिकारी शक्तियों को नष्ट-भ्रष्ट करने की साजिश करने लगा। शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त

सीमान्त क्षेत्र[१] की सेना और जनता ने सरकार के नेतृत्व का अनुसरण किया है और राष्ट्रीय पुनरुद्धार के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भरपूर शक्ति लगाई है। उन्होंने जो कुछ भी किया है वह न्यायोचित और सम्मानपूर्ण रहा है। अति कठिन परिस्थितियों में भी उन्होंने अथक रूप से और बिना किसी शिकवे-शिकायत के संघर्ष चलाया है। सारे देश की जनता एक स्वर से उनकी प्रशंसा कर रही है। जहां तक सीमान्त क्षेत्रीय सरकार और पृष्ठभागीय कार्यालय का सम्बन्ध है, वे समूचे क्षेत्र की जनता को इस उद्देश्य के प्राप्त होने तक प्रयास करते रहने के लिए प्रोत्साहित करते रहेंगे। किसी को भी कर्तव्य-च्युत नहीं होने दिया जाएगा और कोई भी ऐसी चीज नहीं होने दी जाएगी जिससे राष्ट्रीय पुनरुद्धार के कार्य को नुकसान पहुंचे। सीमान्त क्षेत्र में की गई हाल की जांच-पड़ताल से यह जाहिर हुआ है कि कुछ लोग सार्वजनिक हितों की उपेक्षा करके विभिन्न साधनों द्वारा किसानों को वे जमीनें और घर लौटाने के लिए बाध्य कर रहे हैं जिन्हें उनमें बांट दिया गया था, किसानों को उन कर्जों को लौटाने के लिए मजबूर कर रहे हैं जो मंसूख कर दिए गए थे,[२] जनता पर उस जनवादी व्यवस्था को बदलने के लिए दबाव डाल रहे हैं जिसका निर्माण किया जा चुका है, अथवा उन सैनिक, आर्थिक व सांस्कृतिक संगठनों और जन-संगठनों की जड़ काट रहे हैं जो बाकायदा स्थापित किए जा चुके हैं। यहां तक कि कुछ लोग तो भेदियों की तरह काम कर रहे हैं, डकैतों के साथ सांठगांठ कर रहे हैं, हमारे सैनिकों को विद्रोह के लिए उकसा रहे हैं, हमारे क्षेत्र का सर्वेक्षण कर रहे हैं और नक्शे बना रहे हैं, गुप्त रूप से खबरें इकट्ठी कर रहे हैं और सीमान्त क्षेत्रीय सरकार के विरुद्ध खुलेआम प्रचार कर रहे हैं। जाहिर है कि ये तमाम सरगर्मियां जापान का प्रतिरोध करने के लिए एकता के बुनियादी उसूल का उल्लंघन करती हैं और सीमान्त क्षेत्र की जनता की इच्छा के विरुद्ध हैं, तथा इनका उद्देश्य है आन्तरिक कलह को उकसाना, संयुक्त मोर्चे को तोड़ना, जनता के हितों को हानि पहुंचाना, सीमान्त क्षेत्रीय सरकार की प्रतिष्ठा को चोट पहुंचाना और जापान का प्रतिरोध करने के लिए की जाने वाली जत्थेबन्दी में कठिनाइयों को बढ़ाना। कारण यह है कि मुट्ठीभर कट्टरतावादी बड़ी बेशर्मी के साथ राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध काम कर रहे हैं। कुछ तो जापानी आक्रमणकारियों के दलालों की तरह काम कर रहे हैं और अपनी षड्यंत्रकारी सर-गर्मियों को छिपाने के लिए तरह-तरह के बहानों का इस्तेमाल कर रहे हैं। पिछले कई महीनों से विभिन्न काउन्टियों की जनता द्वारा भेजी गई रिपोर्टों का तांता रोज लगा रहता है जिनमें इस प्रकार की सरगर्मियों को रोकने की मांग की जाती है। जापान-विरोधी शक्तियों को मजबूत करने, जापान-विरोधी पृष्ठभाग को सुदृढ़ बनाने तथा जनता के हितों की रक्षा करने की दृष्टि से हमारी सरकार और पृष्ठभागीय कार्यालय उपर्युक्त सरगर्मियों को अवैध घोषित करना अनिवार्य समझते हैं। इसी के अनुरूप हम असंदिग्ध रूप से ऐलान करते हैं:

क्षेत्र को नष्ट-भ्रष्ट करना इस साजिश का अंग था। कामरेड माओ त्सेतुङ का यह मत था कि क्रान्ति के हितों की रक्षा के लिए एक सुदृढ़ नीति अपनाना आवश्यक है। जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे में कुछ पार्टी-सदस्यों द्वारा च्याङ काई-शेक गुट की तिकड़मों के प्रति अपनाए गए अवसरवादी दृष्टिबिन्दु को इस ऐलान से चोट पहुंची।

(१) जनता द्वारा उपलब्ध कर लिए गए अधिकारों की रक्षा करने की दृष्टि से, सरकार और पृष्ठभागीय कार्यालय आन्तरिक शान्ति स्थापित होने से पहले सीमान्त क्षेत्रीय सरकार के अधिकार में मौजूद इलाकों में किए गए जमीन व घरों के बंटवारे और कर्जों की मंसूखी में अनधिकृत रूप से तब्दीली करने को अवैध घोषित करते हैं।

(२) सरकार और पृष्ठभागीय कार्यालय उन तमाम सैनिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक संगठनों और जन-संगठनों की, जो आन्तरिक शान्ति की स्थापना से पूर्व मौजूद थे और बाद में संयुक्त मोर्चे के उसूल के अनुसार विस्तृत और विकसित हुए हैं, गतिविधियों की रक्षा करेंगे, उनकी प्रगति में सहायक होंगे तथा उनके विरुद्ध की जाने वाली तमाम साजिशों और फूटपरस्त सरगर्मियों पर रोक लगा देंगे।

(३) "सशस्त्र प्रतिरोध व राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का कार्यक्रम" दृढ़तापूर्वक लागू करते हुए, सरकार और पृष्ठभागीय कार्यालय खुशी-खुशी ऐसे कामों में पहल और सहायता करेंगे जो जापान का प्रतिरोध करने और राष्ट्रीय पुनरुद्धार के लक्ष्य के अनुकूल हों। हर तबके की जनता द्वारा की जाने वाली हार्दिक सहायता का हम स्वागत करते हैं। लेकिन अनधिकृत व्यक्तियों के प्रति सतर्कता बरतने और गद्दारों को दूर रखने की दृष्टि से, हम बिना सरकार और पृष्ठभागीय कार्यालय की इजाजत और लिखित अधिकार-पत्र के किसी भी व्यक्ति के, चाहे वह कोई भी काम क्यों न करता हो, सीमान्त क्षेत्र में घुसने और ठहरने को अवैध घोषित करते हैं।

(४) सशस्त्र प्रतिरोध के इस तनावपूर्ण काल में जनता के लिए यह सही और उचित होगा कि वह किसी भी ऐसे व्यक्ति के बारे में रिपोर्ट करे जो सीमान्त क्षेत्र की सीमा के अन्दर तोड़फोड़ की साजिश करता हो, गड़बड़ फैलाता हो, राजद्रोह भड़काता हो या सैनिक भेदों का पता लगाता हो। वाजिब सबूत के आधार पर उन तमाम व्यक्तियों को जिनके खिलाफ ऐसे आरोप लगाए गए हों, मुकाम पर ही गिरफ्तार किया जा सकता है। दोष साबित हो जाने पर अपराधियों को सख्त सजा दी जाएगी।

समूचे सीमान्त क्षेत्र में तमाम सैनिकों और नागरिकों के लिए इन चारों आदेशों का पालन करना निहायत जरूरी है और किसी भी हालत में उनका उल्लंघन करने की इजाजत नहीं दी जाएगी। यदि कोई कानून-विरोधी व्यक्ति साजिश रचकर गड़बड़ करने की जुर्रत करेगा, तो सीमान्त क्षेत्रीय सरकार और पृष्ठभागीय कार्यालय इन आदेशों के अनुरूप सख्ती से कदम उठाएंगे और इन आदेशों की गैर-जानकारी के बहानों को कतई स्वीकार नहीं करेंगे।

यह ऐलान कानून की सम्पूर्ण शक्ति के साथ जारी किया जा रहा है।

नोट

[१] शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र एक क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र था, जिसे उत्तरी शेनशी में क्रान्तिकारी छापामार युद्ध के द्वारा १९३१ के बाद कदम-ब-कदम निर्मित किया गया था। जब केन्द्रीय लाल सेना लम्बा अभियान करके उत्तरी शेनशी पहुंची, तो यह आधार-क्षेत्र क्रान्ति का केन्द्रीय आधार-क्षेत्र और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का कार्य-स्थल बन गया।

१९३७ में जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के गठन के बाद इसका नाम शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र रखा गया। इसमें इन तीन प्रान्तों की आपस में मिलती सीमाओं पर स्थित बीस से ज्यादा काउन्टियां शामिल थीं।

[2] १९३६ तक शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र के अधिकांश स्थानों में जमींदारों की जमीनों को जब्त करने और उनको किसानों में बांटने तथा किसानों के पुराने कर्जों को मंसूख करने की नीति लागू की जा चुकी थी। १९३६ के बाद, जापान-विरोधी विशाल राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के गठन की दृष्टि से कम्युनिस्ट पार्टी ने देशव्यापी पैमाने पर इस नीति को लगान और सूद कम करने की नीति में बदल दिया। फिर भी उसने भूमि-सुधार द्वारा किसानों को हुए फायदों की दृढ़तापूर्वक रक्षा की।

जापान-विरोधी छापामार युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं*

मई १९३८

अध्याय १

छापामार युद्ध में रणनीति विषयक समस्याएं क्यों उठाई जानी चाहिए?

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में नियमित युद्ध की मुख्य भूमिका और छापामार युद्ध की सहायक भूमिका है। हमने इस मसले को पहले ही सही तौर पर हल कर लिया है। इसलिए देखने में छापामार युद्ध की सिर्फ कार्यनीतिक समस्याएं ही बच जाती हैं। तो फिर रणनीतिक समस्याएं क्यों उठाई जाएं?

यदि चीन एक छोटा देश होता जिसमें छापामार युद्ध की भूमिका सिर्फ मुहिमों के दौरान नियमित सेना की कार्यवाहियों में प्रत्यक्ष रूप से छोटे फासले में तालमेल बैठाने तक ही सीमित होती, तो

* जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के शुरू के दिनों में पार्टी के भीतर और पार्टी के बाहर अनेक लोग ऐसे थे जो छापामार युद्ध की महत्वपूर्ण रणनीतिक भूमिका को कम करके आंकते थे और केवल नियमित युद्ध पर ही, विशेषतः क्वोमिन्ताङ की फौजों की कार्यवाहियों पर ही अपनी आशाएं केन्द्रित किए हुए थे।

बेशक केवल कार्यनीतिक समस्याएं ही सामने आतीं, न कि रणनीतिक समस्याएं। दूसरी तरफ, अगर चीन भी सोवियत संघ की ही तरह एक शक्तिशाली देश होता और शत्रु द्वारा अतिक्रमण किए जाने पर उसे जल्दी ही खदेड़ देने की स्थिति में होता, या उसे खदेड़ देने में चाहे कुछ समय भी लगता, लेकिन शत्रु के कब्जे में मौजूद इलाका विशाल न होता, तब भी छापामार युद्ध केवल मुहिमों के दौरान तालमेल बैठाने की भूमिका अदा करता और तब स्वाभाविक रूप से केवल कार्यनीतिक समस्याएं ही सामने आतीं, न कि रणनीतिक समस्याएं।

छापामार युद्ध की रणनीतिक समस्याएं इन परिस्थितियों में उठती हैं : चीन न तो एक छोटा देश है और न ही सोवियत संघ की तरह का देश है, बल्कि एक बड़ा और कमजोर देश है। इस बड़े और कमजोर देश पर एक छोटे और शक्तिशाली देश ने हमला कर दिया है, लेकिन यह बड़ा और कमजोर देश प्रगति के युग में है ; यही समूची समस्या का स्रोत है। इन्हीं परिस्थितियों में विशाल इलाकों पर दुश्मन का कब्जा हो गया है और यह युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध बन गया है। हमारे इस बड़े देश के विशाल इलाके पर दुश्मन ने अधिकार कर रखा है, लेकिन जापान एक छोटा देश है, उसके

सैनिक नाकाफी हैं और उसे अपने कब्जे में मौजूद इलाकों में अनेक स्थानों को बिना फौजों के ही छोड़ना पड़ता है ; इसलिए जापान-विरोधी छापामार युद्ध में हमारा मुख्य काम भीतरी सैन्य-पंक्तियों में मुहिमों के दौरान नियमित सेनाओं की कार्यवाही के साथ तालमेल बैठाकर लड़ना नहीं है, बल्कि बाहरी सैन्य-पंक्तियों में स्वतंत्र रूप से लड़ना है ; इसके अलावा, चीन एक प्रगतिशील देश है, यानी उसके पास एक शक्तिशाली फौज और विशाल जन-समुदाय मौजूद हैं, जिनका नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी करती है ; इसलिए हमारा जापान-विरोधी छापामार युद्ध एक छोटे पैमाने का युद्ध न रहकर बड़े पैमाने का युद्ध बन जाता है। इसके परिणामस्वरूप सिलसिलेवार तमाम समस्याएं, जैसे रणनीतिक रक्षा, रणनीतिक आक्रमण आदि, हमारे सामने आ खड़ी होती हैं। युद्ध की दीर्घकालीनता और इससे पैदा होने वाली क्रूरता के कारण छापामार युद्ध को अनेक असाधारण कार्यों को अपने हाथ में लेना पड़ता है ; इसीलिए आधार-क्षेत्रों की समस्या और छापामार लड़ाई को चलायमान लड़ाई में विकसित करने की समस्या आदि आ खड़ी होती हैं। इन सब बातों के कारण ही चीन का जापान-विरोधी छापामार युद्ध कार्यनीति के दायरे से बाहर निकलकर रणनीति का दरवाजा खटखटाने

कामरेड माओ त्सेतुङ ने उनके इन दृष्टिकोणों का खण्डन किया और साथ ही जापान-विरोधी छापामार युद्ध के विकास की सही दिशा दिखाने के लिए यह लेख लिखा। इसके फलस्वरूप, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना, जिनकी संख्या १६३७ में जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की शुरुआत होने पर केवल ४०,००० से ज्यादा थी, १६४५ में जापान द्वारा आत्मसमर्पण कर दिए जाने के समय तक बढ़कर दस लाख संख्या वाली एक बड़ी सेना बन गई। इन सेनाओं ने अनेक क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र कायम किए और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में महान भूमिका अदा की, और इसी वजह से च्याङ काई-शेक इस समूचे दौर में जापान के सामने घुटने टेकने या देशव्यापी गृहयुद्ध छेड़ने से डरता रहा। और १६४६ में जब उसने देशव्यापी गृहयुद्ध छेड़ ही दिया, तो आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना को मिलाकर बनी जन-मुक्ति सेना उसके हमलों का मुकाबला करने के लिए काफी शक्तिशाली हो चुकी थी।

लगता है, और यह मांग करता है कि छापामार युद्ध की समस्याओं की रणनीति की दृष्टि से जांच की जाए। विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि ऐसा व्यापक और दीर्घकालीन छापामार युद्ध समूची मानव जाति के युद्ध के इतिहास में एक अत्यन्त नवीन वस्तु है। यह बात इस तथ्य से अलग नहीं हो सकती कि हमारा यह जमाना बीसवीं सदी के चौथे और पांचवें दशक में पहुंच चुका है, और अब हमारे पास कम्युनिस्ट पार्टी तथा लाल सेना मौजूद हैं। समूचे मामले का सार इसी बात में निहित है। शायद हमारा दुश्मन अब भी सुङ वंश पर य्वान वंश की विजय, मिङ वंश पर छिङ वंश की विजय, उत्तरी अमरीका और भारत पर अंग्रेजों के अधिकार, मध्य और दक्षिणी अमरीका पर लातिन देशों के अधिकार, आदि का दिवास्वप्न देख रहा है। लेकिन आज के चीन में इस तरह के सपनों का कोई व्यावहारिक महत्व नहीं है, क्योंकि आज के चीन में कुछ ऐसे तत्व मौजूद हैं जो उन ऐतिहासिक अवसरों पर नहीं थे। इनमें से एक तत्व छापामार युद्ध है जो एक अत्यन्त नवीन वस्तु है। यदि हमारा दुश्मन इस तत्व को नजरअन्दाज कर देता है, तो उसे निश्चय ही पराजय का मुंह देखना पड़ेगा।

यही कारण है कि हमारे जापान-विरोधी छापामार युद्ध पर रणनीति की दृष्टि से विचार किया जाना चाहिए, यद्यपि समूचे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में उसकी स्थिति एक सहायक की ही है।

यदि स्थिति ऐसी है, तो फिर जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के आम रणनीतिक उसूलों को छापामार युद्ध पर क्यों न लागू किया जाए?

इसमें शक नहीं कि हमारे जापान-विरोधी छापामार युद्ध की रणनीतिक समस्याएं समूचे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की रणनीतिक समस्याओं के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई हैं, क्योंकि दोनों में अनेक समान बातें मौजूद हैं। दूसरी ओर छापामार युद्ध नियमित युद्ध से भिन्न है और उसकी अपनी विशेषताएं हैं, और इसलिए छापामार युद्ध की रणनीतिक समस्याओं के भी अनेक विशेष तत्व हैं। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के आम रणनीतिक उसूलों में बिना हेरफेर किए उन्हें छापामार युद्ध पर हरगिज लागू नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसकी भी अपनी खास विशेषताएं हैं।

अध्याय २

युद्ध का बुनियादी उसूल है अपने को सुरक्षित रखना और दुश्मन को नष्ट करना

छापामार युद्ध की रणनीतिक समस्याओं की ठोस रूप से चर्चा करने से पहले युद्ध की बुनियादी समस्या के बारे में कुछ शब्द कहना जरूरी है।

सभी फौजी कार्यवाहियों के निर्देशक उसूल एक ही बुनियादी उसूल से निकलते हैं : यानी जहां तक सम्भव हो, अपनी शक्ति को सुरक्षित रखने और दुश्मन की शक्ति को नष्ट करने की कोशिश की जाए। क्रान्तिकारी युद्ध में, यह उसूल सीधे-सीधे बुनियादी राजनीतिक उसूलों से जुड़ा रहता है। मिसाल के लिए, चीन के जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का बुनियादी राजनीतिक उसूल,

यानी उसका राजनीतिक उद्देश्य है जापानी साम्राज्यवाद को बाहर खदेड़ देना और एक स्वाधीन, स्वतंत्र और खुशहाल नए चीन का निर्माण करना। फौजी कार्यवाहियों के क्षेत्र में इस उसूल का मतलब है अपनी मातृभूमि की रक्षा करने और जापानी हमलावरों को बाहर खदेड़ देने के लिए हथियारबन्द फौज का प्रयोग करना। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, फौजी यूनिटों की कार्यवाही इन दो रूपों में अभिव्यक्त होती है – एक तरफ तो यथासम्भव अपनी शक्ति को सुरक्षित रखने का और दूसरी तरफ दुश्मन की शक्ति को नष्ट करने का प्रयत्न करना। ऐसी स्थिति में हम युद्ध में किए जाने वाले शौर्यपूर्ण बलिदानों को प्रोत्साहन देने के औचित्य को भला कैसे साबित कर सकते हैं? हर युद्ध अपनी-अपनी कीमत लेता है, कभी-कभी यह कीमत बहुत ज्यादा होती है। तो क्या इसके और "अपने को सुरक्षित रखने" के बीच कोई अन्तरविरोध नहीं है? सच तो यह है कि इनके बीच कतई कोई अन्तरविरोध नहीं है; या इससे ज्यादा सही ढंग से कहा जाए तो आत्म-बलिदान और अपनी हिफाजत जहां एक दूसरे के विपरीत हैं वहां एक दूसरे के पूरक भी हैं। कारण, इस प्रकार का आत्म-बलिदान न सिर्फ दुश्मन का विनाश करने के लिए आवश्यक है, बल्कि अपनी हिफाजत के लिए भी आवश्यक है – आंशिक और अस्थाई "असुरक्षा" (आत्म-बलिदान देना या कीमत चुकाना) सर्वांग और स्थाई सुरक्षा के लिए आवश्यक है। इस बुनियादी उसूल से ही तमाम फौजी कार्यवाहियों का मार्ग-दर्शन करने वाले उसूलों की एक श्रृंखला का जन्म होता है; निशानेबाजी के उसूल से लेकर (अपने को सुरक्षित रखने के लिए आड़ लेना, और दुश्मन को नष्ट करने के लिए गोलाबारी की शक्ति का पूर्ण

उपयोग करना) रणनीति के उसूल तक सभी उसूल इसी बुनियादी उसूल की भावना से ओतप्रोत हैं। तकनीक, कार्यनीति, मुहिम व रणनीति विषयक तमाम उसूल इसी बुनियादी उसूल को अमली रूप देने की आवश्यक शर्तें हैं। अपने को सुरक्षित रखने और दुश्मन को नष्ट करने का उसूल ही तमाम फौजी उसूलों की बुनियाद है।

अध्याय ३

जापान-विरोधी छापामार युद्ध की छै विशेष रणनीतिक समस्याएं

अब हम यह देखें कि जापान-विरोधी छापामार युद्ध की फौजी कार्यवाहियों में अपने को सुरक्षित रखने और दुश्मन को नष्ट करने के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कौन-कौन सी नीतियां या उसूल अपनाए जाएं? चूंकि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में (और सभी क्रान्तिकारी युद्धों में) छापामार दस्ते आम तौर पर बिलकुल नहीं की स्थिति से उत्पन्न होते हैं और छोटी शक्ति से विकसित होकर बड़ी शक्ति में बदल जाते हैं, इसलिए उन्हें अपने को सुरक्षित रखने के अलावा अपनी शक्तियों का विस्तार भी करना चाहिए। इसलिए प्रश्न यह है कि अपने को सुरक्षित रखने या अपनी शक्तियों का विस्तार करने और दुश्मन को नष्ट करने के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कौन सी नीतियों या उसूलों को अपनाया जाए?

आम तौर पर, मुख्य उसूल ये हैं: (१) अपनी पहलकदमी पर, लचीले तरीके से और योजना के अनुसार रक्षात्मक युद्ध में

आक्रमणात्मक लड़ाइयां लड़ना, दीर्घकालीन युद्ध में तुरत निर्णय की लड़ाइयां लड़ना और भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियों में बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करना; (२) नियमित युद्ध के साथ तालमेल कायम करना; (३) आधार-क्षेत्रों की स्थापना करना; (४) रणनीतिक रक्षा और रणनीतिक आक्रमण करना; (५) छापामार लड़ाई को चलायमान लड़ाई में विकसित करना; और (६) कमानों के बीच सही सम्बन्ध कायम करना। जापान-विरोधी छापामार युद्ध के पूरे रणनीतिक कार्यक्रम में ये छै बातें शामिल हैं, तथा अपनी शक्तियों को सुरक्षित रखने और उनका प्रसार करने, दुश्मन का विनाश करने और उसे बाहर खदेड़ देने, नियमित युद्ध के साथ तालमेल कायम करने और अन्तिम विजय प्राप्त करने के लिए ये बातें जरूरी साधनों का काम देती हैं।

अध्याय ४

अपनी पहलकदमी पर, लचीले तरीके से और योजना के अनुसार रक्षात्मक युद्ध में आक्रमणात्मक लड़ाइयां लड़ना, दीर्घकालीन युद्ध में तुरत निर्णय की लड़ाइयां लड़ना और भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियों में बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करना

इस विषय को इन चार भागों में बांटकर विचार किया जा सकता है: (१) रक्षा और आक्रमण के बीच का सम्बन्ध, दीर्घकालीनता और तुरत निर्णय के बीच का सम्बन्ध तथा भीतरी सैन्य-पंक्ति और बाहरी सैन्य-पंक्ति के बीच का सम्बन्ध; (२) तमाम कार्यवाहियों में पहलकदमी; (३) लचीले तरीके से शक्तियों का इस्तेमाल करना; और (४) तमाम कार्यवाहियों को योजना के अनुसार चलाना।

हम पहली बात से शुरू करते हैं।

यदि हम जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के बारे में समूचे तौर पर विचार करें, तो हम देखेंगे कि जापान एक मजबूत देश है और वह हमला कर रहा है, जबकि चीन एक कमजोर देश है और वह अपनी रक्षा कर रहा है; इस तथ्य ने हमारे युद्ध को रणनीति की दृष्टि से एक रक्षात्मक और दीर्घकालीन युद्ध का रूप दे दिया है। जहां तक सैन्य-पंक्तियों का सम्बन्ध है, दुश्मन बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर कार्यवाही करता है और हम भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर। यह स्थिति का एक पहलू है। लेकिन दूसरा पहलू ठीक इसका उल्टा है। दुश्मन की फौजें यद्यपि मजबूत हैं (हथियारों, सैनिकों की कुछ विशेषताओं और कुछ अन्य तत्वों की दृष्टि से), लेकिन वे संख्या में कम हैं; और हमारी फौजें यद्यपि कमजोर हैं (उसी प्रकार, हथियारों, सैनिकों की कुछ विशेषताओं और कुछ अन्य तत्वों की दृष्टि से), लेकिन वे संख्या में बहुत ज्यादा हैं। इसके अलावा, एक तथ्य और भी है और वह यह है कि विदेशी दुश्मन द्वारा हमारे देश में अतिक्रमण किया गया है और हम अपनी ही भूमि पर उसके अतिक्रमण का प्रतिरोध कर रहे हैं। ये तथ्य हमारे लिए जो रणनीतिक उसूल निर्धारित करते हैं वह यह है: यह सम्भव और आवश्यक है कि रणनीति की दृष्टि से रक्षात्मक युद्ध में मुहिमों और लड़ाइयों के अन्तर्गत आक्रमणात्मक

लड़ाइयां चलाई जाएं; रणनीति की दृष्टि से दीर्घकालीन युद्ध में मुहिमों और लड़ाइयों के अन्तर्गत तुरत निर्णय की लड़ाइयां चलाई जाएं; और रणनीति की दृष्टि से भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियों के अन्दर मुहिमों और लड़ाइयों में बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां की जाएं। समूचे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में इसी रणनीतिक उसूल को अपनाना चाहिए। यह बात नियमित युद्ध और छापामार युद्ध दोनों ही पर लागू होती है। छापामार युद्ध नियमित युद्ध से केवल मात्रा और बाह्य रूप में ही भिन्न होता है। छापामार युद्ध में आक्रमणों का रूप आम तौर पर आकस्मिक प्रहार का होता है। नियमित युद्ध में यद्यपि आकस्मिक प्रहार की कार्यनीति अपनाई जा सकती है और अपनाई भी जानी चाहिए, फिर भी इस प्रकार के युद्ध में दुश्मन पर किए गए प्रहार की आकस्मिकता अपेक्षाकृत कम होती है। छापामार लड़ाई में फौजी कार्यवाहियों के तुरत निर्णय की जरूरत बहुत ज्यादा होती है, लेकिन मुहिमों और लड़ाइयों में दुश्मन को घेरने के लिए हमारा बाहरी सैन्य-पंक्ति वाला चक्रव्यूह बहुत ही छोटा होता है। ये सब बातें इसे नियमित लड़ाई से भिन्न बना देती हैं।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि छापामार दस्तों को, अपनी फौजी कार्यवाहियों में यथासम्भव ज्यादा सैन्य-शक्ति को केन्द्रित करने, गुप्त रूप से और तेज गति से कार्यवाही करने, दुश्मन पर अचानक हमला करने और लड़ाइयों को शीघ्र निपटाने की जरूरत पड़ती है, तथा उन्हें निष्क्रिय रक्षा करने, टालमटोल करने और मुठभेड़ के ठीक पहले सैन्य-शक्ति को बिखेर देने से हर सूरत में बचना चाहिए। इसमें शक नहीं कि छापामार युद्ध में न सिर्फ रणनीतिक

रक्षा शामिल होती है, बल्कि कार्यनीतिक रक्षा भी शामिल होती है। छापामार युद्ध की कार्यनीतिक रक्षा में लड़ाई के दौरान दुश्मन को रोके रखना और चौकी कायम करने की कार्यवाही करना, संकरे दर्रों, फौजी महत्व के ठिकानों, नदियों या गांवों इत्यादि स्थानों में प्रतिरोध के लिए सैन्य-वितरण करना, जिससे कि दुश्मन को अधिकाधिक हानि पहुंचाई जाए और उसे थकाया जाए, तथा पीछे हटते समय फौजों की सुरक्षा के लिए कार्यवाही करना, और अन्य चीजें शामिल हैं। लेकिन छापामार युद्ध का बुनियादी उसूल आक्रमण करना होना चाहिए, और इस युद्ध का स्वरूप नियमित युद्ध से कहीं अधिक आक्रमणात्मक होता है। इसके अलावा, यह आक्रमण आकस्मिक हमलों के रूप में किया जाना चाहिए, तथा छापामार लड़ाई में आडम्बरपूर्ण ढंग से अपनी शक्तियों का प्रदर्शन करके अपने को प्रकट कर देना नियमित लड़ाई में ऐसा करने से कहीं अधिक अनुचित है। चूंकि दुश्मन ताकतवर है और हम कम-जोर हैं, इसलिए छापामार कार्यवाहियों में लड़ाइयों का तुरत निर्णय करने की आवश्यकता आम तौर पर नियमित लड़ाई से भी ज्यादा बढ़ जाती है, यद्यपि यह हो सकता है कि कुछ मौकों पर छापामार लड़ाई कई दिन तक चलती रहे जैसा कि दुश्मन की छोटी, अलगाव में पड़ी हुई और असहाय टुकड़ी पर हमले के दौरान सम्भव है। छापामार लड़ाई को उसके बिखरे स्वरूप के कारण हर जगह फैलाया जा सकता है। और उसके अनेक कार्यों में, जैसे हैरान-परेशान करने, रोके रखने, तोड़फोड़ करने और जन-कार्य करने में उसका उसूल अपनी सैन्य-शक्तियों को बिखेरना है; लेकिन जब एक छापामार यूनिट या एक छापामार फारमेशन दुश्मन का

सफाया करने का, विशेषकर दुश्मन के हमले को तहस-नहस करने का प्रयास कर रही हो, तो उसे अपनी मुख्य सैन्य-शक्तियों को अवश्य केन्द्रित कर लेना चाहिए। "दुश्मन की छोटी टुकड़ी पर हमला करने के लिए बड़ी शक्ति को केन्द्रित करना" – यह छापामार युद्ध में रणभूमि में की जाने वाली कार्यवाहियों का एक उसूल है।

इस प्रकार यह भी देखा जा सकता है कि अगर समूचे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को ध्यान में रखा जाए, तो नियमित और छापामार दोनों तरह की लड़ाइयों के दौरान मुहिमों और लड़ाइयों में अनेक आक्रमणात्मक लड़ाइयों के सम्मिलित प्रभाव के जरिए ही, अर्थात आक्रमणात्मक लड़ाइयों में अनेक जीतों के सम्मिलित प्रभाव के जरिए ही, हम रणनीतिक रक्षा के अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं और अन्त में जापानी साम्राज्यवाद को हरा सकते हैं। मुहिमों और लड़ाइयों में तुरत निर्णय की अनेक लड़ाइयों के सम्मिलित प्रभाव के जरिए ही, अर्थात अनेक मुहिमों और लड़ाइयों में चलाई गई आक्रमणात्मक लड़ाइयों में तुरत निर्णय के कारण प्राप्त की गई जीतों के द्वारा ही हम युद्ध को दीर्घकालीन बनाने के रणनीतिक उद्देश्य में सफल हो सकते हैं, अर्थात अपनी प्रतिरोध-शक्ति में वृद्धि करने के लिए समय पा सकते हैं, और साथ ही अन्तरराष्ट्रीय स्थिति के बदलने तथा दुश्मन के अन्दरूनी तौर से टूटने की प्रक्रिया को तेज कर सकते हैं, या इसकी प्रतीक्षा कर सकते हैं, जिससे कि हम रणनीतिक प्रत्याक्रमण कर सकें और जापानी हमलावरों को चीन से बाहर खदेड़ सकें। चाहे रणनीतिक रक्षा का काल हो या रणनीतिक प्रत्याक्रमण का, हमें हर लड़ाई में अपनी बरतर सैन्य-शक्ति केन्द्रित करनी चाहिए तथा मुहिमों और लड़ाइयों में बाहरी

सैन्य-पंक्ति वाली फौजी कार्यवाहियां करनी चाहिए, ताकि हम दुश्मन को घेर सकें तथा उसका सफाया कर सकें, और यदि दुश्मन को पूरी तरह न घेर सकें तो उसके एक हिस्से को अवश्य घेर लें; यदि घिरे हुए दुश्मन का पूरी तरह सफाया न कर सकें तो उसके एक हिस्से का सफाया अवश्य कर दें; और यदि उसके घिरे हुए सिपाहियों को भारी संख्या में बन्दी न बना सकें तो उन्हें भारी संख्या में हताहत अवश्य कर दें। दुश्मन का विनाश करने की ऐसी अनेक लड़ाइयों के सम्मिलित प्रभाव के जरिए ही हम अपने और दुश्मन के बीच की स्थिति में परिवर्तन ला सकते हैं, उसकी रणनीतिक घेरेबन्दी को पूर्णतया नष्ट कर सकते हैं, यानी बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली फौजी कार्यवाहियों की उसकी योजना को पूर्णतया तहस-नहस कर सकते हैं, और अन्ततः अन्तरराष्ट्रीय शक्तियों और जापानी जनता के क्रान्तिकारी संघर्षों के साथ तालमेल बैठाकर जापानी साम्राज्यवादियों को घेर सकते हैं और एक ही बार में उन्हें ध्वस्त कर सकते हैं। ये नतीजे मुख्यतया नियमित लड़ाई द्वारा ही प्राप्त किए जा सकते हैं, जबकि छापामार लड़ाई केवल गौण भूमिका अदा करेगी। लेकिन नियमित लड़ाई और छापामार लड़ाई में जो बात समान है, वह है अनेक छोटी जीतों को एक बड़ी जीत में पिरो देना। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में छापामार युद्ध की यही महान रणनीतिक भूमिका है।

अब हम छापामार युद्ध में पहलकदमी, लचीलेपन और योजना के सवाल पर विचार करते हैं।

छापामार युद्ध में पहलकदमी का मतलब क्या है?

किसी भी युद्ध में, दोनों परस्पर विरोधी पक्ष रणभूमि में, रणक्षेत्र

में, युद्ध-क्षेत्र में और समूचे युद्ध में पहलकदमी अपने हाथ में रखने की कोशिश करते हैं, क्योंकि पहलकदमी हाथ में होने का मतलब है सेना के लिए फौजी कार्यवाही की स्वतंत्रता होना। जो फौज पहलकदमी खो देती है, वह मजबूरन निष्क्रिय स्थिति में फंस जाती है और अपनी कार्यवाही की स्वतंत्रता खो बैठती है तथा नष्ट हो जाने या हार जाने के खतरे में पड़ जाती है। स्वभावतः रणनीतिक रक्षात्मक व भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियों में पहलकदमी हासिल करना अपेक्षाकृत कठिन है, तथा बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली आक्रमणात्मक कार्यवाहियों में पहलकदमी हासिल करना अपेक्षाकृत आसान है। लेकिन जापानी साम्राज्यवाद में दो बुनियादी कमजोरियां मौजूद हैं, यानी उसके पास फौज की कमी है और वह एक विदेशी भूमि पर लड़ रहा है। इसके अलावा, जापान द्वारा चीन की शक्ति को कम आंके जाने और जापानी युद्ध-सरदारों के अन्दरूनी अन्तरविरोधों के कारण उसने सैन्य-संचालन में अनेक गलतियां की हैं, जैसे फौजी कुमक को थोड़ा-थोड़ा करके पहुंचाना, रणनीति में तालमेल का अभाव, कुछ मौकों पर हमले की मुख्य दिशा का न होना, कुछ फौजी कार्यवाहियों में अच्छे मौके को हाथ से निकल जाने देना और हमारी घिरी हुई फौजों को नष्ट कर पाने में असफल रहना; ये सब बातें जापानी साम्राज्यवाद की तीसरी कमजोरी समझी जा सकती हैं। इस प्रकार, आक्रमणात्मक कार्यवाहियों और बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियों की अनुकूल स्थिति में होने के बावजूद, जापानी युद्ध-सरदारों के हाथ से पहलकदमी धीरे-धीरे निकलती जा रही है, क्योंकि उनके पास फौजों की कमी है (जापान छोटे प्रदेश और कम जनसंख्या वाला देश है, उसके पास साधन-स्रोतों

का अभाव है और वह सामन्ती-साम्राज्यवाद वाला देश है, इत्यादि), क्योंकि वे विदेशी भूमि पर लड़ रहे हैं (उनके द्वारा चलाया जाने वाला युद्ध एक साम्राज्यवादी और बर्बरतापूर्ण युद्ध है, इत्यादि), और क्योंकि उनका सैन्य-संचालन अबुद्धिमत्तापूर्ण है। इस समय, जापान न तो युद्ध को समाप्त करना चाहता है और न वह ऐसा करने में समर्थ ही है। और वह अपने रणनीतिक आक्रमण को भी नहीं रोक रहा है। फिर भी, जैसा कि आम रुझान से जाहिर होता है, उसका आक्रमण कुछ हद तक सीमित है, जो उसकी उक्त तीन कमजोरियों का अनिवार्य परिणाम है; वह असीमित रूप से समूचे चीन को हड़पने में असमर्थ है। अभी से इस बात के लक्षण प्रकट होने लगे हैं कि एक न एक दिन जापान अपने को एकदम निष्क्रिय स्थिति में फंसा हुआ पाएगा। दूसरी तरफ, चीन युद्ध की प्रारम्भिक अवस्था में काफी निष्क्रियता की स्थिति में था, लेकिन अनुभव प्राप्त कर लेने के बाद अब वह चलायमान लड़ाई करने की नई नीति की ओर, यानी अपनी मुहिमों और लड़ाइयों में आक्रमणात्मक लड़ाइयां लड़ने, तुरत निर्णय वाली लड़ाइयां लड़ने और बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करने की नीति की ओर मुड़ रहा है, जो व्यापक पैमाने पर छापामार लड़ाई चलाने की नीति के साथ मिलकर चीन को कदम-ब-कदम पहलकदमी अपने हाथ में लेने की स्थिति में पहुंचाने में मदद कर रही है।

छापामार युद्ध के लिए पहलकदमी का सवाल और ज्यादा महत्वपूर्ण है। इसकी वजह यह है कि छापामार दस्तों को अधिकांशतः कठिन परिस्थितियों में, बिना किसी पृष्ठभाग के कार्यवाही करनी पड़ती है, दुश्मन की मजबूत ताकत के मुकाबले में उनकी अपनी

ताकत कमजोर होती है, उनमें (नए गठित किए गए छापामार दस्तों में) अनुभव की कमी होती है, वे एकीकृत नहीं होते, आदि। फिर भी छापामार युद्ध में हम पहलकदमी हासिल कर सकते हैं, लेकिन इसके लिए मुख्य शर्त यह है कि हम ऊपर बताई गई दुश्मन की तीनों कमजोरियों का लाभ उठाएं। दुश्मन के पास फौजों की कमी होने (पूरे युद्ध की दृष्टि से) का फायदा उठाकर, छापामार दस्ते साहस के साथ विशाल इलाकों को अपनी कार्यवाहियों के क्षेत्र के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं; इस बात का फायदा उठाकर कि हमारा दुश्मन एक विदेशी हमलावर है और वह अत्यन्त बर्बरतापूर्ण नीतियों पर अमल कर रहा है, छापामार दस्ते साहस के साथ कोटि-कोटि जनता का समर्थन प्राप्त कर सकते हैं; तथा दुश्मन के सैन्य-संचालन में मौजूद अबुद्धिमत्ता का फायदा उठाकर छापामार दस्ते अपनी बुद्धिमत्ता का पूरी तरह इस्तेमाल कर सकते हैं। दुश्मन को परास्त करने के लिए नियमित सेना को भी उसकी इन तमाम कमजोरियों का फायदा उठाना चाहिए, लेकिन छापामार दस्तों के लिए तो ऐसा करना और भी ज्यादा जरूरी है। जहां तक खुद छापामार दस्तों की कमजोरियों का सवाल है, उन्हें संघर्ष के दौरान कदम-ब-कदम कम किया जा सकता है। इसके अलावा, कभी-कभी छापामार दस्तों की कमजोरियां ही पहलकदमी हासिल करने के लिए उपयुक्त परिस्थिति पैदा कर देती हैं। मिसाल के लिए, छापामार दस्तों के छोटे होने के कारण वे दुश्मन के पृष्ठभाग में अपनी कार्यवाहियों में रहस्यपूर्ण ढंग से प्रकट हो सकते हैं और वहां से गायब हो सकते हैं तथा दुश्मन उनका कुछ भी बिगाड़ नहीं पाता; इस प्रकार उन्हें कार्यवाही करने की इतनी ज्यादा आजादी होती है

जितनी एक बड़ी नियमित सेना को कभी नहीं हो सकती।

जब दुश्मन किसी छापामार दस्ते पर कई तरफ से हमला कर रहा हो, तो छापामार दस्ते बड़ी कठिनाई से पहलकदमी अपने हाथ में रख सकते हैं, और उसे आसानी से खो सकते हैं। ऐसी हालत में, यदि गलत अनुमान लगाए गए और गलत विन्यास हुआ, तो छापामार दस्ता निष्क्रियता की स्थिति में आसानी से फंस सकता है और इसलिए दुश्मन द्वारा कई तरफ से किए जाने वाले हमलों को तहस-नहस करने में असफल हो सकता है। जब दुश्मन रक्षात्मक और हम आक्रमणात्मक स्थिति में हों, तब भी ऐसी हालत उत्पन्न हो सकती है। इसकी वजह यह है कि स्थिति (अपनी और दुश्मन दोनों की स्थिति) का सही तौर पर अनुमान लगाकर तथा सही ढंग से सैन्य-विन्यास और राजनीति सम्बन्धी विन्यास करके ही पहलकदमी हाथ में रखी जा सकती है। निराशापूर्ण अनुमान लगाने से, जो वस्तुगत परिस्थिति के अनुरूप न हो, और इसके फलस्वरूप निष्क्रिय ढंग से विन्यास करने से निस्सन्देह पहलकदमी हाथ से छिन जाएगी और हम खुद निष्क्रियता की स्थिति में फंस जाएंगे। दूसरी तरफ, बहुत ही आशापूर्ण अनुमान लगाने से, जो वस्तुगत परिस्थिति के अनुरूप न हो, और इसके फलस्वरूप जोखिम के साथ (अनुचित जोखिम के साथ) विन्यास करने से भी पहलकदमी हाथ से छिन जाएगी तथा अन्ततः हम उसी स्थिति में फंस जाएंगे जिसमें निराशावादी फंस जाते हैं। पहलकदमी किसी प्रतिभाशाली व्यक्ति को वरदान में मिली कोई प्राकृतिक वस्तु नहीं बल्कि एक ऐसी वस्तु है जिसे एक बुद्धिमान नेता खुले दिमाग से अध्ययन करके और वस्तुगत स्थिति का सही तौर पर अनुमान लगाकर तथा सही ढंग

से सैन्य-विन्यास और राजनीति सम्बन्धी विन्यास करके हासिल करता है। इसलिए पहलकदमी कोई तैयारशुदा वस्तु नहीं है बल्कि एक ऐसी वस्तु है जिसके लिए सचेत होकर प्रयत्न करना पड़ता है।

जब कोई छापामार दस्ता किसी गलत अनुमान और गलत विन्यास के कारण, या असह्य दबाव के कारण निष्क्रियता की स्थिति में फंस गया हो, तो उसे अपने को उस स्थिति से बाहर निकालने की कोशिश करनी चाहिए। यह काम किस तरह किया जाए, यह परिस्थितियों पर निर्भर होता है। इसके लिए बहुत सी परिस्थितियों में "चलना" जरूरी होता है। चलने में समर्थ होना छापामार दस्ते की एक विशेषता है। निष्क्रियता की स्थिति से निकल जाने और फिर से पहलकदमी हासिल करने का एक मुख्य तरीका चलना है। लेकिन यही एकमात्र तरीका नहीं है। जिस वक्त दुश्मन सबसे ज्यादा सक्रिय होता है और हम सबसे कठिन स्थिति में होते हैं, तब अक्सर ऐसा भी होता है कि वहीं से दुश्मन के लिए प्रतिकूल और हमारे लिए अनुकूल स्थिति की शुरुआत हो जाए। बहुधा "कुछ देर और टिके रहने" के प्रयत्न से अनुकूल स्थिति फिर वापस लौट सकती है और पहलकदमी फिर से हासिल की जा सकती है।

अब हम लचीलेपन के सम्बन्ध में विचार करते हैं।

लचीलापन पहलकदमी की ठोस अभिव्यक्ति है। शक्तियों का लचीले ढंग से उपयोग करना नियमित युद्ध के मुकाबले छापामार युद्ध में कहीं ज्यादा जरूरी होता है।

एक छापामार कमाण्डर को यह समझ लेना चाहिए कि अपने और दुश्मन के बीच की स्थिति को बदलने तथा पहलकदमी हासिल करने का सबसे अधिक महत्वपूर्ण तरीका अपनी शक्तियों का लचीले

ढंग से उपयोग करना है। छापामार युद्ध का स्वरूप ही ऐसा होता है कि सामने मौजूद कार्य तथा दुश्मन, धरातल और स्थानीय निवासियों की स्थिति के अनुसार छापामार शक्तियों का लचीले ढंग से उपयोग करना जरूरी हो जाता है, तथा उन्हें काम में लगाने के मुख्य तरीके हैं उन्हें बिखेरना, केन्द्रित करना और स्थानान्तरित करना। अपनी शक्तियों का उपयोग करने में छापामार कमाण्डर को जाल फेंकने वाले एक मछुवे की तरह होना चाहिए, जो जाल को दूर तक फैला सके और उसे समेट भी सके। जाल फेंकते वक्त मछुवे को पहले यह मालूम करना पड़ता है कि पानी कितना गहरा है, धारा कितनी तेज है और कोई रुकावट है या नहीं ; इसी तरह छापामार कमाण्डर को अपने दस्तों को बिखेरते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि स्थिति की गैरजानकारी या गलत कदम उठाने के कारण नुकसान न उठाना पड़े। जिस तरह मछुवा जाल को समेटने के लिए उसकी डोरी का सिरा मजबूती से पकड़े रहता है, उसी तरह छापामार कमाण्डर को भी अपनी तमाम शक्तियों से सम्पर्क बनाए रखना चाहिए और सूचना का आदान-प्रदान जारी रखना चाहिए तथा अपनी मुख्य शक्तियों के पर्याप्त हिस्से को अपनी गिरफ्त में रखना चाहिए। जिस तरह मछली पकड़ने में अक्सर अपनी जगह को बदलना जरूरी होता है, उसी तरह छापामार दस्ते को भी अक्सर अपना स्थान बदलते रहना चाहिए। बिखेरना, केन्द्रित करना और स्थानान्तरित करना, छापामार युद्ध में शक्तियों को लचीले ढंग से काम में लगाने के ये तीन तरीके हैं।

आम तौर पर छापामार दस्तों को बिखेरने का तरीका, यानी "सम्पूर्ण को हिस्सों में बांट देने" का तरीका मुख्यतया इस तरह की

परिस्थितियों में अपनाया जाता है : (१) जब हम सामने से व्यापक हमला करके दुश्मन को धमकी देना चाहते हों, क्योंकि वह रक्षात्मक स्थिति में है और कार्यवाही करने के लिए अपनी फौजों को केन्द्रित करने का मौका हमारे सामने फिलहाल मौजूद नहीं है ; (२) जब हम एक ऐसे क्षेत्र में जहां दुश्मन की शक्ति कमजोर है, दुश्मन को व्यापक रूप से हैरान-परेशान और तोड़फोड़ करना चाहते हों ; (३) जब हम दुश्मन की घेरेबन्दी को तोड़ने में असमर्थ हों और उसके चंगुल से निकल जाने के हेतु अपने आपको कम जाहिर करने के लिए प्रयत्नशील हों ; (४) जब हम किसी इलाके के धरातल या रसद-सप्लाई की वजह से बंधन में पड़ गए हों ; या (५) जब हम किसी विशाल क्षेत्र में जन-कार्य करने में लगे हुए हों। लेकिन हर परिस्थिति में, कार्यवाही करने के लिए बिखरते समय हमें इन बातों पर ध्यान देना चाहिए : (१) हमें अपनी शक्तियों को बिलकुल समान रूप से कभी नहीं बिखेरना चाहिए, बल्कि उनके एक अपेक्षाकृत बड़े भाग को किसी ऐसे स्थान पर रखना चाहिए जो फौजी दांवपेंच के लिए सुविधाजनक हो, ताकि किसी भी तरह पैदा होने वाली आपत्कालीन स्थिति का सामना किया जा सके और बिखरने के दौरान किए जाने वाले कार्य का केन्द्र-बिन्दु कायम किया जा सके ; तथा (२) बिखरने वाले दस्तों के लिए स्पष्ट रूप से कार्य, कार्यवाहियों के क्षेत्र, कार्यवाही की अवधि, फिर से एकत्र होने के स्थान और सम्पर्क बनाए रखने के तरीके निश्चित कर देने चाहिए।

शक्तियों को केन्द्रित करने यानी "हिस्सों को जोड़कर सम्पूर्ण की रचना करने" का तरीका आम तौर पर जब दुश्मन आक्रमणात्मक स्थिति में होता है तो उसका विनाश करने के लिए, और

कभी-कभी जब वह रक्षात्मक स्थिति में होता है तो उसकी कुछ स्थिर टुकड़ियों का विनाश करने के लिए अपनाया जाता है। शक्तियों को केन्द्रित करने का मतलब उनको निरपेक्ष रूप से केन्द्रित कर लेना नहीं बल्कि किसी एक महत्वपूर्ण दिशा में इस्तेमाल करने के लिए मुख्य शक्ति को केन्द्रित करना तथा दूसरी दिशाओं में दुश्मन को रोके रखने, हैरान-परेशान करने, तोड़फोड़ करने, या जन-कार्य करने के लिए उनके एक भाग को बचा रखना, या उसे भेज देना होता है।

यद्यपि परिस्थिति के अनुसार लचीले ढंग से शक्तियों को बिखेरना या केन्द्रित करना छापामार युद्ध का मुख्य तरीका होता है, किन्तु हमें यह भी जान लेना चाहिए कि उन्हें लचीले ढंग से कैसे हटाया (या स्थानान्तरित किया) जाए। जब दुश्मन को छापामारों की ओर से गम्भीर खतरा महसूस होता है, तो वह उन्हें कुचलने या उन पर हमला करने के लिए अपनी फौजें भेजता है। इसलिए छापामार दस्तों को अपनी स्थिति पर विचार करना चाहिए। यदि उनके लिए लड़ना उचित हो, तो उन्हें उसी स्थान पर जहां वे हैं, लड़ना चाहिए ; और यदि लड़ना उचित न हो, तो उन्हें किसी दूसरे स्थान में फौरन स्थानान्तरित हो जाने के अवसर को हाथ से नहीं निकलने देना चाहिए। कभी-कभी जब दुश्मन की टुकड़ियों को एक-एक करके तहस-नहस करना हो, तो छापामार दस्ते एक स्थान पर दुश्मन की फौज का सफाया करने के फौरन बाद दुश्मन की दूसरी फौज का सफाया करने के लिए किसी दूसरे स्थान पर जा सकते हैं ; कभी-कभी उन्हें किसी एक स्थान पर, जहां लड़ना उचित न हो, दुश्मन के साथ फौरन लड़ाई बन्द करके किसी दूसरे स्थान पर लड़ने

के लिए जाना पड़ सकता है। यदि किसी खास स्थान पर दुश्मन की तरफ से विशेष रूप से गम्भीर खतरा पैदा हो गया हो, तो छापामार यूनिटों को वहां ज्यादा अरसे तक नहीं टिकना चाहिए, बल्कि बिजली की रफ्तार से वहां से हट जाना चाहिए। आम तौर पर फौजी शक्तियों का स्थानान्तरण गुप्त रूप से और तेजी के साथ होना चाहिए। दुश्मन की आंखों में धूल झोंकने, उसे प्रलोभन देने और भ्रम में डालने के लिए लगातार दांवपेंच का प्रयोग करते रहना चाहिए, जैसे पूरब में हमले का दिखावा करके पश्चिम में हमला बोलना, कभी उत्तर में तो कभी दक्षिण में प्रकट हो जाना, मारने के फौरन बाद भाग जाना, रात को कार्यवाहियां करना, इत्यादि।

छापामार युद्ध में फौजों को बिखेरने, केन्द्रित करने और उनका स्थानान्तरण करने में लचीलापन पहलकदमी का ठोस प्रतीक है, जबकि गैरलचीलेपन और गतिहीनता के फलस्वरूप निष्क्रियता की स्थिति पैदा होना और अनावश्यक हानियां उठाना अनिवार्य हो जाता है। लेकिन किसी कमाण्डर की होशियारी महज इससे नहीं परखी जाती कि उसने अपने दस्तों का लचीलेपन से प्रयोग करने के महत्व को समझ लिया है अथवा नहीं, बल्कि इस बात से परखी जाती है कि वह विशेष परिस्थितियों के अनुसार ठीक समय पर अपने दस्तों को बिखेरने, केन्द्रित करने और स्थानान्तरित करने में कितना योग्य है। परिवर्तनों को पहले से ही भांप लेने और सही कार्यवाही करने के लिए मौके का चुनाव करने की बुद्धिमत्ता प्राप्त कर लेना आसान नहीं है; इसे सिर्फ वे ही लोग प्राप्त कर सकते हैं जो नम्रता से अध्ययन करते हैं, मेहनत से जांच-पड़ताल करते हैं और मसलों पर विचार करते हैं। लचीलापन कहीं मनमानी

कार्यवाहियों का रूप न ले ले, इसके लिए परिस्थितियों पर संजीदगी से विचार करना जरूरी होता है।

अन्त में हम योजना के सवाल को लेते हैं।

बिना योजना के छापामार युद्ध में जीत हासिल करना असम्भव है। यह विचार कि छापामार युद्ध योजनारहित ढंग से चलाया जा सकता है, छापामार युद्ध को महज एक खेल समझने या छापामार युद्ध की जानकारी न होने का द्योतक है। किसी समूचे छापामार इलाके की कार्यवाहियों, या एक ही छापामार यूनिट या छापामार फारमेशन की कार्यवाहियों से पहले, जहां तक सम्भव हो, खूब विस्तार से योजना बना लेनी चाहिए, इसी को हर कार्यवाही करने के पहले तैयारी करना कहते हैं। स्थिति को समझना, कार्यों को निश्चित करना, सैन्य-विन्यास करना, फौजी और राजनीतिक प्रशिक्षण देना, रसद-सप्लाई का इन्तजाम करना, साज-सामान की अच्छी तरह व्यवस्था करना, जन-समुदाय से मिलने वाली मदद को सही ढंग से इस्तेमाल करना, इत्यादि, ये सब छापामार कमाण्डरों के काम हैं। उन्हें इन पर अत्यन्त सूक्ष्मता से विचार करना चाहिए, इन्हें संजीदगी से पूरा करना चाहिए तथा इनकी जांच करते रहना चाहिए। वे जब तक ऐसा नहीं करते तब तक पहलकदमी हासिल नहीं कर सकते, लचीलापन नहीं अपना सकते और हमला नहीं कर सकते। यह सच है कि छापामार युद्ध की परिस्थितियों में उतने ऊंचे दर्जे की योजना नहीं बन सकती जैसी नियमित युद्ध में सम्भव है, और छापामार युद्ध में बहुत विस्तृत योजना बनाना गलत होगा। लेकिन तब भी यह जरूरी है कि जहां तक वस्तुगत परिस्थितियां इजाजत दें, यथासम्भव विस्तृत योजना बनाई जानी चाहिए, क्योंकि

हमें यह समझ लेना चाहिए कि दुश्मन से लड़ना कोई हंसी-खेल नहीं है।

ऊपर बताई गई बातें छापामार युद्ध के रणनीतिक उसूलों में से पहले उसूल पर प्रकाश डालती हैं—यानी अपनी पहलकदमी पर, लचीले तरीके से और योजना के अनुसार रक्षात्मक युद्ध में आक्रमणात्मक लड़ाइयां लड़ने, दीर्घकालीन युद्ध में तुरत निर्णय की लड़ाइयां लड़ने, और भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियों में बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करने की नीति को कार्य-रूप में परिणत करना। यह छापामार युद्ध के रणनीतिक उसूलों से सम्बन्धित अत्यन्त बुनियादी समस्या है। यदि एक बार यह समस्या हल हो गई, तो जहां तक फौजी कमान का ताल्लुक है, छापामार युद्ध में विजय प्राप्त करने की पक्की गारन्टी हो जाएगी।

यद्यपि यहां पर विभिन्न मसलों की चर्चा की गई है, लेकिन ये सभी बातें मुहिमों और लड़ाइयों में आक्रमणात्मक कार्यवाही को केन्द्र बनाकर ही कही गई हैं। अन्तिम रूप में पहलकदमी तभी हासिल हो सकती है जब किसी आक्रमणात्मक कार्यवाही में सफलता प्राप्त कर ली गई हो। हमारी तमाम आक्रमणात्मक कार्यवाहियां हमारी ही पहलकदमी से संगठित की जानी चाहिए, न कि किसी मजबूरी के कारण। शक्ति का लचीला प्रयोग आक्रमणात्मक कार्यवाही करने के प्रयत्नों के इर्द-गिर्द घूमता है, और इसी तरह, आक्रमणात्मक कार्यवाही में जीत हासिल करने के लिए योजना बनाना जरूरी होता है। यदि कार्यनीतिक रक्षा के उपायों को किसी आक्रमणात्मक कार्यवाही में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में मदद पहुंचाने की भूमिका से अलग कर दिया जाए, तो वे निरर्थक हो जाते हैं।

तुरत निर्णय का मतलब आक्रमणात्मक कार्यवाही की अवधि से है और बाहरी सैन्य-पंक्ति का मतलब आक्रमणात्मक कार्यवाही के दायरे से है। दुश्मन को ध्वस्त करने का एकमात्र साधन आक्रमणात्मक कार्यवाही ही है और अपनी हिफाजत का भी यही मुख्य साधन है। विशुद्ध रक्षा और पीछे हटना अपनी हिफाजत के बारे में केवल अस्थाई और आंशिक भूमिका ही अदा करते हैं, और दुश्मन को नष्ट करने के लिए तो वे बिलकुल ही बेकार साबित होते हैं।

यह उसूल नियमित युद्ध और छापामार युद्ध दोनों के लिए बुनियादी तौर पर एक जैसा है; सिर्फ इसके वाह्य रूपों में मात्रा का भेद मौजूद है। फिर भी छापामार युद्ध में इस भेद पर ध्यान देना महत्वपूर्ण और आवश्यक है। अपने वाह्य रूपों के इसी भेद के कारण छापामार युद्ध की कार्यवाही के तरीके नियमित युद्ध की कार्यवाही के तरीकों से भिन्न होते हैं। यदि हम इन दो अलग-अलग वाह्य रूपों को एक दूसरे से उलझा देंगे तो छापामार युद्ध में विजय प्राप्त करना असम्भव हो जाएगा।

अध्याय ५

नियमित युद्ध के साथ तालमेल

छापामार युद्ध की दूसरी रणनीति विषयक समस्या है उसका नियमित युद्ध के साथ तालमेल बैठाना। यह छापामार कार्यवाहियों के वास्तविक स्वरूप के अनुरूप कार्यवाही के स्तर पर छापामार युद्ध और नियमित युद्ध के बीच के सम्बन्धों को स्पष्ट करने की

समस्या है। दुश्मन को कारगर तरीके से हराने के लिए इन सम्बन्धों को समझना बहुत महत्वपूर्ण है।

छापामार युद्ध और नियमित युद्ध के बीच तीन प्रकार का तालमेल होता है: रणनीति में, मुहिमों में और लड़ाइयों में।

समूचे रूप में, दुश्मन के पृष्ठभाग में चलाया जाने वाला छापामार युद्ध, जो दुश्मन को कमजोर बना देता है, उसे रोके रखता है, उसकी सप्लाई-लाइनों को काट देता है, और समूचे देश की नियमित सेनाओं व जनता के उत्साह को ऊंचा उठाता है, रणनीति की दृष्टि से नियमित युद्ध के साथ तालमेल कायम करता है। मिसाल के लिए, देशव्यापी प्रतिरोध-युद्ध शुरू होने से पहले तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्तों में चलाए जाने वाले छापामार युद्ध के लिए तालमेल बैठाने की समस्या नहीं उठी, लेकिन उक्त युद्ध शुरू होने के बाद तालमेल बैठाने का महत्व स्पष्ट रूप में सामने आ गया है। वहां के छापामार दस्ते यदि दुश्मन के एक भी ज्यादा सिपाही को मारते हैं, दुश्मन से एक भी ज्यादा गोली बेकार में चलवा देते हैं, लम्बी दीवार के दक्षिण की ओर बढ़ने वाले दुश्मन के एक भी ज्यादा सिपाही को रोके रखते हैं, तो इसे प्रतिरोध-युद्ध की कुल शक्ति में उनकी ओर से किया गया योगदान समझा जाएगा। यह भी स्पष्ट है कि उनकी इस कार्यवाही से दुश्मन की पूरी सेना में और उसके देश में पस्त-हिम्मती फैल गई है और हमारी पूरी सेना और हमारी जनता पर इसका प्रेरणादायी प्रभाव पड़ा है। पेफिङ-स्वेय्वान, पेफिङ-हानखओ, थ्येनचिन-फूखओ, ताथुङ-फूचओ, चङतिङ-थाएय्वान और शांघाई-हाङ्चओ रेलवे-लाइनों के किनारे रणनीतिक तालमेल बैठाने में छापामार युद्ध द्वारा अदा की जाने वाली भूमिका और भी आसानी

से समझ में आ सकती है। नियमित सेना से तालमेल बैठाकर छापामार दस्ते न सिर्फ इस समय रणनीतिक रक्षा की भूमिका अदा कर रहे हैं जबकि दुश्मन रणनीतिक आक्रमण कर रहा है; वे न सिर्फ दुश्मन के रक्षात्मक प्रयत्नों में उस समय बाधा डालेंगे जब दुश्मन अपने रणनीतिक आक्रमणों को समाप्त कर अधिकृत क्षेत्र की हिफाजत की ओर मुड़ जाएगा; बल्कि जब नियमित सेना रणनीतिक प्रत्याक्रमण शुरू करेगी तो वे नियमित सेनाओं के साथ तालमेल बैठाकर दुश्मन की सेनाओं को पीछे भी हटाएंगे और तमाम खोए हुए प्रदेशों को वापस ले लेंगे। रणनीतिक तालमेल बैठाने में छापामार युद्ध द्वारा अदा की जाने वाली महान भूमिका को नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए। छापामार दस्तों और नियमित सेना के कमाण्डरों को इसकी भूमिका को साफ तौर पर समझ लेना चाहिए।

इसके अलावा, छापामार युद्ध मुहिमों के दौरान नियमित युद्ध के साथ तालमेल बैठाने का भी काम करता है। मिसाल के लिए, थाएय्वान के उत्तर में स्थित शिनखओ की मुहिम में, येनमनक्वान के उत्तर और दक्षिण में होने वाले छापामार युद्ध ने ताथुङ-फूचओ रेलवे-लाइन को तथा फिङशिङक्वान और याङफ़ाङखओ से गुजरने वाली मोटर-सड़कों को काटने के कार्य के जरिए तालमेल बैठाने की उल्लेखनीय भूमिका अदा की। दूसरी मिसाल ले लीजिए। फ़ङलिङतू पर दुश्मन द्वारा कब्जा कर लिए जाने के बाद पूरे शानशी प्रान्त में व्यापक रूप से चलाए गए छापामार युद्ध ने (जो मुख्यतया नियमित सेना द्वारा चलाया गया था) शेनशी प्रान्त में पीली नदी के पश्चिमी तट पर और हनान प्रान्त में पीली नदी के दक्षिणी तट पर चलाई गई रक्षात्मक मुहिमों के साथ तालमेल बैठाकर और

अधिक बड़ी भूमिका अदा की। इसके अलावा, जब दुश्मन ने दक्षिणी शानतुङ पर हमला किया, तब उत्तरी चीन के पांच प्रान्तों में होने वाले छापामार युद्ध ने दक्षिणी शानतुङ में हमारी नियमित सेना की मुहिमों के साथ तालमेल बैंठाने में बड़ा योगदान किया। ऐसे काम करते समय दुश्मन के पृष्ठभाग में स्थित हर छापामार आधार-क्षेत्र के नेताओं या कुछ समय के लिए वहां भेजी गई हर छापामार फारमेशन के कमाण्डरों को चाहिए कि वे अपनी ताकत का उचित वितरण करें, तात्कालिक और स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग कार्यनीति इस्तेमाल करें, दुश्मन के सबसे मार्मिक और सबसे कमजोर स्थानों के खिलाफ जोरदार कार्यवाही करें, जिससे कि दुश्मन को कमजोर बनाने, उसे रोके रखने, उसकी सप्लाई-लाइनों को काट देने और भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली मुहिमों में कार्यवाही करने वाली अपनी फौजों के उत्साह को बढ़ाने में वे सफल हो सकें, और इस तरह मुहिमों के साथ तालमेल बैंठाने की अपनी जिम्मेदारी को पूरा कर सकें। यदि हर छापामार इलाका या हर छापामार दस्ता अपनी कार्यवाही को सिर्फ अपने आप अकेला ही चलाता रहता है और नियमित सेना की मुहिमों के साथ तालमेल बैंठाने की कार्यवाही को नजरअन्दाज करता है, तो हालांकि आम रणनीतिक कार्यवाहियों में वह तब भी कुछ भूमिका अदा कर सकेगा, लेकिन मुहिमों के साथ तालमेल बैंठाने की कार्यवाही के बिना, रणनीतिक तालमेल में उसकी भूमिका का महत्व कम हो जाएगा। यह एक ऐसी बात है जिसकी ओर सभी छापामार कमाण्डरों को गहराई से ध्यान देना चाहिए। मुहिमों में तालमेल बैंठाने के लिए यह एकदम जरूरी है कि सभी अपेक्षाकृत बड़ी छापामार यूनिटों और छापामार फारमेशनों को रेडियो की सुविधाओं से लैस किया जाए।

अन्त में, नियमित सेनाओं के साथ लड़ाई में तालमेल बैठाना, यानी रणभूमि की वास्तविक लड़ाइयों में तालमेल बैंठाना भीतरी सैन्य-पंक्ति की रणभूमि के आसपास के सभी छापामार दस्तों का कार्य है। निस्सन्देह यह कार्य ऐसे छापामार दस्तों तक ही सीमित रहेगा जो नियमित सेना के बहुत निकट हों या नियमित सेना से अस्थाई छापामार कार्यवाहियों के लिए भेजे गए हों। ऐसी स्थिति में छापामार दस्तों को नियमित सेना के कमाण्डर द्वारा बताया गया कार्य ही सम्पन्न करना चाहिए, जो आम तौर पर दुश्मन के एक भाग को रोके रखना, उसकी सप्लाई-लाइनों को काट देना, उसकी फौजी टोह लेना, अपनी नियमित सेना को रास्ता बताने का काम करना आदि होगा। छापामार दस्तों को नियमित सेना के कमाण्डर के आदेश के बिना भी अपनी ही पहलकदमी पर ये सब काम करने चाहिए। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना, न अपनी जगह से हिलना और न लड़ना, अथवा बिना लड़े इधर-उधर घूमते फिरना – यह एक ऐसा रवैया है जिसकी एक छापामार दस्ते को हरगिज इजाजत नहीं दी जा सकती।

अध्याय ६

आधार-क्षेत्रों की स्थापना

जापान-विरोधी छापामार युद्ध की तीसरी रणनीति विषयक समस्या है आधार-क्षेत्रों की स्थापना। इस समस्या को उठाना जरूरी और महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह युद्ध एक दीर्घकालीन और निर्मम

युद्ध है। हमारे छीने गए प्रदेश हमें तब तक वापस नहीं मिल सकते जब तक देशव्यापी रणनीतिक प्रत्याक्रमण शुरू न कर दिया जाए ; तब हम एक ऐसी स्थिति में होंगे जिसमें दुश्मन का मोर्चा चीन के मध्य भाग में भीतर तक, देश को उत्तर से दक्षिण तक विभाजित करता हुआ फैल जाएगा, तथा हमारे प्रदेश का एक भाग, यहां तक कि अधिकांश भाग दुश्मन के अधिकार में चला जाएगा और उसका पृष्ठभाग बन जाएगा। हमें छापामार युद्ध को दुश्मन द्वारा अधिकृत इस पूरे विशाल क्षेत्र में फैलाना होगा, दुश्मन के पृष्ठभाग को उसके मोर्चे में परिवर्तित कर देना होगा, और उसे इस अधिकृत क्षेत्र में लगातार लड़ने के लिए बाध्य करना होगा। जब तक हमारा रण-नीतिक प्रत्याक्रमण शुरू नहीं होता और हम अपने छीने गए प्रदेशों को वापस नहीं ले लेते, तब तक हमें दुश्मन के पृष्ठभाग में दृढ़ता के साथ छापामार युद्ध चलाते जाना होगा, गोकि अभी हम यह नहीं कह सकते कि ऐसा युद्ध हमें कब तक चलाना होगा, लेकिन यह निश्चित है कि वह काफी लम्बे समय तक चलाना होगा। यही वजह है कि हमारा युद्ध दीर्घकालीन होगा। इसके साथ ही, दुश्मन अपने अधिकृत इलाकों में अपनी उपलब्धियों की रक्षा के लिए छापामारों के खिलाफ अपनी कार्यवाहियों को दिन-प्रति-दिन तेज करेगा और छापामारों को निर्मम रूप से कुचल डालने के लिए कार्यवाहियां करेगा, खास तौर से उस समय जब उसका रणनीतिक आक्रमण रुक जाएगा। चूंकि यह युद्ध दीर्घकालीन और निर्मम दोनों है, इसलिए बिना आधार-क्षेत्र के दुश्मन के पृष्ठभाग में छापामार युद्ध चलाते रहना असम्भव है।

तो फिर छापामार युद्ध के लिए ये आधार-क्षेत्र आखिर क्या

हैं ? ये आधार-क्षेत्र वे रणनीतिक अड्डे हैं जिन पर छापामार शक्तियां अपने रणनीतिक कार्यों को पूरा करने और अपने को सुरक्षित रखने व विकसित करने तथा दुश्मन को नष्ट करने व उसे निकाल बाहर करने के उद्देश्य की सफलता के लिए निर्भर रहती हैं। इन रणनीतिक अड्डों के बिना तमाम रणनीतिक कार्यों को पूरा करने और युद्ध के उद्देश्य को हासिल करने के लिए कोई भी आधार नहीं रह जाएगा। दुश्मन की सैन्य-पंक्तियों के पीछे चलने वाले छापामार युद्ध की विशेषता यह होती है कि उसकी कार्यवाहियां बिना पृष्ठभाग के होती हैं, क्योंकि छापामार दस्तों का देश के आम पृष्ठभाग से सम्बन्ध टूट जाता है। लेकिन बिना आधार-क्षेत्रों के छापामार युद्ध न तो लम्बे अरसे तक चल सकता है और न विकसित ही किया जा सकता है। दरअसल आधार-क्षेत्र ही उसके पृष्ठभाग होते हैं।

इतिहास में "घुमन्तू विद्रोहियों" की तरह के अनेक किसान युद्ध हुए हैं। लेकिन वे सभी असफल रहे। विकसित यातायात के साधनों और तकनालाजी के वर्तमान युग में इन घुमन्तू विद्रोहियों के तरीके अपनाकर विजय प्राप्त करना पहले से भी अधिक निराधार भ्रम होगा। पर इन घुमन्तू विद्रोहियों की धारणा तबाह हुए किसानों में अब भी मौजूद है और यह धारणा जब छापामार कमाण्डरों के दिमाग में घुस जाती है, तो वह इस विचार का रूप ले लेती है कि आधार-क्षेत्रों की न तो कोई आवश्यकता है और न उनका कोई महत्व है। इसलिए आधार-क्षेत्रों को कायम करने की नीति निर्धारित करने की पूर्वशर्त है छापामार कमाण्डरों के दिमाग से इस प्रकार के विचार को निकाल फेंकना। यह सवाल कि आधार-क्षेत्र बनाए जाएं या नहीं, उनको कोई महत्व दिया जाए या नहीं, दूसरे शब्दों

में, आधार-क्षेत्र कायम करने और घुमन्तू विद्रोहियों जैसी कार्यवाही करने के विचारों के बीच का संघर्ष, सभी छापामार युद्धों में पैदा होता है और एक हद तक हमारा जापान-विरोधी छापामार युद्ध भी इसका अपवाद नहीं है। इसलिए घुमन्तू विद्रोहियों के विचार के विरुद्ध संघर्ष करना एक अनिवार्य प्रक्रिया है। जब घुमन्तू विद्रोहियों के विचार को पूरी तरह दूर कर लिया जाएगा तथा आधार-क्षेत्र कायम करने की नीति को प्रस्तुत किया जाएगा और उस पर अमल किया जाएगा, केवल तभी दीर्घकालीन छापामार युद्ध के लिए अनुकूल स्थितियां तैयार हो सकती हैं।

आधार-क्षेत्रों की आवश्यकता और महत्व को स्पष्ट रूप से समझ लेने के बाद, आधार-क्षेत्रों की स्थापना के दौरान निम्नलिखित समस्याओं को समझ लेना चाहिए और उन्हें हल करना चाहिए। ये समस्याएं हैं: आधार-क्षेत्रों की किस्में, छापामार इलाके और आधार-क्षेत्र, आधार-क्षेत्रों की स्थापना की शर्तें, आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाना और विकसित करना, तथा दुश्मन की और हमारी फौजों द्वारा की जाने वाली घेरेबन्दी की किस्में।

१. आधार-क्षेत्रों की किस्में

जापान-विरोधी छापामार युद्ध में आधार-क्षेत्रों की मुख्यतया ये तीन किस्में हैं: जो पहाड़ों में हैं, जो मैदानों में हैं, जो नदियों-झीलों-मुहानों के तटवर्ती प्रदेशों में हैं।

पहाड़ी इलाकों में आधार-क्षेत्रों की स्थापना के फायदे सभी को मालूम हैं, और छाङपाए,[१] ऊथाए,[२] थाएहाङ,[३] थाएशान,[४]

येनशान[५] और माओशान[६] पहाड़ों पर जो आधार-क्षेत्र बनाए गए हैं, बनाए जा रहे हैं या बनाए जाएंगे, वे सब इसी प्रकार के हैं। ये सभी आधार-क्षेत्र ऐसे स्थान हैं जहां जापान-विरोधी छापामार युद्ध सबसे लम्बे समय तक चलाया जा सकता है और ये जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के महत्वपूर्ण गढ़ हैं। दुश्मन की सैन्य-पंक्तियों के पीछे सभी पहाड़ी इलाकों में हमें छापामार युद्ध को विकसित करना चाहिए और आधार-क्षेत्र बनाने चाहिए।

इसमें शक नहीं कि पहाड़ों के मुकाबले मैदान कम अनुकूल साबित होते हैं। लेकिन मैदानों में छापामार युद्ध को बढ़ाना और किसी आधार-क्षेत्र की स्थापना करना बिलकुल असम्भव नहीं है। हपे तथा उत्तरी और उत्तर-पश्चिमी शानतुङ के मैदानों में बड़े पैमाने पर चलाए गए छापामार युद्ध से यह साबित हो जाता है कि मैदानों में भी छापामार युद्ध विकसित किया जा सकता है। जहां तक मैदानी इलाकों में लम्बे अरसे तक टिकने वाले आधार-क्षेत्रों की स्थापना करने की सम्भावना का ताल्लुक है, इसकी अभी तक पुष्टि नहीं हुई है। लेकिन अस्थाई आधार-क्षेत्रों की स्थापना की सम्भावना साबित हो चुकी है, और छोटी यूनिटों के लिए या मौसमी इस्तेमाल के लिए आधार-क्षेत्रों की स्थापना तो सम्भव होनी ही चाहिए। एक ओर चूंकि दुश्मन के पास विन्यास करने के लिए काफी फौजें नहीं हैं और वह मानव-इतिहास में बेमिसाल बर्बरता की नीति बरत रहा है, तथा दूसरी ओर चूंकि चीन के पास विशाल भू-भाग है और उसकी विशाल जनता जापान का प्रतिरोध कर रही है, इसलिए मैदानी इलाकों में छापामार युद्ध को विकसित करने और साथ ही वहां अस्थाई आधार-क्षेत्र कायम

करने की वस्तुगत शर्तें मौजूद हैं। यदि इसके साथ ही सुयोग्य फौजी कमान भी मौजूद हो, तो छोटी यूनिटों के लिए दीर्घकालीन किन्तु अस्थिर आधार-क्षेत्रों की स्थापना करना निस्सन्देह सम्भव है।* आम तौर पर जब दुश्मन अपने रणनीतिक आक्रमणों को रोक देता है और अपने अधिकृत इलाकों को सुरक्षित रखने की मंजिल में प्रवेश करता है, तो निस्सन्देह वह छापामार युद्ध के तमाम आधार-क्षेत्रों पर निर्मम हमला करेगा, और मैदानों में स्थित छापामार आधार-क्षेत्रों को स्वभावतः इस हमले का प्रहार सबसे पहले बर्दाश्त करना पड़ता है। जब ऐसा होता है तो मैदानों में कार्यवाही करने वाली बड़ी छापामार फारमेशनों के लिए एक ही स्थान पर लम्बे अरसे तक लड़ाई चलाना असम्भव हो जाता है। ऐसी स्थिति में उन्हें परिस्थितियों के अनुसार धीरे-धीरे पहाड़ी इलाकों में हट जाना चाहिए – मिसाल के लिए, वे हपे के मैदानी इलाके से ऊथाए और थाएहाङ पहाड़ों में हट जाएं, अथवा शानतुङ के मैदानों से थाएशान पहाड़ और पूर्व के शानतुङ प्रायद्वीप में चले जाएं। लेकिन राष्ट्रीय युद्ध की परिस्थिति में अनेक छोटी-छोटी छापामार यूनिटों का विशाल मैदानों में स्थित विभिन्न काउन्टियों में फैल जाना और लड़ाई के चलायमान तरीके का अपनाया जाना, यानी एक स्थान से दूसरे स्थान पर अपने आधार-क्षेत्रों को बदलते जाना, असम्भव नहीं है। गर्मी में "हरियाली की ओट" और जाड़ों में बर्फ से जमी हुई नदियों का फायदा उठाकर मौसमी छापामार युद्ध चलाना निश्चित रूप से सम्भव है। चूंकि आज दुश्मन के पास हम लोगों से निपटने की शक्ति नहीं है और न भविष्य में ही उसके पास इसके लिए पर्याप्त शक्ति होगी, इसलिए हमारे लिए इस नीति को मान

लेना बहुत जरूरी है कि आज मैदानों में छापामार युद्ध को व्यापक रूप से विकसित किया जाए और वहां अस्थाई आधार-क्षेत्र कायम किए जाएं तथा भविष्य के लिए छोटी-छोटी छापामार यूनिटों द्वारा छापामार युद्ध, कम से कम मौसमी छापामार युद्ध जारी रखने की तैयारी की जाए और अस्थिर आधार-क्षेत्र कायम किए जाएं।

जहां तक वस्तुगत स्थिति का सम्बन्ध है, नदियों-झीलों-मुहानों के तटवर्ती प्रदेशों में छापामार युद्ध को विकसित करने और आधार-क्षेत्र कायम करने की सम्भावनाएं मैदानों की तुलना में अधिक हैं, किन्तु पहाड़ी इलाकों की तुलना में कम हैं। हमारे इतिहास में "समुद्री डाकुओं" और "जल-दस्युओं" द्वारा अनेक नाटकीय युद्ध किए गए हैं, तथा लाल सेना के दिनों में हुङहू झील के आसपास कई वर्षों तक छापामार युद्ध चलता रहा था। ये सब बातें यही साबित करती हैं कि नदियों-झीलों-मुहानों के तटवर्ती प्रदेशों में छापामार युद्ध को विकसित करना और आधार-क्षेत्र कायम करना सम्भव है। लेकिन जापान-विरोधी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों और जन-समुदाय ने अभी तक इस ओर बहुत कम ध्यान दिया है। यद्यपि मनोगत परिस्थितियां अभी परिपक्व नहीं हैं, फिर भी इसमें शक नहीं कि हमें इस तरफ ध्यान देना चाहिए और इस सिलसिले में काम शुरू कर देना चाहिए। छापामार युद्ध को राष्ट्रीय पैमाने पर विकसित करने के एक पहलू के रूप में हमें याङत्सी नदी के उत्तर में स्थित हुङत्से झील के क्षेत्र में, याङत्सी नदी के दक्षिण में स्थित थाएहू झील के क्षेत्र में, और नदियों व समुद्र के किनारे-किनारे नदियों-झीलों-मुहानों के तट पर दुश्मन द्वारा अधिकृत सभी इलाकों

में, इस प्रकार के युद्ध को अच्छी तरह संगठित करना चाहिए, और ठीक इन्हीं इलाकों में या इनके एकदम नजदीक दीर्घकालीन आधार-क्षेत्र कायम करने चाहिए। इस पहलू को नजरअन्दाज करना दुश्मन को जल-यातायात की सुविधा दे देने के बराबर है; यह जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में रणनीतिक योजना की एक कमजोरी है, जिसे हमें समय रहते दूर कर लेना चाहिए।

२. छापामार इलाके और आधार-क्षेत्र

दुश्मन के पृष्ठभाग में चलने वाले छापामार युद्ध में छापामार इलाके और आधार-क्षेत्र के बीच भेद होता है। ऐसे इलाके जिनके चारों ओर दुश्मन का कब्जा है लेकिन जिनके मध्य भाग दुश्मन के अधिकार में नहीं हैं, या उससे वापस ले लिए गए हैं – जैसे ऊथाए पहाड़ी इलाके (यानी शानशी-छाहाड़-हपे सीमान्त क्षेत्र) की कुछ काउन्टियां तथा थाएहाङ और थाएशान पहाड़ी इलाकों के कुछ स्थान – ऐसे बने-बनाए आधार-क्षेत्र हैं जिनके भरोसे छापामार दस्ते आसानी से छापामार युद्ध विकसित कर सकते हैं। लेकिन इन क्षेत्रों के दूसरे भागों में स्थिति भिन्न है – जैसे ऊथाए पहाड़ी इलाके के पूर्वी और उत्तरी भागों में, यानी पश्चिमी हपे और दक्षिणी छाहाड़ के कुछ भाग तथा पाओतिङ के पूरब और छाङचऊ के पश्चिम में स्थित अनेक स्थानों में। इन इलाकों को छापामार युद्ध के आरम्भ में छापामार दस्ते अपने कब्जे में पूरी तरह नहीं ला सके थे; छापामार दस्ते इन पर केवल बार-बार आक्रमण करते रहते थे। ये इलाके छापामारों के हाथ में सिर्फ तभी आते हैं जब वे वहां पहुंचते

हैं, और जब वे चले जाते हैं तो ये इलाके कठपुतली शासकों के हाथ में चले जाते हैं। इस तरह के इलाके छापामारों के आधार-क्षेत्र नहीं, बल्कि छापामार इलाके कहलाते हैं। इस प्रकार के छापामार इलाके आधार-क्षेत्रों में तभी परिवर्तित हो सकेंगे, जब वे छापामार युद्ध की आवश्यक प्रक्रिया से गुजर चुके होंगे, यानी जब दुश्मन की फौजों की एक बड़ी संख्या को नष्ट या परास्त कर दिया जाएगा, कठपुतली शासन को नष्ट कर दिया जाएगा, जन-समुदाय की सक्रियता जागृत हो उठेगी, जापान-विरोधी जन-संगठन कायम हो जाएंगे, जन-समुदाय की स्थानीय हथियारबन्द शक्तियों का विकास हो जाएगा और एक जापान-विरोधी राजनीतिक सत्ता कायम हो जाएगी। हमारे आधार-क्षेत्रों का विस्तार करने का मतलब यही है कि पहले से स्थापित आधार-क्षेत्रों में ऐसे क्षेत्रों को जोड़ दिया जाए।

कुछ जगहों में, मिसाल के लिए पूर्वी हपे में, छापामार युद्ध की कार्यवाही का समूचा क्षेत्र शुरू से ही छापामार इलाका बन गया है। पूर्वी हपे में लम्बे अरसे तक एक कठपुतली सरकार कायम रही। स्थानीय बगावतों से पैदा होने वाली जन-समुदाय की हथियारबन्द शक्तियों और ऊथाए पहाड़ से भेजे गए छापामार दस्तों की कार्यवाही का यह पूरा क्षेत्र शुरू से ही एक छापामार इलाका बन गया। अपनी कार्यवाहियों के शुरू में वे इस क्षेत्र में केवल अनुकूल स्थानों को चुनकर ही अपना अस्थाई पृष्ठभाग या अस्थाई आधार-क्षेत्र बना पाते थे। जब तक दुश्मन की फौजें नष्ट नहीं कर दी जातीं और जन-समुदाय को जागृत करने का कार्य जोरों से नहीं किया जाता, तब तक इस प्रकार के छापामार इलाकों को अपेक्षाकृत स्थिर आधार-क्षेत्रों में तबदील नहीं किया जा सकता।

इसलिए किसी छापामार इलाके को आधार-क्षेत्र में बदलना एक दुष्कर सृजनात्मक प्रक्रिया है। किसी छापामार इलाके को आधार-क्षेत्र में बदलना इस बात पर निर्भर करता है कि दुश्मन को किस हद तक नष्ट किया गया है और जन-समुदाय को कहां तक जागृत किया गया है।

बहुत से इलाके लम्बे अरसे तक छापामार इलाके बने रहेंगे। इन क्षेत्रों में दुश्मन यद्यपि अपना नियंत्रण कायम रखने के लिए भरपूर ताकत लगाएगा, लेकिन वह कोई स्थिर कठपुतली सरकार कायम नहीं कर सकेगा, और यद्यपि हम हर सम्भव उपाय से छापामार युद्ध को आगे बढ़ाते रहेंगे, फिर भी हम वहां जापान-विरोधी राजनीतिक सत्ता कायम करने में सफल नहीं हो सकेंगे। इसकी मिसालें हैं दुश्मन द्वारा अधिकृत क्षेत्रों में रेलवे-लाइनों के आसपास के इलाके, बड़े शहरों के चारों तरफ के इलाके और कुछ मैदानी क्षेत्र।

जहां तक बड़े शहरों, रेलवे-स्टेशनों और कुछ मैदानी क्षेत्रों का ताल्लुक है, वहां पर दुश्मन की मजबूत सुरक्षा सेनाओं द्वारा कब्जा किया जाता है, इसलिए छापामार युद्ध को इन स्थानों के निकट तक तो विकसित किया जा सकता है, पर एकदम इनके भीतर तक नहीं, जहां कठपुतली सरकार भी अपेक्षाकृत स्थिर होती है। यह एक अन्य प्रकार की परिस्थिति है।

हमारे अन्दर किसी के गलत नेतृत्व या दुश्मन के भारी दबाव के कारण ऊपर बताई गई स्थिति बिलकुल उल्टा रूप भी ले सकती है, यानी कोई छापामार आधार-क्षेत्र छापामार इलाके में बदल जाए तथा कोई छापामार इलाका एक ऐसे इलाके में बदल जाए जहां दुश्मन का अपेक्षाकृत स्थिर कब्जा हो जाए। ऐसा परिवर्तन

सम्भव है और छापामार कमाण्डरों को इसके प्रति विशेष सतर्कता रखनी चाहिए।

अतएव छापामार युद्ध तथा दुश्मन और हमारे बीच के संघर्ष के फलस्वरूप, दुश्मन द्वारा अधिकृत क्षेत्र नीचे की तीन श्रेणियों में आते हैं: पहली श्रेणी में हमारी छापामार यूनिटों और हमारी राजनीतिक सत्ता के मातहत जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र आते हैं; दूसरी श्रेणी में जापानी साम्राज्यवाद और उसकी कठपुतली सरकार द्वारा अधिकृत इलाके आते हैं; तथा तीसरी श्रेणी में दोनों पक्षों द्वारा छीना-झपटी किए जाने वाले मध्यवर्ती इलाके, यानी छापामार इलाके आते हैं। छापामार कमाण्डरों का कर्तव्य है कि वे पहली और तीसरी श्रेणी के इलाकों को बढ़ाने तथा दूसरी श्रेणी के इलाकों को घटाने का हर सम्भव प्रयत्न करें। यह छापामार युद्ध का रणनीतिक कार्य है।

३. आधार-क्षेत्रों की स्थापना की शर्तें

आधार-क्षेत्रों की स्थापना के लिए बुनियादी शर्त यह है कि जापान-विरोधी सशस्त्र सेना हो, तथा इस सशस्त्र सेना को दुश्मन को हराने और जन-समुदाय को कार्यवाही के वास्ते जागृत करने के काम में जुटाया जाए। इस प्रकार, आधार-क्षेत्र कायम करने की पहली समस्या सशस्त्र सेना के निर्माण की समस्या है। छापामार युद्ध में नेताओं को चाहिए कि वे अपनी तमाम शक्ति को एक या अनेक छापामार यूनिटें बनाने में लगाएं, और संघर्ष के दौरान उन्हें कदम-ब-कदम छापामार फारमेशनों के रूप में विकसित करें, यहां

तक कि उन्हें नियमित सेना की यूनिटों व फारमेशनों का रूप दे दें। आधार-क्षेत्र कायम करने की अत्यन्त बुनियादी कुंजी सशस्त्र सेना का निर्माण करना है। अगर सशस्त्र सेना न हो, या सशस्त्र सेना कमजोर हो, तो कुछ भी नहीं किया जा सकता। यह पहली शर्त है।

आधार-क्षेत्र कायम करने के लिए दूसरी अनिवार्य शर्त यह है कि सशस्त्र सेना का उपयोग जन-समुदाय के साथ तालमेल कायम करके दुश्मन को हराने के लिए होना चाहिए। दुश्मन द्वारा नियंत्रित तमाम स्थान दुश्मन के अड्डे हैं, छापामार आधार-क्षेत्र नहीं, तथा यह स्पष्ट है कि उन्हें छापामार आधार-क्षेत्रों में तब तक नहीं बदला जा सकता जब तक दुश्मन को हरा नहीं दिया जाता। यदि हम दुश्मन के हमलों को पीछे नहीं ढकेलेंगे और उसे हराएंगे नहीं, तो छापामारों द्वारा नियंत्रित स्थान भी दुश्मन द्वारा नियंत्रित स्थान बन जाएंगे, और तब आधार-क्षेत्रों की स्थापना भी असम्भव हो जाएगी।

आधार-क्षेत्र कायम करने के लिए तीसरी अनिवार्य शर्त यह है कि अपनी तमाम शक्ति, जिसमें हमारी सशस्त्र सेना भी शामिल है, जापान के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए जन-समुदाय को जागृत करने में लगा दी जाए। इस प्रकार के संघर्ष के दौरान हमें जनता को हथियारबन्द करना चाहिए, यानी आत्मरक्षा कोर और छापामार दस्तों का संगठन करना चाहिए। इस संघर्ष के दौरान हमें जन-संगठनों का निर्माण करना चाहिए; हमें मजदूरों, किसानों, नौजवानों, स्त्रियों, बच्चों, व्यापारियों और आजाद पेशे के लोगों को उनकी राजनीतिक चेतना और उनके जुझारू उत्साह के स्तर के अनुसार जापान के खिलाफ संघर्ष करने के लिए विभिन्न प्रकार के आवश्यक जन-संगठनों में संगठित करना चाहिए, तथा इन जन-

संगठनों को कदम-ब-कदम विकसित करना चाहिए। यदि जन-समुदाय असंगठित रहेगा तो जापान के खिलाफ लड़ाई में वह अपनी शक्ति का प्रदर्शन नहीं कर सकेगा। ऐसे संघर्ष के दौरान हमें खुले या छिपे रूप में गद्दारी करने वालों का सफाया कर देना चाहिए; यह एक ऐसा काम है जो हम केवल जन-समुदाय की शक्ति पर निर्भर रहकर ही पूरा कर सकते हैं। इस संघर्ष में, जापान-विरोधी राजनीतिक सत्ता के स्थानीय संगठनों को कायम करने या उन्हें सुदृढ़ बनाने के लिए जन-समुदाय को जागृत करना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। जहां पहले से मौजूद चीनी राजनीतिक सत्ता के संगठन दुश्मन द्वारा नष्ट न किए गए हों, वहां हमें व्यापक जन-समुदाय के समर्थन के आधार पर उनमें सुधार करना चाहिए और उन्हें मजबूत बनाना चाहिए; जहां पहले से मौजूद चीनी राजनीतिक सत्ता के संगठन दुश्मन द्वारा नष्ट कर दिए गए हों, वहां हमें व्यापक जन-समुदाय के प्रयत्नों के आधार पर उन्हें फिर से कायम करना चाहिए। राजनीतिक सत्ता के ऐसे संगठन जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति पर अमल करते हैं और उन्हें चाहिए कि वे अपने एकमात्र दुश्मन, जापानी साम्राज्यवाद तथा उसके गुर्गों – गद्दारों और प्रतिक्रियावादियों – के खिलाफ लड़ने के लिए जनता की तमाम शक्तियों को एकताबद्ध करें।

ऊपर बताई गई तीन बुनियादी शर्तों को कदम-ब-कदम पूरा करके ही सही मायने में छापामार युद्ध के लिए आधार-क्षेत्र कायम किए जा सकते हैं, यानी जापान-विरोधी सशस्त्र सेना का निर्माण करने, दुश्मन को शिकस्त देने और जन-समुदाय को जागृत करने के बाद ही यह काम पूरा हो सकता है।

इसके अलावा, भौगोलिक और आर्थिक शर्तों की ओर भी ध्यान देना चाहिए। "आधार-क्षेत्रों की किस्में" वाले परिच्छेद में हम पहले ही भौगोलिक स्थितियों के बारे में विभिन्न प्रकार की तीन स्थितियों का उल्लेख कर चुके हैं। यहां हम सिर्फ एक प्रमुख आवश्यकता की चर्चा करेंगे, यानी इस बात की चर्चा करेंगे कि इलाके का विस्तृत होना जरूरी है। चारों तरफ से या तीन तरफ से दुश्मन द्वारा घिरे हुए स्थानों में स्वभावतः पहाड़ी इलाके ऐसे आधार-क्षेत्रों की स्थापना के लिए जो लम्बे समय तक टिक सकते हैं, सबसे अच्छी स्थिति में हैं। लेकिन मुख्य चीज यह है कि छापामारों के पास दांवपेंच खेलने के लिए काफी जगह, यानी विस्तृत इलाका होना चाहिए। विस्तृत इलाका होने पर छापामार युद्ध मैदानों में भी विकसित किया जा सकता है और जारी रखा जा सकता है, नदियों-झीलों-मुहानों के तटवर्ती इलाकों के बारे में तो कुछ कहना ही नहीं है। चीन में विस्तृत भूमि होने और दुश्मन के पास अपर्याप्त सेना होने के कारण यहां छापामार युद्ध के लिए आम तौर पर यह शर्त मौजूद है ही। जहां तक छापामार युद्ध की सम्भावना की बात है, उसके लिए यह एक महत्वपूर्ण, यहां तक कि पहली महत्वपूर्ण शर्त है। बेलजियम जैसे छोटे देश में इसकी सम्भावना बहुत कम है या बिलकुल नहीं है, क्योंकि वहां विस्तृत क्षेत्र वाली शर्त मौजूद नहीं है। चीन में यह शर्त पूरी करने के लिए प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं है, अथवा यह कोई समस्या खड़ी नहीं करती ; बल्कि यह एक ऐसी चीज है जो प्राकृतिक रूप से उपलब्ध है और सिर्फ इस बात का इन्तजार कर रही है कि हम उसका उपयोग करें।

यदि हम आर्थिक शर्त पर उसके प्राकृतिक पहलू से विचार करें,

तो हमें भौगोलिक शर्त जैसी ही तस्वीर मिलती है, क्योंकि हम एक ऐसे रेगिस्तान में, जहां कोई दुश्मन न हो, आधार-क्षेत्र कायम करने की चर्चा नहीं कर रहे, बल्कि दुश्मन के पृष्ठभाग में आधार-क्षेत्र कायम करने की चर्चा कर रहे हैं। दुश्मन जहां कहीं भी पहुंचता है वहां पहले से ही चीनी लोग जरूर रहते आए हैं और साथ ही जिन्दा रहने का कोई आर्थिक आधार भी जरूर मौजूद रहता है। इसलिए आधार-क्षेत्रों की स्थापना के लिए आर्थिक शर्तों के मुताबिक जगह चुनने का सवाल ही नहीं उठता। आर्थिक शर्तें चाहे जो भी हों, उन सब जगहों में जहां चीनी लोग और दुश्मन दोनों मौजूद हैं, हमें छापामार युद्ध का विकास करने और स्थाई या अस्थाई आधार-क्षेत्र कायम करने का हर सम्भव प्रयत्न करना चाहिए। लेकिन राजनीतिक दृष्टि से आर्थिक शर्त एकदम दूसरी ही तस्वीर पेश कर देती है। इस दृष्टि से आर्थिक शर्त एक समस्या है, यानी आर्थिक नीति की समस्या, जो आधार-क्षेत्रों की स्थापना के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। छापामार आधार-क्षेत्रों के लिए आर्थिक नीति जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए, यानी वित्तीय बोझ का न्यायोचित बंटवारा हो और वाणिज्य की हिफाजत की जाए। न तो स्थानीय राजनीतिक सत्ता को और न छापामार दस्तों को ही इन सिद्धान्तों का उल्लंघन करना चाहिए, वरना आधार-क्षेत्रों की स्थापना करने और छापामार युद्ध को जारी रखने के काम पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। वित्तीय बोझ के न्यायोचित बंटवारे का मतलब है, "जिनके पास धन है, वे धन दें", जबकि किसान लोग कुछ सीमाओं के अन्दर रहते हुए छापामार दस्तों को अनाज सप्लाई करें। वाणिज्य की हिफाजत का मतलब यह है कि छापामार दस्ते

अवश्य कठोर अनुशासन का पालन करें, तथा तसदीकशुदा गद्दारों को छोड़कर और किसी की भी दुकान को जब्त करने पर सख्ती से पाबन्दी लगा देनी चाहिए। यह एक कठिन मामला है, लेकिन यह नीति निर्धारित हो चुकी है जिस पर अवश्य अमल करना चाहिए।

४. आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाना और विकसित करना

चीन में अतिक्रमण करने वाले दुश्मनों को कुछ ही मोर्चेबन्दी वाले स्थानों तक, यानी बड़े नगरों और मुख्य संचार-पंक्तियों तक ही सीमित रखने के लिए विभिन्न आधार-क्षेत्रों के छापामारों को चाहिए कि वे अपने युद्ध को अपने आधार-क्षेत्रों से जहां तक फैला सकें फैला दें, और दुश्मन के सभी मोर्चेबन्दी वाले स्थानों के एकदम पास तक फैला दें, तथा इस तरह दुश्मन के अस्तित्व के लिए खतरा पैदा कर दें, दुश्मन के मनोबल को हिला दें और अपने आधार-क्षेत्रों को बढ़ाते जाएं। यह निहायत जरूरी है। छापामार युद्ध में रूढ़िवाद का विरोध करना चाहिए। यह रूढ़िवाद चाहे आरामतलबी की लालसा के कारण पैदा हुआ हो या दुश्मन की ताकत को ज्यादा आंकने के कारण, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को तथा स्वयं छापामार युद्ध और आधार-क्षेत्रों को भी हानि पहुंचाता है। इसके अलावा, हमें आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाने के काम को नहीं भुला देना चाहिए। इस सिलसिले में मुख्य काम जन-समुदाय को जागृत और संगठित करना तथा छापामार यूनिटों और स्थानीय हथियार-

बन्द दस्तों को ट्रेनिंग देना है। इस प्रकार आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाना दीर्घकालीन युद्ध को जारी रखने तथा आधार-क्षेत्रों का विकास करने के लिए आवश्यक है, क्योंकि सुदृढ़ बनाए बिना जोरदार विकास करना सम्भव नहीं है। छापामार युद्ध में यदि हम सिर्फ विकास की ओर ध्यान दें और सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता को भुला दें, तो हम दुश्मन के हमलों का मुकाबला नहीं कर सकेंगे और फल यह होगा कि न सिर्फ विकास की सम्भावना खत्म हो जाएगी, बल्कि आधार-क्षेत्रों का अस्तित्व भी खतरे में पड़ जाएगा। सही सिद्धान्त यह है कि सुदृढ़ बनाने के साथ-साथ विस्तार भी किया जाए। यह उस स्थिति को प्राप्त करने का अच्छा तरीका है जिससे हम जब चाहें हमला कर सकें और जब चाहें बचाव की स्थिति में हो जाएं। जब तक यह युद्ध दीर्घकालीन है, तब तक आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाने और उनका विस्तार करने का सवाल लगातार हर छापामार दस्ते के सामने उठता रहेगा। इसमें शक नहीं कि इस समस्या का ठोस हल परिस्थितियों पर निर्भर है। किसी दौर में कार्य का केन्द्र-बिन्दु विस्तार करना, यानी छापामार इलाकों का विस्तार करना और छापामारों की तादाद बढ़ाना हो सकता है। किसी दूसरे दौर में कार्य का केन्द्र-बिन्दु सुदृढ़ बनाना, यानी जन-समुदाय को संगठित करना और फौजों को ट्रेनिंग देना हो सकता है। चूंकि सुदृढ़ बनाने का काम और विस्तार करने का काम अपने स्वरूप में भिन्न हैं, और इसलिए सैन्य-विन्यास और अन्य कार्य भी उन्हीं के अनुरूप भिन्न होंगे, इसलिए समय और परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग पहलुओं पर जोर देकर ही समस्या को उचित रूप से हल किया जा सकता है।

५. दुश्मन की ओर हमारी फौजों द्वारा की जाने वाली घेरेबन्दी की किस्में

यदि समूचे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को लिया जाए, तो इसमें सन्देह नहीं कि हम दुश्मन की रणनीतिक घेरेबन्दी में हैं, क्योंकि वह रणनीतिक आक्रमण और बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करने की स्थिति में तथा हम रणनीतिक रक्षा और भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करने की स्थिति में हैं। यह हम पर दुश्मन द्वारा लादी गई पहले प्रकार की घेरेबन्दी है। चूंकि हमने अपनी फौजों के बाहुल्य का प्रयोग करके बाहरी सैन्य-पंक्ति से हमारी ओर बढ़ने वाली दुश्मन की फौजों के अनेक कालमों के खिलाफ मुहिमों और लड़ाइयों में आक्रमण करने तथा बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करने की नीति अपनाई है, इसलिए दुश्मन की फौजों का अलग-अलग रास्तों से बढ़ता हुआ हर एक कालम हमारी घेरेबन्दी में फंस जाएगा। यह दुश्मन पर हमारे द्वारा लादी गई पहले प्रकार की घेरेबन्दी है। इसके अलावा, दुश्मन के पृष्ठभाग में छापामार आधार-क्षेत्रों के बारे में विचार करने पर हम यह देखते हैं कि हर अकेला आधार-क्षेत्र या तो ऊथाए पहाड़ी इलाके की तरह दुश्मन से चारों ओर से घिरा हुआ है, अथवा शानशी के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की तरह दुश्मन से तीन ओर से घिरा हुआ है। यह हम पर दुश्मन द्वारा लादी गई दूसरे प्रकार की घेरेबन्दी है। लेकिन यदि हम इन विभिन्न आधार-क्षेत्रों के आपसी सम्बन्धों और साथ ही नियमित सेना के मोर्चे के साथ इन छापामार आधार-क्षेत्रों के सम्बन्धों को देखें, तो हम यह पाएंगे कि बदले में हमने दुश्मन के

अनेक फौजी दस्तों को घेर लिया है। मिसाल के लिए, शानशी प्रान्त में हमने ताथुङ-फूचओ रेलवे को तीन ओर से (रेलवे के पूर्वी और पश्चिमी बाजुओं से तथा दक्षिणी छोर से) घेर लिया है और थाएय्वान शहर को चारों ओर से घेर लिया है; हपे और शानतुङ प्रान्तों में भी इसी प्रकार की अनेक घेरेबन्दियां देखी जा सकती हैं। यह दुश्मन पर हमारे द्वारा लादी गई दूसरे प्रकार की घेरेबन्दी है। इस प्रकार हम और दुश्मन दोनों ही ने एक दूसरे पर दो प्रकार की घेरेबन्दियां लाद दी हैं। यह मोटे तौर पर वेइछी [८] के खेल जैसा है। हमारे और दुश्मन के बीच चलने वाली मुहिमें और लड़ाइयां एक दूसरे के मोहरे मारने के समान हैं और दुश्मन द्वारा मोर्चेबन्दी वाले स्थानों तथा हमारे द्वारा छापामार आधार-क्षेत्रों की स्थापना, बिसात पर खाली जगहों को कब्जे में करने के लिए मोहरे चलाने के समान है। दुश्मन के पृष्ठभाग में छापामार आधार-क्षेत्रों की रणनीतिक भूमिका का भारी महत्व इन्हीं "खाली जगहों को कब्जे में करने" के संघर्ष से जाहिर होता है। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में इस समस्या को उठाने का अर्थ यह मांग करना है कि देश के फौजी अधिकारी और विभिन्न इलाकों के छापामार कमाण्डर दुश्मन के पृष्ठभाग में छापामार युद्ध को विकसित करने, और जहां सम्भव हो सके वहां छापामार आधार-क्षेत्रों को कायम करने के काम को अवश्य अपनी कार्यसूची में शामिल कर लें और इसे अवश्य रणनीतिक कार्य के रूप में कार्यान्वित करें। चीन को एक रणनीतिक इकाई बनाकर तथा सोवियत संघ और अन्य सम्भावित देशों को भी एक-एक रणनीतिक इकाई बनाकर यदि हम प्रशान्त महासागर क्षेत्र में, अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर, एक जापान-विरोधी मोर्चा निर्मित करने

में सफल हो जाएं, तो दुश्मन पर हम एक अन्य प्रकार की घेरेबन्दी भी लाद देंगे, जिसे दुश्मन हम पर नहीं लाद पाएगा, तथा इस प्रकार प्रशान्त महासागर क्षेत्र में बाहरी सैन्य-पंक्ति पर कार्यवाही करके फासिस्ट जापान को घेरने और उसका विध्वंस करने में समर्थ हो जाएंगे। निश्चय ही आज इस बात का बहुत ही कम व्यावहारिक महत्व है, लेकिन भविष्य में ऐसा होना असम्भव नहीं है।

अध्याय ७

छापामार युद्ध में रणनीतिक रक्षा तथा रणनीतिक आक्रमण

छापामार युद्ध की चौथी रणनीति विषयक समस्या रणनीतिक रक्षा और रणनीतिक आक्रमण की समस्या है। इस समस्या का ताल्लुक इस मसले से है कि पहली समस्या पर विचार करते समय हमने आक्रमणात्मक कार्यवाही की जिस नीति का जिक्र किया था उसे जापान-विरोधी छापामार युद्ध में, चाहे हम रक्षात्मक कार्यवाही की स्थिति में हों या आक्रमणात्मक कार्यवाही की स्थिति में, ठोस रूप से कैसे लागू किया जाए।

राष्ट्रव्यापी रणनीतिक रक्षा या रणनीतिक आक्रमण (रणनीतिक प्रत्याक्रमण कहना ज्यादा सही होगा) की स्थिति में, हर छापामार आधार-क्षेत्र में और उसके आसपास छोटे पैमाने की रणनीतिक रक्षा और रणनीतिक आक्रमण की स्थिति भी होती है। रणनीतिक रक्षा से हमारा मतलब उस रणनीतिक स्थिति और उस रणनीतिक

नीति से है जब दुश्मन आक्रमणात्मक स्थिति में हो और हम रक्षात्मक स्थिति में। रणनीतिक आक्रमण से हमारा मतलब उस रणनीतिक स्थिति और उस रणनीतिक नीति से है, जब दुश्मन रक्षात्मक स्थिति में हो और हम आक्रमणात्मक स्थिति में।

१. छापामार युद्ध में रणनीतिक रक्षा

जब छापामार युद्ध शुरू हो चुका हो और काफी विकसित हो गया हो, विशेषकर जब दुश्मन ने राष्ट्रव्यापी पैमाने पर अपना रणनीतिक आक्रमण बन्द कर दिया हो और उसके बजाय अपने कब्जे में मौजूद इलाकों को सुरक्षित रखने की नीति अपना ली हो, तब वह लाजमी तौर पर छापामार आधार-क्षेत्रों पर हमले करेगा। ऐसे आक्रमण की अनिवार्यता को समझना आवश्यक है, नहीं तो छापामार कमाण्डर बिलकुल तैयारी न होने की स्थिति में पड़ जाएंगे, तथा दुश्मन द्वारा किए गए गम्भीर हमले के सामने वे निश्चय ही घबराहट व उलझन के शिकार होंगे और उनकी फौजें दुश्मन द्वारा नष्ट कर दी जाएंगी।

छापामारों और उनके आधार-क्षेत्रों को नष्ट करने के लिए दुश्मन अक्सर कई ओर से हमला करने की नीति अपनाता है – मिसाल के लिए, ऊथाए पहाड़ी इलाके के खिलाफ चार या पांच बार "दण्ड-अभियान" किए गए और हर बार दुश्मन तीन-चार यहां तक कि छै-सात कालमों में एक साथ योजना के मुताबिक आगे बढ़ा। जितने ज्यादा बड़े पैमाने पर छापामार युद्ध विकसित होगा, उसके आधार-क्षेत्रों की स्थिति जितनी ज्यादा महत्वपूर्ण होगी, तथा इससे

दुश्मन के रणनीतिक श्रड्डों श्रौर महत्वपूर्ण संचार-पंक्तियों के लिए जितना ज्यादा खतरा पैदा होगा, छापामारों श्रौर उनके श्राधार-क्षेत्रों के खिलाफ दुश्मन का हमला उतना ही श्रधिक भीषण हो जाएगा। इसलिए यदि कहीं छापामारों पर दुश्मन का हमला श्रधिक भीषण हो जाता है, तो वह इस बात का लक्षण है कि वहां के छापामारों ने श्रधिक कामयाबियां हासिल की हैं श्रौर नियमित युद्ध के साथ तालमेल बैठाने में उन्होंने श्रधिक कारगर भूमिका श्रदा की है।

जब दुश्मन कई कालमों में कई श्रोर से हमला करे, तो छापामारों को प्रत्याक्रमण के जरिए उन हमलों को तहस-नहस करने की नीति श्रपनानी चाहिए। यदि दुश्मन के हर श्रागे बढ़ने वाले कालम में सिर्फ एक छोटी या बड़ी यूनिट शामिल हो श्रौर यदि उसके पास कुमक न हो, तथा वह श्रागे बढ़ने के रास्ते पर सैनिक तैनात करने, किलेबन्दियों का निर्माण करने, या मोटरों के लिए सड़कें बनाने में समर्थ न हो, तो कई श्रोर से होने वाले दुश्मन के हमले को श्रासानी से नाकाम किया जा सकता है। जब दुश्मन कई श्रोर से हमला करता है, तो वह श्राक्रमणात्मक स्थिति में होता है श्रौर बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करता है तथा हम रक्षात्मक स्थिति में होते हैं श्रौर भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करते हैं। हमें श्रपना सैन्य-विन्यास इस तरह करना चाहिए कि हम श्रपनी गौण फौजों से दुश्मन के कई कालमों को रोके रखें, जबकि दुश्मन के एक ही कालम के खिलाफ हमारी मुख्य फौज मुहिमों या लड़ाइयों में श्राकस्मिक हमले (मुख्यतया घात लगाकर किए जाने वाले हमले) की कार्यनीति श्रपनाए, श्रौर दुश्मन पर वार उस समय करे जब

वह चलायमान हो। दुश्मन यद्यपि मजबूत है, लेकिन बार-बार के श्राकस्मिक हमलों से वह कमजोर हो जाएगा श्रौर श्रक्सर श्राधे रास्ते तक श्रागे बढ़कर ही पीछे हट जाएगा। दुश्मन का पीछा करते समय छापामार दस्ते श्रौर भी श्राकस्मिक हमले कर सकते हैं श्रौर दुश्मन को श्रौर ज्यादा कमजोर बना सकते हैं। इसके पहले कि दुश्मन श्रपना हमला रोक दे या पीछे हटने की शुरुश्रात कर दे, वह श्राम तौर से हमारे श्राधार-क्षेत्रों के काउन्टी-केन्द्रों या कस्बों पर श्रधिकार कर लेता है, तथा हमें उन काउन्टी-केन्द्रों या कस्बों को श्रपनी घेरेबन्दी में ले लेना चाहिए, श्रौर उनकी रसद-सप्लाई व संचार-पंक्तियों को काट देना चाहिए, तथा जब वह वहां टिक न सके श्रौर पीछे हटने लगे, तब हमें इस श्रवसर का फायदा उठाकर उसका पीछा करना चाहिए श्रौर उस पर हमला करना चाहिए। एक कालम नष्ट करने के बाद हमें श्रपनी फौजों को दूसरे कालम पर जुटा देना चाहिए, श्रौर इस तरह कई श्रोर से हमला करने वाले दुश्मन के कालमों को एक-एक करके तहस-नहस कर देना चाहिए।

ऊथाए पहाड़ जैसे बड़े श्राधार-क्षेत्र के "फौजी क्षेत्र" को चार, पांच, या उससे भी ज्यादा "फौजी उपक्षेत्रों" में बांट दिया गया है। इनमें से हरेक के पास श्रलग-श्रलग फौजी यूनिट है, जो स्वतंत्र रूप से कार्यवाही करती है। ऊपर बताई गई कार्यनीति के द्वारा इन यूनिटों ने श्रक्सर दुश्मन के हमलों को एक साथ या एक-एक करके तहस-नहस कर दिया है।

दुश्मन द्वारा कई श्रोर से किए जाने वाले हमले के खिलाफ हमारी कार्यवाही की योजना में हमारी मुख्य फौजें श्राम तौर पर भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर रहती हैं। जब हमारी ताकत पर्याप्त हो,

तो अपनी गौण फौजों को (जैसे काउन्टी या जिले के छापामार दस्तों को, यहां तक कि कभी-कभी मुख्य फौज के कुछ दस्तों को भी) दुश्मन की संचार-पंक्तियों को काटने और उसकी कुमक को रोके रखने के लिए बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर लगाना आवश्यक है। जब दुश्मन बहुत दिनों तक हमारे आधार-क्षेत्रों में टिका रह जाए तो हम ऊपर बताए गए तरीके को उलट सकते हैं, यानी अपनी फौजों के एक भाग को दुश्मन को घेरने के लिए आधार-क्षेत्र में छोड़ दें और मुख्य फौजों को उस इलाके पर हमला करने के लिए भेज दें जहां से दुश्मन आया हो, और वहीं अपनी कार्यवाहियों को तेज करें जिससे कि हमारे इलाके में बहुत दिनों से टिके हुए दुश्मन को वहां से बाहर आने और हमारी मुख्य फौज पर हमला करने के लिए भुलावा दिया जा सके ; यही "वेइ राज्य पर हमला करके चाओ राज्य को बचाने"[६] की कार्यनीति है।

दुश्मन द्वारा कई ओर से किए जाने वाले हमले के खिलाफ कार्यवाही करने के दौरान स्थानीय जापान-विरोधी आत्मरक्षा कोरों और सभी जन-संगठनों को इस बात के लिए गोलबन्द किया जाना चाहिए कि वे युद्ध में हिस्सा लें और दुश्मन से लोहा लेने के लिए अपनी फौजों की हर तरह से सहायता करें। दुश्मन से लड़ते समय दो बातें महत्वपूर्ण होती हैं : स्थानीय मार्शल-ला लागू करना तथा जहां तक सम्भव हो "मोर्चेबन्दियों को मजबूत बनाना और खेत-खलिहानों में कोई भी चीज न छोड़ना"। पहले का उद्देश्य है गद्दारों को कुचलना और दुश्मन को कोई भी सूचना प्राप्त न होने देना ; तथा दूसरे का उद्देश्य है हमारी अपनी फौजी कार्यवाहियों को सहायता पहुंचाना (मोर्चेबन्दियों को मजबूत बनाकर) और दुश्मन की

रसद-सप्लाई को काट देना (कोई भी चीज खेत-खलिहानों में न छोड़कर)। यहां "खेत-खलिहानों में कोई भी चीज न छोड़ने" का अर्थ है फसल को पकते ही काट लेना।

दुश्मन पीछे हटते समय अक्सर अपने कब्जे में मौजूद शहरों और कस्बों के मकानों को तथा रास्ते के गांवों को आग लगाता जाता है। उसका उद्देश्य होता है छापामार आधार-क्षेत्रों को नष्ट कर देना। लेकिन ऐसा करके वह अगले हमलों में अपने को ही पनाह और रसद से वंचित कर लेता है। यह हानि उलटकर उसी के मत्थे पड़ती है। यह एक ठोस उदाहरण है जो यह दिखाता है कि एक ही चीज के दो विरोधी पहलू होते हैं।

छापामार कमाण्डर को अपना वर्तमान आधार-क्षेत्र छोड़कर दूसरे आधार-क्षेत्र में जाने की बात तब तक नहीं सोचनी चाहिए जब तक यह साबित न हो जाए कि बार-बार कार्यवाहियां करने के बाद भी दुश्मन द्वारा कई ओर से किए जाने वाले जोरदार हमलों को तोड़ना असम्भव हो गया है। ऐसी परिस्थिति में उसे निराशावाद से बचना चाहिए। जब तक नेता लोग उसूल के सवाल पर कोई गलती न करें, तब तक आम तौर पर यह सम्भव है कि पहाड़ी इलाकों में कई ओर से होने वाले दुश्मन के हमलों को नष्ट किया जा सके और वहां के आधार-क्षेत्रों को बनाए रखा जा सके। जब मैदानी इलाके में दुश्मन का कई तरफ से जोरदार हमला हो रहा हो, केवल तभी, विशेष परिस्थितियों की रोशनी में, छापामार कमाण्डरों को अन्य उपायों पर विचार करना चाहिए : जैसे बिखरकर कार्यवाही करने के लिए अनेक छोटी छापामार यूनिटों को वहां छोड़ दिया जाए, जबकि अस्थाई तौर पर बड़ी छापामार फारमेशनों को किसी

पहाड़ी क्षेत्र में स्थानान्तरित कर दिया जाए, जिससे कि दुश्मन की मुख्य फौज के हटते ही वे वापिस आकर अपनी कार्यवाही फिर से शुरू कर सकें।

चीन की भूमि के विस्तृत होने और दुश्मन की शक्तियों के नाकाफी होने के बीच के अन्तरविरोध के कारण आम तौर पर दुश्मन किलेबन्दी-लड़ाई की वह नीति नहीं अपना सकता जिसे गृहयुद्ध के जमाने में क्वोमिन्ताङ ने अपनाया था। लेकिन हमें इस सम्भावना का अनुमान लगा लेना चाहिए कि एक सीमा तक दुश्मन उन छापामार आधार-क्षेत्रों के लिए यह नीति अपना सकता है जो उसके महत्वपूर्ण अड्डों के लिए विशेष रूप से खतरनाक हैं, और हमें इन परिस्थितियों में भी छापामार युद्ध को जारी रखने के लिए तैयार रहना चाहिए। जब हमें गृहयुद्ध जैसी स्थिति में भी छापामार युद्ध को जारी रखने का अनुभव है, तो इसमें शक नहीं कि राष्ट्रीय युद्ध में इसे जारी रखने में हम और भी ज्यादा समर्थ होंगे। यद्यपि कुछ आधार-क्षेत्रों में तुलनात्मक शक्ति की दृष्टि से दुश्मन हमसे कहीं अधिक बरतर गुणात्मक और परिमाणात्मक सैन्य-शक्ति लगा सकता है, लेकिन हमारे और दुश्मन के बीच का राष्ट्रीय अन्तर-विरोध हल नहीं किया जा सकता और दुश्मन की कमान में कमजोरी होना अनिवार्य है। हमारी विजय जन-समुदाय के बीच जमकर काम करने पर और कार्यवाहियों में लचीली कार्यनीति अपनाने पर आधारित है।

२. छापामार युद्ध में रणनीतिक आक्रमण

दुश्मन की आक्रमणात्मक कार्यवाही को तहस-नहस करने के बाद और इससे पहले कि वह नई आक्रमणात्मक कार्यवाही शुरू करे,

दुश्मन रणनीतिक रक्षा की स्थिति में होता है तथा हम रणनीतिक आक्रमण की स्थिति में होते हैं।

ऐसे अवसरों पर फौजी कार्यवाही की हमारी नीति दुश्मन की उन फौजों पर हमला करने की नहीं होती जो अपनी रक्षात्मक स्थिति पर दृढ़ता से जमी हुई हैं, और जिन्हें हम हराने की गारन्टी नहीं कर सकते, बल्कि हमारी नीति यह होती है कि योजनापूर्वक कुछ स्थानों पर, जहां दुश्मन से निपटने के लिए छापामार शक्ति काफी मजबूत है, दुश्मन की छोटी टुकड़ियों और उसकी कठपुतली फौजों को नष्ट कर दें, या उन्हें निकाल बाहर करें, अपने अधिकृत इलाकों का विस्तार करें, जापान के खिलाफ संघर्ष करने के लिए जन-समुदाय को जागृत करें, अपनी फौजों की क्षतिपूर्ति करें और उन्हें ट्रेनिंग दें तथा नए छापामार दस्ते संगठित करें। जब हम इन कार्यों को भली-भांति कर रहे हों तब भी अगर दुश्मन रक्षात्मक स्थिति में ही हो, तो हमें अपने नए अधिकृत इलाकों का और विस्तार करना चाहिए और उन शहरों व संचार-पंक्तियों पर, जहां दुश्मन की फौजें कमजोर हों, हमला करना चाहिए तथा परिस्थिति के मुताबिक थोड़े या ज्यादा अरसे के लिए उन पर अधिकार जमाए रखना चाहिए। ये सभी कार्य रणनीतिक आक्रमण के कार्य हैं, और इनका उद्देश्य है दुश्मन की रक्षात्मक स्थिति का फायदा उठाना ताकि हम अपनी फौजी शक्ति और जन-बल को कारगर रूप से बढ़ा सकें, दुश्मन की शक्ति को कारगर रूप से कम कर सकें तथा अपनी योजनाबद्ध और जोरदार कार्यवाहियों के जरिए दुश्मन के नए हमले को तहस-नहस करने के लिए अपने को तैयार कर लें।

फौजों को विश्राम देना और ट्रेनिंग देना आवश्यक है। और

इसके लिए सबसे अच्छा समय वह है जब दुश्मन रक्षात्मक स्थिति में हो। ऐसा नहीं है कि हम हाथ पर हाथ धरकर बैठ जाएं और विश्राम करने तथा फौजों को ट्रेनिंग देने के लिए अपने को कोठरी में बन्द कर लें। नहीं, हमें तो अपने अधिकृत इलाकों को बढ़ाते हुए, दुश्मन के छोटे दस्तों को नष्ट करते हुए और जन-समुदाय को जागृत करते हुए, विश्राम करने और फौजों को ट्रेनिंग देने का समय निकालना चाहिए। इसी समय आम तौर पर रसद, बिस्तर-कपड़े, आदि की कठिन समस्या भी सुलझाई जाती है।

दुश्मन की संचार-पंक्तियों को बड़े पैमाने पर नष्ट करने, परिवहन-साधनों की तोड़फोड़ करने और नियमित सेना की मुहिमों की कार्यवाही को सीधी सहायता देने जैसे काम भी इसी वक्त किए जाते हैं।

ऐसे समय सभी छापामार आधार-क्षेत्रों, छापामार इलाकों और छापामार यूनिटों का उत्साह बढ़ जाता है, तथा दुश्मन द्वारा बरबाद किए गए क्षेत्रों की भी कदम-ब-कदम पुनर्स्थापना की जाती है और वे फिर से शक्ति प्राप्त कर लेते हैं। दुश्मन द्वारा अधिकृत इलाकों की जनता भी उत्साहपूर्ण स्थिति में होती है और छापामार दस्तों की शोहरत की गूंज सभी ओर फैल जाती है। दुश्मन और उसके पालतू कुत्तों, गद्दारों के खेमे में एक ओर तो घबराहट छा जाती है और बिखराव बढ़ जाता है तथा दूसरी ओर छापामार दस्तों और आधार-क्षेत्रों के प्रति उनमें घृणा बढ़ जाती है और छापामारों से निपटने के लिए उनकी तैयारियां तेज हो जाती हैं। इसलिए रणनीतिक आक्रमण के दौर में छापामार कमाण्डर अपनी सफलता से इतने ज्यादा न फूल उठें कि वे दुश्मन की शक्ति को कम करके आंकने लगें और अपनी पांतों की एकता को मजबूत करना तथा

अपने आधार-क्षेत्रों और फौजों को सुदृढ़ बनाना भूल जाएं। ऐसे अवसरों पर उन्हें दुश्मन की हर कार्यवाही को कुशलता से भांप लेना चाहिए और यह देखना चाहिए कि हमारे विरुद्ध हमले का कोई आसार है या नहीं, ताकि जिस क्षण भी हमला हो, हम अपने रणनीतिक आक्रमण को उचित समय पर बन्द कर सकें, रणनीतिक रक्षा की स्थिति में पहुंच सकें और इस प्रकार दुश्मन के आक्रमण को तहस-नहस कर सकें।

अध्याय ८

छापामार लड़ाई का चलायमान लड़ाई के रूप में विकास

जापान-विरोधी छापामार युद्ध की पांचवीं रणनीति विषयक समस्या है छापामार लड़ाई का चलायमान लड़ाई के रूप में विकास होना। युद्ध के दीर्घकालीन और निर्मम होने के कारण यह आवश्यक और सम्भव दोनों है। यदि चीन शीघ्रता से जापानी हमलावरों को हरा सकता और अपने खोए प्रदेशों को शीघ्रता से वापस ले सकता, यदि युद्ध दीर्घकालीन और निर्मम न होता, तो फिर छापामार लड़ाई के लिए चलायमान लड़ाई में विकसित होना आवश्यक न होता। लेकिन चूंकि वास्तविक परिस्थिति इसके बिलकुल विपरीत है, यानी युद्ध दीर्घकालीन और निर्मम है, इसलिए छापामार लड़ाई सिर्फ चलायमान लड़ाई में विकसित होकर ही अपने को ऐसे युद्ध के अनुकूल ढाल सकती है। चूंकि युद्ध दीर्घकालीन और निर्मम है,

इसलिए छापामार दस्तों के लिए तपकर फौलाद बनने की आवश्यक प्रक्रिया से गुजरना और कदम-ब-कदम अपने को नियमित सेनाओं में बदलना सम्भव हो जाता है ; परिणामस्वरूप अपनी कार्यवाहियों के तरीकों को कदम-ब-कदम नियमित सेनाओं जैसा रूप देकर छापामार लड़ाई चलायमान लड़ाई में विकसित हो जाएगी। सिर्फ इस बात की आवश्यकता और सम्भावना को स्पष्ट रूप से समझकर ही छापामार कमाण्डर छापामार लड़ाई को चलायमान लड़ाई में विकसित करने की नीति पर अडिग रूप से कायम रह सकते हैं और उसे योजनापूर्वक कार्यान्वित कर सकते हैं।

वर्तमान समय में छापामार युद्ध का विकास बहुत से स्थानों में, जैसे ऊथाए पहाड़ी इलाके में, नियमित सेनाओं से भेजे गए मजबूत दस्तों के कारण हुआ है। इन स्थानों की कार्यवाहियां यद्यपि आम तौर पर छापामार ढंग की होती हैं, लेकिन उनमें शुरू से ही चलायमान लड़ाई के तत्व मौजूद रहते हैं। युद्ध जैसे-जैसे लम्बा खिचता जाएगा, वैसे-वैसे ये तत्व और भी बढ़ते जाएंगे। वर्तमान जापान-विरोधी छापामार युद्ध की यही एक श्रेष्ठता है जिसकी वजह से छापामार युद्ध न सिर्फ तेजी से विकसित हो सकता है, बल्कि तेजी के साथ ऊंचे स्तर पर भी पहुंच सकता है ; ये परिस्थितियां तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्तों के छापामार युद्ध की परिस्थितियों से कहीं ज्यादा अच्छी हैं।

छापामार लड़ाई में लगी हुई छापामार यूनिटों को चलायमान लड़ाई करने वाली नियमित सेना में बदलने के लिए दो शर्तें जरूरी हैं : उनकी संख्या में बढ़ती हो और उनका गुण उन्नत हो। पहली शर्त के लिए सीधे जनता को फौज में शामिल होने के लिए गोलबन्द करने के अलावा हम छोटी-छोटी यूनिटों को एक दूसरे से मिलाने का तरीका भी अपना सकते हैं ; और दूसरी शर्त युद्ध के दौरान, लड़ने वालों को तपाकर फौलाद बनाने और उनके हथियारों में सुधार करने पर निर्भर करती है।

छोटी यूनिटों को एक में मिलाते समय हमें एक ओर तो स्थानीयतावाद के प्रति सतर्क रहना चाहिए, जो स्थानीय हितों पर ही ध्यान देकर केन्द्रीयता के रास्ते में रुकावट डालता है ; और दूसरी ओर विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण के प्रति भी सतर्क रहना चाहिए, जो स्थानीय हितों को नजरअन्दाज करता है।

स्थानीय छापामार दस्तों और स्थानीय सरकारों में स्थानीयतावाद मौजूद होता है। वे प्राय: आम हितों को भूलकर स्थानीय हितों में ही उलझे रहते हैं, या सामूहिक जीवन के आदी न होने के कारण अलग-अलग कार्यवाही करने को तरजीह देते हैं। मुख्य छापामार यूनिटों या छापामार फारमेशनों के कमाण्डरों को इस ओर ध्यान देना चाहिए तथा स्थानीय दस्तों को कदम-ब-कदम और आंशिक रूप से मिलाने का तरीका अपनाना चाहिए ताकि वे स्थानीय छापामार युद्ध को और आगे बढ़ाने के लिए काफी शक्ति संचित कर सकें ; और उन्हें अलग-अलग स्थानीय दस्तों को मिलाने के काम को इस तरीके से करना चाहिए कि पहले इन दस्तों को संयुक्त कार्यवाहियों में खींच लें, और फिर इन्हें इस तरह मिला दें कि न तो इनका मौलिक संगठन टूटे और न इनके कार्यकर्ताओं में अदला-बदली हो, ताकि छोटे-छोटे दलों को बड़े दल में मिलाया जा सके।

स्थानीयतावाद के विपरीत विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण मुख्य फौजों के उन लोगों की गलत विचारधारा का प्रतिनिधित्व करता है जो

स्थानीय हथियारबन्द दस्तों को सहायता पहुंचाने के काम को नजरअन्दाज करते हुए केवल अपना विकास करने के लिए ही तुले रहते हैं। वे यह नहीं समझते कि छापामार लड़ाई के चलायमान लड़ाई में विकसित होने का मतलब छापामार लड़ाई को त्याग देना नहीं है, बल्कि विस्तृत छापामार लड़ाई के दौरान कदम-ब-कदम ऐसी मुख्य फौज का निर्माण करना है जो चलायमान लड़ाई चलाने में समर्थ हो और जिसके चारों ओर बड़े पैमाने पर चलने वाला छापामार युद्ध तथा अन्य अनेक छापामार यूनिटें हों। ये छापामार यूनिटें मुख्य फौज के लिए शक्तिशाली सहायक दस्तों का काम करती हैं और उसके लगातार विकास के लिए अक्षय भण्डार का काम करती हैं। इसलिए यदि मुख्य फौज के किसी भी कमाण्डर ने स्थानीय जन-समुदाय और स्थानीय सरकारों के हितों को नजरअन्दाज करके विशुद्ध सैनिक दृष्टिकोण अपनाने की गलती की है, तो उसे इस गलती को सुधार लेना चाहिए, ताकि मुख्य फौज का विकास और स्थानीय हथियारबन्द दस्तों की संख्या में बढ़ोतरी, ये दोनों ही अपना उचित स्थान प्राप्त कर सकें।

छापामार दस्तों के गुण को उन्नत करने के लिए यह आवश्यक है कि हम उनका राजनीतिक तथा संगठनात्मक स्तर उन्नत करें तथा साज-सामान, फौजी तकनीक, कार्यनीति और अनुशासन में सुधार करें, ताकि उन्हें कदम-ब-कदम नियमित सेना के सांचे में ढाला जा सके और उनकी छापामार कार्यशैली को कम किया जा सके। राजनीतिक दृष्टि से यह बहुत जरूरी है कि कमाण्डर और योद्धा दोनों ही यह समझ लें कि छापामार दस्तों के स्तर को नियमित सेना के स्तर तक उठाना आवश्यक है। उन सबको इस उद्देश्य की

प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने के वास्ते उत्साहित करना चाहिए और राजनीतिक कामों के जरिए इसकी सफलता की गारन्टी कर देनी चाहिए। संगठनात्मक दृष्टि से यह बहुत जरूरी है कि कदम-ब-कदम ऐसे फौजी और राजनीतिक संगठन बनाए जाएं, ऐसे फौजी और राजनीतिक कार्यकर्ता तैयार किए जाएं, ऐसे फौजी और राजनीतिक कार्य के तरीके निकाले जाएं, तथा रसद-सप्लाई और दवा-दारू की ऐसी नियमित व्यवस्था कायम की जाए, जो एक नियमित फौजी फारमेशन के लिए आवश्यक हैं। साज-सामान के मामले में, हथियारों के गुण व किस्मों में सुधार करना और संचार के आवश्यक साज-सामान को बढ़ाना जरूरी है। फौजी तकनीक और कार्यनीति के क्षेत्र में भी छापामार यूनिटों के लिए यह जरूरी है कि वे अपने स्तर को नियमित फौजी फारमेशन के लिए आवश्यक स्तर पर पहुंचा दें। अनुशासन के मामले में, छापामार दस्तों को उस स्तर तक पहुंचाना जरूरी है जहां नियमों का समान रूप से पालन हो, जहां हर आदेश का अनिवार्य रूप से पालन किया जाता हो और जहां हर प्रकार की ढील को खत्म कर दिया गया हो। इन सभी कामों की पूर्ति के लिए लम्बे अरसे तक प्रयत्न करने की आवश्यकता है और वे एक दिन में पूरे होने वाले नहीं हैं; लेकिन हमें इस दिशा की ओर विकास करना चाहिए। केवल इसी तरह छापामार आधार-क्षेत्रों में मुख्य फौजी फारमेशन का निर्माण हो सकता है और चलायमान कार्यवाहियां दुश्मन पर अधिक कारगर प्रहार करने के लिए सामने आ सकती हैं। जिन स्थानों में नियमित सेनाओं से दस्ते या कार्यकर्ता भेजे गए हैं, वहां इस उद्देश्य की प्राप्ति अपेक्षाकृत आसान है। इसलिए सभी नियमित सेनाओं की यह जिम्मेदारी है कि वे

छापामार दस्तों को नियमित यूनिटों के रूप में विकसित करने के काम में मदद करें।

अध्याय ६

कमानों के आपसी सम्बन्ध

जापान-विरोधी छापामार युद्ध की अन्तिम रणनीति विषयक समस्या है कमानों के आपसी सम्बन्ध। इस समस्या को सही ढंग से हल करना छापामार युद्ध के निर्बाध विकास की एक शर्त है।

चूंकि छापामार यूनिटें निचले स्तर के हथियारबन्द संगठन हैं और बिखरी कार्यवाहियां उनकी विशेषता हैं, इसलिए छापामार युद्ध की कमान के तरीके में उतने ऊंचे दर्जे की केन्द्रीयता की अनुमति नहीं दी जाती जैसी कि नियमित युद्ध की कमान में होती है। यदि हम नियमित युद्ध की कमान के तरीकों को छापामार युद्ध पर लागू करने की कोशिश करेंगे, तो छापामार युद्ध का ऊंचे स्तर का लचीलापन लाजमी तौर पर सीमित हो जाएगा और उसकी स्फूर्ति मुरझा जाएगी। एक अत्यन्त केन्द्रित कमान प्रत्यक्ष रूप में छापामार युद्ध के ऊंचे स्तर के लचीलेपन की विरोधी होती है, तथा उसे अत्यन्त लचीले छापामार युद्ध पर न तो लागू किया जाना चाहिए और न ही लागू किया जा सकता है।

लेकिन किसी केन्द्रित कमान के बिना छापामार युद्ध को सफलतापूर्वक विकसित नहीं किया जा सकता। जब व्यापक नियमित युद्ध और व्यापक छापामार युद्ध दोनों साथ-साथ चल रहे हों, तो यह आवश्यक है कि उनकी कार्यवाहियों में उचित तालमेल बैठाया

जाए। इसलिए नियमित युद्ध और छापामार युद्ध की कार्यवाहियों में तालमेल बैठाने के लिए एक कमान, यानी राष्ट्रीय जनरल स्टाफ और युद्ध-क्षेत्र के कमाण्डरों की रणनीतिक एकीकृत कमान की आवश्यकता होती है। एक छापामार इलाके या छापामार आधार-क्षेत्र में बहुत से छापामार दस्ते होते हैं, और उनके बीच मुख्य शक्ति के रूप में हमेशा एक या कई छापामार फारमेशनें (कभी-कभी नियमित फौजी फारमेशनें भी) होती हैं तथा सहायक शक्तियों के रूप में अनेक छोटी या बड़ी छापामार यूनिटें और उत्पादन से अलग न होने वाले जनता के बहुसंख्यक हथियारबन्द दस्ते भी होते हैं; इन स्थानों में आम तौर पर दुश्मन की फौजें अपनी एकीकृत कार्यवाहियों के जरिए छापामारों से निपटने के लिए संयुक्त इकाई बन जाती हैं। फलतः ऐसे छापामार इलाकों या आधार-क्षेत्रों में एकीकृत कमान, यानी केन्द्रित कमान, कायम करने की समस्या पैदा हो जाती है।

इसलिए, छापामार युद्ध में कमान का उसूल निरपेक्ष केन्द्रीकरण और निरपेक्ष विकेन्द्रीकरण दोनों के ही खिलाफ होता है, रणनीति के लिए इसे केन्द्रित कमान की तथा मुहिमों और लड़ाइयों के लिए इसे विकेन्द्रित कमान की आवश्यकता होती है।

रणनीतिक केन्द्रित कमान में ये बातें शामिल हैं: राज्य द्वारा सम्पूर्ण छापामार युद्ध का नियोजन और निर्देशन, प्रत्येक युद्ध-क्षेत्र में नियमित युद्ध और छापामार युद्ध के बीच तालमेल तथा हरेक छापामार इलाके या आधार-क्षेत्र में स्थित तमाम जापान-विरोधी हथियारबन्द फौजों का एकीकृत निर्देशन। इनमें असंगति, अनेकीकरण और विकेन्द्रीकरण हानिप्रद होते हैं तथा हमें संगति, एकी-

करण और केन्द्रीकरण की गारन्टी करने का हर सम्भव प्रयत्न करना चाहिए। आम मामलों में, यानी रणनीतिक मामलों में, निचले रैंकों को चाहिए कि वे ऊपरी रैंकों को रिपोर्ट दें और उनकी हिदायतों पर चलें, ताकि कार्यवाहियों में तालमेल बैठाया जा सके। बस, इसी सीमा तक केन्द्रीकरण होना चाहिए। इस सीमा को पार करके निचले रैंकों के ठोस मसलों में, जैसे मुहिमों या लड़ाइयों में विशिष्ट सैन्य-विन्यास की समस्या में, दखल देना भी उसी तरह हानिकारक होगा। कारण कि इस तरह के ठोस मसलों को उन विशिष्ट परिस्थितियों के अनुसार ही हल करना चाहिए जो समय-समय और स्थान-स्थान पर बदलती रहती हैं, जबकि वे उच्चतर कमान के दूर बैठे लोगों की जानकारी से बाहर होती हैं। मुहिमों और लड़ाइयों में विकेन्द्रित कमान के उसूल का मतलब दरअसल यही है। यह उसूल आम तौर पर नियमित युद्ध की कार्यवाहियों पर भी लागू होता है, विशेषकर जब संचार के साधन नाकाफी हों। एक शब्द में, इसका मतलब यह है कि छापामार युद्ध एक एकीकृत रणनीति के मातहत, स्वतंत्रता के साथ और अपनी पहलकदमी पर चलाया जाता है।

हर छापामार आधार-क्षेत्र में एक फौजी क्षेत्र की स्थापना की जाती है, जो अनेक फौजी उपक्षेत्रों में विभाजित होता है ; इन फौजी उपक्षेत्रों में से हरेक में अनेक काउन्टियां होती हैं और हरेक काउन्टी फिर से जिलों में बंटी होती है ; उनमें फौजी क्षेत्रीय हेडक्वार्टर से लेकर फौजी उपक्षेत्रीय हेडक्वार्टर, काउन्टी सरकारों और जिला सरकारों तक, विभिन्न स्तरों के सम्बन्ध ऊपर से नीचे की ओर आधीनता के होते हैं। हर हथियारबन्द यूनिट को अपने स्वरूप के मुताबिक इनमें से एक कमान के मातहत होना चाहिए। ऊपर बताए

गए उसूल के अनुसार इन सभी स्तरों की कमानों के आपसी सम्बन्धों में आम नीति के मामले ऊपरी रैंकों में केन्द्रित होने चाहिए, जबकि विशिष्ट कार्यवाहियां, ठोस परिस्थितियों के अनुसार, निचले रैंकों द्वारा स्वतंत्रता से चलाई जानी चाहिए। यदि ऊपरी रैंकों को निचले रैंकों की किन्हीं विशिष्ट कार्यवाहियों के बारे में कुछ कहना हो, तो वे इसे "निर्देशनों" के रूप में पेश कर सकते हैं और उन्हें इसी रूप में पेश करना चाहिए, न कि अपरिवर्तनशील "आज्ञाओं" के रूप में। जितना ही विस्तृत क्षेत्र हो, जितनी ही जटिल परिस्थिति हो, तथा निचले रैंकों और ऊपरी रैंकों के बीच जितना ही ज्यादा फासला हो, निचले रैंकों को अपनी विशिष्ट कार्यवाहियों में उतनी ही ज्यादा स्वतंत्रता और पहलकदमी की इजाजत अवश्य दी जाए जिससे कि उनकी कार्यवाहियों का स्वरूप और भी स्थानीय हो सके और वे अपने को और भी ज्यादा स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप बना सकें, तथा इस तरह हम निचले रैंकों और स्थानीय कार्यकर्ताओं में स्वतंत्र रूप से काम करने, पेचीदा परिस्थितियों से निपटने और छापामार युद्ध को सफलतापूर्वक विकसित करने की योग्यता पैदा कर सकते हैं। जहां तक केन्द्रित कार्यवाही में लगी किसी एक फौजी यूनिट या फौजी फारमेशन का ताल्लुक है, हमें उनकी कमानों के अन्दरूनी सम्बन्धों के बारे में केन्द्रित कमान के उसूल को लागू करना चाहिए, क्योंकि ऊपरी रैंकों के सामने परिस्थितियां साफ हैं ; लेकिन जैसे ही यह फौजी यूनिट या फौजी फारमेशन बिखरकर कार्यवाही करने के लिए अलग-अलग हो जाती है, वैसे ही आम मामलों में केन्द्रीकरण तथा विशिष्ट मामलों में विकेन्द्रीकरण के उसूल को लागू करना चाहिए, क्योंकि तब विशिष्ट

परिस्थितियां ऊपरी रैंकों की समझ में मुश्किल से ही आ सकती हैं।

केन्द्रीकरण की आवश्यकता होने पर यदि उसे लागू नहीं किया जाता, तो इसका मतलब ऊपरी रैंकों द्वारा कर्तव्य की अवहेलना करना और निचले रैंकों द्वारा सत्ताधिकार का अपहरण करना होगा ; ऊपरी और निचले रैंकों के पारस्परिक सम्बन्धों में, विशेषकर फौजी मामलों में, इन दोनों में से किसी भी बात की इजाजत नहीं दी जा सकती। जहां विकेन्द्रीकरण की आवश्यकता हो वहां यदि उसे लागू नहीं किया जाता, तो यह ऊपरी रैंकों द्वारा सत्ताधिकार पर इजारा कायम करना और निचले रैंकों द्वारा पहलकदमी की कमी दिखाना होगा ; ऊपरी और निचले रैंकों के पारस्परिक सम्बन्धों में, विशेषकर छापामार युद्ध की कमान के मामले में, इन दोनों में से किसी भी बात की इजाजत नहीं दी जा सकती। उपर्युक्त उसूल ही कमानों के आपसी सम्बन्ध की समस्या के समाधान की एकमात्र सही नीति है।

नोट

१ छाङपाए पर्वतशृंखला चीन के उत्तर-पूर्वी सीमान्त पर स्थित है। १८ सितम्बर १६३१ को जापानी आक्रमण के बाद यहां चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में एक जापान-विरोधी छापामार आधार-क्षेत्र कायम किया गया।

२ ऊथाए पर्वतशृंखला शानशी, छाहाड़ और हपे प्रान्तों के सीमान्त के बीच फैली हुई है (छाहाड़ प्रान्त को तोड़ दिया गया है। ऊथाए पर्वतशृंखला वर्तमान शानशी और हपे प्रान्तों के सीमान्त पर स्थित है – अनु०)। अक्तूबर १६३७ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में आठवीं राह सेना ने ऊथाए पहाड़ी इलाके को केन्द्र बनाकर शानशी-छाहाड़-हपे के जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र का निर्माण शुरू किया था।

३ थाएहाङ पर्वतशृंखला शानशी, हपे और फिङय्वान प्रान्तों के सीमान्त के बीच फैली हुई है (फिङय्वान प्रान्त को तोड़ दिया गया है। थाएहाङ पर्वतशृंखला वर्तमान शानशी तथा हपे व हनान प्रान्तों के सीमान्त पर स्थित है – अनु०)। नवम्बर १६३७ में आठवीं राह सेना ने थाएहाङ पहाड़ी इलाके को अपना केन्द्र बनाकर दक्षिण-पूर्वी शानशी के जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र का निर्माण शुरू किया था।

४ थाएशान पर्वत मध्य शानतुङ में स्थित थाए-ई पर्वतशृंखला के मुख्य शिखरों में से एक है। १६३७ की सर्दियों में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में छापामार दस्तों ने थाए-ई पहाड़ी इलाके को केन्द्र बनाकर मध्य शानतुङ के जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र का निर्माण शुरू किया था।

५ येनशान पर्वतशृंखला हपे और जेहोल प्रान्तों के सीमान्त के बीच फैली हुई है (जेहोल प्रान्त को तोड़ दिया गया है। येनशान पर्वतशृंखला वर्तमान हपे प्रान्त के उत्तर-पूर्वी भाग में स्थित है – अनु०)। १६३८ की गर्मियों में आठवीं राह सेना ने येनशान पहाड़ी इलाके को केन्द्र बनाकर पूर्वी हपे के जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र का निर्माण शुरू किया था।

६ माओशान पर्वतशृंखला दक्षिणी च्याङसू में स्थित है। जून १६३८ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में नई चौथी सेना ने माओशान पहाड़ी इलाके को केन्द्र बनाकर दक्षिणी च्याङसू के जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र का निर्माण शुरू किया था।

७ जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के विकास के अनुभव से यह साबित हो गया है कि मैदानों में भी दीर्घकाल के लिए और अनेक जगहों में स्थिर आधार-क्षेत्रों की स्थापना की जा सकती है। चीनी प्रदेश की विशालता, उसकी भारी जनसंख्या, कम्युनिस्ट पार्टी की सही नीति, जनता की व्यापक गोलबन्दी, दुश्मन की फौजों की अपर्याप्त संख्या, आदि के कारण ही यह सम्भव हो सका था। कामरेड माओ त्सेतुङ ने बाद में जो निर्देश दिए उनमें इस बात की स्पष्ट रूप से पुष्टि की गई।

८ "वेइछी" एक पुराना चीनी खेल है जिसमें दोनों पक्षों के खिलाड़ी अपने विपक्षी के मोहरों को घेरने की कोशिश करते हैं। जब एक खिलाड़ी का एक

मोहरा या उसके मोहरों का एक समूह विपक्षी के मोहरों से चारों ओर से घिर जाते हैं, तो उन मोहरों को "मरा हुआ" (मात खाया हुआ) समझ लिया जाता है। लेकिन यदि घेरे गए मोहरों के बीच कुछ खाली जगहें रह जाएं, तो भी उन्हें "जिन्दा" (मात न खाया हुआ) माना जाता है।

६ ईसापूर्व ३५३ में वेइ राज्य ने चाओ राज्य की राजधानी हानतान पर घेरा डाल दिया। छी राज्य के राजा ने थ्येन ची और सुन पिन को हुक्म दिया कि वे सेना ले जाकर चाओ की मदद करें। सुन पिन को यह मालूम था कि वेइ राज्य ने अपने चुनिन्दा सैनिकों को चाओ राज्य की घेरेबन्दी के लिए भेज दिया है और वेइ राज्य में बहुत कम सेना रह गई है। इसलिए सुन पिन ने वेइ राज्य पर हमला बोल दिया। इसके बाद वेइ राज्य की सेना अपने देश को बचाने के लिए वापिस लौट गई। वेइ राज्य की फौजों की थकान से फायदा उठाकर छी राज्य की फौजें उनसे क्वेइलिङ में (जो वर्तमान शानतुङ प्रान्त की होत्से काउन्टी के उत्तर-पूर्व में है – अनु०) भिड़ गईं और उन्हें हरा दिया। इस प्रकार चाओ राज्य पर से घेरा उठ गया। इसी कार्यनीति को चीन के फौजी विशेषज्ञ "वेइ राज्य पर हमला करके चाओ राज्य को बचाना" कहते हैं।

दीर्घकालीन युद्ध के बारे में*

मई १९३८

समस्या का विवरण

१. महान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की पहली वर्षगांठ ७ जुलाई को शीघ्र ही आने वाली है। समूचे राष्ट्र की शक्तियां आपस में एकताबद्ध होकर, अविचल रूप से प्रतिरोध-युद्ध चलाते हुए और संयुक्त मोर्चे पर कायम रहते हुए, लगभग एक वर्ष से दुश्मन के खिलाफ वीरतापूर्वक लड़ती आ रही हैं। समूचे विश्व की जनता का ध्यान इस युद्ध पर केन्द्रित है, जो पूरब के इतिहास में अपना सानी नहीं रखता तथा जिसे विश्व के इतिहास में एक महान युद्ध के रूप में याद रखा जाएगा। हर चीनवासी जो युद्ध की मुसीबतों को झेल रहा है और अपने राष्ट्र के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए लड़ रहा है, हर दिन विजय के लिए लालायित रहता है। लेकिन वास्तव में युद्ध की प्रक्रिया क्या होगी? इस युद्ध में हम विजय प्राप्त कर सकते हैं या नहीं? इस युद्ध में हम शीघ्र

* इस भाषण-माला में कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा २६ मई से ३ जून १९३८ तक येनान स्थित जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध अध्ययन संस्था में दिए गए भाषण शामिल हैं।

विजय प्राप्त कर सकते हैं या नहीं ? बहुत से लोग दीर्घकालीन युद्ध की चर्चा कर रहे हैं, लेकिन आखिर यह युद्ध दीर्घकालीन है क्यों ? एक दीर्घकालीन युद्ध कैसे चलाया जाए ? बहुत से लोग अन्तिम विजय की बात कर रहे हैं, लेकिन अन्तिम विजय हमारी ही क्यों होगी ? अन्तिम विजय के लिए हम कैसे प्रयत्न करेंगे ? हरेक व्यक्ति को इन प्रश्नों का उत्तर नहीं मिल सका है ; सच तो यह है कि अधिकांश लोगों को अब तक इनका उत्तर नहीं मिला है। इसलिए राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त की वकालत करने वाले पराजयवादियों ने आगे आकर लोगों को यह बताना शुरू कर दिया है कि चीन गुलामी की जंजीरों में जकड़ जाएगा और अन्तिम विजय चीन की नहीं होगी। दूसरी ओर उतावलेपन के शिकार हमारे कुछ मित्रों ने भी आगे आकर लोगों को यह बताना शुरू कर दिया है कि चीन बहुत शीघ्र युद्ध में विजय प्राप्त कर लेगा और भारी प्रयास करने की आवश्यकता नहीं होगी। क्या ये मत सचमुच सही हैं ? हम हमेशा यह कहते आए हैं कि ये मत सही नहीं हैं। लेकिन जो कुछ हम कहते आ रहे हैं उसे अधिकांश लोग अब तक भी भली-भांति नहीं समझ पाए। इसका कारण आंशिक रूप से यह रहा है कि हमने प्रचार और स्पष्टीकरण का काम पर्याप्त रूप से नहीं किया, और आंशिक रूप से यह कि वस्तुगत घटनाएं अभी इस सीमा तक विकसित नहीं हुई कि उनका निहित स्वरूप तथा उनकी रूपरेखा लोगों के सामने सम्पूर्ण व स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाए, जिसकी वजह से लोग सम्पूर्ण घटना-प्रवाह और उसके परिणाम को पहले से नहीं देख सके, और फलतः वे नीतियों तथा कार्यनीतियों की एक पूर्ण शृंखला के बारे में निर्णय नहीं कर सके। अब स्थिति ज्यादा अच्छी है ; प्रतिरोध-

युद्ध के पिछले दस महीनों का अनुभव राष्ट्रीय गुलामी के सरासर निराधार सिद्धान्त के बुलबुले को फोड़ देने और शीघ्र विजय के सिद्धान्त पर से हमारे उतावले मित्रों का विश्वास हटा देने के लिए काफी है। इन परिस्थितियों में बहुत से लोग विशद स्पष्टीकरण की मांग करते हैं। दीर्घकालीन युद्ध के बारे में तो यह बात और भी अधिक लागू होती है, न सिर्फ इसलिए क्योंकि राष्ट्रीय गुलामी और शीघ्र विजय के सिद्धान्त इसके विरोधी हैं, बल्कि इसलिए भी क्योंकि इस युद्ध के स्वरूप के बारे में एक छिछली धारणा मौजूद है। "लूकओ-छ्याओ घटना के बाद से हमारी ४० करोड़ जनता सामूहिक रूप से प्रयत्न कर रही है और अन्तिम विजय चीन की ही होगी।" आम जनता में यह फार्मूला बहुत प्रचलित है। यह एक सही फार्मूला है, पर इसमें और अधिक अन्तर्वस्तु जोड़ने की जरूरत है। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध और संयुक्त मोर्चे को अविचल रूप से कायम रखने में हमें अनेक तत्वों ने समर्थ बनाया है। हमारे देश के भीतर, इनमें कम्युनिस्ट पार्टी से लेकर क्वोमिन्ताङ तक सभी राजनीतिक पार्टियां, मजदूरों व किसानों से लेकर पूंजीपति वर्ग तक समूची जनता, तथा नियमित सेना से लेकर छापामार दस्तों तक सभी सैन्य-शक्तियां शामिल हैं ; अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में, इनमें समाजवादी देश से लेकर विभिन्न देशों की न्यायप्रिय जनता तक, तथा शत्रु-देश में, जापानी जनता के उन हिस्सों से लेकर मोर्चे के उन जापानी सिपाहियों तक जो युद्ध के विरोधी हैं, सभी शामिल हैं। संक्षेप में, इन सभी तत्वों ने विभिन्न मात्रा में हमारे प्रतिरोध-युद्ध में योगदान किया है। हर ईमानदार व्यक्ति को उनका अभिवादन करना चाहिए। हम कम्यु-निस्टों के सामने, तथा साथ ही जापान-विरोधी अन्य सभी राजनीतिक

पार्टियों और समूचे चीन की जनता के सामने एकमात्र लक्ष्य यही है कि हम लोग खूंखार जापानी हमलावरों को शिकस्त देने के लिए सभी शक्तियों को एकताबद्ध करने का प्रयास करें। इस साल १ जुलाई को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की सत्रहवीं जयन्ती मनाई जाएगी। हमें दीर्घकालीन युद्ध का गम्भीरता से अध्ययन करना चाहिए, ताकि हर कम्युनिस्ट प्रतिरोध-युद्ध में और बेहतर तथा और ज्यादा योगदान कर सके। इसलिए मेरा भाषण दीर्घकालीन युद्ध के अध्ययन के विषय में होगा। मैं दीर्घकालीन युद्ध से सम्बन्धित सभी समस्याओं की चर्चा करना चाहता हूं; लेकिन सभी बातों को मैं यहां नहीं ला सकूंगा, क्योंकि एक ही भाषण-माला में यह सब बता सकना असम्भव है।

२. प्रतिरोध-युद्ध के दस महीनों के समूचे अनुभव ने चीन के अनिवार्य रूप से गुलाम बनने के सिद्धान्त और चीन की शीघ्र विजय के सिद्धान्त को गलत साबित कर दिया है। इनमें से पहला सिद्धान्त समझौता करने के रुझान को जन्म देता है और दूसरा दुश्मन को कम करके आंकने के रुझान को। इस समस्या के बारे में ये दोनों ही रुख मनोगतवादी और एकतरफा हैं, एक शब्द में यूं कहा जा सकता है कि ये अवैज्ञानिक हैं।

३. प्रतिरोध-युद्ध से पहले राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के बारे में तरह-तरह की चर्चा की जाती थी। मिसाल के लिए, कुछ लोग कहते थे: "चीन के हथियार घटिया हैं और वह युद्ध में अवश्य पराजित हो जाएगा।" "यदि चीन प्रतिरोध-युद्ध करेगा तो निश्चय ही वह दूसरा अबीसीनिया बन जाएगा।" युद्ध शुरू होने के बाद से राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त की चर्चा अब खुलेआम तो नहीं की

जाती, पर चुपके-चुपके उसकी अब भी चर्चा की जाती है, और ऐसी चर्चा काफी ज्यादा है। मिसाल के लिए, समय-समय पर समझौते का वातावरण पैदा होता रहता है और समझौते की पैरवी करने वाले लोग यह तर्क पेश करते हैं: "युद्ध जारी रखने का परिणाम गुलामी होगा।"[1] हुनान से एक विद्यार्थी ने अपने पत्र में लिखा है:

> देहाती क्षेत्रों में हर चीज मुश्किल नजर आती है। खुद अकेले प्रचार-कार्य करते समय, मुझे जब भी और जहां भी लोग मिलते हैं उनसे बातें करनी पड़ती हैं। जिन लोगों से मैं बातें करता हूं वे निरे बुद्धू नहीं हैं; जो कुछ हो रहा है उसके बारे में उनके अन्दर कुछ न कुछ समझ मौजूद है और जो कुछ मैं कहता हूं उसमें वे बड़ी दिलचस्पी दिखाते हैं। लेकिन जब मेरी भेंट अपने रिश्तेदारों से होती है, तो वे हमेशा यही कहते हैं: "चीन युद्ध में नहीं जीत सकता; उसे गुलाम बना दिया जाएगा।" ऐसे लोगों से कितनी चिढ़ होती है! सौभाग्यवश ऐसे लोग अपने विचारों का प्रचार नहीं करते; नहीं तो हालत सचमुच बहुत बुरी हो जाती। स्वाभाविक है कि किसान मुझसे अधिक उन पर विश्वास करते हैं।

चीन के अनिवार्य रूप से गुलाम बनने के सिद्धान्त के ऐसे ही समर्थक समझौतावादी रुझान के सामाजिक आधार हैं। ऐसे लोग चीन में हर जगह मिलते हैं। इसलिए समझौते का सवाल जापान-विरोधी मोर्चे के भीतर किसी भी समय उठ सकता है और शायद इस युद्ध के अन्त तक भी यह सवाल बना रहेगा। अब जबकि श्वीचओ का पतन हो चुका है और ऊहान खतरे में है, मेरे खयाल से राष्ट्रीय

गुलामी के इस सिद्धान्त की पूरी तरह धज्जियां उड़ा देना अहितकर नहीं होगा।

४. प्रतिरोध-युद्ध के पिछले दस महीनों में तरह-तरह के ऐसे विचार भी सामने आए हैं जिनसे उतावलेपन की बू आती है। मिसाल के लिए, युद्ध के शुरू होते ही बहुत से लोगों ने पूर्णतया निराधार आशावाद का परिचय दिया, वे जापान की शक्ति को कम करके आंकते थे, यहां तक कि यह विश्वास रखते थे कि जापान शानशी तक घुस ही नहीं सकता। कुछ लोग जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में छापामार युद्ध की रणनीतिक भूमिका को कम करके आंकते थे और इस मान्यता को शक की निगाह से देखते थे : "सम्पूर्ण दृष्टि से चलायमान लड़ाई मुख्य और छापामार लड़ाई सहायक होती है ; आंशिक दृष्टि से छापामार लड़ाई मुख्य और चलायमान लड़ाई सहायक होती है।" वे लोग आठवीं राह सेना के इस रणनीतिक उसूल का भी समर्थन नहीं करते : "बुनियादी तौर पर छापामार लड़ाई करो, लेकिन अनुकूल परिस्थितियों में चलायमान लड़ाई का भी कोई मौका हाथ से न निकलने दो।" वे इसे "यांत्रिक" विचार समझते थे।[२] शांघाई की लड़ाई के समय कुछ लोगों ने कहा : "अगर हम तीन महीने तक किसी प्रकार लड़ सकें, तो उसके बाद अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में परिवर्तन अवश्य होगा। सोवियत संघ अपनी फौजें अवश्य भेजेगा और युद्ध का अन्त हो जाएगा।" प्रतिरोध-युद्ध के भविष्य के लिए ये लोग मुख्यतया विदेशी सहायता पर आंखें लगाए हुए थे।[३] थाएरड़च्वाङ की विजय[४] के बाद कुछ लोगों का यह विचार हो गया कि श्वीचओ मुहिम को "लगभग निर्णायक मुहिम" होना चाहिए और यह कि दीर्घकालीन युद्ध की नीति को बदल देना चाहिए।

वे कहते थे : "यह टक्कर दुश्मन द्वारा की गई अन्तिम छटपटाहट का सूचक है," या "यदि हम यह लड़ाई जीत लेंगे, तो जापानी युद्ध-सरदारों का मनोबल टूट जाएगा और वे केवल अपने सर्वनाश की घड़ियां ही गिनेंगे।"[५] फिङशिङक्वान की विजय ने कुछ लोगों का दिमाग फेर दिया है और थाएरड़च्वाङ की एक अन्य विजय ने और अधिक लोगों का दिमाग फेर दिया है। इसलिए उन्हें इस बात पर भी शक होने लगा है कि दुश्मन ऊहान पर आक्रमण करेगा या नहीं। बहुत से लोग यह समझते हैं कि "सम्भवतः वह ऐसा नहीं करेगा", और बहुत से अन्य लोग यह समझते हैं कि "वह ऐसा हरगिज नहीं करेगा"। इस प्रकार के सन्देहों का प्रभाव सभी प्रमुख मामलों पर पड़ सकता है। मिसाल के लिए, क्या जापान का प्रतिरोध करने के लिए हमारे पास काफी ताकत हो गई है? कुछ लोग इसका जवाब हां में दे सकते हैं, क्योंकि हमारी वर्तमान शक्ति ही दुश्मन को आगे बढ़ने से रोकने के लिए काफी है, फिर हम अपनी ताकत क्यों बढ़ाएं? अथवा मिसाल के लिए, क्या जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को मजबूत बनाने और उसका विस्तार करने का नारा अब भी सही है? कुछ लोग इसका उत्तर नहीं में दे सकते हैं, क्योंकि संयुक्त मोर्चे के अन्दर उसके वर्तमान रूप में ही दुश्मन को पीछे ढकेल देने लायक काफी ताकत आ गई है, फिर उसे और ज्यादा मजबूत और विस्तृत क्यों बनाया जाए? अथवा मिसाल के लिए, क्या हमारे राजनयिक प्रयत्नों और अन्तरराष्ट्रीय प्रचार में और तेजी लाई जानी चाहिए? इसका उत्तर फिर नहीं में हो सकता है। अथवा मिसाल के लिए, क्या हम सेना की व्यवस्था और राजनीतिक व्यवस्था में सुधार करने, जन-आन्दोलन को विकसित

करने, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा से सम्बन्धित शिक्षा-कार्य को जोरों से चलाने, गद्दारों और त्रास्तकीवादियों को कुचलने, युद्ध-उद्योगों को बढ़ाने तथा जनता के रहन-सहन की हालत में सुधार करने के लिए संजीदगी से कदम उठाएं? अथवा मिसाल के लिए, क्या ऊहान, क्वाङचग्रो और उत्तर-पश्चिम की हिफाजत करने तथा दुश्मन के पृष्ठभाग में छापामार युद्ध को जोरदार तरीके से विकसित करने के नारे ग्रब भी सही हैं? इन सभी सवालों का उत्तर भी नहीं में हो सकता है। यहां तक कि कुछ ऐसे लोग भी हैं जो युद्ध की स्थिति में थोड़ा भी अनुकूल मोड़ ग्राने पर क्वोमिन्ताङ और कम्यु-निस्ट पार्टी के बीच टकराव बढ़ाने को तैयार हो जाते हैं और इस प्रकार वे अपना ध्यान बाहरी समस्याओं से हटाकर अन्दरूनी समस्याओं की ओर लगाने लगते हैं। जब भी हम तुलनात्मक रूप से कोई बड़ी लड़ाई जीतते हैं या दुश्मन अस्थाई तौर पर अपना बढ़ाव रोक देता है, तब अनिवार्य रूप से ऐसा ही होता है। इन सब बातों को हम राजनीतिक और फौजी अदूरदर्शिता की श्रेणी में रखते हैं। ऐसे तर्क चाहे कितने ही उचित जान पड़ें, दरअसल वे निराधार होते हैं, निरी लफ्फाजी के सूचक होते हैं। इन खोखली बातों को बन्द कर देने से ही जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को विजयपूर्वक चलाने में सहायता मिलेगी।

५. अब सवाल है: क्या चीन गुलाम बन जाएगा? जवाब है: नहीं, वह गुलाम नहीं बनेगा; बल्कि अन्तिम विजय चीन की ही होगी। क्या चीन शीघ्र विजयी हो सकता है? जवाब है: नहीं, वह शीघ्र विजयी नहीं हो सकता; और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध होगा।

६. इन मसलों से सम्बन्धित मुख्य तर्कों की मोटी रूपरेखा हम दो साल पहले ही बता चुके हैं। १६ जुलाई १६३६ को, अर्थात शीआन घटना से पांच महीने पहले और लूकग्रोछ्याओ घटना से बारह महीने पहले, मैंने एक अमरीकी पत्रकार श्री एडगर स्नो के साथ मुलाकात में चीन-जापान युद्ध की परिस्थिति का ग्राम अनुमान किया था और विजय प्राप्त करने के लिए अपनाए जाने वाले विभिन्न उसूल पेश किए थे। याद दिलाने के लिए इस मुलाकात के कुछ अंशों को यहां फिर से पेश कर देता हूं:

प्रश्न: चीन किन परिस्थितियों में जापानी साम्राज्यवाद की शक्ति को पराजित और नष्ट कर सकता है?

उत्तर: इसके लिए तीन शर्तों की जरूरत है: पहली, चीन में जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की स्थापना; दूसरी, जापान-विरोधी अन्तरराष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की स्थापना; तीसरी, जापानी जनता और जापान के उपनिवेशों की जनता के क्रान्ति-कारी आन्दोलन का उदय। चीनी जनता के दृष्टिबिन्दु से, इन तीनों में सबसे महत्वपूर्ण शर्त है चीनी जनता की महान एकता।

प्रश्न: आपके खयाल में इस प्रकार का युद्ध कब तक जारी रहेगा?

उत्तर: यह चीन के जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की शक्ति पर तथा चीन और जापान के भीतर मौजूद अनेक अन्य निर्णा-यक तत्वों पर निर्भर है। इसका मतलब यह है कि चीन की अपनी शक्ति के अलावा, जो मुख्य चीज है, चीन को मिलने

वाली अन्तरराष्ट्रीय सहायता और साथ ही जापान के भीतर होने वाली क्रान्ति द्वारा की जाने वाली सहायता भी महत्वपूर्ण हैं। यदि चीन के जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे का भारी विस्तार किया जाए तथा उसे व्यापकता और गहराई की दृष्टि से कारगर रूप से संगठित किया जाए, और यदि चीन को उन सरकारों और जनता से आवश्यक सहायता मिले जो जापानी साम्राज्यवाद की ओर से अपने हितों के लिए पैदा होने वाले खतरे को पहचानती हैं, और यदि जापान में शीघ्र ही क्रान्ति हो जाए, तो युद्ध जल्दी ही समाप्त हो जाएगा और चीन को विजय शीघ्र ही प्राप्त हो जाएगी। यदि ये शर्तें जल्दी ही पूरी नहीं कर ली जाएंगी, तो युद्ध लम्बा हो जाएगा। लेकिन अन्त में नतीजा यही होगा कि जापान की हार अवश्य होगी, और चीन की विजय अवश्य होगी। हां, कुर्बानियां बड़े पैमाने पर देनी होंगी, और यह एक बहुत दुखद काल होगा।

प्रश्न : राजनीतिक और फौजी दृष्टि से इस प्रकार के युद्ध के विकास के सम्भावित भविष्य के बारे में आपकी क्या राय है ?

उत्तर : अब जापान की महाद्वीपीय नीति निश्चित हो चुकी है। जो लोग यह सोचते हैं कि जापान से समझौता करके तथा चीन के प्रदेश और प्रभुत्वाधिकारों की और अधिक कुर्बानी देकर वे जापान के बढ़ाव को रोक देंगे, वे केवल कल्पना के घोड़े दौड़ा रहे हैं। हम यह बात निश्चित रूप से जानते हैं कि जापानी साम्राज्यवाद के महाद्वीपीय कार्यक्रम में निचली याङत्सी घाटी और हमारे दक्षिणी समुद्री बन्दरगाह शामिल हो चुके हैं। इसके अलावा, जापान यह चाहता है कि फिलिपीन, स्याम, वियत-

नाम, मलय प्रायद्वीप और डच ईस्ट इंडीज पर उसका अधिकार हो जाए, जिससे अन्य देशों को चीन से अलग कर दिया जाए और दक्षिण-पश्चिमी प्रशान्त महासागर पर जापान का एकाधिकार कायम हो जाए। यह जापान की समुद्रीय नीति है। इस बात में कोई शक नहीं कि इस काल में चीन हद दर्जे की कठिन स्थिति में होगा। लेकिन चीन के लोगों की बहुसंख्या को यह विश्वास है कि इन कठिनाइयों पर काबू पाया जा सकता है ; केवल बड़े-बड़े बन्दरगाह-नगरों में रहने वाले धनी लोग ही पराजयवादी हैं, क्योंकि उन्हें अपनी सम्पत्ति खो बैठने का भय है। बहुत से लोगों का यह खयाल है कि यदि जापान ने चीनी समुद्र-तट की नाकेबन्दी कर दी, तो चीन के लिए युद्ध जारी रखना असम्भव हो जाएगा। यह एक बेहूदा बात है। इसका खण्डन करने के लिए सिर्फ लाल सेना के युद्ध-इतिहास का उल्लेख करना ही काफी होगा। वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में चीन की स्थिति गृहयुद्ध काल में लाल सेना की स्थिति के मुकाबले कहीं अधिक बरतर है। चीन एक बहुत बड़ा देश है। यदि चीन के दस या बीस करोड़ जनसंख्या वाले क्षेत्र पर अधिकार करने में जापान सफल भी हो जाए, तो भी हम पराजय से कोसों दूर होंगे। जापान के खिलाफ लड़ने के लिए हमारे पास तब भी बहुत बड़ी शक्ति बनी रहेगी, जबकि जापान को सम्पूर्ण युद्ध में हर समय अपने पृष्ठभाग में रक्षात्मक लड़ाइयां लड़नी पड़ेंगी। चीन की अर्थव्यवस्था का असमान और असन्तुलित विकास उल्टे प्रतिरोध-युद्ध के लिए फायदेमन्द साबित होता है। मिसाल के लिए, शांघाई का सम्बन्ध चीन के अन्य स्थानों से टूट जाने से चीन को

उतनी मुसीबत नहीं होगी, जितनी न्यूयार्क का सम्बन्ध अमरीका के अन्य स्थानों से टूट जाने से अमरीका को। यदि जापान ने चीन के समुद्र-तट की नाकेबन्दी भी कर दी, तो भी उसके लिए चीन के उत्तर-पश्चिम, दक्षिण-पश्चिम और पश्चिम की नाकेबन्दी करना असम्भव होगा। इस प्रकार, समूची चीनी जनता को एकताबद्ध करना और एक राष्ट्रव्यापी जापान-विरोधी मोर्चा कायम करना एक बार फिर समस्या का केन्द्र-बिन्दु बन जाता है। यह बात हम पहले से ही कहते आए हैं।

प्रश्न : यदि युद्ध लम्बा खिंच जाता है और जापान पूर्णतः पराजित नहीं होता, तो क्या कम्युनिस्ट पार्टी जापान से सुलह करने के लिए समझौता-वार्ता करने पर सहमत हो जाएगी और उत्तर-पूर्व में जापान के शासन को स्वीकार कर लेगी?

उत्तर : नहीं, समूचे देश की जनता की ही तरह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी भी जापान के कब्जे में चीन की एक भी इंच भूमि नहीं रहने देगी।

प्रश्न : आपकी राय में इस मुक्ति युद्ध में कौन से मुख्य रणनीतिक उसूल अपनाए जाने चाहिए?

उत्तर : हमारा रणनीतिक उसूल यह होना चाहिए कि हम अपनी नियमित सेना को एक बहुत लम्बे और बदलते हुए अस्थिर मोर्चे पर कार्यवाही करने में लगाए रखें। कामयाबी हासिल करने के लिए चीनी सेनाओं को ऊंचे दर्जे की चलायमानता के साथ व्यापक रणभूमि में लड़ाई चलानी चाहिए, तेजी से आगे बढ़ना और पीछे हटना चाहिए, तेजी से एकत्रित होना और बिखर जाना चाहिए। इसका मतलब

है बड़े पैमाने की चलायमान लड़ाई करना न कि मोर्चेबद्ध लड़ाई करना, जो गहरी खन्दकों व ऊंची किलेबन्दियों से, एक के बाद एक रक्षा-पंक्ति की कतारों से, और केवल मजबूत मोर्चेबन्दियों पर निर्भर रहकर ही लड़ी जाती है। इसका अर्थ सभी महत्वपूर्ण सामरिक स्थानों को छोड़ देना नहीं है; इन स्थानों में हमें मोर्चेबद्ध लड़ाई चलानी चाहिए, बशर्ते कि हमें फायदा हो। लेकिन सम्पूर्ण स्थिति को बदलने वाला रणनीतिक उसूल अवश्य चलायमान लड़ाई ही होगा। मोर्चेबद्ध लड़ाई चलाना भी आवश्यक है, लेकिन रणनीति की दृष्टि से उसका स्थान सहायक अथवा गौण है। भौगोलिक दृष्टि से युद्ध का क्षेत्र इतना विशाल है कि हमारे लिए चलायमान लड़ाई को बखूबी चलाना सम्भव है। हमारी सेनाओं की जोरदार कार्यवाही का सामना होने पर जापानी सेना को बड़ी सावधानी से काम लेना होगा। उसकी युद्ध-मशीनरी भारी-भरकम और धीरे चलने वाली है तथा उसकी कार्यक्षमता सीमित है। अगर हम अपनी सैन्य-शक्ति को एक तंग मोर्चे पर घिसाव-थकाव की रक्षात्मक लड़ाई के लिए केन्द्रित करेंगे, तो हम अपनी भौगोलिक स्थिति और आर्थिक संगठन के फायदों का परित्याग कर देंगे तथा अबीसीनिया जैसी गलती कर बैठेंगे। युद्ध के आरम्भिक काल में, हमें हर भारी निर्णायक लड़ाई से बचना चाहिए, तथा दुश्मन की फौजों के मनोबल और युद्ध-क्षमता को कदम-ब-कदम नष्ट कर देने के लिए पहले चलायमान लड़ाई का सहारा लेना चाहिए।

चलायमान लड़ाई चलाने के लिए प्रशिक्षित फौज को

भेजने के अलावा हमें किसानों के बीच से बड़ी संख्या में छापामार दस्ते भी संगठित करने चाहिए। हमें यह जान लेना चाहिए कि तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्तों में इस तरह के जो जापान-विरोधी स्वयंसेवक सैन्य-दल हैं, वे इस सम्भावना की केवल एक छोटी सी मिसाल हैं कि पूरे देश के किसानों के बीच से प्रतिरोध-युद्ध के लिए कितनी भारी शक्ति को गोलबन्द किया जा सकता है। चीनी किसानों में भारी शक्ति निहित है; यदि उनका समुचित रूप से संगठन और निर्देशन किया जाए, तो वे जापानी फौजों को दिन के चौबीसों घंटे उलझाए रख सकते हैं और उन्हें आखिरी दम तक हैरान कर सकते हैं। यह बात याद रखनी चाहिए कि युद्ध चीन में ही लड़ा जाएगा। इसका अर्थ यह है कि जापानी फौजें शत्रुतापूर्ण चीनियों के बीच चारों ओर से एकदम घिर जाएंगी; जापानी फौजों को विवश होकर अपनी युद्ध-सामग्री लानी पड़ेगी और उसकी हिफाजत करनी पड़ेगी; अपनी संचार-पंक्तियों की रक्षा के लिए उन्हें बहुत सी फौजें रखनी होंगी और हमले से हमेशा सावधान रहना पड़ेगा; साथ ही मंचूरिया व जापान स्थित अपने गैरिजनों में भी बड़ी तादाद में फौजें रखनी होंगी।

युद्ध की प्रक्रिया के दौरान चीन बहुत से जापानी सैनिकों को बन्दी बना सकेगा तथा बहुत से हथियारों व गोला-बारूद पर अधिकार कर लेगा, जिनके जरिए वह अपने आपको हथियार-बन्द करेगा; साथ ही चीन विदेशी सहायता भी प्राप्त करेगा जिसके जरिए वह अपने आपको फौजी साज-सामान की दृष्टि से कदम-ब-कदम सुदृढ़ बनाएगा। इसलिए युद्ध के उत्तर काल

में चीन मोर्चेबद्ध लड़ाई चला सकेगा तथा जापान-अधिकृत क्षेत्रों की मोर्चेबन्दी पर हमला कर सकेगा। इस प्रकार जापान की अर्थव्यवस्था चीन के दीर्घकालीन प्रतिरोध के दबाव के कारण तबाह हो जाएगी तथा अनगिनत लड़ाइयों में उलझने के कारण जापानी फौजों का मनोबल टूट जाएगा। लेकिन चीन के पक्ष में, प्रतिरोध की निहित शक्ति का दिन-ब-दिन प्रचण्ड रूप से विकास होता जाएगा, तथा क्रान्तिकारी लोगों की बहुत बड़ी तादाद अपने देश की आजादी के लिए लड़ने मोर्चे की अग्रिम कतारों में पहुंच जाएगी। इन सब तत्वों और दूसरे तत्वों के मेल से हम जापान-अधिकृत क्षेत्रों में उसकी किलेबन्दियों और अड्डों पर अन्तिम व निर्णायक प्रहार करने, और हमलावर जापानी फौजों को चीन से बाहर खदेड़ने में समर्थ हो जाएंगे।

(एडगर स्नो : "उत्तर-पश्चिमी चीन की रूपरेखा")

प्रतिरोध-युद्ध के दस महीनों के अनुभव ने उपरोक्त स्थापनाओं को सही साबित कर दिया है और भविष्य में भी ये सही साबित होती रहेंगी।

७. २५ अगस्त १९३७ को, यानी लूकग्रोछ्याओ घटना के बाद दो महीने से भी कम समय बीतने पर ही, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने "वर्तमान परिस्थिति और पार्टी के कार्यों के बारे में प्रस्ताव" में स्पष्ट रूप से बता दिया था :

लूकग्रोछ्याओ में जापानी हमलावरों द्वारा उकसावा दिया जाना और पेफिङ व थ्येनचिन पर उनके द्वारा कब्जा किया

जाना, लम्बी दीवार के दक्षिण में उनके बड़े पैमाने के आक्रमण की शुरुआत है। जापानी हमलावरों ने युद्ध के लिए अपनी राष्ट्रीय लामबन्दी शुरू कर दी है। उनका यह प्रचार कि "परि-स्थिति को बिगाड़ने का कोई इरादा नहीं", केवल अपने हमलों के लिए तैयार किया गया धूमावरण मात्र है।

७ जुलाई को लूकओछ्याओ में किया गया प्रतिरोध चीन के राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध-युद्ध की शुरुआत है।

इस प्रकार चीन की राजनीतिक परिस्थिति में अब एक नई मंजिल की, यानी प्रतिरोध-युद्ध चलाने की मंजिल की शुरुआत हो गई है। प्रतिरोध-युद्ध की तैयारी की मंजिल खत्म हो चुकी है। मौजूदा मंजिल का केन्द्रीय कार्य है प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए राष्ट्र की सभी शक्तियों को गोल-बन्द करना।

प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने की कुंजी है मौजूदा प्रतिरोध-युद्ध को, जो शुरू हो चुका है, समूचे राष्ट्र के पूर्ण प्रतिरोध-युद्ध में विकसित कर देना। केवल इसी प्रकार के प्रतिरोध-युद्ध द्वारा अन्तिम विजय प्राप्त की जा सकती है।

मौजूदा प्रतिरोध-युद्ध में गम्भीर कमजोरियां होने की वजह से उसके रास्ते में क्षति उठाने, पीछे हटने, भीतरी फूट, विश्वासघात, अस्थाई व आंशिक सुलह-समझौते, आदि जैसी अनेक प्रतिकूल स्थितियों का सामना करना पड़ेगा। इसलिए हमें यह समझ लेना चाहिए कि यह युद्ध एक कठिन और दीर्घ-कालीन युद्ध होने जा रहा है। लेकिन हमारा विश्वास है कि जो प्रतिरोध-युद्ध शुरू हो गया है, वह हमारी पार्टी और तमाम

जनता के प्रयत्नों के जरिए निश्चय ही सभी विघ्न-बाधाओं को पार करके अपनी प्रगति और विकास को जारी रखेगा।

प्रतिरोध-युद्ध के दस महीनों के अनुभवों ने इस स्थापना को भी सही साबित कर दिया है और आगे भी यह सही साबित होती रहेगी।

८. ज्ञानशास्त्र की दृष्टि से युद्ध के बारे में सभी गलत विचारों का स्रोत आदर्शवादी तथा यांत्रिक प्रवृत्तियां ही होती हैं। इस तरह की प्रवृत्तियां रखने वाले लोग समस्या को मनोगतवादी व एकांगी ढंग से देखते हैं। वे या तो बिलकुल ही निराधार और मनोगतवादी बातें करते हैं, अथवा एक ही पहलू या किसी अस्थाई बात को पकड़कर इसी प्रकार के मनोगतवाद के जरिए उसे बढ़ाकर सम्पूर्ण समस्या का रूप दे देते हैं। लेकिन गलत विचारों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है : पहली श्रेणी में वे विचार आते हैं जो बुनियादी होने के कारण लगातार गलत बने रहते हैं और जिनका सुधार कठिन होता है; दूसरी श्रेणी में वे विचार आते हैं जो आकस्मिक होने के कारण अस्थाई रूप से गलत होते हैं और जिनका सुधार आसान होता है। चूंकि दोनों ही प्रकार के विचार गलत हैं, इसलिए दोनों में सुधार की आवश्यकता होती है। इसलिए युद्ध के सवाल के बारे में आदर्शवादी व यांत्रिक प्रवृत्तियों का विरोध करके और उसका अध्ययन करते समय वस्तुगत व सर्वांगीण दृष्टिकोण अपनाकर ही हम इस सवाल के बारे में सही निष्कर्ष निकाल सकते हैं।

समस्या का आधार

९. जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध क्यों है ? अन्तिम विजय चीन की ही क्यों होगी ? हमारे इन कथनों का आधार क्या है ?

चीन-जापान युद्ध अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती चीन तथा साम्राज्यवादी जापान के बीच बीसवीं सदी के चौथे दशक में चल रहे जीवन-मरण के युद्ध के अलावा और कुछ नहीं है। पूरी समस्या का आधार यही है। युद्ध करने वाले दोनों पक्षों में अनेक परस्पर विरोधी विशेषताएं मौजूद हैं, जिन्हें एक-एक करके नीचे दिया जा रहा है।

१०. **जापानी पक्ष :** पहले, जापान एक शक्तिशाली साम्राज्यवादी देश है, जिसकी फौजी, आर्थिक और राजनीतिक-संगठनात्मक शक्ति पूरब में पहले दर्जे की है तथा जिसकी गिनती दुनिया के ५ या ६ प्रमुख साम्राज्यवादी देशों में की जाती है। ये जापान के आक्रमणकारी युद्ध के बुनियादी तत्व हैं। युद्ध की अनिवार्यता तथा चीन के शीघ्र विजयी न होने की सम्भावना जापान की साम्राज्यवादी व्यवस्था और उसकी मजबूत फौजी, आर्थिक व राजनीतिक-संगठनात्मक शक्ति पर आधारित है। दूसरे, लेकिन जापान की सामाजिक अर्थव्यवस्था के साम्राज्यवादी स्वरूप के कारण ही उसके युद्ध का स्वरूप भी साम्राज्यवादी है, एक ऐसा युद्ध जो प्रतिगामी और बर्बर है। बीसवीं सदी के चौथे दशक में जापानी साम्राज्यवाद, अपने अन्दरूनी और बाहरी अन्तरविरोधों के कारण मजबूर होकर, न केवल इतने बड़े और बेमिसाल दुस्साहसिक

युद्ध में उतर गया है, बल्कि अपने विनाश के कगार पर भी पहुंच गया है। सामाजिक विकास की अवधि की दृष्टि से जापान अब एक फलता-फूलता देश नहीं रह गया ; युद्ध जापान को उस खुशहाली की ओर नहीं ले जाएगा जिसकी आशा वहां के शासक वर्ग कर रहे हैं, बल्कि इसके ठीक विपरीत, यह जापानी साम्राज्यवाद को उसके विनाश की ओर ले जाएगा। इसी को हम कहते हैं जापान के युद्ध का प्रतिगामी स्वरूप। युद्ध चलाने में जो विशिष्ट प्रकार की बर्बरता जापानी साम्राज्यवाद द्वारा बरती जा रही है, उसका स्रोत यही प्रतिगामी स्वरूप और जापानी साम्राज्यवाद का फौजी-सामन्ती स्वरूप है। इस बर्बरता के कारण, स्वयं जापान में वर्गों के बीच, जापानी राष्ट्र और चीनी राष्ट्र के बीच, तथा जापान और दुनिया के अधिकांश देशों के बीच अत्यन्त भीषण विरोध पैदा हो जाएगा। जापान के युद्ध का प्रतिगामी और बर्बर स्वरूप ही उसकी अनिवार्य पराजय का मुख्य आधार है। इतना ही नहीं, तीसरे, यद्यपि जापान इस युद्ध को अपनी मजबूत फौजी, आर्थिक और राजनीतिक-संगठनात्मक शक्ति के आधार पर चला रहा है, लेकिन इसके साथ ही इस युद्ध को वह अपनी स्वाभाविक कमजोरी के आधार पर भी चला रहा है। जापान की फौजी, आर्थिक और राजनीतिक-संगठनात्मक शक्ति मजबूत होते हुए भी, परिमाण की दृष्टि से अपर्याप्त है। जापान एक अपेक्षाकृत छोटा देश है, उसके पास जन-बल, फौजी व वित्तीय शक्ति तथा भौतिक साधन-स्रोतों की कमी है, और इसलिए वह दीर्घकालीन युद्ध के बोझ को बर्दाश्त नहीं कर सकता। जापान के शासक अपनी इस कठिनाई को युद्ध द्वारा दूर करने की कोशिश कर रहे हैं, लेकिन उन्हें एक बार फिर अपनी इच्छा के ठीक विपरीत फल मिलेगा ; यानी

उन्होंने अपनी इस कठिनाई को दूर करने के लिए जो युद्ध शुरू किया है, वह जापान की कठिनाइयों को और अधिक बढ़ा देगा तथा जापान की मूल शक्तियों व साधन-स्रोतों को भी स्वाहा कर देगा। चौथे, अन्तिम बात यह है कि फासिस्ट देशों से अन्तरराष्ट्रीय सहायता प्राप्त कर लेने के बावजूद, जापान को अन्तरराष्ट्रीय सहायता से अधिक जोरदार अन्तरराष्ट्रीय विरोध का सामना करना पड़ेगा। अन्तरराष्ट्रीय विरोध की शक्ति कदम-ब-कदम बढ़ती जाएगी और अन्त में वह न केवल जापान को प्राप्त होने वाली अन्तरराष्ट्रीय सहायता को बेकार बना देगा, बल्कि स्वयं जापान पर भी उसका दबाव पड़ने लगेगा। ऐसा है यह नियम कि एक अन्यायपूर्ण कार्य को बहुत थोड़ा समर्थन प्राप्त होता है, ऐसा है जापान के युद्ध के स्वरूप का परिणाम। संक्षेप में यह कि जापान की अनुकूलता इस बात में है कि उसके अन्दर युद्ध चलाने की भारी क्षमता है, और उसकी प्रतिकूलता इस बात में है कि उसके युद्ध का स्वरूप प्रतिगामी और बर्बरतापूर्ण है, उसके पास जन-बल और भौतिक साधन-स्रोतों की कमी और अन्तरराष्ट्रीय समर्थन का अभाव है। ये जापानी पक्ष की विशेषताएं हैं।

११. चीनी पक्ष : पहले, हमारा देश एक अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती देश है। अफीम युद्ध से लेकर, थाइफिङ स्वर्गिक-राज्य युद्ध, १८९८ का सुधारवादी आन्दोलन,[१] १९११ की क्रान्ति और उत्तरी अभियान तक जितने भी क्रान्तिकारी या सुधारवादी आन्दोलन चीन को उसकी अर्ध-औपनिवेशिक व अर्ध-सामन्ती स्थिति से मुक्ति दिलाने के उद्देश्य से छेड़े गए, उन सभी को भारी क्षति उठानी पड़ी और चीन एक अर्ध-औपनिवेशिक व अर्ध-सामन्ती देश ही बना रहा। हमारा देश अब भी एक कमजोर देश है तथा दुश्मन की तुलना में

उसकी फौजी, आर्थिक और राजनीतिक-संगठनात्मक शक्ति कमजोर मालूम होती है। युद्ध की अनिवार्यता और चीन के शीघ्र विजयी न होने की सम्भावना का आधार इस बात में भी है। दूसरे, लेकिन चीन का मुक्ति आन्दोलन, जो गत सौ वर्षों में विकसित हुआ है, आज अपने इतिहास के पिछले किसी भी काल के मुकाबले भिन्न है। यद्यपि विरोध करने वाली भीतरी और बाहरी शक्तियों के कारण मुक्ति आन्दोलन को गम्भीर हानियां उठानी पड़ी हैं, तो भी इसके साथ-साथ चीनी जनता तपकर फौलाद बन गई है। यद्यपि जापान की तुलना में वर्तमान चीन फौजी, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक दृष्टि से मजबूत नहीं है, तो भी आज उसमें अपने इतिहास के पिछले किसी भी काल के मुकाबले अधिक प्रगतिशील तत्व मौजूद हैं। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और उसके नेतृत्व में चलने वाली सेना उन प्रगतिशील तत्वों का प्रतिनिधित्व करती हैं। ठीक इसी प्रगति के आधार पर चीन के वर्तमान मुक्ति युद्ध को दीर्घकाल तक और अन्तिम विजय तक चलाया जा सकता है। पतन की ओर जाने वाले जापानी साम्राज्यवाद के ठीक विपरीत, चीन सुबह के सूरज की तरह एक उदीयमान देश है। चीन का युद्ध एक प्रगतिशील युद्ध है और इसी प्रगतिशीलता के कारण वह एक न्यायपूर्ण युद्ध भी है। चूंकि उसका युद्ध एक न्यायपूर्ण युद्ध है, इसलिए वह अपने राष्ट्र को एकताबद्ध कर सकता है, शत्रु-देश की जनता के हृदय में अपने लिए सहानुभूति पैदा कर सकता है और विश्व के अधिकांश देशों का समर्थन प्राप्त कर सकता है। तीसरे, और फिर जापान के विपरीत चीन एक बहुत बड़ा देश है, एक विशाल क्षेत्रफल, प्रचुर साधन-स्रोतों, बड़ी जनसंख्या और बड़ी फौज वाला देश है, तथा उसमें

लम्बे समय तक युद्ध को चलाते रहने की सामर्थ्य मौजूद है। चौथे, अन्तिम बात यह है कि चीन के युद्ध की प्रगतिशीलता और न्यायपूर्णता के कारण उसे बहुत बड़े पैमाने पर जो अन्तरराष्ट्रीय समर्थन मिल रहा है वह जापान के अन्यायपूर्ण कार्य को प्राप्त होने वाले बहुत थोड़े समर्थन के मुकाबले एकदम विपरीत है। संक्षेप में, चीन की प्रतिकूलता इस बात में है कि उसकी युद्ध चलाने की शक्ति कमजोर है, और उसकी अनुकूलता इस बात में है कि उसके युद्ध का स्वरूप प्रगतिशील और न्यायपूर्ण है, वह एक बड़ा देश है और उसे काफी मात्रा में अन्तरराष्ट्रीय समर्थन प्राप्त है। ये चीन की विशेषताएं हैं।

१२. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि अपनी मजबूत फौजी, आर्थिक और राजनीतिक-संगठनात्मक शक्ति के बावजूद जापान का युद्ध प्रतिगामी और बर्बर है, उसका जन-बल और उसके भौतिक साधन-स्रोत अपर्याप्त हैं, और अन्तरराष्ट्रीय दृष्टि से वह एक प्रतिकूल स्थिति में है। इसके विपरीत, चीन की फौजी, आर्थिक और राजनीतिक-संगठनात्मक शक्ति अपेक्षाकृत कमजोर है, लेकिन वह अपनी प्रगति के युग में है और उसका युद्ध एक प्रगतिशील व न्यायपूर्ण युद्ध है ; इसके अलावा, एक बड़ा देश होने की वजह से चीन दीर्घकालीन युद्ध चलाने में समर्थ होगा, और दुनिया के अधिकांश देश उसका समर्थन करेंगे। ये चीन-जापान युद्ध की परस्पर विरोधी बुनियादी विशेषताएं हैं। इन्हीं विशेषताओं ने दोनों पक्षों की सभी राजनीतिक नीतियों और सभी फौजी रणनीतियों व कार्यनीतियों को निर्धारित किया है और कर रही हैं ; और इन्हीं विशेषताओं ने युद्ध के दीर्घकालीन स्वरूप का और इस परिणाम का निर्णय किया है और कर रही हैं कि अन्तिम विजय चीन की ही होगी,

न कि जापान की। युद्ध इन्हीं विशेषताओं के बीच की प्रतियोगिता है। युद्ध के दौरान ही वे अपने-अपने चरित्र के अनुरूप परिवर्तित होंगी और इसी पर भविष्य की तमाम घटनाएं निर्भर करती हैं। ये विशेषताएं वस्तुगत रूप से मौजूद हैं और इन्हें लोगों को गुमराह करने के लिए अपनी ओर से नहीं गढ़ा गया है ; ये युद्ध के सम्पूर्ण बुनियादी तत्व हैं, अधूरे टुकड़े नहीं ; इनका प्रभाव दोनों ही पक्षों की सभी बड़ी और छोटी समस्याओं पर और युद्ध की हर मंजिल पर पड़ता है तथा ये ऐसी चीजें नहीं हैं जिनका परिस्थिति पर कोई असर न पड़ता हो। यदि कोई आदमी इन बुनियादी विशेषताओं को भूलकर चीन-जापान युद्ध का अध्ययन करेगा, तो निश्चय ही वह गलत नतीजों पर पहुंचेगा ; हो सकता है कि उसके कुछ विचार ऊपर से देखने में सही लगें और कुछ समय के लिए कुछ लोगों को मान्य भी हो जाएं, लेकिन युद्ध के दौरान ऐसे विचार अनिवार्य रूप से गलत साबित होंगे। इन विशेषताओं के आधार पर अब हम उन सभी समस्याओं का स्पष्टीकरण करेंगे जिन्हें हम उठाने जा रहे हैं।

राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त का खण्डन

१३. राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक, जो केवल दुश्मन की मजबूती और हमारी कमजोरी की तुलना करते हैं, यह कहते आए हैं, "प्रतिरोध का अर्थ गुलामी होगा," और अब वे यह कहते हैं, "युद्ध जारी रखने का परिणाम गुलामी होगा।" हम केवल यह बताकर कि दुश्मन का देश मजबूत लेकिन छोटा है और हमारा देश कमजोर

लेकिन बड़ा है, उन्हें यकीन नहीं दिला सकते। यह साबित करने के लिए कि कोई छोटा किन्तु मजबूत राज्य किसी बड़े किन्तु कमजोर राज्य को गुलाम बना सकता है, और एक पिछड़ा राज्य भी आगे बढ़े हुए राज्य को गुलाम बना सकता है, वे य्वान वंश द्वारा सुङ वंश को और छिङ वंश द्वारा मिङ वंश को गुलाम बनाए जाने के ऐतिहासिक उदाहरण पेश कर सकते हैं। यदि हम यह कहें कि ये घटनाएं प्राचीन काल में हुई थीं और इन्हें आज के लिए उदाहरण नहीं माना जा सकता, तो वे ब्रिटेन द्वारा भारत को गुलाम बनाए जाने का हवाला यह साबित करने के लिए दे सकते हैं कि एक छोटा किन्तु मजबूत पूंजीवादी देश, एक बड़े किन्तु कमजोर पिछड़े हुए देश को गुलाम बना सकता है। इसलिए, हमें अन्य सबूत देने चाहिए, तभी हम राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के सभी समर्थकों की जबान बन्द कर सकेंगे और उन्हें कायल कर सकेंगे, तथा अपने तमाम प्रचारकों को पर्याप्त तर्कों से सुसज्जित कर सकेंगे, जिससे कि उलझे दिमाग वाले और ढुलमुल लोगों को समझाया जा सके और प्रतिरोध-युद्ध के प्रति उनके विश्वास को सुदृढ़ बनाया जा सके।

१४. आखिर हमें कौन सा सबूत देना चाहिए? वह है इस युग की विशेषता। यह विशेषता ठोस रूप में जापान की प्रतिगामिता और समर्थन के अभाव के रूप में तथा चीन की प्रगतिशीलता और समर्थन के बाहुल्य के रूप में प्रकट होती है।

१५. हमारा युद्ध किसी अन्य किस्म का युद्ध नहीं बल्कि ठोस रूप में बीसवीं सदी के चौथे दशक में चीन और जापान के बीच होने वाला एक युद्ध है। जहां तक हमारे दुश्मन जापान का सम्बन्ध है, सबसे पहले वह एक मरणासन्न साम्राज्यवादी देश है और अपने

पतन के युग में है; वह न सिर्फ भारत को गुलाम बनाने के उस समय के बरतानिया से भिन्न है जब बरतानवी पूंजीवाद अपने विकास के युग में था, बल्कि बीस वर्ष पहले के प्रथम विश्वयुद्ध के समय के जापान से भी भिन्न है। वर्तमान युद्ध विश्व साम्राज्यवाद के, और सबसे पहले फासिस्ट देशों के व्यापक ध्वंस की पूर्ववेला में शुरू किया गया है; यही कारण है कि दुश्मन ने वर्तमान जोखिमभरा युद्ध छेड़ दिया है, जिसका स्वरूप अन्तिम छटपटाहट जैसा है। इसलिए यह बिलकुल अनिवार्य और निश्चित है कि युद्ध के फलस्वरूप चीन का नहीं, बल्कि जापानी साम्राज्यवाद के शासक गुट का ही विनाश होगा। इसके अलावा, जापान ने यह युद्ध एक ऐसे समय छेड़ा है जब अनेक देश युद्ध का सामना कर रहे हैं या करने ही वाले हैं, जब वे बर्बर आक्रमण के खिलाफ लड़ रहे हैं अथवा लड़ने की तैयारी कर रहे हैं, तथा चीन का हिताहित दुनिया के अधिकांश देशों और जनता की बहुसंख्या के हिताहित के साथ जुड़ा हुआ है। यह इस बात का बुनियादी कारण है कि दुनिया के अधिकांश देशों और जनता की बहुसंख्या में जापान के प्रति विरोध की भावना जाग उठी है और अधिकाधिक बढ़ती जा रही है।

१६. और चीन की हालत कैसी है? आज के चीन की अपने इतिहास के किसी भी युग के चीन से तुलना नहीं की जा सकती। एक अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज ही उसकी विशेषता है, और इसीलिए चीन एक कमजोर देश कहलाता है। लेकिन साथ ही ऐतिहासिक दृष्टि से चीन प्रगति के युग में है; यही मुख्य कारण है कि वह जापान को हरा सकता है। जब हम कहते हैं कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध प्रगतिशील है, तो हम प्रगतिशीलता का

परम्परागत सामान्य अर्थ नहीं लेते ; इसका मतलब हम इटली के विरुद्ध अबीसीनिया के युद्ध की प्रगतिशीलता नहीं समझते और न उसे थाइफिङ स्वर्गिक-राज्य युद्ध अथवा १९११ की क्रान्ति की प्रगतिशीलता ही समझते हैं ; इस प्रगतिशीलता को हम आज के चीन की प्रगतिशीलता के अर्थ में ही लेते हैं। आज के चीन की प्रगतिशीलता किस बात में है ? वह इस बात में है कि चीन अब पूर्णतया सामन्ती देश नहीं है, इस बात में है कि चीन में पूंजीवाद का जन्म हो चुका है, हमारे यहां पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग मौजूद हैं, हमारे यहां ऐसी विशाल जनता मौजूद है जो जागृत हो चुकी है अथवा जागृत हो रही है, हमारे यहां एक कम्युनिस्ट पार्टी है, राजनीतिक दृष्टि से प्रगतिशील सेना है – यानी चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली चीनी लाल सेना है – और हमारे यहां अनेक दशकों की क्रान्तिकारी परम्पराओं और अनुभवों का, खासकर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के जन्म के बाद के सत्रह वर्षों के अनुभवों का भण्डार मौजूद है। इन अनुभवों ने चीनी जनता और चीन की राजनीतिक पार्टियों को शिक्षित किया है और ये ही अनुभव जापान के विरुद्ध वर्तमान एकता का आधार हैं। यदि यह कहा जाए कि १९०५ के अनुभवों के बिना रूस में १९१७ की विजय प्राप्त न हुई होती, तो हम भी यह कह सकते हैं कि पिछले सत्रह वर्षों के अनुभवों के बिना जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में विजय प्राप्त नहीं की जा सकेगी। यह चीन की अन्दरूनी परिस्थिति है।

यह बात भी इतिहास में बेमिसाल है कि आज की अन्तरराष्ट्रीय स्थिति में, चीन युद्ध में अकेला नहीं है। पहले के युद्ध, चाहे वे चीन में हुए हों या भारत में, अलगाव की स्थिति में लड़े गए थे। ऐसा केवल

आज ही देखने में आता है कि व्यापकता और गहनता की दृष्टि से अभूतपूर्व जन-आन्दोलन सारी दुनिया में उठ चुके हैं या उठ रहे हैं और चीन की सहायता कर रहे हैं। १९१७ की रूसी क्रान्ति को भी अन्तरराष्ट्रीय समर्थन प्राप्त हुआ था, जिससे रूस के मजदूरों और किसानों को विजय प्राप्त हुई ; लेकिन वह समर्थन पैमाने में उतना व्यापक और स्वरूप में उतना गहन न था जितना आज चीन को मिल रहा है। अपनी व्यापकता और गहनता में अभूतपूर्व जन-आन्दोलन आज दुनियाभर में विकसित हो रहे हैं। आज की अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में सोवियत संघ की मौजूदगी खास तौर पर एक महत्वपूर्ण तत्व है और सोवियत संघ निश्चय ही अत्यन्त उत्साह से चीन का समर्थन करेगा ; बीस वर्ष पहले यह चीज बिलकुल मौजूद न थी। इन सब बातों से चीन की अन्तिम विजय के लिए अनिवार्य महत्वपूर्ण परिस्थितियां उत्पन्न हुई हैं और हो रही हैं। यद्यपि बड़े पैमाने पर सीधी सहायता अब भी नहीं मिल रही और वह केवल भविष्य में ही प्राप्त हो सकेगी, लेकिन चीन प्रगतिशील है और वह एक बड़ा देश है, और ये तत्व उसे युद्ध को लम्बा खींचने में तथा अन्तरराष्ट्रीय सहायता को बढ़ावा देने और उसके लिए इन्तजार करने में समर्थ बनाते हैं।

१७. इसके अलावा, परिस्थिति यह भी है कि एक ओर जापान कम क्षेत्रफल, सीमित साधन-स्रोतों, कम जनसंख्या और छोटी फौज वाला एक छोटा देश है, तो दूसरी ओर चीन विशाल क्षेत्रफल, प्रचुर साधन-स्रोतों, बड़ी जनसंख्या और बड़ी फौज वाला एक बड़ा देश है ; इस प्रकार मजबूती और कमजोरी के अन्तर के अलावा, एक पक्ष में छोटे देश, प्रतिगामिता और समर्थन के अभाव तथा दूसरे

पक्ष में बड़े देश, प्रगतिशीलता और समर्थन के बाहुल्य का अन्तर भी है। यही कारण है कि चीन कभी गुलाम नहीं बन सकेगा। यद्यपि मजबूती और कमजोरी के अन्तर का परिणाम यह होगा कि जापान कुछ समय के लिए और कुछ हद तक चीन पर सवारी गांठने में सफल हो जाएगा, यह कि चीन को अनिवार्य रूप से कठिनाइयों के दौर से गुजरना पड़ेगा और यह कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध तुरत निर्णय का युद्ध नहीं, बल्कि दीर्घकालीन युद्ध होगा ; फिर भी एक पक्ष में छोटा देश, प्रतिगामिता और समर्थन का अभाव होने तथा दूसरे पक्ष में बड़ा देश, प्रगतिशीलता और समर्थन का बाहुल्य होने के इस अन्तर का परिणाम यह होगा कि जापान हमेशा के लिए चीन पर सवारी नहीं गांठ सकेगा, बल्कि उसे अनिवार्य व अन्तिम रूप से हार खानी पड़ेगी, जबकि चीन को हरगिज गुलाम नहीं बनाया जा सकेगा और उसे अनिवार्य व अन्तिम रूप से विजय प्राप्त होगी।

१८. अबीसीनिया को गुलाम क्यों बनाया जा सका? पहली बात तो यह है कि वह न केवल एक कमजोर देश था बल्कि एक छोटा देश भी था। दूसरी बात यह है कि वह चीन जैसा प्रगतिशील देश नहीं था, बल्कि दास-व्यवस्था से भूदास-व्यवस्था की ओर बढ़ने वाला एक पुराना देश था ; वहां न पूंजीवाद था और न कोई पूंजीवादी राजनीतिक पार्टी ही, कम्युनिस्ट पार्टी की बात तो दूर रही ; वहां चीन की जैसी फौज भी नहीं थी, आठवीं राह सेना जैसी फौज की बात तो दूर रही। तीसरी बात यह है कि अन्तरराष्ट्रीय समर्थन का इन्तजार करने की सामर्थ्य न होने के कारण उसे अकेले ही लड़ना पड़ा था। चौथी और मुख्य बात यह है कि अबीसीनिया ने

इटली के विरुद्ध युद्ध में निर्देशन सम्बन्धी गलतियां की थीं। इस प्रकार अबीसीनिया को गुलाम बना लिया गया। लेकिन अबीसीनियावासी अब भी काफी बड़े पैमाने पर छापामार युद्ध चला रहे हैं। यदि यह युद्ध जारी रखा जा सका, तो भविष्य में दुनिया की परिस्थिति बदलने पर, अबीसीनियावासी अपनी मातृभूमि को फिर से प्राप्त कर सकेंगे।

१९. राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक यदि अपने इन तर्कों को साबित करने के लिए कि "प्रतिरोध का अर्थ गुलामी होगा" या "युद्ध जारी रखने का परिणाम गुलामी होगा" वर्तमान चीन के मुक्ति आन्दोलनों की असफलता के इतिहास का उदाहरण देंगे, तो हम फिर यही उत्तर देंगे कि अब जमाना बदल चुका है। स्वयं चीन की हालत, जापान की अन्दरूनी हालत और अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति, सभी आज पहले से भिन्न हैं। यह एक गम्भीर बात है कि जापान पहले से अधिक मजबूत है जबकि चीन अपनी अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती अवस्था में परिवर्तन न होने के कारण अब भी काफी कमजोर है। यह भी सच है कि जापान अब भी कुछ दिनों के लिए अपने देश की जनता पर अंकुश रख सकता है और साथ ही चीन पर आक्रमण करने के लिए अन्तरराष्ट्रीय अन्तर-विरोधों का फायदा उठा सकता है। लेकिन युद्ध के लम्बे दौर में यह परिस्थिति लाजमी तौर पर विपरीत दिशा में बदलेगी। आज यह वास्तविकता नहीं है, लेकिन भविष्य में निश्चय ही यह वास्तविकता बन जाएगी। लेकिन राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थकों ने इस बात की उपेक्षा की है। और चीन की हालत क्या है? आज यहां न केवल नए लोग, एक नई राजनीतिक पार्टी, एक नई

फौज और नई जापान-विरोधी नीति मौजूद हैं, जो सबके सब एक दशक से भी ज्यादा समय पहले के मुकाबले भिन्न हैं, बल्कि ये सब अनिवार्य रूप से विकसित भी होंगे। हालांकि चीन के इतिहास में मुक्ति आन्दोलनों को बार-बार आघात पहुंचा है और इसका परिणाम यह हुआ है कि चीन वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के लिए अत्यधिक शक्ति संचित नहीं कर सका – यह एक बेहद खेदजनक ऐतिहासिक सबक है, जिसने यह शिक्षा दी है कि आगे किसी भी क्रान्तिकारी शक्ति को हरगिज नष्ट नहीं किया जाना चाहिए – फिर भी वर्तमान आधार पर, अपनी भारी कोशिशों के जरिए हम अवश्य ही कदम-ब-कदम आगे बढ़ सकेंगे और प्रतिरोध-युद्ध करने की अपनी क्षमता को बढ़ा सकेंगे। इन तमाम प्रयत्नों को महान जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में केन्द्रित हो जाना चाहिए। जहां तक अन्तरराष्ट्रीय समर्थन का ताल्लुक है, यद्यपि प्रत्यक्ष और बड़े पैमाने की सहायता हमें अब भी नहीं मिल रही, लेकिन अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति बुनियादी तौर पर पहले से भिन्न हो गई है, अब प्रत्यक्ष और बड़े पैमाने की सहायता के आसार नजर आने लगे हैं। वर्तमान चीन के अनगिनत मुक्ति आन्दोलनों की असफलताएं मनोगत और वस्तुगत कारणों का ही परिणाम थीं, लेकिन आज की परिस्थिति बिलकुल भिन्न है। आज, यद्यपि अनेक कठिन परिस्थितियों ने – मिसाल के लिए दुश्मन की मजबूती और हमारी कमजोरी ने, और इस बात ने कि दुश्मन की मुश्किलें अभी शुरू ही हुई हैं, जबकि हमारी प्रगति अभी बिलकुल अपर्याप्त है, वगैरह-वगैरह – जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को बहुत कठिन बना दिया है, फिर भी दुश्मन को हराने के लिए अनेक अनुकूल परिस्थितियां मौजूद हैं ; आवश्यकता

सिर्फ इस बात की है कि हम अपने मनोगत प्रयास करें, तब हम मुश्किलों पर काबू पा सकेंगे और विजय प्राप्त कर सकेंगे। ऐसी अनुकूल परिस्थितियां हमारे इतिहास के किसी भी युग में पहले कभी नहीं रहीं ; और यही कारण है कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध उस तरह हरगिज असफल नहीं होगा, जिस तरह अतीत काल के अन्य मुक्ति आन्दोलन हुए थे।

समझौता या प्रतिरोध ? पतन या प्रगति ?

२०. ऊपर अच्छी तरह स्पष्ट किया जा चुका है कि राष्ट्रीय गुलामी का सिद्धान्त निराधार है। लेकिन फिर भी बहुत से लोग ऐसे हैं जो राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक नहीं, बल्कि ईमानदार देशभक्त हैं और वर्तमान परिस्थिति के बारे में बहुत चिन्तित रहते हैं। उन्हें दो बातों की चिन्ता है : जापान से समझौते का डर और राजनीतिक प्रगति की सम्भावना के बारे में सन्देह। इन दो चिन्तनीय समस्याओं की लोगों में व्यापक चर्चा है, लेकिन उनके हल की कोई कुंजी नहीं मिल सकी है। आइए, अब हम जरा इन दो समस्याओं पर विचार करें।

२१. जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, समझौते के सवाल का एक सामाजिक आधार है और जब तक यह सामाजिक आधार बना रहता है, तब तक समझौते का सवाल भी अनिवार्य रूप से उठता रहेगा। लेकिन समझौता कामयाब नहीं होगा। इस बात को साबित करने के लिए यह आवश्यक है कि हम फिर एक बार जापान, चीन और अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति पर विचार करें। पहले

हम जापान के बारे में विचार करेंगे। प्रतिरोध-युद्ध के शुरू में ही हमारा अनुमान था कि एक समय आ सकता है जब समझौते का वातावरण तैयार हो जाए, यानी उत्तरी चीन, च्याङसू और चच्याङ पर अधिकार करने के बाद, दुश्मन सम्भवतः चीन को आत्मसमर्पण के लिए फुसलाने की तिकड़म का सहारा लेगा। बाद में दुश्मन ने सचमुच यह तिकड़म की ; लेकिन संकट जल्दी ही टल गया, इसका एक कारण यह है कि सभी जगहों पर दुश्मन ने बर्बर नीति का सहारा लिया और खुली लूट-खसोट की। यदि चीन आत्मसमर्पण कर देता, तो चीन का हर व्यक्ति एक ऐसा गुलाम बन जाता जिसका अपना कोई देश न रह गया हो। दुश्मन की लूट-खसोट करने की नीति, चीन को गुलाम बनाने की नीति, के दो पहलू हैं, यानी भौतिक पहलू और मानसिक पहलू ; ये दोनों पहलू सभी चीनवासियों पर, नीचे के तबकों के जन-समुदाय पर ही नहीं बल्कि ऊपर के तबकों के सभी सदस्यों पर भी लागू होते हैं ; इसमें शक नहीं कि ऊपर के तबकों के लोगों के साथ जरा नरमी का बरताव होता है, लेकिन फर्क केवल मात्रा का है, उसूल का नहीं। दुश्मन चीन के भीतरी प्रदेश में भी आम तौर से उन्हीं पुराने तरीकों को फिर से लागू कर रहा है जिन्हें उसने उत्तर-पूर्व के तीन प्रान्तों में लागू किया था। भौतिक रूप से वह आम जनता का अनाज और कपड़ा-लत्ता लूट रहा है और इस प्रकार आम जनता को भूख और सर्दी का शिकार बना रहा है ; वह उत्पादन के साधनों की भी लूट मचा रहा है, और इस प्रकार चीन के राष्ट्रीय उद्योग-धन्धों को नष्ट कर रहा है और उन्हें अपने कब्जे में कर रहा है। मानसिक रूप से वह चीनी जनता की राष्ट्रीय चेतना को नष्ट करने की कोशिश कर रहा है। "सूरज" वाले झण्डे के नीचे वह तमाम चीनवासियों को अपना आज्ञाकारी दास और लद्दू जानवरों की तरह बोझा उठाने वाला बना रहा है, तथा उन्हें लेशमात्र भी चीनी राष्ट्रीय भावना रखने की मुमानियत है। दुश्मन द्वारा अपनाई जाने वाली यह बर्बर नीति चीन के और अधिक भीतरी प्रदेशों में भी अपनाई जाएगी। दुश्मन की भूख दानवी रूप ले चुकी है और वह युद्ध बन्द करने को तैयार नहीं है। १६ जनवरी १९३८ को जापानी मंत्रिमण्डल के वक्तव्य में जिस नीति* की घोषणा की गई थी, उसे बड़ी हठधर्मी के साथ अब भी लागू किया जा रहा है, और यह असम्भव है कि उसे न लागू किया जाए ; इस बात से चीनवासियों के हर तबके में रोष फैल गया है। यह सब कुछ जापान के युद्ध के प्रतिगामी और बर्बर स्वरूप के कारण ही उत्पन्न हुआ है — "इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति से बचने का कोई रास्ता नहीं", इसलिए चीनी जनता में जापान के खिलाफ पूर्ण शत्रुता की भावना पैदा हो गई है। हमारा अनुमान है कि भविष्य में एक ऐसा समय आएगा जब दुश्मन चीन को आत्मसमर्पण के लिए फिर एक बार फुसलाने की तिकड़म का सहारा लेगा, और राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक कुछ लोग फिर कुलबुलाने लगेंगे और सम्भवतया वे कुछ विदेशियों (ऐसे लोग ब्रिटेन, अमरीका व फ्रांस में, विशेषकर ब्रिटेन के ऊपरी तबकों में, पाए जा सकते हैं) के साथ उनके सहअपराधी के रूप में गठजोड़ कायम कर लेंगे। लेकिन घटनाओं का आम रुझान आत्मसमर्पण की इजाजत नहीं देगा, क्योंकि युद्ध चलाने में जापान द्वारा बरती गई हठधर्मी और बेमिसाल बर्बरता ने मसले के इस पहलू को निश्चित कर दिया है।

२२. दूसरे, अब हम चीन के बारे में विचार करते हैं। प्रतिरोध-

युद्ध में चीन के डटे रहने में योगदान करने वाले तीन तत्व हैं। इनमें से पहला तत्व कम्युनिस्ट पार्टी है, जो एक ऐसी शक्ति है जिस पर जापान का प्रतिरोध करने में जनता का नेतृत्व करने के लिए भरोसा किया जा सकता है। दूसरा तत्व क्वोमिन्ताङ है, जो ब्रिटेन और अमरीका पर अपनी निर्भरता के कारण तब तक घुटने नहीं टेकेगी जब तक वे उससे ऐसा करने को नहीं कहेंगे। अन्तिम तत्व दूसरी राजनीतिक पार्टियां व ग्रुप हैं, जिनमें से अधिकांश राजनीतिक पार्टियां व ग्रुप समझौते के विरुद्ध हैं और प्रतिरोध-युद्ध का समर्थन करते हैं। इन तीनों तत्वों के बीच एकता कायम होने के बाद जो कोई भी समझौते की कोशिश करेगा, वह देशद्रोहियों के पक्ष में खड़ा हो जाएगा और दूसरे लोगों को अधिकार होगा कि वे उसे दण्ड दें। उन सब लोगों के सामने, जो देशद्रोही नहीं बनना चाहते, सिवाय इसके और कोई चारा नहीं कि वे एकताबद्ध हो जाएं तथा प्रतिरोध-युद्ध को अन्त तक चलाएं ; इसलिए समझौता वास्तव में आसानी से कामयाब नहीं हो सकता।

२३. तीसरे, अब हम अन्तरराष्ट्रीय पहलू पर विचार करते हैं। केवल जापान के संश्रयकारियों और पूंजीवादी देशों के ऊपरी तबकों के कुछ तत्वों को छोड़कर, बाकी सारी दुनिया चीन द्वारा प्रतिरोध के पक्ष में है, न कि समझौते के पक्ष में। यह बात चीन की आशाओं को और पक्का बना देती है। आज देश की सारी जनता यह आशा लगाए हुए है कि अन्तरराष्ट्रीय शक्तियां कदम-ब-कदम चीन को अधिकाधिक सहायता देती जाएंगी। यह बेकार की आशा नहीं है ; खास तौर पर सोवियत संघ के अस्तित्व से चीन को प्रतिरोध-युद्ध में प्रोत्साहन मिलता है। समाजवादी सोवियत संघ ने, जो पहले कभी इतना मजबूत नहीं था, सदा ही चीन के सुख-दुख में हिस्सा बंटाया है। सभी पूंजीवादी देशों के उच्च तबकों के तत्वों, जो केवल मुनाफे के भूखे रहते हैं, के एकदम विपरीत, सोवियत संघ इसे अपना कर्तव्य समझता है कि वह सभी छोटे और कमजोर राष्ट्रों तथा सभी क्रान्तिकारी युद्धों की सहायता करे। इस युद्ध में चीन अकेला नहीं है, यह बात न केवल आम तौर पर उसे प्राप्त होने वाले पूरे अन्तरराष्ट्रीय समर्थन पर, बल्कि विशेष रूप से सोवियत संघ की सहायता पर आधारित है। भौगोलिक दृष्टि से सोवियत संघ और चीन एक दूसरे के निकट हैं। यह बात जापान के संकट को और गहरा बनाती है तथा चीन के प्रतिरोध-युद्ध के लिए सुविधा-जनक स्थिति पैदा करती है। चीन और जापान की भौगोलिक निकटता चीन के प्रतिरोध-युद्ध की कठिनाइयों को बढ़ाती है। लेकिन दूसरी ओर चीन और सोवियत संघ की भौगोलिक निकटता चीन के प्रतिरोध-युद्ध के लिए अनुकूल स्थिति पैदा करती है।

२४. इसलिए, हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं : समझौते का खतरा मौजूद तो है, लेकिन उस पर काबू पाया जा सकता है। दुश्मन भले ही अपनी नीति में थोड़ा-बहुत हेरफेर कर ले, लेकिन फिर भी वह उसे बुनियादी रूप से नहीं बदल सकता। स्वयं चीन में समझौते के लिए सामाजिक आधार मौजूद है, लेकिन बहुमत उन लोगों का है जो समझौते का विरोध करते हैं। अन्तरराष्ट्रीय दृष्टि से भी, शक्तियों का एक हिस्सा समझौते के पक्ष में है, लेकिन मुख्य शक्तियां प्रतिरोध के पक्ष में हैं। इन तीनों तत्वों के योग से समझौते के खतरे पर काबू पाया जा सकता है, और प्रतिरोध-युद्ध को अन्त तक जारी रखा जा सकता है।

२५. अब हम दूसरे सवाल का उत्तर देते हैं। देश के भीतर की राजनीतिक प्रगति, प्रतिरोध-युद्ध को अविचल रूप से चलाते रहने के कार्य के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। राजनीतिक प्रगति जितनी ज्यादा होगी, प्रतिरोध-युद्ध में भी उतनी ही अविचलता आ जाएगी ; प्रतिरोध-युद्ध में जितनी ज्यादा अविचलता आएगी, राजनीतिक प्रगति भी उतनी ही ज्यादा होगी। लेकिन, बुनियादी तौर पर, राजनीतिक प्रगति प्रतिरोध-युद्ध को अविचल रूप से चलाते रहने पर ही निर्भर है। क्वोमिन्ताङ शासन के विभिन्न पहलुओं में गम्भीर खराबियां मौजूद हैं और अनेक वर्षों से जमे हुए इस प्रकार के अवांछनीय तत्व हमारे देशभक्तों के व्यापक समुदाय के लिए बेहद चिन्ता व परेशानी के विषय बने हुए हैं। लेकिन निराशा का कोई कारण नहीं है, क्योंकि प्रतिरोध-युद्ध के अनुभवों ने यह साबित कर दिया है कि चीनी जनता ने पिछले दस महीनों में उतनी प्रगति कर ली है जितनी उसने पिछले अनेक वर्षों में की थी। यद्यपि ऐतिहासिक विरासत के रूप में प्राप्त होने वाला भ्रष्टाचार जनता की प्रतिरोध-शक्ति की बढ़ोतरी की रफ्तार में बहुत गम्भीर रुकावटें डालता है, और इस प्रकार हमारी विजयों का दायरा संकुचित होता जाता है और युद्ध में हमारी हानियां बढ़ती जाती हैं, फिर भी चीन, जापान और दुनिया की सम्पूर्ण परिस्थिति ऐसी है जो चीनी जनता की प्रगति को रुकने नहीं देगी। हां, प्रगति में रुकावट डालने वाले तत्व यानी भ्रष्टाचार की मौजूदगी के कारण, हमारी प्रगति की रफ्तार धीमी जरूर होगी। प्रगति और प्रगति की धीमी रफ्तार वर्तमान परिस्थिति की दो विशेषताएं हैं, और चूंकि प्रगति की धीमी रफ्तार युद्ध की फौरी आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं बैठती, इसलिए यह हमारे देशभक्त लोगों के लिए भारी चिन्ता का विषय बन गई है। लेकिन हम एक क्रान्तिकारी युद्ध के दौर से गुजर रहे हैं, और क्रान्तिकारी युद्ध जहर को मारने वाली एक ऐसी दवा है, जो न केवल दुश्मन के जहर का नाश करती है, बल्कि हमारी अपनी गन्दगी को भी साफ कर डालती है। प्रत्येक न्यायपूर्ण क्रान्तिकारी युद्ध में जबरदस्त शक्ति होती है और वह अनेक चीजों का रूपान्तर कर सकता है या उनका रूपान्तर करने के लिए रास्ता खोल सकता है। चीन-जापान युद्ध चीन और जापान दोनों ही का रूपान्तर करेगा ; अगर चीन जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को अविचल रूप से जारी रखता है और संयुक्त मोर्चे को अविचल रूप से कायम रखता है, तो यह निश्चित है कि पुराने जापान का रूपान्तर एक नए जापान में तथा पुराने चीन का रूपान्तर एक नए चीन में होकर रहेगा, तथा चीन और जापान दोनों ही के जनगण और उनकी अन्य सभी चीजों का रूपान्तर युद्ध के दौरान और उसके बाद हो जाएगा। हमारे लिए यह समझना उचित ही है कि प्रतिरोध-युद्ध और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। यह कहने का कि जापान का भी रूपान्तर हो सकता है, तात्पर्य यह है कि उसके शासकों द्वारा चलाए जा रहे हमलावर युद्ध में उसकी पराजय हो जाएगी और इसके परिणाम-स्वरूप जापानी जनता अपने यहां क्रान्ति ला सकती है। जिस दिन जापानी जनता की क्रान्ति विजयी होगी, वही जापान के रूपान्तर का दिन होगा। यह बात चीन के प्रतिरोध-युद्ध से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है और हमें इस भविष्य को ध्यान में रखना चाहिए।

राष्ट्रीय गुलामी का सिद्धान्त गलत है और शीघ्र विजय का सिद्धान्त भी गलत है

२६. शक्तिशालिता या कमजोरी, बड़े या छोटे आकार, प्रगतिशीलता या प्रतिगामिता और समर्थन के बाहुल्य या उसके अभाव के सिलसिले में दुश्मन और हमारे बीच की परस्पर विरोधी बुनियादी विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन करते समय हमने राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त का खण्डन किया है और यह भी स्पष्ट कर दिया है कि समझौता आसानी से क्यों कामयाब नहीं हो सकता और राजनीतिक प्रगति क्यों सम्भव है। राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक शक्तिशालिता और कमजोरी के बीच के अन्तरविरोध पर अत्यधिक जोर देते हैं और उसे ही बढ़ाकर पूरे मसले का आधार बना देते हैं तथा दूसरे अन्तरविरोधों को नजरअन्दाज कर देते हैं। उनके द्वारा केवल शक्तिशालिता व कमजोरी की तुलना को महत्व दिया जाना उनके एकतरफापन को प्रकट करता है और उनके द्वारा इसी एक पहलू को बढ़ा-चढ़ा कर उसे सम्पूर्ण समस्या के रूप में पेश किया जाना उनकी मनोगतता को जाहिर करता है। इसलिए, सर्वांग रूप से विचार किया जाए, तो उनके सभी तर्क निराधार और गलत हैं। जहां तक उन लोगों का सम्बन्ध है जो न तो राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक हैं और न पक्के निराशावादी, लेकिन तब भी जो किसी विशेष समय और किसी निश्चित पहलू में दुश्मन की शक्तिशालिता और हमारी कमजोरी के फर्क को या देश के भीतर भ्रष्टाचार की अवस्था को देखकर उलझन में पड़ जाते हैं और जिनमें कुछ समय के लिए निराशा की भावना पैदा हो जाती

है, उन्हें भी हमें यह बता देना चाहिए कि उनका दृष्टिकोण भी एकतरफापन व मनोगतता के रुझान के कारण पैदा होता है। लेकिन उन्हें सुधारना अपेक्षाकृत अधिक आसान है और यदि उन्हें स्मरण दिलाया जाए, तो वे बात को समझ जाते हैं, क्योंकि वे देशभक्त हैं और उनकी गलती केवल तात्कालिक है।

२७. दूसरी ओर, शीघ्र विजय के सिद्धान्त के समर्थक भी उसी प्रकार गलती पर हैं। वे या तो दुश्मन की शक्तिशालिता और हमारी कमजोरी के अन्तरविरोध को बिलकुल भूल जाते हैं, और केवल दूसरे अन्तरविरोधों को ही याद रखते हैं, या चीन की अनुकूल स्थितियों को वास्तविकता की तमाम सीमाएं पार करके बेहद ज्यादा बढ़ा-चढ़ा कर आंकते हैं और उन्हें बिलकुल दूसरे ही रूप में पेश करते हैं, या हठधर्मी के साथ सिर्फ एक बार की और सिर्फ एक स्थान की शक्तिशालिता व कमजोरी की स्थिति को सम्पूर्ण स्थिति मान लेते हैं, जैसा कि इस कहावत में कहा गया है : "आंख के सामने की एक पत्ती समूचे थाएशान पर्वत को ओझल कर देती है।" एक शब्द में, उन लोगों के अन्दर इस तथ्य को मानने का साहस नहीं है कि दुश्मन मजबूत है और हम कमजोर हैं। अक्सर वे इस बात को मानने से इनकार करते हैं, और इस प्रकार सच्चाई के एक पहलू को मानने से इनकार कर देते हैं। उनमें यह मानने का साहस भी नहीं है कि हमारी अनुकूल स्थितियों की भी एक सीमा है, और इस प्रकार वे सच्चाई के एक अन्य पहलू को मानने से भी इनकार कर देते हैं। फलतः वे छोटी या बड़ी गलतियां करते हैं, और यहां फिर एक बार गलतियों का कारण उनकी मनोगतता और एकतरफापन ही है। इन मित्रों के इरादे नेक हैं और ये लोग भी देशभक्त हैं। लेकिन हालांकि "इन

महानुभावों की आकांक्षाएं बड़ी ऊंची हैं", फिर भी इनका दृष्टिकोण गलत है, तथा इनके दृष्टिकोण के मुताबिक काम करने का मतलब होगा पत्थर की दीवार से अपना सिर टकराना। कारण यह कि यदि किसी का मूल्यांकन वास्तविकता के अनुरूप न हो, तो उसकी कार्यवाही का अपेक्षित परिणाम नहीं निकलेगा ; यदि कोई इस बात को नजरअन्दाज करके जबरदस्ती कार्यवाही करेगा, तो उसकी फौज को हार खानी पड़ेगी और देश गुलामी की जंजीरों में जकड़ जाएगा ; परिणाम वही होगा जो पराजयवादियों का होता है। इसलिए शीघ्र विजय के सिद्धान्त से भी काम नहीं बनेगा।

२८. तो क्या हम राष्ट्रीय गुलामी के खतरे से इनकार करते हैं ? नहीं, हम ऐसा नहीं करते। हम मानते हैं कि चीन के सामने दो ही सम्भावित भविष्य मौजूद हैं – मुक्ति या गुलामी – और इन दोनों के बीच भारी टकराव है। हमारा कार्य है मुक्ति प्राप्त करना और गुलामी से बचना। मुक्ति के लिए शर्तें हैं चीन की प्रगति, जो बुनियादी शर्त है, तथा दुश्मन की मुश्किलें और अन्तरराष्ट्रीय समर्थन। हम राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थकों से भिन्न मत रखते हैं; वस्तुगत और सर्वांगीण दृष्टिकोण अपनाते हुए, हम राष्ट्रीय गुलामी और मुक्ति की दोनों सम्भावनाओं को स्वीकार करते हैं, इस बात पर जोर देते हैं कि मुक्ति की अत्यधिक सम्भावना है, उसे प्राप्त करने के लिए आवश्यक शर्तों को बताते हैं, और उन शर्तों को हासिल करने के लिए प्रयत्न करते हैं। दूसरी तरफ, राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक मनोगतता और एकतरफापन को अपनाते हुए केवल एक ही सम्भावना को, राष्ट्रीय गुलामी की सम्भावना को ही मानते हैं, और वे मुक्ति की सम्भावना को मानने

से इनकार करते हैं, मुक्ति प्राप्त करने के लिए आवश्यक शर्तों को बताने या उन्हें प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होने की बात तो दूर रही। समझौते की प्रवृत्ति और भ्रष्टाचार की मौजूदगी को मानते हुए भी हम दूसरी प्रवृत्तियों और वस्तुओं को भी देखते हैं और बताते हैं कि दूसरी प्रवृत्तियां और वस्तुएं कदम-ब-कदम समझौते की प्रवृत्ति और भ्रष्टाचार पर हावी होती जाएंगी और इन दोनों में अभी भी जोरदार टकराव हो रहा है। इसके अलावा, हम स्वस्थ प्रवृत्तियों और वस्तुओं को हासिल करने के लिए आवश्यक शर्तों को बताते हैं तथा समझौते की प्रवृत्ति पर काबू पाने और भ्रष्टाचार की हालत को बदलने के लिए प्रयत्न करते हैं। इसलिए हम लोग जरा भी हिम्मत नहीं हारते, जबकि निराशावादी लोग इसके ठीक विपरीत होते हैं।

२९. यह बात भी नहीं कि हम शीघ्र विजय नहीं चाहते ; हर कोई इस बात के पक्ष में होगा कि "दानवों" को रातोंरात बाहर खदेड़ दिया जाए। लेकिन हम यह बता देते हैं कि किन्हीं विशेष परिस्थितियों के बिना शीघ्र विजय महज एक खाम-खयाली है, वह वस्तुगत रूप से मौजूद नहीं है ; वह केवल मृग-मरीचिका और झूठा सिद्धान्त है। इसलिए, दुश्मन की और अपनी तमाम परिस्थितियों का वस्तुगत और सर्वांगीण मूल्यांकन करने के बाद हम बताते हैं कि अन्तिम विजय प्राप्त करने का एकमात्र रास्ता है दीर्घकालीन युद्ध की रणनीति पर अमल करना, और हम शीघ्र विजय के बिलकुल निराधार सिद्धान्त को नामंजूर करते हैं। हम इस बात के पक्ष में हैं कि अपनी अन्तिम विजय के वास्ते सभी आवश्यक परिस्थितियों को पैदा करने के लिए हमें प्रयत्न करना

चाहिए ; और जितनी ज्यादा से ज्यादा और जल्दी से जल्दी ये परिस्थितियां पैदा हो जाएंगी, हमारी विजय की भी उतनी ही ज्यादा गारन्टी हो जाएगी और हम उसे उतनी ही जल्दी प्राप्त कर लेंगे। हमारा विश्वास है कि केवल यही तरीका युद्ध की अवधि को छोटा कर सकता है ; और हम शीघ्र विजय के सिद्धान्त को नामंजूर करते हैं, जो सिर्फ कोरी लफ्फाजी और सस्ती कामयाबी हासिल करने की कोशिश है।

दीर्घकालीन युद्ध क्यों ?

३०. अब हम दीर्घकालीन युद्ध की समस्या पर विचार करते हैं। "दीर्घकालीन युद्ध क्यों ?" इस सवाल का सही उत्तर केवल चीन और जापान के बीच के सभी बुनियादी तुलनात्मक तत्वों के आधार पर ही दिया जा सकता है। मिसाल के लिए, यदि हम केवल इतना ही कहें कि दुश्मन एक मजबूत साम्राज्यवादी देश है, जबकि हम एक कमजोर, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती देश हैं, तो इस बात का खतरा है कि हम राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के पचड़े में फंस जाएं। क्योंकि सैद्धान्तिक रूप से और व्यावहारिक रूप से, कोई युद्ध केवल इसलिए दीर्घकालीन नहीं बन सकता कि किसी कमजोर देश का पाला किसी शक्तिमान देश से पड़ गया हो। और न ही वह केवल इसलिए दीर्घकालीन बन सकता है कि किसी छोटे देश का मुकाबला कोई बड़ा देश करता हो, या प्रतिगामिता का मुकाबला प्रगतिशीलता करती हो, अथवा समर्थन के अभाव का मुकाबला समर्थन का बाहुल्य करता हो। किसी बड़े देश द्वारा छोटे देश पर

और किसी छोटे देश द्वारा बड़े देश पर अधिकार किया जाना – ये दोनों ही बातें होती रहती हैं। यह अक्सर देखने में आता है कि एक प्रगतिशील किन्तु कमजोर देश को एक बड़े किन्तु प्रतिगामी देश द्वारा नष्ट कर दिया जाता है और यही बात उन तमाम चीजों पर भी लागू होती है जो प्रगतिशील होते हुए भी शक्तिशाली नहीं हैं। समर्थन का बाहुल्य या अभाव एक महत्वपूर्ण किन्तु सहायक तत्व है और उसके कारगर होने की सीमा दुश्मन और हमारे पक्ष के बुनियादी तत्वों पर निर्भर है। इसलिए जब हम यह कहते हैं कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध है, तो हमारा यह निष्कर्ष एक ऐसा निष्कर्ष है जिसे हमने दुश्मन तथा हमारे पक्ष के तमाम तत्वों के अन्तर-सम्बन्धों के आधार पर निकाला है। दुश्मन शक्तिशाली है और हम कमजोर हैं, इसलिए हमारे सामने गुलामी का खतरा मौजूद है। लेकिन दूसरे मामलों में दुश्मन के अन्दर खामियां हैं और हमारे पक्ष में अनुकूल स्थितियां हैं। हमारी कोशिशों से दुश्मन की अनुकूल स्थिति में कमी की जा सकती है और उसकी खामियों को बढ़ाया जा सकता है। दूसरी ओर हम अपनी कोशिशों से अपनी अनुकूल स्थितियों को बढ़ा सकते हैं और अपनी खामी को दूर कर सकते हैं। इसलिए हम अन्त में विजय प्राप्त कर सकेंगे और गुलामी से बच सकेंगे, जबकि दुश्मन को अन्त में हार खानी पड़ेगी और वह अपनी समूची साम्राज्यवादी व्यवस्था को भहराकर गिरने से बचा नहीं सकेगा।

३१. जब दुश्मन के पास सिर्फ एक ही अनुकूल स्थिति और बाकी सब खामियां हैं, तथा हमारी सिर्फ एक ही खामी और बाकी सब अनुकूल स्थितियां हैं, तो फिर क्या वजह है कि दुश्मन और हमारे

बीच बराबरी की स्थिति पैदा होने के बदले दुश्मन के बरतर होने और हमारे कमतर होने की वर्तमान स्थिति पैदा हो गई है? स्पष्ट है कि इस समस्या के प्रति हम इस प्रकार का औपचारिक रुख नहीं अपना सकते। तथ्य यह है कि दुश्मन की शक्ति और हमारी शक्ति में इस समय इतना ज्यादा अन्तर है कि एक ओर दुश्मन की खामियों का न तो उसकी शक्तिशालिता को बदलने की आवश्यक मात्रा तक विकास हुआ है और न फिलहाल हो सकता है, और दूसरी ओर हमारी अनुकूल स्थितियों का न तो हमारी कमजोरी की क्षति-पूर्ति करने की आवश्यक मात्रा तक विकास हुआ है और न फिल-हाल हो सकता है। इसलिए अभी सन्तुलन नहीं हो सकता, बल्कि असन्तुलन ही मौजूद रहता है।

३२. हालांकि प्रतिरोध-युद्ध चलाने और संयुक्त मोर्चे को कायम रखने में अविचल रहने के लिए हमारे द्वारा किए गए प्रयत्नों के कारण दुश्मन की शक्तिशालिता और बरतरी तथा हमारी कमजोरी और कमतरी की स्थिति में थोड़ा परिवर्तन हुआ है, तो भी अभी कोई बुनियादी परिवर्तन नहीं हुआ। इसलिए युद्ध की एक खास मंजिल में कुछ हद तक दुश्मन की विजय होगी और कुछ हद तक हमें हार का सामना करना पड़ेगा। लेकिन ऐसा क्यों है कि दुश्मन की जीत और हमारी हार, दोनों ही एक निश्चित मंजिल में एक निश्चित हद तक महदूद होती हैं, और उन्हें पूर्ण विजय या पूर्ण पराजय की स्थिति तक नहीं पहुंचाया जा सकता? क्योंकि, पहली बात यह है कि शुरू से ही दुश्मन की शक्तिशालिता और हमारी कमजोरी एक सापेक्ष वस्तु रही है, निरपेक्ष वस्तु नहीं, और दूसरी बात यह है कि प्रतिरोध-युद्ध को चलाने और संयुक्त मोर्चे को कायम रखने की हमारी

अविचल कोशिशों ने इसे और भी सापेक्ष बना दिया है। पहले की स्थिति से तुलना की जाए, तो यद्यपि दुश्मन अब भी शक्तिशाली है, फिर भी प्रतिकूल तत्वों के कारण उसकी शक्तिशालिता में कमी आ गई है, लेकिन उस आवश्यक मात्रा में नहीं जिससे कि उसकी बरतरी खत्म हो जाए; दूसरी ओर, यद्यपि हम अब भी कमजोर हैं, फिर भी अनुकूल तत्वों के कारण हमारी कमजोरी की क्षतिपूर्ति हुई है, लेकिन यहां भी उस आवश्यक मात्रा में नहीं जिससे कि हमारी कमतरी बदल जाए। इस प्रकार एक ऐसी स्थिति बन गई है कि दुश्मन सापेक्ष रूप से शक्तिशाली और हम सापेक्ष रूप से कमजोर हैं, दुश्मन सापेक्ष बरतरी की स्थिति में है और हम सापेक्ष कमतरी की स्थिति में हैं। दोनों ही पक्षों में शक्तिशालिता और कमजोरी, बरतरी और कमतरी की स्थिति कभी निरपेक्ष नहीं रही, इसके अलावा हमारे द्वारा प्रतिरोध-युद्ध चलाने और संयुक्त मोर्चे को कायम रखने में अविचल रहने के लिए किए गए प्रयत्नों के परिणामस्वरूप दुश्मन और हममें शक्तिशालिता और कमजोरी, बरतरी और कमतरी की पहले की स्थिति में और अधिक परिवर्तन हो गया है। इसलिए दुश्मन की जीत और हमारी हार एक निश्चित मंजिल में एक निश्चित हद तक महदूद रहती हैं और इसलिए यह युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध बन जाता है।

३३. लेकिन परिस्थितियां लगातार बदल रही हैं। युद्ध के दौरान, यदि हम सही फौजी व राजनीतिक कार्यनीति अपनाएंगे, उसूली गलतियों से बचते रहेंगे तथा भरपूर प्रयत्न जारी रखेंगे, तो जैसे-जैसे युद्ध लम्बा खिंचता जाएगा, वैसे-वैसे दुश्मन के प्रतिकूल तत्व और हमारे अनुकूल तत्व बढ़ते जाएंगे, और इसका अनिवार्य परि-

णाम यह होगा कि दुश्मन की शक्तिशालिता और हमारी कमजोरी की पहले की स्थिति में लगातार परिवर्तन होता रहेगा तथा इसलिए दोनों पक्षों की बरतरी और कमतरी की स्थिति में भी परिवर्तन होता रहेगा। जब एक नई मंजिल आ जाएगी, तो दोनों पक्षों की तुलनात्मक शक्ति और तुलनात्मक स्थिति में एक भारी परिवर्तन हो जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप दुश्मन की हार और हमारी जीत होगी।

३४. फिलहाल, दुश्मन अपनी शक्तिशालिता का फायदा जैसे-तैसे उठा सकता है और हमारे प्रतिरोध-युद्ध ने अभी तक उसे बुनियादी रूप से कमजोर नहीं बनाया। उसके जन-बल और भौतिक साधन-स्रोतों का अभाव अभी इतना ज्यादा नहीं हुआ है कि उसका हमला ही रुक जाए; इसके विपरीत, उसके पास मौजूद जन-बल और भौतिक साधन-स्रोत एक निश्चित हद तक उसके हमले को जारी रख सकते हैं। एक ऐसे तत्व ने जिसके कारण जापान में वर्ग-विरोध तीव्र हो जाता है और चीनी राष्ट्र का प्रतिरोध तेज हो जाता है, यानी उसके युद्ध की प्रतिगामिता और बर्बरता के तत्व ने, अभी ऐसी स्थिति पैदा नहीं की जिससे उसके आगे बढ़ने में बुनियादी रूप से बाधा खड़ी हो जाए। दुश्मन का अन्तरराष्ट्रीय अलगाव बढ़ता जा रहा है, लेकिन वह अभी भी पूर्ण अलगाव की स्थिति में नहीं पहुंचा। उन अनेक देशों में, जिन्होंने हमें सहायता का वचन दिया है, गोला-बारूद और युद्ध-सामग्री का व्यापार करने वाले पूंजीपति अभी भी केवल मुनाफों के लिए जापान को बड़ी मात्रा में युद्ध-सामग्री सप्लाई कर रहे हैं,[८] और उनकी सरकारें[९] अभी भी सोवियत संघ के साथ जापान के विरुद्ध अमली कदम उठाने की इच्छुक नहीं हैं। इन सब बातों से यह नतीजा

निकलता है कि हमारे प्रतिरोध-युद्ध में शीघ्र विजय प्राप्त नहीं की जा सकती और यह एक दीर्घकालीन युद्ध ही हो सकता है। जहां तक चीन का सम्बन्ध है, यद्यपि प्रतिरोध-युद्ध के पिछले दस महीनों के अन्दर फौजी, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में जाहिर होने वाली उसकी कमजोरी की स्थिति कुछ हद तक सुधर गई है, फिर भी वह उस आवश्यक मात्रा से काफी दूर है जिससे कि दुश्मन के आक्रमण को रोका जा सके और हमारे प्रत्याक्रमण की तैयारी की जा सके। इसके अलावा, परिमाण की दृष्टि से हमें कुछ हानियां भी उठानी पड़ी हैं। यद्यपि हमारे सभी अनुकूल तत्वों का सकारात्मक असर पड़ रहा है, तो भी दुश्मन का आक्रमण रोक पाने और हमारे प्रत्याक्रमण की तैयारी कर सकने के लिए अभी हमें बहुत प्रयत्न करने की जरूरत होगी। देश के अन्दर भ्रष्टाचार का खात्मा करना और प्रगति में तेजी लाना, देश के बाहर जापान-पक्षीय शक्तियों पर अंकुश लगाना और जापान-विरोधी शक्तियों का विस्तार करना – ये तमाम बातें अभी भी असलियत नहीं बन पाई हैं। इन सब बातों से यही नतीजा निकलता है कि अपने युद्ध में हमें विजय शीघ्र नहीं प्राप्त हो सकती और यह युद्ध केवल दीर्घकालीन युद्ध ही हो सकता है।

दीर्घकालीन युद्ध की तीन मंजिलें

३५. चूंकि चीन-जापान युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध है और इसमें अन्तिम विजय चीन की ही होगी, इसलिए यह सोचना युक्ति-संगत होगा कि यह दीर्घकालीन युद्ध तीन मंजिलों से गुजरेगा।

पहली मंजिल दुश्मन द्वारा रणनीतिक आक्रमण और हमारे द्वारा रणनीतिक रक्षा की है। दूसरी मंजिल दुश्मन द्वारा अपनी उपलब्धियों की रणनीतिक हिफाजत और हमारे द्वारा प्रत्याक्रमण की तैयारियों की है। तीसरी मंजिल हमारे द्वारा रणनीतिक प्रत्याक्रमण और दुश्मन द्वारा रणनीतिक रूप से पीछे हटने की है। इन तीन मंजिलों की ठोस परिस्थितियों के बारे में भविष्यवाणी करना असम्भव है, लेकिन वर्तमान परिस्थिति के प्रकाश में युद्ध के कुछ प्रमुख रुझानों को बताया जा सकता है। वस्तुगत घटना-प्रवाह बहुत अधिक समृद्ध और परिवर्तनशील होगा और उसे अनेक टेढ़ेमेढ़े रास्ते तय करने होंगे, इसलिए कोई भी आदमी चीन-जापान युद्ध की "जन्मपत्री" नहीं बना सकता ; फिर भी युद्ध के रणनीतिक निर्देशन के लिए उसके रुझानों का मोटा खाका तैयार करना आवश्यक है। हालांकि यह हो सकता है कि इस खाके का भविष्य की घटनाओं के साथ ठीक-ठीक मेल न बैठे और उनके द्वारा इस खाके में हेरफेर भी किया जाए, लेकिन फिर भी दीर्घकालीन युद्ध के सुदृढ़ और सोद्देश्य रणनीतिक निर्देशन के लिए अब भी यह खाका तैयार करना जरूरी है।

३६. पहली मंजिल : यह मंजिल अभी समाप्त नहीं हुई है। दुश्मन का इरादा क्वाङचओ, ऊहान और लानचओ पर अधिकार करना और इन तीनों स्थानों के बीच सम्पर्क कायम करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दुश्मन को कम से कम ५० डिवीजनों या लगभग १५ लाख सैनिकों को भेजना होगा, डेढ़-दो बरस का समय लगाना होगा और १००० करोड़ येन से अधिक मुद्रा फूंकनी होगी। इतना अन्दर घुसने पर दुश्मन को अत्यन्त भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा, जिसके दुश्मन के लिए इतने विनाशकारी

परिणाम होंगे जिनकी वह शायद कल्पना भी नहीं कर सकता। क्वाङचओ-हानखओ रेलवे-लाइन और शीआन-लानचओ राजमार्ग पर पूरी तरह अधिकार करने के लिए दुश्मन को अत्यन्त खतरनाक युद्ध चलाना होगा, तब भी यह निश्चित नहीं कि वह अपने उद्देश्य में पूर्णतया सफल हो जाए। लेकिन हमारी फौजी कार्यवाही की योजना ऐसी होनी चाहिए कि इस पूर्वानुमान के आधार पर कि दुश्मन इन तीनों स्थानों और इनसे भी कुछ आगे के क्षेत्रों पर कब्जा कर लेगा और उनके बीच सम्पर्क कायम कर लेगा, एक दीर्घकालीन युद्ध चलाने के लिए अपना सैन्य-विन्यास किया जाए, जिससे कि यदि दुश्मन ऐसा करे भी, तो भी हम उसका मुकाबला कर सकें। इस मंजिल में हमारे युद्ध का मुख्य रूप चलायमान लड़ाई ही होना चाहिए जिसे छापामार लड़ाई और मोर्चेबद्ध लड़ाई द्वारा सहायता दी जाए। इस मंजिल के पहले दौर में, क्वोमिन्ताङ के फौजी अधिकारियों की मनोगत गलती के कारण मोर्चेबद्ध लड़ाई को प्रमुख स्थान दिया गया, लेकिन फिर भी समूची मंजिल की दृष्टि से उसका सहायक स्थान है। इस मंजिल में चीन ने एक व्यापक संयुक्त मोर्चा कायम किया है और अभूतपूर्व एकता कायम की है। अधिक प्रयत्नों के बिना तुरत निर्णय की अपनी योजना पूरी कर लेने और समूचे चीन को जीत लेने के मकसद से, हालांकि दुश्मन ने चीन को आत्मसमर्पण के लिए फुसलाने के वास्ते नीचतापूर्ण और लज्जाजनक उपायों का सहारा लिया है और लेता रहेगा, लेकिन अभी तक वह असफल रहा है और आगे भी सफल नहीं हो पाएगा। इस मंजिल में, काफी भारी हानियां उठाने के बावजूद, चीन ने काफी भारी प्रगति की है, जो दूसरी

मंजिल में प्रतिरोध-युद्ध जारी रखने के लिए मुख्य आधार बनेगी। इस मंजिल में सोवियत संघ ने चीन को भारी सहायता दी है। हमारे शत्रु-पक्ष का हाल यह है कि उसकी सेनाओं का मनोबल गिरने लगा है, इस मंजिल के बिचले दौर में उसकी स्थल-सेना के हमलों की तेजी, आरम्भिक दौर की तुलना में कम हो गई है और अन्तिम दौर में तो वह और भी कम हो जाएगी। उसकी वित्तीय और आर्थिक स्थिति में तंगी के चिन्ह दिखाई पड़ने लगे हैं; जापान की जनता और सेनाओं में युद्ध से ऊबने के लक्षण दिखाई पड़ने लगे हैं; और युद्ध का संचालन करने वाले गुट में "युद्ध-कुण्ठाएं" दिखाई पड़ने लगी हैं तथा युद्ध के भविष्य के बारे में निराशा बढ़ रही है।

३७. दूसरी मंजिल: इस मंजिल को हम रणनीतिक ठहराव की मंजिल कह सकते हैं। पहली मंजिल के अन्त में, दुश्मन को अपनी फौजों के नाकाफी होने और हमारे दृढ़ प्रतिरोध के कारण, अपने सीमित रणनीतिक आक्रमण की अन्तिम सीमा-रेखा निश्चित करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा; इस सीमा-रेखा पर पहुंचकर वह अपने रणनीतिक आक्रमण को रोक देगा और अपने अधिकृत प्रदेशों की हिफाजत करने की मंजिल में प्रवेश करेगा। इस मंजिल में दुश्मन उन प्रदेशों पर जिन पर उसने कब्जा जमा लिया है, अपना अधिकार बनाए रखने के लिए प्रयत्नशील रहेगा, और उन प्रदेशों को अपने क्षेत्र बनाने के लिए कठपुतली सरकारों की स्थापना के धूर्ततापूर्ण उपाय का सहारा लेगा और साथ ही चीनी जनता की बेअन्त लूट-खसोट करेगा; लेकिन यहां भी उसे जोरदार छापामार युद्ध का सामना करना होगा। चूंकि दुश्मन अपने पृष्ठभाग में गैरिजन सेनाएं रख नहीं पाता है, इसलिए इस स्थिति का फायदा

उठाकर पहली मंजिल में छापामार युद्ध बड़े पैमाने पर फैल जाएगा और बहुत से आधार-क्षेत्र कायम हो जाएंगे, जिनकी वजह से दुश्मन द्वारा अपने अधिकृत प्रदेशों की हिफाजत करने के हेतु किए जाने वाले प्रयत्नों के लिए गम्भीर खतरा पैदा हो जाएगा; अतः दूसरी मंजिल में भी बड़े पैमाने पर युद्ध होगा। इस मंजिल में हमारी फौजी कार्यवाही का मुख्य रूप होगा छापामार लड़ाई और सहायक रूप होगा चलायमान लड़ाई। उस समय भी चीन अपने पास एक बड़ी नियमित सेना रखेगा, लेकिन तब भी उसके लिए फौरन रणनीतिक प्रत्याक्रमण करना कठिन होगा, क्योंकि एक ओर तो दुश्मन अपने कब्जे में मौजूद बड़े-बड़े शहरों में और मुख्य संचार-पंक्तियों पर रणनीतिक बचाव की नीति अपनाएगा, और दूसरी ओर चीन तकनीक की दृष्टि से अभी पर्याप्त रूप से लैस नहीं हो सका होगा। मोर्चे की अगली पंक्तियों में रक्षा के काम में जुटी फौजों को छोड़कर, हमारी सेना के एक बड़े भाग को अपेक्षाकृत बिखरे हुए जत्थों के रूप में दुश्मन के पृष्ठभाग में भिड़ा दिया जाएगा, और ये फौजें उन क्षेत्रों का सहारा लेकर जिन पर अभी दुश्मन ने कब्जा नहीं किया, और जन-समुदाय की सशस्त्र शक्तियों के साथ तालमेल कायम करके, शत्रु द्वारा अधिकृत प्रदेशों के विरुद्ध व्यापक और जोरदार छापामार युद्ध चलाएंगी और जहां तक सम्भव होगा, दुश्मन को एक जगह टिकने नहीं देंगी ताकि चलायमान लड़ाई में उसे नष्ट कर दिया जा सके, जैसा कि आजकल शानशी प्रान्त में हो रहा है। दूसरी मंजिल में निर्मम युद्ध होगा और बहुत से स्थानों को गम्भीर बरबादी का सामना करना पड़ेगा। लेकिन छापामार युद्ध में हमें विजय प्राप्त होगी और यदि यह युद्ध अच्छी तरह चलाया

गया तो सम्भवतः दुश्मन के पास उसके द्वारा अधिकृत प्रदेशों का केवल लगभग एक-तिहाई भाग ही बच जाए, शेष लगभग दो-तिहाई भाग हमारे हाथ में रह जाए ; यह दुश्मन के लिए एक भारी पराजय और चीन के लिए एक महान विजय होगी। तब तक दुश्मन द्वारा अधिकृत समूचा प्रदेश तीन श्रेणियों में बंट जाएगा : पहली, दुश्मन के अड्डे ; दूसरी, छापामार युद्ध के लिए हमारे आधार-क्षेत्र ; और तीसरी, वे छापामार इलाके जिनके लिए दोनों ही पक्ष छीना-झपटी करेंगे। यह मंजिल कितने दिनों तक चलेगी, यह दुश्मन की और हमारी तुलनात्मक शक्ति में होने वाली बढ़ती और घटती की मात्रा तथा अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में होने वाले परिवर्तनों से निश्चित होगा ; आम तौर पर, हमें एक ऐसी स्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए कि यह मंजिल काफी लम्बे अरसे तक चलेगी, और यह प्रयत्न करना चाहिए कि हम इस कठिन मंजिल को सही-सलामत पार कर जाएं। चीन के लिए यह बहुत ही कष्टदायी दौर होगा ; उसे अपनी आर्थिक कठिनाइयों तथा गद्दारों की तोड़फोड़ की कार्यवाहियों के रूप में दो बहुत बड़ी समस्याओं का सामना करना पड़ेगा। चीन के संयुक्त मोर्चे को तोड़ने की दुश्मन भरपूर कोशिश करेगा और दुश्मन द्वारा अधिकृत सभी प्रदेशों के विभिन्न गद्दार संगठन आपस में मिलकर तथाकथित "संयुक्त सरकार" का रूप ले लेंगे। स्वयं हमारी कतारों में, बड़े शहरों के हमारे हाथ से निकल जाने और युद्ध की कठिनाइयों के कारण, ढुलमुल तत्व जोरशोर से समझौते के सिद्धान्त का ढोल पीटने लगेंगे और निराशा की भावना गम्भीर रूप से बढ़ जाएगी। तब हमारे सामने कार्य होंगे युद्ध को एकदिल से और अत्यन्त अविचल रूप

से चलाते रहने के लिए समूची जनता को गोलबन्द करना, संयुक्त मोर्चे को विस्तृत और सुदृढ़ बनाना, निराशावाद और समझौते के हर किस्म के सिद्धान्तों का सफाया कर देना, कठोर संघर्ष के संकल्प को बढ़ाना और नई युद्धकालीन नीतियों को लागू करना, तथा इस प्रकार यात्रा की इस कठिन मंजिल को सही-सलामत पार कर लेना। इस दूसरी मंजिल में हमें तमाम देश का आवाहन करना होगा कि वह दृढ़ता के साथ संयुक्त सरकार को बनाए रखे, हमें फूट का विरोध करना होगा, अपने युद्ध-कौशल को योजनाबद्ध रूप से उन्नत करना होगा, सशस्त्र सेनाओं में सुधार करना होगा, तमाम जनता को गोलबन्द करना होगा और प्रत्याक्रमण की तैयारी करनी होगी। इस मंजिल में अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति जापान के लिए और भी प्रतिकूल बन जाएगी, तथा यद्यपि तथाकथित "सम्पन्न कार्यों" के सामने चेम्बरलेन की तरह सर झुका देने वाले "यथार्थ-वाद" की चर्चा हो सकती है, फिर भी मुख्य अन्तरराष्ट्रीय शक्तियां चीन की और अधिक सहायता करने लगेंगी। दक्षिण-पूर्वी एशिया और साइबेरिया के सामने जापान का खतरा पहले से भी अधिक गम्भीर हो जाएगा और हो सकता है कि एक नया युद्ध ही छिड़ जाए। जहां तक जापान का सवाल है, उसकी बीसियों डिवीजनें चीन में बुरी तरह फंस जाएंगी। बड़े पैमाने के छापामार युद्ध और जापान-विरोधी जन-आन्दोलन की वजह से यह विशाल जापानी फौज थककर चूर हो जाएगी, उसकी तादाद में भारी कमी हो जाएगी, तथा घर लौटने की इच्छा, युद्ध से ऊब जाने की भावना और यहां तक कि युद्ध-विरोधी भावना में बढ़ोतरी होकर उसका मनोबल नष्ट हो जाएगा। यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि जापान

को चीन की लूट-खसोट करने से कुछ भी हासिल नहीं होगा, फिर भी चूंकि उसके पास पूंजी की कमी है और छापामार युद्ध उसे तंग करता है, इसलिए शीघ्र अथवा भारी नतीजे हासिल करना उसके लिए असम्भव है। समूचे युद्ध के दौरान यह दूसरी मंजिल एक संक्रमणकालीन मंजिल होगी और यह युद्ध का सबसे कठिन दौर होगा, लेकिन साथ ही यह दौर परिवर्तन की धुरी भी होगा। चीन एक स्वतंत्र देश बनेगा अथवा उपनिवेश में परिणत हो जाएगा, इस बात का निर्णय पहली मंजिल में बड़े-बड़े शहरों को सुरक्षित रखने या खो बैठने से नहीं, बल्कि दूसरी मंजिल में तमाम राष्ट्र द्वारा किए गए प्रयत्नों की मात्रा से होगा। यदि हम प्रतिरोध-युद्ध, संयुक्त मोर्चे और दीर्घकालीन युद्ध पर अविचल रूप से कायम रह सके, तो चीन इस मंजिल में अपनी कमजोरी को दूर करके शक्तिशाली बनने में समर्थ हो जाएगा। चीन के प्रतिरोध-युद्ध के नाटक के तीन अंकों में से यह दूसरा अंक होगा। और सभी अभिनेताओं के प्रयत्नों से नाटक का सबसे शानदार अन्तिम अंक बेहतरीन तरीके से खेला जा सकेगा।

३८. तीसरी मंजिल : यह अपने खोए हुए प्रदेशों को फिर से हासिल करने के लिए हमारे प्रत्याक्रमण की मंजिल है। चीन के खोए हुए प्रदेशों को फिर से प्राप्त करना मुख्यतया उसकी अपनी शक्ति पर निर्भर होगा, उस शक्ति पर जिसका पिछली मंजिल में पोषण हुआ है और जो इस मंजिल में लगातार बढ़ती जाएगी। लेकिन चीन के लिए केवल अपनी ही शक्ति पर निर्भर रहना काफी नहीं होगा, और हमें अन्तरराष्ट्रीय शक्तियों के समर्थन और जापान में होने वाले परिवर्तनों की सहायता पर भी निर्भर रहना होगा, वरना हम जीत नहीं

पाएंगे ; इसलिए चीन के अन्तरराष्ट्रीय प्रचार और उसकी राजनयिक गतिविधियों से सम्बन्धित कार्य और भी अधिक बढ़ जाता है। तीसरी मंजिल में हमारा युद्ध रणनीतिक रक्षा का युद्ध नहीं रह जाएगा, बल्कि रणनीतिक प्रत्याक्रमण का रूप धारण कर लेगा जो रणनीतिक आक्रमण की शकल में प्रकट होगा ; और तब हम रणनीतिक भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर नहीं, बल्कि कदम-ब-कदम रणनीतिक बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर युद्ध करने लगेंगे। जब तक हमारी फौजें लड़ते-लड़ते यालू नदी के किनारे तक नहीं पहुंच जातीं, तब तक यह नहीं कहा जा सकेगा कि यह युद्ध समाप्त हो गया है। तीसरी मंजिल दीर्घकालीन युद्ध की अन्तिम मंजिल होगी, और जब हम कहते हैं कि इस युद्ध को अविचल रूप से अन्त तक जारी रखें, तो इसका अर्थ है इस मंजिल के पूरे दौर से गुजरना। इस मंजिल में भी हमारे युद्ध का मुख्य रूप चलायमान लड़ाई ही होगा, लेकिन मोर्चेबद्ध लड़ाई को भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होगा। यद्यपि पहली मंजिल में मोर्चेबद्ध रक्षा को उस समय की परिस्थिति के कारण उतना महत्व नहीं दिया जा सकता, तो भी तीसरी मंजिल में मोर्चेबन्दी पर किए जाने वाले हमले को बदली हुई परिस्थिति और कार्य की आवश्यकताओं के कारण काफी महत्व दिया जाएगा। तीसरी मंजिल में, छापामार लड़ाई फिर एक बार चलायमान लड़ाई और मोर्चेबद्ध लड़ाई के सहायक के रूप में रणनीतिक समर्थन प्रदान करेगी, लेकिन वह युद्ध का मुख्य रूप नहीं रह जाएगी, जैसे कि वह युद्ध की दूसरी मंजिल में थी।

३९. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यह युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध है और फलस्वरूप एक निर्मम युद्ध है। दुश्मन समूचे चीन को हड़प नहीं सकता, लेकिन वह चीन के अनेक प्रदेशों को काफी लम्बे अरसे

तक अपने कब्जे में रख सकता है। जापानियों को चीन द्वारा शीघ्रता से बाहर नहीं खदेड़ा जा सकेगा, लेकिन चीन की प्रादेशिक भूमि के अधिकांश भाग पर चीन का ही कब्जा बना रहेगा। अन्त में दुश्मन की हार और हमारी जीत होगी, लेकिन अपनी यात्रा के एक कठिन भाग को तो हमें पार करना ही होगा।

४०. इस प्रकार के लम्बे और निर्मम युद्ध के दौरान चीनी जनता तपकर फौलाद बन जाएगी। युद्ध में शामिल होने वाली राजनीतिक पार्टियां भी तपकर फौलाद बन जाएंगी और उनकी परख हो जाएगी। संयुक्त मोर्चे को अविचल रूप से कायम रखना चाहिए; संयुक्त मोर्चे को कायम रखकर ही युद्ध को जारी रखा जा सकता है; संयुक्त मोर्चे को तथा युद्ध को जारी रखकर ही अन्तिम विजय प्राप्त की जा सकती है। केवल इसी प्रकार तमाम कठिनाइयों को दूर किया जा सकता है। युद्ध में कठिन यात्रा से गुजरने के बाद हम विजय के राजमार्ग पर आ जाएंगे। यह युद्ध का स्वाभाविक तर्क है।

४१. इन तीनों मंजिलों के पूरे दौर में हमारी और दुश्मन की तुलनात्मक शक्ति में परिवर्तन इस प्रकार होगा : पहली मंजिल में दुश्मन बरतरी की स्थिति में है और हम कमतरी की स्थिति में। यह अनुमान कर लेना चाहिए कि प्रतिरोध-युद्ध की पूर्ववेला से लेकर इस मंजिल के अन्त तक हमारी कमतरी में दो भिन्न प्रकार के परिवर्तन होंगे। पहला परिवर्तन खराबी की तरफ होगा। चीन की पहले की कमतरी युद्ध की पहली मंजिल में होने वाली हानियों से और ज्यादा बढ़ जाएगी, यानी उसके क्षेत्रफल में, जनसंख्या में, आर्थिक व फौजी शक्ति में और सांस्कृतिक संगठनों में कमी हो जाएगी। पहली मंजिल के अन्त तक उनमें शायद काफी हद तक कमी हो जाएगी, खासकर

उनके आर्थिक पहलू में। इस तथ्य का कुछ लोग राष्ट्रीय गुलामी और समझौते के सिद्धान्तों के आधार के रूप में इस्तेमाल करेंगे। लेकिन दूसरे प्रकार के परिवर्तन, यानी अच्छाई की दिशा में होने वाले परिवर्तन की ओर भी ध्यान देना चाहिए। इसमें ये बातें शामिल हैं : हमारा युद्ध का अनुभव बढ़ जाएगा, हमारी फौजें प्रगति करेंगी, हमारी राजनीतिक प्रगति होगी, हमारी जनता गोलबन्द हो जाएगी, हमारी संस्कृति का नई दिशा में विकास होगा, छापामार युद्ध का प्रादुर्भाव होगा, अन्तरराष्ट्रीय समर्थन में बढ़ोतरी होगी, वगैरह-वगैरह। पहली मंजिल में जिन चीजों का ह्रास होता है वे पुराना परिमाण और पुराना गुण ही हैं, जो मुख्यतया परिमाणात्मक रूप में प्रकट होते हैं। और जिन चीजों की उन्नति होती है वे नया परिमाण और नया गुण ही हैं, जो मुख्यतया गुणात्मक रूप में प्रकट होते हैं। इनमें दूसरी तरह का परिवर्तन दीर्घकालीन युद्ध चलाने और अन्तिम विजय प्राप्त करने की हमारी क्षमता का आधार प्रदान करता है।

४२. पहली मंजिल में, दुश्मन के पक्ष में भी दो प्रकार के परिवर्तन सामने आएंगे। पहला परिवर्तन स्थिति को बिगाड़ने वाला होगा, जो लाखों लोगों के हताहत होने, हथियारों और गोला-बारूद के खर्च हो जाने, फौजों का मनोबल टूट जाने, अपने देश की जनता में असन्तोष फैलने, व्यापार में कमी होने, १००० करोड़ येन से अधिक खर्च होने, विश्व जनमत द्वारा निन्दा किए जाने आदि के रूप में सामने आएगा। यह रुझान भी दीर्घकालीन युद्ध चलाने और अन्तिम विजय प्राप्त करने की हमारी क्षमता का एक और आधार प्रदान करता है। लेकिन इसी तरह हमें दुश्मन के पक्ष में होने वाले दूसरे प्रकार के परिवर्तन को, अच्छाई की दिशा में होने वाले परिवर्तन,

यानी उसके द्वारा अपने प्रदेश का विस्तार किए जाने तथा अपनी आबादी और अपने साधनों को बढ़ा लिए जाने को भी ध्यान में रखना चाहिए। यह रुझान भी इस बात का आधार बनता है कि हमारा प्रतिरोध-युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध है और इसमें शीघ्र विजय प्राप्त नहीं की जा सकती, साथ ही कुछ लोग इसका इस्तेमाल भी राष्ट्रीय गुलामी और समझौते के अपने सिद्धान्तों के आधार के रूप में करेंगे। लेकिन शत्रु-पक्ष के लिए अच्छाई की तरफ होने वाले इस परिवर्तन के बारे में हमें यह निश्चित रूप से समझ लेना चाहिए कि इसका स्वरूप अस्थाई और आंशिक है। जापान एक ऐसी साम्राज्यवादी शक्ति है जो अपने सर्वनाश के कगार पर खड़ा है और चीन की प्रादेशिक भूमि पर सिर्फ कुछ ही दिनों के लिए कब्जा रख सकता है। चीन में छापामार युद्ध का जोरदार विकास होने के कारण जापान-अधिकृत प्रदेश दरअसल कुछ संकरे गलियारों तक ही सीमित रह जाएंगे। यही नहीं, चीनी प्रदेशों पर जापान के अधिकार से जापान और अन्य देशों के बीच अन्तरविरोध पैदा हो गए हैं और वे तीव्र होते गए हैं। इसके अलावा, इस प्रकार के कब्जे के काफी लम्बे काल में जापान को आम तौर पर बगैर किसी मुनाफे के पूंजी लगानी होगी, जैसा कि उत्तर-पूर्वी चीन के तीन प्रान्तों के अनुभव से जाहिर हो चुका है। ये सब बातें भी राष्ट्रीय गुलामी और समझौते के सिद्धान्तों की धज्जियां उड़ाने के लिए तथा दीर्घकालीन युद्ध और अन्तिम विजय के सिद्धान्तों की स्थापना करने के लिए हमारे सामने एक और आधार प्रस्तुत करती हैं।

४३. दूसरी मंजिल में, दोनों पक्षों में ऊपर बताए गए परिवर्तनों का विकास होना जारी रहेगा। यद्यपि परिस्थिति का पहले से ही

हूबहू चित्रण नहीं किया जा सकता, फिर भी आम तौर पर यह कहा जा सकता है कि जापान का लगातार ह्रास होता जाएगा और चीन की लगातार उन्नति होती जाएगी।[10] मिसाल के लिए, चीन के छापामार युद्ध में जापान की फौजी और वित्तीय शक्ति बहुत ज्यादा खर्च हो जाएगी, जापानी जनता में असन्तोष बढ़ेगा, उसकी फौजों का मनोबल और ज्यादा घटेगा, तथा अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में वह और अधिक अलगाव की स्थिति में पड़ जाएगा। जहां तक चीन का सम्बन्ध है, उसके अन्दर राजनीतिक, फौजी और सांस्कृतिक क्षेत्रों में तथा जनता को गोलबन्द करने के कार्य में और अधिक प्रगति होगी; छापामार युद्ध और अधिक विकसित होगा; भीतरी प्रदेशों में छोटे उद्योग-धन्धों और व्यापक खेतीबाड़ी के आधार पर उसकी अर्थव्यवस्था का भी किसी हद तक नया विकास होगा; उसको मिलने वाली अन्तरराष्ट्रीय सहायता कदम-ब-कदम बढ़ती जाएगी; और उसका भावी रूप आज से अत्यधिक भिन्न हो जाएगा। यह दूसरी मंजिल बहुत दिनों तक कायम रह सकती है। इस दौर में दुश्मन और हमारे बीच की तुलनात्मक शक्ति में एक भारी विपरीत परिवर्तन होगा, चीन कदम-ब-कदम ऊपर उठता जाएगा और जापान कदम-ब-कदम नीचे गिरता जाएगा। तब चीन की कमतरी का अन्त हो जाएगा और जापान अपनी बरतरी खो बैठेगा; पहले दोनों देश बराबरी की स्थिति पर पहुंच जाएंगे और उसके बाद उनकी बरतरी और कमतरी की स्थितियां बिलकुल पलट जाएंगी। उस समय चीन अपने रणनीतिक प्रत्याक्रमण की तैयारियां आम तौर पर पूरी कर चुका होगा और वह प्रत्याक्रमण शुरू करने और दुश्मन को बाहर खदेड़ देने की मंजिल में पहुंच जाएगा। यह बात एक बार फिर बता

देनी चाहिए कि कमतरी की स्थिति से बरतरी की स्थिति में परिवर्तन होने और प्रत्याक्रमण की तैयारी पूरी होने का अर्थ है चीन की अपनी शक्ति का बढ़ना, जापान की मुश्किलों का बढ़ना और हमारे अन्तरराष्ट्रीय समर्थन में बढ़ोतरी होना ; इन तमाम शक्तियों का समुच्चय ही चीन को बरतरी की स्थिति में ले जाएगा और प्रत्याक्रमण की उसकी तैयारी को पूर्ण बनाएगा।

४४. चीन के राजनीतिक और आर्थिक विकास की असमानता के कारण तीसरी मंजिल में होने वाला रणनीतिक प्रत्याक्रमण अपने शुरुआती दौर में सारे देश में एक ही तरह का और एक ही रफ्तार में नहीं होगा, बल्कि उसका स्वरूप प्रादेशिक होगा और वह एक इलाके में शुरू होगा तो दूसरे में बन्द हो जाएगा। इस मंजिल में चूंकि चीन के संयुक्त मोर्चे को तोड़ने के लिए दुश्मन द्वारा अपनाई जाने वाली विभिन्न फूटपरस्त चालों में कोई कमी नहीं होगी, इसलिए चीन की अन्दरूनी एकता का कार्य और भी महत्वपूर्ण बन जाएगा और हमें इस बात की गारन्टी करनी होगी कि अन्दरूनी फूट के कारण रणनीतिक प्रत्याक्रमण आधे में ही न रुक जाए। इस दौर में अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति चीन के बहुत अनुकूल बन जाएगी। चीन के सामने यह कार्य होगा कि वह अपनी सम्पूर्ण मुक्ति के लिए और एक स्वाधीन जनवादी राज्य की स्थापना के लिए इस अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति का लाभ उठाए ; साथ ही इसका अर्थ यह है कि वह विश्व के फासिस्ट-विरोधी आन्दोलन की सहायता भी करे।

४५. चीन कमतरी की स्थिति से बराबरी की स्थिति में और उसके बाद बरतरी की स्थिति में पहुंचेगा और जापान बरतरी की स्थिति से बराबरी की स्थिति में और उसके बाद कमतरी की स्थिति

में पहुंच जाएगा ; चीन रक्षा की स्थिति से ठहराव की स्थिति में और उसके बाद प्रत्याक्रमण की स्थिति में पहुंचेगा और जापान आक्रमण की स्थिति से अपनी उपलब्धियों की हिफाजत की स्थिति में और फिर पीछे हटने की स्थिति में पहुंच जाएगा – चीन-जापान युद्ध की प्रक्रिया यही होगी और यही उसकी अनिवार्य प्रवृत्ति होगी।

४६. इसलिए सवाल और निष्कर्ष ये हैं – क्या चीन गुलाम हो जाएगा? जवाब : नहीं, वह गुलाम नहीं होगा, बल्कि अन्तिम विजय उसी की होगी। क्या चीन शीघ्र विजय प्राप्त कर सकता है? जवाब : नहीं, वह शीघ्र विजय प्राप्त नहीं कर सकता और इस युद्ध को एक दीर्घकालीन युद्ध होना पड़ेगा। क्या ये निष्कर्ष सही हैं? मेरा खयाल है कि ये सही हैं।

४७. इस बात पर राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक और समझौते के सिद्धान्त के प्रतिपादक फिर आगे आकर कहेंगे : "कमतरी की स्थिति से बराबरी की स्थिति में पहुंचने के लिए चीन के पास जापान के बराबर फौजी और आर्थिक शक्ति होनी चाहिए, और बराबरी की स्थिति से बरतरी की स्थिति में पहुंचने के लिए उसके पास जापान से अधिक फौजी और आर्थिक शक्ति होनी चाहिए। लेकिन यह असम्भव है, इसलिए ऊपर निकाले गए निष्कर्ष सही नहीं हैं।"

४८. "हथियार ही सब कुछ तय करते हैं"[११] का तथाकथित सिद्धान्त यही है। युद्ध के बारे में यह एक यांत्रिक सिद्धान्त है तथा एक मनोगतवादी और एकांगी दृष्टिकोण है। हमारा विचार इसके विरुद्ध है ; हम सिर्फ हथियार को ही नहीं, बल्कि मनुष्य को भी देखते हैं। युद्ध में हथियार एक महत्वपूर्ण तत्व अवश्य होते हैं लेकिन

निर्णयात्मक तत्व नहीं ; निर्णयात्मक तत्व मनुष्य ही होता है, वस्तुएं नहीं। शक्तियों के बीच की यह प्रतियोगिता न सिर्फ दोनों पक्षों की फौजी और आर्थिक शक्ति के बीच की प्रतियोगिता है, बल्कि मानव-शक्ति और मनोबल के बीच की प्रतियोगिता भी है। फौजी और आर्थिक शक्ति का नियंत्रण अनिवार्य रूप से मनुष्य के हाथों में ही होता है। यदि चीन, जापान और दुनिया के अन्य देशों के अधिकांश जनगण हमारे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के पक्ष में हैं, तो भला जापान की उस फौजी व आर्थिक शक्ति को बरतर कैसे समझा जा सकता है जिस पर मुट्ठीभर व्यक्तियों ने बल-प्रयोग के जरिए नियंत्रण किया हुआ है? अगर उसे बरतर नहीं समझा जा सकता तो क्या फौजी और आर्थिक शक्ति की अपेक्षाकृत कमतरी वाला चीन बरतरी वाला चीन नहीं बन जाता? इस बात में कोई सन्देह नहीं कि जब तक चीन अपने प्रतिरोध-युद्ध को चलाता रहेगा और संयुक्त मोर्चा कायम रखेगा, तब तक उसकी फौजी और आर्थिक शक्ति कदम-ब-कदम बढ़ती रहेगी। दूसरी ओर लम्बे युद्ध और अपने भीतरी व बाहरी अन्तरविरोधों के कारण हमारा दुश्मन कमजोर होता जाएगा और उसकी फौजी और आर्थिक शक्ति अनिवार्य रूप से विपरीत दिशा में बदल जाएगी। इन हालतों में, क्या यह सम्भव नहीं है कि चीन बरतरी वाला देश बनकर निकले? इतना ही नहीं, यद्यपि इस समय हम दूसरे देशों की फौजी और आर्थिक शक्ति की गणना बड़ी मात्रा में और खुलेआम अपने पक्ष की शक्ति में नहीं कर सकते, पर क्या आगे भी हम ऐसा नहीं कर सकेंगे? यदि जापान के शत्रु चीन तक ही सीमित न रहे, और यदि भविष्य में एक या कई देश खुलेआम अपनी भारी फौजी व आर्थिक

शक्ति का जापान के खिलाफ रक्षात्मक अथवा आक्रमणात्मक कार्यवाहियों के लिए इस्तेमाल करेंगे और खुलेआम हमारी सहायता करेंगे, तो क्या हमारी बरतरी और भी अधिक नहीं हो जाएगी? जापान एक छोटा देश है, उसका युद्ध एक प्रतिगामी और बर्बरतापूर्ण युद्ध है, तथा अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में वह उत्तरोत्तर अधिक अलगाव की स्थिति में पड़ता जाएगा ; चीन एक बड़ा देश है, उसका युद्ध एक प्रगतिशील और न्यायपूर्ण युद्ध है, तथा दिनोंदिन उसे अधिकाधिक अन्तरराष्ट्रीय समर्थन प्राप्त होता जाएगा। एक लम्बी अवधि के विकास के बाद, क्या ये सभी बातें हमारे और दुश्मन के बीच की तुलनात्मक स्थिति को निश्चित रूप से बदल नहीं देंगी?

४९. लेकिन शीघ्र विजय के सिद्धान्त के समर्थक यह नहीं समझते कि युद्ध शक्तियों की प्रतियोगिता है, और वे लोग यह नहीं समझते कि युद्धरत पक्षों की तुलनात्मक शक्ति में निश्चित परिवर्तन हुए बिना, रणनीति की दृष्टि से निर्णायक लड़ाइयां लड़ने और निश्चित अवधि के पहले ही मुक्ति के रास्ते पर पहुंच जाने की चेष्टा का कोई आधार नहीं है। यदि वे अपने विचारों को कार्यरूप में परिणत करेंगे, तो निश्चय ही अपना सिर पत्थर की दीवार से टकराएंगे। या शायद वे इन विचारों को सिर्फ मजा लूटने के लिए व्यक्त कर रहे हों और उन्हें गम्भीरता के साथ कार्यरूप में परिणत करने के लिए तैयार न हों। लेकिन अन्त में "श्री सत्य महाराज" सामने आ जाएंगे तथा इन बातूनियों के सिर पर एक लोटा ठण्डा पानी उंडेल देंगे और यह दिखा देंगे कि ये लोग हवाई किले बनाने वालों के अलावा और कुछ नहीं हैं, जो सस्ते में ही जीत हासिल करना और बिना कष्ट उठाए फल प्राप्त करना चाहते हैं। इस प्रकार के हवाई

किले पहले भी बनाए जाते थे और आज भी बनाए जाते हैं, गोकि अब वे ज्यादा नहीं बनाए जाते। इस तरह की बातें सम्भवतः उस समय और अधिक होंगी जब युद्ध ठहराव की और प्रत्याक्रमण की मंजिल में पहुंच जाएगा। लेकिन इसी बीच, यदि चीन को पहली मंजिल में अपेक्षाकृत भारी क्षति उठानी पड़ी और दूसरी मंजिल बहुत लम्बी खिंच गई, तो राष्ट्रीय गुलामी और समझौते के सिद्धान्तों का भारी बोलबाला हो जाएगा। इसलिए हमें अपने प्रहार का निशाना मुख्यतया राष्ट्रीय गुलामी और समझौते के सिद्धान्तों को ही बनाना चाहिए और शीघ्र विजय के हवाई सिद्धान्त को गौण स्थान देना चाहिए।

५०. इस युद्ध का दीर्घकालीन होना निश्चित है, लेकिन कोई यह भविष्यवाणी नहीं कर सकता कि यह युद्ध कितने वर्षों तक चलेगा, क्योंकि यह मुकम्मिल तौर पर हमारे और दुश्मन के बीच की तुलनात्मक शक्ति में होने वाले परिवर्तन की मात्रा पर निर्भर करेगा। जो लोग युद्ध की अवधि को कम करना चाहते हैं, उनके सामने सिवाय इसके और कोई चारा नहीं है कि वे अपनी शक्ति को बढ़ाने और दुश्मन की शक्ति को कम करने का प्रयत्न करें। ठोस रूप में कहा जाए, तो इसका एकमात्र रास्ता यह है कि हमें और अधिक लड़ाइयां जीतने और दुश्मन की फौजों को घटा देने की कोशिश करनी चाहिए, छापामार युद्ध को विकसित करने की कोशिश करनी चाहिए जिससे कि दुश्मन के कब्जे में कम से कम इलाके रह जाएं, देश की तमाम शक्तियों को एकताबद्ध करने के लिए संयुक्त मोर्चे को सुदृढ़ और व्यापक बनाने की कोशिश करनी चाहिए, नई फौजों का निर्माण करने और नए युद्ध-उद्योग को विकसित करने

की कोशिश करनी चाहिए, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक प्रगति में तेजी लाने की कोशिश करनी चाहिए, मजदूरों, किसानों, व्यापारियों, बुद्धिजीवियों और जनता के दूसरे तबकों को गोलबन्द करने की कोशिश करनी चाहिए, दुश्मन की फौजों को छिन्न-भिन्न करने और उनके सैनिकों को अपनी तरफ मिलाने की कोशिश करनी चाहिए ; अन्य देशों का समर्थन प्राप्त करने के लिए अन्तरराष्ट्रीय प्रचार करने की कोशिश करनी चाहिए, तथा जापानी जनता और अन्य उत्पीड़ित राष्ट्रों का समर्थन प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। जब ये तमाम कार्य पूरे हो जाएंगे, सिर्फ तभी हम युद्ध की अवधि को छोटा बना सकेंगे। इसके लिए कोई जादुई छोटा रास्ता नहीं है।

"चौखटी-आरी" प्रणाली का युद्ध

५१. हम निश्चयपूर्वक यह कह सकते हैं कि दीर्घकालीन जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध मानव जाति के युद्ध-इतिहास में एक अनोखा और गौरवशाली पृष्ठ जोड़ देगा। "चौखटी-आरी" प्रणाली इस युद्ध की अत्यन्त अनोखी विशेषताओं में से एक है। यह एक पक्ष में जापान की बर्बरता और उसकी अपर्याप्त सेना होने तथा दूसरे पक्ष में चीन की प्रगतिशीलता और उसका विस्तृत प्रदेश होने जैसे विरोधी तत्वों का परिणाम है। इतिहास में "चौखटी-आरी" प्रणाली वाले अन्य युद्ध भी हुए हैं, जैसे अक्तूबर क्रान्ति के बाद रूस का तीन वर्षीय गृहयुद्ध इसी प्रकार का युद्ध था। लेकिन चीन में इस युद्ध की विशेषता उसके खास दीर्घकालीन व विस्तृत स्वरूप में है, जो इतिहास में

अपना रिकार्ड कायम करेगा। युद्ध की यह "चौखटी-आरी" प्रणाली नीचे लिखे रूपों में प्रकट होती है।

५२. भीतरी और बाहरी सैन्य-पंक्तियां। कुल मिलाकर जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर लड़ा जा रहा है; लेकिन जहां तक हमारी नियमित सेनाओं और छापामार दस्तों के बीच के सम्बन्धों का सवाल है, नियमित सेनाएं भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर हैं और छापामार दस्ते बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर; इस प्रकार एक अद्भुत दृश्य दिखाई देने लगा है जिसमें दुश्मन पर वार करने वाली एक संड़सी बन गई है। यही बात विभिन्न छापामार इलाकों के आपसी सम्बन्धों के बारे में भी कही जा सकती है। अपने खुद के नजरिए से हर छापामार इलाका अपने को भीतरी सैन्य-पंक्ति पर और दूसरे इलाकों को बाहरी सैन्य-पंक्ति पर समझता है, और उनके साथ मिलकर दुश्मन पर वार करने वाली अनेक संड़सीनुमा सैन्य-पंक्तियां बनाता है। युद्ध की पहली मंजिल में रणनीतिक दृष्टि से भीतरी सैन्य-पंक्ति पर कार्यवाही करने वाली नियमित सेना पीछे हट रही है, लेकिन रणनीतिक दृष्टि से बाहरी सैन्य-पंक्ति पर कार्यवाही करने वाले छापामार दस्ते लम्बे डग उठाकर दुश्मन के पृष्ठभाग की ओर व्यापक क्षेत्रों में आगे बढ़ जाएंगे – दूसरी मंजिल में उनके बढ़ने की गति और भी तेज हो जाएगी – इस प्रकार पीछे हटने और आगे बढ़ने का एक अनोखा नजारा दिखाई देगा।

५३. पृष्ठभागीय क्षेत्र का होना और न होना। हमारी नियमित सेना, जो दुश्मन द्वारा अधिकृत प्रदेशों की सीमा के एकदम निकट तक अपने मोर्चे को फैलाए रहती है, समूचे देश के पृष्ठभागीय

क्षेत्र से ही कार्यवाही करती है। हमारे छापामार दस्ते, जो अपने मोर्चे को एकदम दुश्मन के पृष्ठभाग तक पहुंचा देते हैं, समूचे देश के पृष्ठभागीय क्षेत्र से अलग हो जाते हैं। लेकिन हर छापामार इलाके में छापामार दस्ते का अपना खुद का भी एक छोटा सा पृष्ठभागीय क्षेत्र होता है, जिस पर उसकी अस्थिर युद्ध-पंक्तियों की स्थापना निर्भर होती है। उन छापामार दस्तों का मामला अलग है जिन्हें किसी छापामार इलाके द्वारा अपने ही इलाके में दुश्मन के पृष्ठभाग में अस्थाई कार्यवाहियों के लिए भेजा जाता है; ऐसे छापामार दस्तों के लिए न तो पृष्ठभाग होता है और न युद्ध-पंक्तियां ही होती हैं। "पृष्ठभाग के बिना कार्यवाही करना" नए युग में, विशाल प्रदेश, प्रगतिशील जनता, आगे बढ़ी हुई राजनीतिक पार्टी व सेना वाली स्थिति में, क्रान्तिकारी युद्ध की एक विशेषता है। इसमें खौफ खाने की कोई बात नहीं है, बल्कि इसके अनेक लाभ होते हैं और हमें इसे सन्देह की नजर से न देखकर बढ़ावा देना चाहिए।

५४. घेरेबन्दी और जवाबी घेरेबन्दी। यदि समूचे युद्ध को लिया जाए, तो इसमें शक नहीं कि हम दुश्मन की रणनीतिक घेरेबन्दी में हैं, क्योंकि दुश्मन रणनीतिक आक्रमण और बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां कर रहा है तथा हम रणनीतिक रक्षा और भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां कर रहे हैं। दुश्मन द्वारा हम पर लादी गई यह पहली किस्म की घेरेबन्दी है। चूंकि हम रणनीतिक दृष्टि से बाहरी सैन्य-पंक्तियों से अलग-अलग कालमों में हमारी ओर बढ़ने वाली दुश्मन की फौजों के खिलाफ अपनी मुहिमों और लड़ाइयों में बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियों की नीति अपनाते हैं और संख्या की दृष्टि से अपनी बरतर फौजों को इस्तेमाल करते हैं, इसलिए

हम दुश्मन के हमारी ओर बढ़ने वाले एक या कई कालमों को अपनी घेरेबन्दी में ले सकते हैं। दुश्मन पर हमारे द्वारा लादी गई यह पहली किस्म की जवाबी घेरेबन्दी है। इसके अलावा, दुश्मन के पृष्ठभाग में कायम छापामार युद्ध के आधार-क्षेत्रों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि उन्हें अलग-अलग लिया जाए तो हर आधार-क्षेत्र या तो तीन ओर से, जैसे शानशी का उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र, अथवा चारों ओर से, जैसे ऊथाए पहाड़ी इलाका, दुश्मन से घिरा हुआ है। दुश्मन द्वारा हम पर लादी गई यह दूसरी किस्म की घेरेबन्दी है। लेकिन यदि हम इन विभिन्न छापामार आधार-क्षेत्रों को मिलाकर इन पर विचार करें तथा इन क्षेत्रों और नियमित सेना के मोर्चों के आपसी सम्बन्धों को देखें, तो हमें मालूम हो जाएगा कि हमने दुश्मन की बहुत सी फौजों को घेर रखा है। मिसाल के लिए, शानशी में हमने ताथुङ-फूचओ रेलवे को तीन ओर से (रेलवे के पूर्वी और पश्चिमी बाजुओं से तथा दक्षिणी छोर से) और थाएय्वान शहर को चारों ओर से घेर रखा है; हपे और शानतुङ प्रान्तों में भी इसी प्रकार की अनेक घेरेबन्दियां मौजूद हैं। दुश्मन पर हमारे द्वारा लादी गई यह दूसरी किस्म की जवाबी घेरेबन्दी है। इस प्रकार हमारी फौजों और दुश्मन की फौजों दोनों ने ही एक दूसरे पर दो प्रकार की घेरेबन्दियां लाद रखी हैं, जो एक तरह से "वेइछी" के खेल के समान हैं। हमारी और दुश्मन की मुहिमों और लड़ाइयों की तुलना एक दूसरे के मोहरों को मारने से की जा सकती है और दुश्मन द्वारा मोर्चेबन्दी वाले स्थानों (जैसे थाएय्वान) तथा हमारे द्वारा छापामार आधार-क्षेत्रों (जैसे ऊथाए पहाड़) की स्थापना की तुलना "वेइछी" की बिसात पर खाली जगहों को कब्जे में करने से की जा

सकती है। यदि "वेइछी" के खेल की कल्पना विश्व के पैमाने पर की जाए, तो एक और तरह की घेरेबन्दी नजर आएगी, जिसे दुश्मन और हम एक दूसरे पर लादते हैं, यानी हमलावर मोर्चे और शान्ति-मोर्चे के बीच का सम्बन्ध। दुश्मन हमलावर मोर्चे के जरिए चीन, सोवियत संघ, फ्रांस और चेकोस्लोवाकिया जैसे देशों पर घेरा डालता है और हम शान्ति-मोर्चे के जरिए जर्मनी, जापान और इटली पर जवाबी घेरा डालते हैं। लेकिन हमारी घेरेबन्दी, जो बुद्ध के हाथ की तरह है, सारी दुनिया में फैले हुए विशाल पंचतत्व पर्वत का रूप धारण कर लेगी और चन्द आधुनिक सुन ऊ-खुङ – फासिस्ट हमलावर – अन्त में उसके नीचे दब जाएंगे और फिर कभी सिर नहीं उठा सकेंगे।[१२] इसलिए, यदि हम चीन को एक रणनीतिक इकाई बनाकर, सोवियत संघ और शिरकत करने वाले अन्य सम्भावित देशों को भी एक-एक रणनीतिक इकाई बनाकर, तथा जापानी जनता के आन्दोलन को एक अन्य रणनीतिक इकाई बनाकर, प्रशान्त महासागर क्षेत्र में राजनयिक दृष्टि से एक जापान-विरोधी मोर्चे का निर्माण कर सकें, और इस प्रकार एक ऐसा विश्वव्यापी जाल बना सकें जिससे बचकर फासिस्ट सुन ऊ-खुङ बाहर न निकल सकें, तो वह समय हमारे दुश्मन के खात्मे का समय होगा। सच तो यह है कि जिस दिन यह विश्वव्यापी जाल आम तौर से बन जाएगा, उस दिन निश्चय ही जापानी साम्राज्यवाद का तख्ता पूरी तरह उलट जाएगा। यह कोई मजाक नहीं, बल्कि युद्ध का अनिवार्य रुझान है।

५५. बड़े क्षेत्र और छोटे क्षेत्र। यह सम्भव है कि दुश्मन लम्बी दीवार के दक्षिण में चीन की प्रादेशिक भूमि के अधिकांश भाग पर

कब्जा कर ले और सिर्फ छोटा सा अविच्छिन्न भाग हमारे पास रह जाए। यह परिस्थिति का एक पहलू है। लेकिन दुश्मन द्वारा अधिकृत उस अधिकांश भाग में, जिसमें तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्त शामिल नहीं हैं, दुश्मन वास्तव में केवल बड़े-बड़े नगरों, मुख्य संचार-पंक्तियों और कुछ मैदानों पर ही कब्जा बनाए रख सकता है – जो सर्वाधिक महत्व के होते हुए भी क्षेत्रफल और जनसंख्या की दृष्टि से शायद दुश्मन के अधिकृत प्रदेशों के छोटे भाग ही होंगे जबकि उन प्रदेशों के बड़े भाग छापामार इलाकों के कब्जे में चले जाएंगे, जो जगह-जगह कायम होते रहेंगे। यह परिस्थिति का दूसरा पहलू है। यदि हम लम्बी दीवार के दक्षिण में स्थित प्रान्तों के परे मंगोलिया, सिन-च्याङ, छिङहाए और तिब्बत को भी ले लें, तो जिस इलाके पर दुश्मन का कब्जा नहीं हुआ, उसका क्षेत्रफल चीन की प्रादेशिक भूमि का बड़ा हिस्सा बन जाएगा, जबकि तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्तों को मिलाकर भी दुश्मन द्वारा अधिकृत इलाका उसके मुकाबले छोटा रह जाएगा। यह परिस्थिति का एक अन्य पहलू है। इसमें शक नहीं कि हमारे पास अविच्छिन्न रूप से जो भाग बच गया है, वह महत्वपूर्ण है और उसका विकास करने के लिए हमें भारी शक्ति लगा देनी चाहिए, न सिर्फ राजनीतिक, फौजी और आर्थिक दृष्टि से, बल्कि सांस्कृतिक दृष्टि से भी। दुश्मन ने हमारे पहले के सांस्कृतिक केन्द्रों को सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े हुए क्षेत्रों में बदल दिया है, और हमें पहले के सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े हुए क्षेत्रों को सांस्कृतिक केन्द्रों में बदल डालना चाहिए। साथ ही दुश्मन के मोर्चों के पीछे विस्तृत छापामार इलाकों का विकास करना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है और हमें सांस्कृतिक पहलू समेत इस कार्य के सभी पहलुओं पर ध्यान

देना चाहिए। कुल मिलाकर चीन की प्रादेशिक भूमि के विशाल इलाके, यानी ग्रामीण क्षेत्र प्रगति और प्रकाश वाले इलाकों में बदल जाएंगे, जबकि छोटे इलाके, यानी दुश्मन के कब्जे में मौजूद कुछ क्षेत्र, खासकर बड़े-बड़े नगर, कुछ समय के लिए पिछड़ेपन और अन्धकार वाले इलाकों में बदल जाएंगे।

५६. इस प्रकार, यह जाहिर होता है कि दीर्घकालीन और व्यापक रूप से फैला हुआ जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध फौजी, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से "चौखटी-आरी" प्रणाली का युद्ध है, जो युद्ध के इतिहास का एक शानदार करिश्मा है, चीनी राष्ट्र का वीरतापूर्ण प्रयास है, और दुनिया को हिला देने वाला गौरवपूर्ण कारनामा है। यह युद्ध केवल चीन और जापान पर ही असर नहीं डालेगा, केवल उन्हें ही आगे बढ़ने के लिए भारी प्रेरणा नहीं देगा, बल्कि तमाम दुनिया पर भी असर डालेगा और सभी देशों को, खास तौर पर, भारत व अन्य उत्पीड़ित राष्ट्रों को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करेगा। हर चीनवासी को चाहिए कि वह सचेत रूप से अपने को "चौखटी-आरी" प्रणाली के इस युद्ध में झोंक दे, क्योंकि यह युद्ध का वह रूप है जिसके जरिए चीनी राष्ट्र अपनी मुक्ति प्राप्त कर रहा है और जो बीसवीं सदी के चौथे और पांचवें दशकों में एक बड़े अर्ध-औपनिवेशिक देश द्वारा चलाए जाने वाले मुक्ति युद्ध का विशेष रूप है।

स्थाई शान्ति के लिए युद्ध

५७. चीन के जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का दीर्घकालीन स्वरूप चीन और समूची दुनिया में स्थाई शान्ति स्थापित करने

के संघर्ष से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। किसी भी ऐतिहासिक काल में युद्ध स्थाई शान्ति के इतना निकट नहीं रहा, जितना आज है। वर्गों का उदय होने के बाद कई हजार वर्षों से मानव जाति का जीवन युद्धों से भरा रहा है। प्रत्येक राष्ट्र ने अनगिनत लड़ाइयां लड़ी हैं; वे चाहे राष्ट्र के भीतर हुई हों या अन्य राष्ट्रों के साथ। पूंजीवादी समाज के साम्राज्यवादी युग में प्रवेश करने के बाद, युद्ध विशेष रूप से बड़े पैमाने पर और विचित्र निर्ममता से चलाए जाते हैं। बीस साल पहले का प्रथम साम्राज्यवादी महायुद्ध यद्यपि इतिहास में अभूतपूर्व था, लेकिन वह अन्तिम युद्ध नहीं था। केवल यही युद्ध, जो अब शुरू हुआ है, अन्तिम युद्ध बनने के निकट है, यानी मानव जाति की स्थाई शान्ति के निकट है। अब तक दुनिया की जनसंख्या का एक-तिहाई भाग युद्ध में कूद चुका है। ज़रा देखिए तो : एक ओर इटली और उसके बाद जापान और दूसरी ओर अबीसीनिया, फिर स्पेन और उसके बाद चीन। युद्धरत देशों की जनसंख्या इस समय लगभग ६० करोड़ या दुनिया की कुल जनसंख्या की लगभग एक-तिहाई है। इस युद्ध की विशेषता यह है कि यह अनवरत रूप से चल रहा है और स्थाई शान्ति के निकट है। यह अनवरत रूप से क्यों चल रहा है? अबीसीनिया पर हमला करने के बाद इटली ने स्पेन पर हमला कर दिया और जर्मनी भी इसमें शामिल हो गया; इसके बाद जापान ने चीन पर हमला कर दिया। अब इसके बाद क्या होगा? इसमें शक नहीं कि हिटलर अन्य बड़े देशों से लड़ेगा। "फासिज्म का मतलब है युद्ध"![1]—यह बात बिलकुल सही है। इस युद्ध और इस युद्ध से विकसित होने वाले विश्वयुद्ध के बीच कोई मध्यान्तर नहीं होगा; मानव जाति युद्ध की विभीषिका

से बच नहीं सकती। तब फिर हम यह क्यों कहते हैं कि वर्तमान युद्ध स्थाई शान्ति के निकट है? वर्तमान युद्ध विश्व-पूंजीवाद के आम संकट के विकास का फल है, जो प्रथम विश्वयुद्ध के समय से शुरू हुआ; यह आम संकट पूंजीवादी देशों को एक नए युद्ध की ओर धकेल रहा है, और सबसे पहले विभिन्न फासिस्ट देशों को युद्ध का नया जोखिम उठाने के लिए बाध्य कर रहा है। हम यह पहले से ही देख सकते हैं कि यह युद्ध पूंजीवाद को बचाएगा नहीं, बल्कि इससे उसका अन्त और भी निकट आ जाएगा। बीस वर्ष पहले के युद्ध की अपेक्षा यह युद्ध कहीं अधिक व्यापक और निर्मम होगा, सभी राष्ट्र अनिवार्य रूप से इसकी लपेट में आ जाएंगे, यह एक लम्बे समय तक चलता रहेगा और इससे मानव जाति को भारी कष्ट झेलना पड़ेगा। लेकिन सोवियत संघ की मौजूदगी और दुनिया की जनता की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई राजनीतिक चेतना के कारण, इस युद्ध से निस्सन्देह महान क्रान्तिकारी युद्धों का जन्म होगा, जो सभी प्रतिक्रान्तिकारी युद्धों का विरोध करेंगे और इस प्रकार इस युद्ध को स्थाई शान्ति के लिए होने वाले युद्ध का रूप प्रदान करेंगे। इसके बाद भी यदि युद्ध का कोई दूसरा दौर आया, तो भी दुनिया की स्थाई शान्ति दूर नहीं होगी। मनुष्य जब एक बार पूंजीवाद का अन्त कर देगा, तो वह स्थाई शान्ति के युग में पहुंच जाएगा और फिर कभी युद्ध की आवश्यकता न रहेगी। तब न तो फौजों, न युद्धपोतों, न फौजी विमानों और न जहरीली गैसों की ही जरूरत रह जाएगी। उसके बाद मनुष्य का फिर कभी युद्ध से परिचय नहीं होगा। जो क्रान्तिकारी युद्ध शुरू हो गए हैं, वे स्थाई शान्ति के लिए होने वाले युद्ध के ही अंग हैं। ५० करोड़ से अधिक जनसंख्या वाले

दो देशों, यानी चीन और जापान के बीच के युद्ध का इस युद्ध में एक महत्वपूर्ण स्थान होगा, और इसी युद्ध के जरिए चीनी राष्ट्र अपनी मुक्ति प्राप्त करेगा। भविष्य का मुक्त नया चीन भविष्य के मुक्त नए विश्व से अलग नहीं रहेगा। इसलिए हमारा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध स्थाई शान्ति के लिए होने वाले युद्ध का रूप धारण कर लेता है।

५८. इतिहास बताता है कि युद्ध दो प्रकार के होते हैं – न्याय-पूर्ण युद्ध और अन्यायपूर्ण युद्ध। सभी प्रगतिशील युद्ध न्यायपूर्ण होते हैं और ऐसे सभी युद्ध जो प्रगति को रोकते हैं अन्यायपूर्ण होते हैं। हम कम्युनिस्ट लोग प्रगति को रोकने वाले सभी अन्यायपूर्ण युद्धों का विरोध करते हैं, लेकिन हम लोग प्रगतिशील न्यायपूर्ण युद्धों का विरोध नहीं करते। हम कम्युनिस्ट लोग न केवल न्याय-पूर्ण युद्धों का विरोध नहीं करते, बल्कि उनमें सक्रियता से भाग भी लेते हैं। जहां तक अन्यायपूर्ण युद्धों का सम्बन्ध है, प्रथम विश्वयुद्ध ऐसे युद्धों की एक मिसाल है, उसे दोनों पक्षों ने साम्राज्यवादी हितों के लिए चलाया था; इसलिए सारी दुनिया के कम्युनिस्टों ने उसका दृढ़ता से विरोध किया था। इस प्रकार के युद्ध का विरोध करने का तरीका यह है कि उसकी शुरुआत होने के पहले ही हर मुमकिन तरीके से उसे रोकने की कोशिश की जाए, और जहां एक बार उसकी शुरुआत हो गई, तो जब भी सम्भव हो, युद्ध का विरोध युद्ध के जरिए किया जाए, अन्यायपूर्ण युद्ध का विरोध न्यायपूर्ण युद्ध के जरिए किया जाए। जापान का युद्ध एक अन्यायपूर्ण युद्ध है जो प्रगति को रोकता है और सारी दुनिया की जनता को, जिसमें जापानी जनता भी शामिल है, इस युद्ध का विरोध करना चाहिए और वह

कर भी रही है। हमारे देश में, जनता और सरकार, कम्युनिस्ट पार्टी और क्वोमिन्ताङ इन सबने आक्रमण के विरुद्ध राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध में न्यायपरायणता के झण्डे को बुलन्द कर रखा है। हमारा युद्ध एक पवित्र, न्यायपूर्ण युद्ध है, एक प्रगतिशील युद्ध है, जिसका उद्देश्य शान्ति स्थापित करना है। इसका उद्देश्य केवल एक देश में शान्ति स्थापित करना नहीं बल्कि सारी दुनिया में शान्ति स्थापित करना, अस्थाई शान्ति स्थापित करना नहीं बल्कि स्थाई शान्ति स्थापित करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें जीवन-मरण का युद्ध चलाना होगा, हर तरह की कुर्बानी देने के लिए तैयार रहना होगा और तब तक अविचल रूप से लड़ते रहना होगा जब तक हम अपने उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर लेते। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए हमें चाहे कितनी ही बड़ी कुर्बानी क्यों न देनी पड़े और चाहे कितना ही ज्यादा समय क्यों न लग जाए, लेकिन स्थाई शान्ति और एक स्थाई रूप से प्रकाशमान नया विश्व हमें अपने सामने स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है। इस युद्ध को चलाने में हमारा विश्वास स्थाई शान्ति और एक स्थाई रूप से प्रकाशमान नए चीन और नए विश्व पर आधारित है, जिनके निर्माण के लिए हम संघर्ष कर रहे हैं। फासिज्म और साम्राज्यवाद युद्ध को हमेशा के लिए बनाए रखना चाहते हैं, लेकिन हम उसे नातिदूर भविष्य में ही समाप्त कर देना चाहते हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मानव जाति की विशाल बहुसंख्या को यथाशक्ति कोशिश करनी चाहिए। चीन की ४५ करोड़ जनता दुनिया की जनसंख्या का एक-चौथाई भाग है, और अगर उसने अपने संयुक्त प्रयास से जापानी साम्राज्यवाद का तख्ता उलट दिया और स्वतंत्रता तथा समानता वाले नए चीन का निर्माण

कर लिया, तो वह निस्सन्देह विश्व में स्थाई शान्ति की स्थापना के संघर्ष में बेहद महान योगदान कर सकेगी। यह व्यर्थ की आशा नहीं है, क्योंकि सारी दुनिया अपनी सामाजिक अर्थव्यवस्था के विकास के दौर में इसी जगह पर पहुंच रही है; और दुनिया के बहुसंख्यक जनगण के संयुक्त प्रयत्नों से निश्चय ही हमारा उद्देश्य कुछ ही दशाब्दियों में पूरा हो जाएगा।

युद्ध में मनुष्य की गत्यात्मक भूमिका

५९. हमने अभी तक यह बताया है कि यह युद्ध एक दीर्घकालीन युद्ध क्यों है और अन्तिम विजय चीन की ही क्यों होगी, और मुख्य रूप से इस बात की चर्चा की है कि दीर्घकालीन युद्ध क्या चीज है और क्या चीज नहीं है। अब हम इस बात की चर्चा करेंगे कि हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। हम दीर्घकालीन युद्ध कैसे चलाएंगे और अन्तिम विजय कैसे प्राप्त करेंगे? नीचे हम इन्हीं प्रश्नों का उत्तर देंगे। इस उद्देश्य से हम इन प्रश्नों का सिलसिलेवार स्पष्टीकरण करेंगे: युद्ध में मनुष्य की गत्यात्मक भूमिका, युद्ध और राजनीति, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के लिए राजनीतिक जत्थेबन्दी, युद्ध का उद्देश्य, रक्षात्मक कार्यवाही के दौरान आक्रमणात्मक कार्यवाही, दीर्घकालीन युद्ध के दौरान तुरत निर्णय की लड़ाइयां, भीतरी सैन्य-पंक्तियों के अन्दर बाहरी सैन्य-पंक्तियां, पहलकदमी, लचीलापन, योजना, चलायमान लड़ाई, छापामार लड़ाई, मोर्चेबद्ध लड़ाई, विनाश की लड़ाई, घिसाव-थकाव की लड़ाई, दुश्मन की गलतियों से फायदा उठाने की सम्भावनाएं,

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में निर्णायक मुठभेड़ों की समस्या, और यह कि फौज और जनता विजय के आधार हैं। हम सबसे पहले युद्ध में मनुष्य की गत्यात्मक भूमिका की समस्या को लेते हैं।

६०. जब हम यह कहते हैं कि हम किसी समस्या के प्रति मनोगत-वादी रवैये के खिलाफ हैं, तो हमारा मतलब यह होता है कि हमें ऐसे विचारों का अवश्य विरोध करना चाहिए जो वस्तुगत तथ्यों पर आधारित नहीं होते या उनके अनुरूप नहीं होते, क्योंकि ऐसे विचार काल्पनिक और झूठे होते हैं, और उन्हें आधार बनाकर कार्य-वाही करने से हमें असफलता का मुंह देखना पड़ेगा। लेकिन काम तो मनुष्य के प्रयत्न से ही पूरा होगा। मनुष्य द्वारा की जाने वाली कार्यवाही के बिना दीर्घकालीन युद्ध नहीं चलाया जा सकता और न अन्तिम विजय ही प्राप्त की जा सकती है। इस कार्यवाही को कारगर ढंग से चलाने के लिए ऐसे लोग होने चाहिए जो वस्तुगत तथ्यों के आधार पर अपने विचार, सिद्धान्त व मत कायम करते हैं और तब योजनाएं, निर्देशक उसूल, नीतियां, रणनीतियां व कार्यनीतियां बनाते हैं। विचार आदि मनोगत चीजें हैं, जबकि प्रयत्न या कार्य-वाहियां मनोगत बातों के ही वस्तुगत जाहिरा रूप हैं, लेकिन दोनों ही मानव जाति की विशिष्ट गत्यात्मक भूमिका का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऐसी गत्यात्मक भूमिका को हम "मनुष्य की जागरूक गत्यात्मक भूमिका" कहते हैं, और यह एक ऐसी विशेषता है जो मनुष्य को अन्य सभी वस्तुओं से भिन्न बना देती है। ऐसे सभी विचार जो वस्तुगत तथ्यों पर आधारित हैं और उनके अनुरूप हैं, सही विचार हैं, और ऐसे सभी प्रयत्न या ऐसी सभी कार्यवाहियां जो सही विचारों पर आधारित हैं, सही कार्यवाहियां हैं। हमें ऐसे विचारों

और ऐसी कार्यवाहियों, ऐसी जागरूक गत्यात्मक भूमिका का पूरी तरह विकास करना चाहिए। हमारा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध साम्राज्यवाद को बाहर खदेड़ने और पुराने चीन को एक नए चीन में बदलने के लिए लड़ा जा रहा है; यह उद्देश्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब सारे चीन की जनता को गोलबन्द कर लिया जाए और समूची जनता जापान का प्रतिरोध करने के लिए अपनी जागरूक गत्यात्मक भूमिका को विकसित करे। यदि हम केवल हाथ पर हाथ धरकर बैठ गए और हमने कोई कदम नहीं उठाया, तो ऐसी हालत में केवल गुलामी ही हमारे हाथ लगेगी और न तो दीर्घकालीन युद्ध ही चलाया जा सकेगा और न अन्तिम विजय ही प्राप्त की जा सकेगी।

६१. जागरूक गत्यात्मक भूमिका अदा करना मनुष्य की विशिष्टता है। युद्ध में मनुष्य की यह विशिष्टता अत्यधिक प्रखर होकर अभिव्यक्त होती है। हां, इतनी बात जरूर है कि युद्ध में विजय या पराजय का निर्णय दोनों पक्षों की फौजी, राजनीतिक, आर्थिक और भौगोलिक परिस्थितियों से होता है, प्रत्येक पक्ष द्वारा चलाए जा रहे युद्ध के स्वरूप से और प्रत्येक पक्ष को मिलने वाली अन्तरराष्ट्रीय सहायता से होता है, लेकिन उसका निर्णय केवल इन्हीं बातों से नहीं होता; इन बातों में तो केवल विजय या पराजय की सम्भावनाएं ही निहित होती हैं, लेकिन वे मसले का निर्णय नहीं करतीं। मसले के निपटारे के लिए तो मनोगत प्रयत्न की आवश्यकता भी होती है, अर्थात युद्ध का निर्देशन करने और युद्ध में लगे रहने की, युद्ध में मनुष्य की जागरूक गत्यात्मक भूमिका की आवश्यकता होती है।

६२. विजय प्राप्त करने की कोशिश में, जो लोग युद्ध का निर्देशन करते हैं, वे वस्तुगत परिस्थितियों द्वारा निर्धारित सीमाओं

को लांघ नहीं सकते; लेकिन इन सीमाओं के भीतर रहते हुए वे विजय प्राप्त करने के प्रयत्न में गत्यात्मक भूमिका अदा कर सकते हैं और उन्हें ऐसा करना भी चाहिए। किसी युद्ध के कमाण्डरों को अपनी कार्यवाही का मंच वस्तुगत सम्भावनाओं के आधार पर बनाना चाहिए, लेकिन इस मंच पर वे लोग विविध प्रकार की ध्वनियों और विविध प्रकार के रंगों से परिपूर्ण जोरदार व शानदार नाटकों का निर्देशन कर सकते हैं। निश्चित वस्तुगत भौतिक आधार पर जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के कमाण्डरों को युद्ध में अपना शौर्य-प्रदर्शन करना चाहिए और राष्ट्र के दुश्मन को कुचलने के लिए, मौजूदा स्थिति को बदलने के लिए जिसमें हमारा समाज और हमारा देश आक्रमण व उत्पीड़न का शिकार बना हुआ है, और स्वतंत्रता तथा समानता वाले नए चीन का निर्माण करने के लिए अपनी तमाम फौजी शक्तियों का नेतृत्व करना चाहिए; इसी कार्य में युद्ध का निर्देशन करने की हमारी मनोगत योग्यता का इस्तेमाल हो सकता है और होना भी चाहिए। हम इस बात के पक्ष में नहीं हैं कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का हमारा कोई भी कमाण्डर अपने को वस्तुगत परिस्थितियों से अलग करके अन्धाधुन्ध कार्यवाही करने वाला एक अति-उतावला व्यक्ति बन जाए, लेकिन हम इस बात का जरूर समर्थन करते हैं कि हमारा प्रत्येक कमाण्डर एक ऐसा सेनानी बन जाए जो साहसी और विवेकशील दोनों हो। हमारे कमाण्डरों में केवल दुश्मन को तबाह कर देने का साहस ही नहीं होना चाहिए, बल्कि उनमें सम्पूर्ण युद्ध में होने वाले परिवर्तनों और फेर-बदल के दौरान स्थिति पर पूरा नियंत्रण रखने की योग्यता भी होनी चाहिए। युद्ध के अगाध सागर में तैरते हुए उन्हें न सिर्फ अपने को डूबने नहीं

देना चाहिए, बल्कि नपे-तुले हाथ मारकर निश्चय के साथ दूसरे तट पर पहुंच जाना चाहिए। युद्ध के निर्देशन के नियमों के रूप में, रणनीति और कार्यनीति युद्ध के सागर में तैरने की कला ही हैं।

युद्ध और राजनीति

६३. "युद्ध राजनीति का ही जारी रूप है।" इस मायने में युद्ध राजनीति ही है और युद्ध स्वयं भी एक राजनीतिक कार्यवाही है ; प्राचीन काल से ही ऐसा युद्ध कभी नहीं हुआ जिसका स्वरूप राजनीतिक न रहा हो। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध समूचे चीनी राष्ट्र द्वारा चलाया जाने वाला एक क्रान्तिकारी युद्ध है, उसकी विजय को उसके राजनीतिक उद्देश्य से, यानी जापानी साम्राज्यवाद को बाहर खदेड़ने और स्वतंत्रता तथा समानता वाले नए चीन का निर्माण करने के कार्य से अलग नहीं किया जा सकता, प्रतिरोध-युद्ध को अविचल रूप से चलाते रहने और संयुक्त मोर्चे को अविचल रूप से बनाए रखने की आम नीति से अलग नहीं किया जा सकता, पूरे देश की जनता को गोलबन्द करने के कार्य से अलग नहीं किया जा सकता, अफसरों और सिपाहियों के बीच एकता कायम करने, सेना और जनता के बीच एकता कायम करने और दुश्मन की फौजों को छिन्न-भिन्न करने के राजनीतिक उसूलों से अलग नहीं किया जा सकता, संयुक्त मोर्चे की नीति को अच्छी तरह लागू करने से, सांस्कृतिक मोर्चे पर गोलबन्द करने के कार्य से और अन्तरराष्ट्रीय समर्थन व शत्रु-देश की जनता का समर्थन हासिल करने के प्रयत्नों से अलग नहीं किया जा सकता। संक्षेप में, युद्ध को एक क्षण के लिए

भी राजनीति से अलग नहीं किया जा सकता। जापान-विरोधी सशस्त्र शक्तियों के बीच, राजनीति के महत्व को कम करके आंकने की ऐसा। किसी भी प्रवृत्ति का होना, जो युद्ध को राजनीति से अलग करके युद्ध में निरपेक्षतावाद की हिमायत करती है, गलत होगा और उसे दूर किया जाना चाहिए।

६४. लेकिन युद्ध की अपनी अलग विशेषताएं होती हैं और इस मायने में युद्ध को सामान्य राजनीति के समकक्ष नहीं रखा जा सकता। "युद्ध अन्य. . . उपायों के जरिए राजनीति का ही जारी रूप है।"[१४] जब राजनीति विकसित होकर एक निश्चित मंजिल पर पहुंच जाती है, जिसके बाद वह सामान्य साधनों द्वारा आगे नहीं बढ़ सकती, तो उसके रास्ते की रुकावटों को दूर करने के लिए युद्ध शुरू हो जाता है। मिसाल के लिए, चीन की अर्ध-स्वाधीन स्थिति जापानी साम्राज्यवाद के राजनीतिक विकास के रास्ते में एक रुकावट थी, इसलिए उस रुकावट को दूर करने के लिए जापान ने एक आक्रमणकारी युद्ध छेड़ दिया। और चीन की हालत कैसी है? साम्राज्यवादी उत्पीड़न बहुत दिनों से चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के रास्ते की रुकावट रहा है, इसलिए उसे दूर करने के प्रयत्न में अनेक मुक्ति युद्ध लड़े गए हैं। चूंकि जापान अब चीन का उत्पीड़न करने के लिए और चीनी क्रान्ति की प्रगति को पूर्णतः रोकने के लिए युद्ध का इस्तेमाल कर रहा है, इसलिए इस रुकावट को दूर करने के अपने संकल्प में चीन के सामने दृढ़ता के साथ जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध चलाने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं है। जब रुकावटें दूर हो जाएंगी, तो राजनीतिक लक्ष्य प्राप्त हो जाएगा और युद्ध रुक जाएगा।

लेकिन अगर रुकावटें पूरी तरह से दूर नहीं होंगी, तो युद्ध को उस समय तक जारी रहना होगा जब तक लक्ष्य पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं कर लिया जाता। मिसाल के लिए, अगर कोई यह चाहेगा कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का उद्देश्य पूरा होने के पहले ही समझौता हो जाए, तो वह निश्चय ही असफल होगा; क्योंकि यदि किन्हीं कारणों से समझौता हो भी गया, तो भी युद्ध फिर से शुरू हो जाएगा, क्योंकि व्यापक जनता उसे हरगिज स्वीकार नहीं करेगी, बल्कि युद्ध को तब तक जारी रखेगी जब तक कि उसका राजनीतिक उद्देश्य पूर्णतः प्राप्त नहीं हो जाता। इसलिए यह कहा जा सकता है कि राजनीति रक्तपातहीन युद्ध है जबकि युद्ध रक्तपातयुक्त राजनीति है।

६५. युद्ध की विशिष्टताओं से युद्ध के लिए विशेष प्रकार के संगठनों के समूह, सिलसिलेवार विशेष प्रकार के तरीकों और विशेष प्रकार की प्रक्रिया का जन्म होता है। ये संगठन हैं हथियारबन्द फौजें और उनके साथ चलने वाली तमाम चीजें। ये तरीके हैं युद्ध के निर्देशन की रणनीति और कार्यनीति। और यह प्रक्रिया है सामाजिक कार्यवाही का वह विशिष्ट रूप जिसमें दोनों पक्षों की सशस्त्र फौजें अपने लिए अनुकूल और दुश्मन के लिए प्रतिकूल रणनीति और कार्यनीतियां अपनाकर एक दूसरे पर आक्रमण करती हैं या एक दूसरे से अपनी रक्षा करती हैं। इसलिए युद्ध का अनुभव एक विशेष प्रकार का अनुभव है। युद्ध में हिस्सा लेने वाले सभी लोगों को चाहिए कि वे अपनी साधारण आदतों को छोड़कर अपने आपको युद्ध का आदी बना लें; केवल तभी वे विजय प्राप्त कर सकते हैं।

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के लिए राजनीतिक जत्थेबन्दी

६६. हमारे जैसे महान राष्ट्रीय क्रान्तिकारी युद्ध में व्यापक और गहन राजनीतिक जत्थेबन्दी के बिना विजय प्राप्त नहीं की जा सकती। प्रतिरोध-युद्ध शुरू होने के पहले जापान का प्रतिरोध करने के लिए राजनीतिक जत्थेबन्दी करने का काम नहीं किया गया; यह एक बहुत बड़ी कमजोरी रही, जिसकी वजह से चीन जापान से एक कदम पीछे रह गया। युद्ध शुरू होने के बाद भी, गहन राजनीतिक जत्थेबन्दी की बात तो दूर रही, व्यापक राजनीतिक जत्थेबन्दी भी नहीं हुई। जनता की विशाल बहुसंख्या को युद्ध की खबर दुश्मन की गोलाबारी और हवाई बमबारी द्वारा ही मिली। यह भी एक प्रकार की जत्थेबन्दी ही थी, लेकिन वह हमारे लिए दुश्मन द्वारा की गई थी, न कि हमारे द्वारा। सुदूर क्षेत्रों के लोग, जिन तक गोलाबारी की आवाज नहीं पहुंची, अब भी पहले ही जैसे शान्ति से जीवन बिता रहे हैं। इस स्थिति को बदलना होगा, अन्यथा हम अपने जीवन-मरण के युद्ध में विजय नहीं प्राप्त कर सकते। एक और कदम के मामले में हमें अपने दुश्मन से पीछे कतई नहीं रहना चाहिए; इसके विपरीत, हमें इस कदम का, राजनीतिक जत्थेबन्दी का, पूरा-पूरा फायदा उठाकर दुश्मन से बाजी मार लेनी चाहिए। यह एक निर्णायक कदम है; दरअसल सर्वोच्च महत्व का कदम है, जबकि हथियारों तथा अन्य बातों में हमारी कमजोरी केवल गौण महत्व की बात है। सारे देश की आम जनता को जत्थेबन्द करके हम उसे एक ऐसे विशाल सागर में बदल देंगे जिसमें हमारा दुश्मन डूब मरने की स्थिति में

पड़ जाएगा, तथा हम ऐसी परिस्थिति पैदा कर लेंगे जिसकी मदद से हथियारों और दूसरी बातों में अपनी कमी को दूर कर सकें और ऐसी पूर्वशर्तें तैयार कर लेंगे जिनकी मदद से युद्ध में हर कठिनाई पर काबू पा सकें। विजय प्राप्त करने के लिए हमें अविचल रूप से प्रतिरोध-युद्ध चलाते रहना चाहिए, संयुक्त मोर्चे को कायम रखना चाहिए और दीर्घकालीन युद्ध जारी रखना चाहिए। लेकिन इनमें से किसी भी काम को आम जनता की जत्थेबन्दी के काम से अलग नहीं किया जा सकता। राजनीतिक जत्थेबन्दी के काम की उपेक्षा करके विजय प्राप्त करने की इच्छा रखने का मतलब है "रथ को उत्तर की ओर हांकते हुए दक्षिण की ओर जाने" की इच्छा रखना, इसका नतीजा लाजमी तौर पर यह होगा कि हम अपनी विजय से हाथ धो बैठेंगे।

६७. राजनीतिक जत्थेबन्दी का मतलब क्या है? इसका मतलब है, पहला, फौज और जनता को यह बताना कि युद्ध का राजनीतिक उद्देश्य क्या है। हर सैनिक और हर नागरिक को यह समझाया जाना बहुत जरूरी है कि युद्ध क्यों लड़ा जाना चाहिए और उसका युद्ध से क्या सम्बन्ध है। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का राजनीतिक उद्देश्य है "जापानी साम्राज्यवाद को बाहर खदेड़ देना और स्वतंत्रता तथा समानता वाले नए चीन का निर्माण करना"; यह राजनीतिक उद्देश्य हमें तमाम लोगों – तमाम सैनिकों और तमाम असैनिक लोगों – को बता देना चाहिए; केवल तभी हम एक जापान-विरोधी उभार पैदा कर सकते हैं और दसियों करोड़ लोगों को युद्ध के लिए अपना सब कुछ दे डालने के लिए एकजुट कर सकते हैं। दूसरा, उन्हें केवल उद्देश्य बता देना ही काफी नहीं है; इस उद्देश्य की प्राप्ति

के लिए निर्धारित कदमों और नीतियों को भी स्पष्ट कर देना चाहिए, यानी एक राजनीतिक कार्यक्रम भी होना चाहिए। हमारे पास "जापान का प्रतिरोध करने और देश को बचाने का दससूत्री कार्यक्रम" और "सशस्त्र प्रतिरोध व राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का कार्यक्रम" मौजूद ही हैं; हमें इन दोनों कार्यक्रमों का फौजों और जनता के बीच व्यापक रूप से प्रचार-प्रसार करना चाहिए और उन्हें कार्यरूप में परिणत करने के लिए उन सबको गोलबन्द करना चाहिए। एक स्पष्ट और ठोस राजनीतिक कार्यक्रम के बिना जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को अन्त तक चलाने के लिए सभी फौजों और समूची जनता को गोलबन्द करना असम्भव है। तीसरा, यह जत्थेबन्दी किस प्रकार की जाए? यह जत्थेबन्दी भाषणों के जरिए, पर्चों और बुलेटिनों के जरिए, अखबारों, किताबों और पुस्तिकाओं के जरिए, नाटकों और फिल्मों के जरिए, विद्यालयों, जन-संगठनों और अपने कार्यकर्ताओं के जरिए की जानी चाहिए। क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में इस बारे में अब तक जो कुछ किया गया है, वह समुद्र में एक बूंद के समान है। और जो किया भी गया है वह इस ढंग से किया गया है जो जनता की रुचि के अनुकूल नहीं है तथा उसे करने में जनता की भावनाओं का खयाल नहीं रखा गया है; इसमें संजीदगी से सुधार किया जाना चाहिए। चौथा, केवल एक बार जत्थेबन्दी कर लेना ही काफी नहीं है; जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के लिए राजनीतिक जत्थेबन्दी लगातार जारी रहनी चाहिए। हमारा काम यह नहीं है कि हम अपने राजनीतिक कार्यक्रम को लोगों के सामने दोहरा भर दें, क्योंकि इस प्रकार दोहराने से उसे कोई भी नहीं सुनेगा; बल्कि हमें युद्ध के लिए राजनीतिक जत्थेबन्दी करने के

काम को युद्ध के घटना-क्रम से, सैनिकों और आम जनता के जीवन से जोड़ देना चाहिए और उसे एक आन्दोलन के रूप में लगातार चलाते रहना चाहिए। यह एक बेहद महत्व का मामला है जिस पर युद्ध में हमारी विजय मुख्य रूप से निर्भर है।

युद्ध का उद्देश्य

६८. यहां हम युद्ध के राजनीतिक उद्देश्य की चर्चा नहीं कर रहे हैं; क्योंकि यह तो हम पहले ही बता चुके हैं कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का राजनीतिक उद्देश्य "जापानी साम्राज्यवाद को बाहर खदेड़ देना और स्वतंत्रता तथा समानता वाले नए चीन का निर्माण करना" है। यहां हम रक्तपातपूर्ण राजनीति के रूप में युद्ध के, विरोधी सेनाओं द्वारा किए जाने वाले एक दूसरे के कत्लेआम के रूप में युद्ध के बुनियादी उद्देश्य की चर्चा कर रहे हैं। ठोस रूप में युद्ध का उद्देश्य "अपने को सुरक्षित रखना और दुश्मन को नष्ट करना" ही है (दुश्मन को नष्ट करने का मतलब है उसे निश्शस्त्र बना देना अथवा "उसे प्रतिरोध करने की शक्ति से वंचित कर देना", न कि उसके हर सदस्य को शारीरिक रूप से नष्ट करना)। प्राचीन काल के युद्ध में भाले और ढाल का इस्तेमाल होता था। भाले का इस्तेमाल दुश्मन पर हमला करने और उसे नष्ट करने के लिए होता था, जबकि ढाल का इस्तेमाल अपना बचाव करने और अपनी हिफाजत करने के लिए होता था। आज के शस्त्रास्त्र भाले और ढाल के ही विकसित रूप हैं। बमवर्षक विमान, मशीनगन, दूरमारक तोप और जहरीली गैस भाले के ही विकसित रूप हैं,

जबकि हवाई हमले से बचने के लिए बनाए जाने वाले सुरक्षा-स्थान, लोहे के टोप, कंकरीट की किलेबन्दियां और गैस से बचने वाले नकाब ढाल के ही विकसित रूप हैं। टैंक नए प्रकार का हथियार है जिसमें भाले और ढाल दोनों के कामों को एक में जोड़ दिया गया है। हमला करना दुश्मन को नष्ट करने का एक मुख्य साधन है, लेकिन बचाव के बिना भी काम नहीं चल सकता। हमला करते समय हमारा सीधा मकसद जहां दुश्मन को नष्ट करना होता है, वहां साथ ही अपनी हिफाजत करना भी होता है, क्योंकि अगर दुश्मन को नष्ट न किया गया तो खुद हमें ही नष्ट कर दिया जाएगा। बचाव करते समय हमारा सीधा मकसद अपनी हिफाजत करना होता है, लेकिन साथ ही बचाव को हम हमले का पूरक अथवा हमला करने की तैयारी का एक साधन भी बनाते हैं। पीछे हटना बचाव की श्रेणी में आता है और यह बचाव का ही एक जारी रूप है, जबकि पीछा करना हमले का ही एक जारी रूप है। यह बता दिया जाना चाहिए कि दुश्मन को नष्ट करना युद्ध का मुख्य उद्देश्य है और अपने को सुरक्षित रखना उसका गौण उद्देश्य है, क्योंकि दुश्मन को बड़ी संख्या में नष्ट करके ही हम पुरअसर तरीके से अपनी हिफाजत कर सकते हैं। इसलिए दुश्मन को नष्ट करने के मुख्य साधन के रूप में हमले का स्थान मुख्य है, जबकि दुश्मन को नष्ट करने के सहायक साधन अथवा अपनी हिफाजत के एक साधन के रूप में बचाव का स्थान गौण है। हालांकि वास्तविक युद्ध में अनेक अवसरों पर बचाव लड़ाई का मुख्य रूप होता है और अन्य अवसरों पर हमला लड़ाई का मुख्य रूप होता है, फिर भी यदि युद्ध को समूचे रूप में देखा जाए तो हमले का स्थान मुख्य होता है।

६९. युद्ध में किए जाने वाले शौर्यपूर्ण आत्म-बलिदानों को प्रोत्साहन देने के औचित्य को हम भला कैसे साबित कर सकते हैं ? क्या इसके और "अपने को सुरक्षित रखने" के बीच अन्तरविरोध नहीं है ? नहीं, इनके बीच कोई अन्तरविरोध नहीं है । आत्म-बलिदान और अपनी हिफाजत जहां एक दूसरे के विपरीत हैं, वहां एक दूसरे के पूरक भी हैं। युद्ध रक्तपातपूर्ण राजनीति है, जिसकी कीमत चुकानी ही होती है और कभी-कभी तो बहुत भारी कीमत चुकानी होती है । आंशिक और अस्थाई आत्म-बलिदान (असुरक्षा) का उद्देश्य सर्वांग और स्थाई सुरक्षा करना है । ठीक इसी वजह से हम यह कहते हैं कि हमला करना, जो बुनियादी तौर पर दुश्मन को नष्ट करने का एक साधन है, अपनी हिफाजत करने के साधन का भी काम देता है। और ठीक यही कारण है कि बचाव के साथ-साथ हमला भी करना चाहिए, और केवल विशुद्ध बचाव में ही नहीं लगे रहना चाहिए।

७०. युद्ध का उद्देश्य, यानी अपने को सुरक्षित रखना और दुश्मन को नष्ट करना ही युद्ध का मूलतत्व और युद्ध की तमाम कार्यवाहियों का आधार है, एक ऐसा मूलतत्व जो युद्ध की तकनीकी कार्यवाहियों से लेकर उसकी रणनीतिक कार्यवाहियों तक सभी में निहित है। युद्ध का उद्देश्य युद्ध का बुनियादी उसूल होता है और तकनीक, कार्य-नीति, मुहिम या रणनीति से सम्बन्धित तमाम धारणाएं या उसूल उससे किसी भी हालत में अलग नहीं किए जा सकते। मिसाल के लिए, निशानेबाजी में "आड़ लेने और गोलाबारी की शक्ति का पूर्ण उपयोग करने" के उसूल का क्या अर्थ है ? इनमें से पहला अपनी हिफाजत के लिए तथा दूसरा दुश्मन को नष्ट करने के लिए है। पहले से इस प्रकार के तरीके निकलते हैं – जैसे धरातल और उसकी बनावट का उपयोग करना, कुदान मारकर आगे बढ़ना, फौजी दस्तों को फैलाना । दूसरे से इस प्रकार के तरीके निकलते हैं – जैसे फार्यारंग रेंज को साफ करना, फार्यारंग के जाल का संगठन करना । जहां तक कार्यनीतिक कार्यवाहियों में धावा बोलने वाले दस्तों, रोके रखने वाले दस्तों और रिजर्व दस्तों का सम्बन्ध है, इनमें से पहला दुश्मन को नष्ट करने के लिए और दूसरा अपनी हिफाजत करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है, जबकि तीसरे का उपयोग परिस्थितियों के अनुसार इन दोनों में से किसी एक उद्देश्य के लिए किया जाता है – या तो दुश्मन को नष्ट करने के लिए (इस स्थिति में यह धावा बोलने वाले दस्तों की कुमक के रूप में काम करता है या पीछा करने वाले दस्तों का काम करता है), या अपनी हिफाजत करने के लिए (इस स्थिति में यह रोके रखने वाले दस्तों की कुमक के रूप में काम करता है अथवा अपनी फौजों की आड़ के रूप में काम करता है) । इस प्रकार किसी भी तकनीक, कार्यनीति, मुहिम या रणनीति के उसूल या कार्यवाही को युद्ध के उद्देश्य से किसी भी मायने में अलग नहीं किया जा सकता। यह उद्देश्य समूचे युद्ध में व्याप्त होता है और शुरू से अन्त तक लागू होता है।

७१. जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का निर्देशन करने में, विभिन्न स्तर के नेताओं को न तो चीन और जापान दोनों पक्षों में मौजूद विभिन्न प्रकार के परस्पर विपरीत बुनियादी तत्वों को और न इस युद्ध के उद्देश्य को अपनी दृष्टि से ओझल होने देना चाहिए। फौजी कार्यवाहियों के दौरान, ये विभिन्न परस्पर विपरीत बुनियादी तत्व प्रत्येक पक्ष द्वारा अपनी हिफाजत और दुश्मन का विनाश करने के लिए चलाए जाने वाले संघर्ष के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। अपने युद्ध

में हम हर मुठभेड़ में जीत हासिल करने, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, और दुश्मन के एक हिस्से को निहत्था बना देने तथा उसके सिपाहियों और साधनों के एक अंश का विनाश करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। हमें दुश्मन का विनाश करने के इन आंशिक परिणामों को एकत्र करके उन्हें अपनी बड़ी रणनीतिक जीतों में बदल देना चाहिए, जिससे कि दुश्मन को बाहर खदेड़ने, अपनी मातृभूमि की रक्षा करने और एक नए चीन का निर्माण करने के अपने अन्तिम राज-नीतिक उद्देश्य को प्राप्त कर लिया जाए।

रक्षात्मक कार्यवाही के दौरान आक्रमणात्मक कार्यवाही, दीर्घकालीन युद्ध के दौरान तुरत निर्णय की लड़ाइयां और भीतरी सैन्य-पंक्तियों के अन्दर बाहरी सैन्य-पंक्तियां

७२. आइए, अब हम जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की ठोस रणनीति का अध्ययन करें। हम कह चुके हैं कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के लिए हमारी रणनीति दीर्घकालीन युद्ध की रणनीति है; और यह बात दरअसल बिलकुल सही है। लेकिन यह रणनीति एक आम रणनीति है, ठोस रणनीति नहीं। ठोस रूप से, दीर्घकालीन युद्ध किस प्रकार चलाया जाए? अब हम इसी समस्या पर विचार करेंगे। हमारा उत्तर है: युद्ध की पहली और दूसरी मंजिलों में, यानी दुश्मन के आक्रमण की मंजिल तथा दुश्मन द्वारा अपनी उपलब्धियों की हिफाजत करने की मंजिल में, हमें रणनीतिक

रक्षा के दौरान मुहिमों और लड़ाइयों में आक्रमणात्मक लड़ाइयां चलानी चाहिए, रणनीतिक दीर्घकालीन युद्ध के दौरान मुहिमों और लड़ाइयों में तुरत निर्णय की लड़ाइयां चलानी चाहिए और रणनीतिक भीतरी सैन्य-पंक्तियों के अन्दर मुहिमों और लड़ाइयों में बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करनी चाहिए। तीसरी मंजिल में, हमें रणनीतिक प्रत्याक्रमण का युद्ध करना चाहिए।

७३. चूंकि जापान एक मजबूत साम्राज्यवादी देश है और हमारा देश एक कमजोर अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती देश है, इसलिए जापान ने रणनीतिक आक्रमण की नीति अपनाई हुई है और हम रणनीतिक रक्षा की स्थिति में हैं। जापान तुरत निर्णय के युद्ध की रणनीति लागू करने की कोशिश कर रहा है, जबकि हमें जागरूक होकर दीर्घकालीन युद्ध की रणनीति अपनानी चाहिए। जमीन और समुद्र दोनों ही ओर से चीन की घेरेबन्दी और नाकेबन्दी करने के लिए जापान अपनी स्थल-सेना की काफी ज्यादा युद्ध-क्षमता वाली दर्जनों डिवीजनों का (जिनकी संख्या अब ३० तक पहुंच गई है) और अपनी नौसेना के एक भाग का इस्तेमाल कर रहा है और चीन पर बमबारी के लिए अपनी वायु-सेना का प्रयोग कर रहा है। अब उसकी स्थल-सेना ने पाओथओ से लेकर हाङचओ तक एक लम्बा मोर्चा कायम कर लिया है, और उसकी नौसेना फ़ूच्येन और क्वाङतुङ तक पहुंच गई है; इस प्रकार बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली फौजी कार्यवाहियां बहुत बड़े पैमाने पर फैल गई हैं। दूसरी ओर हम भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली फौजी कार्यवाहियों की स्थिति में हैं। ये सब बातें इस विशेषता के कारण पैदा हुई हैं कि दुश्मन मजबूत है और हम कमजोर हैं। यह स्थिति का एक पहलू है।

७४. लेकिन एक अन्य पहलू ठीक इसका उल्टा है। जापान यद्यपि मजबूत है, लेकिन उसके पास पर्याप्त संख्या में सैनिक नहीं हैं। चीन यद्यपि कमजोर है, लेकिन उसका क्षेत्रफल विशाल है, जनसंख्या बहुत अधिक है और उसके पास सैनिकों की संख्या बहुत है। इससे दो महत्वपूर्ण नतीजे निकलते हैं। पहले, दुश्मन एक बड़े देश की धरती पर अपनी छोटी सैन्य-शक्ति के जरिए केवल कुछ बड़े शहरों और कुछ मुख्य संचार-पंक्तियों व कुछ मैदानी इलाकों पर ही अधिकार कर सकता है। इस प्रकार इसके द्वारा अधिकृत प्रदेश में विशाल क्षेत्र ऐसे रह जाते हैं जहां वह अपनी गैरिजन सेनाएं नहीं रख पाता, और जो चीन के छापामार युद्ध के लिए कार्यवाही करने का एक विशाल क्षेत्र प्रदान करते हैं। समूचे चीन को देखते हुए यदि दुश्मन क्वाङचओ, ऊहान और लानचओ को जोड़ने वाली लाइन और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों पर अधिकार कर भी ले, तो भी उसके लिए उनसे आगे के इलाकों पर अधिकार करना मुश्किल है, जिससे चीन के पास एक आम पृष्ठभाग और मुख्य आधार-क्षेत्र बच जाते हैं जहां से वह अपनी अन्तिम विजय तक एक दीर्घकालीन युद्ध चला सकता है। दूसरे, दुश्मन की छोटी फौजों की हमारी बड़ी फौजों से टक्कर होने के कारण दुश्मन हमारी बड़ी फौजों की घेरेबन्दी में आ जाता है। दुश्मन कई रास्तों से हम पर हमला कर रहा है; वह रणनीतिक बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर कार्यवाही कर रहा है, जबकि हम रणनीतिक भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर कार्यवाही कर रहे हैं, वह रणनीतिक आक्रमणात्मक स्थिति में है जबकि हम रणनीतिक रक्षात्मक स्थिति में ; यह सब हमारे लिए बड़ा प्रतिकूल प्रतीत होता है। परन्तु, हम अपनी दो अनुकूल बातों का अर्थात अपने विशाल प्रदेश और अपनी बड़ी फौज

का फायदा उठा सकते हैं, और जमकर मोर्चेबद्ध लड़ाई चलाने के बजाय, चलायमान लड़ाई की लचीली कार्यनीति अपना सकते हैं और दुश्मन की एक डिवीजन के खिलाफ अनेक डिवीजनें लगा सकते हैं, दुश्मन के दस हजार सैनिकों के खिलाफ अपने दसियों हजार सैनिक भिड़ा सकते हैं, दुश्मन के एक कालम के मुकाबले अपने कई कालम भेज सकते हैं, और रणभूमि की बाहरी सैन्य-पंक्तियों से दुश्मन के एक कालम को अचानक घेर सकते हैं तथा उस पर हमला कर सकते हैं। इस प्रकार, यद्यपि रणनीतिक कार्यवाहियों में दुश्मन बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर लड़ रहा है और आक्रमणात्मक कार्यवाहियां कर रहा है, लेकिन मुहिमों और लड़ाइयों में वह भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर लड़ने तथा रक्षात्मक कार्यवाहियां करने के लिए बाध्य हो जाएगा। रणनीतिक कार्यवाहियों में हमारी भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर लड़ने और रक्षात्मक कार्यवाहियां करने की स्थिति, मुहिमों और लड़ाइयों में बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर लड़ने और आक्रमणात्मक कार्यवाहियां करने की स्थिति का रूप ले लेती है। इस ढंग से हम दुश्मन के एक या उसके किसी भी आगे बढ़ते हुए कालम से निपट सकते हैं। जिन नतीजों की ऊपर चर्चा की गई है वे इस तथ्य पर आधारित हैं कि दुश्मन छोटा है जबकि हम बड़े हैं। इसके अलावा, चूंकि दुश्मन की फौजें कम होते हुए भी मजबूत हैं (हथियारों व प्रशिक्षण में), जबकि हमारी फौजें ज्यादा होते हुए भी कमजोर हैं (हथियारों व प्रशिक्षण में, न कि मनोबल में), इसलिए हमें मुहिमों और लड़ाइयों में न केवल कम फौजों के खिलाफ ज्यादा फौजें लगानी चाहिए और न केवल भीतरी सैन्य-पंक्तियों के खिलाफ बाहरी सैन्य-पंक्तियों से कार्यवाहियां करनी चाहिए, बल्कि तुरत निर्णय की लड़ाई की नीति

भी अपनानी चाहिए। तुरत निर्णय के लिए, हमें आम तौर पर दुश्मन की स्थिर फौज पर नहीं बल्कि उसकी चलती-फिरती फौज पर हमला करना चाहिए। जिस रास्ते से दुश्मन निश्चित रूप से गुजरने वाला हो, उस रास्ते के किनारे हमें पहले से ही चुपके-चुपके अपनी बड़ी फौज जमा कर लेनी चाहिए; और जब वह कूच कर रहा हो, तभी अचानक उस पर टूट पड़ना चाहिए और पेश्तर इसके कि वह जान पाए कि क्या हो रहा है, उसे घेरकर उस पर हमला कर देना चाहिए और इस तरह लड़ाई को शीघ्र ही समाप्त कर देना चाहिए। यदि लड़ाई अच्छी तरह लड़ी गई, तो हम दुश्मन की सारी फौज, या उसके बड़े हिस्से अथवा एक हिस्से का विनाश कर सकते हैं। यदि लड़ाई अच्छी तरह नहीं लड़ी गई, तो भी हम उसे भारी संख्या में हताहत कर सकते हैं। यह बात हमारी हर किसी लड़ाई पर लागू होती है। हर महीने यदि हम फिङशिङक्वान और थाएअड़-च्वाङ जैसी एक अपेक्षाकृत बड़ी जीत हासिल कर लें, ज्यादा जीतों की बात तो अलग रही, तो यह दुश्मन के मनोबल को अत्यधिक पस्त कर देगी, हमारी सेना के मनोबल को ऊंचा उठाएगी और हमें अन्तरराष्ट्रीय समर्थन दिलाने का आवाहन करेगी। इस प्रकार हमारा रणनीतिक दीर्घकालीन युद्ध रणभूमि में तुरत निर्णय की लड़ाइयों का रूप धारण कर लेता है। अनेक मुहिमों और लड़ाइयों में दुश्मन की हार हो जाने के बाद, उसका रणनीति की दृष्टि से तुरत निर्णय का युद्ध लाजमी तौर पर दीर्घकालीन युद्ध में बदल जाएगा।

७५. एक शब्द में, मुहिमें और लड़ाइयां चलाने के बारे में ऊपर बताया गया कार्यवाही सम्बन्धी उसूल, "बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई" चलाने का उसूल है। यह "भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर दीर्घकालीन रक्षात्मक युद्ध" चलाने के हमारे रणनीतिक उसूल के विपरीत है, लेकिन फिर भी यह इस प्रकार के रणनीतिक उसूल को पूरा करने के लिए अनिवार्य है। यदि मुहिमों और लड़ाइयों के लिए भी "भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर दीर्घकालीन रक्षात्मक लड़ाई" को उसूल के तौर पर इस्तेमाल किया गया होता, जैसा कि प्रतिरोध-युद्ध के शुरू के दिनों में किया गया था, तो यह निश्चय ही इन परिस्थितियों में, जिनमें दुश्मन छोटा और हम बड़े हैं तथा दुश्मन मजबूत और हम कमजोर हैं, बिलकुल अनुपयुक्त होता; और तब हम सम्पूर्ण रूप से युद्ध को दीर्घकालीन बनाने का अपना रणनीतिक उद्देश्य प्राप्त करने में निश्चय ही असफल हो जाते और दुश्मन द्वारा पराजित कर दिए जाते। इसीलिए हमने हमेशा इसी नीति का प्रतिपादन किया है कि समूचे देश की फौजों को अनेक रणांगन फौजी फारमेशनों में संगठित किया जाए तथा उनमें से प्रत्येक को दुश्मन की एक-एक रणांगन फौजी फारमेशन का मुकाबला करने के लिए लगा दिया जाए, लेकिन उसकी शक्ति दुश्मन की सेना से दुगुनी, तिगुनी या चौगुनी रखी जाए, और इस प्रकार ऊपर निर्धारित किए गए उसूल के अनुसार दुश्मन को व्यापक रणभूमि में फंसाए रखा जाए। "बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई" चलाने का यह उसूल नियमित युद्ध और छापामार युद्ध दोनों में ही लागू किया जा सकता है और किया भी जाना चाहिए। इसे युद्ध की सिर्फ किसी एक मंजिल के लिए नहीं, बल्कि उसके पूरे दौर के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। रणनीतिक प्रत्याक्रमण की मंजिल

में, जब हम एक बेहतर तकनीक से लैस हो जाते हैं और कमजोर शक्ति का पाला मजबूत शक्ति से पड़ जाने की स्थिति में बिलकुल नहीं रह जाते, तब अगर हम दुश्मन से कहीं ज्यादा फौजों को इस्तेमाल करके बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाइयां चलाते रहें, तो हम और अधिक कारगर ढंग से दुश्मन के सिपाहियों को भारी संख्या में बन्दी बना सकेंगे और भारी मात्रा में उसका सामान आदि छीन सकेंगे। मिसाल के लिए, यदि हम अपनी दो, तीन या चार यन्त्रीकृत डिवीजनें दुश्मन की एक यन्त्रीकृत डिवीजन के खिलाफ लगा दें, तो हम उसका विनाश करने की और अधिक पक्की गारन्टी कर सकते हैं। यह एक साधारण बुद्धि की बात है कि कई हृष्ट-पुष्ट आदमी हाथापाई में एक हृष्ट-पुष्ट आदमी को आसानी से हरा सकते हैं।

७६. यदि हम रणभूमि में "बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई" चलाने की नीति को दृढ़ता से अपनाएं, तो हम न सिर्फ उस रणभूमि में दुश्मन और हमारे बीच की मजबूती और कमजोरी, बरतरी और कमतरी की स्थिति को बदल देंगे, बल्कि कदम-ब-कदम आम स्थिति को भी बदल देंगे। रणभूमि में हम आक्रमणात्मक स्थिति में होंगे और दुश्मन रक्षात्मक स्थिति में होगा ; हम अधिक फौजों के साथ बाहरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करेंगे और दुश्मन थोड़ी फौजों के साथ भीतरी सैन्य-पंक्ति वाली कार्यवाहियां करेगा ; हम तुरत निर्णय की लड़ाइयां लड़ेंगे और दुश्मन अपनी भरसक कोशिश के बावजूद कुमक की प्रतीक्षा में लड़ाई को लम्बा नहीं खींच सकेगा ; इन सभी बातों के कारण, दुश्मन मजबूती से कमजोरी और बरतरी से कमतरी की

स्थिति में पहुंचता जाएगा, जबकि हमारी फौजें कमजोरी से मजबूती और कमतरी से बरतरी की स्थिति में पहुंचती जाएंगी। इस प्रकार की अनेक लड़ाइयों में विजय प्राप्त कर लेने के बाद हमारे और दुश्मन के बीच की आम स्थिति बदल जाएगी। इसका मतलब यह है कि अनेक रणभूमियों में बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाइयों द्वारा प्राप्त विजयों का कुल मिलाकर नतीजा यह होगा कि हम कदम-ब-कदम अपने को मजबूत और दुश्मन को कमजोर बना देंगे, और यह बात दुश्मन और हमारे बीच की मजबूती और कमजोरी, बरतरी और कमतरी की आम स्थिति पर जरूर अपना प्रभाव डालेगी और उसे जरूर बदल देगी। जब ऐसा हो जाएगा, तो ये परिवर्तन, हमारे पक्ष के अन्य तत्वों, दुश्मन के खेमे में होने वाले परिवर्तनों तथा हमारे अनुकूल अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति के साथ मिलकर हमारे और दुश्मन के बीच की सम्पूर्ण परिस्थिति को बदल देंगे और हम पहले दुश्मन की बराबरी की स्थिति में और फिर उसके मुकाबले बरतरी की स्थिति में पहुंच जाएंगे। दुश्मन पर प्रत्याक्रमण शुरू करने तथा उसे अपने देश से बाहर खदेड़ देने के लिए हमारे लिए यही उपयुक्त समय होगा।

७७. युद्ध एक प्रकार की शक्ति-प्रतियोगिता है, लेकिन युद्ध के दौरान शक्ति की मौलिक स्थिति में परिवर्तन हो जाता है। इस मामले में निर्णायक तत्व मनोगत प्रयत्न – अधिक से अधिक विजय प्राप्त करना और कम से कम गलतियां करना – होता है। वस्तुगत तत्व ऐसे परिवर्तन की सम्भावना पैदा करते हैं, लेकिन इस सम्भावना को वास्तविकता का रूप देने के लिए सही नीति और मनोगत प्रयत्न

दोनों ही जरूरी हैं। ऐसी स्थिति में मनोगत तत्व ही निर्णायक भूमिका अदा करता है।

पहलकदमी, लचीलापन और योजना

७८. मुहिमों और लड़ाइयों में बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई की, जिसकी चर्चा ऊपर की गई है, सबसे महत्वपूर्ण बात आक्रमण है ; बाहरी सैन्य-पंक्तियों से मतलब है आक्रमण का दायरा और तुरत निर्णय से मतलब है आक्रमण की अवधि। इसलिए हम इसे "बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई" का नाम देते हैं। दीर्घकालीन युद्ध के लिए यह सबसे अच्छा उसूल है तथा यही उसूल चलायमान लड़ाई का उसूल भी कहलाता है। लेकिन इस उसूल को पहलकदमी, लचीलेपन और योजना के बिना लागू नहीं किया जा सकता। अब हम इन तीन मसलों पर विचार करेंगे।

७९. जब हम मनुष्य की जागरूक गत्यात्मक भूमिका के बारे में पहले ही चर्चा कर चुके हैं तो अब पहलकदमी की फिर क्यों चर्चा करें? जागरूक गत्यात्मक भूमिका से हमारा मतलब जागरूक कार्यवाही और प्रयत्न से है। यह मनुष्य की एक विशेषता है जो उसे अन्य सभी वस्तुओं से भिन्न बना देती है और मनुष्य की यह विशेषता युद्ध में सबसे ज्यादा तीव्रता से व्यक्त होती है ; इन सब बातों की चर्चा पहले ही की जा चुकी है। यहां पहलकदमी से हमारा मतलब है फौज की वह स्थिति जिसमें उसे कार्यवाही करने की स्वतंत्रता प्राप्त रहती है, और जो उस स्थिति से भिन्न है जिसमें फौज की यह स्वतंत्रता उससे जबरन छिन जाती है। कार्यवाही करने की स्वतंत्रता ही किसी फौज का प्राण है और यदि एक बार यह स्वतंत्रता उससे छिन गई तो वह अपनी पराजय या अपने विनाश के नजदीक पहुंच जाती है। किसी सैनिक का निहत्था हो जाना उसे एक निष्क्रिय स्थिति में धकेलकर उसकी कार्यवाही की स्वतंत्रता छीन लेने का ही नतीजा है। यही बात किसी फौज की हार के बारे में भी सच है। यही कारण है कि युद्ध में दोनों पक्ष पहलकदमी हासिल करने और निष्क्रियता की स्थिति से बचने की भरसक कोशिश करते हैं। हम कह सकते हैं कि बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई, जिसका हम प्रतिपादन करते हैं और साथ ही इस प्रकार की लड़ाई को चलाने के लिए आवश्यक लचीलेपन और योजना की हमारी नीति — इन सबका मकसद यह है कि खुद पहलकदमी हासिल करके दुश्मन को निष्क्रियता की स्थिति में डाल दिया जाए और अपने को सुरक्षित रखने और दुश्मन को नष्ट करने के उद्देश्य को हासिल कर लिया जाए। लेकिन पहलकदमी या निष्क्रियता की स्थिति को युद्ध चलाने की क्षमता की बरतरी या कमतरी से अलग नहीं किया जा सकता। और फलतः इसे युद्ध के सही या गलत मनोगत निर्देशन से भी अलग नहीं किया जा सकता। इसके अलावा दुश्मन की गलत धारणाओं और उसकी तैयारी न होने की स्थिति का फायदा उठाकर पहलकदमी हासिल करने और दुश्मन को निष्क्रियता की स्थिति में डालने का सवाल भी है। अब हम इन बातों का विश्लेषण करेंगे।

८०. पहलकदमी को युद्ध चलाने की क्षमता की बरतरी से अलग

नहीं किया जा सकता, जबकि निष्क्रियता को युद्ध चलाने की क्षमता की कमतरी से अलग नहीं किया जा सकता। ऐसी बरतरी या कमतरी पहलकदमी या निष्क्रियता का वस्तुगत आधार है। यह स्वाभाविक है कि रणनीतिक पहलकदमी रणनीतिक आक्रमण के युद्ध के द्वारा अधिक अच्छी तरह से कायम रखी जा सकती है और लागू की जा सकती है, लेकिन हमेशा तथा हर स्थान पर पहलकदमी बनाए रखना, यानी निरपेक्ष पहलकदमी बनाए रखना, तभी सम्भव है जब निरपेक्ष बरतरी का मुकाबला निरपेक्ष कमतरी के साथ हो। जब एक मजबूत व स्वस्थ आदमी एक गम्भीर रोगग्रस्त आदमी से कुश्ती लड़ता है, तो निरपेक्ष पहलकदमी स्वस्थ आदमी के हाथ में रहती है। यदि जापान असाध्य अन्तरविरोधों से घिरा न होता, मिसाल के लिए, यदि वह एक साथ बीसियों लाख से लेकर एक करोड़ तक की विशाल फौज भेज सकता, यदि उसके वित्तीय साधन-स्रोत उसके मौजूदा साधन-स्रोतों से कई गुना अधिक होते, यदि उसे अपने देश की जनता या विदेशों के विरोध का सामना न करना पड़ता, और यदि उसने उन बर्बरतापूर्ण नीतियों का सहारा न लिया होता जिन्होंने चीनी जनता को आखिरी दम तक प्रतिरोध करने के लिए बाध्य कर दिया है, तो वह निरपेक्ष बरतरी की स्थिति को बनाए रख सकता और हमेशा तथा हर स्थान पर निरपेक्ष पहलकदमी अपने हाथ में रख सकता था। लेकिन इतिहास में इस प्रकार की निरपेक्ष बरतरी की स्थिति किसी युद्ध या मुहिम की प्रारम्भिक मंजिलों में बहुत ही कम देखी गई है, हां उसके अन्तिम दौर में अवश्य देखी गई है। मिसाल के लिए, प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी द्वारा आत्मसमर्पण की पूर्ववेला में मित्र-राष्ट्र निरपेक्ष बरतरी की स्थिति में पहुंच गए थे और जर्मनी निरपेक्ष

कमतरी की स्थिति में। नतीजा यह हुआ कि जर्मनी पराजित हो गया और मित्र-राष्ट्र जीत गए। यह युद्ध के अन्तिम दौर में निरपेक्ष बरतरी और निरपेक्ष कमतरी की स्थिति की एक मिसाल है। और थाएअड़च्वाङ में चीन की विजय की पूर्ववेला में वहां अकेली पड़ने वाली जापानी फौज भीषण लड़ाई के बाद निरपेक्ष कमतरी की स्थिति में पहुंच गई थी, जबकि हमारी फौजें निरपेक्ष बरतरी की स्थिति में पहुंच गई थीं। फलतः दुश्मन हार गया और हम जीत गए। यह मुहिम के अन्तिम दौर में निरपेक्ष बरतरी और निरपेक्ष कमतरी की स्थिति की एक मिसाल है। युद्ध या मुहिम का अन्त सापेक्ष बरतरी की स्थिति या बराबरी की स्थिति में भी हो सकता है। ऐसी स्थिति में युद्ध में समझौता हो जाता है या मुहिम में गतिरोध पैदा हो जाता है। लेकिन अधिकांश मामलों में निरपेक्ष बरतरी और कमतरी ही युद्ध या मुहिम में जीत और हार का फैसला करती है। ये सब बातें युद्ध या मुहिम के अन्तिम दौर में ही लागू होती हैं, न कि उनके शुरू में। चीन और जापान के युद्ध के नतीजे के बारे में भविष्यवाणी की जा सकती है कि जापान निरपेक्ष कमतरी की स्थिति में पहुंचकर युद्ध में हार जाएगा और चीन अपनी निरपेक्ष बरतरी की स्थिति में पहुंचकर जीत जाएगा। लेकिन इस समय दोनों पक्षों की बरतरी या कमतरी निरपेक्ष नहीं बल्कि सापेक्ष है। अपनी फौजी, आर्थिक और राजनीतिक-संगठनात्मक शक्तिशालिता के इस अनुकूल तत्व के कारण, जापान इस समय हमारी फौजी, आर्थिक और राजनीतिक-संगठनात्मक कमजोरी के कारण हमसे बरतर स्थिति में है, जिसके परिणामस्वरूप उसकी पहलकदमी का आधार बनता है। लेकिन चूंकि फौजी और दूसरे मामलों में उसकी

शक्ति परिमाणात्मक रूप से बड़ी नहीं है, और अनेक अन्य प्रतिकूल तत्व भी उसके सामने मौजूद हैं, इसलिए उसके अपने अन्तरविरोधों के कारण उसकी बरतरी हल्की पड़ जाती है। चीन पर उसके आक्रमण के बाद उसकी बरतरी और भी अधिक हल्की पड़ गई है क्योंकि उसे चीन की विशाल भूमि, विशाल जनसंख्या और बड़ी फौज तथा दृढ़ राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध का सामना करना पड़ रहा है। इसलिए कुल मिलाकर जापान केवल सापेक्ष बरतरी की स्थिति में है और फलतः पहलकदमी करने तथा पहलकदमी बनाए रखने की उसकी क्षमता सीमित हो गई है तथा वह भी सापेक्ष बन गई है। जहां तक चीन का सवाल है, यद्यपि वह अपनी कमतर शक्ति के कारण रणनीतिक दृष्टि से कुछ-कुछ निष्क्रियता की स्थिति में है, तो भी भूमि के विस्तार, जनसंख्या और फौज की विशालता तथा अपनी जनता और फौज के मनोबल और दुश्मन के प्रति उनकी देशभक्तिपूर्ण नफरत की दृष्टि से वह बरतरी की स्थिति में है ; उसकी यह बरतरी तथा अन्य अनुकूल तत्व उसकी फौजी, आर्थिक और अन्य शक्तियों की कमतरी को कुछ हद तक कम कर देते हैं और उसे सापेक्ष रणनीतिक कमतरी में बदल देते हैं। फलतः चीन की निष्क्रियता भी कुछ हद तक कम हो जाती है और रणनीतिक दृष्टि से उसकी स्थिति केवल सापेक्ष निष्क्रियता की स्थिति बन जाती है। लेकिन निष्क्रियता की कोई भी स्थिति सदा ही प्रतिकूल होती है और उससे निकलने की भरसक कोशिश करनी चाहिए। फौजी दृष्टि से ऐसा करने का तरीका यह है कि बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई दृढ़तापूर्वक चलाई जाए, दुश्मन के पृष्ठभाग में छापामार युद्ध शुरू किया जाए जिससे कि चलायमान मुहिमों और छापामार

लड़ाइयों के दौरान दुश्मन पर हावी होने वाली आंशिक बरतरी और पहलकदमी हासिल की जा सके। अनेक मुहिमों में इस तरह की आंशिक बरतरी और आंशिक पहलकदमी हासिल करके, हम कदम-ब-कदम रणनीतिक बरतरी और रणनीतिक पहलकदमी हासिल कर सकते हैं तथा रणनीतिक कमतरी और निष्क्रियता की स्थिति से निकल सकते हैं। पहलकदमी और निष्क्रियता में, बरतरी और कमतरी में इसी प्रकार का पारस्परिक सम्बन्ध है।

८१. इससे हम यह भी समझ सकते हैं कि पहलकदमी या निष्क्रियता का युद्ध के मनोगत निर्देशन के साथ क्या सम्बन्ध है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, हम अपनी सापेक्ष रणनीतिक कमतरी व निष्क्रियता की स्थिति से निकल सकते हैं ; इसका तरीका यह है कि अनेक मुहिमों में आंशिक बरतरी व पहलकदमी की स्थिति पैदा करके दुश्मन को उसकी आंशिक बरतरी व पहलकदमी से वंचित कर दिया जाए तथा उसे कमतरी व निष्क्रियता की स्थिति में धकेल दिया जाए। इन आंशिक सफलताओं के योग से स्थिति हमारी रणनीतिक बरतरी व पहलकदमी में तथा दुश्मन की रणनीतिक कमतरी व निष्क्रियता में बदल जाएगी। इस प्रकार का परिवर्तन एक सही मनोगत निर्देशन पर निर्भर है। क्यों? इसलिए कि जब हम बरतरी और पहलकदमी हासिल करने की कोशिश करते हैं, तो दुश्मन भी ऐसा ही करता है ; इस पहलू से देखा जाए, तो युद्ध फौजी और वित्तीय शक्तियों जैसी भौतिक परिस्थितियों के आधार पर बरतरी और पहलकदमी हासिल करने के लिए संघर्ष करने वाली विरोधी फौजों के कमाण्डरों की मनोगत योग्यता की प्रतियोगिता है। इस प्रतियोगिता के फलस्वरूप एक की विजय

होती है और दूसरे की पराजय ; वस्तुगत भौतिक परिस्थितियों की तुलना की बात अलग रही, विजयी पक्ष की सफलता लाजमी तौर पर उसके सही मनोगत निर्देशन के कारण और पराजित पक्ष की हार उसके गलत मनोगत निर्देशन के कारण होती है। हम मानते हैं कि युद्ध का घटना-क्रम किसी दूसरे सामाजिक घटना-क्रम की अपेक्षा अधिक भ्रामक और कम निश्चित होता है। दूसरे शब्दों में, वह "सम्भाव्यता" का मामला अधिक है। तो भी, युद्ध कोई ऐसी चीज नहीं है जो प्रकृति से परे हो, बल्कि यह अनिवार्यता द्वारा संचालित एक सांसारिक प्रक्रिया है। इसलिए सुन ऊ चि का यह कथन कि "अपने शत्रु को जान लो और खुद अपने को जान लो, और तब तुम पराजय का खतरा उठाए बिना सौ लड़ाइयां लड़ सकते हो",[१४] आज भी एक वैज्ञानिक सत्य है। अपने और दुश्मन के बारे में अज्ञान के कारण ही गलतियां होती हैं ; और युद्ध के विशेष स्वरूप के कारण बहुत से अवसरों पर अपने और दुश्मन के बारे में पूर्ण रूप से जानकारी हासिल करना असम्भव भी होता है ; इसलिए युद्ध की परिस्थितियों और कार्यवाहियों के बारे में अनिश्चितता बनी रहती है और इसीलिए गलतियां व हारें होती हैं। लेकिन युद्ध की परिस्थितियां और कार्यवाहियां चाहे कुछ भी हों, उनके आम पहलुओं और मुख्य बातों को जान लेना सम्भव है। कोई भी कमाण्डर पहले फौजी टोह की कार्यवाहियों के जरिए सूचना एकत्र करके और तत्पश्चात बुद्धिमत्तापूर्ण निष्कर्ष निकालकर और निर्णय लेकर अपनी गलतियों को कम कर सकता है और आम तौर पर सही निर्देशन कर सकता है। "आम तौर पर सही निर्देशन" के हथियार से लैस होकर, हम अधिकाधिक लड़ाइयां जीत सकते हैं और अपनी कमतरी को बरतरी

में तथा अपनी निष्क्रियता को पहलकदमी में बदल सकते हैं। पहलकदमी या निष्क्रियता का युद्ध के सही या गलत मनोगत निर्देशन के साथ इसी प्रकार का सम्बन्ध है।

८२. जब हम इतिहास में ताकतवर और बड़ी फौजों की हार तथा कमजोर और छोटी फौजों की जीत पर नजर डालते हैं, तो यह प्रस्थापना और भी अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होने लगती है कि गलत मनोगत निर्देशन बरतरी और पहलकदमी को कमतरी और निष्क्रियता में बदल देता है और इसके विपरीत सही मनोगत निर्देशन कमतरी और निष्क्रियता को बरतरी और पहलकदमी में बदल देता है। चीन और विदेशों के इतिहास में इस तरह की बहुत सी मिसालें मौजूद हैं। चीन में इस तरह की मिसालें ये हैं : चिन राज्य और छू राज्य के बीच छङफू की लड़ाई,[१५] छू राज्य और हान राज्य के बीच छङकाओ की लड़ाई, वह लड़ाई जिसमें हान शिन ने चाओ की फौज को हराया,[१७] शिन राज्य और हान राज्य के बीच खुनयाङ की लड़ाई, य्वान शाओ और छाओ छाओ के बीच क्वानतू की लड़ाई, ऊ राज्य और वेइ राज्य के बीच छपी की लड़ाई, ऊ राज्य और शू राज्य के बीच ईलिङ की लड़ाई, छिन राज्य और चिन राज्य के बीच फ़ेइश्वेइ की लड़ाई, आदि। विदेशों में इस तरह की मिसालों में नेपोलियन द्वारा चलाई गई अधिकांश मुहिमें[१८] तथा सोवियत संघ में अक्तूबर क्रान्ति के बाद का गृहयुद्ध शामिल हैं। इन सभी लड़ाइयों में बड़ी शक्ति के विरुद्ध छोटी शक्ति ने और बरतर शक्ति के खिलाफ कमतर शक्ति ने विजय प्राप्त की थी। इन तमाम लड़ाइयों में कमजोर फौजों ने अपनी आंशिक बरतरी और पहलकदमी के जरिए दुश्मन की आंशिक कमतरी और निष्क्रियता

का मुकाबला करके दुश्मन को पहले एक लड़ाई में करारी शिकस्त दी और फिर उसकी शेष फौजों पर धावा बोलकर उनका एक-एक करके विनाश कर दिया, और इस प्रकार उन्होंने अपनी सम्पूर्ण स्थिति को बरतरी और पहलकदमी की स्थिति में बदल दिया। दुश्मन की स्थिति एकदम उल्टी थी – शुरू में वह बरतरी की स्थिति में था और पहलकदमी उसके हाथ में थी ; लेकिन मनोगत गलतियों और अन्दरूनी अन्तरविरोधों के कारण, कभी-कभी ऐसा हुआ कि वह उस बहुत अच्छी स्थिति या अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति से, जिसमें वह बरतरी की स्थिति में था और पहलकदमी उसके हाथ में थी, बिलकुल वंचित हो गया और पराजित सेना का सेनापति या बिना राज्य का राजा बन गया। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि यद्यपि युद्ध चलाने की क्षमता की बरतरी या कमतरी पहलकदमी या निष्क्रियता को निर्धारित करने वाला वस्तुगत आधार है, लेकिन यह अपने आपमें वास्तविक पहलकदमी या निष्क्रियता नहीं है। केवल संघर्ष या मनोगत योग्यता की प्रतियोगिता के जरिए ही, वास्तविक पहलकदमी या निष्क्रियता पैदा की जा सकती है। संघर्ष में सही मनोगत निर्देशन कमतरी को बरतरी में और निष्क्रियता को पहलकदमी में बदल सकता है, और गलत मनोगत निर्देशन इसका उल्टा कर सकता है। यह बात कि तमाम शासक वंश क्रान्तिकारी फौजों द्वारा पराजित कर दिए गए, यह जाहिर करती है कि केवल कुछ मायनों में बरतरी होने से ही पहलकदमी हासिल करने की गारन्टी नहीं हो जाती, अन्तिम विजय की बात तो दूर रही। कमतरी तथा निष्क्रियता वाला पक्ष वास्तविक परिस्थितियों के अनुरूप अपने सक्रिय मनोगत प्रयत्नों के जरिए विशेष परिस्थितियां पैदा करके

बरतरी तथा पहलकदमी वाले पक्ष से पहलकदमी छीन सकता है और विजय प्राप्त कर सकता है।

८३. गलत धारणाओं का शिकार होने और असावधानी में फंस जाने के कारण कोई भी पक्ष बरतरी और पहलकदमी से वंचित हो सकता है। इसलिए, योजनानुसार दुश्मन को भ्रम में डालना और फिर उस पर अचानक हमले करना, बरतरी हासिल करने और पहलकदमी छीनने के तरीके – वास्तव में महत्वपूर्ण तरीके – हैं। भ्रम क्या चीज है? "पाकुङ पहाड़ के प्रत्येक पेड़ और झाड़-झंखाड़ को दुश्मन का सिपाही समझना"[११] इस तरह के भ्रम का एक उदाहरण है। "पूर्व में हमले का दिखावा करके पश्चिम में हमला बोलना" दुश्मन के बीच भ्रम पैदा करने का एक तरीका है। जब दुश्मन को सूचना मिलने के सभी रास्ते बन्द कर देने के लिए पर्याप्त जन-समर्थन प्राप्त कर लिया गया हो, तो अक्सर यह सम्भव हो सकता है कि हम विभिन्न चालों के जरिए दुश्मन को गलत निर्णयों और गलत कार्यवाहियों के गढ़े में ढकेल देने में सफल हो जाएं, जिससे वह अपनी बरतरी और पहलकदमी से हाथ धो बैठे। इस कहावत का कि "लड़ाई में धोखा देने की इजाजत है" ठीक यही मतलब है। "असावधानी की स्थिति में फंस जाने" का क्या मतलब है? इसका मतलब है तैयारी की स्थिति में न होना। बिना तैयारी की बरतरी वास्तव में बरतरी नहीं है और ऐसी हालत में पहलकदमी भी नहीं हासिल की जा सकती। इस बात को समझकर कोई फौज, जो कमतरी लेकिन तैयारी की स्थिति में है, अक्सर अपने से बरतर दुश्मन पर अचानक हमला करके उसे हरा सकती है। इसीलिए हम कहते हैं कि कूच करते हुए दुश्मन पर हमला बोलना आसान होता

है, क्योंकि वह तब सावधान नहीं होता अर्थात तैयारी की स्थिति में नहीं होता। इन दोनों बातों – दुश्मन को भ्रम में डालने और उस पर अचानक हमले करने – का मतलब है दुश्मन के लिए युद्ध में अनिश्चितता की स्थिति पैदा करना और अपने लिए यथासम्भव निश्चितता की स्थिति पैदा करना, और इस प्रकार बरतरी, पहल-कदमी और विजय हासिल करना। इन सब बातों को प्राप्त करने की पूर्वशर्त यह है कि जन-समुदाय को बहुत अच्छी तरह संगठित किया जाए। इसलिए यह बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि दुश्मन का विरोध करने वाली तमाम जनता को गोलबन्द और हर आदमी को हथियार-बन्द किया जाए, दुश्मन पर व्यापक आकस्मिक हमले किए जाएं, दुश्मन को सूचना पहुंचाने वाले रास्तों को बन्द कर दिया जाए और अपनी फौजों को सुरक्षा की स्थिति में रखा जाए; इस तरह दुश्मन को इस बात का बिलकुल पता नहीं चल सकेगा कि हमारी फौजें कब और कहां उस पर हमले करेंगी, तथा दुश्मन के लिए भ्रम पैदा होने और तैयारी की स्थिति न होने का वस्तुगत आधार तैयार हो जाएगा। भूमि-क्रान्ति युद्ध के काल में चीन की लाल सेना अपनी थोड़ी और कमजोर फौजी शक्ति के बावजूद लड़ाइयों में अक्सर जीत हासिल कर सकी, इसका एक महत्वपूर्ण कारण यह था कि जन-समुदाय संगठित और हथियारबन्द था। यह तर्कसंगत है कि राष्ट्रीय युद्ध को भूमि-क्रान्ति युद्ध की तुलना में व्यापक जन-समुदाय का और अधिक समर्थन प्राप्त होना चाहिए; लेकिन अतीत की गलतियों[20] के कारण जन-समुदाय असंगठित हालत में है और उसे फौरन ही हमारे कार्य में नहीं लगाया जा सकता और कभी-कभी तो हमारा दुश्मन ही उसका इस्तेमाल कर लेता है। बड़े पैमाने पर समूची जनता को दृढ़ता के साथ

गोलबन्द करके ही हम साधन-स्रोतों का एक ऐसा अक्षय भण्डार प्राप्त कर सकते हैं जो युद्ध की हमारी तमाम जरूरतों को पूरा कर सके। साथ ही, यह चीज दुश्मन को भ्रम में डालकर और उसकी असावधानी का फायदा उठाकर उस पर अचानक हमला बोलकर दुश्मन को हराने की हमारी कार्यनीति को लागू करने में भी निश्चित रूप से एक बड़ी भूमिका अदा करेगी। हम सुङ राज्य का सामन्त स्याङ नहीं हैं और उसके नैतिकता सम्बन्धी मूर्खतापूर्ण उपदेशों[11] का युद्ध में हमारे लिए कोई उपयोग नहीं है। विजय प्राप्त करने के लिए हमें दुश्मन के आंख-कान बन्द करके उसे यथासम्भव अंधा और बहरा बना देना चाहिए तथा दुश्मन के कमाण्डरों के दिमाग में उलझन पैदा करके उन्हें पागल सा बना देना चाहिए। इन सब बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि पहलकदमी या निष्क्रियता का मनोगत निर्देशन से क्या सम्बन्ध है। जापान को पराजित करने के लिए इस तरह का मनोगत निर्देशन अनिवार्य है।

८४. अपनी मजबूत फौजी शक्ति के कारण तथा हमारी पिछली और वर्तमान मनोगत गलतियों का फायदा उठाने के कारण जापान अपने आक्रमण की मंजिल में आम तौर पर पहलकदमी अपने हाथ में बनाए रखता है। लेकिन उसके अनेक अन्तर्निहित प्रतिकूल तत्वों तथा युद्ध में उसके द्वारा की गई अनेक मनोगत गलतियों के कारण (जिन पर हम बाद में विस्तार से विचार करेंगे) और हमारे अनेक अनुकूल तत्वों के होने के कारण अब उसकी यह पहलकदमी कुछ हद तक कम होने लगी है। दुश्मन की थाएअरड़च्वाङ में हुई पराजय और शानशी में उसकी संकटपूर्ण स्थिति इसके स्पष्ट प्रमाण हैं। दुश्मन के पृष्ठभाग में हमारे छापामार युद्ध के व्यापक विकास ने उसके

कब्जे में मौजूद इलाकों में उसकी गैरिजन सेनाओं को बिलकुल ही निष्क्रियता की स्थिति में डाल दिया है। यद्यपि दुश्मन अब भी रणनीतिक आक्रमण की स्थिति में है, और पहलकदमी अब भी उसके हाथ में है, लेकिन जब उसका रणनीतिक आक्रमण थम जाएगा तो उसकी पहलकदमी भी खत्म हो जाएगी। दुश्मन द्वारा पहलकदमी अपने हाथ में न बनाए रख सकने का पहला कारण यह है कि उसके पास फौज अपर्याप्त है जिससे वह अनिश्चित काल तक अपना हमला जारी नहीं रख सकता। मुहिमों में हमारी आक्रमणात्मक लड़ाई और दुश्मन के पृष्ठभाग में हमारा छापामार युद्ध तथा अन्य बातें इस बात का दूसरा कारण हैं कि क्यों एक सीमा तक पहुंचने के बाद जापान को अपना हमला रोक देना होगा और वह अपनी पहलकदमी नहीं बनाए रख पाएगा। सोवियत संघ की मौजूदगी और अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में परिवर्तन इस बात का तीसरा कारण है। इससे यह जाहिर होता है कि दुश्मन की पहलकदमी सीमित है और उसे चकनाचूर किया जा सकता है। यदि फौजी कार्यवाहियों में चीन अपनी नियमित सेनाओं के जरिए मुहिमों और लड़ाइयों में आक्रमणात्मक लड़ाई जारी रख सका, दुश्मन के पृष्ठभाग में छापामार युद्ध को सशक्त रूप से आगे बढ़ा सका और राजनीतिक तौर पर जन-समुदाय को बड़े पैमाने पर गोलबन्द कर सका, तो हम कदम-ब-कदम रणनीतिक पहलकदमी हासिल करने की स्थिति में पहुंच सकते हैं।

८५. अब हम लचीलेपन पर विचार करेंगे। लचीलापन क्या चीज है? लचीलेपन का मतलब है फौजी कार्यवाहियों में ठोस रूप से पहलकदमी को चरितार्थ करना; यह फौजों को लचीले ढंग

से इस्तेमाल करना है। फौजों का लचीले ढंग से उपयोग करना युद्ध के निर्देशन का एक केन्द्रीय कार्य है, एक ऐसा कार्य है जिसे अच्छी तरह से कर पाना बहुत ही मुश्किल है। फौज और जनता को संगठित और शिक्षित करने के अलावा, युद्ध में हमारा काम है फौजों को लड़ाई में लगाना, और ये सभी काम लड़ाई जीतने के लिए किए जाते हैं। इसमें शक नहीं कि फौज को संगठित करना आदि एक मुश्किल काम है, लेकिन फौजों को कार्यवाही में लगाना और भी मुश्किल काम है, खासकर उस हालत में जब कमजोर फौज की मजबूत फौज से टक्कर हो। ऐसा करने के लिए बहुत ऊंचे दर्जे की मनोगत योग्यता का होना जरूरी है तथा युद्ध की अव्यवस्थित, अस्पष्ट और अनिश्चित विशेष परिस्थितियों को दूर करते हुए व्यवस्था, स्पष्टता और निश्चितता पैदा करना जरूरी है; केवल इसी तरह कमान में लचीलेपन पर अमल किया जा सकता है।

८६. जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की रणभूमि की कार्यवाहियों का बुनियादी उसूल बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई चलाना है। इस उसूल पर अमल करने के लिए विभिन्न कार्यनीतियां या तरीके काम में लाए जाते हैं, जैसे सैन्य-शक्ति का विकेन्द्रीकरण करना और उसका केन्द्रीकरण करना, अलग-अलग कालमों में आगे बढ़ना और केन्द्राभिमुख हमला करना, आक्रमण करना और रक्षा करना, धावा बोलना और रोके रखने की कार्यवाहियां करना, घेरेबन्दी करना और बगल से कतराकर निकल जाना, आगे बढ़ना और पीछे हटना। इन कार्यनीतियों को समझ लेना आसान है, लेकिन उनका लचीले ढंग से उपयोग करना और उनमें फेर-बदल करना हरगिज आसान नहीं है। इस मामले

में समय, स्थान और फौज तीन महत्वपूर्ण कड़ियां हैं। जब तक समय, स्थान और फौज का अच्छी तरह चुनाव नहीं किया जाएगा, तब तक कोई भी जीत हासिल नहीं की जा सकती। मिसाल के तौर पर, यदि दुश्मन की कूच करती हुई किसी सेना पर आक्रमण करने में हमने समय से पहले चोट कर दी, तो हम अपने को जाहिर कर देंगे और दुश्मन को तैयारी का मौका दे देंगे; और यदि हमने बहुत देर में चोट की, तो हो सकता है कि तब तक दुश्मन पड़ाव डाल ले और अपनी फौजें एकत्र कर ले और हमें बड़ी कठिन स्थिति का मुकाबला करना पड़ जाए। यह समय की समस्या है। यदि हम अपना प्रहार-बिन्दु दुश्मन के बाएं बाजू में एक ऐसे स्थल को बनाएं जो सचमुच उसकी कमजोर जगह हो, तो हम आसानी से जीत जाएंगे; लेकिन यदि हम उसके दाहिने बाजू पर हमला करें, और उसके किसी बहुत मजबूत स्थान से टकरा जाएं, तो हो सकता है कि हम कुछ भी हासिल न कर सकें। यह स्थान की समस्या है। यदि किसी विशेष कार्य के लिए हम अपनी फौज की किसी विशेष यूनिट को भेजें तो विजय प्राप्त करना आसान हो सकता है, लेकिन यदि उसी कार्य के लिए किसी अन्य यूनिट को भेजें तो सफलता प्राप्त करना कठिन हो सकता है। यह फौज की समस्या है। हमें न केवल कार्यनीतियों को इस्तेमाल करना जान लेना चाहिए, बल्कि यह भी जान लेना चाहिए कि उन्हें बदला कैसे जाए। कार्यनीतियों में परिवर्तन करना, जैसे आक्रमण से रक्षा की स्थिति में या रक्षा से आक्रमण की स्थिति में आना, आगे बढ़ने की स्थिति से पीछे हटने की स्थिति में या पीछे हटने की स्थिति से आगे बढ़ने की स्थिति में आना, रोके रखने वाले दस्ते से धावा बोलने वाले दस्ते में या धावा बोलने वाले

दस्ते से रोके रखने वाले दस्ते में बदल जाना, घेरेबन्दी करने की स्थिति से बगल से कतराकर निकल जाने की स्थिति में या बगल से कतराकर निकल जाने की स्थिति से घेरेबन्दी करने की स्थिति में आना, और इन कार्यनीतियों का परिवर्तन दोनों पक्षों की फौजों की हालत और धरातल की बनावट को ध्यान में रखते हुए समय रहते और उचित ढंग से करना, यह कमान के लचीलेपन के लिए एक महत्वपूर्ण कार्य है। यह बात लड़ाइयों की कमान के साथ-साथ मुहिमों की कमान और रणनीतिक कमान के लिए भी सही है।

८७. प्राचीन काल में लोग कहा करते थे: "कार्यनीति में कौशल दिखाना दिमाग का काम है।" यह "कौशल" जिसे हम लचीलापन कहते हैं, एक बुद्धिमान कमाण्डर की योग्यता से आता है। लचीलेपन का अर्थ अन्धाधुन्ध कार्यवाही से नहीं है; अन्धाधुन्ध कार्यवाही को बिलकुल छोड़ देना चाहिए। किसी बुद्धिमान कमाण्डर का लचीलापन उसकी वह योग्यता है जो उसे वस्तुस्थिति के आधार पर "समय की गति और स्थिति को परखने" के बाद ("स्थिति" में दुश्मन की स्थिति, हमारी स्थिति और धरातल की स्थिति शामिल हैं) सामयिक और मौजूं कदम उठाने के योग्य बनाती है, और यह लचीलापन है "कार्यनीति में कौशल दिखाना"। इसी "कौशल" के आधार पर, हम बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाइयों में अधिकाधिक जीतें हासिल कर सकते हैं, दुश्मन की बरतरी और हमारी कमतरी की स्थिति को बदल सकते हैं, दुश्मन के विरुद्ध अपनी पहलकदमी हासिल कर सकते हैं और दुश्मन पर हावी होकर उसे कुचल सकते हैं तथा अपनी अन्तिम विजय की गारन्टी कर सकते हैं।

८८. अब हम योजना बनाने के प्रश्न को लें। युद्ध की अपनी विशिष्ट अनिश्चितता के कारण अन्य कार्यवाहियों की तुलना में युद्ध की कार्यवाही को योजना के अनुसार चलाना कहीं अधिक कठिन है। लेकिन, चूंकि "तैयारी की स्थिति सफलता की गारन्टी कर देती है और तैयारी न होने की स्थिति से असफलता पैदा होती है", इसलिए बिना पहले से योजना बनाए और बिना पहले से तैयारी किए युद्ध में विजय नहीं प्राप्त की जा सकती। युद्ध में निरपेक्ष निश्चितता नहीं हो सकती, लेकिन ऐसा नहीं है कि एक हद तक सापेक्ष निश्चितता भी नहीं हो सकती। हम अपनी स्थिति के बारे में अपेक्षाकृत अधिक निश्चित होते हैं। हम दुश्मन की स्थिति के बारे में बहुत कम निश्चित होते हैं, लेकिन यहां भी हम लक्षणों को देख सकते हैं, सुरागों का पता लगा सकते हैं और घटना-क्रम पर गौर से विचार कर सकते हैं। इन्हीं बातों से एक हद तक सापेक्ष निश्चितता बन जाती है जो युद्ध की योजना बनाने में वस्तुगत आधार प्रदान करती है। नवीन तकनीकी विकास (टेलीग्राफ, रेडियो, हवाई जहाज, मोटरें, रेलें, पानी के जहाज, आदि) ने युद्ध की योजना बनाने की सम्भावना को और भी बढ़ा दिया है। लेकिन मुकम्मिल और स्थिर योजना बनाना मुश्किल होता है क्योंकि युद्ध में निश्चितता महज सीमित और अस्थाई होती है ; ऐसी योजना युद्ध की गति (प्रवाह और परिवर्तन) के साथ बदलती रहती है और युद्ध के विस्तार के अनुसार उसका दर्जा भी घटता-बढ़ता रहता है। कार्यनीतिक योजनाएं, जैसे छोटी फौजी फारमेशनों या छोटी यूनिटों द्वारा आक्रमण या रक्षा की योजनाएं, अक्सर दिन में कई बार बदलनी पड़ सकती हैं। किसी मुहिम की योजना अर्थात किसी बड़ी फौजी फारमेशन की कार्यवाही की योजना आम तौर पर उस मुहिम के अन्त तक चल सकती है, लेकिन उसके दौरान उसमें अक्सर आंशिक या कभी-कभी पूर्ण परिवर्तन भी हो जाते हैं। दोनों पक्षों की सम्पूर्ण स्थिति पर आधारित एक रणनीतिक योजना और भी अधिक स्थिर होती है, लेकिन उसे भी एक विशिष्ट रणनीतिक मंजिल में ही लागू किया जा सकता है और युद्ध के एक नई मंजिल की तरफ बढ़ने पर उसमें भी परिवर्तन करने पड़ते हैं। कार्यनीतिक योजना, मुहिम की योजना और रणनीतिक योजना को दायरे और परिस्थिति के अनुसार निर्धारित करना और उनमें परिवर्तन करना युद्ध-निर्देशन का एक निर्णायक तत्व है ; यह भी युद्ध में लचीलेपन की ठोस अभिव्यक्ति है, दूसरे शब्दों में, यह कार्यनीति में कौशल दिखाना है। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में सभी स्तर के कमाण्डरों को इस ओर ध्यान देना चाहिए।

८९. युद्ध की गतिशीलता के कारण, कुछ लोग इस बात को मानने से कतई इनकार करते हैं कि युद्ध की योजनाएं या नीतियां सापेक्ष रूप से स्थिर हो सकती हैं और वे इस तरह की योजनाओं या नीतियों को "यान्त्रिक" बताते हैं। यह दृष्टिकोण गलत है। पिछले भाग में हम यह बात पूरी तरह स्वीकार कर चुके हैं कि युद्ध की परिस्थितियों के सापेक्ष रूप से निश्चित होने और युद्ध के प्रवाह (गति या परिवर्तन) के तीव्र होने के कारण, युद्ध की योजनाएं या नीतियां सापेक्ष रूप से स्थिर ही हो सकती हैं और बदलती हुई परिस्थितियों तथा युद्ध के प्रवाह के अनुसार उनमें उचित समय पर फेर-बदल या परिवर्तन करना जरूरी है ; अन्यथा हम यन्त्रवादी बन जाएंगे। फिर भी, युद्ध की ऐसी योजनाओं या नीतियों की आवश्यकता से इनकार

कतई नहीं किया जाना चाहिए जो एक निश्चित दौर के लिए सापेक्ष रूप से स्थिर हों ; इस बात का निषेध करने का मतलब है हर चीज का निषेध कर देना, स्वयं युद्ध का और निषेध करने वाले व्यक्ति का भी निषेध कर देना। चूंकि युद्ध की परिस्थितियां और कार्य-वाहियां दोनों ही सापेक्ष रूप से स्थिर होती हैं, अतः उनसे पैदा होने वाली युद्ध की योजनाएं या नीतियां भी सापेक्ष रूप से स्थिर होनी चाहिए। मिसाल के लिए, चूंकि उत्तरी चीन में युद्ध की परिस्थितियां और आठवीं राह सेना की कार्यवाहियों का बिखरा हुआ स्वरूप, दोनों ही एक विशेष दौर के लिए सापेक्ष रूप से स्थिर हैं, इसलिए इस दौर में आठवीं राह सेना की कार्यवाही के इस रणनीतिक उसूल की सापेक्ष स्थिरता को मानना निहायत जरूरी है कि "बुनियादी तौर पर छापामार लड़ाई करो, लेकिन अनुकूल परिस्थितियों में चलायमान लड़ाई का भी कोई मौका हाथ से न निकलने दो।" किसी मुहिम के उसूल के लागू रह सकने की अवधि एक रणनीतिक उसूल के लागू रह सकने की अवधि की तुलना में कम होती है और कार्यनीतिक उसूल के लागू रह सकने की अवधि तो और भी कम होती है, लेकिन हर उसूल एक निश्चित अवधि के लिए स्थिर अवश्य होता है। यदि इस बात को मानने से इनकार किया गया तो युद्ध चलाने का कोई रास्ता ही नहीं रह जाएगा ; और ऐसा व्यक्ति युद्ध में एक सापेक्षतावादी व्यक्ति बन जाएगा, जिसका अपना कोई निश्चित मत नहीं होगा और जिसके लिए कोई भी रास्ता उतना ही सही या गलत होगा जितना कि कोई दूसरा रास्ता। इस बात से कोई इनकार नहीं करता कि एक निश्चित अवधि के लिए लागू होने वाला उसूल भी गतिशील होता है ; अन्यथा एक उसूल को

छोड़कर उसके स्थान पर दूसरा उसूल अपनाया ही नहीं जा सकता। लेकिन यह गतिशीलता सीमित होती है ; यानी यह इस उसूल को लागू करने के लिए की जाने वाली विभिन्न फौजी कार्यवाहियों के अन्दर की गतिशीलता होती है, न कि उसके मौलिक स्वरूप की। दूसरे शब्दों में, यह परिमाणात्मक गतिशीलता होती है न कि गुणा-त्मक गतिशीलता। एक निश्चित अवधि के दौरान, इस प्रकार का मौलिक स्वरूप किसी भी हालत में गतिशील नहीं होता। एक निश्चित अवधि के दौरान सापेक्ष स्थिरता से हमारा यही मतलब है। समूचे युद्ध की निरपेक्ष गतिशीलता की महानदी में, हर खास दौर में सापेक्ष स्थिरता मौजूद रहती है – युद्ध की योजनाओं या नीतियों के मौलिक स्वरूप के बारे में हमारा मत यही है।

९०. रणनीति की दृष्टि से भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर दीर्घ-कालीन रक्षात्मक युद्ध, तथा मुहिमों व लड़ाइयों में बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई के साथ-साथ पहलकदमी, लचीलेपन और योजना की चर्चा कर चुकने के बाद अब हम सारांश रूप में यह कह सकते हैं : जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में योजना जरूर बनाई जानी चाहिए। युद्ध की योजनाएं, जिनका मतलब रणनीति और कार्यनीति को ठोस रूप में लागू करना है, लचीली होनी चाहिए ताकि उन्हें युद्ध की परिस्थितियों के अनुरूप बनाया जा सके। हमें हमेशा अपनी कमतरी को अपनी बरतरी में और अपनी निष्क्रियता को अपनी पहलकदमी में बदल देने की कोशिश करते रहना चाहिए, जिससे हम अपने और दुश्मन के बीच की स्थिति को बदल सकें। मुहिमों और लड़ाइयों में बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई में और रणनीति

की दृष्टि से भीतरी सैन्य-पंक्तियों पर दीर्घकालीन रक्षात्मक युद्ध में इन सभी बातों की अभिव्यक्ति होती है।

चलायमान लड़ाई, छापामार लड़ाई और मोर्चेबद्ध लड़ाई

९१. जब भीतरी सैन्य-पंक्तियों, दीर्घकालीन युद्ध और रक्षा की रणनीति के दायरे में मुहिमों व लड़ाइयों के दौरान बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर की जाने वाली तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई युद्ध की अन्तर्वस्तु बन जाती है, तो युद्ध चलायमान लड़ाई का रूप ले लेता है। चलायमान लड़ाई एक ऐसी लड़ाई है जिसमें नियमित सेनाओं द्वारा दूर तक फैले हुए युद्ध के मोर्चों और विशाल युद्ध-क्षेत्रों में मुहिमों और लड़ाइयों के दौरान बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाइयां चलाई जाती हैं। साथ ही, इसमें तथाकथित "चलायमान रक्षा" भी शामिल है, जिसे किन्हीं आवश्यक अवसरों पर इस तरह की आक्रमणात्मक लड़ाइयों में मदद पहुंचाने के लिए अमल में लाया जाता है ; इसके अलावा, इसमें मोर्चेबन्दी पर हमला और मोर्चेबद्ध रक्षा भी शामिल हैं, जिनकी सहायक भूमिका होती है। इसकी विशिष्टताएं हैं : नियमित सेनाएं, मुहिमों और लड़ाइयों में फौजों की बरतरी, आक्रमणात्मक स्वरूप और गतिशीलता।

९२. चीन का क्षेत्रफल विशाल है और उसकी फौजों की संख्या बहुत ज्यादा है, लेकिन उसकी फौजें पर्याप्त रूप से सुसज्जित और प्रशिक्षित नहीं हैं ; दूसरी ओर, दुश्मन की फौजें संख्या में नाकाफी हैं, लेकिन हमसे ज्यादा सुसज्जित और प्रशिक्षित हैं। इन परिस्थितियों में, हमें निस्सन्देह आक्रमणात्मक चलायमान लड़ाई को ही अपनी लड़ाई का मुख्य रूप बनाना चाहिए, तथा लड़ाई के अन्य रूपों की सहायता लेते हुए उन सबको चलायमान लड़ाई में मिला देना चाहिए। हमें "केवल पीछे हटने और कभी आगे न बढ़ने" का विरोध करना चाहिए ; यह पलायनवाद है। साथ ही, हमें "केवल आगे बढ़ने और कभी पीछे न हटने" का भी विरोध करना चाहिए ; यह जान पर खेलने वाली दुस्साहसिकता है।

९३. चलायमान लड़ाई की एक विशेषता उसकी गतिशीलता है, जो किसी रणांगन-सेना को न सिर्फ लम्बे डग उठाकर आगे बढ़ने और पीछे हटने की इजाजत देती है, बल्कि उसके लिए इसे आवश्यक भी बना देती है। लेकिन इसके और हान फू-च्वी की तरह के पलायनवाद[११] के बीच कोई समानता नहीं है। युद्ध की बुनियादी आवश्यकता है दुश्मन को नष्ट करना, और अपने को सुरक्षित रखना उसकी दूसरी आवश्यकता है। अपने को सुरक्षित रखने का उद्देश्य दुश्मन को नष्ट करना है जबकि दुश्मन को नष्ट करना अपने को सुरक्षित रखने का सबसे प्रभावशाली तरीका है। इसलिए चलायमान लड़ाई कभी भी हान फू-च्वी जैसे लोगों के लिए बहाना नहीं बन सकती, और इसका मतलब हरगिज यह नहीं हो सकता कि केवल पीछे ही हटते रहा जाए और आगे कभी न बढ़ा जाए। इस प्रकार का "हटना", जो चलायमान लड़ाई के मौलिक आक्रमणात्मक स्वरूप का ही निषेध कर देता है, व्यवहार में, चीन को उसकी विशालता के बावजूद अपने अस्तित्व से ही "हटा" देगा।

९४. लेकिन एक दूसरा विचार, यानी "केवल आगे बढ़ने और कभी पीछे न हटने" का विचार, यानी जान पर खेलने वाली दुस्साहसिकता भी गलत है। हम जिस चलायमान लड़ाई की हिमायत करते हैं तथा जिसकी अन्तर्वस्तु मुहिमों व लड़ाइयों में बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई चलाना है, उसमें मोर्चेबद्ध लड़ाई, जिसकी भूमिका सहायक होती है, तथा "चलायमान रक्षा" और पीछे हटना भी शामिल हैं, जिनके बिना चलायमान लड़ाई पूर्ण रूप से नहीं चलाई जा सकती। जान पर खेलने वाली दुस्साहसिकता फौजी अदूरदर्शिता का परिचायक है, जो अक्सर अपनी भूमि छिन जाने के भय से पैदा होती है। जान पर खेलने वाली दुस्साहसिकता से काम लेने वाला व्यक्ति यह नहीं समझता कि चलायमान लड़ाई की एक विशेषता उसकी गतिशीलता है, जो किसी रणांगन-सेना को न केवल लम्बे डग उठाकर आगे बढ़ने और पीछे हटने की इजाजत देती है, बल्कि उसके लिए इसे आवश्यक भी बना देती है। सकारात्मक रूप में, दुश्मन को एक ऐसी लड़ाई में घसीट लाने के लिए, जो उसके प्रतिकूल और हमारे अनुकूल हो, आम तौर पर यह जरूरी है कि वह कूच कर रहा हो और हमारे लिए अनेक अनुकूल शर्तें मौजूद हों, जैसे अनुकूल धरातल, दुश्मन को आसानी से हराने की स्थिति, ऐसी स्थानीय आबादी जो दुश्मन को सूचना पहुंचाने वाले स्रोतों को बन्द कर सके, दुश्मन की थकावट और उसकी तैयारी के अभाव की स्थिति। इसके लिए यह जरूरी है कि दुश्मन आगे बढ़े और हम अस्थाई रूप से अपने प्रदेश के किसी टुकड़े के छिन जाने से चिन्तित न हों। क्योंकि अपने प्रदेश के किसी भाग के अस्थाई रूप से छिन जाने का मूल्य चुकाकर हम अपने समूचे प्रदेश को स्थाई

रूप से अपने अधिकार में रख सकते हैं और अपना खोया हुआ प्रदेश वापस ले सकते हैं। नकारात्मक रूप में, हम जब कभी विवश होकर ऐसी प्रतिकूल स्थिति में पड़ जाएं जिससे हमारी फौजों की सुरक्षा के लिए बुनियादी तौर पर खतरा पैदा हो जाए, तो ऐसी स्थिति में अपनी फौजों को बचाए रखने और नया अवसर आने पर दुश्मन पर फिर से हमला करने के उद्देश्य से, हमें अपने अन्दर पीछे हट जाने का साहस पैदा करना चाहिए। इस बात की जानकारी न होने के कारण, जान पर खेलने वाली दुस्साहसिकता की हिमायत करने वाले लोग स्पष्ट और निश्चित रूप से प्रतिकूल स्थिति में होने पर भी, किसी एक शहर या जमीन के टुकड़े के लिए संघर्ष जारी रखते हैं। फलतः वे न केवल एक शहर या जमीन के टुकड़े से हाथ धो बैठते हैं, बल्कि अपनी फौजों को सुरक्षित रखने में भी असफल रहते हैं। हम सदा ही "दुश्मन को भुलावा देकर अपने प्रदेश में दूर तक प्रवेश करने देने" की नीति की हिमायत करते हैं, क्योंकि यह नीति रणनीतिक रक्षा में लगी हुई एक कमजोर सेना के लिए, अपने मजबूत दुश्मन के खिलाफ लड़ने में सबसे अधिक प्रभावशाली फौजी नीति साबित होती है।

९५. जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में लड़ाई के रूपों में चलायमान लड़ाई का मुख्य स्थान है, और इसके बाद का स्थान छापामार लड़ाई का ही है। जब हम यह कहते हैं कि सम्पूर्ण युद्ध में चलायमान लड़ाई का प्रमुख और छापामार लड़ाई का सहायक स्थान है, तो हमारा मतलब यह होता है कि युद्ध के परिणाम का निर्णय मुख्यतया नियमित लड़ाई से, खास तौर पर उसके चलायमान रूप से होता है, और छापामार लड़ाई युद्ध के परिणाम का निर्णय करने में मुख्य उत्तरदायित्व को नहीं निभा सकती। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि

इस युद्ध की रणनीति में छापामार लड़ाई की भूमिका महत्वहीन है। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की सम्पूर्ण रणनीति में चलायमान लड़ाई के बाद इसी की भूमिका का स्थान है, क्योंकि बिना इसकी सहायता के हम दुश्मन को हरा नहीं सकते। यह बात कहते समय हमारे दिमाग में छापामार लड़ाई को चलायमान लड़ाई के रूप में विकसित करने का रणनीतिक कार्य भी मौजूद रहता है। दीर्घकालीन, निर्मम युद्ध के दौरान छापामार लड़ाई एक जैसी हालत में नहीं रहेगी, बल्कि उन्नति करके चलायमान लड़ाई के रूप में विकसित हो जाएगी। इस प्रकार छापामार लड़ाई दोहरी रणनीतिक भूमिका अदा करती है : नियमित लड़ाई की सहायता करना और अपने को नियमित लड़ाई में बदल देना। चीन के जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में छापामार लड़ाई के अभूतपूर्व विस्तार और उसकी अभूतपूर्व दीर्घकालीनता के कारण यह और भी अधिक आवश्यक हो जाता है कि उसकी रणनीतिक भूमिका को कम करके न आंका जाए। इसलिए, चीन में छापामार लड़ाई के सामने केवल अपनी कार्यनीतिक समस्याएं ही नहीं, बल्कि उसकी अपनी विशेष रणनीतिक समस्याएं भी हैं। "जापान-विरोधी छापामार युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं" नामक रचना में इन पर मैं पहले ही विचार कर चुका हूं। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की तीन रणनीतिक मंजिलों में युद्ध के विभिन्न रूप इस प्रकार होंगे : पहली मंजिल में चलायमान लड़ाई युद्ध का प्रमुख रूप है तथा छापामार लड़ाई और मोर्चेबद्ध लड़ाई उसका सहायक रूप है। दूसरी मंजिल में छापामार लड़ाई आगे बढ़कर प्रमुख स्थान प्राप्त कर लेगी तथा चलायमान लड़ाई और मोर्चेबद्ध

लड़ाई उसके सहायक की भूमिका अदा करेंगी। तीसरी मंजिल में चलायमान लड़ाई फिर आगे बढ़कर प्रमुख स्थान प्राप्त कर लेगी तथा मोर्चेबद्ध लड़ाई और छापामार लड़ाई उसके सहायक की भूमिका अदा करेंगी। लेकिन तीसरी मंजिल में चलायमान लड़ाई पूर्णतया पहले की नियमित सेनाओं द्वारा नहीं लड़ी जाएगी, बल्कि उसका एक हिस्सा, सम्भवतया काफी महत्वपूर्ण हिस्सा, पहले के छापामार दस्तों द्वारा लड़ा जाएगा, जो तब तक छापामार लड़ाई चलाने की स्थिति से आगे बढ़कर चलायमान लड़ाई करने की स्थिति में पहुंच चुके होंगे। इन तीनों मंजिलों को ध्यान में रखते हुए चीन के जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में छापामार लड़ाई निश्चित रूप से अनिवार्य है। हमारी छापामार लड़ाई मानव जाति के युद्ध-इतिहास में एक महान, एक अद्वितीय नाटक प्रस्तुत करेगी। इसलिए यह नितान्त आवश्यक है कि चीन के बीसियों लाख नियमित सैनिकों में से कम से कम कुछ लाख सैनिकों को दुश्मन द्वारा अधिकृत तमाम इलाकों में फैला दिया जाए, जहां वे जन-समुदाय को हथियारबन्द होने के लिए जागृत करें और उससे तालमेल कायम करके छापामार लड़ाई चलाएं। जिन नियमित सेनाओं को इस काम पर लगाया जाए, उन्हें जागरूकता के साथ इस पवित्र काम को अपने हाथ में लेना चाहिए। उन्हें इस कारण अपनी स्थिति को गिरा हुआ नहीं समझना चाहिए कि अब उन्हें बड़ी लड़ाइयां लड़ने का मौका कम मिलेगा और इसके फलस्वरूप कुछ समय के लिए वे लोग राष्ट्रीय वीरों के रूप में सामने नहीं आ पाएंगे। इस प्रकार का हर विचार गलत है। छापामार युद्ध में न तो नियमित युद्ध की भांति तेजी से नतीजे हासिल किए जा सकते हैं और न चकाचौंध पैदा करने वाली शोहरत ही प्राप्त की जा

सकती है ; लेकिन जिस प्रकार "दूर की यात्रा से ही घोड़े की शक्ति की परख होती है और दीर्घकालीन कार्य के जरिए ही मनुष्य के हृदय की परख होती है", उसी प्रकार छापामार युद्ध भी इस दीर्घकालीन व निर्मम युद्ध में अपनी अकूत शक्ति का प्रदर्शन करेगा ; निस्सन्देह यह कोई साधारण कार्य नहीं है। इसके अलावा, ऐसी नियमित सेना बिखर जाने पर छापामार लड़ाई चला सकती है और एकत्रित हो जाने पर चलायमान लड़ाई भी चला सकती है, जैसा कि आठवीं राह सेना करती आई है। आठवीं राह सेना का उसूल यह है: "बुनियादी तौर पर छापामार लड़ाई करो, लेकिन अनुकूल परिस्थितियों में चलायमान लड़ाई का भी कोई मौका हाथ से न निकलने दो।" यह उसूल बिलकुल सही है ; इसके विरोधियों के विचार गलत हैं।

९६. चीन के वर्तमान तकनीकी स्तर में, रक्षात्मक या आक्रमणात्मक मोर्चेबद्ध लड़ाई आम तौर पर अव्यावहारिक है और हमारी कमजोरी इसी बात में जाहिर होती है। इसके अलावा, दुश्मन भी हमारी भूमि की विशालता का उपयोग हमारी किलेबन्दियों से बचकर आगे निकल जाने के लिए कर रहा है। इसलिए मोर्चेबद्ध लड़ाई हमारे लिए एक महत्वपूर्ण साधन भी नहीं हो सकती, मुख्य साधन होना तो दूर रहा। लेकिन युद्ध की पहली और दूसरी मंजिलों में यह सम्भव और आवश्यक है कि चलायमान लड़ाई के दायरे में आंशिक मोर्चेबद्ध लड़ाई का उपयोग मुहिमों की कार्यवाहियों में सहायक भूमिका के रूप में किया जाए। अर्ध-मोर्चेबद्ध "चलायमान रक्षा" चलायमान लड़ाई का और अधिक अनिवार्य अंग है, जिसे हर कदम पर दुश्मन का प्रतिरोध करने तथा इस प्रकार उसकी

सैन्य-शक्ति को क्षीण करने और खुद काफी वक्त हासिल करने के मकसद से अपनाया जाता है। चीन को चाहिए कि वह अपने आधुनिक हथियारों की संख्या बढ़ाने का प्रयास करे, जिससे रणनीतिक प्रत्याक्रमण की मंजिल में वह मोर्चेबन्दी पर हमला करने के कार्यों को मुकम्मिल तौर पर पूरा कर सके। इसमें शक नहीं कि रणनीतिक प्रत्याक्रमण की मंजिल में मोर्चेबद्ध लड़ाई ज्यादा बड़ी भूमिका अदा करेगी, क्योंकि तब दुश्मन अपने मोर्चों पर दृढ़ता से जमा रहेगा और जब तक हम चलायमान लड़ाई के साथ मोर्चेबन्दी पर शक्तिशाली हमले का तालमेल नहीं बैठाएंगे, तब तक अपने खोए हुए प्रदेशों को फिर से प्राप्त करने में सफल नहीं हो सकेंगे। तो भी, तीसरी मंजिल में हमें चाहिए कि चलायमान लड़ाई को ही युद्ध का मुख्य रूप बनाने की भरसक कोशिश करें। कारण, प्रथम विश्वयुद्ध के उत्तरार्ध में पश्चिमी योरप में मोर्चेबद्ध लड़ाई को जिस रूप में चलाया गया, वैसी स्थिति में युद्ध-निर्देशन की कला और मनुष्य की सक्रिय भूमिका अधिकांशतः बेकार हो जाती है। चूंकि यह युद्ध चीन की विशाल भूमि पर लड़ा जा रहा है, और चूंकि चीन काफी लम्बे अरसे तक तकनीकी दृष्टि से कमजोर बना रहेगा, इसलिए यह स्वाभाविक है कि "युद्ध को खन्दकों के बाहर" ले जाया जाए। तीसरी मंजिल के दौर में भी, यद्यपि तब चीन तकनीकी दृष्टि से अधिक अच्छी स्थिति में होगा तथापि इस क्षेत्र में वह दुश्मन को शायद ही मात दे पाए और इसलिए उसे ऊंचे स्तर की चलायमान लड़ाई चलाने के लिए बाध्य होना पड़ेगा, अन्यथा वह अन्तिम विजय हरगिज हासिल नहीं कर पाएगा। इसलिए जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के समूचे दौर में चीन मोर्चेबद्ध लड़ाई को युद्ध का मुख्य रूप कभी

नहीं बनाएगा ; युद्ध के मुख्य और महत्वपूर्ण रूप चलायमान लड़ाई और छापामार लड़ाई ही रहेंगे। युद्ध के इन रूपों में युद्ध-निर्देशन की कला को और मनुष्य की सक्रिय भूमिका को खुलकर खेलने का पूरा अवसर मिलेगा – यह हमारे दुर्भाग्य से उत्पन्न होने वाली कैसी सौभाग्यपूर्ण बात है !

घिसाव-थकाव की लड़ाई और विनाश की लड़ाई

९७. हम पहले बता चुके हैं कि युद्ध का मूलतत्व, अथवा युद्ध का उद्देश्य है अपने को सुरक्षित रखना और दुश्मन को नष्ट करना। लेकिन चूंकि इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए युद्ध के तीन रूप हैं – चलायमान लड़ाई, मोर्चेबद्ध लड़ाई और छापामार लड़ाई – और ये तीनों ही अपनी कारगरता की मात्रा में एक दूसरे से भिन्न हैं, इसलिए घिसाव-थकाव की लड़ाई में और विनाश की लड़ाई में आम फर्क पैदा हो जाता है।

९८. शुरू में हम यह कह सकते हैं कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध एक घिसाव-थकाव की लड़ाई होने के साथ-साथ विनाश की लड़ाई भी है। ऐसा क्यों है ? कारण, दुश्मन अब भी अपनी शक्तिशालिता का फायदा उठा रहा है तथा अपनी रणनीतिक बरतरी और रणनीतिक पहलकदमी को कायम रखे हुए है ; इसलिए जब तक हम मुहिमों और लड़ाइयों में विनाश की लड़ाइयों को नहीं चलाते, तब तक हम कारगर रूप से और शीघ्रता से दुश्मन की शक्तिशालिता को कम नहीं कर सकते तथा उसकी बरतरी और पहलकदमी को तोड़ नहीं सकते। हमारे अन्दर अब भी कमजोरी मौजूद है और हम अब भी अपनी रणनीतिक कमतरी और रणनीतिक निष्क्रियता को दूर नहीं कर पाए हैं ; इसलिए जब तक हम मुहिमों और लड़ाइयों में विनाश की लड़ाइयों को नहीं चलाएंगे, तब तक अपनी अन्दरूनी और अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति को सुधारने तथा अपनी प्रतिकूल स्थिति को बदलने के लिए समय प्राप्त नहीं कर सकेंगे। इसलिए मुहिमों में विनाश की लड़ाइयां रणनीतिक घिसाव-थकाव के उद्देश्य को प्राप्त करने का साधन हैं। इस मायने में विनाश की लड़ाई भी घिसाव-थकाव की लड़ाई ही है। विनाश के जरिए घिसाव-थकाव को मुख्य साधन बनाकर ही चीन अपने दीर्घकालीन युद्ध को चला सकता है।

९९. लेकिन रणनीतिक घिसाव-थकाव का मकसद मुहिमों में घिसाव-थकाव की लड़ाइयों से भी हासिल किया जा सकता है। आम तौर पर चलायमान लड़ाई विनाश का काम करती है और मोर्चेबद्ध लड़ाई घिसाव-थकाव का, तथा छापामार लड़ाई दोनों ही कामों को अंजाम देती है। पर लड़ाई के ये तीनों ही रूप एक दूसरे से भिन्न हैं। इस मायने में विनाश की लड़ाई घिसाव-थकाव की लड़ाई से भिन्न प्रकार की होती है। मुहिमों में घिसाव-थकाव की लड़ाइयां सहायक होती हैं, परन्तु दीर्घकालीन युद्ध के लिए वे आवश्यक भी हैं।

१००. बड़े पैमाने पर दुश्मन के घिसाव-थकाव के अपने रणनीतिक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, चीन को अपनी रक्षा की मंजिल में, सिद्धान्त की दृष्टि से और अपनी आवश्यकताओं की दृष्टि से, न सिर्फ विनाश के स्वरूप का फायदा उठाना चाहिए, जो मुख्यतया

चलायमान लड़ाई में और आंशिक रूप से छापामार लड़ाई में पाया जाता है, बल्कि घिसाव-थकाव के स्वरूप का भी फायदा उठाना चाहिए जो मुख्यतया मोर्चेबद्ध लड़ाई में (जो खुद सहायक भूमिका अदा करती है) और आंशिक रूप से छापामार लड़ाई में पाया जाता है। ठहराव की मंजिल में दुश्मन के और भी ज्यादा घिसाव-थकाव के लिए हमें छापामार लड़ाई और चलायमान लड़ाई के विनाश व घिसाव-थकाव के स्वरूपों का फायदा उठाते रहना चाहिए। इन सब बातों का उद्देश्य युद्ध को दीर्घकालीन बनाना है, जिससे कि कदम-ब-कदम दुश्मन और हमारे बीच की स्थिति को बदला जा सके और प्रत्याक्रमण की परिस्थितियां तैयार की जा सकें। रणनीतिक प्रत्याक्रमण की मंजिल में हमें विनाश के जरिए घिसाव-थकाव के तरीके का लगातार उपयोग करना चाहिए जिससे कि अन्त में दुश्मन को चीन से बाहर खदेड़ा जा सके।

१०१. लेकिन पिछले दस महीनों का अनुभव दरअसल यह बताता है कि चलायमान लड़ाई की अनेक, यहां तक कि अधिकांश मुहिमें घिसाव-थकाव की लड़ाइयां साबित हुई हैं और किन्हीं-किन्हीं क्षेत्रों में छापामार लड़ाई की विनाश की भूमिका पर्याप्त सीमा तक अदा नहीं की गई है। इस बात से अच्छाई यह हुई है कि हमने कम से कम दुश्मन की सैन्य-शक्तियों को तो क्षति पहुंचाई है। यह बात हमारे दीर्घकालीन युद्ध तथा अन्तिम विजय दोनों के लिए महत्वपूर्ण है, और हमने व्यर्थ ही अपना रक्त नहीं बहाया। लेकिन इसमें ये कमियां रह गई हैं : एक ओर तो दुश्मन को काफी मात्रा में क्षति नहीं पहुंचाई जा सकी, और दूसरी ओर हमारा नुकसान अपेक्षाकृत ज्यादा हुआ तथा दुश्मन से अपेक्षाकृत कम चीजें जब्त की गई। यद्यपि हमें इस

स्थिति के वस्तुगत कारणों को, यानी हमारे और दुश्मन के बीच की तकनीकी साज-सामान और फौजी प्रशिक्षण की असमानता की स्थिति को मान्यता देनी चाहिए, तो भी सिद्धान्त और व्यवहार दोनों में ही इस बात का पक्षपोषण करना चाहिए कि जहां भी परिस्थिति अनुकूल हो, वहां हमारी नियमित सेनाएं विनाश की लड़ाइयां चलाने की कोशिश करें। यद्यपि तोड़फोड़ करने और हैरान-परेशान करने जैसे अनेक ठोस कार्यों को पूरा करने के लिए छापामार दस्तों को विशुद्ध घिसाव-थकाव की लड़ाइयां चलानी पड़ती हैं, तो भी जब परिस्थितियां अनुकूल हों तो मुहिमों और लड़ाइयों में विनाश की कार्यवाहियों का प्रतिपादन करना और उन पर भरपूर अमल करना आवश्यक है, जिससे कि वे दुश्मन की सैन्य-शक्तियों को भारी क्षति पहुंचाने और अपनी सैन्य-शक्तियों की भरपूर क्षतिपूर्ति करने का उद्देश्य प्राप्त करने में सफल हो सकें।

१०२. बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई में "बाहरी सैन्य-पंक्तियां", "तुरत निर्णय" और "आक्रमण", तथा चलायमान लड़ाई में "चलायमानता" मुख्यतया फौजी कार्यवाहियों में घेरेबन्दी करने और बगल से कतराकर निकल जाने की कार्यनीतियां लागू करने के रूप में ही प्रकट होते हैं; अतएव अपनी बरतर सैन्य-शक्तियों को केन्द्रित करना जरूरी है। इसलिए चलायमान लड़ाई यानी बाहरी सैन्य-पंक्तियों पर तुरत निर्णय की आक्रमणात्मक लड़ाई के लिए, फौजों का केन्द्रीकरण करना तथा घेरेबन्दी करने और बगल से कतराकर निकल जाने की कार्यनीतियों का उपयोग करना इसकी एक पूर्वशर्त है। इन सभी का उद्देश्य दुश्मन की शक्तियों का विनाश करना है।

१०३. जापानी फौज की अनुकूलता केवल उसके हथियारों पर ही नहीं, बल्कि उसके अफसरों व सिपाहियों को दिए गए प्रशिक्षण पर भी निर्भर है – जैसे उसके संगठन का दर्जा, कभी पराजित न होने के कारण पैदा होने वाला उसका आत्मविश्वास, मिकाडो के प्रति और देवी-देवताओं के प्रति उसका अंधविश्वास, उसका दम्भ व अहंकार, चीनी जनता को नाचीज समझने की उसकी भावना तथा इसी प्रकार के अन्य लक्षण, ये सभी जापानी युद्ध-सरदारों द्वारा अनेक सालों से दी गई फासिस्ट शिक्षा और जापान की राष्ट्रीय परम्परा से उत्पन्न हुए हैं। यही इस बात का मुख्य कारण है कि हमारी सेना ने दुश्मन की फौजों को बड़ी संख्या में हताहत किया है और बहुत कम लोगों को बन्दी बनाया है। अतीत काल में बहुत से लोगों ने इस बात को कम करके आंका है। दुश्मन के इन लक्षणों को नष्ट करने के लिए एक लम्बी प्रक्रिया की आवश्यकता है। सबसे पहले हमें इस विशेषता की ओर गम्भीरता से ध्यान देना चाहिए तथा फिर धीरज के साथ और योजनाबद्ध रूप से राजनीतिक क्षेत्र में, अन्तरराष्ट्रीय प्रचार के क्षेत्र में और जापान के जन-आन्दोलन के क्षेत्र में इसे दूर करने के लिए कार्य करना चाहिए ; साथ ही फौजी क्षेत्र में विनाश की लड़ाई भी अनेक तरीकों में से एक है। दुश्मन के इन लक्षणों में निराशावादियों को राष्ट्रीय गुलामी के अपने सिद्धान्त के लिए आधार मिल सकता है ; और निष्क्रिय फौजी विशेषज्ञों को विनाश की लड़ाई का विरोध करने के लिए आधार मिल सकता है। लेकिन इसके विपरीत, हमारा विचार यह है कि जापानी फौज की इस अनुकूलता को नष्ट किया जा सकता है और वह नष्ट होती जा रही है। उसे नष्ट करने का मुख्य तरीका है

जापानी सिपाहियों को राजनीतिक दृष्टि से अपने पक्ष में कर लेना। जापानी सिपाहियों के आत्म-अभिमान पर चोट करने के बजाय हमें उसे समझ लेना चाहिए और उसे उचित दिशा में मोड़ देना चाहिए, तथा युद्धबन्दियों के साथ नरमी का बरताव करके जापानी शासकों के आक्रमणवाद के जन-विरोधी स्वरूप को समझने में उनका मार्गदर्शन करना चाहिए। दूसरी ओर, हमें चाहिए कि हम जापानी सिपाहियों के सामने चीनी सेना और चीनी जनता की अपराजेय भावना, वीरता और अदम्य युद्ध-क्षमता का परिचय दें, यानी विनाश की लड़ाई द्वारा हम उन पर प्रहार करते जाएं। पिछले दस महीने की फौजी कार्यवाहियों के हमारे अनुभव ने साबित कर दिया है कि दुश्मन की सैन्य-शक्तियों का विनाश करना सम्भव है – फिङशिङक्वान और थाएअर्ह्च्वाङ की मुहिमें इसके सबूत हैं। जापानी सिपाहियों का मनोबल टूटना शुरू हो गया है, जापानी सिपाही अपने युद्ध के उद्देश्य को नहीं समझते, वे चीनी फौजों और चीनी जनता की घेरेबन्दी में फंस गए हैं, धावा बोलने का उनका साहस चीनी सिपाहियों की तुलना में काफी कम रह गया है, वगैरह-वगैरह। ये सभी वस्तुगत तत्व हमारे द्वारा विनाश की लड़ाई चलाने के लिए अनुकूल हैं और युद्ध के लम्बा खिचने के साथ-साथ ये दिन-पर-दिन और भी विकसित होते जाएंगे। विनाश की लड़ाइयों के जरिए दुश्मन की फौज के भारी अहंकार को चूर करने की दृष्टि से, विनाश की कार्यवाहियां युद्ध के दौर को छोटा करने और जापानी सिपाहियों तथा जापानी जनता की मुक्ति की प्रक्रिया को तेज करने की एक शर्त भी हैं। इस दुनिया में दोस्ती बिल्ली और बिल्ली के बीच ही हो सकती है, न कि बिल्ली और

चूहे के बीच।

१०४. दूसरी ओर, हमें यह मान लेना चाहिए कि तकनीकी साज-सामान और फौजी प्रशिक्षण में, आज हम दुश्मन से पीछे हैं। इसलिए विनाश की लड़ाइयों में ज्यादा से ज्यादा फायदा उठाना, जैसे दुश्मन की पूरी फौज या उसके ज्यादातर हिस्से को बन्दी बना लेना, और उसके पूरे साज-सामान या उसके ज्यादातर हिस्से को जब्त कर लेना अधिकांश परिस्थितियों में, खास तौर पर मैदानों की लड़ाई में, अक्सर बहुत मुश्किल होता है। इस बारे में शीघ्र विजय के सिद्धान्त के समर्थकों की गैरवाजिब मांगों का कोई औचित्य नहीं होता। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में उचित मांग यह होनी चाहिए : जहां भी सम्भव हो, विनाश की लड़ाइयां चलाओ। सभी अनुकूल स्थितियों में हमें हर लड़ाई में बरतर सैन्य-शक्तियों को केन्द्रित करना चाहिए और घेरेबन्दी करने और बगल से कतरा कर निकल जाने की कार्यनीतियां अपनानी चाहिए – यदि दुश्मन की पूरी फौज को नहीं, तो उसके एक हिस्से को घेर लेना चाहिए ; घिरी हुई पूरी फौज और उसके पूरे साज-सामान को नहीं, तो उस फौज के एक हिस्से को बन्दी बना लेना चाहिए तथा उसके साज-सामान के एक हिस्से को जब्त कर लेना चाहिए ; यदि घिरी हुई फौज के एक हिस्से को बन्दी न बनाया जा सके तथा उसके साज-सामान के एक हिस्से को जब्त न किया जा सके तो घिरी हुई फौज के उस हिस्से को भारी संख्या में हताहत कर देना चाहिए। जहां कहीं विनाश की लड़ाइयों के लिए परिस्थिति अनुकूल न हो, वहां हमें घिसाव-थकाव की लड़ाइयां चलानी चाहिए। पहली तरह की लड़ाइयों में फौजों को केन्द्रित करने का तथा दूसरी तरह की लड़ाइयों में फौजों को विकेन्द्रित करने का उसूल अपनाना चाहिए। जहां तक मुहिमों की कमान का ताल्लुक है, हमें पहली तरह की मुहिमों में केन्द्रित कमान का उसूल लागू करना चाहिए तथा दूसरी तरह की मुहिमों में विकेन्द्रित कमान का उसूल लागू करना चाहिए। ये जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में रणभूमि में की जाने वाली फौजी कार्यवाहियों के लिए बुनियादी उसूल हैं।

दुश्मन की गलतियों से फायदा उठाने की सम्भावनाएं

१०५. स्वयं दुश्मन की कमान में ही इस बात का आधार मौजूद रहता है कि जापान को हराना सम्भव है। इतिहास में आज तक कोई त्रुटिहीन सेनापति कभी नहीं हुआ। दुश्मन भी उसी प्रकार गलतियां करता है, जिस प्रकार हम गलतियां करने से नहीं बच सकते। अतएव हमारे लिए यह सम्भव है कि हम दुश्मन की गलतियों का फायदा उठा सकें। अपने आक्रमणकारी युद्ध के पिछले दस महीनों में दुश्मन ने रणनीति और मुहिम सम्बन्धी अनेक गलतियां की हैं। इनमें से पांच गलतियां प्रमुख हैं।

पहली गलती है थोड़ा-थोड़ा करके कुमक भेजना। यह दुश्मन द्वारा चीन की शक्ति को कम आंकने और उसकी अपनी फौजों के नाकाफी होने का परिणाम है। दुश्मन हमेशा हमें नीची निगाह से देखता आया है। उत्तर-पूर्वी चीन के चार प्रान्तों को बिना उंगली हिलाए ही हड़प लेने के बाद उसने पूर्वी हपे और उत्तरी छाहाड़

पर अधिकार कर लिया; यह सब उसकी रणनीतिक फौजी टोह ही समझी जा सकती थी। इससे दुश्मन ने यह निष्कर्ष निकाला कि चीनी राष्ट्र ढीले-ढाले बालू के ढेर के समान है। इस प्रकार यह सोचकर कि चीन एक ही धक्के में भहराकर गिर जाएगा, उसने "तुरत निर्णय" की एक योजना तैयार की और अपनी बहुत छोटी सेना के जरिए हमें भयभीत करके हरा देना चाहा। पिछले दस महीनों में चीन ने जिस प्रकार की महान एकता और प्रतिरोध की प्रचण्ड शक्ति का प्रदर्शन किया है, जापान को उसकी उम्मीद नहीं थी, क्योंकि जापान यह भूल गया था कि चीन प्रगति के युग में है और यहां एक आगे बढ़ी हुई राजनीतिक पार्टी, आगे बढ़ी हुई फौज और आगे बढ़ी हुई जनता का जन्म हो चुका है। असफलताओं का सामना करने के बाद दुश्मन ने अपनी फौजों को थोड़ा-थोड़ा करके बढ़ाना शुरू किया और एक दर्जन से ज्यादा डिवीजनों से बढ़ाकर तीस डिवीजनों तक पहुंचा दिया। यदि वह अपना बढ़ाव जारी रखना चाहता है, तो उसे यह संख्या और भी बढ़ानी होगी। लेकिन सोवियत संघ से जापान की शत्रुता होने के कारण तथा जन-बल और वित्तीय साधनों की अपनी स्वाभाविक कमजोरी के कारण, वह चीन भेजी जाने वाली फौजों की संख्या को और अपने हमले के विस्तार को केवल एक सीमा तक ही बढ़ा सकता है।

उसकी दूसरी गलती है आक्रमण की मुख्य दिशा का अभाव। थाएअड़च्वाङ मुहिम के पहले दुश्मन की फौजें मध्य चीन और उत्तरी चीन में लगभग समान रूप से बंटी हुई थीं, और फिर इन दोनों इलाकों में भी उसकी फौजें हर जगह समान रूप से बंटी हुई थीं। मिसाल के लिए, उत्तरी चीन में उसने थ्येनचिन-फूखओ रेलवे, पेफिङ-हानखओ रेलवे और ताथुङ-फूचओ रेलवे पर अपनी फौजों का समान रूप से वितरण कर दिया था। प्रत्येक रेलवे पर जापानी फौजों के कुछ हताहत होने के कारण तथा जापान के कब्जे में मौजूद इलाकों में कुछ रक्षक फौजों को तैनात करने के कारण, आगे बढ़ने के लिए उसके पास और फौजें नहीं रह गईं। थाएअड़च्वाङ की हार के बाद, जिससे दुश्मन ने सबक सीखा, उसने अपनी मुख्य फौजों को श्वीचओ की दिशा में केन्द्रित कर दिया और इस प्रकार अस्थाई रूप से अपनी इस गलती को सुधार लिया।

उसकी तीसरी गलती है रणनीतिक तालमेल की कमी। कुल मिलाकर मध्य चीन और उत्तरी चीन में स्थित दुश्मन के दो फौजी ग्रुपों में हर ग्रुप के अन्दर तालमेल मौजूद है। लेकिन इन दो ग्रुपों के बीच तालमेल की स्पष्ट रूप से कमी है। जब थ्येनचिन-फूखओ रेलवे के दक्षिणी भाग में स्थित जापानी फौजें श्याओपङपू पर हमला कर रही थीं, उस समय इसी रेलवे के उत्तरी भाग में स्थित जापानी फौजें चुपचाप खड़ी थीं और जब उत्तरी भाग की फौजें थाएअड़च्वाङ पर हमला कर रही थीं, तो दक्षिणी भाग की फौजें चुपचाप खड़ी थीं। जब दुश्मन को दोनों जगह हार खानी पड़ी, तो जापानी स्थल-सेना मंत्री फौजों के निरीक्षण के लिए आया और चीफ आफ जनरल स्टाफ ने कमान अपने हाथ में ले ली, और इस प्रकार अस्थाई रूप से उनके बीच तालमेल कायम हो गया। जापान के जमींदार वर्ग, पूंजीपति वर्ग और युद्ध-सरदारों के भीतर काफी गम्भीर अन्तरविरोध मौजूद हैं,

जो दिनोंदिन बढ़ते जा रहे हैं, तथा फौजी तालमेल का अभाव इन अन्तरविरोधों की एक ठोस अभिव्यक्ति है।

उसकी चौथी गलती है रणनीतिक अवसरों को खो देना। यह दुश्मन द्वारा नानकिङ तथा थाएय्वान पर अधिकार किए जाने के बाद उसके रुक जाने से साफ जाहिर हो गया। ऐसा मुख्यतया उसकी फौजों के नाकाफी होने तथा रणनीतिक पीछा करने वाली फौजों के अभाव के कारण हुआ।

उसकी पांचवीं गलती है भारी तादाद में घेरेबन्दी करना लेकिन बहुत कम तादाद में विनाश करना। थाएग्रड़च्वाङ की मुहिम के पहले, शांघाई, नानकिङ, छाङचऊ, पाओतिङ, नानखग्रो, शिनखग्रो और लिनफ़न की मुहिमों में दुश्मन ने बहुत से चीनी सैनिकों को मार भगाया, लेकिन उनमें से बहुत कम सैनिकों को युद्धबन्दी बनाया तथा बहुत कम साज-सामान को जब्त किया। यह एक ऐसी बात है जिससे दुश्मन की कमान की मूर्खता जाहिर होती है।

थोड़ा-थोड़ा करके कुमक भेजना, आक्रमण की मुख्य दिशा का अभाव, रणनीतिक तालमेल की कमी, अवसरों को खो देना, और भारी तादाद में घेरेबन्दी करना लेकिन बहुत कम तादाद में विनाश करना – ये पांचों ही गलतियां थाएग्रड़च्वाङ मुहिम से पहले जापानी कमान की अयोग्यता सिद्ध करने वाली विशेषताएं थीं। यद्यपि उसके बाद दुश्मन ने इनमें कुछ सुधार किया है, लेकिन फौजों के नाकाफी होने, अन्दरूनी अन्तरविरोधों और अन्य तत्वों के कारण, वह अपनी इन गलतियों को दोहराए बिना रह नहीं सकता। इसके अलावा, दुश्मन एक स्थान पर जो कुछ उपलब्ध करता है, उसे दूसरे स्थान पर खो बैठता है। मिसाल के लिए, जब उसने उत्तरी चीन में अपनी फौजों को श्वीचग्रो में केन्द्रित किया, तो उत्तरी चीन के जापान-अधिकृत इलाकों में भारी खालीपन की स्थिति पैदा हो गई, जिससे वहां छापामार युद्ध को खूब आगे बढ़ने का मौका मिला। ऊपर बताई गई गलतियां दुश्मन ने वस्तुतः हमारे द्वारा भुलावा दिए जाने पर नहीं, बल्कि अपने आप कीं। अपनी ओर से हम जानबूझकर दुश्मन से गलतियां करवा सकते हैं, यानी सुसंगठित जन-समुदाय की मदद से "पूर्व में हमले का दिखावा करके पश्चिम में हमला बोलने" जैसी बुद्धिमत्तापूर्ण व कारगर कार्यवाहियों के जरिए दुश्मन को भ्रम में डाल सकते हैं तथा इस प्रकार उसे अपने मन-मुताबिक मैदान में खींच ला सकते हैं। इस सम्भावना पर हम पहले ही विचार कर चुके हैं। इन सब बातों से स्पष्ट हो जाता है कि स्वयं दुश्मन की कमान में भी हमारी विजय के लिए कुछ आधार खोजा जा सकता है। यह सही है कि इसे हमें अपनी रणनीतिक योजना का महत्वपूर्ण आधार नहीं समझना चाहिए ; बल्कि इसके विपरीत, विश्वसनीय तरीका यह है कि हमारी अपनी योजना इस पूर्वानुमान पर आधारित हो कि दुश्मन बहुत कम गलतियां करेगा। इसके अलावा, जहां हम दुश्मन की गलतियों का फायदा उठा सकते हैं, वहां दुश्मन भी हमारी गलतियों का फायदा उठा सकता है। इसलिए, हमारी कमान का यह कार्य है कि वह कम से कम गलतियां करे, जिससे कि दुश्मन उनका फायदा उठा न सके। लेकिन, वास्तव में दुश्मन की कमान गलतियां कर चुकी है, वह फिर गलतियां करेगी और हमारे प्रयत्नों द्वारा उससे फिर गलतियां कराई जा सकती हैं। इन तमाम गलतियों का

हम फायदा उठा सकते हैं और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के सभी सेनापतियों को हर प्रकार से ऐसे अवसरों का भरपूर लाभ उठाना चाहिए। यद्यपि दुश्मन की रणनीति और मुहिम सम्बन्धी कमान दोषपूर्ण है, फिर भी उसकी लड़ाई सम्बन्धी कमान में, यानी यूनिटों और छोटी फौजी फारमेशनों की कार्यनीति में, बहुत कुछ खूबियां हैं जिनसे हमें सीखना चाहिए।

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में निर्णायक मुठभेड़ों की समस्या

१०६. जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में निर्णायक मुठभेड़ों की समस्या को तीन पहलुओं से देखा जाना चाहिए : हर ऐसी मुहिम या लड़ाई में, जिसमें विजय निश्चित हो, दृढ़ता के साथ निर्णायक मुठभेड़ वाली लड़ाई की जानी चाहिए ; हर ऐसी मुहिम या लड़ाई में, जिसमें विजय अनिश्चित हो, निर्णायक मुठभेड़ वाली लड़ाई से बचना चाहिए ; और समूचे राष्ट्र के भाग्य को खतरे में डालने वाली रणनीतिक निर्णायक मुठभेड़ से पूरी तरह बचना चाहिए। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को दूसरे बहुत से युद्धों से भिन्न रूप देने वाली विशेषताएं भी निर्णायक मुठभेड़ों की इस समस्या में अभिव्यक्त होती हैं। युद्ध की पहली और दूसरी मंजिलों में दुश्मन, चूंकि वह मजबूत है और हम कमजोर हैं, यह चाहता है कि हम अपनी मुख्य फौजों को केन्द्रित करके निर्णायक मुठभेड़ करें। लेकिन हमारा मकसद इसके ठीक विपरीत है। हम यह चाहते हैं कि अनुकूल स्थितियों को

चुन लें तथा अपनी बरतर सैन्य-शक्तियों को केन्द्रित कर लें और सिर्फ तभी दुश्मन के खिलाफ मुहिमों या लड़ाइयों में निर्णायक मुठभेड़ें करें जब हमारी विजय निश्चित हो, जैसा कि हमने फिङ-शिङक्वान, थाएअड़च्वाङ और दूसरी जगहों की लड़ाइयों में किया ; प्रतिकूल स्थितियों में, जहां हमारी विजय अनिश्चित हो, वहां हमें निर्णायक मुठभेड़ों से बचना चाहिए, यही नीति हमने चाङते तथा अन्य मुहिमों में अपनाई थी। जहां तक ऐसी रणनीतिक निर्णायक मुठभेड़ का सवाल है जिससे समूचे राष्ट्र का भाग्य खतरे में पड़ जाता हो, उसमें हमें किसी भी हालत में नहीं पड़ना चाहिए। इसका सबूत है श्वीचओ से हाल ही में हमारा पीछे हट जाना। इस प्रकार हमने "तुरत निर्णय" की दुश्मन की योजना को नाकाम कर दिया और उसे दीर्घकालीन युद्ध में हमारे साथ उलझने के लिए बाध्य कर दिया। इस प्रकार के उसूल छोटे क्षेत्रफल वाले देश के लिए अव्यावहारिक हैं और एक ऐसे देश द्वारा, जो राजनीतिक तौर पर बहुत पिछड़ा हो, उन्हें व्यवहार में लाना भी मुश्किल है। चूंकि हमारा देश एक बड़ा देश है और प्रगति के युग में है, इसलिए ये उसूल उसके लिए व्यावहारिक हैं। यदि रणनीतिक निर्णायक मुठभेड़ों से बचा जाए, तो "जब तक पहाड़ों पर हरियाली रहेगी, तब तक ईंधन की लकड़ी की चिन्ता नहीं रहेगी," क्योंकि यद्यपि हमारी प्रादेशिक भूमि के कुछ भाग दुश्मन के कब्जे में चले जाएंगे, फिर भी दांवपेंच खेलने के लिए हमारे पास काफी जगह रहेगी और इस प्रकार हम घरेलू प्रगति, अन्तरराष्ट्रीय समर्थन तथा दुश्मन की अन्दरूनी विच्छिन्नता को बढ़ा भी सकते हैं और उनके लिए इन्तजार भी कर सकते हैं ; जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में हमारे लिए यही सबसे अच्छी

नीति है। दीर्घकालीन युद्ध की कठिनाई को बर्दाश्त न कर सकने और शीघ्र विजय के लिए बेचैन रहने वाले वे लोग जो शीघ्र विजय के उतावले सिद्धान्तकार हैं, ज्यों ही यह देखते हैं कि स्थिति में जरा भी अनुकूलता का मोड़ आ गया है, तो फौरन रणनीतिक निर्णायक मुठभेड़ के लिए शोर मचाने लगते हैं। यदि हम उनकी मरजी से चलेंगे, तो समूचे प्रतिरोध-युद्ध को अकूत धक्का लगेगा, दीर्घकालीन युद्ध का अन्त हो जाएगा और हम ठीक दुश्मन के प्राणघातक जाल में फंस जाएंगे। निश्चय ही यह सबसे खराब नीति होगी। इसमें शक नहीं कि निर्णायक मुठभेड़ न करने का मतलब होगा अपने प्रदेशों को हाथ से निकल जाने देना, तथा जब और कोई चारा न रह जाए, तभी (और सिर्फ तभी) हमें ऐसा करने का साहस करना चाहिए। ऐसे अवसरों पर हमें जरा भी खेद नहीं होना चाहिए, क्योंकि भूमि खोकर समय पाने की यह नीति बिलकुल सही है। इतिहास हमें बताता है कि निर्णायक मुठभेड़ से बचने के लिए रूस किस तरह साहस के साथ पीछे हटा था और उसने नेपोलियन को हरा दिया था,[२१] जिसका उस समय आतंक छाया हुआ था। आज चीन को भी ठीक वैसा ही करना चाहिए।

१०७. क्या हम इस बात से डरते नहीं कि हमें "प्रतिरोध न करने वाले" बताकर हमारी निन्दा की जाएगी? नहीं, हम इस बात से नहीं डरते। बिलकुल न लड़ने और दुश्मन से समझौता करने का मतलब है प्रतिरोध न करना, जिसकी न सिर्फ निन्दा की जानी चाहिए बल्कि उसे हरगिज बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिए। हम दृढ़तापूर्वक प्रतिरोध-युद्ध चलाते हैं, लेकिन दुश्मन के प्राणघातक जाल से बचने के लिए, अपनी मुख्य शक्तियां का एक ही आघात

में विनाश न होने देने के लिए, जिससे प्रतिरोध-युद्ध जारी रखना हमारे लिए मुश्किल न हो जाए – संक्षेप में राष्ट्रीय गुलामी से बचने के लिए यह निहायत जरूरी है कि हम रणनीतिक निर्णायक मुठभेड़ों से बचें। इस बारे में शक होना युद्ध के सवाल के बारे में अदूरदर्शिता का परिचायक होगा और ऐसा करने का नतीजा होगा खुद को राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थकों की पांतों में शामिल कर देना। हमने "केवल आगे बढ़ने और कभी पीछे न हटने" की जान पर खेलने वाली दुस्साहसिकता की आलोचना ठीक इसी वजह से की है कि इस प्रकार की दुस्साहसिकता यदि प्रचलित हो गई, तो वह हमारे लिए प्रतिरोध-युद्ध जारी रखना असम्भव कर देगी और अन्त में हमें राष्ट्रीय गुलामी के खतरे की ओर ले जाएगी।

१०८. चाहे लड़ाई में हो अथवा बड़ी या छोटी मुहिमों में, सभी अनुकूल स्थितियों में हम निर्णायक मुठभेड़ की हिमायत करते हैं और इस प्रश्न पर हमें किसी भी प्रकार की निष्क्रियता को सहन नहीं करना चाहिए। केवल इस प्रकार की निर्णायक मुठभेड़ों के जरिए ही हम दुश्मन का बिनाश करने और उसे क्षति पहुंचाने के उद्देश्य को प्राप्त कर सकते हैं; और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के हर सैनिक को दृढ़तापूर्वक अपनी भूमिका अदा करनी चाहिए। इस उद्देश्य के लिए आंशिक और पर्याप्त बलिदानों की आवश्यकता होती है। किसी भी बलिदान से बचने का दृष्टिकोण कायरों और ऐसे लोगों का है जिन पर जापान का हौवा सवार है; इसका दृढ़तापूर्वक विरोध किया जाना चाहिए। ली फू-इङ और हान फ़ू-च्वी जैसे पलायनवादियों को प्राणदण्ड देना उचित था। सही युद्ध-योजना के अन्तर्गत, युद्ध के दौर में साहसपूर्वक आत्म-बलिदान करने और

वीरतापूर्वक आगे बढ़ने की भावना और व्यवहार का प्रतिपादन करना नितान्त आवश्यक है ; यह बात हमारे दीर्घकालीन युद्ध और अन्तिम विजय के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। हमने पलायनवाद की, "केवल पीछे हटने और कभी आगे न बढ़ने" की कड़ी निन्दा की है और सख्त अनुशासन लागू करने का समर्थन किया है, क्योंकि एक सही योजना के अन्तर्गत वीरतापूर्ण निर्णायक मुठभेड़ों के जरिए ही हम अपने शक्तिशाली दुश्मन को हरा सकते हैं ; इसके विपरीत, पलायनवाद राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त का प्रत्यक्ष समर्थन करता है।

१०९. पहले वीरतापूर्वक लड़ना और फिर अपने प्रदेशों को हाथ से निकल जाने देना क्या परस्पर विरोधी बातें नहीं हैं ? तो क्या वीर योद्धाओं का रक्त बहाना बेकार नहीं होगा ? प्रश्न करने का यह तरीका अत्यन्त अनुचित है। आदमी पहले खाना खाता है और फिर बाद में टट्टी जाता है, तो क्या उसका खाना बेकार हो गया ? आदमी पहले सोता है और फिर उठ जाता है, तो क्या उसका सोना बेकार हो गया ? क्या प्रश्न इसी प्रकार पूछे जा सकते हैं ? मैं ऐसा नहीं समझता। लगातार खाते ही रहना, लगातार सोते ही रहना, बिना रुके बहादुरी के साथ यालू नदी तक लगातार लड़ते जाना, ये सभी बातें मनोगतवादी और आकारवादी भ्रम हैं, वास्तविक जीवन में इनका कोई अस्तित्व नहीं। हर कोई जानता है कि हालांकि समय पाने के लिए और प्रत्याक्रमण की तैयारी के लिए हमें अपनी रक्तरंजित मुठभेड़ों के दौरान अपने प्रदेशों के कुछ भागों से वंचित होना पड़ा है, फिर भी वास्तव में हमने समय हासिल किया है, दुश्मन का विनाश करने और उसे क्षति पहुंचाने

के उद्देश्य में सफलता प्राप्त की है, लड़ने का अनुभव हासिल किया है, जो लोग जागृत नहीं हुए थे उन्हें जगाया है और अपनी अन्तरराष्ट्रीय प्रतिष्ठा को उन्नत किया है। क्या हमारा रक्त बहाना बेकार साबित हुआ ? हरगिज नहीं। प्रदेशों को छोड़ने का उद्देश्य था अपनी फौजी शक्ति को सुरक्षित रखना और दरअसल अपने प्रदेशों को सुरक्षित रखना ; क्योंकि प्रतिकूल स्थिति में भूमि के किसी एक भाग को छोड़ देने के बजाय, यदि हम विजय की कतई आशा न होने पर भी अन्धाधुन्ध निर्णायक मुठभेड़ करेंगे, तो नतीजा यह होगा कि हम अपनी फौजी शक्ति को खो बैठेंगे, जिसका अवश्यम्भावी फल यह होगा कि हम अपने सभी प्रदेशों से वंचित हो जाएंगे और ऐसी स्थिति में खोए हुए प्रदेशों को फिर से पाने का तो प्रश्न ही नहीं उठेगा। एक पूंजीपति को अपना व्यापार चलाने के लिए पूंजी चाहिए और यदि वह पूरी तरह दिवालिया हो गया तो फिर वह पूंजीपति नहीं रह जाएगा। एक जुआरी को भी जुआ खेलने के लिए धन चाहिए, और यदि वह पासे की एक ही चाल में अपना सब कुछ दांव पर लगा देता है और दुर्भाग्य से हार जाता है, तो फिर वह जुआ नहीं खेल सकेगा। चीजों का विकास टेढ़ेमेढ़े रास्ते से होता है, बिलकुल सीधे रास्ते से नहीं होता। युद्ध में भी ऐसा ही होता है और केवल आकारवादी लोग ही इस सच्चाई को नहीं समझ पाते।

११०. मैं समझता हूं कि रणनीतिक प्रत्याक्रमण की मंजिल में भी निर्णायक मुठभेड़ों के बारे में यही बात कही जा सकती है। यद्यपि उस समय तक दुश्मन कमतरी की स्थिति में और हम बरतरी की स्थिति में हो जाएंगे, लेकिन इस स्थिति में भी "हितकर निर्णायक मुठभेड़ें करने तथा अहितकर निर्णायक मुठभेड़ों से बचने" के सिद्धान्त

नहीं करेगा। जापान समूचे चीन पर तो अधिकार कर नहीं सकता, लेकिन उन तमाम इलाकों में जहां तक उसकी फौजें पहुंच सकती हैं, वह तब तक चीन के प्रतिरोध को कुचलने में कोई कसर उठा न रखेगा जब तक अन्दरूनी और बाहरी परिस्थितियों के फलस्वरूप पैदा हुए फौरी संकट के कारण वह स्वयं ही भहराकर न गिर पड़े। जापान की अन्दरूनी राजनीति के लिए केवल दो ही रास्ते हैं : या तो उसका पूरा शासक वर्ग शीघ्र ही भहराकर गिर पड़ेगा तथा राजनीतिक सत्ता जनता के हाथ में आ जाएगी और इस प्रकार युद्ध का अन्त हो जाएगा, जिसकी इस वक्त कोई सम्भावना नहीं है ; या उसके जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग का स्वरूप अधिकाधिक फासिस्ट होता जाएगा और वे युद्ध को तब तक जारी रखेंगे जब तक उनका पतन न हो जाए, यही वह रास्ता है जिस पर इस समय जापान चल रहा है। इनके अलावा कोई तीसरा रास्ता नहीं है। जो लोग यह आशा करते हैं कि जापानी पूंजीपति वर्ग का उदारवादी गुट युद्ध को रोकने के लिए आगे आएगा, वे महज भ्रम में हैं। जापान की राजनीति की वास्तविकता में कई वर्षों से यह दिखाई दे रहा है कि जापान के पूंजीपति वर्ग का उदारवादी गुट जमींदारों और इजारेदार बैंक-पूंजीपतियों के हाथों बन्दी बन चुका है। अब जबकि जापान ने चीन पर आक्रमण कर दिया है, यदि चीन ने प्रतिरोध-युद्ध करके उस पर प्राणघातक प्रहार न किया और जापान की काफी शक्ति बनी रही, तो वह निश्चय ही दक्षिण-पूर्वी एशिया या साइबेरिया, अथवा दोनों पर आक्रमण कर बैठेगा। जैसे ही योरप में युद्ध छिड़ेगा, जापान यह दांव खेलेगा। जापान के शासकों ने खयाली पुलाव पकाते हुए एक अत्यन्त विशाल योजना बना ली है। हां, सोवियत

संघ की मजबूती के कारण और चीन से होने वाले युद्ध में जापान के अत्यधिक कमजोर हो जाने के कारण ऐसा हो सकता है कि जापान को साइबेरिया पर आक्रमण करने की अपनी मूल योजना को छोड़ना पड़े और सोवियत संघ के प्रति बुनियादी तौर पर बचाव का रुख अपनाना पड़े। लेकिन ऐसी स्थिति में वह चीन पर अपने आक्रमण को ढीला नहीं करेगा, बल्कि उसे और तेज करेगा, क्योंकि तब उसके पास केवल एक ही रास्ता रह जाएगा, यानी कमजोर को हड़प लेना। ऐसा होने पर चीन के प्रतिरोध-युद्ध, संयुक्त मोर्चे और दीर्घकालीन युद्ध में डटे रहने का कार्य और भी ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाएगा। ऐसी स्थिति में चीन को, बिना किसी ढील के अपने प्रयत्नों को और भी आगे बढ़ाते रहना चाहिए।

११२. इन परिस्थितियों में जापान पर चीन की विजय की मुख्य शर्त है राष्ट्रव्यापी एकता और विभिन्न क्षेत्रों में पहले से दस गुनी या सौ गुनी तरक्की। चीन अभी प्रगति के युग में है और उसने महान एकता भी कायम कर ली है, लेकिन उसकी प्रगति और उसकी एकता अभी भी आवश्यकता से बहुत कम है। जापान द्वारा इतने बड़े इलाके पर अधिकार कर लिया जाना एक ओर उसकी मजबूती की बदौलत मुमकिन हुआ है और दूसरी ओर चीन की कमजोरी की बदौलत। चीन की यह कमजोरी पिछले सौ वर्षों की, विशेषतः पिछले दस वर्षों की विभिन्न ऐतिहासिक गलतियों का कुल जमा परिणाम है। इन गलतियों ने चीन की प्रगति को आज की हालत तक सीमित कर दिया है। जब तक हम लम्बे अरसे तक व्यापक प्रयत्न नहीं करेंगे, तब तक ऐसे शक्तिशाली दुश्मन को परास्त करना असम्भव होगा। हमें अभी कई मामलों में प्रयत्न करने हैं, लेकिन

यहां मैं केवल दो सबसे ज्यादा बुनियादी पहलुओं की ही चर्चा करने जा रहा हूं : फौज की प्रगति और जनता की प्रगति।

११३. हमारी सेना की व्यवस्था में सुधार करना उसे आधुनिक बनाने तथा उसकी तकनीकी स्थिति में उन्नति करने के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। इसके बिना हम दुश्मन को यालू नदी के उस पार तक नहीं खदेड़ सकते। फौजों को इस्तेमाल करने के लिए हमें प्रगतिशील और लचीली रणनीति तथा कार्यनीति की आवश्यकता है। इसके बिना भी हम विजय नहीं प्राप्त कर सकते। मगर सिपाही सेना की बुनियाद होते हैं ; जब तक उनमें प्रगतिशील राजनीतिक भावना पैदा नहीं की जाती, और जब तक ऐसी भावना को प्रगतिशील राजनीतिक कार्य के जरिए बढ़ाया नहीं जाता, तब तक अफसरों और सिपाहियों के बीच सच्ची एकता कायम करना असम्भव है, प्रतिरोध-युद्ध के लिए उनके उत्साह को पूर्ण रूप से उभारना असम्भव है, तथा हमारे तमाम तकनीकी साज-सामान और कार्यनीतियों का अत्यन्त कारगर रूप से इस्तेमाल करने के लिए एक बेहतरीन आधार तैयार करना असम्भव है। जब हम यह कहते हैं कि जापान अपनी तकनीकी बरतरी के बावजूद अन्त में अवश्य हार जाएगा, तब हमारा मतलब यह होता है कि विनाश और घिसाव-थकाव करने वाली कार्यवाहियों के द्वारा हम उस पर जो प्रहार करेंगे, उनसे उसे नुकसान पहुंचने के अलावा उसकी फौजों का मनोबल अनिवार्य रूप से टूट जाएगा क्योंकि उनके हथियार राजनीतिक रूप से जागृत सिपाहियों के हाथ में नहीं हैं। हमारी स्थिति इसके विपरीत है। हमारे अफसर और सिपाही जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के राजनीतिक उद्देश्य से पूरी तरह सहमत हैं। यह एकता सभी जापान-विरोधी

फौजों में राजनीतिक कार्य करने के लिए आधार बन जाती है। सेना में मुख्य रूप से डांट-फटकार बताने और मार-पीट करने की सामन्ती प्रथा को खत्म करके तथा अफसरों और सिपाहियों द्वारा एक दूसरे के सुख-दुख में हाथ बंटाकर, समुचित मात्रा में जनवाद पर अमल किया जाना चाहिए। जहां एक बार ऐसा कर लिया गया तो अफसरों और सिपाहियों के बीच एकता कायम की जा सकेगी, सेना की युद्ध-क्षमता में भारी बढ़ोतरी की जा सकेगी, तथा इस बात में रत्तीभर भी सन्देह नहीं रह जाएगा कि हम इस दीर्घकालीन और निर्मम युद्ध में टिक सकेंगे।

११४. युद्ध करने की शक्ति का अथाह स्रोत जन-समुदाय में है। चीनी जन-समुदाय का असंगठित होना ही इस बात की मुख्य वजह है कि जापान हम पर अत्याचार करने का साहस करता है। जब यह कमी दूर की जाएगी, तो आग के घेरे में फंसे उन्मत्त सांड़ की तरह जापानी आक्रमणकारियों को ताल ठोककर खड़ी हमारी दसियों करोड़ जनता के बीच घिर जाना पड़ेगा, हमारी हुंकार से ही वे भयभीत हो उठेंगे और आग की लपटों से टकराकर भस्म हो जाएंगे। हमारी ओर से फौज को लगातार कुमक मिलनी चाहिए। "जोर-जबरदस्ती" और "बदले की खरीद" द्वारा भरती[२४] पर, जैसा कि निचले स्तर पर इस समय मनमाने ढंग से किया जा रहा है, फौरन प्रतिबन्ध लगा दिया जाना चाहिए और इनके स्थान पर व्यापक और उत्साहपूर्ण राजनीतिक जत्थेबन्दी के जरिए फौजी भरती की जानी चाहिए। इससे दसियों लाख लोगों को फौज में भरती करना आसान बन जाएगा। इस समय प्रतिरोध-युद्ध के लिए धन इकट्ठा करने में हमें बड़ी कठिनाई महसूस हो रही है। लेकिन

जनता के गोलबन्द हो जाने के बाद इस तरह की कोई समस्या नहीं रह जाएगी। क्या यह तर्कसंगत बात मालूम होती है कि चीन जैसा विशाल भूमि व बड़ी जनसंख्या वाला देश अपने को धन की कमी की स्थिति में पाए? सेना को चाहिए कि वह जनता के साथ एकरूप हो जाए, ताकि जनता उसे अपनी ही सेना समझे। ऐसी सेना अपराजेय बन जाएगी, और जापान जैसा एकाध साम्राज्यवादी देश उसके सामने तुच्छ साबित होगा।

११५. बहुत से लोगों का विचार है कि अफसरों और सिपाहियों के बीच तथा सेना और जनता के बीच तनावपूर्ण सम्बन्धों का कारण गलत तरीके अपनाया जाना ही होता है। लेकिन मैंने उन्हें हमेशा यह बताया है कि यह समस्या बुनियादी रुख (या बुनियादी उसूल) की समस्या है, सिपाहियों और जनता का सम्मान करने के रुख की समस्या है। इसी रुख से विभिन्न नीतियों, उपायों और तरीकों का जन्म होता है। अगर हम इस रुख को छोड़ देते हैं तो हमारी नीतियां, उपाय और तरीके निश्चित रूप से गलत हो जाएंगे, तथा अफसरों और सिपाहियों के बीच के और सेना व जनता के बीच के सम्बन्ध हरगिज सन्तोषप्रद नहीं बन सकेंगे। सेना के राजनीतिक कार्य के लिए हमारे तीन मुख्य उसूल इस प्रकार हैं: पहला, अफसरों और सिपाहियों के बीच एकता; दूसरा, सेना और जनता के बीच एकता; तथा तीसरा, दुश्मन की फौजों को छिन्न-भिन्न कर देना। इन उसूलों को कारगर रूप से लागू करने के लिए हमें सिपाहियों और जनता का सम्मान करने तथा जिन युद्धबन्दियों ने हथियार डाल दिए हैं उनकी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा का सम्मान करने के बुनियादी रुख को अपना प्रस्थान-बिन्दु बनाना चाहिए। जो लोग इस समस्या को महज काम

के तरीके की समस्या समझते हैं और बुनियादी रुख की समस्या नहीं समझते, उनके विचार निस्सन्देह गलत हैं और उन्हें अपने विचार ठीक कर लेने चाहिए।

११६. इस समय, जबकि ऊहान और दूसरे स्थानों की रक्षा करना अत्यन्त फौरी कार्य बन गया है, तमाम सेना तथा तमाम जनता की सक्रियता को युद्ध के समर्थन में पूर्ण रूप से जागृत करना एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। इसमें शक नहीं कि ऊहान और दूसरे स्थानों की हिफाजत करने के कार्य को गम्भीरता से पेश किया जाना चाहिए और गम्भीरता से अमल में लाया जाना चाहिए। लेकिन ये स्थान निश्चित रूप से सुरक्षित रखे जा सकते हैं या नहीं, यह हमारी मनोगत इच्छाओं पर नहीं, बल्कि ठोस परिस्थितियों पर निर्भर है। संघर्ष के लिए तमाम सेना और तमाम जनता की राजनीतिक जत्थेबन्दी इसके लिए सबसे महत्वपूर्ण ठोस शर्तों में से एक है। यदि सभी आवश्यक शर्तों को पूरा करने के प्रयत्न नहीं किए गए, या उनमें से एक भी शर्त का अभाव रहा, तो फिर नानकिङ तथा दूसरी जगहों के हमारे हाथ से निकल जाने जैसी विपत्तियों की पुनरावृत्ति होकर रहेगी। चीन का मैड्रिड वे सभी स्थान बन सकते हैं जहां मैड्रिड की सी परिस्थितियां मौजूद हों। अब तक चीन में कोई मैड्रिड नहीं बन सका। अब से हमें चीन में कई मैड्रिडों की स्थापना के लिए प्रयत्न करने चाहिए। लेकिन यह सब परिस्थितियों पर निर्भर होगा। इनमें सबसे बुनियादी शर्त यह है कि तमाम सेना और तमाम जनता की व्यापक तौर पर राजनीतिक जत्थेबन्दी की जाए।

११७. अपने तमाम कार्यों में हमें जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की आम नीति पर दृढ़ रहना चाहिए। कारण यह कि केवल इसी नीति से हम प्रतिरोध-युद्ध तथा दीर्घकालीन युद्ध को जारी रख सकते हैं, अफसरों और सिपाहियों के बीच के तथा सेना और जनता के बीच के सम्बन्धों में चौतरफा और गहरा सुधार कर सकते हैं, अपने बचे हुए तमाम प्रदेशों की रक्षा करने और अपने खोए हुए तमाम प्रदेशों पर फिर से अधिकार करने के लिए तमाम सेना और तमाम जनता की सक्रियता को पूर्ण रूप से जागृत कर सकते हैं, तथा अन्तिम विजय प्राप्त कर सकते हैं।

११८. सेना और जनता की राजनीतिक जत्थेबन्दी की समस्या दरअसल सबसे अधिक महत्वपूर्ण समस्या है। इसे हम ठीक इसीलिए बार-बार दोहरा रहे हैं, क्योंकि राजनीतिक जत्थेबन्दी के बिना युद्ध में विजय प्राप्त नहीं की जा सकती। इसमें शक नहीं कि अनेक दूसरी आवश्यक शर्तें भी हैं, और उनके बिना भी युद्ध में जीतना सम्भव नहीं है। लेकिन राजनीतिक जत्थेबन्दी युद्ध में विजय प्राप्त करने की सबसे बुनियादी शर्त है। जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा तमाम सेना और तमाम जनता का एक संयुक्त मोर्चा है। यह किसी भी सूरत में केवल किन्हीं राजनीतिक पार्टियों के सदर-मुकामों और उनके सदस्यों का संयुक्त मोर्चा नहीं है। जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का प्रवर्तन करने का हमारा एकमात्र बुनियादी उद्देश्य यही है कि संयुक्त मोर्चे में शामिल होने के लिए तमाम सेना और तमाम जनता को गोलबन्द किया जाए।

निष्कर्ष

११९. हमारे निष्कर्ष क्या हैं? वे इस प्रकार हैं:

"चीन किन परिस्थितियों में जापानी साम्राज्यवाद की शक्ति को पराजित और नष्ट कर सकता है? इसके लिए तीन शर्तों की जरूरत है: पहली, चीन में जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की स्थापना; दूसरी, जापान-विरोधी अन्तरराष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की स्थापना; तीसरी, जापानी जनता और जापान के उपनिवेशों की जनता के क्रान्तिकारी आन्दोलन का उदय। चीनी जनता के दृष्टिबिन्दु से, इन तीनों में सबसे महत्वपूर्ण शर्त है चीनी जनता की महान एकता।"

"इस प्रकार का युद्ध कब तक जारी रहेगा? यह चीन के जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की शक्ति पर तथा चीन और जापान के भीतर मौजूद अनेक अन्य निर्णायक तत्वों पर निर्भर है।"

"यदि ये शर्तें जल्दी ही पूरी नहीं कर ली जाएंगी, तो युद्ध लम्बा हो जाएगा। लेकिन अन्त में नतीजा यही होगा कि जापान की हार अवश्य होगी, और चीन की विजय अवश्य होगी। हां, कुर्बानियां बड़े पैमाने पर देनी होंगी, और यह एक बहुत दुखद काल होगा।"

"हमारा रणनीतिक उसूल यह होना चाहिए कि हम अपनी नियमित सेना को एक बहुत लम्बे और बदलते हुए अस्थिर मोर्चे पर कार्यवाही करने में लगाए रखें। कामयाबी हासिल

करने के लिए चीनी सेनाओं को ऊंचे दर्जे की चलायमानता के साथ व्यापक रणभूमि में लड़ाई चलानी चाहिए।"

"चलायमान लड़ाई चलाने के लिए प्रशिक्षित फौज को भेजने के अलावा हमें किसानों के बीच से बड़ी संख्या में छापामार दस्ते भी संगठित करने चाहिए।"

"युद्ध की प्रक्रिया के दौरान चीन. . . अपने आपको फौजी साज-सामान की दृष्टि से कदम-ब-कदम सुदृढ़ बनाएगा। इसलिए युद्ध के उत्तर काल में चीन मोर्चेबद्ध लड़ाई चला सकेगा तथा जापान-अधिकृत क्षेत्रों की मोर्चेबन्दी पर हमला कर सकेगा। इस प्रकार जापान की अर्थव्यवस्था चीन के दीर्घकालीन प्रतिरोध के दबाव के कारण तबाह हो जाएगी तथा अनगिनत लड़ाइयों में उलझने के कारण जापानी फौजों का मनोबल टूट जाएगा। लेकिन चीन के पक्ष में, प्रतिरोध की निहित शक्ति का दिन-ब-दिन प्रचण्ड रूप से विकास होता जाएगा, तथा क्रान्तिकारी लोगों की बहुत बड़ी तादाद अपने देश की आजादी के लिए लड़ने मोर्चे की अग्रिम कतारों में पहुंच जाएगी। इन सब तत्वों और दूसरे तत्वों के मेल से हम जापान-अधिकृत क्षेत्रों में उसकी किलेबन्दियों और अड्डों पर अन्तिम व निर्णायक प्रहार करने, और हमलावर जापानी फौजों को चीन से बाहर खदेड़ने में समर्थ हो जाएंगे।"

(एडगर स्नो के साथ मुलाकात, जुलाई १९३६)

"इस प्रकार चीन की राजनीतिक परिस्थिति में अब एक नई मंजिल की. . . शुरुआत हो गई है।. . . मौजूदा मंजिल का

केन्द्रीय कार्य है प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए राष्ट्र की सभी शक्तियों को गोलबन्द करना।"

"प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने की कुंजी है मौजूदा प्रतिरोध-युद्ध को, जो शुरू हो चुका है, समूचे राष्ट्र के पूर्ण प्रतिरोध-युद्ध में विकसित कर देना। केवल इसी प्रकार के प्रतिरोध-युद्ध द्वारा अन्तिम विजय प्राप्त की जा सकती है।"

"मौजूदा प्रतिरोध-युद्ध में गम्भीर कमजोरियां होने की वजह से उसके रास्ते में क्षति उठाने, पीछे हटने, भीतरी फूट, विश्वास-घात, अस्थाई व आंशिक सुलह-समझौते, आदि जैसी अनेक प्रतिकूल स्थितियों का सामना करना पड़ेगा। इसलिए हमें यह समझ लेना चाहिए कि यह युद्ध एक कठिन और दीर्घकालीन युद्ध होने जा रहा है। लेकिन हमारा विश्वास है कि जो प्रति-रोध-युद्ध शुरू हो गया है, वह हमारी पार्टी और तमाम जनता के प्रयत्नों के जरिए निश्चय ही सभी विघ्न-बाधाओं को पार करके अपनी प्रगति और विकास को जारी रखेगा।"

("वर्तमान परिस्थिति और पार्टी के कार्यों के बारे में प्रस्ताव", चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा अगस्त १९३७ में स्वीकृत)

ये ही हमारे निष्कर्ष हैं। राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त के समर्थक दुश्मन को अतिमानव और हमें नाचीज समझते हैं, जबकि शीघ्र विजय के सिद्धान्त के प्रतिपादक हमें अतिमानव और दुश्मन को नाचीज समझते हैं। ये दोनों ही गलत हैं। हमारा दृष्टिकोण इन दोनों के विपरीत है; जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध एक दीर्घ-

कालीन युद्ध है और अन्तिम विजय चीन की ही होगी। यही हमारा निष्कर्ष है।

१२०. मेरी भाषण-माला यहां समाप्त होती है। महान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध विकसित हो रहा है और बहुत से लोग पूर्ण विजय की प्राप्ति के लिए हमारे अनुभवों का सारांश निकालने की उम्मीद लगाए हुए हैं। यहां जो कुछ मैंने बताया है, वह केवल पिछले दस महीनों का आम अनुभव है। शायद इसे सारांश के रूप में भी ग्रहण किया जा सके। दीर्घकालीन युद्ध की समस्या व्यापक रूप से ध्यान देने और विचार-विनिमय करने योग्य है। मैंने जो कुछ कहा है, वह केवल एक रूपरेखा है। मुझे आशा है कि आप लोग इसकी जांच-पड़ताल करेंगे और इस पर विचार-विमर्श करेंगे तथा इसमें सुधार और परिवर्धन करेंगे।

नोट

[१] राष्ट्रीय गुलामी का यह सिद्धान्त क्वोमिन्ताङ का मत था। क्वोमिन्ताङ जापान का प्रतिरोध कतई नहीं करना चाहती थी और बाद में वह दबाव की वजह से ही जापान के खिलाफ लड़ी। लूकओछ्याओ घटना के बाद, जब च्याङ काई-शेक गुट अनिच्छापूर्वक प्रतिरोध-युद्ध में शामिल भी हुआ, तो वाङ चिङ-वेइ गुट ने राष्ट्रीय गुलामी के सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व किया और जापान के सामने घुटने टेकने की तैयारी की तथा बाद में उसने सचमुच घुटने टेक भी दिए। राष्ट्रीय गुलामी का विचार केवल क्वोमिन्ताङ में ही नहीं पाया जाता था, बल्कि इसका असर समाज के मध्यम श्रेणी के कुछ हिस्सों पर और कुछ हद तक मेहनतकश जनता के पिछड़े हुए हिस्से पर भी मौजूद था। जनता के कुछेक पिछड़े हुए हिस्सों

में निराशा की भावना गम्भीरतापूर्वक मौजूद थी, क्योंकि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में भ्रष्ट और अयोग्य क्वोमिन्ताङ सरकार एक के बाद एक लड़ाई हारती चली जा रही थी और जापानी सेना सालभर के अन्दर ही बेरोकटोक ऊहान के नजदीक पहुंच गई थी।

[२] ये विचार कम्युनिस्ट पार्टी के अन्दर पाए जाते थे। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के शुरू के छै महीने के दौर में कम्युनिस्ट पार्टी के कुछ लोगों में दुश्मन को कम करके आंकने का एक रुझान मौजूद था। उनकी राय थी कि जापानियों को एक ही प्रहार में परास्त किया जा सकता है। ऐसी बात नहीं थी कि वे अपनी शक्ति को बहुत मजबूत समझते थे। वे इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली फौज और जन-समुदाय की संगठित शक्ति अभी भी बहुत कमजोर है। लेकिन बात यह थी कि क्वोमिन्ताङ ने जापान का प्रतिरोध करना शुरू कर दिया था। वे यह समझते थे कि क्वोमिन्ताङ बहुत शक्तिशाली है और कम्युनिस्ट पार्टी के साथ तालमेल कायम करके क्वोमिन्ताङ जापान पर कारगर ढंग से प्रहार कर सकती है। उन्होंने क्वोमिन्ताङ के केवल इस पहलू को तो देखा था कि वह अभी जापान का प्रतिरोध कर रही है, लेकिन उसके इस दूसरे पहलू को नजरअन्दाज कर दिया था कि वह प्रतिक्रियावादी और भ्रष्ट है। यही कारण है कि उन्होंने परिस्थिति का गलत मूल्यांकन किया।

[३] च्याङ काई-शेक एण्ड कम्पनी की राय इसी किस्म की थी। जापान का प्रतिरोध करने के लिए मजबूर होने के बाद च्याङ काई-शेक और क्वोमिन्ताङ ने अपनी तमाम उम्मीदें तुरत मिलने वाली विदेशी सहायता पर लगा रखी थीं। उन्हें अपनी ताकत पर विश्वास नहीं था, और जनता की ताकत पर तो और भी कम विश्वास था।

[४] थाएर्ह्चुवाङ दक्षिणी शानतुङ में स्थित एक कस्बा है, जहां मार्च १९३८ में चीनी सेना ने जापानी हमलावर सेना के खिलाफ एक लड़ाई लड़ी थी। इस लड़ाई में जापान की ७०-८० हजार फौजों से अपनी ४ लाख फौजें भिड़ाकर चीनी सेना ने विजय प्राप्त की थी।

[५] यह विचार "ता कुङ पाओ" के एक सम्पादकीय लेख में व्यक्त किया गया था, जो उस समय क्वोमिन्ताङ के राजनीति-विज्ञान ग्रुप का मुखपत्र था। इस

ग्रुप ने कुछ हवाई धारणाएं बना रखी थीं और वह आशा करता था कि थाएग्रड़-च्वाङ जैसी कुछ और जीतों के बाद जापान का आगे बढ़ना रुक जाएगा और तब दीर्घकालीन युद्ध के लिए जनता की शक्तियों को गोलबन्द करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। यह ग्रुप सोचता था कि अगर जनता को गोलबन्द कर लिया गया, तो आगे चलकर यह चीज उसके वर्ग-अस्तित्व के लिए खतरनाक साबित होगी। पूरी क्वोमिन्ताङ में इस तरह की हवाई धारणा फैली हुई थी।

[६] यहां १८९८ में हुए सुधारवादी आन्दोलन का हवाला दिया गया है। इस आन्दोलन ने कुछ उदारवादी पूंजीपतियों और जागृत जमींदारों के हितों का प्रतिनिधित्व किया। इस आन्दोलन के नेता खाङ यग्रो-वेइ, ल्याङ छी-छाग्रो और थान स-थुङ आदि थे। इसका सम्राट क्वाङ श्वी ने समर्थन किया था, लेकिन इसका कोई जन-आधार नहीं था। बाद में य्वान श-खाए ने, जिसके पास सेना थी, विश्वासघात करके सुधारवादी गुट की योजना रूढ़िवादी गुट की नेत्री महारानी डोवागर छशी को बता दी। परिणामस्वरूप महारानी डोवागर छशी ने फिर से राजसत्ता पर कब्जा कर लिया, सम्राट क्वाङ श्वी को कैद कर लिया और थान स-थुङ व अन्य पांच व्यक्तियों को मौत के घाट उतार दिया। इस प्रकार इस आन्दोलन को दुखद पराजय का मुंह देखना पड़ा।

[७] १६ जनवरी १९३८ को, जापानी मंत्रिमण्डल ने एक वक्तव्य जारी किया जिसमें हथियारबन्द फौजों के जरिए चीन को गुलाम बनाने की नीति का ऐलान किया गया था। साथ ही उसने क्वोमिन्ताङ सरकार को धमकी देने तथा आत्म-समर्पण के लिए फुसलाने की भी कोशिश की। उसने ऐलान किया कि यदि क्वोमिन्ताङ सरकार ने "प्रतिरोध-युद्ध की योजना को जारी रखा", तो जापान सरकार चीन में एक नई कठपुतली सरकार कायम करेगी और उसे सुलह की बातचीत चलाने का हकदार नहीं समझेगी।

[८] यहां तात्पर्य मुख्यतया अमरीका से है।

[९] यहां तात्पर्य ब्रिटेन, अमरीका और फ्रांस जैसे साम्राज्यवादी देशों की सरकारों से है।

[१०] कामरेड माम्रो त्सेतुङ की यह भविष्यवाणी कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की ठहराव की मंजिल में चीन की लगातार उन्नति होती जाएगी, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में स्थापित मुक्त क्षेत्रों में बिलकुल सही साबित हुई। लेकिन क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में शासक गुट, जिसका मुखिया च्याङ काई-शेक था, न सिर्फ आगे नहीं बढ़ा, बल्कि जापान का निष्क्रिय प्रतिरोध और कम्युनिस्ट पार्टी व जनता का सक्रिय विरोध करने के कारण वह धीरे-धीरे पीछे ही हटता गया। लेकिन इसके फलस्वरूप व्यापक जनता में प्रतिरोध भड़क उठा और उसकी राजनीतिक चेतना ऊंची होती गई। इससे सम्बन्धित विस्तृत विश्लेषण के लिए देखिए: कामरेड माम्रो त्सेतुङ की रचना "मिलीजुली सरकार के बारे में"।

[११] "हथियार ही सब कुछ तय करते हैं" के सिद्धान्त को मानने वाले लोग यह समझते थे कि चीन के हथियार जापान से घटिया हैं, इसलिए युद्ध में चीन की अवश्य हार हो जाएगी। च्याङ काई-शेक समेत क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादी गुट के सरगनाओं का यही विचार था।

[१२] बुद्ध बौद्ध धर्म के प्रवर्तक शाक्यमुनि थे। सुन ऊ-खुङ १६वीं शताब्दी में लिखे गए "शी यग्रो चौ" (पश्चिम की तीर्थयात्रा) नामक चीनी पौराणिक उपन्यास का एक वीर नायक था। उपन्यास में उसका एक बन्दर के रूप में चित्रण किया गया है जो सिर्फ एक कलाबाजी खाकर १,०८,००० ली की दूरी तय कर सकता था। लेकिन एक बार जब उसे बुद्ध की हथेली पर चढ़ने को मजबूर होना पड़ा तो लाख कोशिश करने के बाद भी वह उससे बाहर नहीं निकल सका। उपन्यास में कहा गया है कि बुद्ध ने अपनी हथेली को पलट दिया और अपनी पांचों उंगलियों को पंचतत्व पर्वत के रूप में खड़ा कर दिया, जिसके नीचे दबकर सुन ऊ-खुङ हिल-डुल भी नहीं सका।

[१३] अगस्त १९३५ में कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल की सातवीं विश्व कांग्रेस के सामने "फासिस्ट आक्रमण तथा फासिस्ट के खिलाफ मजदूर वर्ग की एकता के लिए संघर्ष में कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल के कार्य" शीर्षक अपनी रिपोर्ट में कामरेड जार्जी दिमित्रोव ने कहा था: "फासिज्म एक बेलगाम शोविनिज्म और लूट-खसोट भरा युद्ध है।" जुलाई १९३७ में उनका "फासिज्म का मतलब है युद्ध" शीर्षक निबन्ध प्रकाशित हुआ था।

[१४] देखिए: वी० आई० लेनिन, "**समाजवाद और युद्ध**" का पहला **अध्याय**

और "दूसरी इन्टरनेशनल का पतन" का तीसरा परिच्छेद।

१५ देखिए: "सुन चि" नामक पुस्तक का तीसरा अध्याय, "आक्रमण की रणनीति"।

१६ ईसापूर्व ६३२ में चिन और छू राज्यों के बीच छङफू में (जो वर्तमान हनान प्रान्त की फ़ानश्येन काउन्टी में है—अनु०) घमासान लड़ाई हुई थी। लड़ाई के शुरू में छू का पलड़ा भारी था। चिन की सेनाएं ६० ली पीछे हट गईं, फिर उन्होंने दुश्मन के कमज़ोर स्थलों पर, यानी उसके दाएं और बाएं बाजुओं पर, जोरदार प्रहार किया और इस प्रकार उसे पूरी तरह परास्त कर दिया।

१७ यह लड़ाई ईसापूर्व २०४ में चिङचिङ नामक स्थान में हुई थी। चाओ श्ये के पास २ लाख सेना थी जो हान राज्य के सेनापति हान शिन की सेना से कई गुनी ज्यादा थी। लेकिन हान शिन की फौजों ने नदी को अपना पृष्ठभाग बनाकर बहादुरी से लड़ाई की। इसी बीच हान शिन ने अपने एक दस्ते को दुश्मन के पृष्ठभाग में एक ऐसे स्थल पर हमला बोलने और कब्जा करने के लिए भेज दिया जहां दुश्मन की फौजें कम तादाद में थीं। इस प्रकार संड़सीनुमा मोर्चेबन्दी में फंसकर चाओ की सेना बुरी तरह हार गई।

१८ १८वीं शताब्दी के अन्त व १९वीं शताब्दी के शुरू में, फ्रांस के नेपोलियन ने बरतानिया, प्रशिया, आस्ट्रिया, रूस तथा योरप के अन्य बहुत से देशों के खिलाफ लड़ाइयां लड़ीं। अधिकांश लड़ाइयों में, नेपोलियन की फौज दुश्मन की फौज के मुकाबले संख्या में कम होते हुए भी विजयी हुई।

१९ ३८३ ईसवी में छिन राज्य के शासक फू चेन ने चिन राज्य की फौजों को कमजोर समझकर अपनी फौज को उन पर हमला करने भेज दिया। लेकिन चिन की फौजें आनह्वेइ प्रान्त की शओयाङ काउन्टी के लोछ्येन नामक स्थान में फू चेन के अग्रिम दस्तों को हराकर जल और थल दोनों मार्गों से आगे बढ़ चलीं। शओयाङ नगर की दीवार पर चढ़कर फू चेन ने देखा कि दुश्मन की फौजी मोर्चेबन्दी बहुत कमाल की है, साथ ही उसने पाकुङ पहाड़ के प्रत्येक पेड़ और झाड़-झंखाड़ को दुश्मन के सिपाही समझकर दुश्मन की फौज को शक्तिशाली मान लिया था तथा खुद भयभीत हो उठा था। देखिए: "चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं" शीर्षक लेख का नोट २९ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

२० यहां उस तथ्य का उल्लेख किया गया है, जब च्याङ काई-शेक और वाङ चिङ-वेइ आदि ने १९२७ में क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के प्रथम राष्ट्रीय जनवादी संयुक्त मोर्चे के प्रति विश्वासघात किया था और दस वर्ष तक जनता के खिलाफ युद्ध चलाया था, तथा इस प्रकार उन्होंने जनता के व्यापक संगठन को असम्भव बना दिया था। क्वोमिन्ताङ के प्रतिक्रियावादियों को ही, जिनका सरगना च्याङ काई-शेक था, इस ऐतिहासिक गलती के लिए जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए।

२१ श्याङ, सुङ राज्य का सामन्त था जिसने ईसापूर्व सातवीं शताब्दी के वसन्त और शरद काल में शासन की बागडोर सम्भाली थी। ईसापूर्व ६३८ में सुङ राज्य की लड़ाई शक्तिशाली छू राज्य से हुई। अपनी फौजों को कतारबद्ध करने के बाद सामन्त श्याङ ने देखा कि छू की फौजें अभी नदी पार कर ही रही हैं। सुङ राज्य के एक अफसर ने उसे सलाह दी कि चूंकि छू की फौजें संख्या में ज्यादा हैं और अपनी फौजें संख्या में कम हैं, इसलिए यही मौका है कि दुश्मन पर हमला बोल दिया जाए। लेकिन सामन्त श्याङ ने कहा: "नहीं, किसी भले आदमी को ऐसे लोगों पर कभी हमला नहीं करना चाहिए जो तैयार न हों।" जब छू की फौजें नदी पार कर गईं, मगर अभी मोर्चेबन्दी नहीं कर पाईं तब उस अफसर ने फिर हमला करने का सुझाव दिया; और तब फिर एक बार सामन्त श्याङ ने यह जवाब दिया: "नहीं, किसी भले आदमी को किसी ऐसी सेना पर कभी हमला नहीं बोलना चाहिए जिसने मोर्चेबन्दी न कर ली हो।" सामन्त श्याङ ने आक्रमण का आदेश तभी दिया जब छू की फौजें पूरी तरह तैयार हो चुकी थीं। नतीजा यह हुआ कि सुङ की फौजें बुरी तरह हार गईं और स्वयं सामन्त श्याङ घायल हो गया। देखिए: "च्वो च्वान" में "सामन्त शी का २२वां वर्ष"।

२२ १९३७ में पेफिङ और थ्येनचिन पर कब्जा करने के बाद जब जापानी हमलावर सेना शानतुङ पर आक्रमण करने के लिए थ्येनचिन-फूखओ रेलवे के किनारे-किनारे दक्षिण की ओर आगे बढ़ी, तो हान फू-च्वी, जो एक क्वोमिन्ताङ युद्ध-सरदार था और कई वर्षों तक शानतुङ का शासक रह चुका था, एक भी लड़ाई लड़े बिना शानतुङ से हनान तक बेतहाशा भागता रहा।

[११] १८१२ में, नेपोलियन ने ५ लाख की बड़ी फौज के साथ रूस पर हमला कर दिया। रूस की फौज ने मास्को को त्याग दिया और उसे जला डाला। इस प्रकार नेपोलियन की फौज भूख, ठण्ड व विपत्तियों की तथा सैन्य-पृष्ठ के तितर-बितर होने और फौजों के घिर जाने की लाचार स्थिति में पड़ गई। अतः उसे मजबूरन अपनी फौज पीछे हटानी पड़ी। रूसी फौजों ने मौका पाकर जवाबी हमला बोल दिया, जिससे नेपोलियन की फौज के केवल २० हजार से कुछ ज्यादा सैनिक बचकर भाग गए।

[१४] यहां फौज में भरती करने के लिए क्वोमिन्ताङ द्वारा अपनाए जाने वाले तरीकों का हवाला दिया गया है। क्वोमिन्ताङ की फौज और पुलिस जगह-जगह लोगों को मनमाने तरीके से जबरन पकड़कर भरती करती थी और उन्हें रस्सी से बांधकर कैदियों की भांति रखती थी। पैसे वाले लोग क्वोमिन्ताङ अफसरों को घूस देकर अपने बदले किसी दूसरे आदमी को खरीदकर भरती करा देते थे।

राष्ट्रीय युद्ध में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की भूमिका*

अक्तूबर १९३८

साथियो, हमारा भविष्य उज्ज्वल है। हमारे लिए न केवल यह आवश्यक है कि हम जापानी साम्राज्यवाद को हरा दें और एक नए चीन का निर्माण करें, बल्कि हम निश्चय ही इन उद्देश्यों को प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन वर्तमान स्थिति और उज्ज्वल भविष्य के बीच एक कठिन रास्ता है। एक उज्ज्वल चीन के लिए संघर्ष में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और समूची जनता को चाहिए कि वे योजनाबद्ध रूप से जापानी हमलावरों से संघर्ष करें, और वे केवल लम्बे युद्ध के जरिए ही उन्हें हरा सकते हैं। इस युद्ध सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं के बारे में पहले हम बहुत कुछ बता चुके हैं। हमने प्रतिरोध-युद्ध के प्रारम्भ से लेकर आज तक के अपने अनुभवों का निचोड़ निकाला है, वर्तमान स्थिति को आंका है, सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए फौरी

* यह रिपोर्ट कामरेड माओ त्सेतुङ ने पार्टी की छठी केन्द्रीय कमेटी के छठे पूर्ण अधिवेशन में पेश की थी। इस अधिवेशन ने कामरेड माओ त्सेतुङ की अगुवाई में राजनीतिक ब्यूरो की कार्यदिशा को मंजूर किया तथा यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण अधिवेशन था। इस रिपोर्ट में राष्ट्रीय युद्ध में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की भूमिका का प्रश्न उन्होंने इसलिए उठाया था कि पार्टी के तमाम साथी जापानी-आक्रमण-

काम निश्चित किए हैं, तथा दीर्घकालीन जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के जरिए लम्बे अरसे तक युद्ध को चलाने के कारणों और ऐसा करने के तरीकों की व्याख्या की है, और अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति का भी विश्लेषण किया है। फिर कौन सी समस्याएं रह जाती हैं? साथियो, एक और समस्या रह जाती है, यानी राष्ट्रीय युद्ध में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की भूमिका क्या होनी चाहिए, यानी कम्युनिस्टों को अपनी भूमिका कैसे समझनी चाहिए, अपने को कैसे मजबूत और एकताबद्ध बनाना चाहिए, जिससे कि वे इस युद्ध को विजय की ओर ले जा सकें, पराजय की ओर नहीं।

देशभक्ति और अन्तरराष्ट्रवाद

क्या कोई कम्युनिस्ट अन्तरराष्ट्रवादी होने के साथ-साथ देशभक्त भी हो सकता है? हमारा विचार है कि वह न सिर्फ ऐसा हो सकता है बल्कि उसे ऐसा होना भी चाहिए। देशभक्ति की ठोस अन्तर्वस्तु

विरोधी युद्ध का नेतृत्व करने की पार्टी की भारी ऐतिहासिक जिम्मेदारी को स्पष्ट रूप में समझ लें और संजीदगी के साथ उसे अपने कंधों पर उठा लें। पूर्ण अधिवेशन ने जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की नीति पर कायम रहने का निर्णय किया और साथ ही यह भी बताया कि संयुक्त मोर्चे के भीतर एकता और संघर्ष दोनों ही का होना जरूरी है और "सब कुछ संयुक्त मोर्चे के ही जरिए" का नारा चीन की स्थितियों के अनुकूल नहीं है। इस प्रकार संयुक्त मोर्चे के बारे में रियायत-वादी गलती का खण्डन किया गया; कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस समस्या का उल्लेख अपनी रचना "संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता और पहलकदमी का सवाल" में किया था जो इसी अधिवेशन में उनके समापन-भाषण का एक अंश है। पूर्ण अधिवेशन ने इस बात की भी पुष्टि की कि समूची पार्टी के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि वह जनता के जापान-विरोधी सशस्त्र संघर्ष को संगठित करने में जुट जाए, और यह फैसला किया कि युद्ध-क्षेत्र और दुश्मन का पृष्ठभाग पार्टी के काम के मुख्य क्षेत्र होंगे, तथा उसने जापानी हमलावरों पर विजय पाने के लिए क्वोमिन्ताङ फौजों पर आशा लगाए रहने और जनता के भाग्य को क्वोमिन्ताङ के प्रतिक्रियावादी शासन में चलने वाले कानूनी संघर्षों के हाथों में सौंप देने जैसे गलत विचारों का खण्डन किया। कामरेड माओ त्सेतुङ ने इसका उल्लेख "युद्ध और रणनीति की समस्याएं" नामक अपनी रचना में किया है; यह रचना भी इसी अधिवेशन में उनके समापन-भाषण का एक अंश है।

को ऐतिहासिक परिस्थितियां निर्धारित करती हैं। एक ओर जापानी हमलावरों और हिटलर की "देशभक्ति" है तथा दूसरी ओर हमारी देशभक्ति। कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे जापानी हमलावरों और हिटलर की "देशभक्ति" का दृढ़ता से विरोध करें। जापान और जर्मनी के कम्युनिस्ट उनके अपने देशों द्वारा छेड़े गए युद्धों में पराजय-वादी साबित हो चुके हैं। जापानी हमलावरों और हिटलर को पराजित करने की हर सम्भव उपाय से कोशिश करना जापानी जनता और जर्मन जनता के हितों के अनुरूप है और यह पराजय जितनी ज्यादा मुकम्मिल होगी उतना ही अच्छा होगा। यही जापान और जर्मनी के कम्युनिस्टों को करना चाहिए और यही वे कर भी रहे हैं। क्योंकि जापानी हमलावरों और हिटलर द्वारा छेड़े गए युद्ध दुनिया की जनता को नुकसान पहुंचाने के अलावा स्वयं अपने देश की जनता को भी नुकसान पहुंचा रहे हैं। चीन का मामला भिन्न है, क्योंकि वह आक्रमण का शिकार है। इसलिए चीनी कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे देशभक्ति को अन्तरराष्ट्रवाद के साथ मिला दें।

हम अन्तरराष्ट्रवादी भी हैं और साथ ही साथ देशभक्त भी, तथा हमारा नारा यह है, "हमलावरों से अपनी मातृभूमि की रक्षा करने के लिए युद्ध करो !" हमारे लिए पराजयवाद एक जुर्म है तथा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में विजय प्राप्त करना एक ऐसा कर्तव्य है जिसे निभाना हमारे लिए अनिवार्य है। कारण, अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए लड़कर ही हम हमलावरों को शिकस्त दे सकते हैं तथा राष्ट्रीय मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। और राष्ट्रीय मुक्ति प्राप्त करने के बाद ही सर्वहारा वर्ग और अन्य मेहनतकश जनता के लिए अपनी मुक्ति हासिल करना सम्भव हो सकेगा। चीन की विजय और चीन पर आक्रमण करने वाले साम्राज्यवादियों की पराजय से दूसरे देशों की जनता को भी मदद मिलेगी। इस प्रकार, राष्ट्रीय मुक्ति युद्धों में देशभक्ति की जो भावना मौजूद रहती है वह अन्तरराष्ट्रवाद का ही एक व्यावहारिक रूप होती है। अतः तमाम कम्युनिस्टों को पूर्ण रूप से अपनी सक्रियता दिखानी चाहिए, उन्हें राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध के मोर्चे की ओर वीरतापूर्वक तथा दृढ़ता के साथ बढ़ना चाहिए और बन्दूक उठाकर जापानी हमलावरों पर निशाना बांधना चाहिए। इसी कारण, १८ सितम्बर १९३१ की घटना के बाद शीघ्र ही हमारी पार्टी ने राष्ट्रीय प्रतिरक्षा युद्ध के जरिए जापानी हमलावरों का प्रतिरोध करने का आवाहन किया, और बाद में जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का प्रस्ताव रखा, लाल सेना को जापान-विरोधी राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना के अंग के रूप में पुनर्गठित हो जाने तथा मोर्चे पर जाने का आदेश दिया, और अपने पार्टी-सदस्यों को युद्ध के अग्रिम मोर्चे में जाने का और रक्त की अन्तिम बूंद तक मातृभूमि की रक्षा करने का निर्देश दिया।

ये सभी उचित देशभक्तिपूर्ण कार्यवाहियां हैं, और चीन में अन्तरराष्ट्रवाद पर अमल करने की ऐसी कार्यवाहियां हैं जो किसी भी तरह उसके विरुद्ध नहीं जातीं। केवल वे ही लोग जिनके दिमाग राजनीतिक तौर पर उलझन में हैं या जिनकी नीयत खराब है, यह ऊलजलूल बात बकते हैं कि हमने गलती की है या अन्तरराष्ट्रवाद को तिलांजलि दे दी है।

राष्ट्रीय युद्ध में कम्युनिस्टों को आदर्श उपस्थित करना चाहिए

ऊपर बताए गए कारणों से राष्ट्रीय युद्ध में कम्युनिस्टों को ऊंचे दर्जे की सक्रियता का प्रदर्शन करना चाहिए, और उसे ठोस रूप में अभिव्यक्त करना चाहिए, यानी उन्हें चाहिए कि वे काम के हर क्षेत्र में आदर्श हिरावल भूमिका अदा करें। हमारा युद्ध प्रतिकूल परिस्थितियों में लड़ा जा रहा है। व्यापक जन-समुदाय में राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रीय आत्म-सम्मान तथा आत्म-विश्वास पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हुए हैं, जन-समुदाय का अधिकांश हिस्सा असंगठित है, चीन की फौजी शक्ति कमजोर है, अर्थव्यवस्था पिछड़ी हुई है, राजनीतिक व्यवस्था गैर-जनवादी है, भ्रष्टाचार और निराशावाद मौजूद हैं, संयुक्त मोर्चे के भीतर एकता और सुदृढ़ता का अभाव है, आदि ; इन सभी बातों से प्रतिकूल परिस्थितियां पैदा हो गई हैं। अतः कम्युनिस्टों को जागरूक होकर समूचे राष्ट्र को एक करने का भारी उत्तरदायित्व अपने कंधों पर लेना चाहिए जिससे कि इन

तमाम अनचाही बातों का अन्त किया जा सके। इस मामले में कम्युनिस्टों की हिरावल भूमिका और आदर्श भूमिका बेहद महत्वपूर्ण है। आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना के कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे वीरतापूर्वक लड़ाई करने, आदेशों का पालन करने, अनुशासन का पालन करने, राजनीतिक कार्य करने तथा अन्दरूनी एकता और एकजुटता को बढ़ाने के लिहाज से आदर्श बन जाएं। मित्र-पार्टियों और मित्र-सेनाओं के साथ अपने सम्बन्धों में कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे जापान के विरुद्ध एकता पर कायम रहें, संयुक्त मोर्चे के कार्यक्रम पर दृढ़ता के साथ अमल करें और प्रतिरोध-युद्ध के कार्यों को पूरा करने में एक मिसाल कायम कर दें ; उन्हें चाहिए कि वे अपने वायदे के पक्के हों और अपनी करनी में दृढ़प्रतिज्ञ हों, अहंकार से मुक्त हों, मित्र-पार्टियों और मित्र-सेनाओं के साथ सच्चे दिल से सलाह-मशविरा व सहयोग करें तथा संयुक्त मोर्चे के भीतर विभिन्न पार्टियों के पारस्परिक सम्बन्धों के क्षेत्र में आदर्श बन जाएं। सरकारी काम में लगे हुए हर कम्युनिस्ट को चाहिए कि वह पूरी तरह ईमानदार होने, नियुक्तियों में पक्षपात न बरतने तथा अधिक काम करके भी कम पारिश्रमिक लेने में आदर्श उपस्थित करे। जन-आन्दोलन में कार्य करने वाले हर कम्युनिस्ट को चाहिए कि वह आम जनता का मित्र बने, उस पर हुक्म चलाने वाला नहीं, कभी न थकने वाला शिक्षक बने, नौकरशाह राजनीतिज्ञ नहीं। एक कम्युनिस्ट को किसी भी समय और किसी भी परिस्थिति में अपने निजी हितों को प्रथम स्थान नहीं देना चाहिए ; उसे इन्हें अपने राष्ट्र और आम जनता के हितों के मातहत रखना चाहिए। इसलिए स्वार्थीपन, काम में ढिलाई, भ्रष्टाचार, मशहूरी की ख्वाहिश इत्यादि प्रवृत्तियां

अत्यन्त घृणास्पद हैं, जबकि निस्वार्थपन, भरपूर शक्ति से काम करना, जनता के कार्य में तन-मन से जुट जाना और चुपचाप कठोर परिश्रम करते रहना ऐसी भावनाएं हैं जो इज्जत पाने लायक हैं। कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे पार्टी के बाहर सभी प्रगतिशील लोगों के साथ मिलजुलकर काम करें और सभी अनचाही बातों को हटाने के लिए सारे देश की जनता को एकजुट करने का प्रयत्न करें। यह समझ लेना चाहिए कि कम्युनिस्ट पूरे राष्ट्र के बहुत ही छोटे अंग हैं, जबकि पार्टी के बाहर प्रगतिशील तथा सक्रिय लोगों की तादाद बड़ी है जिनके साथ हमें मिलजुलकर काम करना चाहिए। यह सोचना बिलकुल गलत है कि केवल हम ही अच्छे हैं और बाकी सब लोग किसी काम के नहीं। जहां तक उन लोगों का ताल्लुक है जो राजनीतिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं, कम्युनिस्टों को चाहिए कि उनकी उपेक्षा न करें अथवा उन्हें तुच्छ न समझें, बल्कि उनसे मित्रता कायम करें, उनके साथ एकता कायम करें, उन्हें समझाएं-बुझाएं और आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन दें। जिन लोगों ने अपने काम में गलतियां की हैं, कम्युनिस्टों को उनके प्रति समझाने-बुझाने का रवैया अपनाना चाहिए, और उन्हें अलग छोड़ देने का रवैया नहीं अपनाना चाहिए, ताकि उन्हें अपने अन्दर परिवर्तन लाने में और नए सिरे से कार्य शुरू करने में मदद दी जा सके, बशर्ते कि वे बिलकुल लाइलाज न हों। कम्युनिस्टों को व्यावहारिकता और दूरदर्शिता के लिहाज से आदर्श बन जाना चाहिए। कारण, केवल व्यावहारिकता के जरिए ही वे अपने निर्धारित कार्य पूरे कर सकते हैं, तथा केवल दूरदर्शिता के जरिए ही वे अपने भावी अभियान में दिशा नहीं खोएंगे। इसलिए, कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे अध्ययन के क्षेत्र

में एक आदर्श बन जाएं ; उन्हें चाहिए कि वे सदैव जन-समुदाय के शिक्षक होने के साथ-साथ उसके शिष्य भी बनें। केवल जन-समुदाय से, वास्तविक परिस्थितियों से और मित्र-पार्टियों तथा मित्र-सेनाओं से सीखकर ही, और उन्हें भली-भांति समझकर ही, हम अपने काम में व्यावहारिकता ला सकते हैं और भविष्य के बारे में दूरदर्शिता दिखा सकते हैं। लम्बे युद्ध तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में जब कम्युनिस्ट मित्र-पार्टियों, मित्र-सेनाओं और जन-समुदाय के बीच के सभी प्रगतिशील लोगों के साथ मिलजुलकर पूर्णतया अपनी आदर्श हिरावल भूमिका अदा करते हुए काम करेंगे, केवल तभी कठिनाइयों पर काबू पाने, दुश्मन को हराने और नए चीन का निर्माण करने के संघर्ष के लिए समूचे राष्ट्र की सभी सक्रिय शक्तियों को गोलबन्द किया जा सकता है।

सारे राष्ट्र को एकताबद्ध करो और उसके भीतर मौजूद दुश्मन के दलालों का विरोध करो

कठिनाइयों पर काबू पाने, दुश्मन को हराने तथा नए चीन का निर्माण करने की एकमात्र नीति है जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को सुदृढ़ बनाना व विस्तारित करना तथा सम्पूर्ण राष्ट्र की सक्रिय शक्तियों को गोलबन्द करना। लेकिन हमारे राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की पंक्तियों में मौजूद दुश्मन के दलाल, जैसे चीनी गद्दार, त्रात्सकीवादी और जापान-परस्त तत्व, फूट डालने वाली भूमिका अदा करते हैं। कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे हर समय इन दलालों

पर निगाह रखें, तथ्यात्मक सबूतों के आधार पर उनके अपराधों का भंडाफोड़ करें और उनके जाल में न फंसने के लिए जनता को आगाह करें। कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे दुश्मन के दलालों के प्रति अपनी राजनीतिक सतर्कता को बढ़ाएं। उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के विस्तार और उसकी सुदृढ़ता के लिए दुश्मन के दलालों का भंडाफोड़ करना और उन्हें निकाल बाहर करना अनिवार्य है। यह एकदम गलत होगा कि एक ही पक्ष पर ध्यान देकर दूसरे पक्ष को भुला दिया जाए।

कम्युनिस्ट पार्टी का विस्तार करो और दुश्मन के दलालों की घुसपैठ रोको

कठिनाइयों पर काबू पाने, दुश्मन को हराने और नए चीन का निर्माण करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी को चाहिए कि वह अपने संगठन का विस्तार करे और अपने को एक जनव्यापी महान पार्टी बनाने के हेतु उन व्यापक मजदूरों, किसानों और सक्रिय नौजवानों के लिए अपने दरवाजे खोल दे जो सचमुच क्रान्तिकारी हैं, जो पार्टी के सिद्धान्तों में विश्वास रखते हैं, उसकी नीतियों का समर्थन करते हैं तथा पार्टी का अनुशासन मानने और कड़ी मेहनत करने के लिए तत्पर हैं। इसलिए, रुद्धद्वारवादी रुझान की इजाजत नहीं दी जा सकती। लेकिन साथ ही दुश्मन के दलालों की घुसपैठ के प्रति सतर्कता में ढील नहीं आने देनी चाहिए। जापानी साम्राज्यवाद के खुफिया विभाग हमारी पार्टी को तोड़ने और छिपे चीनी गद्दारों, त्रात्सकी-

वादियों, जापान-परस्त तत्वों, पतित लोगों और कैरियरवादियों को सक्रिय तत्वों का छद्म वेष धारण कराके हमारी पार्टी के भीतर घुसेड़ने की कोशिश में सदैव लगे रहते हैं। ऐसे लोगों के प्रति क्षणभर के लिए भी अपनी जागरूकता व सतर्कता में ढिलाई नहीं आने देनी चाहिए। दुश्मन के दलालों के डर से हमें अपनी पार्टी के दरवाजे बन्द नहीं कर देने चाहिए। हमारी निश्चित नीति साहस के साथ पार्टी का विस्तार करने की है। लेकिन साहस के साथ अपनी सदस्यता का विस्तार करते हुए हमें दुश्मन के दलालों और कैरियरवादियों के प्रति, जो इस अवसर का फायदा उठाकर पार्टी में घुस आने की कोशिश करेंगे, अपनी सतर्कता में ढिलाई नहीं आने देनी चाहिए। यदि हम केवल एक ही पक्ष पर ध्यान देकर दूसरे पक्ष को भुला देंगे, तो गलती करेंगे। "पार्टी का साहसपूर्वक विस्तार करो, लेकिन एक भी बुरे व्यक्ति को न घुसने दो" – केवल यही एक सही नीति है।

संयुक्त मोर्चे को कायम रखो और पार्टी की स्वतंत्रता को कायम रखो

इस बात में कोई शक नहीं है कि केवल राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को दृढ़तापूर्वक कायम रखकर ही हम कठिनाइयों पर काबू पा सकते हैं, दुश्मन को हरा सकते हैं और नए चीन का निर्माण कर सकते हैं। लेकिन साथ ही संयुक्त मोर्चे में शामिल होने वाली हर पार्टी या ग्रुप को चाहिए कि वह अपनी विचारधारात्मक, राजनीतिक

तथा संगठनात्मक स्वतंत्रता को बनाए रखे ; यह बात क्वोमिन्ताङ, कम्युनिस्ट पार्टी अथवा दूसरी पार्टियों या ग्रुपों, सभी पर समान रूप से लागू होती है। विभिन्न पार्टियों के बीच के सम्बन्धों में, तीन जन-सिद्धान्तों में से जनवाद का सिद्धान्त सभी पार्टियों और ग्रुपों को संयुक्त होने के साथ-साथ अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखने की भी इजाजत देता है। केवल एकता की बातें करना और स्वतंत्रता से इनकार कर देना जनवाद के सिद्धान्त को त्यागना है, जिससे न तो कम्युनिस्ट पार्टी और न कोई अन्य पार्टी ही सहमत हो सकती है। इसमें शक नहीं कि संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता सापेक्ष होती है, निरपेक्ष नहीं। इसे निरपेक्ष मानने का मतलब दुश्मन के खिलाफ एकता की आम नीति को नष्ट करना होगा। लेकिन इस सापेक्ष स्वतंत्रता से इनकार नहीं करना चाहिए ; विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक दृष्टि से हर पार्टी को सापेक्ष स्वतंत्रता यानी सापेक्ष आजादी होनी चाहिए। यदि ऐसी सापेक्ष आजादी को मानने से इनकार किया गया या इसका स्वेच्छापूर्वक परित्याग किया गया, तो इससे भी दुश्मन के विरुद्ध एकता की आम नीति तहस-नहस हो जाएगी। कम्युनिस्ट पार्टी और सभी मित्र-पार्टियों के हर सदस्य को यह स्पष्ट रूप में समझ लेना चाहिए।

वर्ग-संघर्ष और राष्ट्रीय संघर्ष के पारस्परिक सम्बन्ध के बारे में भी यही बात सही है। यह एक सुनिश्चित उसूल है कि प्रतिरोध-युद्ध में हर चीज को प्रतिरोध के हितों के अधीन होना चाहिए। इसलिए, वर्ग-संघर्ष के हितों को प्रतिरोध-युद्ध के हितों के अधीन होना चाहिए और उन्हें प्रतिरोध-युद्ध के विरुद्ध नहीं जाना चाहिए। लेकिन वर्गों और वर्ग-संघर्ष का होना एक तथ्य है, और कुछ लोग

वर्ग-संघर्ष के तथ्य से इनकार करते हैं, यह गलत है। जो सिद्धान्त वर्ग-संघर्ष के तथ्य से इनकार करने की कोशिश करता है, वह बिलकुल गलत है। हम वर्ग-संघर्ष से इनकार नहीं करते, बल्कि वर्ग-संघर्ष को केवल समायोजित करते हैं। परस्पर सहायता और परस्पर रियायतों की जिस नीति का हम प्रतिपादन करते हैं, वह न केवल पार्टी-सम्बन्धों पर, बल्कि वर्ग-सम्बन्धों पर भी लागू होती है। जापान के खिलाफ एकता के लिए वर्ग-सम्बन्धों को समायोजित करने की उचित नीति की आवश्यकता है, एक ऐसी नीति, जो मेहनतकश जनता को राजनीतिक व भौतिक गारन्टी के अभाव की स्थिति में नहीं छोड़ती और साथ ही धनिकों के हितों का भी खयाल रखती है, ताकि दुश्मन के विरुद्ध एकता की आवश्यकता की पूर्ति की जा सके। केवल एक ही पक्ष पर ध्यान देकर दूसरे पक्ष की उपेक्षा करना प्रतिरोध-युद्ध के लिए हानिकर होगा।

सम्पूर्ण परिस्थिति को ध्यान में रखो, बहुसंख्यक लोगों को ध्यान में रखो, और अपने संश्रयकारियों के साथ मिलकर काम करो

दुश्मन के विरुद्ध संघर्ष में जन-समुदाय का नेतृत्व करते हुए कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे सम्पूर्ण परिस्थिति को ध्यान में रखें, बहुसंख्यक लोगों को ध्यान में रखें और अपने संश्रयकारियों के साथ मिलकर काम करें। कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे अंश की आवश्यकताओं को सम्पूर्ण की आवश्यकताओं के अधीन रखने के सिद्धान्त

को आत्मसात कर लें। यदि कोई विचार परिस्थिति के एक अंश की दृष्टि से व्यावहारिक लगता हो और सम्पूर्ण परिस्थिति की दृष्टि से अव्यावहारिक लगता हो, तो हमें अंश को सम्पूर्ण के अधीन रखना चाहिए। इसके विपरीत, यदि कोई विचार परिस्थिति के एक अंश की दृष्टि से अव्यावहारिक लगता हो और सम्पूर्ण परिस्थिति की दृष्टि से व्यावहारिक लगता हो, तो भी हमें अंश को सम्पूर्ण के अधीन रखना चाहिए। इसी को कहते हैं सम्पूर्ण परिस्थिति को ध्यान में रखना। कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे केवल चन्द प्रगतिशील दस्तों का नेतृत्व करके अकेले-दुकेले और अन्धाधुन्ध अभियान करते हुए अपने आपको बहुसंख्यक जन-समुदाय से अलग न कर लें अथवा उसकी उपेक्षा न करें, बल्कि प्रगतिशील तत्वों और व्यापक जन-समुदाय के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध कायम करने पर ध्यान दें। बहुसंख्यक लोगों को ध्यान में रखना इसी को कहते हैं। जहां कहीं भी जनवादी पार्टियां और जनवादी व्यक्ति हमसे सहयोग करने को प्रस्तुत हों, कम्युनिस्टों को यह रवैया अपनाना चाहिए कि वे उनके साथ विचार-विनिमय करें और उनके साथ मिलकर काम करें। मनमाने ढंग से निर्णय करना और मनमानी कार्यवाहियां करना तथा अपने संश्रयकारियों की उपेक्षा करना गलत है। एक अच्छे कम्युनिस्ट को सम्पूर्ण परिस्थिति को ध्यान में रखने, बहुसंख्यक लोगों को ध्यान में रखने और अपने संश्रयकारियों के साथ मिलकर काम करने में माहिर होना चाहिए। इस मामले में हमारे अन्दर गम्भीर कमजोरियां रही हैं, और हमें उन्हें दूर करने की ओर ध्यान देना चाहिए।

कार्यकर्ता सम्बन्धी नीति

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दसियों करोड़ लोगों वाले एक महान राष्ट्र में महान क्रान्तिकारी संघर्ष का नेतृत्व करने वाली पार्टी है। योग्यता और नैतिकता से लैस नेतृत्वकारी कार्यकर्ताओं की एक बड़ी संख्या के बिना वह अपने ऐतिहासिक कार्य को पूरा नहीं कर सकती। पिछले सत्रह वर्षों में हमारी पार्टी ने अनेक सुयोग्य नेताओं को प्रशिक्षित किया है, जो फौजी, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में तथा पार्टी-कार्य और जन-आन्दोलनों में हमारा मेरुदण्ड हैं; इस सफलता का समस्त गौरव पार्टी और पूरे राष्ट्र को है। लेकिन हमारा मौजूदा मेरुदण्ड इतना मजबूत नहीं है जो संघर्ष के विशाल भवन को सहारा दे सके, और अब भी बड़े पैमाने पर सुयोग्य व्यक्तियों को प्रशिक्षित करना जरूरी है। चीनी जनता के महान संघर्ष में अनेक सक्रिय व्यक्ति सामने आए हैं और लगातार आते जा रहे हैं। उन्हें संगठित करने, उनको प्रशिक्षित करने, उनकी अच्छी तरह देखभाल करने तथा उनका उचित उपयोग करने का उत्तरदायित्व हम पर ही है। जहां एक बार राजनीतिक कार्यदिशा निर्धारित कर दी गई, तो कार्यकर्ता एक निर्णयात्मक तत्व बन जाते हैं।[१] इसलिए योजनाबद्ध तरीके से नए कार्यकर्ताओं की विशाल संख्या को प्रशिक्षित करना हमारा जुझारू कार्य है।

हमें केवल पार्टी-कार्यकर्ताओं का ही नहीं बल्कि गैरपार्टी कार्यकर्ताओं का भी ध्यान रखना चाहिए। पार्टी के बाहर अनेक सुयोग्य व्यक्ति हैं, कम्युनिस्ट पार्टी को उन्हें नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए। हर कम्युनिस्ट का यह कर्तव्य है कि वह अलगाव और हेकड़ी से

दूर रहे तथा गैरपार्टी कार्यकर्ताओं के साथ अच्छी तरह मिलजुलकर काम करे, उनकी सच्चे दिल से सहायता करे, उनके प्रति स्नेहपूर्ण साथियों जैसा बरताव करे तथा जापान का प्रतिरोध करने और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण करने के महान कार्य में उनकी पहलकदमी का उपयोग करे।

हमें मालूम होना चाहिए कि कार्यकर्ताओं को कैसे पहचाना जाए। हमें किसी कार्यकर्ता की जिन्दगी के थोड़े से अरसे अथवा उसकी जिन्दगी की किसी एक घटना के आधार पर ही उसके बारे में अपनी राय कायम नहीं कर लेनी चाहिए, बल्कि उसकी जिन्दगी और उसके काम को समूचे रूप में आंकना चाहिए। यह कार्यकर्ताओं को पहचानने का मुख्य तरीका है।

हमें यह मालूम होना चाहिए कि कार्यकर्ताओं का अच्छी तरह कैसे उपयोग किया जाए। अन्ततोगत्वा नेतृत्व पर ये दो मुख्य जिम्मेदारियां होती हैं: उपायों को खोज निकालना और कार्यकर्ताओं का अच्छी तरह उपयोग करना। योजना बनाना, निर्णय करना तथा आदेश और हिदायतें देना, आदि सभी बातें "उपायों को खोज निकालने" की श्रेणी में आती हैं। इन उपायों को अमल में लाने के लिए हमें कार्यकर्ताओं को एकताबद्ध करना चाहिए और उन्हें अमल के मैदान में उतरने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए; यह "कार्यकर्ताओं का अच्छी तरह उपयोग करने" की श्रेणी में आता है। कार्यकर्ताओं के उपयोग के सम्बन्ध में हमारे राष्ट्रीय इतिहास में दो विरोधी कार्यदिशाएं रही हैं, पहली है "नैतिकता और योग्यता के आधार पर नियुक्ति करना" और दूसरी है "पक्षपात द्वारा नियुक्ति करना"। पहली कार्यदिशा ईमानदारी की है और दूसरी

बेईमानी की। कम्युनिस्ट पार्टी की कार्यकर्ता सम्बन्धी नीति में कार्यकर्ताओं को परखने की कसौटी यह होनी चाहिए कि क्या कार्यकर्ता पार्टी की कार्यदिशा को दृढ़तापूर्वक कार्यान्वित करते हैं अथवा नहीं, पार्टी-अनुशासन का पालन करते हैं अथवा नहीं, जन-समुदाय से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं अथवा नहीं, स्वतंत्र रूप से काम करने की क्षमता रखते हैं अथवा नहीं, तथा सक्रिय, परिश्रमी और निस्वार्थ व्यक्ति हैं अथवा नहीं। इसी का मतलब है "नैतिकता और योग्यता के आधार पर नियुक्ति करना"। चाङ क्वो-थाओ की कार्यकर्ता सम्बन्धी नीति इससे ठीक उल्टी थी। "पक्षपात द्वारा नियुक्ति करने" की नीति पर चलकर उसने अपने आसपास अपने निजी कृपापात्रों को जमा करके एक छोटा-सा गुट बना लिया, और अन्त में उसने पार्टी के साथ गद्दारी कर दी और भाग खड़ा हुआ। यह हमारे लिए एक महत्वपूर्ण सबक है। इससे और इसी तरह के ऐतिहासिक सबकों से चेतावनी लेकर कार्यकर्ता सम्बन्धी नीति में केन्द्रीय कमेटी को और हर स्तर के नेताओं को ईमानदारी और न्यायोचित व्यवहार पर दृढ़ता के साथ चलने तथा बेईमानी और अन्यायपूर्ण व्यवहार का विरोध करने को अपनी प्रमुख जिम्मेदारी बना लेना चाहिए, ताकि पार्टी का एकीकरण व उसकी एकता मजबूत हो सकें।

हमें यह मालूम होना चाहिए कि कार्यकर्ताओं की अच्छी तरह देखभाल कैसे की जाए। इसके कई तरीके हैं।

पहले, उनका मार्गदर्शन करना चाहिए। इसका मतलब यह है कि उन्हें अपना काम स्वतंत्र रूप से करने देना चाहिए ताकि

उनमें जिम्मेदारी उठाने का साहस पैदा हो जाए, तथा साथ ही उन्हें उचित समय पर हिदायतें भी देनी चाहिए ताकि पार्टी की राजनीतिक कार्यदिशा के मार्गदर्शन में वे अपनी पहलकदमी का पूरा-पूरा इस्तेमाल कर सकें।

दूसरे, उनका स्तर उन्नत करना चाहिए। इसका मतलब यह है कि उन्हें अध्ययन करने का मौका देकर शिक्षित करना चाहिए, ताकि वे अपनी सैद्धान्तिक जानकारी और कार्य-क्षमता को बढ़ा सकें।

तीसरे, उनके काम की जांच-पड़ताल करनी चाहिए, तथा अपने अनुभवों का निचोड़ निकालने, अपनी उपलब्धियों का विकास करने और गलतियों को सुधारने में उनकी सहायता करनी चाहिए। केवल काम सौंपते जाना और उसकी जांच-पड़ताल न करना, तथा जब गम्भीर गलतियां की जाएं सिर्फ तभी उनकी ओर ध्यान देना – यह कार्यकर्ताओं की देखभाल करने का तरीका नहीं है।

चौथे, जिन कार्यकर्ताओं ने गलतियां की हैं उनके प्रति सामान्यतया समझाने-बुझाने का तरीका अपनाना चाहिए, तथा उन्हें अपनी गलतियां सुधारने में मदद देनी चाहिए। संघर्ष का तरीका केवल उन्हीं के प्रति अपनाया जाना चाहिए जो गम्भीर गलतियां करने के बाद भी निर्देशन का पालन करने से इनकार करते हैं। इस सम्बन्ध में धीरज से काम लेना निहायत जरूरी है। लोगों पर बिना सोचे-समझे "अवसरवादी" का बिल्ला लगा देना तथा उनके खिलाफ बिना सोचे-समझे "संघर्ष चलाना" गलत है।

पांचवें, उनकी कठिनाइयों को दूर करने में मदद करनी चाहिए। जब कभी कार्यकर्ता लोग बीमारी, तंगी अथवा घरेलू या अन्य मुश्किलों की वजह से परेशान हों, तो हमें उनकी यथा-सम्भव अधिक देखभाल करनी चाहिए।

कार्यकर्ताओं की अच्छी तरह देखभाल करने का यही तरीका है।

पार्टी-अनुशासन

चाङ क्वो-थाओ द्वारा अनुशासन के गम्भीर उल्लंघन के कारण हमें फिर एक बार पार्टी-अनुशासन का ऐलान कर देना चाहिए, यानी :

(१) व्यक्ति संगठन के मातहत होता है ;
(२) अल्पमत बहुमत के मातहत होता है ;
(३) नीचे का पार्टी-संगठन अपने ऊपर के पार्टी-संगठन के मातहत होता है ;
(४) सभी पार्टी-सदस्य पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के मातहत होते हैं।

यदि कोई सदस्य पार्टी-अनुशासन के इन नियमों का उल्लंघन करता है, तो वह पार्टी की एकता को तोड़ता है। अनुभव से साबित हो गया है कि कुछ लोग पार्टी-अनुशासन का उल्लंघन इसलिए करते हैं क्योंकि वे यह नहीं जानते कि पार्टी-अनुशासन क्या है ; जबकि चाङ क्वो-थाओ जैसे कुछ दूसरे लोग भी हैं जो जानबूझकर इसका उल्लंघन

करते हैं और अपने घृणित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए बहुत से पार्टी-सदस्यों की अज्ञानता का फायदा उठाते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि पार्टी-सदस्यों को पार्टी-अनुशासन के विषय में शिक्षित किया जाए ताकि वे न केवल स्वयं पार्टी-अनुशासन का पालन करें बल्कि अपने नेताओं पर भी निगरानी रखें जिससे वे भी इसका पालन करें, और इस प्रकार चाङ क्वो-थाओ जैसी घटनाओं की पुनरावृत्ति को रोका जा सके। पार्टी के भीतरी सम्बन्धों को सही दिशा में विकसित होने देने के लिए, ऊपर बताए गए चार अत्यन्त महत्वपूर्ण नियमों के अलावा हमें विस्तृत पार्टी-उपनियम भी बनाने चाहिए जो पार्टी के सभी स्तरों पर नेतृत्वकारी संस्थाओं की कार्यवाहियों में संगति कायम करें।

पार्टी में जनवाद

वर्तमान महान संघर्ष के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की यह मांग है कि इसके तमाम नेतृत्वकारी संगठन और तमाम सदस्य व कार्यकर्ता अपनी पहलकदमी को पूर्ण रूप से प्रकट करें, क्योंकि सिर्फ ऐसा करके ही विजय की गारन्टी की जा सकती है। यह पहलकदमी ठोस रूप से नेतृत्वकारी संगठनों, कार्यकर्ताओं और आम पार्टी-सदस्यों की सृजनात्मक कार्य-क्षमता के रूप में, जिम्मेदारी उठाने की तत्परता के रूप में, अपने काम में भारी उत्साह दिखाने के रूप में, सवाल उठाने, राय देने और कमियों की आलोचना करने के साहस और निपुणता के रूप में, तथा नेतृत्वकारी संगठनों और नेतृत्वकारी कार्यकर्ताओं का प्रेम भाव से निरीक्षण करने के रूप में

प्रकट होनी चाहिए। वरना यह "पहलकदमी" महज एक थोथी चीज बनकर रह जाएगी। लेकिन इस प्रकार की पहलकदमी का आना इस बात पर निर्भर है कि पार्टी-जीवन में जनवाद का प्रसार किया जाए। अगर पार्टी-जीवन में जनवाद का अभाव हो, तो इस पहलकदमी का विकास करने का उद्देश्य पूरा नहीं किया जा सकता। केवल जनवादी वातावरण में ही सुयोग्य व्यक्तियों को भारी तादाद में आगे लाया जा सकता है। हमारा देश एक ऐसा देश है, जिसमें छोटे उत्पादन वाली पितृसत्ताप्रधान व्यवस्था का बोलबाला है, तथा कुल मिलाकर देश में अभी भी जनवादी जीवन का अभाव है ; अतएव ऐसी हालत हमारी पार्टी के पार्टी-जीवन में जनवाद के नाकाफी होने के रूप में प्रतिबिम्बित होती है। यह लक्षण पूरी पार्टी द्वारा अपनी पहलकदमी पर पूर्ण रूप से अमल करने में बाधा डालता है। साथ ही इससे संयुक्त मोर्चे तथा जन-आन्दोलन में भी जनवाद नाकाफी रह जाता है। यही कारण है कि पार्टी के भीतर जनवाद की शिक्षा दी जानी चाहिए, ताकि पार्टी-सदस्य यह समझ सकें कि जनवादी जीवन का मतलब क्या है, जनवाद और केन्द्रीयता के आपसी सम्बन्धों का मतलब क्या है तथा जनवादी केन्द्रीयता पर अमल करने का तरीका क्या है। सिर्फ इसी तरह हम सचमुच पार्टी के भीतर जनवादी जीवन का विस्तार कर सकते हैं तथा साथ ही अतिजनवादीकरण से और स्वेच्छाचारिता से, जो अनुशासन को नष्ट कर देती है, अपना पिण्ड छुड़ा सकते हैं।

यह भी आवश्यक है कि हमारी सेना के पार्टी-संगठनों में जनवाद को आवश्यक हद तक बढ़ाया जाए, जिससे कि पार्टी-सदस्यों की सक्रियता को बढ़ाया जा सके और सेना की जुझारू क्षमता को बढ़ाया

जा सके। लेकिन सेना के पार्टी-संगठनों में जनवाद उतना ज्यादा नहीं हो सकता जितना स्थानीय पार्टी-संगठनों में होता है। चाहे सेना हो या स्थानीय संगठन हों, पार्टी के भीतर जनवाद के सिद्धान्त पर अमल करने का उद्देश्य है अनुशासन को मजबूत बनाना और जुझारू क्षमता में बढ़ोतरी करना, न कि उन्हें कमजोर बनाना।

पार्टी को सुदृढ़ बनाने तथा उसके विकास के लिए पार्टी के भीतर जनवाद की बढ़ोतरी को एक आवश्यक कदम समझना चाहिए। यह एक ऐसा महत्वपूर्ण हथियार है जिससे महान संघर्ष में पार्टी अत्यन्त सक्रिय बन सकती है, अपने कर्तव्यों को निभाने योग्य बन सकती है, नई शक्तियों का प्रादुर्भाव कर सकती है और युद्ध की कठिनाइयों को पार कर सकती है।

दो मोर्चों पर संघर्ष के द्वारा हमारी पार्टी ने अपने को सुदृढ़ तथा शक्तिशाली बनाया है

हमारी पार्टी ने पिछले सत्रह वर्षों में पार्टी के भीतर गलत विचारों के खिलाफ – दक्षिणपंथी अवसरवाद और "वामपंथी" अवसरवाद के खिलाफ – दो मोर्चों पर विचारधारात्मक संघर्ष चलाने में मार्क्सवाद-लेनिनवाद के हथियार का उपयोग करना आम तौर पर सीख लिया है।

छठी केन्द्रीय कमेटी के पांचवें पूर्ण अधिवेशन से पहले[२] हमारी पार्टी ने छन तू-श्यू के दक्षिणपंथी अवसरवाद और कामरेड ली ली-सान के "वामपंथी" अवसरवाद के खिलाफ संघर्ष किया था। इन

दो अन्त:पार्टी संघर्षों में प्राप्त विजय के कारण हमारी पार्टी ने महान प्रगति की। पांचवें पूर्ण अधिवेशन के बाद ऐतिहासिक महत्व के दो और अन्त:पार्टी संघर्ष हुए, यानी चुनई मीटिंग का संघर्ष और चाङ क्वो-थाओ को पार्टी से निकालने से सम्बन्धित संघर्ष।

चुनई मीटिंग ने "वामपंथी" अवसरवादी स्वरूप वाली उन गम्भीर उसूली गलतियों को दुरुस्त किया जो दुश्मन की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम के विरुद्ध संघर्ष के दौरान की गई थीं। इस मीटिंग ने पार्टी को एकताबद्ध किया और लाल सेना को भी, जिससे पार्टी की केन्द्रीय कमेटी व लाल सेना की मुख्य सैन्य-शक्तियों ने लम्बा अभियान सफलतापूर्वक पूरा कर लिया तथा वे जापान के विरुद्ध कूच शुरू करने के स्थान तक पहुंच गईं और जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नई नीति को लागू कर सकीं। पाशी मीटिंग[३] और येनान मीटिंग[४] (चाङ क्वो-थाओ कार्यदिशा के विरुद्ध संघर्ष पाशी मीटिंग में शुरू होकर येनान मीटिंग में खत्म हुआ) में चाङ क्वो-थाओ के दक्षिणपंथी अवसरवाद के विरुद्ध संघर्ष चलाए जाने से पूरी लाल सेना एक साथ मिल गई तथा पूरी पार्टी और अधिक एकताबद्ध हो गई, जिससे कि जापान के विरुद्ध वीरतापूर्ण संघर्ष चलाया जा सका। दोनों ही प्रकार की ये अवसरवादी गलतियां क्रान्तिकारी गृहयुद्ध में हुई थीं और उनकी विशेषता यह थी कि दोनों ही युद्ध के सम्बन्ध में हुई थीं।

इन दो अन्त:पार्टी संघर्षों से क्या सबक मिलते हैं? वे इस प्रकार हैं :

(१) यह गम्भीर उसूली गलती, जो चीन के क्रान्तिकारी

युद्ध की विशिष्टताओं की गैरजानकारी के कारण हुई और "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम के खिलाफ संघर्ष में व्यक्त हुई, मनोगत तथा वस्तुगत स्थितियों की उपेक्षा करने वाले "वामपंथी" उतावलेपन के रुझान की गलती थी। यह रुझान क्रान्तिकारी युद्ध को हद दरजे का नुकसान पहुंचाता है तथा हर किसी क्रान्तिकारी आन्दोलन को भी नुकसान पहुंचाता है।

(२) चाङ क्वो-थाओ का अवसरवाद क्रान्तिकारी युद्ध में दक्षिणपंथी अवसरवाद था, जिसकी अन्तर्वस्तु उसकी पीछे हटने की कार्यदिशा, युद्धपतिवाद और पार्टी-विरोधी कार्यवाहियों का योग है। इस प्रकार के अवसरवाद पर काबू पाने के बाद ही लाल सेना की चौथी मोर्चा-सेना के व्यापक कार्यकर्ताओं और पार्टी-सदस्यों को, जो अत्यन्त गुणवान थे तथा लम्बे अरसे से वीरतापूर्ण संघर्ष में लगे हुए थे, चाङ क्वो-थाओ के अवसरवादी फन्दे से मुक्त कराया जा सका और उन्हें केन्द्रीय कमेटी की सही कार्यदिशा पर लाया जा सका।

(३) भूमि-क्रान्ति युद्ध के दस वर्षों में किए गए महान संगठनात्मक कार्यों की उल्लेखनीय सफलता फौजी निर्माण, सरकारी कामकाज, जन-कार्य तथा पार्टी-निर्माण के क्षेत्रों में मिली थी। यदि इस प्रकार का संगठनात्मक काम मोर्चे पर वीरतापूर्ण संघर्ष के साथ तालमेल बैठाकर न किया गया होता, तो उस समय च्याङ काई-शेक के विरुद्ध कठोर संघर्ष को जारी नहीं रखा जा सकता था। लेकिन इस काल के अन्तिम चरण में पार्टी की कार्यकर्ता सम्बन्धी और संगठन सम्बन्धी नीति में गम्भीर

उसूली गलतियां की गईं। ये गलतियां संकीर्णतावादी रुझान अपनाने, सजा देने और विचारधारात्मक संघर्ष में जरूरत से ज्यादा कटुता दिखाने की नीति के रूप में अभिव्यक्त हुईं। ये गलतियां ली ली-सान की पिछली कार्यदिशा के अवशेषों को न मिटा सकने का परिणाम थीं और उस समय की उसूली राजनीतिक गलतियों का भी परिणाम थीं। ये गलतियां भी चुनई मीटिंग में दुरुस्त कर ली गईं, तभी हमारी पार्टी कार्यकर्ता सम्बन्धी सही नीति और सही संगठनात्मक उसूलों की ओर मुड़ सकी। जहां तक चाङ क्वो-थाओ की संगठनात्मक कार्यदिशा का सम्बन्ध है, वह पार्टी के सभी उसूलों से दूर हट गई, उसने पार्टी-अनुशासन को तोड़ा और गुटबाजी की कार्यवाहियों को बढ़ाकर पार्टी, केन्द्रीय कमेटी और कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल के खिलाफ कार्यवाहियां कीं। केन्द्रीय कमेटी ने चाङ क्वो-थाओ की अपराधपूर्ण गलत कार्यदिशा पर काबू पाने और उसकी पार्टी-विरोधी कार्यवाहियों को निष्फल बनाने की हर सम्भव कोशिश की और स्वयं चाङ क्वो-थाओ को भी बचाने की कोशिश की। लेकिन चाङ क्वो-थाओ ने अपनी गलतियां दुरुस्त करने से लगातार इनकार किया और दुरंगी चाल का सहारा लिया, और बाद में तो वह यहां तक आगे बढ़ गया कि उसने पार्टी से गद्दारी करके अपने को क्वोमिन्ताङ के हाथों में सौंप दिया। तब पार्टी को उसे दृढ़ता से बाहर निकालना पड़ा। उसे दी गई सजा का समर्थन न केवल तमाम पार्टी-सदस्यों ने किया, बल्कि राष्ट्रीय मुक्ति के कार्य के प्रति वफादार सभी लोगों ने भी किया। कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल ने भी इस फैसले का अनुमोदन किया

और यह बताया कि वह एक भगोड़ा तथा गद्दार था।

उपरोक्त सबक और उपलब्धियां हमारे सामने पूरी पार्टी को एकताबद्ध करने, उसकी विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक एकरूपता को सुदृढ़ बनाने और प्रतिरोध-युद्ध को विजयपूर्वक चलाते रहने की पूर्व-आवश्यकताएं उपस्थित करती हैं। दो मोर्चों पर संघर्ष के द्वारा हमारी पार्टी ने अपने को सुदृढ़ तथा शक्तिशाली बनाया है।

दो मोर्चों पर वर्तमान संघर्ष

प्रतिरोध-युद्ध में अब से राजनीतिक क्षेत्र में दक्षिणपंथी निराशावाद का विरोध करना अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया है, गोकि "वामपंथी" उतावलेपन की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है। संयुक्त मोर्चे, पार्टी-संगठन तथा जन-संगठन के बारे में यह जरूरी है कि "वामपंथी" रुद्धद्वारवादी रुझान का विरोध करना जारी रखा जाए, ताकि हम विभिन्न अन्य जापान-विरोधी पार्टियों और ग्रुपों के साथ सहयोग स्थापित कर सकें, कम्युनिस्ट पार्टी तथा जन-आन्दोलनों का विस्तार कर सकें। लेकिन साथ ही हमें बिना शर्त सहयोग और बिना शर्त विस्तार करने के सम्बन्ध में दक्षिणपंथी अवसरवादी रुझान का विरोध करने की ओर भी ध्यान देना चाहिए, नहीं तो सहयोग और विस्तार में अड़चनें पैदा होंगी और वह घुटना-टेकू सहयोग तथा सिद्धान्तहीन विस्तार हो जाएगा।

दोनों मोर्चों पर विचारधारात्मक संघर्ष प्रत्येक मामले में ठोस

स्थिति के अनुरूप होना चाहिए तथा किसी भी समस्या के प्रति मनोगत रवैया कतई नहीं अपनाना चाहिए और लोगों पर "लेबिल लगाने" की पुरानी बुरी आदत को दोहराने नहीं देना चाहिए।

भटकावों के खिलाफ संघर्ष करते समय हमें दुरंगी चालों पर गम्भीरता से ध्यान देना चाहिए। दुरंगी चालों का सबसे बड़ा खतरा यह है कि उनके गुटबाजी की कार्यवाहियों के रूप में विकसित हो जाने की सम्भावना है, और चाङ क्वो-थाओ का आचरण इसका सबूत है। सार्वजनिक रूप से आदेश का पालन करना और छिपकर उसकी अवज्ञा करना, शब्दों में सहमति प्रकट करना और दिल में असहमत रहना, मुंह पर चिकनी-चुपड़ी बातें करना और पीठ पीछे तिकड़में करना – ये दुरंगी चालों के विभिन्न रूप हैं। दुरंगी चालों के खिलाफ अपने कार्यकर्ताओं और पार्टी-सदस्यों की सतर्कता को बढ़ा देने पर ही हम पार्टी-अनुशासन को मजबूत बना सकते हैं।

अध्ययन

आम तौर पर कम्युनिस्ट पार्टी के उन सभी सदस्यों को जिनमें अध्ययन की उचित योग्यता है, मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के सिद्धान्तों का, अपने राष्ट्रीय इतिहास का और वर्तमान आन्दोलन की परिस्थितियों और रुझानों का अध्ययन करना चाहिए ; इसके अलावा, उन्हें चाहिए कि वे कम पढ़े-लिखे सदस्यों को शिक्षित करने में सहायक हों। कार्यकर्ताओं को ऊपर बताए गए विषयों का खास तौर से ध्यानपूर्वक अध्ययन करना चाहिए, केन्द्रीय कमेटी के सदस्यों और उच्च स्तर के कार्यकर्ताओं को इस पर और भी अधिक ध्यान

देना चाहिए। क्रान्तिकारी सिद्धान्त को आत्मसात किए बिना, इतिहास का ज्ञान प्राप्त किए बिना और वास्तविक आन्दोलन की गहरी समझ हासिल किए बिना किसी भी राजनीतिक पार्टी के लिए एक महान क्रान्तिकारी आन्दोलन को विजय तक ले जाना असम्भव है।

मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के सिद्धान्त सभी जगह लागू होते हैं। हमें इन सिद्धान्तों को जड़सूत्र नहीं समझना चाहिए बल्कि अपने समस्त कार्यों का पथ-प्रदर्शक मानना चाहिए। इनका अध्ययन करने का मतलब सिर्फ यह नहीं कि चन्द शब्दों और वाक्यांशों को रट लिया जाए, बल्कि यह है कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद का अध्ययन क्रान्ति के विज्ञान के रूप में किया जाए। इसका मतलब सिर्फ यह नहीं कि मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन द्वारा व्यापक वास्तविक जीवन और क्रान्तिकारी अनुभव के अध्ययन के आधार पर प्रस्तुत किए गए आम नियमों को समझ लिया जाए, बल्कि यह है कि समस्याओं को जांचने-परखने व हल करने के उनके दृष्टिबिन्दु और तरीकों का भी अध्ययन किया जाए। पिछले काल की तुलना में आज हमारी पार्टी को मार्क्सवाद-लेनिनवाद की और अधिक महारत हासिल हो चुकी है, लेकिन यह अब भी व्यापकता और गहनता से काफी दूर है। हमारा कार्य है दसियों करोड़ लोगों वाले एक महान राष्ट्र के महान और अभूतपूर्व संघर्ष का नेतृत्व करना। इसलिए मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों का व्यापक और गहन अध्ययन करना हमारे लिए एक भारी समस्या है, जिसे शीघ्र ही हल किया जाना चाहिए और जिसे केवल भरसक प्रयत्न करके ही हल किया जा सकता है। मुझे आशा है कि केन्द्रीय कमेटी के इस

पूर्ण अधिवेशन के बाद पूरी पार्टी में अध्ययन की एक होड़ लग जाएगी और हम देखेंगे कि किसने सचमुच कुछ सीख लिया है और किसने अधिक और बेहतर सीखा है। जहां तक अपने कन्धों पर नेतृत्व की मुख्य जिम्मेदारी उठाने का ताल्लुक है, यदि हमारी पार्टी में मार्क्सवाद-लेनिनवाद के ज्ञान से लैस सौ या दो सौ कामरेड हों, जिनका यह ज्ञान व्यवस्थित हो न कि उखड़ा-पुखड़ा, वास्तविक हो न कि खोखला, तो हमारी पार्टी की जुझारू क्षमता बहुत बढ़ जाएगी और जापानी साम्राज्यवाद को हराने का हमारा काम और भी तेजी से पूरा हो जाएगा।

हमारे अध्ययन का दूसरा काम है अपनी ऐतिहासिक विरासत का अध्ययन करना और मार्क्सवादी तरीके से आलोचनात्मक निष्कर्ष निकालना। हमारे राष्ट्र का हजारों वर्ष पुराना इतिहास है, जिसकी अपनी विशेषताएं हैं और अपनी बेशुमार बहुमूल्य सामग्री है। लेकिन इन मामलों में हमारा ज्ञान केवल स्कूली लड़कों जैसा है। आज का चीन पुराने चीन से ही विकसित हुआ है ; हम लोग इतिहास के प्रति मार्क्सवादी दृष्टिकोण रखते हैं, अतः हमें अपने इतिहास के अंशों को जहां-तहां से काटकर अलग नहीं कर देना चाहिए। हमें कनफ्यूशियस से लेकर सुन यात-सेन तक के अपने इतिहास से निष्कर्ष निकालने चाहिए और इसे एक अमूल्य विरासत के रूप में प्राप्त करना चाहिए। आज के महान आन्दोलन के निर्देशन में यह महत्वपूर्ण है। मार्क्सवादी होने के नाते कम्युनिस्ट अन्तरराष्ट्रवादी होते हैं, लेकिन हम मार्क्सवाद को व्यवहार में सिर्फ तभी ला सकते हैं जब उसे अपने देश की ठोस विशिष्टताओं से जोड़ दें और निश्चित राष्ट्रीय रूप प्रदान कर दें। मार्क्सवाद-लेनिनवाद की महान शक्ति

उसे भिन्न-भिन्न देशों के ठोस क्रान्तिकारी व्यवहार के साथ जोड़ने में निहित है। जहां तक चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का सम्बन्ध है, उसे मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त को चीन की विशिष्ट परिस्थितियों में लागू करना सीखना है। चीनी कम्युनिस्टों के लिए, जो महान चीनी राष्ट्र के अंग हैं, और उसके साथ हाड़-मांस की तरह जुड़े हुए हैं, चीन की विशिष्टताओं से अलग मार्क्सवाद की कोई भी चर्चा करना केवल हवाई मार्क्सवाद, खोखला मार्क्सवाद है। इसलिए मार्क्सवाद को चीन में ठोस रूप से लागू करना ताकि उसकी हर अभिव्यक्ति में निस्सन्देह चीन की विशिष्टताओं की छाप हो, यानी मार्क्सवाद को चीन की विशिष्टताओं के प्रकाश में लागू करना, पूरी पार्टी के लिए शीघ्र ही समझ लेने और हल करने का एक मसला बन गया है। विदेशी घिसेपिटे लेखन[५] को मिटा देना चाहिए, खोखले और हवाई राग कम अलापने चाहिए और कठमुल्लावाद को ताक पर रख देना चाहिए ; इनके स्थान पर नवीन और जीवन्त चीनी ढंग व भावना अपनानी चाहिए, जिन्हें चीन की आम जनता पसन्द करती है। अन्तरराष्ट्रवाद की अन्तर्वस्तु को राष्ट्रीय रूप से अलग करना उन लोगों का व्यवहार है जो अन्तरराष्ट्रवाद की प्रारम्भिक बात भी कतई नहीं समझते। इसके विपरीत हमें इन दोनों को घनिष्ठ रूप से जोड़ना चाहिए। इस मामले में हमारी पांतों में गम्भीर खामियां हैं, जिन्हें संजीदगी के साथ दूर करना चाहिए।

वर्तमान आन्दोलन की विशिष्टताएं क्या हैं ? इसके नियम क्या हैं ? इसका निर्देशन किस प्रकार होना चाहिए ? ये सभी व्यावहारिक प्रश्न हैं। आज तक हम जापानी साम्राज्यवाद को पूर्णतया नहीं समझ सके हैं और न ही सम्पूर्ण चीन को समझ सके हैं। आन्दोलन

विकसित हो रहा है ग्रौर ग्रब भी नई चीजों को उगना है ग्रौर वे लगातार उगती जा रही हैं। इस ग्रान्दोलन की समग्रता ग्रौर विकास का ग्रध्ययन करना एक बड़ा काम है, जिसकी ग्रोर हमें सदैव ध्यान देना चाहिए। यदि कोई इन समस्याग्रों का गम्भीरतापूर्वक ग्रौर बारीकी से ग्रध्ययन करने से इनकार करता है, तो वह मार्क्सवादी नहीं हो सकता।

ग्रात्मतुष्टि ग्रध्ययन की दुश्मन है। जब तक हम ग्रात्मतुष्टि से नाता नहीं तोड़ लेंगे, तब तक हम सचमुच कुछ भी नहीं सीख पाएंगे। ग्रपने प्रति हमें "सीखने के लिए लालायित रहने" का रवैया ग्रपनाना चाहिए ग्रौर दूसरों के प्रति "सिखाने की ग्रथक कोशिश करने" का रवैया ग्रपनाना चाहिए।

एकता ग्रौर विजय

प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने ग्रौर नए चीन का निर्माण करने के लिए सारे देश की जनता को एकताबद्ध करने की सर्वप्रथम बुनियादी शर्त चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की ग्रन्दरूनी एकता है। सत्रह वर्षों की ग्रग्नि-परीक्षा में तपकर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने ग्रपनी ग्रन्दरूनी एकता कायम करने के कई उपाय सीख लिए हैं ग्रौर इस काल में हमारी पार्टी पहले से कहीं ग्रधिक पारंगत हो गई है। इसलिए ग्राज हम प्रतिरोध-युद्ध में विजय पाने ग्रौर नए चीन के निर्माण के लिए सारे देश की जनता के बीच एक मजबूत केन्द्र-बिन्दु बन सकने में समर्थ हैं। साथियो, यदि हम एकताबद्ध हो जाएं, तो निश्चय ही ग्रपने उद्देश्य में सफल हो सकते हैं।

नोट

१ जनवरी १९३४ में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) की सत्रहवीं कांग्रेस में रिपोर्ट पेश करते हुए स्तालिन ने कहा था: "सही राजनीतिक कार्यदिशा निर्धारित हो जाने के बाद संगठनात्मक कार्य ही सभी बातों का, जिनमें स्वयं राजनीतिक कार्यदिशा का भाग्य यानी उसकी सफलता या ग्रसफलता शामिल है, फैसला करता है।" उन्होंने "कार्यकर्ताग्रों के उचित चुनाव" की समस्या पर भी प्रकाश डाला था। मई १९३५ में सोवियत संघ की लाल सेना ग्रकादमियों के स्नातकों के सामने क्रेमलिन प्रासाद में भाषण देते हुए स्तालिन ने इस नारे को प्रस्तुत किया ग्रौर उसकी व्याख्या की: "सब कुछ कार्यकर्ताग्रों पर निर्भर है।" मार्च १९३९ में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) की ग्रठारहवीं कांग्रेस में प्रस्तुत ग्रपनी रिपोर्ट में स्तालिन ने कहा था: "एक बार सही राजनीतिक कार्यदिशा निर्धारित हो जाने ग्रौर उसे ग्रमल में ग्राजमा लिए जाने के बाद, पार्टी ग्रौर राज्य के संचालन के लिए पार्टी के कार्यकर्ता निर्णायक शक्ति बन जाते हैं।"

२ यहां चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की पांचवीं केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो द्वारा ग्रगस्त १९२७ में ग्रायोजित ग्रापात ग्रधिवेशन से लेकर जनवरी १९३४ में ग्रायोजित छठी केन्द्रीय कमेटी के पांचवें पूर्ण ग्रधिवेशन तक के समय का जिक्र किया गया है।

३ यह मीटिंग ग्रगस्त १९३५ में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो द्वारा पाशी में बुलाई गई थी। यह जगह सछ्वान प्रान्त के सुङफान काउन्टी-केन्द्र के उत्तर-पश्चिम में ग्रौर उत्तर-पश्चिमी सछ्वान तथा दक्षिण-पूर्वी कानसू के सीमान्त क्षेत्र पर स्थित है। उस समय चाङ क्वो-थाग्रो ने लाल सेना के एक भाग की कमान ग्रपने हाथों में लेकर केन्द्रीय कमेटी से नाता तोड़ लिया, उसके ग्रादेश का पालन करने से इनकार कर दिया ग्रौर उसे नष्ट करने की कोशिश की। इस मीटिंग में केन्द्रीय कमेटी ने फैसला किया कि खतरे के क्षेत्र को छोड़कर ग्रपनी कमान में चलने वाली लाल सेना के साथ उत्तरी शेनशी की ग्रोर कूच

कर दिया जाए। लेकिन चाङ क्वो-थाओ लाल सेना की उन टुकड़ियों के साथ जिन्हें उसने भुलावे में रखा हुआ था, दक्षिण की ओर थ्येनछ्वेन, लुशान, बड़े और छोटे चिनछ्वान तथा आपा की तरफ बढ़ा। वहां जाकर उसने एक बोगस केन्द्रीय कमेटी की स्थापना की और पार्टी के खिलाफ विद्रोह का झण्डा बुलन्द कर दिया।

* पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की एक विस्तृत मीटिंग अप्रैल १६३७ में येनान में हुई। इसके पहले, चाङ क्वो-थाओ के नेतृत्व में चलने वाली लाल सेना के कार्यकर्ताओं और सैनिकों में से ज्यादातर लोगों ने उसकी धोखेबाजी को समझ लिया था और वे उत्तर दिशा में शेनशी-कानसू सीमान्त क्षेत्र की ओर चल पड़े थे। लेकिन रास्ते में उनका एक भाग गलत आदेशों पर चलने के कारण पश्चिम की ओर बढ़कर कानसू प्रान्त के कैनचओ, ल्याङचओ और सोचओ की ओर चला गया; इसके अधिकांश हिस्से का दुश्मन ने सफाया कर दिया और बाकी बचे लोग सिनच्याङ की तरफ चले गए, और बाद में शेनशी-कानसू सीमान्त क्षेत्र में लौट आए। उनका दूसरा भाग काफी पहले से ही शेनशी-कानसू सीमान्त क्षेत्र में पहुंचकर केन्द्रीय लाल सेना के साथ मिल चुका था। स्वयं चाङ क्वो-थाओ भी उत्तरी शेनशी में पहुंचा और येनान मीटिंग में शामिल हुआ, जिसमें उसके अवसरवाद और पार्टी के प्रति उसके विश्वासघात की सुसंगत रूप से निन्दा की गई। उसने प्रकट रूप में तो अपनी गलती स्वीकार करने का स्वांग रचा, लेकिन वास्तव में पार्टी के साथ अन्तिम रूप से गद्दारी करने की तैयारी कर ली।

* देखिए: "घिसेपिटे पार्टी-लेखन का विरोध करो" नामक लेख में विदेशी घिसेपिटे लेखन के बारे में की गई व्याख्या ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ ३)।

संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता और पहलकदमी का सवाल*

५ नवम्बर १६३८

सहायता और रियायतों को सकारात्मक होना चाहिए, नकारात्मक नहीं

लम्बे समय तक परस्पर सहयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि संयुक्त मोर्चे में शामिल सभी राजनीतिक पार्टियां व ग्रुप एक दूसरे की सहायता करें और एक दूसरे को रियायतें दें, लेकिन इस प्रकार की सहायता और रियायतें सकारात्मक होनी चाहिए, नकारात्मक नहीं। हमें अपनी पार्टी और सेना को मजबूत बनाना चाहिए और बढ़ाना चाहिए, साथ ही हमें मित्र-पार्टियों और मित्र-सेनाओं को मजबूत बनाने और बढ़ाने के कार्य में उन्हें सहायता भी देनी चाहिए; जनता यह चाहती है कि सरकार उसकी राज-नीतिक और आर्थिक मांगों को पूरा करे, लेकिन साथ ही वह जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को चलाने के हेतु सरकार को हर सम्भव

* यह पार्टी की छठी केन्द्रीय कमेटी के छठे पूर्ण अधिवेशन में कामरेड माओ त्सेतुङ के समापन-भाषण का एक अंश है। संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता और पहलकदमी का सवाल जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे से सम्बन्धित उन अनेक

सहायता देती है ; कारखानों के मजदूर यह मांग करते हैं कि मालिक उनकी माली हालत को सुधारें, लेकिन साथ ही वे जापान का प्रतिरोध करने के हित में कड़ी मेहनत भी करते हैं ; विदेशी आक्रमण के खिलाफ एकता कायम करने के लिए जमींदारों को लगान और सूद कम करना चाहिए, साथ ही किसानों को भी चाहिए कि वे जमींदारों को लगान और सूद दें। आपसी सहायता के ये सभी सिद्धान्त और नीतियां सकारात्मक हैं, नकारात्मक अथवा एकांगी नहीं। आपसी रियायतों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होनी चाहिए। हर पक्ष को चाहिए कि वह दूसरे पक्ष के भीतर उन्मूलनकारी कार्यवाहियां न करे तथा दूसरे पक्ष की पार्टी, सरकार या फौज के अन्दर अपनी पार्टी की गुप्त शाखाएं कायम न करे। जहां तक हमारा ताल्लुक है, हम क्वोमिन्ताङ में और उसकी सरकार या फौज में अपनी पार्टी की गुप्त शाखाएं नहीं बनाएंगे, ताकि क्वोमिन्ताङ इस विषय में निश्चिन्त रहे और इससे जापान का प्रतिरोध करने में लाभ पहुंचे। "कुछ कामों से अपना हाथ खींच लो, ताकि अपने आपको दूसरे कामों में लगा सको,"[२] यह कहावत इस सम्बन्ध में पूर्णतया चरितार्थ होती है। लाल सेना का पुनर्गठन किए बिना, लाल इलाकों की

विशिष्ट सवालों में से एक था जिनके बारे में कामरेड माओ त्सेतुङ और छन शाओ-य्वी के बीच मतभेद मौजूद था। सार रूप में यह सवाल संयुक्त मोर्चे में सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व का सवाल था। दिसम्बर १९४७ की अपनी रिपोर्ट ("वर्तमान परिस्थिति और हमारे कार्य") में कामरेड माओ त्सेतुङ ने इन मतभेदों को सार रूप में इस प्रकार पेश किया था :

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान, हमारी पार्टी ने उन आत्मसमर्पणवादी विचारों [यह बात प्रथम क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के काल में छन

प्रशासन-व्यवस्था को बदले बिना और हथियारबन्द बगावतों की नीति को त्यागे बिना राष्ट्रव्यापी जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का होना असम्भव था। पहली बात में रियायत देने से हमें दूसरी बात में कुछ हासिल हुआ है ; नकारात्मक साधनों से हमें सकारात्मक फल की प्राप्ति हुई है। "कुछ पीछे हटना, और अधिक लम्बी छलांग लगाने के लिए उपयुक्त है"[३] – यह लेनिनवाद है। रियायतों को बिलकुल नकारात्मक मानना मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विपरीत है। बेशक, बिलकुल नकारात्मक रियायतों की मिसालें भी हैं – जैसे दूसरी इन्टरनेशनल द्वारा प्रतिपादित श्रम और पूंजी के सहयोग का सिद्धान्त,[४] जिसने पूरे वर्ग और पूरी क्रान्ति के साथ विश्वासघात किया। चीन में पहले छन तू-श्यू और बाद में चाङ क्वो-थाओ, ये दोनों ही आत्मसमर्पणवादी थे ; हमें आत्मसमर्पणवाद का पूरी शक्ति से विरोध करना चाहिए। अपने सहयोगियों या दुश्मनों के साथ अपने सम्बन्धों के क्षेत्र में जब भी हम रियायतें देते हैं, पीछे हटते हैं, बचाव की कार्यवाही करते हैं अथवा आगे बढ़ना बन्द कर देते हैं, उस समय हमें अपनी इन कार्यवाहियों को हमेशा अपनी सम्पूर्ण क्रान्तिकारी नीति के एक अंग के रूप में, आम क्रान्तिकारी कार्य-

तू-श्यू के आत्मसमर्पणवादी विचारों के बारे में कही गई है] के समान विचारों का विरोध किया ; ये विचार हैं क्वोमिन्ताङ की जन-विरोधी नीतियों को रियायतें देना, क्वोमिन्ताङ पर आम जनता से अधिक विश्वास करना, जन-संघर्ष छेड़ने और उनका पूर्ण विकास करने का साहस न करना, जापान-अधिकृत इलाकों में मुक्त क्षेत्रों का विस्तार करने और जन-सेनाओं को बढ़ाने का साहस न करना तथा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का नेतृत्व क्वोमिन्ताङ को सौंप देना। हमारी पार्टी ने इस प्रकार के शक्तिहीन और पतन-

दिशा की एक अनिवार्य कड़ी के रूप में, टेढ़ेमेढ़े रास्तों से होने वाली प्रगति के एक मोड़ के रूप में देखना चाहिए। संक्षेप में हमारी ये कार्यवाहियां सकारात्मक होती हैं।

राष्ट्रीय संघर्ष और वर्ग-संघर्ष की एकरूपता

दीर्घकालीन सहयोग के द्वारा लम्बे समय तक युद्ध जारी रखना; अथवा दूसरे शब्दों में, वर्ग-संघर्ष को जापान का प्रतिरोध करने के वर्तमान राष्ट्रीय संघर्ष के मातहत कर देना – यह संयुक्त मोर्चे का बुनियादी सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार पार्टियों और वर्गों की स्वतंत्रता को बनाए रखना चाहिए, संयुक्त मोर्चे के भीतर उनकी स्वतंत्रता और पहलकदमी को बनाए रखना चाहिए, तथा सहयोग और एकता की वजह से पार्टियों और वर्गों के अनिवार्य अधिकारों को बलिदान नहीं करना चाहिए, बल्कि इसके विपरीत पार्टियों और वर्गों के अधिकारों को एक सीमा तक दृढ़ता से बनाए रखना चाहिए। केवल इसी प्रकार सहयोग को बढ़ाया जा सकता

शील विचारों के खिलाफ, जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद के उसूलों का उल्लंघन करते हैं, दृढ़तापूर्वक संघर्ष चलाया तथा उसने "प्रगतिशील शक्तियों का विकास करने, मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में करने और कट्टरपंथी शक्तियों को अलगाव में डालने" की राजनीतिक कार्यदिशा का दृढ़ता से पालन किया और मुक्त क्षेत्रों और जन-मुक्ति सेना का दृढ़तापूर्वक विस्तार किया। इससे न सिर्फ इस बात की गारन्टी हो गई कि हमारी पार्टी जापानी आक्रमण के काल में जापानी साम्राज्यवाद को परास्त कर सकी, बल्कि

है, निस्सन्देह केवल तभी कोई सहयोग हो सकता है। अन्यथा सहयोग विलीनीकरण का रूप ले लेगा और संयुक्त मोर्चा निश्चय ही असफल हो जाएगा। एक ऐसे संघर्ष में जिसका स्वरूप राष्ट्रीय हो, वर्ग-संघर्ष राष्ट्रीय संघर्ष का रूप ले लेता है। ऐसा रूप इन दोनों की एकरूपता का परिचायक है। एक ओर तो एक निश्चित ऐतिहासिक काल में वर्गों की राजनीतिक और आर्थिक मांगों को ऐसा नहीं होना चाहिए कि इन वर्गों का सहयोग टूट जाए; दूसरी ओर वर्ग-संघर्ष की सभी मांगों की शुरुआत राष्ट्रीय संघर्ष (जापान का प्रतिरोध करने) की जरूरत से होनी चाहिए। इस प्रकार संयुक्त मोर्चे के अन्दर एकता और स्वतंत्रता के बीच तथा राष्ट्रीय संघर्ष और वर्ग-संघर्ष के बीच एकरूपता कायम हो जाती है।

"सब कुछ संयुक्त मोर्चे के ही जरिए" का नारा गलत है

क्वोमिन्ताङ सत्तारूढ़ पार्टी है और अभी तक उसने संयुक्त मोर्चे को संगठनात्मक रूप नहीं लेने दिया। दुश्मन के पृष्ठभाग

इस बात की भी गारन्टी हो गई कि जापानियों के आत्मसमर्पण के बाद के काल में जब च्याङ काई-शेक ने अपना प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध छेड़ा, हमारी पार्टी सुगमता के साथ और बिना नुकसान उठाए, च्याङ काई-शेक के प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध का मुकाबला क्रान्तिकारी लोकयुद्ध से करने का रास्ता अपना सकी तथा एक अल्प अवधि में ही भारी जीतें हासिल कर सकी। सभी पार्टी-कामरेडों को चाहिए कि वे इतिहास के इन सबकों को पक्के तौर पर याद रखें।

में "सब कुछ संयुक्त मोर्चे के ही जरिए" करना असम्भव है, क्योंकि वहां हमें उन समझौतों का पालन करते हुए जिन्हें क्वोमिन्ताङ ने मंजूर किया है (जैसे "सशस्त्र प्रतिरोध व राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का कार्यक्रम"), स्वतंत्रता और पहलकदमी से काम करना पड़ता है। अथवा इस बात का अनुमान करके कि क्वोमिन्ताङ किस चीज की सहमति देगी, उसका ब्यौरा पेश करने से पहले हम उसे कर सकते हैं। मिसाल के लिए, प्रशासनिक कमिश्नरों की नियुक्ति करना और शानतुङ प्रान्त में फौजों को भेजना कभी मुमकिन न हो पाता यदि हमने इसे "संयुक्त मोर्चे के ही जरिए" करवाने की कोशिश की होती। कहा जाता है कि फ्रांसीसी कम्युनिस्ट पार्टी ने एक बार ऐसा ही नारा पेश किया था। इसका कारण शायद यह था कि फ्रांस में विभिन्न पार्टियों की एक संयुक्त कमेटी कायम हो चुकी थी और उसके द्वारा निर्धारित कार्यक्रम को सोशलिस्ट पार्टी अपने अमल में लाना नहीं चाहती थी और वह अपनी ही राह चलती रहती थी, इसलिए सोशलिस्ट पार्टी को सीमाओं के भीतर रखने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी को यह नारा पेश करना पड़ा था। उसने अपने हाथ-पांव बांधने के लिए यह नारा हरगिज पेश नहीं किया था। चीन में स्थिति यह है कि क्वोमिन्ताङ दूसरी राजनीतिक पार्टियों को बराबरी के अधिकारों से वंचित करके, उन सबको अपने आदेश मानने के लिए मजबूर करने की कोशिश कर रही है। यदि इस प्रकार के नारे द्वारा हम यह मांग करें कि क्वोमिन्ताङ जो कुछ भी करे हमारी सहमति के जरिए करे, तो यह असम्भव भी होगा और हास्यास्पद भी। अगर हम यह चाहें कि जो कुछ भी हम करें उसके लिए पहले क्वोमिन्ताङ की सहमति प्राप्त

कर लें, तो यदि क्वोमिन्ताङ ने सहमति न दी तो फिर क्या होगा? चूंकि क्वोमिन्ताङ की नीति हमारे विकास को रोकने की नीति है, अतएव हमारे लिए ऐसा नारा पेश करने का कोई कारण नहीं जो सिर्फ खुद हमारे ही हाथ-पांव बांध देता हो। वर्तमान काल में, कुछ बातें ऐसी हैं जिनके लिए पहले से क्वोमिन्ताङ की सहमति प्राप्त करना आवश्यक है, जैसे हमारी तीन डिवीजनों का तीन फौजी कोरों में विस्तार कर देना – यह पहले रिपोर्ट करना और फिर उसे करना है। कुछ ऐसे काम भी हैं जिन्हें पहले कर डालना चाहिए और फिर उनकी रिपोर्ट क्वोमिन्ताङ को देनी चाहिए, जैसे अपनी फौजों की संख्या में दो लाख से अधिक की बढ़ोतरी कर लेना – यह पहले काम कर डालना और बाद में रिपोर्ट देना है। इसके अलावा और भी काम हैं, जैसे सीमान्त क्षेत्रों की एसेम्बली बुलाना, जिन्हें फिलहाल हम क्वोमिन्ताङ को सूचित किए बिना ही करेंगे, क्योंकि हम यह जानते हैं कि वह इसकी सहमति नहीं देगी। इसके अलावा और भी काम हैं जिन्हें फिलहाल न हम करेंगे और न उनकी रिपोर्ट ही देंगे, क्योंकि ऐसे काम करने से पूरी परिस्थिति बिगड़ जाएगी। संक्षेप में, हमें न तो संयुक्त मोर्चे को तोड़ना चाहिए और न ही अपने हाथ-पांव बांध लेने चाहिए। इसलिए "सब कुछ संयुक्त मोर्चे के ही जरिए" का नारा नहीं देना चाहिए। यदि "सब कुछ संयुक्त मोर्चे के मातहत करने" का मतलब सब कुछ च्याङ काई-शेक और येन शी-शान के मातहत करना हो, तो यह नारा भी गलत है। हमारी नीति संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता और पहलकदमी बनाए रखने की नीति है, एकता और स्वतंत्रता दोनों पर एक साथ अमल करने की नीति है।

नोट

[१] "मेनशियस" नामक पुस्तक से एक उद्धरण।

[२] वी० आई० लेनिन की "दार्शनिक नोटबुक" नामक पुस्तक में "हेगेल की पुस्तक 'दर्शन-शास्त्र के इतिहास पर व्याख्यानमाला' की रूपरेखा" से उद्धृत।

[३] "श्रम और पूंजी के सहयोग का सिद्धान्त" दूसरी इन्टरनेशनल द्वारा पेश किया गया एक प्रतिक्रियावादी सिद्धान्त है। यह पूंजीवादी देशों में सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के सहयोग की पैरवी करता है तथा क्रान्तिकारी उपायों के जरिए पूंजीपति वर्ग के शासन को उखाड़ फेंकने और सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना करने का विरोध करता है।

युद्ध और रणनीति की समस्याएं*

६ नवम्बर १९३८

१. चीन की विशेषताएं और क्रान्तिकारी युद्ध

शस्त्र-बल द्वारा राजसत्ता छीनना, युद्ध द्वारा मसले को सुलझाना, क्रान्ति का केन्द्रीय कार्य और सर्वोच्च रूप है। क्रान्ति का यह मार्क्सवादी-लेनिनवादी उसूल सर्वत्र लागू होता है, चीन पर और अन्य सभी देशों पर लागू होता है।

लेकिन उसूल एक ही होने पर भी जब सर्वहारा वर्ग की पार्टी उसे अमल में लाती है तो वह अलग-अलग परिस्थितियों के अनुरूप उसकी अभिव्यक्ति के अलग-अलग तरीके अपनाती है। पूंजीवादी देश, जब वे फासिस्टवादी नहीं होते अथवा युद्ध में उलझे नहीं होते तो वे अपने देश के भीतर पूंजीवादी लोकशाही पर (सामन्तशाही पर नहीं) अमल करते हैं; अपने वैदेशिक सम्बन्धों में वे दूसरे

* यह लेख पार्टी की छठी केन्द्रीय कमेटी के छठे पूर्ण अधिवेशन में कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा दिए गए समापन-भाषण का एक अंश है। "जापान-विरोधी छापामार युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं" और "दीर्घकालीन युद्ध के बारे में" नामक अपनी रचनाओं में कामरेड माओ त्सेतुङ जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में पार्टी की नेतृत्वकारी भूमिका के सवाल को पहले ही हल कर चुके थे। लेकिन कुछ साथियों ने, जिन्होंने दक्षिणपंथी अवसरवादी गलतियां कीं, इस बात

राष्ट्रों के उत्पीड़न का शिकार नहीं होते बल्कि खुद दूसरे राष्ट्रों का उत्पीड़न करते हैं। उनकी इन विशेषताओं के कारण, पूंजीवादी देशों के सर्वहारा वर्ग की पार्टी का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह दीर्घकालीन कानूनी संघर्ष के जरिए मजदूरों को शिक्षित करे तथा अपनी शक्ति का संचय करे और पूंजीवाद का तख्ता अन्तिम रूप से उखाड़ फेंकने के लिए तैयारी करे। उक्त देशों में मसला यह है कि दीर्घकाल तक कानूनी संघर्ष चलाया जाए, पार्लियामेन्ट को एक मंच के रूप में इस्तेमाल किया जाए, आर्थिक व राजनीतिक हड़तालें की जाएं, ट्रेड यूनियनों को संगठित किया जाए और मजदूरों को शिक्षित किया जाए। उन देशों में संगठन का रूप कानूनी होता है और संघर्ष का रूप रक्तपातहीन (गैरफौजी)। युद्ध के मसले के बारे में, पूंजीवादी देशों की कम्युनिस्ट पार्टियां अपने खुद के मुल्कों द्वारा छेड़े गए साम्राज्यवादी युद्धों का विरोध करती हैं; अगर इस प्रकार के युद्ध हों, तो इन कम्युनिस्ट पार्टियों की नीति ऐसी होती है जो अपने देश की प्रतिक्रियावादी सरकारों को पराजित करने में सहायक हो। जो युद्ध वे करना चाहती हैं, वह गृहयुद्ध होता है जिसकी वे तैयारी कर रही हैं।[1] लेकिन यह बगावत और युद्ध तब तक नहीं छेड़ना चाहिए जब तक पूंजीपति वर्ग वास्तव में असहाय

को मानने से इनकार कर दिया कि संयुक्त मोर्चे के भीतर पार्टी को अपनी स्वतंत्रता और पहलकदमी बनाए रखनी चाहिए, और इस प्रकार उन्होंने पार्टी की युद्ध और रणनीति सम्बन्धी कार्यदिशा के बारे में सन्देह प्रकट किया और उसका विरोध भी किया। इस प्रकार के दक्षिणपंथी अवसरवाद पर काबू पाने, चीनी क्रान्ति में युद्ध और रणनीति की समस्याओं के प्राथमिक महत्व के बारे में पूरी पार्टी को और अधिक स्पष्ट रूप में समझाने तथा इस सम्बन्ध में गम्भीरता-

नहीं हो जाता, जब तक सर्वहारा वर्ग का बहुसंख्यक जन-समुदाय सशस्त्र विद्रोह करने और युद्ध चलाने के लिए संकल्पबद्ध नहीं हो जाता, तथा जब तक किसान जन-समुदाय स्वेच्छा से सर्वहारा वर्ग को मदद नहीं देता। और जब इस प्रकार की बगावत और युद्ध का समय आ जाएगा, तो पहला कदम यह होगा कि शहरों पर कब्जा कर लिया जाए और फिर देहातों की तरफ बढ़ा जाए, न कि इसके विपरीत कदम उठाया जाए। पूंजीवादी देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों ने ऐसा ही किया है, तथा रूस की अक्तूबर क्रान्ति ने इस बात को सही साबित कर दिया है।

लेकिन चीन एक भिन्न प्रकार का देश है। चीन की विशेषता यह है कि वह एक स्वाधीन जनवादी देश नहीं, बल्कि अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती देश है; अन्दरूनी तौर पर चीन में लोकशाही का अभाव है और वह सामन्ती उत्पीड़न का शिकार है, तथा उसके वैदेशिक सम्बन्धों में राष्ट्रीय स्वतंत्रता का अभाव है और वह साम्राज्यवादी उत्पीड़न का शिकार है। इस प्रकार यहां न तो इस्तेमाल करने के लिए कोई पार्लियामेन्ट है, और न मजदूरों को हड़ताल के लिए संगठित करने का कोई कानूनी अधिकार ही। बुनियादी तौर पर, यहां कम्युनिस्ट पार्टी के सामने न तो यह कार्य

पूर्वक काम करने के वास्ते पूरी पार्टी को गोलबन्द करने के लिए कामरेड माओ त्सेतुङ ने उक्त पूर्ण अधिवेशन में चीन के राजनीतिक संघर्षों के इतिहास की रोशनी में इस समस्या के महत्व पर फिर से जोर दिया और पार्टी के सामरिक कार्य के विकास और हमारी रणनीति के विशिष्ट परिवर्तनों का विश्लेषण किया। नतीजा यह हुआ कि समूची पार्टी में निर्देशात्मक विचार की एकता और कार्य-वाही की एकता कायम हो गई।

वही है जो गृहयुद्ध और राष्ट्रीय युद्ध के बीच होता है, जो कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा अकेले ही चलाए जाने वाले युद्ध और क्वोमिन्ताङ व कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा संयुक्त रूप से चलाए जाने वाले युद्ध के बीच होता है। इसमें शक नहीं कि ये फर्क महत्वपूर्ण हैं। वे यह बताते हैं कि युद्ध में हिस्सा लेने वाली मुख्य शक्तियों का दायरा सीमित है या व्यापक (वह मजदूरों और किसानों का संश्रय है या मजदूरों, किसानों और पूंजीपति वर्ग का संश्रय), युद्ध का निशाना भीतरी है या बाहरी (युद्ध घरेलू दुश्मन के खिलाफ है या विदेशी दुश्मन के खिलाफ और यदि वह घरेलू दुश्मन के खिलाफ है तो उत्तरी युद्ध-सरदारों के खिलाफ है या क्वोमिन्ताङ के खिलाफ); ये फर्क यह भी बताते हैं कि चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की अन्तर्वस्तु अपनी ऐतिहासिक प्रक्रिया की विभिन्न मंजिलों में अलग-अलग होती है। लेकिन ये सभी युद्ध सशस्त्र प्रतिक्रान्ति के खिलाफ सशस्त्र क्रान्ति की मिसालें हैं और ये सभी क्रान्तिकारी युद्ध हैं; इन सभी युद्धों से चीनी क्रान्ति की विशेषताएं और श्रेष्ठताएं जाहिर हो जाती हैं। यह थीसिस कि क्रान्तिकारी युद्ध "चीनी क्रान्ति की विशेषताओं और श्रेष्ठताओं में से एक है", पूर्णतः चीन की परिस्थितियों से मेल खाती है। करीब-करीब शुरू से ही चीनी सर्वहारा वर्ग की पार्टी के सामने मुख्य काम यह रहा है कि वह राष्ट्रीय और सामाजिक मुक्ति के लिए ज्यादा से ज्यादा तादाद में अपने संश्रयकारियों से एकता कायम करे, सशस्त्र संघर्ष संगठित करे और परिस्थिति के अनुसार घरेलू या विदेशी सशस्त्र प्रतिक्रान्तिकारियों के खिलाफ संघर्ष करे। सशस्त्र संघर्ष के बिना चीन में सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी न तो अपने लिए कोई स्थान ही बना सकेंगे, और न वे किसी क्रान्तिकारी कार्य को ही पूरा कर सकेंगे।

हमारी पार्टी इस बात को १६२१ में अपनी स्थापना से लेकर १६२६ में उत्तरी अभियान में हिस्सा लेने के समय तक के पांच-छै वर्षों में पूर्ण रूप से ग्रहण नहीं कर सकी थी। उस समय वह चीन में सशस्त्र संघर्ष के सर्वोच्च महत्व को नहीं समझती थी; उसने न तो संजीदगी से युद्ध की तैयारी की थी तथा सशस्त्र सेना का संगठन किया था और न ही फौजी रणनीति और कार्यनीति के अध्ययन की ओर ध्यान दिया था। उत्तरी अभियान के दौरान उसने फौजों को अपने पक्ष में करने के काम को नजरअन्दाज किया और जन-आन्दोलनों पर एकांगी रूप से जोर दिया। नतीजा यह हुआ कि जैसे ही क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादी बन गई, वैसे ही सभी जन-आन्दोलन ठप हो गए। १६२७ के बाद बहुत दिनों तक हमारे अनेक साथी पार्टी के केन्द्रीय कार्य के रूप में शहरों में विद्रोह की तैयारी करते रहे और श्वेत इलाकों में काम करते रहे। जब "घेरा डालने और विनाश करने" की दुश्मन की तीसरी मुहिम को नाकाम बनाने में हमें १६३१ में सफलता प्राप्त हुई, तो उसके बाद ही कुछ साथी इस प्रश्न पर बुनियादी रूप से अपने दृष्टिकोण को बदल सके। लेकिन समूची पार्टी का दृष्टिकोण तब भी नहीं बदला था और कुछ साथी ऐसे थे जो वैसा नहीं सोचते थे जैसा कि इस समय हम लोग सोचते हैं।

अनुभव हमें बताता है कि चीन की समस्याओं को सशस्त्र सेना के बिना हल नहीं किया जा सकता। इस बात को समझ लेने से हमें अब से जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को सफलतापूर्वक चलाने में मदद मिलेगी। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में समूचे राष्ट्र का हथियारबन्द प्रतिरोध के लिए उठ खड़े होना एक ऐसा ठोस

तथ्य है जो इस समस्या के महत्व को और अच्छी तरह समझने के लिए समूची पार्टी को शिक्षा देगा, तथा हर पार्टी-सदस्य को हथियार उठाकर मोर्चे पर जाने के लिए हर घड़ी तैयार रहना चाहिए। यही नहीं, हमारे वर्तमान अधिवेशन ने यह निश्चय करके कि अब से पार्टी के कार्य का मुख्य पहलू युद्ध-क्षेत्र को और दुश्मन के पृष्ठभाग को बनाया जाएगा, हमारे प्रयत्नों के लिए एक स्पष्ट दिशा निर्धारित कर दी है। यह उन कुछ पार्टी-सदस्यों के लिए जो केवल पार्टी का संगठनात्मक कार्य करना चाहते हैं और जन-आन्दोलनों के काम में लगना चाहते हैं, लेकिन जो युद्ध का अध्ययन नहीं करना चाहते या युद्ध में भाग नहीं लेना चाहते, उन कुछ विद्यालयों के लिए जो विद्यार्थियों को मोर्चे पर जाने के लिए उत्साहित करने के काम को नजरअन्दाज करते हैं, और इसी तरह की अन्य अभिव्यक्तियों के लिए एक बेहतरीन दवा भी साबित होगी। चीन के अधिकांश हिस्सों में पार्टी का संगठनात्मक कार्य और जन-आन्दोलन का कार्य प्रत्यक्ष रूप से सशस्त्र संघर्षों से जुड़े हुए हैं ; सशस्त्र संघर्ष से अलग और स्वतंत्र न तो कोई पार्टी-कार्य अथवा जन-आन्दोलन होता है और न हो सकता है। यहां तक कि युद्ध-क्षेत्रों से अपेक्षाकृत दूर पृष्ठ-भागीय इलाकों में (जैसे युन्नान, क्वेइचओ और सछ्वान में), या दुश्मन द्वारा अधिकृत इलाकों में (जैसे पेफिङ, थ्येनचिन, नानकिङ और शांघाई में) भी पार्टी का संगठनात्मक कार्य और जन-आन्दोलन इसी प्रकार युद्ध से जुड़े हुए हैं और उन्हें केवल मोर्चे की ही जरूरतों को पूरा करना चाहिए और अवश्य करना चाहिए। एक शब्द में, पूरी पार्टी को युद्ध की ओर बहुत ध्यान देना चाहिए, फौजी मामलों को सीखना चाहिए और लड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए।

२. क्वोमिन्ताङ का युद्ध-इतिहास

हमारे लिए यह लाभप्रद होगा कि हम क्वोमिन्ताङ के इतिहास को देखें और इस बात पर गौर करें कि क्वोमिन्ताङ ने युद्ध की ओर कितना ध्यान दिया है।

शुरू की मंजिल में जबकि सुन यात-सेन एक छोटा क्रान्तिकारी दल बना ही रहे थे, उन्होंने छिङ वंश के खिलाफ कई सशस्त्र विद्रोह कराए।[४] "थुङ मङ ह्वेइ" का काल सशस्त्र विद्रोहों की मिसालों[५] से खास तौर पर भरा पड़ा है। यह सिलसिला तब तक चलता रहा, जब तक कि १९११ की क्रान्ति के जरिए छिङ वंश का तख्ता बलपूर्वक उलट नहीं दिया गया। "चुङह्वा कमिङ ताङ" के काल में उन्होंने य्वान श-खाए के विरुद्ध हथियारबन्द मुहिम चलाई।[६] उसके बाद की सभी घटनाएं – नौसेना का दक्षिण की तरफ तबादला,[७] क्वेइलिन से उत्तरी अभियान[८] और ह्वाङफू फौजी अकादमी की स्थापना,[९] ये सब सुन यात-सेन द्वारा किए गए फौजी कार्य थे।

सुन यात-सेन के बाद च्याङ काई-शेक सामने आया और उसने क्वोमिन्ताङ की फौजी शक्ति को शिखर पर पहुंचा दिया। वह फौज को अपने प्राण की तरह मूल्यवान समझता है तथा उत्तरी अभियान, गृहयुद्ध और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध इन तीन युद्धों का अनुभव प्राप्त कर चुका है। पिछले दस वर्षों से च्याङ काई-शेक प्रतिक्रान्तिकारी बना हुआ है। उसने प्रतिक्रान्तिकारी उद्देश्यों के लिए एक विशाल "केन्द्रीय सेना" का निर्माण किया है। उसने इस निर्णायक बात को मजबूती से पकड़ लिया है कि जिसके पास फौज होगी उसके पास सत्ता रहेगी, तथा युद्ध सभी बातों का

निर्णय कर देता है। इस मामले में हमें उससे शिक्षा लेनी चाहिए। इस मामले में सुन यात-सेन और च्याङ काई-शेक दोनों ही हमारे शिक्षक हैं।

१९११ की क्रान्ति के बाद से सभी युद्ध-सरदार अपनी फौजों को अपने प्राण की तरह मूल्यवान समझते हैं। वे इस सिद्धान्त के कायल हो गए हैं कि "जिसके पास फौज होगी, उसके पास सत्ता रहेगी।"

थान येन-खाए[10] एक होशियार नौकरशाह था, जिसका हुनान में कई बार उत्थान और पतन हो चुका था और जो केवल सिविल गवर्नर कभी नहीं रहा था और हमेशा ही इस बात पर डटा रहता था कि वह फौजी और सिविल गवर्नर एक साथ बनेगा। यहां तक कि बाद में जब वह क्वाङ्तुङ और ऊहान में राष्ट्रीय सरकार के अध्यक्ष-पद पर रहा, तब भी वह दूसरी फौजी कोर का कमाण्डर बना रहा। चीन में अनेक ऐसे युद्ध-सरदार हैं जो चीन की इस विशेषता को समझते हैं।

चीन में कुछ ऐसी पार्टियां भी थीं जो फौज रखना पसन्द नहीं करती थीं। प्रगतिशील पार्टी[11] इनमें एक प्रमुख पार्टी थी। लेकिन यह पार्टी भी यह बात जानती थी कि उसे कोई सरकारी पद तब तक नहीं मिल सकता जब तक कि कोई युद्ध-सरदार उसकी सहायता न करे। इस प्रकार य्वान श-खाए, त्वान छी-रुइ[12] और च्याङ काई-शेक (जिससे प्रगतिशील पार्टी से अलग होकर बना राज-नीति-विज्ञान ग्रुप[13] आ मिला है) एक के बाद एक इसके संरक्षक बने थे।

संक्षिप्त इतिहास वाली कुछ छोटी पार्टियों, जैसे नौजवान पार्टी,[14] के पास कोई फौज नहीं थी और इसलिए वे कोई कामयाबी प्राप्त नहीं कर सकीं।

अन्य देशों में पूंजीवादी पार्टियों को अपने-अपने सीधे नेतृत्व में हथियारबन्द फौजों की जरूरत नहीं होती। लेकिन चीन का मामला दूसरा है। देश में सामन्ती विभाजन होने के कारण जमींदारों या पूंजीपति वर्ग के जिस किसी भी गुट या पार्टी के पास बन्दूकें होती हैं, उसी के हाथ में सत्ता होती है और जिसके पास ज्यादा बन्दूकें होती हैं, उसके पास ज्यादा सत्ता होती है। इन परिस्थितियों में रहते हुए सर्वहारा वर्ग की पार्टी को स्पष्ट रूप में समस्या की जड़ को पहचान लेना चाहिए।

कम्युनिस्ट कभी भी अपनी वैयक्तिक फौजी सत्ता के लिए प्रयत्न-शील नहीं होते (उन्हें किसी भी हालत में ऐसा नहीं करना चाहिए और किसी को फिर कभी चाङ क्वो-थाओ की मिसाल पर नहीं चलना चाहिए), लेकिन उन्हें पार्टी के हित में फौजी सत्ता हासिल करने के लिए संघर्ष करना चाहिए, जनता के हित में फौजी सत्ता हासिल करने के लिए संघर्ष करना चाहिए। चूंकि राष्ट्रीय प्रतिरोध-युद्ध चल रहा है, इसलिए हमें राष्ट्र के लिए फौजी सत्ता हासिल करने के वास्ते भी संघर्ष करना चाहिए। यदि कोई फौजी सत्ता के सवाल पर बचकानेपन का शिकार होगा, तो उसके हाथ कुछ भी न लगेगा। चूंकि मेहनतकश जनता हजारों वर्षों से प्रतिक्रिया-वादी शासक वर्गों की धोखाधड़ी और धमकी का शिकार बनती आई है, इसलिए मेहनतकश जनता के लिए इस बात के महत्व को समझना कि उसके हाथ में बन्दूक होनी चाहिए, एक बहुत मुश्किल काम है। अब जापानी साम्राज्यवाद के उत्पीड़न और राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध ने

था जब हमारी पार्टी ने सेना के महत्व को पूर्ण रूप से समझ लिया था। यदि इस काल में लाल सेना न होती और उसने युद्ध न किए होते, यानी यदि कम्युनिस्ट पार्टी ने छन तू-श्यू के विघटनवाद को अपना लिया होता, तो आज जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को शुरू करने और उसे लम्बे अरसे तक चलाने की बात सोचना असम्भव था।

७ अगस्त १९२७ को पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की संकटकालीन मीटिंग में राजनीतिक क्षेत्र में मौजूद दक्षिणपंथी अवसरवाद का विरोध किया गया और पार्टी को आगे की ओर बड़ा कदम उठाने में सहायता दी गई। जनवरी १९३१ में पार्टी की छठी केन्द्रीय कमेटी के चौथे पूर्ण अधिवेशन ने नाम के लिए तो राजनीतिक क्षेत्र में मौजूद "वामपंथी" अवसरवाद का विरोध किया, लेकिन वास्तव में खुद फिर एक बार "वामपंथी" अवसरवादी गलती की। ये दोनों मीटिंगें अपनी विषय-वस्तु और ऐतिहासिक भूमिका में भिन्न थीं, लेकिन इनमें से किसी ने भी युद्ध और रणनीति की समस्याओं पर गम्भीरता से विचार नहीं किया। यह एक ऐसा तथ्य है जिससे यह प्रकट होता है कि युद्ध को तब तक पार्टी के काम का गुरुत्व-केन्द्र नहीं बनाया गया था। १९३३ में जब पार्टी का केन्द्रीय नेतृत्व लाल इलाकों में चला गया, तो परिस्थिति में बुनियादी तबदीली हो गई, लेकिन युद्ध के सवाल पर (और अन्य सभी प्रमुख सवालों के सम्बन्ध में) फिर उसूली गलतियां होती रहीं। नतीजा यह हुआ कि क्रान्तिकारी युद्ध को गम्भीर नुकसान उठाना पड़ा।[१५] दूसरी ओर १९३५ की चुनई मीटिंग मुख्यतः फौजी क्षेत्र में मौजूद अवसरवाद के खिलाफ एक संघर्ष था और उसने युद्ध की समस्या को सर्वोच्च स्थान

दिया। यह उस समय की युद्ध-स्थिति का प्रतिबिम्ब था। आज हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि पिछले सत्रह वर्षों के संघर्षों में तपकर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने न केवल एक सुदृढ़ मार्क्सवादी राजनीतिक कार्यदिशा निर्धारित की है बल्कि एक सुदृढ़ मार्क्सवादी फौजी कार्यदिशा भी निर्धारित की है। हम न केवल राजनीतिक समस्याओं को हल करने में बल्कि फौजी समस्याओं को हल करने में भी मार्क्सवाद को लागू करने में समर्थ हुए हैं; हमने न केवल पार्टी और राज्य को चला सकने की योग्यता रखने वाले मेरुदण्डों को बड़ी तादाद में तैयार कर लिया है, बल्कि फौज को चला सकने की योग्यता रखने वाले मेरुदण्डों को भी बड़ी तादाद में तैयार कर लिया है। ये उपलब्धियां क्रान्ति के पुष्प हैं जिन्हें अनगिनत शहीदों के रक्त से सींचा गया है। यह एक ऐसा गौरव है जिसकी अधिकारिणी न केवल चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता हैं बल्कि तमाम दुनिया की कम्युनिस्ट पार्टियां और जनता भी हैं। तमाम दुनिया में सर्वहारा वर्ग और मेहनतकश जनता की ऐसी तीन ही सेनाएं हैं जिनका नेतृत्व सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और स्पेनी कम्युनिस्ट पार्टी करती हैं। अन्य देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों के पास अब तक कोई फौजी अनुभव नहीं है। इसलिए हमारी सेना और हमारा फौजी अनुभव और भी अधिक मूल्यवान हैं।

वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को विजयी बनाने के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि आठवीं राह सेना, नई चौथी सेना और हमारी पार्टी के नेतृत्व में चलने वाले तमाम छापामार दस्तों को और अधिक बढ़ाया व मजबूत किया जाए। इस उसूल के आधार पर पार्टी को चाहिए कि वह अपने बेहतरीन सदस्यों और

कार्यकर्ताओं को काफी तादाद में मोर्चे पर भेजे। हर चीज मोर्चे पर विजय प्राप्त करने के लिए की जानी चाहिए और संगठनात्मक कार्य को राजनीतिक कार्य के अधीन चलाया जाना चाहिए।

४. गृहयुद्ध और राष्ट्रीय युद्ध के दौरान पार्टी की फौजी रणनीति में होने वाले परिवर्तन

हमारी पार्टी की फौजी रणनीति में होने वाले परिवर्तन अध्ययन करने लायक हैं। अब हम गृहयुद्ध और राष्ट्रीय युद्ध, इन दोनों प्रक्रियाओं पर अलग-अलग विचार करते हैं।

गृहयुद्ध को मोटे तौर पर दो रणनीतिक कालों में बांटा जा सकता है। प्रथम काल में मुख्य रूप से छापामार युद्ध था जबकि बाद वाले काल में मुख्य रूप से नियमित युद्ध था। लेकिन यह नियमित युद्ध चीनी किस्म का था, जो चलायमान लड़ाई में फौजों के एकत्रीकरण, और एक हद तक कमान तथा संगठन के केन्द्रीकरण और नियोजन के रूप में प्रतिबिम्बित होता था ; दूसरे पहलुओं में उसका स्वरूप तब भी छापामार युद्ध जैसा और एक नियमित युद्ध के रूप में निचले स्तर का था। उसे हम किसी भी मायने में उस प्रकार का युद्ध नहीं कह सकते थे जो विदेशी फौजों द्वारा चलाया जाता है। कुछ अर्थों में तो वह क्वोमिन्ताङ सेना द्वारा चलाए जाने वाले युद्ध से भी भिन्न था। इस प्रकार, एक अर्थ में इस तरह का नियमित युद्ध केवल ऊंचे स्तर का छापामार युद्ध ही था।

जहां तक हमारी पार्टी के फौजी कार्यों का सम्बन्ध है, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को भी मोटे तौर पर दो रणनीतिक कालों में

बांटा जा सकता है। प्रथम काल में (जिसमें रणनीतिक रक्षा और रणनीतिक ठहराव की मंजिलें शामिल हैं) मुख्य रूप से छापामार युद्ध है, जबकि बाद के काल में (रणनीतिक प्रत्याक्रमण की मंजिल में) मुख्य रूप से नियमित युद्ध होगा। तो भी, अन्तर्वस्तु की दृष्टि से जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के प्रथम काल का छापामार युद्ध काफी हद तक उस छापामार युद्ध से भिन्न है जो गृहयुद्ध के प्रथम काल में होता था, क्योंकि अब नियमित (कुछ हद तक नियमित) आठवीं राह सेना जगह-जगह बिखरकर छापामारों का कार्य कर रही है। इसी प्रकार जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में बाद के काल का नियमित युद्ध भी गृहयुद्ध के बाद वाले काल से भिन्न होगा, क्योंकि हम अनुमान कर सकते हैं कि आधुनिक साज-सामान से लैस होने के बाद हमारी सेना और उसकी कार्यवाहियों में बड़ा परिवर्तन आ जाएगा। तब सेना में ऊंचे दर्जे का केन्द्रीकरण और संगठन हो जाएगा, तथा उसकी कार्यवाहियों में छापामार स्वरूप बहुत कम हो जाएगा और ये कार्यवाहियां ऊंचे दर्जे की नियमित कार्यवाहियों का रूप धारण कर लेंगी ; जो युद्ध आज नीचे स्तर पर है, उसे ऊंचे स्तर पर पहुंचा दिया जाएगा और चीनी किस्म का नियमित युद्ध सामान्य किस्म के नियमित युद्ध में बदल जाएगा। रणनीतिक प्रत्याक्रमण की मंजिल में हमारा यही काम होगा।

इस प्रकार हमने देखा कि इन दोनों प्रक्रियाओं, यानी गृहयुद्ध और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान, तथा रणनीति के चारों कालों के दौरान तीन रणनीतिक परिवर्तन होते हैं। पहला है गृहयुद्ध काल के छापामार युद्ध से नियमित युद्ध में परिवर्तन। दूसरा है गृहयुद्ध काल के नियमित युद्ध से जापानी-आक्रमण-

विरोधी युद्ध काल के छापामार युद्ध में परिवर्तन। और तीसरा है जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध काल के छापामार युद्ध से नियमित युद्ध में परिवर्तन।

इन तीनों में से पहला परिवर्तन लाने में हमें बड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ा था। हमारे सामने दो तरह के काम थे। एक ओर तो हमें स्थानीयतावाद और छापामारवाद की दक्षिणपंथी प्रवृत्ति का मुकाबला करना था, जो छापामार आदतों से चिपके रहने पर जोर देती थी और नियमितता की ओर बढ़ने से इनकार करती थी, तथा एक ऐसी प्रवृत्ति थी जो हमारे कार्यकर्ताओं द्वारा दुश्मन की स्थिति में हुए परिवर्तनों और अपने बदले हुए कामों का समुचित मूल्यांकन न किए जाने के फलस्वरूप पैदा हो गई थी। केन्द्रीय लाल इलाके में इस प्रवृत्ति को बेहद परिश्रमपूर्ण शिक्षा के बाद कदम-ब-कदम दूर किया जा सका। दूसरी ओर हमें अति-केन्द्रीकरण और दुस्साहसवाद की "वामपंथी" प्रवृत्ति का भी विरोध करना पड़ा था, जो नियमितता पर अत्यधिक जोर देती थी। यह प्रवृत्ति इस कारण पैदा हुई थी कि कुछ नेतृत्वकारी कार्यकर्ताओं ने दुश्मन की ताकत को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर आंका था, अपने सामने बड़े-बड़े काम निर्धारित कर लिए थे और चीन की वास्तविक परिस्थितियों को नजरअन्दाज करके विदेशी अनुभवों को यांत्रिक रूप से लागू किया था। केन्द्रीय लाल इलाके में इस प्रवृत्ति के कारण हमें तीन वर्षों के लम्बे अरसे में (चुनई मीटिंग के पहले) बेहद भारी बलिदान देना पड़ा और इस प्रवृत्ति को सिर्फ तभी दूर किया जा सका जब हमने अपना रक्त बहाने के बाद सबक हासिल कर लिए। यह सुधार चुनई मीटिंग की उपलब्धि थी।

दूसरा रणनीतिक परिवर्तन १९३७ के शरद में (लूकओछ्याओ घटना के बाद), दो भिन्न प्रकार के युद्धों के सन्धि-काल में हुआ। उस समय जापानी साम्राज्यवाद हमारा नया दुश्मन था और हमारा पुराना दुश्मन क्वोमिन्ताङ (जिसके दिल में अभी भी हमारे खिलाफ शत्रुता मौजूद थी) हमारा संश्रयकारी बन गया था, और लड़ाई का मोर्चा उत्तरी चीन का विशाल क्षेत्र था (जो हमारी सेना का अस्थाई मोर्चा था और शीघ्र ही बहुत लम्बे अरसे के लिए दुश्मन का पृष्ठ-भाग बनने वाला था)। इन असाधारण परिस्थितियों में होने वाला हमारा यह रणनीतिक परिवर्तन एक अत्यधिक गम्भीर परिवर्तन था। इन असाधारण परिस्थितियों में हमें अपनी पहले की नियमित सेना को छापामार फौजों में (बिखरकर अलग-अलग जत्थों में कार्यवाही करने की दृष्टि से, न कि संगठन और अनुशासन की दृष्टि से) बदलना पड़ा तथा चलायमान लड़ाई को छापामार लड़ाई में बदलना पड़ा, ताकि हम अपने आपको अपने सामने मौजूद दुश्मन का मुकाबला करने योग्य और अपने सामने मौजूद कार्यों को पूरा करने योग्य बना सकें। लेकिन ऐसा परिवर्तन ऊपर से देखने में हर दृष्टि से पीछे हटना प्रतीत होता था और इसलिए इसे लाना अनिवार्य रूप से बहुत ही कठिन था। ऐसे मौके पर दुश्मन को कम करके आंकने और जापान से दहशत खाने इन दोनों प्रवृत्तियों के पैदा होने की सम्भावना होती है, और क्वोमिन्ताङ में दरअसल ये प्रवृत्तियां पैदा भी हो गई। जब क्वोमिन्ताङ ने गृहयुद्ध की रणभूमि से हटकर राष्ट्रीय युद्ध की रणभूमि में पांव रखा, तो मुख्य रूप से दुश्मन को कम करके आंकने और साथ ही जापान से दहशत खाने की प्रवृत्तियों के कारण

(जिनका प्रतिनिधित्व हान फ़ू-च्वी और ल्यू च[१७] करते थे) उसे अनेक अनावश्यक नुकसान उठाने पड़े। दूसरी तरफ हमने यह परिवर्तन काफी हद तक आसानी से कर लिया, तथा न सिर्फ अपने आपको नुकसान से बचा लिया बल्कि बड़ी विजयें भी हासिल कीं। ये विजयें इसलिए प्राप्त हो सकीं, क्योंकि हमारे व्यापक कार्यकर्ताओं ने ठीक समय पर केन्द्रीय कमेटी के सही मार्गदर्शन को मान लिया और बड़ी निपुणता के साथ वास्तविक स्थिति का निरीक्षण किया, गोकि उस समय केन्द्रीय कमेटी और कुछ फौजी कार्यकर्ताओं के बीच गम्भीर बहस छिड़ गई थी। यदि हम चीन के राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष के भविष्य के सम्बन्ध में जापान-विरोधी छापामार युद्ध के ऐतिहासिक महत्व पर विचार करें, तो हम समूचे जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को अविचल रूप से जारी रखने, उसे आगे बढ़ाने और उसमें जीत हासिल करने पर तथा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के भविष्य पर इस परिवर्तन के अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रभाव को मालूम कर सकते हैं। अपने असाधारण विस्तार और अपनी असाधारण दीर्घकालीनता की वजह से चीन का जापान-विरोधी छापामार युद्ध न सिर्फ पूरब में, बल्कि शायद मनुष्य जाति के पूरे इतिहास में अभूतपूर्व है।

जहां तक जापान-विरोधी छापामार युद्ध से आगे बढ़कर जापान-विरोधी नियमित युद्ध में पहुंचने की बात है, यह तीसरा परिवर्तन युद्ध के भावी विकास से सम्बन्धित है, जिसमें सम्भवतः नई परिस्थितियां और नई कठिनाइयां सामने आएंगी। इस समय इस बात की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है।

५. जापान-विरोधी छापामार युद्ध की रणनीतिक भूमिका

जहां तक सम्पूर्ण जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का सवाल है, नियमित युद्ध उसका मुख्य रूप और छापामार युद्ध उसका सहायक रूप है, क्योंकि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के भविष्य का अन्तिम फैसला केवल नियमित युद्ध से ही हो सकता है। समूचे देश में जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की सम्पूर्ण प्रक्रिया की तीन रणनीतिक मंजिलों (रक्षा, ठहराव और प्रत्याक्रमण की मंजिलों) में से पहली और अन्तिम मंजिलें ऐसी हैं जिनमें नियमित युद्ध का मुख्य स्थान और छापामार युद्ध का सहायक स्थान होता है। केवल बीच की मंजिल में, जबकि दुश्मन अपने अधिकृत इलाकों में जमे रहने का प्रयत्न करेगा और हम प्रत्याक्रमण करने की तैयारियां तो कर रहे होंगे लेकिन प्रत्याक्रमण करने में समर्थ नहीं होंगे, छापामार युद्ध मुख्य रूप में सामने आएगा और नियमित युद्ध उसके सहायक का काम अंजाम देगा। हालांकि यह हो सकता है कि इस मंजिल का काल सबसे लम्बा हो, फिर भी सम्पूर्ण युद्ध में यह तीन में से केवल एक मंजिल है। इसलिए जहां तक समूचे युद्ध का सवाल है, नियमित युद्ध का मुख्य स्थान और छापामार युद्ध का सहायक स्थान है। यदि हम इस बात को नहीं समझते, यदि हम यह नहीं जानते कि युद्ध का अन्तिम निर्णय नियमित युद्ध करेगा, और यदि हम नियमित सेना के निर्माण के काम को नजरअन्दाज करते हैं और नियमित लड़ाई के अध्ययन और निर्देशन को नजर-

अन्दाज करते हैं, तो हम जापान को हरा नहीं सकेंगे। यह परिस्थिति का एक पहलू है।

इसके बावजूद, पूरे युद्ध के दौरान छापामार युद्ध की एक महत्वपूर्ण रणनीतिक भूमिका है। छापामार युद्ध के बिना, और छापामार दस्ते व छापामार फौजें बनाने के काम पर तथा छापामार लड़ाई के अध्ययन और निर्देशन पर उचित ध्यान दिए बिना भी हम जापान को नहीं हरा सकेंगे। कारण यह कि चूंकि चीन का अधिकांश भाग दुश्मन का पृष्ठभाग बन जाएगा, इसलिए यदि अत्यन्त व्यापक व अविचल छापामार युद्ध नहीं चलाया जाता, तो दुश्मन बिना इस बात के भय के कि उस पर पृष्ठभाग से हमला हो सकता है, हमारी जमीन पर सुरक्षित रूप से पैर जमा लेगा, नियमित मोर्चे पर लड़ने वाली हमारी मुख्य सेनाओं को निश्चय ही भारी नुकसान उठाना पड़ेगा और दुश्मन हम पर अवश्य ही अधिकाधिक भीषण हमले करने लगेगा ; ऐसी स्थिति में ठहराव लाना मुश्किल हो जाएगा और प्रतिरोध-युद्ध को जारी रखने में बाधा पहुंचेगी। अगर ऐसा न भी हुआ, तो भी हमारे लिए ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियां पैदा हो जाएंगी, जैसे हमारे प्रत्याक्रमण की ताकत की पर्याप्त तैयारी न होना, प्रत्याक्रमण में सहायक कार्यवाहियों का अभाव होना, दुश्मन द्वारा अपना नुकसान पूरा कर लेने की सम्भावना होना आदि। यदि ऐसी परिस्थितियां पैदा हो जाती हैं, और उन्हें दूर करने के लिए ठीक समय पर व्यापक व अविचल छापामार युद्ध को आगे नहीं बढ़ाया जाता, तब भी हमारे लिए जापान को हरा सकना असम्भव हो जाएगा। गोकि समूचे युद्ध में छापामार युद्ध एक सहायक भूमिका अदा करता है, फिर भी रणनीति की दृष्टि से इसका बेहद महत्वपूर्ण

स्थान है। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध चलाते समय छापामार युद्ध को नजरअन्दाज करना निस्सन्देह एक गम्भीर गलती होगी। यह परिस्थिति का दूसरा पहलू है।

जहां कहीं भी एक बड़ा देश हो, वहां छापामार युद्ध सम्भव है; यही कारण है कि प्राचीन काल में भी छापामार युद्ध हुआ करते थे। लेकिन छापामार युद्ध सिर्फ तभी अविचल रूप से जारी रखा जा सकता है जब उसका नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी कर रही हो। यही कारण है कि प्राचीन युगों के छापामार युद्ध प्रायः असफल रहे हैं और केवल वर्तमान युग में ही उन बड़े देशों में, जहां कम्युनिस्ट पार्टियों का जन्म हो चुका है, उदाहरण के लिए गृहयुद्ध के दौरान सोवियत संघ में और वर्तमान काल में चीन में, छापामार युद्ध जीत हासिल कर सकते हैं। मौजूदा परिस्थिति और आम हालत को ध्यान में रखते हुए जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के सिलसिले में क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच युद्ध के कामों का बंटवारा कर लेना, जिसमें क्वोमिन्ताङ नियमित मोर्चे पर नियमित लड़ाई चलाए और कम्युनिस्ट पार्टी दुश्मन के पृष्ठभाग में छापामार लड़ाई चलाए, जरूरी और उचित है, तथा यह एक आपसी जरूरत, आपसी तालमेल और आपसी सहायता का मामला है।

इस प्रकार यह समझा जा सकता है कि हमारी पार्टी की फौजी रणनीति विषयक नीति को गृहयुद्ध के अन्तिम काल के नियमित युद्ध से जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के प्रथम काल के छापामार युद्ध में बदलना कितना महत्वपूर्ण और जरूरी है। इस परिवर्तन के अनुकूल परिणामों को सार रूप में इन अठारह मुद्दों में बताया जा सकता है :

(१) दुश्मन द्वारा अधिकृत क्षेत्रों को छोटा बनाना ;

(२) अपनी फौजों के आधार-क्षेत्रों को बढ़ाना ;

(३) रक्षा की मंजिल में, नियमित मोर्चे की कार्यवाहियों के साथ तालमेल कायम करना और दुश्मन को बांध देना ;

(४) ठहराव की मंजिल में, दुश्मन के पृष्ठभाग में मौजूद अपने आधार-क्षेत्रों में दृढ़ता से जमे रहना और नियमित मोर्चे की अपनी फौजों की ट्रेनिंग व पुनर्गठन के कार्य को आसान बनाना ;

(५) प्रत्याक्रमण की मंजिल में, खोए हुए प्रदेशों को फिर से प्राप्त करने के लिए नियमित मोर्चे से तालमेल कायम करना ;

(६) अत्यन्त तेजी के साथ और अत्यन्त कारगर तरीके से अपनी फौजों को बढ़ाना ;

(७) कम्युनिस्ट पार्टी को अत्यन्त व्यापक रूप में विकसित करना जिससे कि हरेक गांव में पार्टी-शाखा कायम हो सके ;

(८) जन-आन्दोलन को अत्यन्त व्यापक रूप में फैलाना जिससे कि दुश्मन के मजबूत अड्डों को छोड़कर उसके पृष्ठभाग की तमाम जनता को संगठित किया जा सके ;

(९) जितने बड़े क्षेत्र में सम्भव हो सके उतने बड़े क्षेत्र में जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता के संगठनों की स्थापना करना ;

(१०) जापान-विरोधी सांस्कृतिक और शैक्षणिक कार्यों का अत्यन्त व्यापक पैमाने पर विकास करना ;

(११) अधिकाधिक व्यापक रूप से जनता के रहन-सहन की हालत को सुधारना ;

(१२) दुश्मन की सेनाओं को अत्यन्त कारगर ढंग से छिन्न-भिन्न कर देना ;

(१३) ज्यादा से ज्यादा व्यापक व स्थाई रूप से देशभर के लोकमत पर असर डालना व देशभर के मनोबल को ऊंचा उठाना ;

(१४) अपनी तमाम मित्र-सेनाओं और मित्र-पार्टियों की प्रगति को ज्यादा से ज्यादा बढ़ावा देना ;

(१५) अपने को एक ऐसी स्थिति के अनुरूप ढाल लेना जिसमें दुश्मन मजबूत है और हम कमजोर, ताकि हमारा नुकसान कम से कम हो और हम ज्यादा से ज्यादा जीतें हासिल कर सकें ;

(१६) अपने को एक ऐसी स्थिति के अनुरूप ढाल लेना जिसमें हमारा देश बड़ा है और दुश्मन का देश छोटा, ताकि दुश्मन को ज्यादा से ज्यादा नुकसान पहुंचे और वह कम से कम जीतें हासिल कर सके ;

(१७) अत्यन्त तेजी के साथ और अत्यन्त कारगर ढंग से, बड़ी तादाद में नेतृत्वकारी कार्यकर्ताओं को शिक्षित करना ; और

(१८) रसद-सप्लाई की समस्या का बेहद कारगर तरीके से हल निकालना।

इस बात में भी कोई शक नहीं कि संघर्ष के लम्बे दौर में छापामार दस्ते और छापामार युद्ध ज्यों के त्यों नहीं रहेंगे बल्कि आगे की मंजिल की ओर बढ़ेंगे तथा कदम-ब-कदम नियमित सेना और नियमित युद्ध में बदलते जाएंगे। छापामार युद्ध के जरिए हम अपनी शक्ति संचित करेंगे और जापानी साम्राज्यवाद को तहस-नहस करने के लिए अपने आपको एक निर्णायक तत्व बना लेंगे।

६. फौजी समस्याओं के अध्ययन की तरफ ध्यान दो

दो शत्रुतापूर्ण फौजों से सम्बन्धित सभी समस्याओं का हल युद्ध पर निर्भर है और चीन का जीवन-मरण जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में उसकी जीत या हार पर निर्भर है। इसलिए फौजी सिद्धान्त, रणनीति और कार्यनीति तथा फौज के बीच राजनीतिक कार्य के अध्ययन में एक क्षण की भी देरी नहीं होनी चाहिए। यद्यपि कार्यनीति का हमारा अध्ययन अभी नाकाफी है, तो भी फौजी काम में लगे हुए साथियों ने पिछले दस वर्षों में अनेक सफलताएं प्राप्त की हैं और चीन के हालात के आधार पर अनेक नई खोजें की हैं; कमी सिर्फ यह रह गई है कि इन सब बातों का आम निचोड़ अभी निकाला नहीं गया। रणनीति की समस्याओं और युद्ध के सिद्धान्तों का अध्ययन अब तक केवल बहुत थोड़े लोगों ने किया है। राजनीतिक कार्य के अध्ययन में हमने अव्वल दर्जे के नतीजे हासिल किए हैं, जो अपने समृद्ध अनुभव और अधिक तादाद व बेहतरीन गुण वाली खोजों की दृष्टि से सोवियत संघ को छोड़कर किसी भी देश से आगे हैं; लेकिन यहां भी कमी इस बात की है कि हम पर्याप्त संश्लेषण और व्यवस्थापन नहीं कर पाए हैं। समूची पार्टी और समूचे देश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए फौजी ज्ञान को जनता तक पहुंचाना एक जरूरी और फौरी काम है। अब हमें इन सब बातों की ओर ध्यान देना चाहिए, तथा युद्ध और रणनीति के सिद्धान्त की ओर सबसे ज्यादा ध्यान देना चाहिए। मैं इसे जरूरी समझता हूं कि हम फौजी सिद्धान्त के अध्ययन में दिलचस्पी पैदा करें तथा सभी पार्टी-सदस्यों का ध्यान फौजी मामलों के अध्ययन की ओर आकर्षित करें।

नोट

१ देखिए : वी० आई० लेनिन, "युद्ध और रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टी", "रूसी सामाजिक-जनवादी श्रमिक पार्टी के विदेश स्थित ग्रुपों का सम्मेलन", "साम्राज्यवादी युद्ध में अपनी सरकार की पराजय", "रूस की पराजय और क्रान्तिकारी संकट"। इन लेखों में, जिन्हें १६१४-१५ में लिखा गया था, उस समय के साम्राज्यवादी युद्ध की विशेष रूप से चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त देखिए : "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) का इतिहास, संक्षिप्त कोर्स", अध्याय ६, परिच्छेद ३, "युद्ध, शान्ति और क्रान्ति के बारे में बोलशेविक पार्टी के सिद्धान्त और कार्यनीतियां"।

२ डा० सुन यात-सेन ने १६२४ में कम्युनिस्ट पार्टी तथा क्रान्तिकारी मजदूरों व किसानों के सहयोग से "सौदागरों की सेना" को परास्त किया था। यह सेना दलाल-पूंजीपतियों और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों की हथियारबन्द सेना थी जो बरतानवी साम्राज्यवादियों की सांठगांठ से क्वाङचओ में प्रतिक्रान्तिकारी कार्यवाहियां करती थी। क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के सहयोग के आधार पर निर्मित क्रान्तिकारी सेना १६२५ के प्रारम्भ में क्वाङचओ से पूर्वी अभियान के लिए निकल पड़ी और किसानों के सहयोग से उसने युद्ध-सरदार छन च्युङ-मिङ की फौजों को परास्त कर दिया। फिर वह क्वाङचओ वापस लौट आई और उसने युन्नान और क्वाङशी के युद्ध-सरदारों का तख्ता उलट दिया, जिन्होंने वहां अपने पैर जमा लिए थे। इसी साल शरद में क्रान्तिकारी सेना दूसरे पूर्वी अभियान पर निकली और उसने छन च्युङ-मिङ की सेनाओं का अन्तिम रूप से सफाया कर दिया। कम्युनिस्ट पार्टी और कम्युनिस्ट नौजवान संघ के सदस्य इन अभियानों में वीरता के साथ अगली कतारों पर डटे रहे। इन अभियानों के फलस्वरूप क्वाङतुङ प्रान्त का राजनीतिक एकीकरण हो गया तथा उत्तरी अभियान के लिए आधार तैयार हो गया।

३ जे० वी० स्तालिन, "चीन में क्रान्ति का भविष्य"।

४ डा० सुन यात-सेन ने १८६४ में होनोलुलु में "शिङ चुङ ह्वेइ" (चीन पुन-

रुद्धार संघ) नाम से एक छोटा सा क्रान्तिकारी संगठन कायम किया था। गुप्त जन-संस्थाओं की सहायता से डा० सुन यात-सेन ने क्वाङतुङ में छिङ सरकार के खिलाफ दो बार हथियारबन्द विद्रोह कराया था : एक तो १८९५ में क्वाङचओ में और दूसरा १९०० में ह्वेइचओ में। ये दोनों विद्रोह १८९५ में चीन-जापान युद्ध में छिङ सरकार की हार के बाद हुए थे।

[५] "थुङ मङ ह्वेइ" या चीनी क्रान्तिकारी लीग (पूंजीपति वर्ग, निम्न-पूंजीपति वर्ग और छिङ सरकार के विरोधी भूस्वामी शरीफजादों के एक अंश का संयुक्त मोर्चा संगठन) की स्थापना १९०५ में "शिङ चुङ ह्वेइ" और दो अन्य दलों–"ह्वा शिङ ह्वेइ" (चीन पुनरुद्धार सोसाइटी) तथा "क्वाङ फू ह्वेइ" (विदेशी जुआ उतार फेंकने के लिए संगठित सोसाइटी) – को मिलाकर की गई थी। इसने पूंजीवादी क्रान्ति का कार्यक्रम पेश करते हुए इन मांगों को बुलन्द किया था : "तातारों को खदेड़ बाहर किया जाए, चीन की पुनर्स्थापना की जाए, गणराज्य की स्थापना की जाए और जमीन की मिलकियत का समानीकरण किया जाए।" चीनी क्रान्तिकारी लीग के काल में डा० सुन यात-सेन ने गुप्त संस्थाओं और छिङ सरकार की "नई सेना" के सहयोग से छिङ सरकार के खिलाफ अनेक हथियारबन्द विद्रोह कराए। इन स्थानों में हुए हथियारबन्द विद्रोह मशहूर थे : १९०६ में फिङश्याङ, ल्यूयाङ और लीलिङ में; १९०७ में छाऊचओ के ह्वाङकाङ, छिनचओ और चननानक्वान (वर्तमान यओईक्वान – अनु०) में; १९०८ में युन्नान के होखओ में; १९११ में क्वाङचओ में और ऊछाङ में।

[६] १९१२ में चीनी क्रान्तिकारी लीग का क्वोमिन्ताङ के रूप में पुनर्गठन किया गया, जिसने य्वान श-खाए की अगुवाई में चलने वाले उत्तरी युद्ध-सरदारों के शासन के साथ समझौता कर लिया। १९१३ में य्वान की फौजों ने च्याङशी, आनह्वेइ और क्वाङतुङ प्रान्तों में १९११ की क्रान्ति के दौरान उदित शक्तियों का दमन करने के लिए दक्षिण की ओर कूच कर दिया। डा० सुन यात-सेन ने उसका सशस्त्र प्रतिरोध किया। लेकिन वे जल्दी ही हार गए। १९१४ में, क्वोमिन्ताङ की समझौतावादी नीति की गलती को अनुभव करने के बाद डा० सुन यात-सेन ने जापान के टोकियो में "चुङह्वा कमिङ ताङ" (चीनी क्रान्तिकारी पार्टी) की स्थापना की और इस प्रकार अपने संगठन और उस जमाने की क्वो-

मिन्ताङ के बीच फर्क करने की कोशिश की। यह पार्टी दरअसल निम्न-पूंजीपति वर्ग के एक भाग और पूंजीपति वर्ग के एक भाग के राजनीतिक प्रतिनिधियों द्वारा य्वान श-खाए के खिलाफ कायम किया गया एक संश्रय था। इस संश्रय के जरिए डा० सुन यात-सेन ने १९१४ में शांघाई में एक छोटा विद्रोह कर दिया। १९१५ में जब य्वान श-खाए ने अपने आपको सम्राट घोषित कर दिया, तो छाए अ और अन्य लोग उसके खिलाफ कार्यवाही करने के लिए युन्नान से चल पड़े, तथा डा० सुन ने भी य्वान श-खाए का सशस्त्र प्रतिरोध करने की पैरवी करने और इस कार्य को आगे बढ़ाने में सक्रियता से काम किया।

[७] १९१७ में डा० सुन यात-सेन एक नौसैनिक फौज को लेकर, जो उनके असर में थी, शांघाई से क्वाङचओ पहुंच गए। क्वाङतुङ को आधार-क्षेत्र बनाकर तथा उत्तरी युद्ध-सरदार त्वान छी-रुइ के विरोधी दक्षिण-पश्चिमी युद्ध-सरदारों के सहयोग से उन्होंने त्वान छी-रुइ के खिलाफ एक फौजी सरकार कायम कर ली।

[८] १९२१ में डा० सुन यात-सेन ने क्वाङशी के क्वेइलिन नामक स्थान से उत्तरी अभियान शुरू करने की योजना बनाई। लेकिन उनके मातहत काम करने वाले छन च्युङ-मिङ द्वारा, जो उत्तरी युद्ध-सरदारों से मिला हुआ था, बगावत किए जाने के कारण उनकी यह योजना कामयाब नहीं हो सकी।

[९] १९२४ में, डा० सुन यात-सेन ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत संघ की सहायता से, क्वोमिन्ताङ का पुनर्गठन करने के बाद क्वाङचओ के निकट ह्वाङफू में ह्वाङफू फौजी अकादमी की स्थापना की। १९२७ में च्याङ काई-शेक द्वारा की गई प्रतिक्रान्ति से पहले उसका संचालन क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी मिलकर करती थीं। चओ ऐन-लाइ, ये च्येन-इङ, युन ताए-इङ, श्याओ छू-न्वी और अन्य कम्युनिस्टों ने किसी न किसी समय इस अकादमी में जिम्मेदारी के पदों पर कार्य किया था। अकादमी में बहुत से विद्यार्थी भी कम्युनिस्ट पार्टी या कम्युनिस्ट नौजवान संघ के सदस्य थे, जो इस अकादमी के क्रान्तिकारी मेरुदण्ड थे।

[१०] थान येन-खाए हुनान का रहने वाला था। वह एक "हानलिन" यानी छिङ वंश के विद्वानों की सरकारी परिषद का सदस्य था। पहले उसने वैधानिक राजतंत्रवाद की पैरवी की और बाद में उसने सट्टेबाजी का रवैया अपनाते हुए १९११ की क्रान्ति में भाग लिया। उसके द्वारा बाद में क्वोमिन्ताङ का पक्षपोषण

किए जाने से हूनान के जमींदारों और उत्तरी युद्ध-सरदारों के बीच का अन्तर-विरोध जाहिर होता था।

[११] प्रगतिशील पार्टी का संगठन ल्याङ छी-छाओ और अन्य लोगों ने गणराज्य के प्रारम्भिक वर्षों में य्वान श-खाए के समर्थन में किया था।

[१२] त्वान छी-रुइ य्वान श-खाए के मातहत था और वह उत्तरी युद्ध-सरदारों के आनह्वेइ गुट का मुखिया था। य्वान की मृत्यु के बाद उसने एक से अधिक बार पेकिङ सरकार पर कब्जा जमाया।

[१३] अत्यन्त दक्षिणपंथी राजनीति-विज्ञान ग्रुप की स्थापना १६१६ में प्रगतिशील पार्टी के एक भाग और क्वोमिन्ताङ के एक भाग द्वारा की गई थी। उसने कभी तो दक्षिणी युद्ध-सरदारों और कभी उत्तरी युद्ध-सरदारों से सौदेबाजी करके सरकारी पदों को हथियाने की कोशिश की। १६२६-२७ के उत्तरी अभियान के दौरान, उसके जापान-परस्त सदस्यों, जैसे ह्वाङ फू, चाङ छ्युन और याङ युङ-थाए ने च्याङ काई-शेक के साथ सांटगांठ शुरू कर दी तथा अपने प्रतिक्रियावादी राजनीतिक अनुभव का इस्तेमाल करके उसे एक प्रतिक्रान्तिकारी शासन की स्थापना करने में मदद दी।

[१४] नौजवान पार्टी राजसत्तावादियों की चीनी नौजवान पार्टी भी कहलाती है। देखिए: "चीनी समाज में वर्गों का विश्लेषण", नोट १ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

[१५] यहां मुख्य रूप से जनरल ये थिङ, जो एक कम्युनिस्ट थे, की कमान में उत्तरी अभियान के दौरान चलने वाली एक स्वतंत्र रेजीमेन्ट का उल्लेख किया गया है। देखिए: "चिङकाङशान पहाड़ों में संघर्ष", नोट १५ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

[१६] देखिए: "चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं", ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

[१७] हान फू-च्वी शानतुङ प्रान्त में तैनात एक क्वोमिन्ताङ युद्ध-सरदार था। ल्यू च एक अन्य युद्ध-सरदार था, जिसके हाथ में हनान प्रान्त में च्याङ काई-शेक की व्यक्तिगत फौज की कमान थी और जिस पर जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध छिड़ने के बाद हपे प्रान्त के पाओतिङ क्षेत्र की रक्षा करने की जिम्मेदारी थी। ये दोनों ही जापानी हमलावरों पर एक भी गोली दागे बिना मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए।

४ मई आन्दोलन

मई १९३९

बीस वर्ष पहले का ४ मई आन्दोलन चीन में साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के विरुद्ध पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की एक नई मंजिल का द्योतक था। सांस्कृतिक सुधार आन्दोलन, जिसके रूप में ४ मई आन्दोलन चलाया गया, केवल इसी क्रान्ति की एक अभिव्यक्ति था। उस दौर में नई सामाजिक शक्तियों के उदय और विकास से चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति में एक शक्तिशाली शिविर प्रकट हुआ, जिसमें मजदूर वर्ग, विद्यार्थी समुदाय और नवोदित राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग शामिल थे। ४ मई आन्दोलन के समय लाखों विद्यार्थियों ने बड़ी बहादुरी के साथ हिरावल दस्ते में अपनी जगह सम्भाल ली। इन मामलों में ४ मई आन्दोलन १९११ की क्रान्ति से भी एक कदम आगे बढ़ गया।

चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के पिछले इतिहास को देखते हुए, अगर हम उसके उदय-काल तक जा पहुंचें तो हम देखेंगे कि यह क्रान्ति अपने विकास की कई मंजिलों से होकर गुजरी है और ये मंजिलें हैं: अफीम युद्ध, थाइफिङ स्वर्गिक-राज्य युद्ध, १८९४

---

* यह निबन्ध कामरेड माओ त्सेतुङ ने ४ मई आन्दोलन की बीसवीं जयन्ती के उपलक्ष में येनान के समाचारपत्रों के लिए लिखा था।

का चीन-जापान युद्ध,[१] १८९८ का सुधारवादी आन्दोलन, ई हो थ्वान आन्दोलन, १९११ की क्रान्ति, ४ मई आन्दोलन, उत्तरी अभियान और भूमि-क्रान्ति युद्ध। आज का जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध इसी क्रान्ति के विकास की एक अन्य नई मंजिल है और यह एक सबसे महान, सबसे सजीव और सबसे क्रियाशील मंजिल है। पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति को सिर्फ तभी सफल माना जा सकता है जब विदेशी साम्राज्यवाद और देशी सामन्तवाद की शक्तियों को बुनियादी तौर पर उखाड़ फेंका जा चुका हो और एक स्वाधीन जनवादी राज्य की स्थापना की जा चुकी हो। अफीम युद्ध की मंजिल से लेकर इस क्रान्ति के विकास की हर मंजिल की अपनी विशिष्टताएं रही हैं। लेकिन उनके बीच फर्क करने वाली सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे कम्युनिस्ट पार्टी के आविर्भाव के पहले गुजर चुकी हैं या बाद में गुजरी हैं। फिर भी, अगर समग्र रूप से देखा जाए तो ये सभी मंजिलें अपने स्वरूप में पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की ही मंजिलें हैं। इस जनवादी क्रान्ति का लक्ष्य एक ऐसी समाज-व्यवस्था कायम करना है जैसी चीन के इतिहास में पहले कभी नहीं रही, यानी एक ऐसी जनवादी समाज-व्यवस्था कायम करना जिसके ठीक पहले की समाज-व्यवस्था एक सामन्ती समाज-व्यवस्था (पिछले सौ वर्ष के दौरान एक अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज-व्यवस्था) रही है और जिसके ठीक बाद की समाज-व्यवस्था एक समाजवादी समाज-व्यवस्था बनने जा रही है। अगर कोई यह पूछे कि एक कम्युनिस्ट को क्यों पहले पूंजीवादी-जनवादी समाज-व्यवस्था और फिर समाजवादी समाज-व्यवस्था कायम करने के लिए संघर्ष करना चाहिए, तो हमारा जवाब है : हम इतिहास के अनिवार्य

पथ का ही अनुसरण कर रहे हैं।

चीन की जनवादी क्रान्ति का सम्पन्न होना कुछ निश्चित सामाजिक शक्तियों पर निर्भर है। ये सामाजिक शक्तियां हैं मजदूर वर्ग, किसान वर्ग, बुद्धिजीवी समुदाय, और पूंजीपति वर्ग के प्रगतिशील तबके, यानी क्रान्तिकारी मजदूर, किसान, सैनिक, बुद्धिजीवी और व्यापारी, जिनमें मजदूर और किसान बुनियादी क्रान्तिकारी शक्तियां हैं और मजदूर वर्ग क्रान्ति का नेतृत्वकारी वर्ग है। इन बुनियादी क्रान्तिकारी शक्तियों के बिना और मजदूर वर्ग के नेतृत्व के बिना इस साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी जनवादी क्रान्ति को सम्पन्न करना असम्भव है। आज, क्रान्ति के प्रमुख शत्रु हैं जापानी साम्राज्यवाद और चीनी देशद्रोही, तथा क्रान्ति की बुनियादी नीति है उस जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति जिसमें सभी जापान-विरोधी मजदूर, किसान, सैनिक, बुद्धिजीवी और व्यापारी शामिल हैं। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में हमारी अन्तिम विजय तब होगी जब यह संयुक्त मोर्चा अत्यन्त सुदृढ़ और विकसित हो जाएगा।

चीन के जनवादी क्रान्तिकारी आन्दोलन में सबसे पहले बुद्धिजीवी ही जागे थे। यह बात १९११ की क्रान्ति और ४ मई आन्दोलन दोनों में बहुत साफ तौर पर दिखाई दी, तथा ४ मई आन्दोलन के दिनों में बुद्धिजीवी १९११ की क्रान्ति के दिनों की अपेक्षा संख्या में अधिक थे और राजनीतिक तौर पर अधिक चेतनाशील थे। लेकिन अगर बुद्धिजीवी लोग मजदूरों और किसानों के साथ घुल-मिल कर बिलकुल एकरूप नहीं हो जाते तो वे कुछ भी नहीं कर पाएंगे। क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों तथा गैर-क्रान्तिकारी और प्रतिक्रान्ति-

कारी बुद्धिजीवियों के बीच की अन्तिम विभाजन-रेखा यह है कि वे मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ घुलमिल कर एक हो जाने को तैयार हैं या नहीं, और वे अमल में ऐसा करते हैं या नहीं। उन लोगों के बीच की अन्तिम विभाजन-रेखा केवल यही है, न कि तीन जन-सिद्धान्तों या मार्क्सवाद में केवल मौखिक आस्था प्रकट करना। सच्चा क्रान्तिकारी वही है जो मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ घुलमिल कर एक हो जाने को तैयार हो और अमल में ऐसा करता हो।

४ मई आन्दोलन को अब बीस वर्ष हो चुके हैं और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को छिड़े करीब दो वर्ष होने वाले हैं। समूचे देश के नौजवानों और सांस्कृतिक जगत के लोगों को जनवादी क्रान्ति और जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के प्रति भारी जिम्मेदारी निभानी है। मुझे आशा है कि वे लोग चीनी क्रान्ति के स्वरूप और उसकी प्रेरक शक्तियों को समझ लेंगे, अपने काम को मजदूर-किसानों के जन-समुदाय का हित-साधक बना लेंगे, खुद मजदूर-किसानों के जन-समुदाय के बीच जाएंगे और उनके बीच प्रचारक और संगठन-कर्ता बन जाएंगे। जिस दिन समूची जनता जापान के खिलाफ उठ खड़ी होगी, उस दिन जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की जीत हो जाएगी। पूरे देश के नौजवानो, काम में जुट जाओ!

नोट

१ यह युद्ध जापान द्वारा कोरिया पर आक्रमण करने और चीन की जल-थल सेनाओं को फौजी उकसावे देने के फलस्वरूप छेड़ा गया था। इस युद्ध में चीनी सेना बड़ी बहादुरी से लड़ी। लेकिन छिङ सरकार के भ्रष्टाचार की वजह से और प्रतिरोध की तैयारी में दृढ़ता के अभाव के कारण चीन को हार का सामना करना पड़ा। परिणामस्वरूप छिङ सरकार ने जापान के साथ शर्मनाक शिमोनोसेकी सन्धि की।

नौजवान आन्दोलन की दिशा*

४ मई १९३९

आज ४ मई आन्दोलन की बीसवीं जयन्ती है और येनान के हमारे सब नौजवान इस स्मृति-सभा के लिए यहां इकट्ठे हुए हैं। इस अवसर पर मैं चीनी नौजवान आन्दोलन की दिशा से सम्बन्धित कुछ सवालों के बारे में बताऊंगा।

पहले, ४ मई को अब चीनी नौजवान दिवस घोषित किया गया है और यह बिलकुल ठीक है।[1] ४ मई आन्दोलन से अब तक बीस साल हो गए हैं, मगर इस साल कहीं जाकर इसे राष्ट्रीय नौजवान दिवस घोषित किया गया है, और इस बात का भारी महत्व है। कारण, इससे यह जाहिर होता है कि हमारे देश में जनता की साम्राज्य-वाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी जनवादी क्रान्ति जल्दी ही एक मोड़ पर पहुंच जाएगी। कई दशाब्दियों से यह क्रान्ति बार-बार असफल रही है, लेकिन अब एक परिवर्तन होना चाहिए, विजय की ओर ले जाने वाला परिवर्तन होना चाहिए, न कि फिर असफलता

---

* यह भाषण कामरेड माओ त्सेतुङ ने येनान के नौजवानों द्वारा ४ मई आन्दोलन की बीसवीं जयन्ती के उपलक्ष में आयोजित स्मृति-सभा में दिया था। इस भाषण में कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी क्रान्ति के सवाल के बारे में अपने विचारों का विकास किया।

की ओर ले जाने वाला। अब चीनी क्रान्ति आगे बढ़ रही है और विजय की ओर आगे बढ़ रही है। अतीत में बार-बार हार खाने की हालत को अब जारी नहीं रहने देना चाहिए और उसे हरगिज जारी नहीं रहने दिया जा सकता, बल्कि उसे विजय की ओर मोड़ देना चाहिए। लेकिन क्या अब क्रान्ति का मोड़ आ चुका है? नहीं। यह मोड़ अभी नहीं आया, हमारी विजय अभी नहीं हुई। लेकिन विजय प्राप्त की जा सकती है। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में हम ठीक उस मोड़ पर पहुंचने की कोशिश कर रहे हैं जहां से हार को विजय की ओर मोड़ा जा सके। ४ मई आन्दोलन को देश को बेचने वाली सरकार, साम्राज्यवादियों से सांठगांठ करके राष्ट्रीय हितों को बेचने वाली सरकार और जनता पर अत्याचार करने वाली सरकार के खिलाफ छेड़ा गया था। क्या ऐसी सरकार का विरोध करना चाहिए या नहीं? अगर नहीं, तो ४ मई आन्दोलन गलत था। यह बिलकुल साफ है कि ऐसी सरकार का जरूर विरोध करना चाहिए और देश को बेचने वाली सरकार का तख्ता उलट देना चाहिए। जरा आप ही देखिए, ४ मई आन्दोलन के बहुत पहले ही डा० सुन यात-सेन ने तत्कालीन सरकार के खिलाफ विद्रोह का झण्डा बुलन्द कर दिया था, उन्होंने छिङ सरकार का विरोध किया था और उसे उलट दिया था। क्या उन्होंने ठीक किया था या नहीं? मैं समझता हूं कि बिलकुल ठीक किया था। क्योंकि उन्होंने साम्राज्यवाद का विरोध करने वाली सरकार का नहीं, बल्कि उससे सांठगांठ करने वाली सरकार का विरोध किया था; उन्होंने क्रान्तिकारी सरकार का नहीं, बल्कि क्रान्ति को दबाने वाली सरकार का विरोध किया था। ४ मई आन्दोलन ने दरअसल देश को बेचने वाली

सरकार का विरोध किया था, इसलिए वह एक क्रान्तिकारी आन्दोलन था। सारे चीन के नौजवानों को चाहिए कि वे ४ मई आन्दोलन को इसी दृष्टि से देखें। आज, जबकि सारे देश की जनता जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए जोरों से उठ खड़ी हुई है, पिछली क्रान्ति की हारों के तजरबों को ध्यान में रखते हुए सब लोगों ने जापानी साम्राज्यवाद को अवश्य पराजित करने का दृढ़ संकल्प किया है तथा अब वे वतनफरोशों को बिलकुल बरदाश्त नहीं करेंगे, और न ही क्रान्ति को फिर से असफल होने देंगे। कुछ लोगों को छोड़कर सारे देश के नौजवान जागृत हो गए हैं तथा उनके अन्दर विजय प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प मौजूद है, और यह बात ४ मई को नौजवान दिवस घोषित करने से जाहिर होती है। हम विजय के रास्ते पर आगे बढ़ रहे हैं और अगर सारे देश की जनता मिलकर कोशिश करे, तो चीनी क्रान्ति जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान अवश्य ही विजय प्राप्त कर लेगी।

दूसरे, चीनी क्रान्ति किसका विरोध करती है? क्रान्ति के निशाने क्या हैं? सब लोग जानते हैं कि एक तो साम्राज्यवाद है और दूसरा सामन्तवाद। आज क्रान्ति के निशाने क्या हैं? एक तो जापानी साम्राज्यवाद है और दूसरा उसके चीनी पिट्ठू। क्रान्ति करने के लिए जापानी साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंकना और उसके चीनी पिट्ठुओं को खत्म करना बहुत जरूरी है। क्रान्ति चलाने वाले कौन हैं? क्रान्ति की मुख्य शक्ति क्या है? वे चीन के आम लोग ही हैं। क्रान्ति की प्रेरक शक्तियां सर्वहारा वर्ग और किसान वर्ग हैं तथा अन्य वर्गों के वे सभी लोग हैं जो साम्राज्यवाद और सामन्तवाद का विरोध करना चाहते हैं; ये सभी साम्राज्यवाद

और सामन्तवाद का विरोध करने वाली क्रान्तिकारी शक्तियां हैं। लेकिन इतने ज्यादा लोगों में क्रान्ति की बुनियादी शक्ति, क्रान्ति की रीढ़ कौन हैं? वे हैं मजदूर और किसान, जिनकी संख्या सारे देश की आबादी की ६० फीसदी है। चीनी क्रान्ति का स्वरूप क्या है? आज हम जो क्रान्ति कर रहे हैं, वह किस तरह की है? आज हम पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति कर रहे हैं, और जो काम हम कर रहे हैं उनमें से कोई भी पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के दायरे के बाहर नहीं जाता। मोटे तौर पर कहा जाए तो अभी हमें पूंजीपति वर्ग की निजी-सम्पत्ति व्यवस्था को नष्ट नहीं करना चाहिए, बल्कि जिस चीज को हम नष्ट करना चाहते हैं वह है साम्राज्यवाद और सामन्तवाद। यही क्रान्ति पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति कहलाती है। लेकिन इस क्रान्ति को पूरा करना पूंजीपति वर्ग के बूते के बाहर है और इसे सिर्फ सर्वहारा वर्ग और व्यापक जन-समुदाय की कोशिशों पर निर्भर रहकर ही पूरा किया जा सकता है। इस क्रान्ति का उद्देश्य क्या है? इसका उद्देश्य है साम्राज्यवाद और सामन्तवाद को उखाड़ फेंकना तथा जनता के जनवादी गणराज्य को स्थापित करना। जनता का जनवादी गणराज्य क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्तों पर आधारित गणराज्य ही होगा। वह आज की अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती हालत से भिन्न होगा और भविष्य की समाजवादी व्यवस्था से भी भिन्न होगा। समाजवादी समाज-व्यवस्था में पूंजीपतियों के लिए कोई स्थान नहीं होता, लेकिन जनता की इस जनवादी व्यवस्था में पूंजीपतियों का अस्तित्व बने रहने देना चाहिए। क्या चीन में पूंजीपतियों के लिए हमेशा स्थान रहेगा? नहीं, भविष्य में निश्चय ही नहीं रहेगा। यह सिर्फ चीन के लिए ही सच नहीं है, बल्कि सारी दुनिया के लिए भी सच है। चाहे बरतानिया हो या अमरीका, चाहे फ्रांस हो या जापान, चाहे जर्मनी हो या इटली, भविष्य में कहीं भी पूंजीपतियों के लिए कोई स्थान नहीं होगा, और चीन इसका अपवाद नहीं हो सकता। सोवियत संघ एक ऐसा देश है जहां समाजवाद कायम हो गया है, और इसमें सन्देह नहीं कि भविष्य में सारी दुनिया उसका अनुसरण करेगी। भविष्य में चीन अवश्य समाजवाद के रूप में विकसित होगा; यह एक ऐसा नियम है जिसे कोई भी नहीं तोड़ सकता। लेकिन मौजूदा मंजिल में हमारा काम समाजवाद पर अमल करना नहीं, बल्कि साम्राज्यवाद और सामन्तवाद को नष्ट करना, चीन की वर्तमान अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती स्थिति को बदलना और जनता की जनवादी व्यवस्था को स्थापित करना है। सारे देश के नौजवानों को इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए।

तीसरे, चीनी क्रान्ति के अनुभव व सबक क्या हैं? यह भी एक महत्वपूर्ण सवाल है, जिसे समझना हमारे नौजवानों के लिए जरूरी है। चीन में साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति, अगर ठीक-ठीक कहा जाए, तो डा० सुन यात-सेन द्वारा शुरू की गई थी और यह पचास साल से भी ज्यादा समय से जारी है, जबकि विदेशी पूंजीवादी मुल्क लगभग सौ साल से चीन के खिलाफ हमलावर कार्यवाहियां करते आ रहे हैं। इन सौ सालों में, चीन में पहले ब्रिटिश आक्रमण के खिलाफ अफीम युद्ध हुआ तथा उसके बाद थाइफिङ स्वर्गिक-राज्य युद्ध, १८९४ का युद्ध, १८९८ का सुधारवादी आन्दोलन, ई हो थ्वान आन्दोलन, १९११ की क्रान्ति, ४ मई आन्दोलन, उत्तरी अभियान और लाल

सेना का युद्ध हुआ। हालांकि इनकी अपनी-अपनी विशेषताएं थीं, फिर भी इन सबको विदेशी हमलावरों का मुकाबला करने या तत्कालीन परिस्थितियों को बदलने के लिए चलाया गया था। लेकिन अपेक्षाकृत स्पष्ट रूप वाली पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति डा० सुन यात-सेन के जमाने में ही शुरू हुई थी। पिछले पचास सालों में क्रान्ति को, जिसकी शुरुआत डा० सुन यात-सेन के जमाने में हुई थी, सफलताएं भी मिलीं और असफलताएं भी। जरा देखिए तो, क्या यह १९११ की क्रान्ति की सफलता नहीं थी कि उसने सम्राट को खदेड़ दिया? फिर भी वह इस मायने में असफल रही कि वह सिर्फ सम्राट को ही खदेड़ सकी, जबकि चीन फिर भी साम्राज्यवाद व सामन्तवाद के उत्पीड़न में फंसा रहा और साम्राज्यवाद व सामन्तवाद का विरोध करने का क्रान्तिकारी कार्य पूरा नहीं किया गया। ४ मई आन्दोलन का उद्देश्य क्या था? उसे भी साम्राज्यवाद व सामन्तवाद को उखाड़ फेंकने के लिए चलाया गया था, लेकिन वह भी इस काम में असफल रहा और चीन फिर भी साम्राज्यवाद व सामन्तवाद के शासन में फंसा रहा। उत्तरी अभियान कहलाने वाली क्रान्ति का भी यही हाल हुआ; उसने सफलताएं प्राप्त कीं, लेकिन वह भी असफल रही। जब से क्वोमिन्ताङ ने कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करना[१] शुरू किया, तब से चीन में फिर साम्राज्यवाद और सामन्तवाद का प्रभुत्व कायम हो गया। इसका अनिवार्य परिणाम यह हुआ कि लाल सेना को दस साल युद्ध करना पड़ा। लेकिन इन दस सालों के संघर्ष ने क्रान्तिकारी कार्य को केवल आंशिक रूप से पूरा किया, देशव्यापी पैमाने पर नहीं। अगर हम पिछली कुछ दशाब्दियों की क्रान्ति का सारांश निकालें, तो हम यह कह सकते

हैं कि हमने सिर्फ अस्थाई और आंशिक विजय प्राप्त की है, स्थाई और देशव्यापी विजय नहीं। यह वैसा ही है जैसा कि डा० सुन यात-सेन ने कहा था: "क्रान्ति अभी पूरी नहीं हुई, मेरे सब साथियों को कोशिश जारी रखनी चाहिए।" अब यह पूछा जा सकता है: चीनी क्रान्ति कुछ दशाब्दियों तक चलाई जा चुकी है, फिर भी वह अभी तक अपना उद्देश्य क्यों प्राप्त नहीं कर सकी? उसके कारण क्या हैं? मेरे खयाल में उसके दो कारण हैं: एक तो यह है कि दुश्मन की शक्ति बहुत ज्यादा रही है और दूसरा यह कि हमारी शक्ति बहुत कम रही है। एक पक्ष शक्तिशाली रहा है और दूसरा कमजोर, इसलिए क्रान्ति सफल नहीं हुई। जब हम यह कहते हैं कि दुश्मन की शक्ति बहुत ज्यादा है, तो इसका मतलब यह होता है कि साम्राज्यवाद (जो मुख्य है) और सामन्तवाद की शक्ति बहुत ज्यादा है। जब हम यह कहते हैं कि हमारी शक्ति बहुत कम है, तो इसका मतलब यह होता है कि सैनिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में हमारे अन्दर कमजोरियां मौजूद हैं, लेकिन हमारी कमजोरियां जाहिर होने और साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी कार्य पूरे न हो सकने का मुख्य कारण यह है कि मजदूर और किसान मेहनतकश जनता को, जिसकी संख्या सारे देश की आबादी की ९० फीसदी है, गोलबन्द नहीं किया गया। अगर हम पिछली कुछ दशाब्दियों की क्रान्ति का निचोड़ निकालें, तो हम यह कह सकते हैं कि देश की समूची जनता को पूरी तरह गोलबन्द नहीं किया गया, और प्रतिक्रियावादी हमेशा ही गोलबन्द करने के हमारे काम का विरोध करते रहे हैं और उसमें तोड़फोड़ करते रहे हैं। लेकिन साम्राज्यवाद और सामन्तवाद को खत्म करना सिर्फ तभी सम्भव

हो सकता है, जब हम मजदूर-किसान जन-समुदाय को, जिसकी संख्या सारे देश की आबादी की ९० फीसदी है, गोलबन्द और संगठित कर लेंगे। डा० सुन यात-सेन ने अपनी वसीयत में कहा था :

> पिछले चालीस वर्षों से मैं चीन के लिए आजादी और समानता प्राप्त करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय क्रान्ति के कार्य में जुटा हुआ हूं। इन चालीस वर्षों के अनुभवों से मुझे गहराई से मालूम हो गया है कि इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए हमें व्यापक जन-समुदाय को जागृत करना चाहिए और दुनिया के हर ऐसे राष्ट्र के साथ, जो हमारे साथ समानता का बरताव करे, एकता कायम करके मुश्तरका संघर्ष करना चाहिए।

डा० सुन यात-सेन का देहान्त हुए दस साल से ज्यादा अरसा हो गया है। इस अरसे को उन चालीस सालों के साथ, जिनका जिक्र उन्होंने किया है, मिला दिया जाए, तो पचास साल से ज्यादा अरसा हो जाता है। इन पचास से ज्यादा वर्षों में क्रान्ति का अनुभव व सबक क्या है? बुनियादी तौर पर वह यह है कि "व्यापक जन-समुदाय को जागृत करना चाहिए"। आप लोगों को इस बात का अच्छी तरह अध्ययन करना चाहिए और सारे देश के नौजवानों को भी इसका गम्भीरता से अध्ययन करना चाहिए। नौजवानों को यह अवश्य समझ लेना चाहिए कि केवल मजदूर-किसान जन-समुदाय को, जिसकी संख्या सारे देश की आबादी की ९० फीसदी है, गोल-बन्द करके ही साम्राज्यवाद और सामन्तवाद को पछाड़ना सम्भव है। आज हम जापानी आक्रमण को पराजित करके नए चीन की स्थापना करने का उद्देश्य प्राप्त करना चाहते हैं, लेकिन सारे देश

के मजदूर-किसान जन-समुदाय को गोलबन्द किए बगैर यह असम्भव है।

चौथे, अब मैं फिर नौजवान आन्दोलन के बारे में बताऊंगा। आज से बीस साल पहले आज के ही दिन चीन में एक महान घटना घटी, जिसमें विद्यार्थी शामिल हुए थे और जिसे इतिहास में ४ मई आन्दोलन के नाम से पुकारा जाता है। यह एक भारी महत्व का आन्दोलन था। ४ मई आन्दोलन से अब तक चीनी नौजवानों ने क्या भूमिका अदा की है? उन्होंने किसी हद तक हिरावल दस्ते की भूमिका अदा की है। कट्टरपंथियों को छोड़कर, इस बात को देश के सभी लोग मानते हैं। हिरावल दस्ते की भूमिका का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है अगुवाई करना, यानी क्रान्ति की पांतों में सबसे आगे खड़े रहना। चीन की साम्राज्यवाद-विरोधी तथा सामन्तवाद-विरोधी जनता की पांतों में एक दस्ता चीनी नौजवान बुद्धिजीवियों और विद्यार्थियों का भी है। यह दस्ता काफी बड़ा है; जो लोग अपनी जान कुर्बान कर चुके हैं, उन्हें छोड़कर आज इस दस्ते में दसियों लाख आदमी शामिल हैं। दसियों लाख आदमियों का यह दस्ता साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी संघर्ष की एक मोर्चा-फौज है और एक महत्वपूर्ण मोर्चा-फौज है। लेकिन सिर्फ इसी मोर्चा-फौज पर निर्भर रहना काफी नहीं है; सिर्फ इसी के भरोसे हम दुश्मन को पराजित नहीं कर सकते, क्योंकि यह मुख्य सेना नहीं है। तो मुख्य सेना कौन सी है? वह है मजदूर-किसान जन-समुदाय। चीन के नौजवान बुद्धिजीवियों और विद्यार्थियों को अवश्य ही मजदूर-किसान जन-समुदाय के बीच जाना चाहिए तथा इस व्यापक जन-समुदाय को, जो सारे देश की आबादी का ९०

फीसदी है, गोलबन्द और संगठित करना चाहिए। मजदूरों और किसानों की इस मुख्य सेना के बिना, सिर्फ नौजवान बुद्धिजीवियों और विद्यार्थियों के दस्ते पर निर्भर रहकर, साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी संघर्ष में विजय पाना असम्भव है। इसलिए सारे देश के नौजवान बुद्धिजीवियों और विद्यार्थियों को अवश्य ही व्यापक मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ घुलमिल जाना चाहिए और उसके साथ एकरूप हो जाना चाहिए, सिर्फ तभी एक शक्तिशाली दस्ता बनाया जा सकेगा। दसियों करोड़ आदमियों का दस्ता! सिर्फ इस विशाल दस्ते के बल पर ही शत्रु के मजबूत मोर्चों पर कब्जा किया जा सकता है और उसके अन्तिम गढ़ को उखाड़ा जा सकता है। अतीत काल के नौजवान आन्दोलन को इस दृष्टि से देखते समय, उसके एक गलत रुझान को बता देना चाहिए, और वह यह है कि पिछली कुछ दशाब्दियों के नौजवान आन्दोलन में नौजवानों का एक भाग मजदूर-किसान जन-समुदाय से एकता कायम नहीं करना चाहता था और उसने मजदूर-किसान आन्दोलन का विरोध किया था। नौजवान आन्दोलन के ज्वार में यह एक उल्टी धारा थी। मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ, जिसकी संख्या सारे देश की आबादी की ९० फीसदी है, एकता कायम न करना और इससे भी आगे बढ़कर, उसका खुल्लमखुल्ला विरोध करना वास्तव में उन लोगों की नासमझी थी। क्या ऐसा रुझान अच्छा था? मेरा खयाल है कि यह अच्छा नहीं था, क्योंकि मजदूरों और किसानों का विरोध करके वे दरअसल क्रान्ति का विरोध कर रहे थे, इसलिए यह नौजवान आन्दोलन की उल्टी धारा थी। ऐसे नौजवान आन्दोलन के अच्छे नतीजे नहीं निकल सकते। कुछ दिन

पहले मैंने एक छोटा सा लेख[1] लिखा था। उसमें मैंने बताया था:

> क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों तथा गैर-क्रान्तिकारी और प्रतिक्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों के बीच की अन्तिम विभाजन-रेखा यह है कि वे मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ घुलमिल कर एक हो जाने को तैयार हैं या नहीं, और वे अमल में ऐसा करते हैं या नहीं।

यहां मैंने एक कसौटी पेश की है, जिसे मैं एकमात्र कसौटी समझता हूं। कोई नौजवान क्रान्तिकारी है अथवा नहीं, यह जानने की कसौटी क्या है? उसे कैसे पहचाना जाए? इसकी कसौटी केवल एक है, यानी यह देखना चाहिए कि वह व्यापक मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ घुलमिल कर एक हो जाना चाहता है अथवा नहीं, तथा इस पर अमल करता है अथवा नहीं? क्रान्तिकारी वह है जो मजदूरों व किसानों के साथ घुलमिल कर एक हो जाना चाहता हो और अपने अमल में मजदूरों व किसानों के साथ घुलमिल कर एक हो जाता हो, वरना वह क्रान्तिकारी नहीं है या प्रतिक्रान्तिकारी है। अगर कोई आज मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ घुलमिल जाता है, तो वह आज क्रान्तिकारी है; लेकिन अगर कल वह ऐसा नहीं करता या इसके उल्टे आम जनता का उत्पीड़न करने लगता है, तो वह क्रान्तिकारी नहीं रह जाता अथवा प्रतिक्रान्तिकारी बन जाता है। कुछ नौजवान केवल मुंह से तीन जन-सिद्धान्तों या मार्क्सवाद में अपने विश्वास की बातें खूब बढ़ा-चढ़ा कर करते हैं; लेकिन इसका कोई मतलब नहीं होता। आप ही देखिए, क्या हिटलर "समाजवाद पर विश्वास" की बातें नहीं करता था? और बीस साल पहले

मुसोलिनी भी तो "समाजवादी" था ! उन लोगों का "समाजवाद" आखिर क्या है ? वह दरअसल फासिस्टवाद है ! क्या छन तू-श्यू भी कभी मार्क्सवाद पर "विश्वास" नहीं करता था ? लेकिन बाद में उसने क्या किया ? वह प्रतिक्रान्तिकारियों से जा मिला । क्या चाङ क्वो-थाओ भी मार्क्सवाद में "विश्वास" नहीं रखता था ? अब वह किधर चला गया है ? वह भाग खड़ा हुआ है और सीधा कीचड़ में जा गिरा है । कुछ लोग अपने आपको "तीन जन-सिद्धान्तों का अनुयायी" और यहां तक कि तीन जन-सिद्धान्तों का पुराना जबरदस्त समर्थक मानते हैं । लेकिन उन लोगों ने क्या किया है ? वास्तव में उन लोगों के राष्ट्रवाद के सिद्धान्त का असली मतलब है साम्राज्यवादियों से सांठगांठ करना ; उनके जनवाद के सिद्धान्त का असली मतलब है आम जनता का उत्पीड़न करना ; और उनके जन-जीविका के सिद्धान्त का असली मतलब है आम जनता का अधिक से अधिक खून चूसना । वे मुंह से तो तीन जन-सिद्धान्तों की बातें करते हैं, लेकिन दिल में सोचते कुछ और ही हैं । इसलिए अगर हम किसी के बारे में यह पता लगाना चाहते हैं कि वह तीन जन-सिद्धान्तों का झूठा अनुयायी है या सच्चा अनुयायी, वह एक झूठा मार्क्सवादी है या सच्चा मार्क्सवादी, तो सिर्फ यह देखने से ही बात एकदम स्पष्ट हो जाएगी कि व्यापक मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ उसके सम्बन्ध कैसे हैं । उसे परखने की सिर्फ यही एक कसौटी है, दूसरी कोई कसौटी नहीं है । मैं आशा करता हूं कि सारे देश के नौजवान इस बात को ध्यान में रखेंगे कि वे उस अन्धकार-पूर्ण उल्टी धारा में हरगिज नहीं गिरेंगे, तथा इस बात को साफ तौर पर समझते हुए कि मजदूर और किसान उनके दोस्त हैं, एक

उज्ज्वल भविष्य की ओर कदम बढ़ाएंगे ।

पांचवें, वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध चीनी क्रान्ति की एक नई मंजिल है, एक सबसे महान, सबसे क्रियाशील और सबसे सजीव नई मंजिल है । इस मंजिल में नौजवानों के कन्धों पर भारी जिम्मेदारियां हैं । हमारे देश में पिछली कुछ दशाब्दियों का क्रान्तिकारी आन्दोलन संघर्ष की अनेक मंजिलों से गुजर चुका है, लेकिन पिछली किसी भी मंजिल का संघर्ष इतना व्यापक नहीं था जितना कि वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का है । जब हम यह कहते हैं कि आज की चीनी क्रान्ति की विशेषताएं उसे अतीत की क्रान्तियों से भिन्न बना देती हैं और यह कि वह पराजय से विजय की ओर मुड़ जाएगी, तो हमारा मतलब यह होता है कि चीन की व्यापक जनता ने पहले से ज्यादा प्रगति की है और नौजवानों की प्रगति इसका साफ सबूत है । इसलिए जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का विजयी होना निहायत जरूरी है और यह निश्चित रूप से विजयी होगा । जैसा कि सभी जानते हैं, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में बुनियादी नीति है जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति, जिसका उद्देश्य है जापानी साम्राज्यवाद और उसके चीनी पिट्ठुओं को खत्म करना, पुराने चीन को नए चीन में बदल देना और सारे राष्ट्र को अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती स्थिति से मुक्त कराना । चीन के मौजूदा नौजवान आन्दोलन में एकता का अभाव एक भारी खामी है । आप लोगों को लगातार एकता की मांग करनी चाहिए, क्योंकि एकता ही शक्ति है । आपको चाहिए कि आप लोग सारे देश के नौजवानों को मौजूदा परिस्थिति समझने, एकता कायम करने और अन्त तक जापानी आक्रमण

का प्रतिरोध करने में मदद दें।

छठे और अन्त में, मैं येनान के नौजवान आन्दोलन के बारे में बताना चाहता हूं। येनान का नौजवान आन्दोलन सारे देश के नौजवान आन्दोलन के लिए आदर्श है। येनान के नौजवान आन्दोलन की दिशा ही सारे देश के नौजवान आन्दोलन की दिशा है। ऐसा क्यों है? यह इसलिए है क्योंकि येनान के नौजवान आन्दोलन की दिशा सही है। जरा देखिए तो, येनान के नौजवानों ने एकता सम्बन्धी काम न सिर्फ किया है, बल्कि बहुत अच्छी तरह किया है। येनान के नौजवान एकता के सूत्र में बंधे हुए हैं और वे एकजुट हैं। येनान के नौजवान बुद्धिजीवी व विद्यार्थी, नौजवान मजदूर व किसान सब एकता के सूत्र में बंधे हुए हैं। देश के कोने-कोने से, यहां तक कि विदेश में रहने वाले प्रवासी चीनियों में से भी, बड़ी संख्या में क्रान्तिकारी नौजवान शिक्षा प्राप्त करने के लिए येनान आए हैं। आज की सभा में सम्मिलित लोगों में ज्यादातर लोग सैकड़ों-हजारों ली दूर से आए हुए हैं। चाहे आप लोगों का कुलनाम चाङ हो या ली, चाहे आप पुरुष हों या स्त्री, चाहे मजदूर हों या किसान, आप सब लोगों का दिल एक है। क्या यह सारे देश के लिए आदर्श नहीं है? येनान के नौजवान न केवल खुद एकता के सूत्र में बंधे हुए हैं, बल्कि मजदूर-किसान जन-समुदाय के साथ भी घुलमिल कर एक हो गए हैं; यह बात खास तौर पर सारे देश के सामने आदर्श उपस्थित करती है। येनान के नौजवान क्या करते रहे हैं? वे क्रान्ति के सिद्धान्त को सीखते रहे हैं, तथा जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने और देश को बचाने के सिद्धान्तों और तरीकों का अध्ययन करते रहे हैं। वे उत्पादन का आन्दोलन चलाते रहे हैं तथा उन्होंने हजारों मू परती जमीन को खेती योग्य बना दिया है। परती जमीन को खेती योग्य बनाने और खेती-बाड़ी जैसे काम तो कनफ्यूशियस ने भी नहीं किए थे। जब कनफ्यूशियस अपना विद्यालय चलाता था, तो उसके पास काफी विद्यार्थी थे, "सत्तर विद्वान और तीन हजार शिष्य" – कितनी बड़ी संख्या थी! लेकिन येनान के मुकाबले उसके शिष्य बहुत कम थे और खास बात तो यह है कि उन्हें उत्पादन का आन्दोलन चलाना पसन्द ही नहीं था। जब कनफ्यूशियस के शिष्यों ने उससे पूछा कि खेत को किस तरह जोतना चाहिए, तो उसने जवाब दिया, "मैं नहीं जानता, मैं इस काम में किसानों का मुकाबला नहीं कर सकता।" जब शिष्यों ने उससे फिर पूछा कि सब्जी कैसे उगानी चाहिए, तो उसने जवाब दिया, "मैं नहीं जानता, मैं इस काम में साग-भाजी उगाने वालों का मुकाबला नहीं कर सकता।" चीन में प्राचीन काल में गुरुओं के यहां शिक्षा प्राप्त करने वाले नौजवान न तो क्रान्ति के सिद्धान्त सीखते थे और न श्रम करते थे। आज सारे देश के व्यापक इलाकों के विद्यालयों में क्रान्ति के सिद्धान्त बहुत कम सिखाए जाते हैं और उत्पादन के आन्दोलन का तो जिक्र तक नहीं किया जाता। केवल येनान के हमारे नौजवानों और दुश्मन के पृष्ठभाग में स्थित जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों में रहने वाले हमारे नौजवानों की हालत बुनियादी रूप से भिन्न है; वे सचमुच जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने और देश को बचाने वाला एक हिरावल दस्ता हैं, क्योंकि उनकी राजनीतिक दिशा सही है और उनके काम के तरीके भी सही हैं। इसलिए मैं कहता हूं कि येनान का नौजवान आन्दोलन सारे देश के नौजवान आन्दोलन के लिए आदर्श है।

आज की आम सभा बहुत अर्थपूर्ण है। मुझे जो कुछ कहना था, वह कह चुका हूं। मैं आशा करता हूं कि आप सब लोग चीनी क्रान्ति के पिछले पचास साल के अनुभवों का अध्ययन करेंगे, उसकी खूबियों को विकसित करेंगे और उसकी गलतियों से बचेंगे, ताकि सारे देश के नौजवान समूचे देश की जनता के साथ घुलमिल कर एक हो सकें और क्रान्ति को पराजय से विजय की तरफ मोड़ा जा सके। जिस दिन सारे देश के नौजवानों और सारे देश की जनता को गोलबन्द कर लिया जाएगा, संगठित कर लिया जाएगा और एक कर लिया जाएगा, उसी दिन जापानी साम्राज्यवाद का तख्ता उलट दिया जाएगा। यह जिम्मेदारी हर नौजवान को निभानी चाहिए। आप लोगों को पहले की अपेक्षा भिन्न होना चाहिए और दृढ़ संकल्प करना चाहिए कि सारे देश के नौजवानों को एक कर देंगे और सारे देश की जनता को संगठित कर लेंगे, जापानी साम्राज्यवादियों को खत्म कर देंगे और पुराने चीन को एक नए चीन में रूपान्तरित कर देंगे। यही मैं आप सब लोगों से आशा करता हूं।

नोट

१ सबसे पहले शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र के नौजवान संगठनों ने ४ मई को चीन का नौजवान दिवस घोषित किया था। उस समय व्यापक नौजवान जन-समुदाय के देशभक्तिपूर्ण उभार के दबाव के कारण क्वोमिन्ताङ को यह फैसला स्वीकार करना पड़ा। लेकिन बाद में, इस डर से कि कहीं नौजवान लोग क्रान्तिकारी न बन जाएं, क्वोमिन्ताङ को यह फैसला खतरनाक जान पड़ा, और उसने २६ मार्च को (उन क्रान्तिकारी शहीदों के स्मृति-दिवस के रूप में जो

१६११ में इसी दिन क्वाङ्चओ विद्रोह में शहीद हो गए थे और जिन्हें ह्वाङह्वाकाङ नामक जगह पर दफनाया गया था) अपना अलग नौजवान दिवस घोषित कर दिया। फिर भी चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में स्थापित क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में ४ मई को नौजवान दिवस के रूप में मनाया जाता रहा। चीन लोक गणराज्य की स्थापना के बाद, केन्द्रीय जन-सरकार की राजकीय प्रशासन परिषद ने दिसम्बर १६४६ में औपचारिक रूप से ४ मई को चीन का नौजवान दिवस घोषित कर दिया।

२ यहां १६२७ के उस प्रतिक्रान्तिकारी राजविप्लव का हवाला दिया गया है जिसे शांघाई और नानकिङ में च्याङ काई-शेक ने तथा वूहान में वाङ चिङ-वेइ ने किया था।

३ यहां "४ मई आन्दोलन" शीर्षक लेख का हवाला दिया गया है।

आत्मसमर्पणवादी कार्यवाहियों का विरोध करो

३० जून १९३९

जब से चीनी राष्ट्र को जापानी आक्रमण का सामना करना पड़ा है, तभी से सबसे प्रमुख प्रश्न यह रहा है कि लड़ा जाए या नहीं। १८ सितम्बर १९३१ की घटना से ७ जुलाई १९३७ की लूकश्रो-छ्याओ घटना तक की अवधि में इस प्रश्न पर गम्भीर वाद-विवाद हुआ। "लड़ने का मतलब है अपना अस्तित्व बनाए रखना, और न लड़ने का मतलब है अपना अस्तित्व मिटा देना" – यह सभी देशभक्त पार्टियों व ग्रुपों और सभी देशभक्त बन्धुओं का निष्कर्ष था; "लड़ने का मतलब है अपना अस्तित्व मिटा देना और न लड़ने का मतलब है अपना अस्तित्व बनाए रखना" – यह सभी आत्म-समर्पणवादियों का निष्कर्ष था। लूकओछ्याओ में गरजती प्रतिरोध की तोपों ने यह विवाद अस्थाई रूप से हल कर दिया। उनका ऐलान था: पहला निष्कर्ष सही है और दूसरा गलत। लेकिन यह प्रश्न केवल अस्थाई रूप से ही हल क्यों हुआ, सदा के लिए क्यों नहीं? इसका कारण यह था कि जापानी साम्राज्यवाद ने चीन को फुसलाकर उससे आत्मसमर्पण कराने की नीति अपनाई, अन्तरराष्ट्रीय आत्म-समर्पणवादियों[1] ने सुलह-समझौता करने की कोशिश की और हमारे अपने जापान-विरोधी मोर्चे के भीतर भी कुछ लोग डगमगा

गए। अब यह प्रश्न शब्दों के कुछ हेरफेर के साथ "शान्ति या युद्ध के प्रश्न" के रूप में फिर उठाया गया है। इस तरह चीन के भीतर लड़ाई जारी रखने के हामियों और सुलह-शान्ति कायम करने के हामियों के बीच एक वाद-विवाद उठ खड़ा हुआ है। दोनों पक्षों के रुख अब भी वही हैं: "लड़ने का मतलब है अपना अस्तित्व बनाए रखना और सुलह-शान्ति कायम करने का मतलब है अपना अस्तित्व मिटा देना" – यह लड़ाई जारी रखने के हामियों का निष्कर्ष है; "सुलह-शान्ति कायम करने का मतलब है अपना अस्तित्व बनाए रखना और लड़ने का मतलब है अपना अस्तित्व मिटा देना" – यह सुलह-शान्ति कायम करने के हामियों का निष्कर्ष है। लेकिन, लड़ाई जारी रखने के हामियों में सभी देशभक्त पार्टियां व ग्रुप और सभी देशभक्त बन्धु हैं, जो राष्ट्र में विशाल बहुसंख्या में हैं; सुलह-शान्ति कायम करने के हामी अर्थात आत्मसमर्पणवादी, जापान-विरोधी मोर्चे के अन्दर मौजूद क्षुद्र अल्पसंख्या वाले ढुलमुल तत्व ही हैं। अतएव सुलह-शान्ति कायम करने के हामियों को झूठे प्रचार का और सबसे पहले कम्युनिस्ट-विरोधी प्रचार का सहारा लेना पड़ता है। मसलन "कम्युनिस्ट पार्टी गड़बड़ी पैदा करने की कार्यवाहियों में लगी हुई है", "आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना लड़ती नहीं बल्कि यों ही घूमती रहती हैं और आदेशों का पालन नहीं करतीं", "शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र में एक पृथकतावादी शासन कायम कर लिया गया है और यह शासन अपनी सीमाओं के बाहर विस्तार कर रहा है", "कम्युनिस्ट पार्टी सरकार का तख्ता पलटने की साजिश रच रही है", और यहां तक कि "सोवियत संघ चीन पर हमला करने की साजिश रच रहा है" जैसी

झूठी खबरों, झूठी रिपोर्टों, झूठे दस्तावेजों और झूठे प्रस्तावों की उन्होंने बाढ़-सी लगा दी है। इसका उद्देश्य है वास्तविक तथ्यों पर पर्दा डालकर और जनमत की आंखों में धूल झोंककर सुलह-शान्ति कायम करना, या दूसरे शब्दों में आत्मसमर्पण करना। सुलह-शान्ति कायम करने के हामी अर्थात आत्मसमर्पणवादी ऐसा सिर्फ इसलिए कर रहे हैं क्योंकि वे कम्युनिस्ट पार्टी का, जिसने जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का सूत्रपात किया है और जो इस पर अडिग है, विरोध किए बिना क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग को भंग नहीं कर सकते, जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में दरार पैदा नहीं कर सकते और जापान के सम्मुख आत्मसमर्पण नहीं कर सकते। दूसरे, वे यह आशा लगाए बैठे हैं कि जापानी साम्राज्यवाद रियायतें देगा। उनका विचार है कि जापान लगभग नाकारा हो चुका है और वह अपनी बुनियादी नीति बदल देगा, वह मध्य चीन, दक्षिणी चीन और यहां तक कि उत्तरी चीन से भी अपने आप हट जाएगा और इस प्रकार चीन को और अधिक लड़े बिना ही जीत हासिल हो जाएगी। तीसरे, वे अन्तरराष्ट्रीय दबाव पर आशा बांधे बैठे हैं। सुलह-शान्ति कायम करने के हामी बहुत से लोग न केवल यह आशा करते हैं कि बड़ी ताकतें जापान पर दबाव डालेंगी ताकि वह रियायतें दे और इस तरह शान्ति-समझौता किया जा सके, बल्कि यह आशा भी करते हैं कि बड़ी ताकतें चीन सरकार पर दबाव डालेंगी जिससे वे लड़ाई जारी रखने के हामियों से कह सकें: "देखो, आज के इस अन्तरराष्ट्रीय वातावरण में शान्ति कायम करनी ही पड़ेगी!" "प्रशान्त महासागर अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन[२] चीन के लिए लाभदायक होगा। यह कोई दूसरा म्यूनिख[३] नहीं बनेगा,

बल्कि चीन का पुनरुत्थान करने की दिशा में एक कदम होगा!" सुलह-शान्ति कायम करने के हामियों अर्थात चीनी आत्मसमर्पणवादियों के दृष्टिकोणों, दांवपेंचों और साजिशों का कुल जोड़[४] बस यही है। यह नाटक न केवल वाङ चिङ-वेइ खेल रहा है बल्कि इससे कहीं ज्यादा गम्भीर बात यह है कि उसके समान बहुत से दूसरे लोग भी, जो जापान-विरोधी मोर्चे के भीतर छिपे हुए हैं, उसके साथ सांठगांठ करके यह नाटक खेल रहे हैं। वे सब मिलकर एक प्रकार का युगल-अभिनय[५] कर रहे हैं या आपेरा खेल रहे हैं – कुछ लोग अपने चेहरों पर लाल मेक-अप किए हुए हैं और कुछ अन्य लोग अपने चेहरों पर सफेद मेक-अप[६]।

हम कम्युनिस्ट खुलेआम ऐलान करते हैं : हम लोग सदैव उनका पक्षपोषण करते हैं जो लड़ाई जारी रखने के हामी हैं और सदैव उनका डटकर विरोध करते हैं जो सुलह-शान्ति कायम करने के हामी हैं। हमारी इसके सिवाय और कोई इच्छा नहीं है कि हम देश की सभी देशभक्त पार्टियों व ग्रुपों और सभी देशभक्त बन्धुओं के साथ मिलकर एकता को मजबूत बनाएं, जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को मजबूत बनाएं, क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग को मजबूत बनाएं, तीन जन-सिद्धान्तों को अमल में उतारें, प्रतिरोध-युद्ध को अन्त तक चलाएं, लड़ते-लड़ते यालू नदी तक पहुंच जाएं और अपने तमाम खोए हुए इलाकों को वापस ले लें।[७] प्रच्छन्न व अप्रच्छन्न दोनों प्रकार के वाङ चिङ-वेइ जैसे उन लोगों की हम दृढ़ता से भर्त्सना करते हैं जो कम्युनिस्ट-विरोधी वातावरण तैयार कर रहे हैं, क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच टकराव[८] पैदा कर रहे हैं और यहां तक कि दोनों पार्टियों के बीच एक अन्य गृहयुद्ध तक छिड़वाने की साजिश रच रहे हैं। हम उनसे कहते हैं : तुम्हारी फूटपरस्त साजिशों का सारतत्व केवल आत्मसमर्पण की तैयारी के सिवाय और कुछ नहीं है और तुम्हारी आत्मसमर्पणवादी नीति व फूटपरस्त नीति सिर्फ चन्द लोगों के व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए राष्ट्र के हितों को बेच डालने की पूरी योजना की अभिव्यक्ति के सिवाय और कुछ नहीं है ; लोगों के पास आंखें हैं और वे तुम्हारी साजिशों को ताड़ लेंगे। हम इस बेतुकी दलील का जोरदार खण्डन करते हैं कि प्रशान्त महासागर सम्मेलन पूर्व का म्यूनिख नहीं बनेगा। बेशक, तथाकथित प्रशान्त महासागर सम्मेलन पूर्व का म्यूनिख ही बनेगा, और यह चीन को दूसरे चेकोस्लोवाकिया में बदल देने की ही तैयारी है। हम इस कोरी बकवास का जोरदार खण्डन करते हैं कि जापानी साम्राज्यवाद होश में आ जाएगा और रियायतें देगा। चीन को गुलाम बनाने की अपनी बुनियादी नीति को जापानी साम्राज्यवाद कदापि नहीं बदलेगा। ऊहान के पतन के बाद, जापान की मीठी बातें – मसलन, उसका यह कहना कि वह "राष्ट्रीय सरकार को समझौता-वार्ता के लिए विरोधी पक्ष न मानने"[९] की नीति को त्यागकर उसे विरोधी पक्ष मान लेगा, या यह कि वह कुछ शर्तों पर अपनी फौजें मध्य चीन और दक्षिणी चीन से हटा लेगा – मक्कारी से मछली को चारे का प्रलोभन देकर उसे पकड़ने और पकाने के सिवाय और कुछ नहीं हैं ; जो भी बंसी में फंसे उसे अच्छी तरह पकने के लिए तैयार हो जाना होगा। इसी तरह अन्तरराष्ट्रीय आत्मसमर्पणवादी भी चीन को आत्मसमर्पण के लिए फुसलाने की मक्कारी भरी नीति अपना रहे हैं। उन्होंने जापान को चीन पर हमला करने के लिए उकसाया है और स्वयं "पहाड़ पर बैठकर बाघों

के लड़ने का तमाशा देख रहे हैं", और इस बात की ताक में बैठे हैं कि मौका पाते ही तथाकथित प्रशान्त महासागर बीच-बचाव सम्मेलन बुलाने की साजिश रच डालें, ताकि दूसरों को हानि पहुंचाकर खुद लाभ उठा सकें। जो कोई इन षड्यंत्रकारियों पर उम्मीदें बांधेगा वह भी ठीक इसी तरह भारी धोखा खाएगा।

लड़ने या न लड़ने का सवाल आज लड़ाई जारी रखने या सुलह-शान्ति कायम करने का सवाल बन गया है, किन्तु इन दोनों का स्वरूप एक ही है, और यह सवाल सभी सवालों में सबसे महत्वपूर्ण और सबसे बुनियादी सवाल बन गया है। पिछले छै महीनों में, चीन को आत्मसमर्पण के लिए फुसलाने की नीति को जापान द्वारा तेजी से अमल में लाने, अन्तरराष्ट्रीय आत्मसमर्पणवादियों द्वारा कार्यवाहियां तेज करने और मुख्यत: चीन के जापान-विरोधी मोर्चे के भीतर कुछ लोगों के और ज्यादा डगमगा जाने के कारण, युद्ध या शान्ति के सवाल पर बहुत शोर-शराबा उठ खड़ा हुआ है, और इसलिए वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति में आत्मसमर्पण एक मुख्य खतरा बन गया है। और आत्मसमर्पण की तैयारी में जो सर्वप्रमुख कदम आत्मसमर्पणवादी उठा रहे हैं, वह है कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करना, यानी क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग और जापान-विरोधी मोर्चे की एकता को भंग करना। ऐसी स्थिति में, समूचे देश की सभी देशभक्त पार्टियों व ग्रुपों और सभी देशभक्त बन्धुओं को चाहिए कि वे इन आत्मसमर्पणवादियों की कार्यवाहियों पर कड़ी नजर रखें, मौजूदा परिस्थिति की इस मुख्य विशिष्टता को कि आत्मसमर्पण का खतरा सबसे बड़ा खतरा है और कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करना आत्मसमर्पण की तैयारी है, समझ लें तथा आत्मसमर्पण

व फूट का विरोध करने की भरपूर कोशिश करें। जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध जिस युद्ध की कीमत समूचे राष्ट्र ने पूरे दो वर्षों के रक्तपात से चुकाई है, उसे क्षति पहुंचाने या उससे गद्दारी करने की इजाजत लोगों के किसी भी ग्रुप को हरगिज नहीं दी जानी चाहिए। जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को, जो समूचे राष्ट्र के प्रयास से बना है, भंग करने या उसमें फूट डालने की इजाजत लोगों के किसी भी ग्रुप को हरगिज नहीं दी जानी चाहिए।

लड़ते जाने और एकता पर डटे रहने से चीन का अस्तित्व अवश्य बना रहेगा।

सुलह-शान्ति कायम करने और फूट डालने पर अड़े रहने से चीन का अस्तित्व अवश्य मिट जाएगा।

इनमें से किसे ठुकराएं और किसे स्वीकार करें? हमारे देशवासियों को अविलम्ब चुन लेना चाहिए।

हम कम्युनिस्ट निश्चय ही लड़ते जाएंगे और एकता पर डटे रहेंगे।

समूचे देश की सभी देशभक्त पार्टियां व ग्रुप तथा सभी देशभक्त बन्धु भी निश्चय ही लड़ते जाएंगे और एकता पर डटे रहेंगे।

आत्मसमर्पण और फूट की साजिश रचने वाले आत्मसमर्पणवादी यदि थोड़ी देर के लिए हावी हो भी जाएं तो भी जनता अन्ततोगत्वा उनका पर्दाफाश कर देगी और उन्हें सजा देगी। चीनी राष्ट्र का ऐतिहासिक कार्य है एकता कायम करके प्रतिरोध-युद्ध चलाना और उसके जरिए मुक्ति प्राप्त करना। जो कुछ आत्मसमर्पणवादी चाहते हैं वह ठीक इसके विपरीत है, लेकिन चाहे वे कितने ही हावी क्यों न हो जाएं, खुशी से कितने ही मतवाले क्यों न हो जाएं,

और भले ही यह सोचने लगें कि कोई उनका बाल तक बांका नहीं कर सकता, फिर भी अन्त में वे समूची जनता के हाथों सजा पाने से बच नहीं सकेंगे।

आत्मसमर्पण व फूट का विरोध करो – यही आज सभी देशभक्त पार्टियों व ग्रुपों और सभी देशभक्त बन्धुओं के सामने अत्यन्त फौरी कार्य है।

समूचे राष्ट्र के लोगो, एक हो जाओ! प्रतिरोध-युद्ध और एकता पर डटे रहो तथा आत्मसमर्पण व फूट की साजिशों को कुचल डालो!

नोट

१ यहां अन्तरराष्ट्रीय आत्मसमर्पणवादियों से संकेत ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादियों की ओर है जो चीन को बलि का बकरा बनाकर जापान से सुलह-समझौता करने की साजिश रच रहे थे।

२ उस समय ब्रिटिश, अमरीकी और फ्रांसीसी साम्राज्यवादी, चीन में सुलह-शान्ति कायम करने के हामियों के साथ सांठगांठ करके तथाकथित "प्रशान्त महासागर अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन" के जरिए चीन को बेचकर जापानी आक्रमणकारियों से सुलह-समझौता करने की साजिश रच रहे थे। इसे लोगों ने दूरपूर्व के म्यूनिख षड्यंत्र का नाम दिया था। च्याङ काई-शेक ने ही यह बेतुकी दलील, जिसका कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस लेख में खण्डन किया है, पेश की थी कि यह सम्मेलन पूर्व का म्यूनिख नहीं बनेगा।

३ सितम्बर १९३८ में ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी और इटली की सरकारों के शीर्ष-नेताओं ने जर्मनी के म्यूनिख शहर में मीटिंग बुलाकर म्यूनिख सन्धि की, जिसके अनुसार ब्रिटेन और फ्रांस ने चेकोस्लोवाकिया को जर्मनी के हाथों बेच

दिया, यह सोचकर कि इसके बदले जर्मनी सोवियत संघ पर हमला करेगा। १९३८ और १९३९ में ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवाद ने चीन को बलि का बकरा बनाकर कई बार जापानी साम्राज्यवाद से सुलह-समझौता करने की चाल चली। जून १९३९ में जब कामरेड माओ त्सेतुङ ने यह लेख लिखा, उस समय ब्रिटेन और जापान के बीच इस साजिश को साकार रूप देने के लिए फिर से बातचीत चल रही थी। इसे "पूर्व का म्यूनिख" इसलिए कहा गया क्योंकि इस षड्यंत्र और ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी और इटली द्वारा म्यूनिख में रचे गए षड्यंत्र में समानता थी।

४ "सुलह-शान्ति कायम करने के हामियों अर्थात चीनी आत्मसमर्पणवादियों के दृष्टिकोणों, दांवपेंचों और साजिशों का कुल जोड़" से कामरेड माओ त्सेतुङ का संकेत च्याङ काई-शेक के दृष्टिकोणों, दांवपेंचों और साजिशों से ही है। उस समय अप्रच्छन्न आत्मसमर्पणवादियों का मुख्य सरगना वाङ चिङ-वेइ था और जापान-विरोधी मोर्चे के भीतर छिपे हुए आत्मसमर्पणवादियों का मुख्य सरगना च्याङ काई-शेक था जो, जैसा कि कामरेड माओ त्सेतुङ ने कहा है, प्रच्छन्न वाङ चिङ-वेइ था अथवा वाङ चिङ-वेइ के समान था।

५ यहां कामरेड माओ त्सेतुङ का तात्पर्य यह है कि च्याङ काई-शेक और वाङ चिङ-वेइ की कार्यवाहियां एक युगल-अभिनय जैसी थीं (युगल-अभिनय वेराइटी-शो का एक प्रोग्राम है जिसमें एक पात्र पीछे से बोलता और गाता है, जबकि दूसरा पात्र न तो बोलता है और न गाता है, केवल पीछे के पात्र की बोलने और गाने की आवाज के अनुसार रंगमंच पर अभिनय करता जाता है – अनु०)।

६ उस समय क्वोमिन्ताङ के अन्दर सुलह-शान्ति कायम करने के हामी, जिनका सरगना च्याङ काई-शेक था, दुरंगी चाल चल रहे थे। एक ओर तो वे जापान का प्रतिरोध करने का ढोंग रच रहे थे और दूसरी ओर विभिन्न तरीकों से आत्मसमर्पण की कार्यवाहियां कर रहे थे, ठीक उसी तरह जैसे चीन का क्लासिकी आपेरा खेला जाता है, जिसमें कुछ पात्र तो नायक के रूप में अपने चेहरों पर लाल मेक-अप किए रहते हैं और कुछ खलनायक के रूप में सफेद मेक-अप।

७ जनवरी १९३९ में च्याङ काई-शेक ने क्वोमिन्ताङ की पांचवीं केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के पांचवें पूर्ण अधिवेशन में खुल्लमखुल्ला यह ऐलान कर

दिया था कि उसके द्वारा प्रस्तुत "प्रतिरोध-युद्ध को अन्त तक चलाने" के नारे में "अन्त तक चलाने" का अर्थ है "लूकओछ्याओ घटना के पहले की स्थिति को फिर से कायम करना"। इसलिए कामरेड माओ त्सेतुङ ने च्याङ काई-शेक की आत्मसमर्पणवादी नीति का विरोध करने के लिए ही खास तौर से इस बात पर जोर दिया कि "अन्त तक चलाने" का मतलब यह है कि "लड़ते-लड़ते यालू नदी तक पहुंच जाएं और अपने तमाम खोए हुए इलाकों को वापस ले लें।"

⁸ "टकराव" शब्द उस समय काफी प्रचलित था। इससे क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों की उन तरह-तरह की प्रतिक्रियावादी कार्यवाहियों की ओर संकेत किया गया है जिनके जरिए वे जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में तोड़-फोड़ करते थे और कम्युनिस्ट पार्टी व प्रगतिशील शक्तियों का विरोध करते थे।

⁹ १३ दिसम्बर १९३७ को जापानी सेना ने नानकिङ पर कब्जा कर लिया। १६ जनवरी १९३८ को जापान सरकार ने एक वक्तव्य जारी किया, जिसमें कहा गया कि जापान "आज से राष्ट्रीय सरकार को समझौता-वार्ता के लिए विरोधी पक्ष नहीं मानेगा और वह आशा करता है कि एक नई सरकार की स्थापना की जाएगी"। उसी वर्ष अक्तूबर में जापानी सेना ने क्वाङचओ और उहान पर कब्जा कर लिया। प्रतिरोध-युद्ध के प्रति च्याङ काई-शेक के ढुलमुल रुख का फायदा उठाकर जापान सरकार ने अपनी नीति बदलकर उसे आत्मसमर्पण के लिए फुसलाने की नीति अपना ली। जापान सरकार ने ३ नवम्बर को एक और वक्तव्य जारी किया, जिसमें कहा गया कि "साम्राज्य राष्ट्रीय सरकार के साथ समझौता करने से इनकार नहीं करेगा, बशर्ते कि वह अपनी नीति को, जो हमेशा से गलत रही है, त्याग दे और पुनर्वास का काम करने तथा शान्ति व व्यवस्था बनाए रखने के लिए नए व्यक्तियों की नियुक्ति करे"।

प्रतिक्रियावादियों को सजा देनी ही होगी*

१ अगस्त १९३९

आज पहली अगस्त को हम यहां एक शोक-सभा में भाग लेने के लिए एकत्रित हुए हैं। यह शोक-सभा हम क्यों कर रहे हैं? क्योंकि प्रतिक्रियावादियों ने क्रान्तिकारी साथियों की हत्या कर दी है, जापान-विरोधी योद्धाओं की हत्या कर दी है। इस जमाने में किसकी हत्या की जानी चाहिए? चीनी गद्दारों और जापानी साम्राज्यवादियों की हत्या की जानी चाहिए। चीन जापानी साम्राज्यवादियों के खिलाफ दो साल से लड़ रहा है, लेकिन हार-जीत का फैसला अभी तक नहीं हुआ। चीनी गद्दार अभी भी बहुत सक्रिय हैं, उनमें से बहुत थोड़े से ही मारे गए हैं। लेकिन क्रान्तिकारी साथियों, जापान-विरोधी योद्धाओं, की हत्या कर दी गई है। हत्या किसने की? सेना ने। सेना ने जापान-विरोधी योद्धाओं की हत्या क्यों की? सेना आदेश का पालन कर रही थी, कुछ लोगों ने उसे हत्या करने का आदेश दिया था। सेना को हत्या करने का आदेश किसने दिया था? प्रतिक्रियावादियों ने[1]। साथियो! यदि तर्कसंगत रूप से कहा जाए तो जापान-विरोधी योद्धाओं की हत्या कौन करना

* यह भाषण कामरेड माओ त्सेतुङ ने फिङच्याङ हत्याकाण्ड के शहीदों की याद में येनान की जनता की ओर से की गई शोक-सभा में दिया था।

चाहेंगे ? उनकी हत्या पहले तो जापानी साम्राज्यवादी करना चाहेंगे, दूसरे वाङ चिङ-वेइ जैसे चीनी गद्दार और वतनफरोश। लेकिन यह हत्याकाण्ड शांघाई, पेफिङ, थ्येनचिन या नानकिङ, अथवा जापानी आक्रमणकारियों और चीनी गद्दारों द्वारा अधिकृत अन्य इलाकों में नहीं हुआ ; यह फिङच्याङ में, प्रतिरोध-युद्ध के पृष्ठभाग में हुआ, और जो लोग इसके शिकार हुए, उनमें नई चौथी सेना के फिङच्याङ सम्पर्क-कार्यालय के जिम्मेदार कामरेड थू चङ-खुन और लो चि-मिङ भी शामिल हैं। जाहिर है कि चीनी प्रतिक्रियावादियों के एक गिरोह ने जापानी साम्राज्यवादियों और वाङ चिङ-वेइ के आदेश पर ही यह हत्याकाण्ड किया। आत्मसमर्पण करने की तैयारी में, इन प्रतिक्रियावादियों ने बड़ी चापलूसी के साथ जापानियों और वाङ चिङ-वेइ के आदेश को कार्यान्वित कर दिया और पहले जापान-विरोधी दृढ़-संकल्पी योद्धाओं की हत्या कर दी। यह कोई मामूली बात नहीं है ; हमें अवश्य ही इसका विरोध करना चाहिए, हमें अवश्य ही इसकी निन्दा करनी चाहिए !

इस समय समूचा देश जापान का प्रतिरोध कर रहा है, समूचे देश की जनता ने प्रतिरोध की खातिर एक महान एकता कायम कर ली है। लेकिन इस महान एकता में शरीक कुछ लोग प्रतिक्रियावादी और आत्मसमर्पणवादी हैं। वे क्या कर रहे हैं ? आत्मसमर्पण का मार्ग प्रशस्त करने के लिए वे जापान-विरोधी लोगों की हत्या कर रहे हैं, प्रगति की राह में रोड़े अटका रहे हैं और जापानी आक्रमणकारियों व चीनी गद्दारों के साथ गठजोड़ कायम कर रहे हैं।

जापान-विरोधी साथियों की हत्या के इस गम्भीर मामले पर क्या किसी ने कोई कार्यवाही की है ? हत्या १२ जून को तीसरे

पहर ३ बजे हुई, लेकिन तब से आज पहली अगस्त तक, क्या हमने किसी को भी एक कदम आगे बढ़कर कोई कार्यवाही करते देखा है ? नहीं। यह काम किसे करना चाहिए था ? देश के कानून को और उसके न्यायाधीशों को। यदि ऐसी घटना शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र में हुई होती, तो हमारे उच्च न्यायालय ने बहुत पहले ही कार्यवाही कर ली होती। फिङच्याङ हत्याकाण्ड को हुए दो महीने होने वाले हैं, लेकिन कानून ने और न्यायाधीशों ने कुछ भी नहीं किया। इसका क्या कारण है ? कारण यह है कि चीन में एकीकरण [१] नहीं है।

चीन को अवश्य एकीकृत होना चाहिए, एकीकरण के बिना विजय प्राप्त नहीं हो सकती। लेकिन एकीकरण का मतलब क्या है ? इसका मतलब यह है कि सब लोगों को जापान का प्रतिरोध करना चाहिए, एकताबद्ध हो जाना चाहिए और प्रगति करनी चाहिए तथा यथायोग्य पुरस्कार और यथायोग्य दण्ड की व्यवस्था होनी चाहिए। पुरस्कार किन्हें दिया जाना चाहिए ? जापान-विरोधी लोगों को, एकता के समर्थकों को और प्रगतिशील लोगों को। दण्ड किन्हें दिया जाना चाहिए ? प्रतिरोध, एकता और प्रगति को तहस-नहस करने वाले चीनी गद्दारों और प्रतिक्रियावादियों को। क्या इस समय हमारा देश एकीकृत है ? नहीं। फिङच्याङ हत्याकाण्ड इसका प्रमाण है। इस घटना से पता चलता है कि जहां एकीकरण होना चाहिए वहां एकीकरण नहीं है। हम बहुत पहले से ही समूचे देश के एकीकरण की मांग करते आए हैं। पहले, प्रतिरोध-युद्ध के आधार पर एकीकरण किया जाए। लेकिन अब, जापान-विरोधी थू चङ-खुन, लो चि-मिङ और दूसरे कामरेडों को पुरस्कार दिए

जाने के बजाय उनकी निर्मम हत्या कर दी गई है, और उन बदमाशों को, जो प्रतिरोध-युद्ध का विरोध करते हैं, आत्मसमर्पण की तैयारी करते हैं और लोगों की हत्या करते हैं, दण्ड नहीं दिया जाता। यही है एकीकृत न होना। हमें इन बदमाशों और आत्मसमर्पणवादियों का विरोध करना चाहिए और इन हत्यारों को गिरफ्तार कर लेना चाहिए। दूसरे, एकता के आधार पर एकीकरण किया जाए। जो लोग एकता का पक्षपोषण करते हैं उन्हें पुरस्कार दिया जाना चाहिए, और जो लोग एकता में फूट डालते हैं उन्हें दण्ड दिया जाना चाहिए। लेकिन अब, एकता के समर्थक थू चङ-खुन, लो चि-मिङ और दूसरे कामरेडों को दण्ड दिया गया है और उनकी निर्मम हत्या कर दी गई है, जबकि एकता में फूट डालने वाले बदमाशों को जरा भी दण्ड नहीं दिया गया। यही है एकीकृत न होना। तीसरे, प्रगति के आधार पर एकीकरण किया जाए। समूचे देश को प्रगति करनी चाहिए, पीछे चलने वाले व्यक्तियों को आगे बढ़ने वाले व्यक्तियों के साथ कदम मिलाने का प्रयत्न करना चाहिए, आगे बढ़ने वाले व्यक्तियों को पीछे घसीटकर पिछड़ने वाले व्यक्तियों की रफ्तार के स्तर पर कदापि नहीं लाया जाना चाहिए। फिङच्याङ हत्याकाण्ड के हत्यारों ने प्रगतिशील लोगों की हत्या की। प्रतिरोध-युद्ध के शुरू होने से अब तक सैकड़ों कम्युनिस्टों और देशभक्तों की गुप्त रूप से हत्या की जा चुकी है, फिङच्याङ हत्याकाण्ड केवल इसकी हाल ही की मिसाल है। अगर यह सिलसिला जारी रहा तो चीन का विनाश हो जाएगा; हो सकता है कि तमाम जापान-विरोधी लोगों की हत्या कर दी जाए। जापान-विरोधी लोगों की हत्या का मतलब क्या है? इसका मतलब यह है कि चीन के प्रतिक्रियावादी

जापानी साम्राज्यवाद और वाङ चिङ-वेइ के आदेशों का पालन करके आत्मसमर्पण की तैयारी कर रहे हैं, और इसकी शुरुआत उन्होंने जापान-विरोधी सैनिकों, कम्युनिस्टों और देशभक्तों की हत्या से कर दी है। यदि इस प्रकार की घटनाओं को रोका न गया, तो इन प्रतिक्रियावादियों के हाथों चीन का अस्तित्व ही मिट जाएगा। इसलिए इस हत्याकाण्ड का सरोकार सारे देश से है, और यह एक बेहद संगीन मामला है। हमें अवश्य ही यह मांग करनी चाहिए कि राष्ट्रीय सरकार इन प्रतिक्रियावादियों को कड़ी से कड़ी सजा दे।

साथियों को यह बात भी समझ लेनी चाहिए कि हाल ही में जापानी साम्राज्यवाद ने गड़बड़ी पैदा करने की अपनी सरगर्मियां बहुत तेज कर दी हैं और जापान की मदद करने में अन्तरराष्ट्रीय साम्राज्यवाद भी पहले से और अधिक सक्रिय हो गया है[३] तथा चीन के भीतरी गद्दार, प्रच्छन्न और अप्रच्छन्न वाङ चिङ-वेइ जैसे लोग, प्रतिरोध-युद्ध में तोड़फोड़ करने व एकता में फूट डालने और प्रतिगामी कार्यवाहियां करने में और अधिक सक्रिय हो गए हैं। वे हमारे देश के अधिकतर भाग को दुश्मन के हवाले कर देना चाहते हैं, देश में फूट डालना चाहते हैं और गृहयुद्ध छिड़वाना चाहते हैं। इस समय देश में "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय"[४] नामक एक गुप्त तरीका व्यापक रूप से लागू किया जा रहा है। इसकी अन्तर्वस्तु पूर्णतया प्रतिक्रियावादी है, तथा यह जापानी साम्राज्यवाद के लिए लाभदायक है और प्रतिरोध, एकता व प्रगति के लिए हानिकारक है। "दुश्मन पार्टियां" कौन सी हैं? जापानी साम्राज्यवादी, वाङ चिङ-वेइ और चीनी गद्दार। क्या कम्युनिस्ट पार्टी और जापान-विरोधी सभी दूसरी पार्टियां, जो

एकताबद्ध होकर जापान का प्रतिरोध कर रही हैं, "दुश्मन पार्टियां" हैं? अब आत्मसमर्पणवादी, प्रतिक्रियावादी और कट्टरतावादी जानबूझकर जापान-विरोधी पांतों के भीतर टकराव और फूट पैदा कर रहे हैं। ऐसी हरकत सही है या गलत? यह बिलकुल गलत है (सभी लोगों द्वारा तालियां)। जहां तक "रोकथाम" का सवाल है, किनकी रोकथाम की जानी चाहिए? जापानी साम्राज्यवादियों, वाङ चिङ-वेइ, प्रतिक्रियावादियों और आत्मसमर्पणवादियों की रोकथाम की जानी चाहिए (सभी लोगों द्वारा तालियां)। भला कम्युनिस्ट पार्टी की, जो जापान का अत्यन्त दृढ़ता से प्रतिरोध करती है, जो सबसे क्रान्तिकारी और सबसे प्रगतिशील है, रोकथाम क्यों की जाए? यह बिलकुल गलत है। हम येनान के लोग इसका कड़ा विरोध और घोर प्रतिवाद करते हैं (सभी लोगों द्वारा तालियां)। हमें "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय" का विरोध करना चाहिए, क्योंकि यह एकता को नष्ट करने वाली तरह-तरह की अपराधपूर्ण हरकतों की जड़ है। प्रतिरोध-युद्ध को जारी रखने, एकता और प्रगति को बनाए रखने के लिए ही हम आज यहां यह सभा कर रहे हैं। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय" को रद्द कर देना चाहिए, आत्मसमर्पणवादियों और प्रतिक्रियावादियों को सजा देनी चाहिए तथा सभी क्रान्तिकारी साथियों, सभी जापान-विरोधी साथियों और जापान-विरोधी जनता की रक्षा करनी चाहिए (सभी लोगों द्वारा उत्साहपूर्वक तालियां और बुलन्द आवाज में नारे)।

नोट

१ १२ जून १९३९ को, च्याङ काई-शेक के गुप्त आदेश पर क्वोमिन्ताङ की २७वीं ग्रुप-सेना ने सैनिक भेजकर हुनान प्रान्त के फिङच्याङ में स्थित नई चौथी सेना के सम्पर्क-कार्यालय पर घेरा डलवा दिया और नई चौथी सेना के स्टाफ-अफसर कामरेड थू चङ-खुन और आठवीं राह सेना के मेजर और एडजुटेंट कामरेड लो चि-मिङ आदि छै साथियों की निर्मम हत्या कर दी। इस हत्याकाण्ड से सभी जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्रों की जनता में और क्वोमिन्ताङ शासित इलाकों के न्यायप्रिय लोगों में रोष फैल गया। च्याङ काई-शेक और उसके अनुयायियों के आदेश पर ही यह हत्याकाण्ड हुआ। कामरेड माओ त्सेतुङ ने अपने भाषण में जिन प्रतिक्रियावादियों की भर्त्सना की है वे च्याङ काई-शेक और उसके अनुयायी ही हैं।

१ कामरेड माओ त्सेतुङ ने "एकीकरण" की यह व्याख्या क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों की उस साजिश के प्रत्युत्तर में पेश की है जिसमें क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों ने "एकीकरण" के नाम पर कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली जापान-विरोधी सशस्त्र सेनाओं और जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों का विनाश करने की कोशिश की थी। जापान का संयुक्त प्रतिरोध करने के लिए क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग फिर शुरू होने के बाद से "एकीकरण" का यह नारा ही कम्युनिस्ट पार्टी पर प्रहार करने के लिए क्वोमिन्ताङ का मुख्य हथियार बन गया। उसने कम्युनिस्ट पार्टी पर ये आरोप लगाए कि वह नया राग अलापती है, एकीकरण में बाधा डालती है और प्रतिरोध को हानि पहुंचाती है। यह प्रतिक्रियावादी शोरगुल उस समय और भी बढ़ गया जबकि जनवरी १९३९ में क्वोमिन्ताङ की पांचवीं केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के पांचवें पूर्ण अधिवेशन में च्याङ काई-शेक द्वारा प्रस्तावित "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय" स्वीकृत किए गए। कामरेड माओ त्सेतुङ ने "एकीकरण" के नारे को क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों से छीनकर उसे क्वोमिन्ताङ की जन-विरोधी और राष्ट्र-विरोधी फूटपरस्त हरकतों का विरोध करने के

लिए एक क्रान्तिकारी नारा बना दिया।

[1] देखिए कामरेड माओ त्सेतुङ की रचना "आत्मसमर्पणवादी कार्यवाहियों का विरोध करो" में किया गया विश्लेषण। अक्तूबर १९३८ में ऊहान के पतन के बाद, क्वोमिन्ताङ के प्रति जापानी आक्रमणकारियों की मुख्य नीति थी राजनीतिक हथकण्डों से उसे फुसलाकर आत्मसमर्पण करा लेना। ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवाद समेत अन्तरराष्ट्रीय साम्राज्यवाद ने भी बार-बार च्याङ काई-शेक को शान्तिपूर्ण समझौता करने की सलाह दी और ब्रिटिश प्रधान मंत्री चेम्बरलेन ने तथाकथित "दूरपूर्व के पुनर्निर्माण" में भाग लेने का इरादा प्रकट किया। १९३९ में जापानी आक्रमणकारियों और अन्तरराष्ट्रीय साम्राज्यवाद ने अपनी षड्यंत्रकारी सरगरमियां बढ़ा दीं। उसी वर्ष अप्रैल में चीन स्थित ब्रिटिश राजदूत क्लार्क-कर ने शान्ति-वार्ता का बन्दोबस्त करने के लिए च्याङ काई-शेक और जापानी आक्रमणकारियों के बीच मध्यस्थ का काम किया। जुलाई में ब्रिटेन और जापान के बीच समझौता हो गया, जिसके अनुसार ब्रिटिश सरकार जापानी आक्रमणकारियों द्वारा चीन में उत्पन्न की गई तथाकथित "यथार्थ स्थिति" को पूर्ण मान्यता देने के लिए तैयार हो गई।

[2] १९३९ में क्वोमिन्ताङ के केन्द्रीय अधिकारियों ने गुप्त रूप से "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय" नामक दस्तावेज जारी किया जिसमें यह व्यवस्था की गई कि कम्युनिस्टों और तमाम दूसरे प्रगतिशील लोगों के विचारों, भाषणों और कार्यवाहियों पर कड़ी पाबन्दी लगा दी जाए और जापान-विरोधी तमाम जन-संगठनों को नष्ट करने की कोशिश की जाए, और यह व्यवस्था भी की गई कि उन स्थानों में जहां क्वोमिन्ताङ की राय में "कम्युनिस्ट सबसे अधिक सक्रिय हों", जनता की गतिविधियों पर हर समय निगरानी रखने और उन पर नियंत्रण लगाने के लिए "सामूहिक रूप से जिम्मेदारी उठाने और दण्ड भुगतने का कानून" लागू किया जाए और "पाओ-च्या" प्रशासनिक संगठनों में व्यापक रूप से "सूचना जाल" अर्थात प्रतिक्रान्तिकारी खुफिया दल स्थापित किए जाएं।

नई अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति के बारे में "नव चीन दैनिक" के संवाददाता को इन्टरव्यू

१ सितम्बर १९३९

संवाददाता : सोवियत संघ और जर्मनी के बीच हुई अनाक्रमण-सन्धि[1] का महत्व क्या है?

माओ त्सेतुङ : सोवियत-जर्मन अनाक्रमण-सन्धि सोवियत संघ की बढ़ती हुई समाजवादी शक्ति और सोवियत सरकार की अडिग शान्ति-नीति का फल है। इस सन्धि ने प्रतिक्रियावादी अन्तरराष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के, जिसका प्रतिनिधित्व चेम्बरलेन और डालादियर करते हैं, सोवियत-जर्मन युद्ध भड़काने के षड्यंत्रों को चकनाचूर कर दिया है, कम्युनिस्ट-विरोधी जर्मन-इटालवी-जापानी गुट द्वारा सोवियत संघ के खिलाफ की गई घेरेबन्दी को तोड़ दिया है, सोवियत संघ और जर्मनी के बीच शान्ति को मजबूत बनाया है और सोवियत संघ में समाजवादी निर्माण की प्रगति की रक्षा की है। पूर्व में, यह सन्धि जापान पर आघात करती है और चीन को सहायता पहुंचाती है; यह चीन की जापान-विरोधी शक्तियों की स्थिति को मजबूत बनाती है और चीन के आत्मसमर्पणवादियों पर प्रहार करती है। ये सभी बातें स्वतंत्रता और मुक्ति हासिल करने में सारी दुनिया की

जनता की मदद करने के लिए एक आधार प्रस्तुत करती हैं। यही है सोवियत-जर्मन अनाक्रमण-सन्धि का सम्पूर्ण राजनीतिक महत्व।

प्रश्न : कुछ लोग अभी भी स्पष्ट रूप से यह नहीं समझ पाए कि सोवियत-जर्मन अनाक्रमण-सन्धि आंग्ल-फ्रांसीसी-सोवियत वार्ता के टूटने का ही नतीजा है, बल्कि उनका विचार यह है कि आंग्ल-फ्रांसीसी-सोवियत वार्ता सोवियत-जर्मन सन्धि के कारण ही टूटी है। कृपा करके आप इस बात पर प्रकाश डालिए कि आंग्ल-फ्रांसीसी-सोवियत वार्ता क्यों असफल हुई।

उत्तर : वार्ता के असफल होने का कारण महज यह था कि बरतानवी और फ्रांसीसी सरकारों के दिलों में बेईमानी थी। हाल के वर्षों में प्रतिक्रियावादी अन्तरराष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग, और खासकर बरतानिया और फ्रांस का पूंजीपति वर्ग, फासिस्ट जर्मनी, इटली और जापान के आक्रमण के प्रति एक प्रतिक्रियावादी नीति यानी "गैर-हस्तक्षेप" की नीति पर बराबर चलता रहा है। इस नीति का उद्देश्य है आक्रमणकारी युद्धों को उकसावा देना और उनसे फायदा उठाना। इसीलिए एक सच्चा आक्रमण-विरोधी मोर्चा बनाने के लिए सोवियत संघ द्वारा बार-बार पेश किए गए प्रस्तावों को बरतानिया और फ्रांस ने साफ तौर से ठुकरा दिया; उन्होंने एक तरफ खड़े होकर "गैर-हस्तक्षेप" का रुख अपनाया तथा जर्मन, इटालवी और जापानी आक्रमण को उकसावा दिया। उनका उद्देश्य यह था कि जब युद्ध में भाग लेने वाले दोनों पक्ष एक दूसरे को थका देंगे, तो वे आगे बढ़कर हस्तक्षेप करेंगे। इस प्रतिक्रियावादी नीति पर अमल करते हुए, उन्होंने आधे चीन का बलिदान करके उसे जापान को सौंप दिया तथा पूरे के पूरे अबीसीनिया, स्पेन, आस्ट्रिया और

चेकोस्लोवाकिया का बलिदान करके उन्हें जर्मनी और इटली को सौंप दिया[२]। इसके बाद वे सोवियत संघ का बलिदान करना चाहते थे। यह साजिश हाल की आंग्ल-फ्रांसीसी-सोवियत वार्ता के दौरान स्पष्ट रूप से जाहिर हो गई। यह वार्ता १५ अप्रैल से २३ अगस्त तक चार महीने से अधिक चली और इसके दौरान सोवियत संघ ने निहायत ऊंचे दर्जे के धीरज से काम लिया। लेकिन, बरतानिया और फ्रांस शुरू से अन्त तक समानता और पारस्परिकता के उसूल को ठुकराते रहे; उन्होंने यही मांग की कि सोवियत संघ उनकी सुरक्षा की गारन्टी करे, लेकिन उन्होंने खुद सोवियत संघ और बाल्टिक तट के छोटे देशों की सुरक्षा की गारन्टी करने से इनकार कर दिया ताकि एक मार्ग खुला रहे जिसके जरिए जर्मनी हमला कर सके, और उन्होंने सोवियत सेनाओं को आक्रमणकारियों से लड़ने के लिए पोलैण्ड से गुजरने तक नहीं दिया। यही कारण है कि वार्ता टूट गई। इसी बीच, जर्मनी ने सोवियत संघ के विरुद्ध अपनी कार्यवाहियां बन्द कर देने और तथाकथित "कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल विरोधी समझौता"[३] रद्द कर देने की इच्छा प्रकट की तथा सोवियत सीमाओं को अलंघनीय मान लिया, और इस तरह सोवियत-जर्मन अनाक्रमण-सन्धि हो गई। अन्तरराष्ट्रीय प्रतिक्रियावादियों और खास तौर से आंग्ल-फ्रांसीसी प्रतिक्रियावादियों की "गैर-हस्तक्षेप" की नीति "पहाड़ पर बैठकर बाघों के लड़ने का तमाशा देखने" की नीति है, दूसरों को हानि पहुंचाकर स्वयं लाभ उठाने की सरासर साम्राज्यवादी नीति है। इसकी शुरुआत चेम्बरलेन के कार्यभार सम्भालने से हुई और पिछले साल सितम्बर की म्यूनिख-सन्धि में यह अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई और

अन्त में, हाल की आंग्ल-फ्रांसीसी-सोवियत वार्ता में भहराकर ढह गई। अब से यह परिस्थिति अनिवार्य रूप से आंग्ल-फ्रांसीसी और जर्मन-इटालवी इन दो बड़े साम्राज्यवादी गुटों के बीच सीधी भिड़न्त के रूप में विकसित होगी। मैंने अक्तूबर १९३८ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की छठी केन्द्रीय कमेटी के छठे पूर्ण अधिवेशन में कहा था कि "चेम्बरलेन की नीति का अनिवार्य परिणाम 'किसी बड़े पत्थर को उठाकर खुद अपने ही पांव तोड़ बैठने' के समान होगा।" चेम्बरलेन ने दूसरों को हानि पहुंचाने के प्रयोजन से शुरुआत की, लेकिन उसका अन्त खुद अपनी ही बरबादी के रूप में हुआ। यह विकास का नियम है जो सभी प्रतिक्रियावादी नीतियों पर लागू होता है।

प्रश्न : आप की राय में मौजूदा परिस्थिति का किस तरह विकास होगा ?

उत्तर : मौजूदा अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति एक नए दौर में प्रवेश कर चुकी है। कुछ समय से चल रहे दूसरे साम्राज्यवादी युद्ध की एकांगी परिस्थिति, यानी एक ऐसी परिस्थिति जिसमें "गैर-हस्तक्षेप" की नीति के परिणामस्वरूप साम्राज्यवादी राज्यों का एक गुट तो हमला करता रहा है और दूसरा हाथ पर हाथ धरे बैठा तमाशा देखता रहा है, जहां तक योरप का ताल्लुक है, बदल जाएगी और उसका स्थान अनिवार्य रूप से सर्वव्यापी युद्ध की परिस्थिति ले लेगी। दूसरा साम्राज्यवादी युद्ध एक नए दौर में प्रवेश कर चुका है।

योरप में, जर्मन-इटालवी और आंग्ल-फ्रांसीसी साम्राज्यवादी गुटों के बीच, जो उपनिवेशों की जनता पर अपना शासन कायम करने के लिए झगड़ रहे हैं, बड़े पैमाने का साम्राज्यवादी युद्ध छिड़

जाने में अब देर नहीं है। इस युद्ध में, दोनों पक्ष जनता को धोखा देने और लोकमत का समर्थन पाने के लिए बड़ी बेहयाई से अपने पक्ष को न्यायपूर्ण और विपक्ष को अन्यायपूर्ण घोषित करेंगे। वास्तव में, यह एक धोखाधड़ी है। कारण, दोनों ही पक्षों का उद्देश्य साम्राज्यवादी है, तथा दोनों ही पक्ष उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों पर अपना-अपना प्रभुत्व जमाने और प्रभाव-क्षेत्रों की छीना-झपटी के लिए लड़ रहे हैं और एक अपहारक युद्ध कर रहे हैं। आज, वे पोलैण्ड, बलकान प्रायद्वीप और भूमध्य सागर के तटों की छीना-झपटी के लिए लड़ रहे हैं। इस तरह का युद्ध एक न्यायपूर्ण युद्ध कतई नहीं है। दुनिया में न्यायपूर्ण युद्ध केवल वही युद्ध होता है जो लूटपाट के लिए नहीं बल्कि मुक्ति के लिए हो। कम्युनिस्ट किसी भी अपहारक युद्ध का किसी भी हालत में समर्थन नहीं करेंगे। लेकिन वे हर न्यायपूर्ण युद्ध, यानी लूटपाट के लिए नहीं बल्कि मुक्ति के लिए लड़े गए हर युद्ध का जमकर समर्थन करेंगे और संघर्ष के अग्रिम मोर्चे पर डटे रहेंगे। चेम्बरलेन और डालादियर की धमकियों और लालच से दूसरी इन्टरनेशनल में शामिल सामाजिक-जनवादी पार्टियों का विघटन हो रहा है। उनका एक भाग, यानी उच्च श्रेणी के प्रतिक्रियावादी लोग, वही पुराना विनाशकारी रास्ता अपना रहा है जिसे पहले विश्वयुद्ध में अपनाया गया था, और वह नए साम्राज्यवादी युद्ध का समर्थन करने के लिए तैयार है। लेकिन दूसरा भाग कम्युनिस्टों के साथ मिलकर युद्ध और फासिज्म के विरुद्ध जन-मोर्चा बनाएगा। आज चेम्बरलेन और डालादियर जर्मनी और इटली के पदचिन्हों पर चल रहे हैं और कदम-ब-कदम प्रतिक्रियावादी बनते जा रहे हैं, तथा वे युद्ध-लामबन्दी का लाभ

उठाकर अपने-अपने देश में सरकारी संगठनों को फासिज्म का जामा पहना रहे हैं और अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण कर रहे हैं। संक्षेप में, दो बड़े साम्राज्यवादी गुट बड़े पागलपन से युद्ध की तैयारियां कर रहे हैं तथा लाखों-करोड़ों लोगों को कत्लेआम के खतरे का सामना करना पड़ रहा है। ये सब बातें निस्सन्देह आम जनता में प्रतिरोध आन्दोलनों को जागृत कर देंगी। चाहे जर्मनी में हो या इटली में, चाहे बरतानिया में हो या फ्रांस में, चाहे योरप में हो या दुनिया के किसी दूसरे भाग में, लोग यदि साम्राज्यवादियों की तोपों का ईंधन नहीं बनना चाहते, तो वे निश्चय ही उठ खड़े होंगे और हर सम्भव तरीके से साम्राज्यवादी युद्ध का विरोध करेंगे।

पूंजीवादी संसार में उपर्युक्त दो बड़े गुटों के अलावा एक तीसरा गुट भी है, जिसका अगुवा अमरीका है और जिसमें मध्य और दक्षिणी अमरीका के बहुत से देश शामिल हैं। अपने हित को ध्यान में रखते हुए यह गुट फिलहाल युद्ध में भाग नहीं लेगा। तटस्थता के नाम पर अमरीकी साम्राज्यवाद फिलहाल युद्ध के किसी भी पक्ष में शामिल नहीं होगा, ताकि वह बाद में सामने आकर पूंजीवादी दुनिया का नेतृत्व हथियाने के लिए संघर्ष कर सके। यह बात विश्वशान्ति आन्दोलन के लिए लाभप्रद है कि अमरीकी पूंजीपति वर्ग फिलहाल अपने देश में लोकशाही और शान्तिकालीन आर्थिक जीवन को समाप्त करने के लिए तैयार नहीं है।

सोवियत-जर्मन सन्धि की मार से बुरी तरह आहत जापानी साम्राज्यवाद को और ज्यादा बड़ी कठिनाइयों से परिपूर्ण भविष्य का सामना करना पड़ रहा है। जापान के दो अन्दरूनी पक्ष विदेश नीति के सवाल पर आपस में झगड़ रहे हैं। सैन्यवादी तत्व चीन

पर एकाधिकार कायम करने, दक्षिण-पूर्वी एशिया पर हमला करने और बरतानिया, अमरीका और फ्रांस को पूर्व से निकाल बाहर करने के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जर्मनी और इटली से गठबंधन करने की सोच रहे हैं; दूसरी ओर, पूंजीपति वर्ग का एक भाग बरतानिया, अमरीका और फ्रांस को रियायतें देने का पक्षपोषण करता है, ताकि जापान चीन को लूटने पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सके। आज, बरतानिया के साथ समझौता कर लेने का एक जबरदस्त रुझान मौजूद है। बरतानवी प्रतिक्रियावादी, जापान के साथ मिलकर चीन का बंटवारा करने के साथ-साथ जापान को वित्तीय और आर्थिक सहायता देंगे, जिसके बदले में जापान पूर्व में बरतानिया के हितों की रखवाली करने वाले कुत्ते के रूप में उनकी सेवा करेगा, चीन के राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन को कुचल देगा और सोवियत संघ पर अंकुश लगाएगा। इसलिए, चाहे कुछ भी हो, चीन को गुलाम बनाने का जापान का बुनियादी मकसद कभी नहीं बदलेगा। भले ही इस बात की बहुत अधिक सम्भावना न हो कि जापान चीन में नियमित मोर्चों पर बड़े पैमाने का सैनिक हमला करेगा, लेकिन वह "चीनियों को गुलाम बनाने के लिए चीनियों का इस्तेमाल करने"[४] के अपने राजनीतिक अभियान और "युद्ध के जरिए युद्ध का पोषण करने"[५] के अपने आर्थिक आक्रमण में और तेजी लाएगा और साथ ही अपने अधिकृत इलाकों में पागलपन के साथ फौजी "सफाया करना"[६] जारी रखेगा; इसके अलावा, वह बरतानिया के माध्यम से चीन को आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर करेगा। अनुकूल घड़ी आने पर वह पूर्व के म्यूनिख का प्रस्ताव रखेगा और कुछ अपेक्षाकृत बड़ी रियायतों का लालच देकर चीन

को आत्मसमर्पण की शर्तें मान लेने के लिए फुसलाएगा और धमकाएगा, ताकि वह चीन को गुलाम बनाने के अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सके। जापानी शासक वर्ग मंत्रिमण्डल में चाहे कैसा ही परिवर्तन क्यों न करे, जब तक जापानी जनता क्रान्ति के लिए नहीं उठ खड़ी होती तब तक जापान का यह साम्राज्यवादी उद्देश्य कभी नहीं बदलेगा।

पूंजीवादी दुनिया के बाहर एक प्रकाशमय दुनिया है और वह है समाजवादी सोवियत संघ। सोवियत-जर्मन सन्धि सोवियत संघ को इस बात का मौका देती है कि वह विश्वशान्ति आन्दोलन को तथा जापान का प्रतिरोध करने में चीन को और अधिक सहायता दे सके।

अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति का मेरा मूल्यांकन यही है।

प्रश्न : ऐसी परिस्थिति में चीन का भविष्य क्या है?

उत्तर : दो सम्भावनाएं हैं। एक सम्भावना प्रतिरोध, एकता और प्रगति पर डटे रहने की है, जिसका मतलब होगा राष्ट्र का पुनरुद्धार, और दूसरी सुलह-समझौते, फूटपरस्ती और प्रतिगमन की है, जिसका मतलब होगा राष्ट्र की गुलामी।

नई अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में जबकि जापान को और ज्यादा कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है और चीन सुलह-समझौता करने से दृढ़ता से इनकार कर रहा है, हमारे लिए रणनीतिक दृष्टि से पीछे हटने की मंजिल समाप्त हो जाती है और रणनीतिक ठहराव की मंजिल शुरू हो जाती है। रणनीतिक ठहराव की मंजिल जवाबी हमले की तैयारी की मंजिल है।

लेकिन, नियमित मोर्चे पर ठहराव का मतलब दुश्मन के पृष्ठभाग

में ठहराव का ठीक उल्टा होता है; नियमित मोर्चे पर ठहराव का उदय होते ही दुश्मन के पृष्ठभाग में संघर्ष संगीन रूप ले लेगा। इसलिए, ऊहान के पतन के बाद से शत्रु अपने अधिकृत इलाकों में (मुख्य रूप से उत्तरी चीन में) जो बड़े पैमाने का फौजी "सफाया" कर रहा है, वह न केवल जारी रहेगा बल्कि और भी तेज हो जाएगा। इतना ही नहीं, चूंकि शत्रु की मौजूदा मुख्य नीति "चीनियों को गुलाम बनाने के लिए चीनियों का इस्तेमाल करने" के राजनीतिक अभियान की और "युद्ध के जरिए युद्ध का पोषण करने" के आर्थिक आक्रमण की नीति है, और चूंकि पूर्व में बरतानिया की नीति का लक्ष्य दूरपूर्व का म्यूनिख है, इसलिए चीन का अधिकतर भाग दुश्मन को समर्पित कर दिए जाने और भीतरी फूट पड़ने का खतरा बेहद बढ़ जाएगा। चीन अब भी दुश्मन के मुकाबले में काफी कमजोर है, और जब तक समूचा देश कठिन संघर्ष के लिए एकजुट नहीं हो जाता तब तक वह जवाबी हमले के लिए शक्ति जुटाने में समर्थ नहीं होगा।

इसलिए, हमारे देश के लिए सबसे गम्भीर कार्य आज भी यही है कि प्रतिरोध-युद्ध पर डटे रहा जाए, और इसमें तनिक भी ढील न आने दी जाए।

निस्सन्देह, चीन को मौजूदा अवसर किसी भी सूरत में हाथ से नहीं निकलने देना चाहिए या कोई गलत फैसला कतई नहीं करना चाहिए, बल्कि उसे एक सुदृढ़ राजनीतिक रुख अपनाना चाहिए।

दूसरे शब्दों में : पहले, प्रतिरोध-युद्ध के रुख पर डटे रहना और सुलह-समझौते की हर चाल का विरोध करना। वाङ चिङ-वेइ जैसे सभी प्रच्छन्न और अप्रच्छन्न लोगों पर दृढ़ता से करारी चोट

करनी चाहिए। चाहे जापान प्रलोभन दे या बरतानिया, चीन को दृढ़तापूर्वक इनकार कर देना चाहिए और उसे पूर्व के म्यूनिख में हरगिज भाग नहीं लेना चाहिए।

दूसरे, एकता के रुख पर डटे रहना और फूट डालने की हर चाल का विरोध करना। ऐसी चालों के प्रति भारी सतर्कता बरतनी चाहिए, चाहे वे जापानी साम्राज्यवाद की चालें हों या किसी दूसरे देश की, और चाहे वे घरेलू आत्मसमर्पणवादियों की चालें हों। प्रतिरोध-युद्ध के लिए हानिप्रद सभी अन्दरूनी टकरावों पर सख्ती से रोक लगा दी जानी चाहिए।

तीसरे, प्रगति के रुख पर दृढ़ता से डटे रहना और हर प्रकार के प्रतिगमन का विरोध करना। प्रतिरोध-युद्ध को हानि पहुंचाने वाले हर सिद्धान्त, व्यवस्था और कदम की, चाहे वह सैनिक, राजनीतिक, वित्तीय या आर्थिक क्षेत्र में हो अथवा पार्टी के मामलों में, चाहे वह संस्कृति व शिक्षा के क्षेत्र में हो अथवा जन-आन्दोलन में, नए सिरे से परख की जानी चाहिए और उसमें कारगर रूप से सुधार किया जाना चाहिए, ताकि इससे प्रतिरोध-युद्ध में मदद मिल सके।

यदि ये सब काम पूरे कर लिए गए, तो चीन जवाबी हमले के लिए अपनी शक्ति कारगर रूप से जुटा सकेगा।

अब से समूचे देश को चाहिए कि वह "जवाबी हमले की तैयारी" को प्रतिरोध-युद्ध में अपना सर्वोपरि कार्य बना ले।

अब यह जरूरी हो गया है कि हम एक ओर तो नियमित मोर्चे पर की गई रक्षात्मक कार्यवाहियों का गम्भीरता से समर्थन करें और दुश्मन के पृष्ठभाग में चल रही लड़ाई की जोरदार सहायता करें, तथा दूसरी ओर राजनीतिक, सैनिक और दूसरे प्रकार के सुधार

लागू करें और अपार शक्ति जुटा लें, ताकि मौका आने पर खोए हुए इलाकों को फिर से अपने कब्जे में करने के लिए राष्ट्र की समूची शक्ति बड़े पैमाने के जवाबी हमले में लगाई जा सके।

नोट

१ सोवियत-जर्मन अनाक्रमण सन्धि २३ अगस्त १९३९ को हुई थी।

२ अक्तूबर १९३५ में इटली ने अबीसीनिया पर सशस्त्र हमला शुरू किया और मई १९३६ में सारे अबीसीनिया पर कब्जा कर लिया। जुलाई १९३६ में जर्मनी और इटली ने स्पेन के घरेलू मामलों में संयुक्त रूप से सशस्त्र हस्तक्षेप किया और जन-मोर्चा सरकार के खिलाफ विप्लव करने में फासिस्ट फ्रैंको का समर्थन किया। जर्मनी व इटली के हस्तक्षेपकारियों और फ्रैंको की विप्लवी फौजों के खिलाफ एक लम्बे युद्ध के बाद जन-मोर्चा सरकार मार्च १९३९ में हार गई। जर्मनी ने मार्च १९३८ में सेना भेजकर आस्ट्रिया पर कब्जा कर लिया और उसी वर्ष अक्तूबर में चेकोस्लोवाकिया के सुदेतन क्षेत्र पर कब्जा कर लिया। मार्च १९३९ में जर्मनी का सारे चेकोस्लोवाकिया पर कब्जा हो गया। बरतानवी और फ्रांसीसी सरकारों की "गैर-हस्तक्षेप" की नीति से शह और उकसावा पाकर ही फासिस्ट जर्मनी और इटली ने पागलपन से उपरोक्त आक्रमणकारी कार्यवाहियां कीं और उनमें सफलता प्राप्त की।

३ "कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल विरोधी समझौता" जापान और जर्मनी के बीच नवम्बर १९३६ में हुआ था; नवम्बर १९३७ में इटली भी इसमें शामिल हो गया।

४ "चीनियों को गुलाम बनाने के लिए चीनियों का इस्तेमाल करना" चीन पर आक्रमण करने में जापानी साम्राज्यवादियों द्वारा अपनाई गई एक साजिशभरी चाल थी। जापानी साम्राज्यवादी चीन में अपने हितों की सेवा करने वाले तत्वों का पालन-पोषण करते आए थे, ताकि वे चीन के भीतर फूट डालकर आक्रमण

करने का अपना मकसद हासिल कर सकें। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध छिड़ने के बाद, सबसे अधिक दृढ़ संकल्प वाली जापान-विरोधी शक्ति, यानी कम्युनिस्ट पार्टी, पर अंकुश लगाने के लिए उन्होंने न केवल क्वोमिन्ताङ के भीतर मौजूद अप्रच्छन्न जापान-परस्त गुट का, जिसका सरगना वाङ चिङ-वेइ था, इस्तेमाल किया बल्कि च्याङ काई-शेक गुट से भी काम लिया। १९३९ में जापान ने च्याङ काई-शेक की सेनाओं पर हमला करना बन्द कर दिया और उसे कम्युनिस्ट-विरोधी गतिविधियों में राजनीतिक रूप से बढ़ावा दिया। यह "चीनियों को गुलाम बनाने के लिए चीनियों का इस्तेमाल करने" की नीति को अमली जामा पहनाना था।

५ जापानी साम्राज्यवादियों ने अपने आक्रमणकारी युद्ध के व्यय को पूरा करने के लिए चीन में अपने अधिकृत इलाकों में निर्मम लूट-खसोट की। जापानी सैन्यवादी इसे "युद्ध के जरिए युद्ध का पोषण करना" कहते थे।

६ जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान, जापानी आक्रमणकारियों ने जनता के मुक्त क्षेत्रों में सब कुछ जला डालने, सबको मार डालने और सब कुछ लूट लेने की "तीन तरह का सफाया करने" की बर्बरतापूर्ण नीति लागू की। दुश्मन इसे "सफाया करना" कहा करते थे।

केन्द्रीय समाचार-एजेन्सी, "साओताङ पाओ" और "शिनमिन पाओ"[1] के तीन संवाददाताओं को इन्टरव्यू

१६ सितम्बर १९३९

संवाददाता : क्या हम कुछ प्रश्नों पर आपके विचार पूछ सकते हैं? हमने आज के "नव चीन समाचार" में आपका १ सितम्बर का बयान पढ़ लिया है; इसमें हमारे कुछ सवालों के जवाब तो मिल गए हैं, फिर भी कुछ सवाल ऐसे रह गए हैं जिन पर हम चाहेंगे कि आप कुछ और विस्तार से प्रकाश डालें। हमारे लिखित सवाल तीन भागों में हैं और यदि आप हरेक सवाल पर अपने विचार प्रकट करें तो हमें खुशी होगी।

माओ त्सेतुङ : मैं आपकी प्रश्न-सूची के अनुसार ही इनका जवाब दूंगा।

आप पूछते हैं कि प्रतिरोध-युद्ध ठहराव की मंजिल में पहुंच गया है या नहीं। मेरा विचार है कि एक मायने में यह पहुंच गया है – इस मायने में कि आज एक नई अन्तरराष्ट्रीय स्थिति मौजूद है और जापान को पहले से बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है जबकि चीन सुलह-समझौते का डटकर विरोध करता है। यहां हम इस सम्भावना से इनकार नहीं करते कि शत्रु अब भी अपेक्षाकृत

बड़े पैमाने पर आक्रमणात्मक मुहिमें चला सकता है ; मसलन, वह पेइहाए, छाङशा और यहां तक कि शीआन पर भी हमला कर सकता है। जब हम यह कहते हैं कि शत्रु का बड़े पैमाने का रणनीतिक आक्रमण करना और हमारा रणनीतिक दृष्टि से पीछे हटना एक मायने में बुनियादी रूप से समाप्त हो चुके हैं, तो हमारा मतलब यह नहीं होता कि आक्रमण करने और पीछे हटने की सम्भावना अब बिलकुल नहीं रह गई है। जहां तक नई मंजिल में विशेष कार्य का सम्बन्ध है, यह विशेष कार्य जवाबी हमले के लिए तैयारी करना है, और इस धारणा में सभी बातें आ जाती हैं। दूसरे शब्दों में, ठहराव की मंजिल में चीन को भावी जवाबी हमलों के लिए सभी आवश्यक शक्तियां जुटा लेनी होंगी। जवाबी हमले के लिए तैयारी करने का मतलब यह नहीं है कि जवाबी हमला अविलम्ब शुरू कर दिया जाए, क्योंकि जब तक स्थिति परिपक्व न हो जाए, जवाबी हमला नहीं किया जा सकता। यहां हम रणनीतिक प्रत्याक्रमण की चर्चा कर रहे हैं, मुहिमों में प्रत्याक्रमण की नहीं। मुहिमों में प्रत्याक्रमण, मसलन दक्षिण-पूर्वी शानशी में "सफाया करने" की दुश्मन की फौजी कार्यवाहियों को परास्त करने के लिए हमारा प्रत्याक्रमण, न केवल सम्भव है बल्कि परम आवश्यक भी है। लेकिन बड़े पैमाने के रणनीतिक प्रत्याक्रमण का समय अभी नहीं आया है, और इस समय हम इसके लिए सक्रिय रूप से तैयारी करने के दौर में हैं। इस दौर में भी हमें दुश्मन द्वारा नियमित मोर्चे पर छेड़ी गई सभी सम्भावित आक्रमणात्मक मुहिमों को विफल कर देना होगा।

नए दौर के कार्यों को अलग-अलग मदों में यों बांटा जा सकता है : शत्रु के पृष्ठभाग में छापामार युद्ध जारी रखना चाहिए, उसकी "सफाया करने" की फौजी कार्यवाहियों को चकनाचूर कर देना चाहिए और उसके आर्थिक आक्रमण को परास्त कर देना चाहिए ; नियमित मोर्चे पर अपनी फौजी रक्षा को सुदृढ़ बनाना चाहिए और दुश्मन की हर सम्भावित आक्रमणात्मक मुहिम को विफल कर देना चाहिए ; बड़े पृष्ठभाग में मुख्य कार्य है सक्रिय रूप से राजनीतिक सुधार करना। जवाबी हमले की तैयारी की विशेष अन्तर्वस्तु ये कार्य ही हैं।

अन्दरूनी राजनीतिक सुधार अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इस समय दुश्मन मुख्य रूप से राजनीतिक अभियान ही चला रहा है, और इसलिए हमें विशेष रूप से अपने राजनीतिक प्रतिरोध को सुदृढ़ बनाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, लोकशाही की समस्या यथाशीघ्र हल कर लेनी चाहिए, क्योंकि केवल इसी उपाय से हम राजनीतिक प्रतिरोध के लिए अपनी क्षमता बढ़ा सकते हैं और सैन्य-बल जुटा सकते हैं। प्रतिरोध-युद्ध में चीन को मुख्य रूप से अपने ही प्रयासों पर निर्भर रहना है। हम अपने ही प्रयासों पर निर्भर रहकर पुनरुत्थान करने पर कायम रहे हैं और आज की नई अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में यह बात और भी महत्वपूर्ण बन गई है। ऐसे पुनरुत्थान का सारतत्व है लोकशाही।

प्रश्न : आपने अभी कहा है कि प्रतिरोध-युद्ध में अपने ही प्रयासों के बल पर विजय हासिल करने के लिए लोकशाही अनिवार्य है। मौजूदा परिस्थितियों में ऐसी व्यवस्था कैसे कायम की जा सकती है ?

उत्तर : फौजी शासन, राजनीतिक अभिभावकता और वैधानिक

सरकार, ये तीन दौर[१] डा० सुन यात-सेन ने ही पेश किए थे। लेकिन उन्होंने अपनी मृत्यु के कुछ दिन पहले जारी किए गए "उत्तर की ओर प्रस्थान करने के बारे में वक्तव्य"[२] में इन तीन दौरों की चर्चा नहीं की, बल्कि यह कहा कि राष्ट्रीय एसेम्बली अविलम्ब बुलाई जानी चाहिए। इससे यह जाहिर हो जाता है कि बदलती परिस्थितियों को देखते हुए डा० सुन यात-सेन ने अनेक वर्ष पहले ही अपने विचारों में स्वयं परिवर्तन कर लिया था। आज की गम्भीर स्थिति में जबकि प्रतिरोध-युद्ध चल रहा है, राष्ट्रीय गुलामी के संकट को टालने और दुश्मन को मार भगाने के लिए यह अनिवार्य है कि राष्ट्रीय एसेम्बली जल्दी बुलाई जाए और जनवादी सरकार की स्थापना की जाए। इस सवाल पर अलग-अलग मत हैं। कुछ लोग कहते हैं कि आम जनता अबोध है और जनवादी सरकार की स्थापना नहीं की जा सकती। यह विचार गलत है। प्रतिरोध-युद्ध में आम जनता ने बड़ी तेजी से प्रगति की है और नेतृत्व किए जाने और सही नीति अपनाए जाने पर निश्चय ही जनवादी सरकार की स्थापना की जा सकती है। मसलन, उत्तरी चीन में लोकशाही को अमली रूप दिया जा चुका है। वहां जिलों, श्याङों और "पाओ-च्या" के प्रधानों का चुनाव आम जनता के मतदान के जरिए ही होता है। कुछ काउन्टी मजिस्ट्रेट भी इसी प्रकार चुने गए हैं, और बहुत से प्रगतिशील तत्वों और होनहार युवकों को काउन्टी मजिस्ट्रेट चुना गया है। यह सवाल बहस के लिए जनता के सामने पेश किया जाना चाहिए।

प्रश्न-सूची के दूसरे भाग में आपने "दुश्मन पार्टियों की रोकथाम" यानी विभिन्न इलाकों में मौजूद टकराव का सवाल उठाया है। इस मामले में आपका चिंतित होना उचित ही है। पिछले दिनों हालत

में कुछ सुधार हुआ है, फिर भी बुनियादी तौर पर हालत ज्यों की त्यों बनी हुई है।

प्रश्न : क्या कम्युनिस्ट पार्टी ने इस प्रश्न पर अपना मत केन्द्रीय सरकार के सामने स्पष्ट कर दिया है ?

उत्तर : हमने विरोध प्रकट किया है।

प्रश्न : किस तरह से ?

उत्तर : जुलाई में ही हमारे पार्टी-प्रतिनिधि कामरेड चओ ऐन-लाइ ने जनरलिज्मो च्याङ काई-शेक के पास एक पत्र भेजा था। फिर १ अगस्त को येनान के विभिन्न व्यवसायों के लोगों ने जनरलिज्मो और राष्ट्रीय सरकार के पास एक तार भेजकर यह मांग की कि "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय" को वापस ले लिया जाए, जिसे गुप्त रूप से लागू किया गया है और जो विभिन्न इलाकों में मौजूद टकराव की जड़ है।

प्रश्न : क्या केन्द्रीय सरकार से कोई जवाब मिला है ?

उत्तर : नहीं। लेकिन कहा जाता है कि क्वोमिन्ताङ में ऐसे लोग भी हैं जो इन उपायों को पसन्द नहीं करते। हर कोई जानता है कि जो सेना जापान का विरोध करने के मुश्तरका संघर्ष में भाग लेती है वह मित्र-सेना है, "दुश्मन-सेना" नहीं, और इसी प्रकार जो पार्टी जापान का विरोध करने के मुश्तरका संघर्ष में भाग लेती है वह मित्र-पार्टी है, "दुश्मन-पार्टी" नहीं। प्रतिरोध-युद्ध में अनेक पार्टियां और ग्रुप भाग ले रहे हैं, उनकी ताकत में फर्क भले ही हो लेकिन वे सभी मिलकर जापान का प्रतिरोध कर रहे हैं; निस्सन्देह उन सबको आपस में एकता कायम करनी चाहिए और किसी भी हालत में एक दूसरे की "रोकथाम" नहीं करनी चाहिए। कौन

सी पार्टी "दुश्मन-पार्टी" है? गद्दारों की पार्टी "दुश्मन-पार्टी" है, जिसका सरगना जापान का पालतू कुत्ता वाङ चिङ-वेइ है, क्योंकि इसके और जापान-विरोधी पार्टियों के बीच कोई समान राजनीतिक आधार मौजूद नहीं है ; ऐसी पार्टी की रोकथाम की जानी चाहिए। क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच तो समान राजनीतिक आधार मौजूद है, और वह है जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करना। इसलिए, अब समस्या है जापान और वाङ चिङ-वेइ का विरोध करने और उन पर अंकुश लगाने में समूची शक्ति को केन्द्रित करना, न कि कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करने और उस पर अंकुश लगाने में। सही नारे पेश करने का एकमात्र आधार यही है। अब वाङ चिङ-वेइ के तीन नारे हैं: "च्याङ काई-शेक का विरोध करो", "कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करो" और "जापान से दोस्ती करो"। वाङ चिङ-वेइ क्वोमिन्ताङ, कम्युनिस्ट पार्टी और समूची जनता का मुश्तरका दुश्मन है। लेकिन कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्ताङ की दुश्मन नहीं है, न ही क्वोमिन्ताङ कम्युनिस्ट पार्टी की दुश्मन है ; उन्हें एक दूसरे का विरोध करने और एक दूसरे की "रोकथाम" करने के बजाय एक दूसरे से एकता कायम करनी चाहिए और एक दूसरे की सहायता करनी चाहिए। हमारे पक्ष के नारों को वाङ चिङ-वेइ के नारों से भिन्न होना चाहिए, उसके नारों के विपरीत होना चाहिए और उसके नारों से कदापि नहीं उलझने देना चाहिए। यदि वह कहता है कि "च्याङ काई-शेक का विरोध करो", तो हरेक को च्याङ काई-शेक का समर्थन करना चाहिए ; यदि वह कहता है कि "कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करो", तो हरेक को कम्युनिस्ट पार्टी के साथ एकता कायम करनी चाहिए ; यदि वह कहता है

कि "जापान से दोस्ती करो", तो हरेक को जापान का प्रतिरोध करना चाहिए। दुश्मन जिसका विरोध करे, हमें उसका समर्थन करना चाहिए, और दुश्मन जिसका समर्थन करे, हमें उसका विरोध करना चाहिए। आजकल लेखों में अक्सर इस उक्ति का हवाला दिया जाता है : "दोस्तों को दुखी न करो और दुश्मनों को प्रसन्न न करो"। यह उक्ति उस पत्र पर आधारित है जिसे पूर्वी हान वंश के ल्यू श्यू के मातहत जनरल चू फू ने य्वीयाङ के प्रधान फङ छुङ को लिखा था। उस पत्र में यों लिखा है : "जो कुछ भी आप करें, पहले आपको इस बात का बीड़ा उठाना चाहिए कि आप अपने दोस्तों को दुखी नहीं करते और अपने दुश्मनों को प्रसन्न नहीं करते।" चू फू के इन शब्दों में एक स्पष्ट राजनीतिक सिद्धान्त व्यक्त हुआ है, जिसे हमें हरगिज नहीं भूलना चाहिए।

अपनी प्रश्न-सूची में आपने यह भी पूछा है कि जो चीज टकराव के नाम से मशहूर हो चली है उसके प्रति कम्युनिस्ट पार्टी का क्या रुख है। मैं आपको स्पष्ट रूप से बता दूं कि हम जापान-विरोधी पार्टियों के बीच टकराव होने के बिलकुल खिलाफ हैं, जो उनकी शक्ति को खत्म कर देता है। लेकिन यदि कोई हमारे विरुद्ध हिंसा का प्रयोग करने पर तुला रहता है, हम पर सवारी गांठने की कोशिश करता है और हमारा दमन करने पर आमादा हो जाता है, तो कम्युनिस्ट पार्टी को कड़ा रुख अपनाना ही पड़ेगा। हमारा रुख है : जब तक हम पर हमला न हो, तब तक हम हमला नहीं करेंगे ; अगर हम पर हमला किया गया, तो हम जरूर जवाबी हमला करेंगे। लेकिन हमारा रुख सख्ती से आत्मरक्षा करने का रुख है, आत्मरक्षा के उसूल को लांघने की छूट किसी भी कम्युनिस्ट को नहीं है।

प्रश्न : उत्तरी चीन के टकराव के बारे में आपकी क्या राय है ?

उत्तर : वहां चाङ इन-ऊ और छिन छी-रुङ दो टकराव-विशेषज्ञ हैं। हूपे में चाङ इन-ऊ और शानतुङ में छिन छी-रुङ मनमाने जुल्म ढा रहे हैं, उनकी हरकतों और गद्दारों की हरकतों में मुश्किल से कोई फर्क दिखाई देता है। वे कभी-कभार ही दुश्मन से लड़ते हैं, लेकिन आठवीं राह सेना पर अक्सर हमला करते रहते हैं। हमने अनेक अकाट्य प्रमाण, मसलन, आठवीं राह सेना पर हमला करने के लिए चाङ इन-ऊ द्वारा अपने मातहतों को भेजे गए आदेश, जनरलिज्मो च्याङ काई-शेक के पास भेज दिए हैं।

प्रश्न : क्या नई चौथी सेना के साथ कोई टकराव हुआ है ?

उत्तर : हां, हुआ है। फिङच्याङ हत्याकाण्ड से समूचे राष्ट्र को सदमा पहुंचा है।

प्रश्न : कुछ लोग कहते हैं कि संयुक्त मोर्चा महत्वपूर्ण तो है लेकिन एकीकरण की खातिर सीमान्त क्षेत्रीय सरकार को भंग कर दिया जाना चाहिए। इस बारे में आपकी क्या राय है ?

उत्तर : चारों ओर हर तरह की बकवास की जा रही है, इसका एक उदाहरण तथाकथित "सीमान्त क्षेत्र को भंग करना" है। शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्र है और राजनीतिक दृष्टि से यह सारे देश में सबसे अधिक प्रगतिशील क्षेत्र है। उसे भंग करने के आखिर क्या कारण हैं ? इतना ही नहीं, सीमान्त क्षेत्र को जनरलिज्मो च्याङ काई-शेक ने बहुत पहले ही मान्यता दे दी थी और राष्ट्रीय सरकार के कार्यकारी य्वान ने गणराज्य की स्थापना के छब्बीसवें वर्ष (१९३७) के जाड़ों में ही उसे औपचारिक रूप से मान्यता दे दी थी। निश्चय ही

यह जरूरी है कि चीन का एकीकरण हो, लेकिन यह एकीकरण प्रतिरोध, एकता और प्रगति के आधार पर ही होना चाहिए। यदि इसके विपरीत आधार पर एकीकरण किया जाता है तो देश का विनाश हो जाएगा।

प्रश्न : चूंकि एकीकरण की व्याख्याएं भिन्न-भिन्न हैं, इसलिए क्या क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच फूट पड़ने की कोई सम्भावना है ?

उत्तर : यदि हम केवल सम्भावना की बात करते हैं, तो एकता और फूट दोनों ही सम्भव हैं, तथा यह क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के रुख पर, और विशेषकर सारे देश की जनता के रुख पर निर्भर है। जहां तक हम कम्युनिस्टों का सम्बन्ध है, हमने काफी पहले ही यह स्पष्ट कर दिया था कि हमारी नीति सहयोग की है ; हम न केवल लम्बी अवधि तक सहयोग करने की आशा करते हैं बल्कि उसके लिए भरपूर कोशिश भी करते रहे हैं। कहा जाता है कि क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के पांचवें पूर्ण अधिवेशन में जनरलिज्मो च्याङ काई-शेक ने भी यह ऐलान किया कि घरेलू मामलों को हल करने में बल-प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। शक्तिशाली शत्रु के सामने, अतीत के सबकों को ध्यान में रखते हुए, क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी को अवश्य ही लम्बी अवधि तक परस्पर सहयोग करना चाहिए और अवश्य ही फूट से बचना चाहिए। लेकिन फूट की सम्भावना से पूरी तरह बचने के लिए लम्बी अवधि के सहयोग की राजनीतिक गारन्टियों को खोज लिया जाना चाहिए और ये राजनीतिक गारन्टियां हैं प्रतिरोध-युद्ध में अन्त तक डटे रहना और जनवादी सरकार की स्थापना करना।

ऐसा करके ही एकता बनाए रखी जा सकती है और फूट से बचा जा सकता है ; यह दोनों पार्टियों और समूचे राष्ट्र के समान प्रयास पर निर्भर है और यह प्रयास अवश्य ही किया जाना चाहिए। "प्रतिरोध-युद्ध पर डटे रहो और आत्मसमर्पण का विरोध करो", "एकता पर डटे रहो और फूट का विरोध करो" और "प्रगति पर डटे रहो और प्रतिगमन का विरोध करो" – ये हैं वे तीन बड़े राजनीतिक नारे जो हमारी पार्टी ने इस वर्ष ७ जुलाई के अपने घोषणापत्र में पेश किए हैं। हमारी राय में, यही एक ऐसा रास्ता है जिससे चीन गुलामी से बच सकता है और शत्रु को मार भगा सकता है। इसके अलावा दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

नोट

¹ केन्द्रीय समाचार-एजेन्सी क्वोमिन्ताङ की समाचार-एजेन्सी थी। "साओ-ताङ पाओ" क्वोमिन्ताङ सरकार के फौजी हलकों का अखबार था। "शिनमिन पाओ" राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के मुखपत्रों में से एक था।

² डा० सुन यात-सेन ने अपने लेख "राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का कार्यक्रम" में "राष्ट्रीय पुनर्निर्माण" को इन तीन दौरों में विभाजित किया था : "फौजी शासन", "राजनीतिक अभिभावकता" और "वैधानिक सरकार"। एक काफी लम्बे अरसे के दौरान, क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों ने, जिनका सरगना च्याङ काई-शेक था, जनता को हर तरह की आजादी से वंचित करने वाली अपनी प्रतिक्रान्तिकारी तानाशाही को यह कहकर उचित ठहराया कि यह डा० सुन यात-सेन के परिकल्पित "फौजी शासन" का दौर अथवा "राजनीतिक अभिभावकता" का दौर ही है।

³ १९२४ के जाड़ों में जब चली और फ़ङत्येन के युद्ध-सरदारों के बीच दूसरी बार युद्ध छिड़ गया, तो फ़ङ य्वी-श्याङ ने, जो चली के युद्ध-सरदारों के गिरोह में था, लड़ने से इनकार कर दिया और वह अपनी सेना को लेकर पेकिङ लौट गया, इस प्रकार चली के युद्ध-सरदारों के नेता ऊ फेइ-फू का पतन हो गया। फ़ङ य्वी-श्याङ ने डा० सुन यात-सेन को निमंत्रित करने के लिए एक तार भेजा। १२ नवम्बर को डा० सुन यात-सेन उसके आमंत्रण पर पेकिङ के लिए रवाना हुए। क्वाङचओ से रवाना होने के दो दिन पहले डा० सुन यात-सेन ने "उत्तर की ओर प्रस्थान करने के बारे में वक्तव्य" जारी किया। इस वक्तव्य में उन्होंने साम्राज्यवाद और युद्ध-सरदारों का विरोध करने के अपने रुख को फिर से दोहराया और यह आवाहन किया कि देश के सामने जो समस्याएं हैं उन्हें हल करने के लिए राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाई जाए। इस वक्तव्य का सारे देश के लोगों ने स्वागत किया।

सोवियत संघ और समूची मानव जाति के हितों की एकरूपता

२८ सितम्बर १९३९

महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की २२वीं जयन्ती के आगमन पर चीन-सोवियत सांस्कृतिक संघ ने मुझसे एक लेख मांगा है। अपने ही अवलोकन के आधार पर मैं सोवियत संघ और चीन से सम्बन्धित कुछ समस्याओं का स्पष्टीकरण करूंगा। कारण, आजकल चीनी जनता इन समस्याओं पर विचार-विमर्श कर रही है और अभी तक स्पष्ट रूप से कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं निकाल सकी है। इस अवसर का लाभ उठाकर मैं अपने खयाल उन लोगों के विचारार्थ प्रस्तुत करता हूं जो योरप के युद्ध और चीन-सोवियत सम्बन्धों में दिलचस्पी रखते हैं, शायद ये विचार उनकी कुछ मदद कर सकें।

कुछ लोग कहते हैं कि सोवियत संघ दुनिया में शान्ति बनाए रखना नहीं चाहता क्योंकि विश्वयुद्ध के छिड़ जाने से उसको लाभ होगा, और यह भी कि बरतानिया और फ्रांस से पारस्परिक सहायता सन्धि करने के स्थान पर सोवियत संघ द्वारा जर्मनी से की गई अनाक्रमण सन्धि के कारण ही मौजूदा युद्ध भड़क उठा है। मैं इस विचार को गलत समझता हूं। एक लम्बे काल से सोवियत संघ

की विदेश नीति शान्ति की नीति रही है, इस नीति का आधार अधिकांश मानव जाति के हितों और उसके अपने हितों के बीच का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। स्वयं अपने समाजवादी निर्माण के लिए सोवियत संघ को सदैव शान्ति की आवश्यकता रही है तथा उसे सदा ही दूसरे देशों के साथ अपने शान्तिपूर्ण सम्बन्धों को मजबूत बनाने और सोवियत-विरोधी युद्ध की रोकथाम करने की जरूरत रही है ; सारी दुनिया के पैमाने पर शान्ति के लिए उसे फासिस्ट देशों के आक्रमण को रोकने, तथाकथित जनवादी देशों की जंगखोरी पर अंकुश लगाने, और जब तक सम्भव हो, साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध को छिड़ने से रोकने की भी जरूरत रही है। सोवियत संघ ने विश्व-शान्ति के कार्य में लम्बे अरसे तक अपना भरपूर जोर लगाया है। मिसाल के तौर पर, वह लीग आफ नेशन्स[1] में शामिल हुआ, उसने फ्रांस और चेकोस्लोवाकिया से पारस्परिक सहायता सन्धियां[2] कीं और बरतानिया तथा शान्ति के इच्छुक सभी देशों से सुरक्षा सन्धियां करने की जोरदार कोशिशें कीं। जर्मनी और इटली द्वारा स्पेन पर संयुक्त आक्रमण के बाद जब बरतानिया, अमरीका और फ्रांस ने नाम के लिए "गैर-हस्तक्षेप" लेकिन वास्तव में आक्रमण की चश्मपोशी करने की नीति अपनाई, तो सोवियत संघ ने "गैर-हस्तक्षेप" की नीति का विरोध किया और जर्मनी तथा इटली का प्रतिरोध करने में स्पेन की रिपब्लिकन सेनाओं की सक्रियता से सहायता की। चीन पर जापान के आक्रमण के बाद जब उन्हीं तीन बड़ी शक्तियों ने "गैर-हस्तक्षेप" की वही नीति अपनाई, तो सोवियत संघ ने न केवल चीन के साथ अनाक्रमण सन्धि की, बल्कि जापान का प्रतिरोध करने में चीन को सक्रियता से सहायता दी। जब बरतानिया और फ्रांस ने हिटलर के आक्रमण की ओर से आंखें मूंद लीं और आस्ट्रिया तथा चेकोस्लोवाकिया की बलि दे दी, तब सोवियत संघ ने म्यूनिख नीति के पीछे छिपे भयावह उद्देश्यों का पर्दाफाश करने में कुछ भी उठा न रखा और भावी आक्रमण को रोकने के लिए बरतानिया और फ्रांस के सामने प्रस्ताव रखे। इस वर्ष के वसन्त और ग्रीष्म में जब पोलैण्ड का प्रश्न गरम था और विश्वयुद्ध छिड़ने की बात अब-तब में थी, तो सोवियत संघ ने चेम्बरलेन और डालादियर की ईमानदारी के अभाव के बावजूद युद्ध को छिड़ने से रोकने के लिए पारस्परिक सहायता सन्धि करने की कोशिश में बरतानिया और फ्रांस से चार महीनों तक सन्धि-वार्ता जारी रखी। लेकिन बरतानिया और फ्रांस की सरकारों की साम्राज्यवादी नीति ने, यानी युद्ध से आंखें मूंद लेने, उसे भड़काने और फैलाने की नीति ने इन तमाम प्रयासों में रुकावट डाल दी, जिसके कारण अन्ततः विश्वशान्ति का कार्य विफल हो गया और साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध छिड़ गया। बरतानिया, अमरीका और फ्रांस की सरकारों की इच्छा ईमानदारी से युद्ध की रोकथाम करने की न थी, उल्टे उन्होंने युद्ध लाने में सहायता दी। सोवियत संघ से समझौता करने और समानता व पारस्परिकता के आधार पर एक सचमुच कारगर पारस्परिक सहायता सन्धि करने से उनका इनकार करना यह प्रमाणित करता है कि वे शान्ति नहीं, युद्ध चाहती थीं। प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि समसामयिक दुनिया में सोवियत संघ को ठुकराने का अर्थ है शान्ति को ठुकराना। बरतानवी पूंजीपति वर्ग के विशिष्ट प्रतिनिधि लायड जार्ज को भी यह मालूम है।[3] इन परिस्थितियों के अन्तर्गत और जब जर्मनी ने अपनी सोवियत-विरोधी

कार्यवाहियों को बन्द कर देने, "कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल विरोधी समझौते" को तिलांजलि देने तथा सोवियत सीमाओं की अनुल्लंघनीयता को मान्यता देने का वायदा किया, तब जाकर सोवियत-जर्मन अनाक्रमण सन्धि पर हस्ताक्षर हुए। बरतानिया, संयुक्त राज्य अमरीका और फ्रांस की योजना सोवियत संघ पर आक्रमण करने के लिए जर्मनी को उकसाने की थी, जिससे कि वे स्वयं "पहाड़ पर बैठकर बाघों के लड़ने का तमाशा देख सकें" और जब सोवियत संघ और जर्मनी एक दूसरे को कमजोर कर दें, तो वे आकर परिस्थिति पर हावी हो जाएं। सोवियत-जर्मन अनाक्रमण सन्धि ने इस साजिश को चकनाचूर कर दिया। बरतानवी-फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों की, जिन्होंने युद्ध से आंखें मूंद लीं और उसे भड़काया तथा विश्वयुद्ध को उकसाया, इस साजिश और इन योजनाओं को नजरअन्दाज करके हमारे कुछ देशवासी इन षड्यंत्रकारियों के मधुर प्रचार का शिकार बन गए। इन षड्यंत्रकारियों को स्पेन, चीन, आस्ट्रिया और चेकोस्लोवाकिया के विरुद्ध आक्रमणों को रोकने में किंचितमात्र भी दिलचस्पी न थी, उल्टे उन्होंने आक्रमणात्मक कार्यवाहियों से आंखें मूंद लीं और युद्ध को भड़काया और कहानी के उस मछुए की भूमिका अदा की जिसने घोंघे और चाहे को एक दूसरे से लड़ा दिया और फिर दोनों से लाभ उठाया। अपनी कार्यवाहियों को वे बड़ी मीठी जबान से "गैर-हस्तक्षेप" कहते थे, लेकिन वास्तव में वे "पहाड़ पर बैठकर बाघों के लड़ने का तमाशा देखा" करते थे। दुनिया में बहुत सारे लोग चेम्बरलेन और उसके साझेदारों की मीठी बातों के चक्कर में आ गए हैं। वे उनकी मुस्कराहट के पीछे छिपे हत्यारे इरादों को समझने में असफल हैं, वे यह भी नहीं समझते

कि सोवियत-जर्मन अनाक्रमण सन्धि तब हुई, जबकि चेम्बरलेन और डालादियर ने सोवियत संघ को ठुकरा देने और साम्राज्यवादी युद्ध भड़काने का निश्चय कर लिया था। ऐसे लोगों के लिए अपनी आंखें खोलने का समय आ गया है। विश्वशान्ति बनाए रखने का सोवियत संघ द्वारा अन्तिम क्षण तक किया गया प्रयास इस बात का प्रमाण है कि सोवियत संघ के हितों और विश्व की अधिकांश मानव जाति के हितों में एकरूपता है। यह पहला सवाल है, जिसके बारे में मैं बात करना चाहता था।

कुछ लोगों का कहना है कि अब दूसरा साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध छिड़ गया है, इसलिए सम्भवत: सोवियत संघ कोई एक पक्ष लेगा — दूसरे शब्दों में, लगता है कि सोवियत लाल सेना जर्मन साम्राज्यवादी मोर्चे में शामिल होने वाली है। मैं इस विचार को गलत समझता हूं। किसी भी पक्ष के लिए, चाहे वह बरतानवी-फ्रांसीसी पक्ष हो या जर्मन पक्ष, यह युद्ध जो शुरू हुआ है एक अन्यायपूर्ण, अपहारक और साम्राज्यवादी युद्ध है। तमाम देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों को और जनता को इसके विरुद्ध उठ खड़े होना चाहिए और दोनों ही युद्धरत पक्षों के साम्राज्यवादी चरित्र का पर्दाफाश कर देना चाहिए, क्योंकि इस साम्राज्यवादी युद्ध से दुनिया के लोगों को केवल हानि ही पहुंचेगी, कोई लाभ न होगा, और उन्हें चाहिए कि वे साम्राज्यवादी युद्ध का समर्थन करने और सर्वहारा हितों के साथ विश्वासघात करने वाली सामाजिक-जनवादी पार्टियों की अपराधपूर्ण हरकतों का पर्दाफाश कर दें। सोवियत संघ एक समाजवादी देश है, एक ऐसा देश जहां राजसत्ता कम्युनिस्ट पार्टी के हाथ में है, और युद्ध के प्रति अनिवार्यत: उसके साफ-साफ दो रुख हैं : (१) वह किसी

भी अन्यायपूर्ण, अपहारक और साम्राज्यवादी युद्ध में हिस्सा लेने से दृढ़तापूर्वक इनकार करता है और युद्धरत दोनों पक्षों के प्रति कड़ी निष्पक्षता बरतता है। इसलिए सोवियत लाल सेना सिद्धान्तों का उल्लंघन करके साम्राज्यवादी युद्ध के मोर्चे में कभी भी शामिल नहीं होगी। (२) सोवियत संघ सक्रिय रूप से न्यायपूर्ण और अनापहारक मुक्ति युद्धों का समर्थन करता है। मिसाल के लिए, तेरह वर्ष पूर्व उसने उत्तरी अभियान में चीनी जनता की सहायता की और पिछले वर्ष तक उसने जर्मनी और इटली के खिलाफ स्पेन की जनता को सहायता दी; वह पिछले दो वर्षों से जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में चीनी जनता की सहायता कर रहा है तथा कुछ महीनों से जापान के खिलाफ प्रतिरोध-युद्ध में मंगोलियाई जनता की सहायता कर रहा है; और वह भविष्य में भी निश्चय ही जनता या राष्ट्र की मुक्ति के लिए अन्य देशों में जो भी युद्ध होंगे उनमें सहायता देगा और उन युद्धों में भी सहायता देगा जो शान्ति की रक्षा में सहायक होंगे। सोवियत संघ के पिछले २२ वर्षों के इतिहास ने पहले ही यह प्रमाणित कर दिया है और भविष्य में भी इतिहास यही प्रमाणित करेगा। कुछ लोग समझते हैं कि जर्मनी के साथ सोवियत संघ का व्यापार, जो सोवियत-जर्मन व्यापार सन्धि पर आधारित है, सोवियत संघ द्वारा युद्ध में जर्मनी के पक्ष में हिस्सा लेने की कार्यवाही है। यह विचार भी गलत है, क्योंकि यह व्यापार को युद्ध में शामिल होने के साथ गडमड करता है। व्यापार को युद्ध में शामिल होने या सहायता देने के साथ गडमड नहीं करना चाहिए। मिसाल के लिए, स्पेनी युद्ध के दौरान सोवियत संघ जर्मनी और इटली से व्यापार करता था, लेकिन फिर भी किसी ने यह नहीं कहा कि सोवियत

संघ स्पेन के विरुद्ध आक्रमण में जर्मनी और इटली की सहायता कर रहा था, उल्टे, लोगों ने यही कहा कि वह आक्रमण का प्रतिरोध करने में स्पेन की सहायता कर रहा था, क्योंकि सोवियत संघ सचमुच स्पेन की ही सहायता कर रहा था; फिर वर्तमान चीन-जापान युद्ध के दौरान भी सोवियत संघ जापान के साथ व्यापार कर रहा है, लेकिन दुनिया में कोई यह नहीं कहता कि सोवियत संघ चीन के खिलाफ आक्रमण में जापान की सहायता कर रहा है, उल्टे, लोग यह कह रहे हैं कि वह आक्रमण का प्रतिरोध करने में चीन की सहायता कर रहा है, कारण यह है कि वह सचमुच चीन की ही सहायता कर रहा है। इस समय सोवियत संघ के साथ विश्वयुद्ध में संलग्न दोनों ही पक्षों के व्यापारिक सम्बन्ध हैं, लेकिन इसे किसी पक्ष की सहायता करना नहीं कहा जा सकता, युद्ध में हिस्सा लेना तो और भी नहीं। जब युद्ध का स्वरूप बदल जाए और एक या एक से अधिक देशों के अन्दर युद्ध में कुछ आवश्यक परिवर्तन हो जाने से सोवियत संघ और विश्व की जनता के लिए युद्ध लाभदायक हो जाए, सिर्फ तभी सोवियत संघ के लिए युद्ध में हिस्सा लेना या उसमें सहायता देना सम्भव है, वरना वह ऐसा नहीं करेगा। जहां तक युद्धरत इस पक्ष या उस पक्ष के साथ, उसके मैत्रीपूर्ण या शत्रुतापूर्ण रवैये के अनुसार, सोवियत संघ द्वारा कम या ज्यादा लाभदायक शर्तों पर, छोटे या बड़े पैमाने पर व्यापार करने का ताल्लुक है, यह सोवियत संघ पर नहीं बल्कि युद्धरत प्रतिद्वन्द्वी पक्ष के रवैये पर निर्भर है। लेकिन यदि एक या अनेक देश सोवियत-विरोधी रवैया अपना भी लें, तो भी सोवियत संघ उनके साथ तब तक व्यापारिक सम्बन्ध नहीं तोड़ेगा जब तक कि वे २३ अगस्त के पहले के जर्मनी की तरह

सोवियत संघ के साथ अपने राजनयिक सम्बन्ध बनाए रखते हैं, उससे व्यापार सन्धियां करते हैं और उसके खिलाफ युद्ध की घोषणा नहीं करते। यह स्पष्टतः समझ लेना चाहिए कि ऐसे व्यापारिक सम्बन्धों का अर्थ सहायता नहीं है, युद्ध में शिरकत तो और भी नहीं है। यह दूसरी समस्या है, जिसके बारे में मैं बात करना चाहता था।

चीन में अनेक व्यक्ति सोवियत सेनाओं के पोलैण्ड में प्रवेश कर जाने [४] के कारण हैरान हैं। पोलैण्ड के प्रश्न पर विभिन्न दृष्टियों से विचार करना चाहिए, जर्मनी की दृष्टि से, बरतानिया और फ्रांस की दृष्टि से, पोलैण्ड की सरकार की दृष्टि से, पोलैण्ड की जनता की दृष्टि से तथा सोवियत संघ की दृष्टि से। जर्मनी ने पोलैण्ड की जनता को लूटने के लिए युद्ध शुरू किया और वह बरतानवी-फ्रांसीसी साम्राज्यवादी मोर्चे के एक पार्श्व को तहस-नहस करना चाहता था। जर्मनी के युद्ध का स्वरूप साम्राज्यवादी है और उसका विरोध होना चाहिए, न कि समर्थन। जहां तक बरतानिया और फ्रांस का सम्बन्ध है, उन्होंने पोलैण्ड को अपनी वित्तीय पूंजी के लिए लूट का शिकार समझा है, उन्होंने पोलैण्ड का इस्तेमाल जर्मन साम्राज्यवाद द्वारा दुनिया की लूट के पुनर्विभाजन के प्रयासों को अवरुद्ध करने के लिए किया है और उसे अपने साम्राज्यवादी मोर्चे का ही एक पार्श्व बना रखा है। इस प्रकार उनका युद्ध एक साम्राज्यवादी युद्ध है, पोलैण्ड को दी जाने वाली उनकी तथाकथित सहायता जर्मनी की प्रतिद्वन्द्विता में पोलैण्ड पर अपना प्रभुत्व जमाने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए है, और इस युद्ध का भी विरोध होना चाहिए, न कि समर्थन। जहां तक पोलैण्ड की सरकार का सम्बन्ध है, वह पोलैण्ड के जमींदार

वर्ग और पूंजीपति वर्ग की फासिस्ट प्रतिक्रियावादी सरकार थी, जो निर्ममतापूर्वक मजदूरों और किसानों का शोषण करती थी और पोलैण्ड के जनवादियों का उत्पीड़न करती थी; इसके अलावा वह बृहद पोलैण्ड के शोविनिस्टों की सरकार थी, जो गैर-पोलिश अल्पसंख्यक जातियों, उकराइनी, बैलोरूसी, यहूदी, जर्मन, लिथुआनियाई और दूसरी जातियों, जिनकी संख्या एक करोड़ से अधिक थी, का निर्मम उत्पीड़न करती थी; वह स्वयं एक साम्राज्यवादी सरकार थी। इस युद्ध में प्रतिक्रियावादी पोलिश सरकार ने स्वेच्छा से पोलैण्ड की जनता को बरतानिया और फ्रांस की वित्तीय पूंजी का बलि का बकरा बनने के लिए ढकेला और स्वेच्छा से अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय पूंजी के प्रतिक्रियावादी मोर्चे के एक अंग की भूमिका अदा की। पोलैण्ड की सरकार ने लगातार बीस वर्षों तक सोवियत संघ का विरोध किया और बरतानिया, फ्रांस तथा सोवियत संघ के बीच सन्धि-वार्ता के दौरान सोवियत संघ की सैनिक सहायता के प्रस्ताव को दुराग्रहपूर्वक ठुकरा दिया। इसके अलावा वह एक नितान्त अयोग्य सरकार थी, १५,००,००० से ऊपर की उसकी विशाल सेना पहले ही धक्के में बोल गई और दो ही सप्ताह में उसने देश को एक विनाशकारी स्थिति में डाल दिया और पोलैण्ड की जनता को जर्मन साम्राज्यवाद के पैरों तले रौंदे जाने के लिए छोड़ दिया। पोलैण्ड की सरकार ने ऐसे संगीन जुर्म किए थे, और उसके प्रति जरा भी हमदर्दी रखना हमारे लिए गलत होगा। जहां तक पोलैण्ड की जनता का सम्बन्ध है, वह तो शिकार है; उसे जर्मन फासिस्टों के उत्पीड़न और अपने देश के प्रतिक्रियावादी जमींदार व पूंजीपति वर्गों के विरुद्ध उठ खड़े होना चाहिए और एक स्वाधीन, स्वतंत्र

जर्मनी द्वारा तथा बरतानिया व फ्रांस द्वारा चलाया जाने वाला युद्ध अन्यायपूर्ण, अपहारक और साम्राज्यवादी युद्ध है, जिसका उद्देश्य है दूसरे राष्ट्रों और दूसरे देशों की जनता का उत्पीड़न करना। सोवियत संघ के सामने दूसरी समस्या थी चेम्बरलेन द्वारा अपनी पुरानी सोवियत-विरोधी नीति को चलाते रहने की कोशिश। चेम्बरलेन की नीति थी, पहले, पश्चिम से जर्मनी की बड़े जोरों से नाकेबन्दी करना और उसके पश्चिमी भाग पर दबाव डालना; दूसरे, संयुक्त राज्य अमरीका से संश्रय स्थापित करने की कोशिश करना और इटली, जापान तथा उत्तरी योरप के देशों को खरीदकर अपनी तरफ कर लेना, जिससे कि जर्मनी को अलगाव में डाला जा सके; और तीसरे, पोलैण्ड को, यहां तक कि हंगरी और रूमानिया को भी रिश्वत के तौर पर जर्मनी के हवाले करने का वायदा करना। संक्षेप में, जर्मनी से सोवियत-जर्मन अनाक्रमण सन्धि को तुड़वाने और उसकी तोपों को सोवियत संघ के खिलाफ मोड़ने के लिए चेम्बरलेन ने हर तरह की धौंसपट्टी और घूस का सहारा लिया। यह चाल कुछ दिनों से चली जा रही है और आगे भी जारी रहेगी। अपनी ही धरती को फिर से प्राप्त करने और कमजोर तथा छोटी जातियों को मुक्त कराने के उद्देश्य से पूर्वी पोलैण्ड में शक्तिशाली सोवियत सेना का प्रवेश करना जर्मन आक्रमणकारी शक्तियों को पूर्व की दिशा में बढ़ने से रोकने और चेम्बरलेन की चाल को कुंठित करने की दृष्टि से भी एक व्यावहारिक कदम था। पिछले कुछ दिनों से जो खबरें आ रही हैं उनसे मालूम हुआ कि सोवियत नीति अत्यन्त सफल रही है। यह सोवियत संघ तथा अधिकांश मानव जाति के, जिसमें प्रतिक्रियावादी पोलिश शासन के नीचे उत्पीड़ित जनता

तथा जनवादी पोलिश राज्य की स्थापना करनी चाहिए। निस्सन्देह, पोलैण्ड की जनता के साथ हमारी हमदर्दी होनी चाहिए। जहां तक सोवियत संघ का सम्बन्ध है, उसकी कार्यवाहियां पूर्णतः न्यायपूर्ण रही हैं। उसके सामने दो समस्याएं थीं। पहली समस्या यह थी कि क्या समूचे पोलैण्ड को जर्मन साम्राज्यवाद के शासन के अन्तर्गत चला जाने दिया जाए या पूर्वी पोलैण्ड की अल्पसंख्यक जातियों को उनकी मुक्ति प्राप्त करने में मदद दी जाए? उसने दूसरा मार्ग चुना। ब्रेस्त-लितोव्स्क की सन्धि के समय १९१८ में ही जर्मन साम्राज्यवादियों ने नवोदित सोवियत राज्य से बैलोरूसी और उकराइनी जातियों द्वारा आबाद धरती के विशाल खण्ड को छीन लिया था और बाद में वर्साई की सन्धि के द्वारा उसे मनमाने तौर पर पोलैण्ड की प्रतिक्रियावादी सरकार के हवाले कर दिया गया था। सोवियत संघ ने अब तक जो कुछ किया है वह बस इतना ही है – अपनी खोई हुई धरती को फिर से प्राप्त कर लेना, उत्पीड़ित बैलोरूसियों और उकराइनियों को मुक्त कराना और उन्हें जर्मन उत्पीड़न से बचाना। पिछले कुछ दिनों में प्राप्त समाचारों से पता चल जाता है कि ये अल्पसंख्यक जातियां किस प्रकार लाल सेना का अपने मुक्तिदाता के रूप में, भोजन और पेय से हार्दिक स्वागत कर रही हैं, जबकि इस प्रकार की एक भी रिपोर्ट पश्चिमी पोलैण्ड से नहीं मिली जिस पर जर्मन सेनाओं ने अधिकार कर लिया है, और न पश्चिमी जर्मनी से ही ऐसी रिपोर्ट मिली है जहां फ्रांसीसी सेनाओं ने अधिकार कर लिया है। इससे स्पष्ट है कि सोवियत संघ का युद्ध एक न्यायपूर्ण और अनापहारक मुक्ति युद्ध है, एक ऐसा युद्ध जो कमजोर और छोटे राष्ट्रों को मुक्त कराने और जनता को स्वतंत्र कराने में सहायक है। दूसरी ओर

शामिल है, हितों की एकरूपता की एक ठोस अभिव्यक्ति है। यह तीसरा सवाल है, जिसके बारे में मैं बात करना चाहता था।

सोवियत-जर्मन अनाक्रमण सन्धि के बाद की सम्पूर्ण परिस्थिति ने जापान को भारी धक्का पहुंचाया है और चीन को भारी सहायता दी है ; इसने जापान का प्रतिरोध करने वालों की स्थिति को मजबूत बनाया है और आत्मसमर्पणवादियों को कमजोर बनाया है। चीनी जनता ने इस सन्धि का स्वागत किया है और यह बिलकुल ठीक ही है। नोमोनहान युद्ध-विराम समझौते[५] पर हस्ताक्षर होने के बाद से बरतानिया और संयुक्त राज्य अमरीका की समाचार-एजेन्सियां यह कहानी फैला रही हैं कि जल्दी ही सोवियत-जापान अनाक्रमण सन्धि होने वाली है, और इससे चीन के कुछ लोग यह सोचकर चिन्तातुर हो उठे हैं कि अब सोवियत संघ चीन को और आगे सहायता नहीं देगा। मेरे खयाल में यह दृष्टिकोण गलत है। नोमोनहान युद्ध-विराम समझौता पहले के चाङकूफ़ङ युद्ध-विराम समझौते[६] की ही तरह है, यानी अपनी पराजय मानने के लिए मजबूर होने पर जापानी युद्ध-सरदारों ने सोवियत और मंगोलियाई सीमाओं की अनुल्लंघनीयता को मान्यता प्रदान कर दी है। ऐसे युद्ध-विराम समझौते सोवियत संघ को चीन की सहायता बढ़ाने में ही मदद करेंगे, न कि उसे घटाने में। जहां तक जापान-सोवियत अनाक्रमण सन्धि की चर्चा का सम्बन्ध है, सोवियत संघ अनेक वर्षों से इसका प्रस्ताव रखता आया है, लेकिन जापान बारम्बार उसे ठुकराता आया है। इस समय जापान के शासक वर्ग का एक हिस्सा सोवियत संघ से ऐसी ही सन्धि करना चाहता है। लेकिन सोवियत संघ ऐसी सन्धि करेगा या नहीं, यह इस बुनियादी बात पर निर्भर है

कि ऐसी सन्धि सोवियत संघ और अधिकांश मानव जाति के हितों के अनुरूप होगी या नहीं। ठोस रूप में कहा जाए, तो यह इस बात पर निर्भर है कि यह सन्धि चीन के राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध के हितों के प्रतिकूल तो नहीं है। इस वर्ष १० मार्च को सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की अठारहवीं कांग्रेस में स्तालिन द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट और ३० मई को सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के समक्ष मोलोतोव द्वारा दिए गए भाषण को देखते हुए मैं कह सकता हूं कि सोवियत संघ अपने इस बुनियादी उसूल को नहीं बदलेगा। यदि ऐसी सन्धि हुई भी, तो भी चीन को सहायता देने की उसकी स्वतंत्रता पर अंकुश लगाने वाली किसी भी बात को सोवियत संघ निश्चय ही नहीं मानेगा। सोवियत संघ के हित सदैव ही चीन की राष्ट्रीय मुक्ति के हितों के अनुकूल बैठेंगे, न कि प्रतिकूल। मैं इस बात को सन्देह से बिलकुल परे मानता हूं। जो लोग सोवियत संघ के विरुद्ध पूर्वाग्रह से ग्रस्त हैं, वे नोमोनहान युद्ध-विराम समझौते का और जापान-सोवियत अनाक्रमण सन्धि के बारे में फैली बातों का फायदा उठाकर झंझट खड़े कर रहे हैं और चीन और सोवियत संघ इन दो महान राष्ट्रों के बीच दुर्भावना पैदा कर रहे हैं। ऐसा बरतानिया, संयुक्त राज्य अमरीका और फ्रांस के तिकड़मबाज और चीन के आत्मसमर्पणवादी कर रहे हैं ; यह बहुत ही खतरनाक है और हमें चाहिए कि इन गन्दी तिकड़मों का पूरी तरह पर्दाफाश कर दें। यह स्पष्ट है कि चीन की विदेश नीति जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने की होनी चाहिए। इस नीति का मतलब है मुख्यत: अपने पैरों पर खड़े होना और साथ ही विदेशों से सहायता प्राप्त कर सकने की किसी भी सम्भावना को नजरअन्दाज न करना। साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध

छिड़ जाने पर विदेशी सहायता मुख्यत: इन तीन स्रोतों से आ रही है : (१) समाजवादी सोवियत संघ, (२) पूंजीवादी देशों की जनता, और (३) उपनिवेशों तथा अर्ध-उपनिवेशों के उत्पीड़ित राष्ट्र। हमारी सहायता के केवल ये ही विश्वसनीय स्रोत हैं। अन्य किसी भी प्रकार की विदेशी सहायता को, यदि वह मिल भी जाए, तो उसे केवल अतिरिक्त और अस्थाई समझना चाहिए। बेशक, चीन को इस प्रकार की अतिरिक्त और अस्थाई विदेशी सहायता प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए, लेकिन किसी भी हालत में उस पर बहुत अधिक निर्भर नहीं रहना चाहिए और न उसे विश्वसनीय ही मानना चाहिए। चीन को साम्राज्यवादी युद्ध में संलग्न दोनों पक्षों के प्रति सख्ती से निष्पक्षता बरतनी चाहिए और किसी भी पक्ष में शामिल नहीं होना चाहिए। यह कहना कि चीन को बरतानवी-फ्रांसीसी साम्राज्यवादी मोर्चे में शामिल हो जाना चाहिए, एक आत्मसमर्पणवादी दृष्टिकोण है, जो प्रतिरोध-युद्ध के लिए और चीनी राष्ट्र की स्वाधीनता और मुक्ति के लिए हानिप्रद है, और उसे बिलकुल ही ठुकरा देना चाहिए। यह चौथा सवाल है, जिसके बारे में मैं बात करना चाहता था।

हमारे देशवासी इन चार सवालों पर बड़े पैमाने पर विचार-विमर्श कर रहे हैं। यह बड़ी अच्छी बात है कि वे अन्तरराष्ट्रीय समस्याओं के अध्ययन की ओर, साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध और चीन के प्रतिरोध-युद्ध के बीच के सम्बन्धों तथा सोवियत संघ और चीन के बीच के सम्बन्धों की ओर ध्यान दे रहे हैं, क्योंकि उनका ध्येय जापान के आक्रमण पर विजय प्राप्त करना है। यहां मैंने इन सवालों पर अपने कुछ बुनियादी विचार प्रस्तुत किए हैं, और

मुझे आशा है कि पाठक इन पर टीका-टिप्पणी करने में संकोच नहीं करेंगे।

नोट

१ लीग आफ नेशन्स एक ऐसा संगठन था जिसे प्रथम विश्वयुद्ध के बाद बरतानिया, फ्रांस, जापान तथा अन्य साम्राज्यवादी देशों ने सौदेबाजी के जरिए दुनिया का नए सिरे से बंटवारा करने और अपने बीच के अन्तरविरोधों को कुछ समय के लिए पुनर्व्यवस्थित करने के उद्देश्य से गठित किया था। १६३१ में जापानी साम्राज्यवादियों ने चीन के उत्तर-पूर्व पर अधिकार कर लिया और १६३३ में जापान ने लीग आफ नेशन्स को छोड़ दिया, ताकि वह ज्यादा सुविधा से अपने आक्रमण का विस्तार कर सके। उसी वर्ष जर्मन फासिस्ट सत्तारूढ़ हो गए और वे भी लीग आफ नेशन्स से अलग हो गए, ताकि वे आक्रमणकारी युद्ध की तैयारियां सुविधापूर्वक कर सकें। १६३४ में जब फासिस्ट आक्रमणकारी युद्ध का खतरा बढ़ रहा था, सोवियत संघ लीग आफ नेशन्स में शामिल हुआ। इस प्रकार दुनिया का नए सिरे से बंटवारा करने के लिए बने इस साम्राज्यवादी संगठन को विश्वशान्ति के हितों की सेवा करने योग्य संगठन बनाने की सम्भावना पैदा हो गई। १६३५ में अबीसीनिया पर अपने आक्रमण के बाद इटली भी लीग आफ नेशन्स से अलग हो गया।

२ सोवियत संघ और फ्रांस के बीच पारस्परिक सहायता सन्धि तथा सोवियत संघ और चेकोस्लोवाकिया के बीच पारस्परिक सहायता सन्धि १६३५ में सम्पन्न हुई थीं।

३ लायड जार्ज बरतानवी पूंजीपति वर्ग की लिबरल पार्टी के नेताओं में से एक था। बरतानिया, फ्रांस और सोवियत संघ के बीच वार्ता के समय उसने पार्लियामेण्ट में घोषणा की : "सोवियत संघ के प्रस्ताव को ठुकराने का मतलब है शान्ति को ठुकराना।"

४ १ सितम्बर १९३९ को जर्मनों ने पोलैण्ड में अतिक्रमण किया और उसकी धरती के अधिकांश भाग पर अधिकार कर लिया। १७ सितम्बर को पोलैण्ड की प्रतिक्रियावादी सरकार विदेश भाग खड़ी हुई। उसी दिन अपनी खोई हुई धरती फिर से प्राप्त करने के लिए, उत्पीड़ित उकराइनी और बैलोरूसी जातियों के उद्धार के लिए और जर्मन फासिस्ट सेनाओं के पूर्व की ओर बढ़ाव को रोकने के लिए, सोवियत संघ ने पूर्वी पोलैण्ड में अपनी सेनाएं भेजीं।

५ नोमोनहान युद्ध-विराम समझौता सितम्बर १९३९ में मास्को में हुआ था। मई १९३९ में जापानी सेनाओं और कठपुतली "मंचूक्वो" सेनाओं ने मंगोलिया और "मंचूक्वो" की सीमा पर नोमोनहान क्षेत्र में सोवियत संघ और मंगोलिया लोक गणराज्य की सेनाओं पर आक्रमण कर दिया। आत्मरक्षा के वीरतापूर्ण संघर्ष में सोवियत और मंगोलियाई सेनाओं ने उनको पूरी तरह पराजित कर दिया। जापानियों ने तब शान्ति की याचना की। नोमोनहान युद्ध-विराम समझौते में यह व्यवस्था की गई कि फौरन लड़ाई बन्द कर दी जाए और मंगोलिया लोक गणराज्य तथा "मंचूक्वो" कठपुतली राज्य के बीच उन जगहों पर, जहां मुठभेड़ हुई थी, सीमा निर्धारित करने के लिए दो प्रतिनिधि सोवियत-मंगोलियाई पक्ष से और दो प्रतिनिधि जापानी-"मंचूक्वो" पक्ष से लेकर चार व्यक्तियों का एक कमीशन बनाया जाए।

६ चाङकूफ़ङ युद्ध-विराम समझौता ११ अगस्त १९३८ को मास्को में हुआ था। १९३८ में जुलाई के अंत और अगस्त के शुरू में, चीन, कोरिया और सोवियत संघ की सीमा पर चाङकूफ़ङ क्षेत्र में जापानी सेनाओं ने सोवियत सेनाओं के विरुद्ध उकसावे की कार्यवाहियां कीं, जिन्हें सोवियत सेनाओं द्वारा जोरों से पीछे धकेल दिया गया। इसके बाद जापानियों ने शान्ति की याचना की। चाङकूफ़ङ युद्ध-विराम समझौते में यह व्यवस्था की गई कि फौरन लड़ाई बन्द कर दी जाए और सीमा-रेखाओं की जांच करके उन्हें अन्तिम रूप से निर्धारित करने के लिए दो प्रतिनिधि सोवियत पक्ष से और दो प्रतिनिधि जापानी-"मंचूक्वो" पक्ष से लेकर चार व्यक्तियों का एक कमीशन बनाया जाए।

"कम्युनिस्ट" पत्रिका का परिचय

४ अक्तूबर १९३९

केन्द्रीय कमेटी की काफी समय से एक अंत:पार्टी पत्रिका प्रकाशित करने की योजना रही है, और आखिरकार अब यह योजना साकार हुई है। इस प्रकार की पत्रिका एक ऐसी बोलशेविकीकृत चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के निर्माण के लिए आवश्यक है जो देशव्यापी व जनव्यापी हो और जो विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक रूप से पूरी तरह सुदृढ़ हो। यह आवश्यकता वर्तमान परिस्थिति में और भी अधिक स्पष्ट हो गई है। वर्तमान परिस्थिति की अपनी खास विशेषताएं हैं: एक ओर तो जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के अन्दर आत्मसमर्पण, फूट और प्रतिगमन का खतरा दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है, जबकि दूसरी ओर, हमारी पार्टी अपने संकीर्ण दायरे से बाहर निकल आई है और एक प्रमुख देशव्यापी पार्टी बन गई है। हमारी पार्टी का कार्य है आत्मसमर्पण, फूट और प्रतिगमन के खतरों पर विजय पाने के लिए और तमाम सम्भावित आकस्मिक घटनाओं का मुकाबला करने की तैयारी करने के लिए जनता को गोलबन्द करना ताकि अगर ऐसी घटनाएं घटित हों तो पार्टी और क्रान्ति को अप्रत्याशित क्षति न उठानी

पड़े। आज के जैसे समय में एक अंतःपार्टी पत्रिका का होना दरअसल बेहद जरूरी है।

इस अंतःपार्टी पत्रिका का नाम है "कम्युनिस्ट"। इसका उद्देश्य क्या है? इसकी लेखन-सामग्री क्या होगी? यह अन्य पार्टी-प्रकाशनों से किस प्रकार भिन्न होगी?

इसका उद्देश्य है एक ऐसी बोलशेविकीकृत चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के निर्माण में सहायता प्रदान करना, जो देशव्यापी व जनव्यापी हो और जो विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक रूप से पूरी तरह सुदृढ़ हो। एक ऐसी पार्टी का निर्माण चीनी क्रान्ति की विजय के लिए नितान्त आवश्यक है और कुल मिलाकर इसके लिए मनोगत तथा वस्तुगत परिस्थितियां मौजूद हैं; वास्तव में यह महान कार्य अब प्रगति कर रहा है। इस महान कार्य की पूर्ति में सहायता करने के लिए, जो एक साधारण पार्टी-प्रकाशन की क्षमता से परे है, एक विशेष पार्टी-पत्रिका की आवश्यकता है, और यही कारण है कि अब "कम्युनिस्ट" का प्रकाशन किया जा रहा है।

किसी हद तक हमारी पार्टी आज एक देशव्यापी और जनव्यापी पार्टी बन चुकी है; और जहां तक इसके नेतृत्व के केन्द्रीय भाग का, इसके सदस्यों के एक भाग का और इसकी आम कार्यदिशा तथा क्रान्तिकारी कार्य का सम्बन्ध है, यह आज एक ऐसी बोलशेविकीकृत पार्टी बन चुकी है जो विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक रूप से सुदृढ़ है।

जब स्थिति यह है, तो एक नया कार्य अपने सामने क्यों रखा जाए?

इसका कारण यह है कि अब हमारे अनेक नए पार्टी-संगठन हैं, जिनके अनेकानेक नए सदस्य हैं लेकिन जिन्हें अभी भी जनव्यापी, या विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक रूप से सुदृढ़, अथवा बोलशेविकीकृत नहीं समझा जा सकता। इसके साथ ही, पुराने पार्टी-सदस्यों के राजनीतिक स्तर को ऊंचा उठाने और पुराने संगठनों को विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक रूप से और भी सुदृढ़ बनाने तथा उनके बोलशेविकीकरण में और ज्यादा प्रगति करने की समस्या भी मौजूद है। जिन परिस्थितियों में पार्टी आज अपने को पाती है और जिन जिम्मेदारियों को आज वह उठा रही है, वे उनसे बहुत भिन्न हैं जो क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के जमाने में थीं; आज की परिस्थितियां कहीं अधिक पेचीदा हैं और जिम्मेदारियां कहीं अधिक भारी हैं।

यह राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का जमाना है, और हमने पूंजीपति वर्ग के साथ एक संयुक्त मोर्चा कायम किया है; यह जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध का जमाना है, और हमारी पार्टी की सशस्त्र सेनाएं मोर्चे पर मित्र-सेनाओं के साथ तालमेल कायम करके शत्रु के विरुद्ध एक निर्मम युद्ध कर रही हैं; यह वह जमाना है जब हमारी पार्टी एक प्रमुख देशव्यापी पार्टी बन चुकी है और अब वह एक ऐसी पार्टी नहीं रह गई जैसी कि पहले थी। अगर हम इन तमाम तत्वों को एक साथ मिलाकर देखें, तो हम समझ लेंगे कि हमारे द्वारा अपने सामने रखा गया यह कार्य – यानी "एक ऐसी बोलशेविकीकृत चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण करना, जो देशव्यापी व जनव्यापी हो और जो विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक रूप से पूरी तरह सुदृढ़ हो" – कितना शानदार और महत्वपूर्ण है।

हम अब इसी प्रकार की पार्टी का निर्माण करना चाहते हैं, लेकिन

इस काम को हम किस तरह पूरा करें ? इस प्रश्न का उत्तर हम अपनी पार्टी के और उसके अठारह वर्षों के संघर्ष के इतिहास पर नजर डाले बिना नहीं दे सकते ।

१९२१ में आयोजित हमारी प्रथम राष्ट्रीय कांग्रेस से अब तक पूरे अठारह साल हो चुके हैं। इन अठारह वर्षों में हमारी पार्टी अनेक महान संघर्षों से गुजर चुकी है। और पार्टी के सदस्यों, कार्यकर्ताओं तथा संगठनों, सभी ने अपने आपको इन महान संघर्षों में तपाया है। क्रान्ति के दौरान उन्हें शानदार जीतों और गम्भीर पराजयों दोनों ही का अनुभव हुआ है। पार्टी ने पूंजीपति वर्ग के साथ राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम किया और इस संयुक्त मोर्चे के टूटने पर बड़े पूंजीपतियों के वर्ग और उसके संश्रयकारियों के खिलाफ तीव्र सशस्त्र संघर्ष किया। पिछले तीन वर्षों के दौरान, यह फिर से पूंजीपति वर्ग के साथ एक राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के दौर में दाखिल हो चुकी है। चीनी पूंजीपति वर्ग के साथ इसी किस्म के पेचीदा सम्बन्धों को निभाते हुए चीनी क्रान्ति और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने विकास के मार्ग पर प्रगति की है। यह एक ऐतिहासिक विशेषता है, एक ऐसी विशेषता जो औपनिवेशिक तथा अर्ध-औपनिवेशिक देशों की क्रान्ति में मौजूद रहती है और जो किसी भी पूंजीवादी देश के क्रान्तिकारी इतिहास में नहीं पाई जाती। इसके अलावा, चूंकि चीन एक अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती देश है, चूंकि उसका राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास असमान रूप से हुआ है, चूंकि उसकी अर्थव्यवस्था प्रधान रूप से अर्ध-सामन्ती है और चूंकि उसका क्षेत्र विशाल है, इससे यह नतीजा निकलता है कि मौजूदा दौर में चीनी क्रान्ति का स्वरूप पूंजीवादी-

जनवादी है, उसके प्रहार के मुख्य निशाने साम्राज्यवाद और सामन्तवाद हैं तथा उसकी बुनियादी प्रेरक शक्तियां सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग हैं और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग उसमें कुछ खास मौकों पर और एक खास हद तक ही हिस्सा लेता है ; इससे यह नतीजा भी निकलता है कि चीनी क्रान्ति में संघर्ष का मुख्य रूप सशस्त्र संघर्ष ही है। वस्तुतः हमारी पार्टी के इतिहास को सशस्त्र संघर्ष का इतिहास कहा जा सकता है। कामरेड स्तालिन ने कहा है, "चीन में सशस्त्र क्रान्ति सशस्त्र प्रतिक्रान्ति से लोहा ले रही है। यह चीनी क्रान्ति की विशेषताओं और श्रेष्ठताओं में से एक है।"[1] यह बात पूर्णतया सच है। अर्ध-औपनिवेशिक चीन की यह विशेषता पूंजीवादी देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों के नेतृत्व में की जाने वाली क्रान्तियों के इतिहास में मौजूद नहीं है, अथवा उसी रूप में मौजूद नहीं है। इस प्रकार, चीनी पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की दो बुनियादी विशेषताएं हैं : (१) सर्वहारा वर्ग या तो पूंजीपति वर्ग के साथ एक क्रान्तिकारी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करता है, अथवा उसे तोड़ने पर मजबूर हो जाता है ; और (२) सशस्त्र संघर्ष इस क्रान्ति का मुख्य रूप है। यहां हम किसान वर्ग और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग के साथ पार्टी के सम्बन्धों को बुनियादी विशेषता के रूप में इसलिए पेश नहीं करते, क्योंकि पहले, ये सम्बन्ध उसूली तौर पर वही हैं जो दुनियाभर की कम्युनिस्ट पार्टियों के सामने मौजूद हैं, और दूसरे, चीन में सशस्त्र संघर्ष मूलतः एक किसान-युद्ध है और किसानों के साथ पार्टी के सम्बन्ध तथा किसान-युद्ध के साथ उसके निकट सम्बन्ध बिलकुल एक ही चीज हैं।

इन दो बुनियादी विशेषताओं के कारण, दरअसल ठीक इन्हीं के कारण, हमारी पार्टी का निर्माण तथा बोलशेविकीकरण विशेष परिस्थितियों में आगे बढ़ रहा है। पार्टी की असफलताएं अथवा सफलताएं, उसका पीछे हटना अथवा आगे बढ़ना, उसका सिकुड़ना अथवा विस्तृत होना, उसका विकसित होना तथा सुदृढ़ बनना, अनिवार्य रूप से पूंजीपति वर्ग और सशस्त्र संघर्ष के साथ उसके सम्बन्धों से जुड़े हुए हैं। जब हमारी पार्टी पूंजीपति वर्ग के साथ संयुक्त मोर्चा बनाने के प्रश्न पर अथवा मजबूर होकर उसे तोड़ने के प्रश्न पर एक सही राजनीतिक कार्यदिशा अपनाती है, तो वह अपने विकास, सुदृढ़ीकरण और बोलशेविकीकरण की दिशा में एक कदम आगे बढ़ जाती है ; लेकिन जब वह पूंजीपति वर्ग के साथ अपने सम्बन्धों के बारे में एक गलत कार्यदिशा अपनाती है, तो वह एक कदम पीछे हट जाती है। इसी प्रकार, जब हमारी पार्टी क्रान्तिकारी सशस्त्र संघर्ष के प्रश्न को सही ढंग से लेती है, तो वह अपने विकास, सुदृढ़ीकरण और बोलशेविकीकरण की दिशा में एक कदम आगे बढ़ जाती है ; लेकिन जब वह इस प्रश्न को गलत ढंग से लेती है, तो वह एक कदम पीछे हट जाती है। गत अठारह वर्षों से, पार्टी के निर्माण तथा बोलशेविकीकरण का कार्य उसकी राजनीतिक कार्यदिशा के साथ, संयुक्त मोर्चे व सशस्त्र संघर्ष के प्रश्नों को सही या गलत ढंग से हल करने के साथ घनिष्ठता से जुड़ा रहा है। हमारी पार्टी के अठारह वर्षों के इतिहास से इस निष्कर्ष की स्पष्ट रूप से पुष्टि होती है। अथवा यह बात उलटकर यों कही जा सकती है कि जब पार्टी अधिक बोलशेविकीकृत होती है, तब और सिर्फ तभी वह अधिक सही तौर पर अपनी राजनीतिक कार्यदिशा को निर्धारित कर सकती है और अधिक सही तौर पर संयुक्त मोर्चे तथा सशस्त्र संघर्ष के प्रश्नों को हल कर सकती है। इस निष्कर्ष की भी हमारी पार्टी के अठारह वर्षों के इतिहास से स्पष्ट रूप से पुष्टि होती है।

इसलिए संयुक्त मोर्चा, सशस्त्र संघर्ष और पार्टी-निर्माण, ये चीनी क्रान्ति में हमारी पार्टी के लिए तीन बुनियादी सवाल हैं। इन तीन सवालों और इनके आपसी सम्बन्धों की सही समझ प्राप्त करना समस्त चीनी क्रान्ति को सही नेतृत्व प्रदान करने के समान है। हम अब अपनी पार्टी के अठारह वर्षों के इतिहास में प्राप्त अपने प्रचुर अनुभवों के बल पर, असफलताओं और सफलताओं, पीछे हटने और आगे बढ़ने, सिकुड़ने और विस्तृत रूप धारण करने के अपने समृद्ध तथा गहन अनुभवों के बल पर इन तीनों प्रश्नों के बारे में सही निष्कर्ष निकाल सकने में समर्थ हैं। इसका मतलब यह है कि हम अब संयुक्त मोर्चे, सशस्त्र संघर्ष और पार्टी-निर्माण के प्रश्नों को सही ढंग से सुलझाने में समर्थ हैं। इसका अर्थ यह भी है कि हमारे अठारह वर्षों के अनुभवों ने हमें सिखाया है कि संयुक्त मोर्चा, सशस्त्र संघर्ष और पार्टी-निर्माण, ये चीनी क्रान्ति में दुश्मन को हराने के लिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के तीन "जादुई हथियार" हैं, तीन मुख्य जादुई हथियार हैं। यह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की और चीनी क्रान्ति की एक महान उपलब्धि है।

आइए, यहां हम इन तीनों जादुई हथियारों, तीनों सवालों, में से हर एक पर संक्षेप से विचार करें।

पिछले अठारह वर्षों में, पूंजीपति वर्ग तथा अन्य वर्गों के साथ चीनी सर्वहारा वर्ग का संयुक्त मोर्चा तीन भिन्न प्रकार की परि-

स्थितियों में, अथवा तीन अलग-अलग मंजिलों से होकर विकसित हुआ है : प्रथम महान क्रान्ति १९२४ से १९२७ तक, भूमि-क्रान्ति युद्ध १९२७ से १९३७ तक, और वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध। इन तीनों मंजिलों के इतिहास ने इन नियमों की पुष्टि की है :

(१) चीन का राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग साम्राज्यवाद और सामन्ती युद्ध-सरदारों के खिलाफ संघर्ष में कुछ खास मौकों पर और एक खास हद तक भाग लेगा, क्योंकि चीन में विदेशी उत्पीड़न सबसे बड़ा उत्पीड़न है। इसलिए ऐसे मौकों पर, सर्वहारा वर्ग को राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के साथ संयुक्त मोर्चा कायम करना चाहिए और जहां तक सम्भव हो उसे कायम रखना चाहिए। (२) अन्य ऐतिहासिक परिस्थितियों में, चीन का राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग अपनी आर्थिक तथा राजनीतिक क्षीणता के कारण डावांडोल होगा और विश्वासघात करेगा। इसलिए चीन के क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चे की बनावट सदा एक सी नहीं रहेगी, बल्कि परिवर्तनशील होगी। हो सकता है कि किसी समय राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग उसमें शामिल हो जाए और किसी समय नहीं भी हो। (३) चीन का बड़े पूंजीपतियों का वर्ग, जो अपने स्वरूप में दलाल किस्म का है, प्रत्यक्ष रूप से साम्राज्यवाद की सेवा करता है और उसके द्वारा पाला-पोसा जाता है। इसलिए चीन का बड़े दलाल-पूंजीपतियों का वर्ग सदा से क्रान्ति के प्रहार का निशाना रहा है। फिर भी, इस बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग के अन्दर भिन्न-भिन्न गुटों की पीठ पर भिन्न-भिन्न साम्राज्यवादी शक्तियों का हाथ रहता है, इसलिए जब

इन शक्तियों के बीच अन्तरविरोध तीव्र हो जाए और जब क्रान्ति के प्रहार का निशाना मुख्यतया किसी एक खास शक्ति के विरुद्ध साधा जाए, तो बड़े पूंजीपतियों के वे गुट जो अन्य शक्तियों पर आश्रित हैं, उस खास शक्ति के विरुद्ध चलाए गए संघर्ष में एक खास हद तक और एक खास समय के लिए शामिल हो सकते हैं। ऐसे मौकों पर, शत्रु को कमजोर बनाने और अपनी सुरक्षित शक्तियों में वृद्धि करने की गरज से चीनी सर्वहारा वर्ग इन गुटों के साथ संयुक्त मोर्चा बना सकता है और जहां तक सम्भव हो उसे कायम रखना चाहिए बशर्ते कि वह क्रान्ति के लिए लाभदायक हो। (४) बड़े दलाल-पूंजीपतियों का वर्ग तब भी अत्यन्त प्रतिक्रियावादी बना रहता है जब वह सर्वहारा वर्ग के साथ मुश्तरका दुश्मन के खिलाफ संघर्ष करने में संयुक्त मोर्चे में शामिल हो जाता है। वह सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी के विचारधारात्मक, राजनीतिक तथा संगठनात्मक विकास का हठधर्मी के साथ विरोध करता है, उन पर पाबन्दियां लादने की कोशिश करता है और उनके खिलाफ ध्वंसात्मक दांव-पेंच – जैसे धोखा देना, प्रलोभन देना, "क्षयग्रस्त करना" और वहशियाना हमले करना – इस्तेमाल करता है ; और यह सब कुछ वह शत्रु के आगे आत्मसमर्पण करने तथा संयुक्त मोर्चे को छिन्न-भिन्न करने की तैयारी के लिए करता है। (५) किसान समुदाय सर्वहारा वर्ग का सुदृढ़ संश्रयकारी है। (६) शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग उसका एक विश्वसनीय संश्रयकारी है।

इन नियमों की प्रामाणिकता की पुष्टि न केवल प्रथम महान क्रान्ति तथा भूमि-क्रान्ति के दौरान हो चुकी है, बल्कि मौजूदा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में भी इसकी फिर से पुष्टि हो रही है। इसलिए, पूंजीपति वर्ग के साथ (और विशेषकर बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के साथ) संयुक्त मोर्चा बनाने में सर्वहारा वर्ग की पार्टी को दो मोर्चों पर दृढ़तापूर्वक एवं गम्भीरता के साथ संघर्ष अवश्य चलाना चाहिए। एक ओर तो, इस सम्भावना की उपेक्षा करने की गलती के खिलाफ संघर्ष करना जरूरी है कि पूंजीपति वर्ग कुछ खास मौकों पर और एक खास हद तक क्रान्तिकारी संघर्ष में शामिल हो सकता है। चीन के पूंजीपति वर्ग को भी वैसा ही समझना जैसा कि वह पूंजीवादी देशों में है, और परिणामस्वरूप पूंजीपति वर्ग के साथ संयुक्त मोर्चा बनाने और जब तक सम्भव हो उसे बनाए रखने की नीति की उपेक्षा करना, यह "वामपंथी" रुद्धद्वारवाद की गलती है। दूसरी ओर, सर्वहारा वर्ग के और पूंजीपति वर्ग के प्रोग्राम, नीति, विचारधारा, व्यवहार इत्यादि को एक ही चीज समझने और उनके बीच मौजूद उसूली मतभेद को नजरअन्दाज करने की गलती के खिलाफ संघर्ष करना भी जरूरी है। यहां गलती इस तथ्य की उपेक्षा कर देने में निहित है कि पूंजीपति वर्ग (और विशेषकर बड़े पूंजीपतियों का वर्ग) न सिर्फ निम्न-पूंजीपति वर्ग तथा किसानों पर, बल्कि सर्वहारा वर्ग तथा कम्युनिस्ट पार्टी पर भी अपना असर डालने की भरसक कोशिश करता है, जिससे कि सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी की विचारधारात्मक, राजनीतिक तथा संगठनात्मक स्वतंत्रता को नष्ट कर दिया जाए, उन्हें पूंजीपति वर्ग तथा उसकी राजनीतिक पार्टी का दुमछल्ला बना दिया जाए, और क्रान्ति के फल सिर्फ

पूंजीपति वर्ग अथवा उसकी राजनीतिक पार्टी के हाथ में पड़ जाएं ; यह गलती इस तथ्य की भी उपेक्षा करने में निहित है कि जब भी क्रान्ति पूंजीपति वर्ग (और विशेषकर बड़े पूंजीपतियों के वर्ग) के अपने या उसकी राजनीतिक पार्टी के स्वार्थपूर्ण हितों से टकराती है तो वह क्रान्ति के साथ विश्वासघात कर देता है। इन सब बातों की उपेक्षा करना दक्षिणपंथी अवसरवाद कहलाता है। छन तू-श्यू के दक्षिणपंथी अवसरवाद की विशेषता यह थी कि उसने सर्वहारा वर्ग को पूंजीपति वर्ग और उसकी राजनीतिक पार्टी के स्वार्थपूर्ण हितों के अनुकूल ढल जाने के लिए गुमराह किया और यही प्रथम महान क्रान्ति की विफलता का मनोगत कारण था। पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति में चीनी पूंजीपति वर्ग का दुरंगा चरित्र हमारी राजनीतिक कार्यदिशा और हमारे पार्टी-निर्माण पर भारी असर डालता है, और उसके इस दुरंगे चरित्र को समझे बगैर हम अपनी राजनीतिक कार्यदिशा की अथवा पार्टी-निर्माण की अच्छी समझ हासिल नहीं कर सकते। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की राजनीतिक कार्यदिशा का एक महत्वपूर्ण अंग है पूंजीपति वर्ग के साथ संश्रय कायम करने के साथ-साथ उसके खिलाफ संघर्ष भी चलाने की नीति। पूंजीपति वर्ग के साथ संश्रय स्थापित करने और उसके विरुद्ध संघर्ष चलाने के जरिए ही पार्टी का विकास हुआ है और वह तपकर फौलादी बन गई है, और यह हमारे पार्टी-निर्माण का एक महत्वपूर्ण अंग है। यहां संश्रय का अर्थ है पूंजीपति वर्ग के साथ संयुक्त मोर्चा। यहां संघर्ष का अर्थ है विचारधारात्मक, राजनीतिक तथा संगठनात्मक क्षेत्रों में एक ऐसा "शान्तिपूर्ण" तथा "रक्तपात-हीन" संघर्ष जो उस समय चलाया जाता है जब पूंजीपति वर्ग के

साथ हमारा संश्रय मौजूद रहता है और जो उस समय सशस्त्र संघर्ष में परिणत हो जाता है जब हम पूंजीपति वर्ग के साथ नाता तोड़ने पर मजबूर हो जाते हैं। अगर हमारी पार्टी इस बात को नहीं समझती कि उसे किन्हीं खास मौकों पर पूंजीपति वर्ग के साथ संश्रय कायम करना चाहिए, तो वह आगे नहीं बढ़ सकती और क्रान्ति का विकास नहीं हो सकता; अगर हमारी पार्टी इस बात को नहीं समझती कि उसे पूंजीपति वर्ग के साथ संश्रय कायम करते हुए उसके विरुद्ध एक सुदृढ़ तथा गम्भीर "शान्तिपूर्ण" संघर्ष चलाना चाहिए, तो हमारी पार्टी विचारधारात्मक, राजनीतिक तथा संगठनात्मक रूप से विघटित हो जाएगी और क्रान्ति विफल हो जाएगी; और अगर हमारी पार्टी मजबूर होकर पूंजीपति वर्ग के साथ नाता तोड़ लेने पर उसके खिलाफ एक सुदृढ़ तथा गम्भीर सशस्त्र संघर्ष नहीं चलाती, तब भी हमारी पार्टी इसी तरह विघटित हो जाएगी और क्रान्ति भी इसी तरह विफल हो जाएगी। इन सब बातों की सच्चाई की पुष्टि पिछले अठारह वर्षों की घटनाओं से हो चुकी है।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का सशस्त्र संघर्ष सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में चलाए जाने वाले किसान-युद्ध का रूप धारण कर लेता है। इस सशस्त्र संघर्ष के इतिहास की भी तीन मंजिलें हैं। पहली मंजिल वह थी जब हमने उत्तरी अभियान में भाग लिया। उस समय हमारी पार्टी सशस्त्र संघर्ष के महत्व को समझने तो लगी थी, लेकिन उसे पूरी तरह नहीं समझ पाई थी, वह इस बात को नहीं समझ पाई थी कि सशस्त्र संघर्ष ही चीनी क्रान्ति में संघर्ष का मुख्य रूप है। दूसरी मंजिल थी भूमि-क्रान्ति युद्ध की मंजिल। उस समय हमारी पार्टी

अपनी स्वतंत्र सशस्त्र सेनाओं का निर्माण कर चुकी थी, स्वतंत्र रूप से लड़ने की कला सीख चुकी थी और जनता की राजनीतिक सत्ता तथा आधार-क्षेत्रों की स्थापना कर चुकी थी। उस समय हमारी पार्टी सशस्त्र संघर्ष का, जो संघर्ष का मुख्य रूप था, संघर्ष के अनेक अन्य आवश्यक रूपों के साथ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष तालमेल स्थापित करने के योग्य बन चुकी थी, यानी वह राष्ट्रीय पैमाने पर, मजदूरों के संघर्ष के साथ, किसानों के संघर्ष के साथ (जो एक मुख्य चीज थी), युवकों, महिलाओं तथा जनता के अन्य तमाम भागों के संघर्ष के साथ, राजनीतिक सत्ता के लिए किए जाने वाले संघर्ष के साथ, आर्थिक, जासूसी-विरोधी तथा विचारधारात्मक मोर्चों पर किए जाने वाले संघर्ष के साथ, और संघर्ष के अन्य रूपों के साथ सशस्त्र संघर्ष का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष तालमेल कायम करना सीख चुकी थी। और इस सशस्त्र संघर्ष का रूप था सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में किसानों की भूमि-क्रान्ति। तीसरी मंजिल मौजूदा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की मंजिल है। इस मंजिल में हम अपनी पहली मंजिल के और विशेषकर दूसरी मंजिल के सशस्त्र संघर्ष के अनुभवों का, और सशस्त्र संघर्ष का तालमेल संघर्ष के अन्य तमाम आवश्यक रूपों के साथ कायम करने के अपने अनुभवों का सदुपयोग करने में समर्थ हैं। मौजूदा समय में आम तौर पर सशस्त्र संघर्ष का अर्थ है छापामार युद्ध।[२] छापामार युद्ध क्या है? यह एक पिछड़े हुए देश में, एक विशाल अर्ध-औपनिवेशिक देश में, जनता की सशस्त्र सेनाओं द्वारा सशस्त्र दुश्मन को हराने और खुद अपने आधार-क्षेत्रों को कायम करने के लिए किए जाने वाले संघर्ष का एक अनिवार्य और इसलिए श्रेष्ठतम रूप है, जिसे वे एक

लम्बे अरसे तक इस्तेमाल कर सकती हैं। अभी तक हमारी राजनीतिक कार्यदिशा और हमारे पार्टी-निर्माण के कार्य, दोनों को ही संघर्ष के इसी रूप के साथ घनिष्ठ रूप से जोड़ा गया है। सशस्त्र संघर्ष से, छापामार युद्ध से अलग करके हमारी राजनीतिक कार्यदिशा की और फलस्वरूप हमारे पार्टी-निर्माण के कार्य की अच्छी समझ हासिल करना असम्भव है। सशस्त्र संघर्ष हमारी राजनीतिक कार्यदिशा का एक महत्वपूर्ण अंग है। पिछले अठारह वर्षों में हमारी पार्टी ने कदम-ब-कदम सशस्त्र संघर्ष करना सीख लिया है और वह इस पर डटी रही है। हम यह जान चुके हैं कि सशस्त्र संघर्ष के बिना चीन में न तो सर्वहारा वर्ग ही अपने पांव जमा पाएगा और न जनता तथा कम्युनिस्ट पार्टी ही, और क्रान्ति की विजय असम्भव हो जाएगी। इन वर्षों में हमारी पार्टी का विकास करने, उसे सुदृढ़ बनाने और उसका बोलशेविकीकरण करने का कार्य क्रान्तिकारी युद्धों के बीच आगे बढ़ा है; सशस्त्र संघर्ष के बिना हमारी कम्युनिस्ट पार्टी का रूप ऐसा हरगिज नहीं होता जैसा कि आज है। समूची पार्टी के साथियों को चाहिए कि वे इस अनुभव को, जिसके लिए हमने अपने खून की कीमत चुकाई है, हरगिज न भूलें।

इसी प्रकार, पार्टी के निर्माण, उसके विकास, सुदृढ़ीकरण और बोलशेविकीकरण की भी तीन मंजिलें हैं जिनकी अपनी-अपनी विशेषताएं हैं।

पहली मंजिल थी पार्टी का शैशव। इस मंजिल के प्रारम्भिक तथा मध्य चरणों में पार्टी की कार्यदिशा सही थी और पार्टी के सामान्य सदस्यों तथा कार्यकर्ताओं दोनों ही का क्रान्तिकारी

उत्साह अत्यधिक ऊंचा था; यही कारण था कि प्रथम महान क्रान्ति में जीतें हासिल की गईं। लेकिन आखिर उस समय हमारी पार्टी अपनी शैशवावस्था में ही थी; उसके पास संयुक्त मोर्चा, सशस्त्र संघर्ष और पार्टी-निर्माण, इन तीन बुनियादी समस्याओं से सम्बन्धित अनुभव का अभाव था; उसे चीन के इतिहास तथा चीनी समाज का और चीनी क्रान्ति की विशेषताओं तथा नियमों का अधिक ज्ञान न था, और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त तथा चीनी क्रान्ति के व्यवहार के बीच की एकता की सर्वांगीण समझ का उसमें अभाव था। इसीलिए इस मंजिल के अन्तिम चरण यानी इस मंजिल की नाजुक घड़ी में, वे लोग जो पार्टी के नेतृत्वकारी संगठन में प्रमुख पदों पर आसीन थे, क्रान्ति की विजयों के सुदृढ़ीकरण में पार्टी का नेतृत्व करने में असमर्थ रहे, उन्होंने पूंजीपति वर्ग से धोखा खाया और फलस्वरूप क्रान्ति असफल हो गई। इस मंजिल में पार्टी-संगठनों का विस्तार हुआ लेकिन उनका सुदृढ़ीकरण नहीं किया गया, और वे पार्टी के सदस्यों व कार्यकर्ताओं को विचारधारात्मक व राजनीतिक दृष्टि से सुदृढ़ और स्थिर बनाने में नाकाम रहे। बहुत से नए सदस्य थे, लेकिन उन्हें आवश्यक मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षा नहीं दी गई। हालांकि कार्य का भी प्रचुर अनुभव प्राप्त हो चुका था, लेकिन उसका उचित रूप से सारांश नहीं निकाला गया। अनेक कैरियरवादी मौका पाकर पार्टी में घुस आए, लेकिन उन्हें बाहर नहीं निकाला गया। पार्टी अपने दुश्मनों और संश्रयकारियों दोनों ही की चालों और षड्यंत्रों के जाल में फंसी हुई थी, लेकिन उसके पास चौकसी का अभाव था। पार्टी

के अन्दर सक्रिय तत्व भारी संख्या में आगे आए, लेकिन उन्हें समय रहते पार्टी का मुख्य सम्बल नहीं बनाया गया। पार्टी के पास अपनी कमान में कुछ क्रान्तिकारी सशस्त्र यूनिटें भी थीं, लेकिन वह उन पर पुख्ता गिरफ्त रखने में असमर्थ थी। इन सबके कारण थे अनुभवहीनता, क्रान्तिकारी समझ की अपर्याप्त गहराई, और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त को चीनी क्रान्ति के व्यवहार के साथ मिलाने में असमर्थता। ऐसी थी पार्टी-निर्माण की पहली मंजिल।

दूसरी मंजिल थी भूमि-क्रान्ति युद्ध की मंजिल। चूंकि हमारी पार्टी ने पहली मंजिल में अनुभव हासिल किए, चूंकि उसने चीन के इतिहास तथा चीनी समाज का और चीनी क्रान्ति की विशेषताओं तथा नियमों का बेहतर ज्ञान हासिल कर लिया, और चूंकि उसके कार्यकर्ताओं ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त की बेहतर समझ हासिल कर ली और वे उसे चीनी क्रान्ति के व्यवहार के साथ मिलाने में अधिक समर्थ हो गए, इसलिए वह दस साल तक सफलतापूर्वक भूमि-क्रान्ति संघर्ष चला सकी। यद्यपि पूंजीपति वर्ग ने विश्वासघात किया, फिर भी हमारी पार्टी किसानों पर दृढ़ता के साथ निर्भर रहने में कामयाब रही। पार्टी-संगठन न सिर्फ फिर से विकसित हुआ बल्कि सुदृढ़ भी बना। दुश्मन ने रोज-ब-रोज हमारी पार्टी में अन्दर से तोड़फोड़ करने की कोशिश की, लेकिन पार्टी ने विध्वंसकारियों को निकाल बाहर कर दिया। पार्टी में एक बार फिर बड़ी संख्या में कार्यकर्ता आगे आए, और इस बार वे उसका मुख्य सम्बल बन गए। पार्टी ने जनता की राजनीतिक सत्ता का रास्ता

खोल दिया और इस प्रकार शासन चलाने की कला सीख ली। पार्टी ने मजबूत सशस्त्र सेनाओं का निर्माण किया और इस प्रकार युद्ध की कला सीख ली। ये हमारी पार्टी की भारी प्रगति तथा महान उपलब्धियां थीं। फिर भी, इन महान संघर्षों के दौरान हमारे कुछ साथी अवसरवाद के दलदल में फंस गए, अथवा कम से कम कुछ समय के लिए फंस गए, और इसका कारण फिर यही था कि उन्होंने अतीत के अनुभव से नम्रतापूर्वक शिक्षा नहीं ली, चीन के इतिहास तथा चीनी समाज का और चीनी क्रान्ति की विशेषताओं तथा नियमों का ज्ञान हासिल नहीं किया और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त तथा चीनी क्रान्ति के व्यवहार के बीच की एकता की समझ हासिल नहीं की। अतः इस समूची मंजिल के दौरान पार्टी के नेतृत्वकारी संगठन में कुछ लोग सही राजनीतिक तथा संगठनात्मक कार्यदिशाओं पर दृढ़तापूर्वक जमे रहने में असफल रहे। एक समय पार्टी और क्रान्ति को कामरेड ली ली-सान के "वामपंथी" अवसरवाद से नुकसान पहुंचा, और दूसरे समय क्रान्तिकारी युद्ध में तथा श्वेत इलाकों के कार्य में प्रकट हुए "वामपंथी" अवसरवाद से क्षति हुई। चुनई मीटिंग (जनवरी १९३५ में क्वेइचओ के चुनई नामक स्थान में आयोजित राजनीतिक ब्यूरो की मीटिंग) में जाकर ही पार्टी ने निश्चित रूप से बोलशेविकीकरण की राह अपनाई और चाङ क्वो-थाओ के दक्षिणपंथी अवसरवाद पर विजय प्राप्त करने और एक जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की स्थापना करने के उत्तरवर्ती कार्य की नींव डाली। पार्टी के विकास में यह दूसरी मंजिल थी।

तीसरी मंजिल है जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की मंजिल। इस मंजिल में हमें अब तीन साल हो चुके हैं और संघर्ष के ये वर्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। पिछली दोनों क्रान्तिकारी मंजिलों में प्राप्त अनुभवों के सहारे और अपनी संगठनात्मक शक्ति तथा अपनी सशस्त्र सेनाओं की शक्ति, समूचे देश की जनता के बीच अपनी उच्च राजनीतिक प्रतिष्ठा, और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त तथा चीनी क्रान्ति के व्यवहार के बीच एकता की अपनी और गहरी समझ के आधार पर हमारी पार्टी ने न सिर्फ जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा स्थापित किया है, बल्कि वह जापानी-आक्रमण-विरोधी महान युद्ध भी चला रही है। संगठनात्मक रूप से, वह अपने संकीर्ण दायरे से बाहर निकल आई है और एक प्रमुख देशव्यापी पार्टी बन गई है। जापानी हमलावरों के विरुद्ध संघर्ष में उसकी सशस्त्र सेनाएं एक बार फिर विकसित हो रही हैं तथा और अधिक मजबूत होती जा रही हैं। समस्त जनता में पार्टी का प्रभाव और भी व्यापक होता जा रहा है। ये सभी महान सफलताएं हैं। तो भी, हमारे नए पार्टी-सदस्यों में से बहुतों को अभी तक शिक्षा नहीं दी गई है, नए संगठनों में से बहुतों का अभी तक सुदृढ़ीकरण नहीं किया गया है, और उनके तथा पुराने सदस्यों व संगठनों के बीच अभी भी भारी अन्तर मौजूद है। पार्टी के नए सदस्यों तथा नए कार्यकर्ताओं में से बहुतों को अभी पर्याप्त क्रान्तिकारी अनुभव प्राप्त नहीं हुआ है। उन्हें चीन के इतिहास तथा चीनी समाज के बारे में और चीनी क्रान्ति की विशेषताओं तथा नियमों के बारे में अब भी बहुत कम जानकारी है अथवा कुछ भी जानकारी

नहीं है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त तथा चीनी क्रान्ति के व्यवहार के बीच की एकता की उनकी समझ पूर्णता से काफी दूर है। पार्टी-संगठनों के विस्तार के दौरान, केन्द्रीय कमेटी द्वारा इस नारे पर जोर दिए जाने के बावजूद कि "पार्टी का साहसपूर्वक विस्तार करो, लेकिन एक भी बुरे व्यक्ति को न घुसने दो", बहुतेरे कैरियरवादी और अन्दर से विध्वंस करने वाले शत्रु मौका पाकर पार्टी के भीतर घुसने में सफल हो गए। यद्यपि संयुक्त मोर्चा बनाया गया और अब वह पिछले तीन वर्षों से कायम है, लेकिन पूंजीपति वर्ग, और खासकर बड़े पूंजीपतियों का वर्ग, हमारी पार्टी को नष्ट करने की कोशिश लगातार करता चला आ रहा है, बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के आत्मसमर्पणवादी और कट्टरतावादी सारे देश में गम्भीर टकराव भड़काते चले आ रहे हैं, और कम्युनिस्ट-विरोधी चीख-पुकार लगातार जारी है। यह सब बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के आत्मसमर्पणवादियों और कट्टरतावादियों द्वारा जापानी साम्राज्यवाद के सामने आत्मसमर्पण करने, संयुक्त मोर्चे को तोड़ने और चीन को पीछे घसीटने की तैयारी में किया जा रहा है। बड़े पूंजीपतियों का वर्ग विचारधारात्मक रूप से कम्युनिज्म को "क्षयग्रस्त करने" की कोशिश कर रहा है और राजनीतिक तथा संगठनात्मक रूप से कम्युनिस्ट पार्टी, सीमान्त क्षेत्र तथा पार्टी की सशस्त्र सेनाओं का खात्मा करने की कोशिश कर रहा है। इन परिस्थितियों में निस्सन्देह हमारा कार्य है आत्मसमर्पण, फूट तथा प्रतिगमन के खतरों पर काबू पाना, जहां तक सम्भव हो, राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को और क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग को बनाए रखना, जापान के खिलाफ

निरन्तर प्रतिरोध के लिए और निरन्तर एकता एवं निरन्तर प्रगति के लिए काम करना, और साथ ही तमाम सम्भावित आकस्मिक घटनाओं का मुकाबला करने की तैयारी रखना ताकि अगर वे घटित हों तो पार्टी तथा क्रान्ति को अप्रत्याशित क्षति न उठानी पड़े। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें पार्टी के संगठन को तथा उसकी सशस्त्र सैन्य-शक्तियों को मजबूत बनाना चाहिए और समूची जनता को आत्मसमर्पण, फूट और प्रतिगमन के विरुद्ध दृढ़ता से संघर्ष करने के लिए गोलबन्द करना चाहिए। इस कार्य की पूर्ति समूची पार्टी के प्रयासों पर, पार्टी के तमाम सदस्यों, कार्यकर्ताओं तथा हर जगह और हर स्तर के संगठनों द्वारा अदम्य तथा अविचल रूप से संघर्ष करने पर निर्भर है। हमें विश्वास है कि अपने अठारह वर्ष के अनुभव से सम्पन्न चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, अपने अनुभवी पुराने सदस्यों तथा पुराने कार्यकर्ताओं और अपने स्फूर्तिमय तथा नौजवान नए सदस्यों एवं नए कार्यकर्ताओं के संयुक्त प्रयासों, अपनी सुपरीक्षित बोलशेविकीकृत केन्द्रीय कमेटी तथा अपने स्थानीय संगठनों के संयुक्त प्रयासों और अपनी शक्तिशाली सशस्त्र सैन्य-शक्तियों तथा प्रगतिशील जन-समुदाय के संयुक्त प्रयासों द्वारा इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में समर्थ होगी।

ये हैं हमारी पार्टी के अठारह साल के इतिहास के मुख्य अनुभव तथा मुख्य समस्याएं।

हमारे अठारह साल के अनुभव से जाहिर हो जाता है कि संयुक्त मोर्चा तथा सशस्त्र संघर्ष दुश्मन को हराने के दो बुनियादी अस्त्र हैं। संयुक्त मोर्चा सशस्त्र संघर्ष चलाने के लिए कायम किया गया संयुक्त मोर्चा है। और पार्टी एक ऐसे बहादुर योद्धा की तरह है जो शत्रु पर धावा बोलने और उसे तहस-नहस करने के लिए इन दो अस्त्रों, संयुक्त मोर्चे तथा सशस्त्र संघर्ष, को उठाए हुए है। इसी रूप में ये तीनों एक दूसरे से सम्बन्धित हैं।

आज हमें अपनी पार्टी का निर्माण किस तरह करना है? हम "एक ऐसी बोलशेविकीकृत चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का, जो देशव्यापी व जनव्यापी हो और जो विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक रूप से पूरी तरह सुदृढ़ हो," निर्माण किस प्रकार कर सकते हैं? इस प्रश्न का उत्तर हमारी पार्टी के इतिहास का अध्ययन करके, संयुक्त मोर्चे तथा सशस्त्र संघर्ष की समस्या, पूंजीपति वर्ग के साथ संश्रय कायम करने के साथ-साथ उसके खिलाफ संघर्ष भी चलाने की समस्या, और आठवीं राह सेना तथा नई चौथी सेना द्वारा जापान-विरोधी छापामार युद्ध में अविचल रूप से डटे रहने और जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों की स्थापना करने की समस्या के सम्बन्ध में पार्टी-निर्माण का अध्ययन करके प्राप्त किया जा सकता है।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त तथा चीनी क्रान्ति के व्यवहार के बीच एकता की अपनी समझ के आधार पर अपने अठारह साल के अनुभव और अपने वर्तमान नए अनुभव का सारांश निकालना और इन अनुभवों को सारी पार्टी में फैलाना, ताकि हमारी पार्टी फौलाद जैसी ठोस एवं सुदृढ़ बन सके और पिछली गलतियों को दोहराने से बच सके—यही है हमारा कार्य।

नोट

१ जे० वी० स्तालिन, "चीन में क्रान्ति का भविष्य"।

२ यह बताकर कि आम तौर पर, चीनी क्रान्ति में सशस्त्र संघर्ष का अर्थ छापामार युद्ध है, कामरेड माओ त्सेतुङ ने दूसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध से लेकर जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के प्रारम्भिक दिनों तक के चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के अनुभव का सारांश निकाला है। दूसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के दौरान एक लम्बे अरसे में, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में तमाम सशस्त्र संघर्षों ने छापामार युद्ध का रूप धारण कर लिया था। इस काल के अन्तिम चरण में, ज्यों-ज्यों लाल सेना की ताकत बढ़ती गई, छापामार लड़ाई भी विकसित होकर छापामार किस्म की एक चलायमान लड़ाई में बदलती गई (जैसा कि कामरेड माओ त्सेतुङ व्याख्या करते हैं, यह एक अपेक्षाकृत ऊंचे स्तर की छापामार लड़ाई थी)। किन्तु जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में, जबकि एक भिन्न प्रकार का शत्रु सामने था और परिस्थितियां भिन्न थीं, हमें फिर से छापामार लड़ाई मे लौट आना पड़ा। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के प्रारम्भिक दिनों में उन पार्टी-कामरेडों ने, जिन्होंने दक्षिणपंथी अवसरवाद की गलती की थी, पार्टी के नेतृत्व में चलाए जाने वाले छापामार युद्ध के महत्व को कम करके आंका और अपनी आशाएं क्वोमिन्ताङ सेना की फौजी कार्यवाहियों पर केन्द्रित कर दीं। कामरेड माओ त्सेतुङ ने "जापान-विरोधी छापामार युद्ध की रणनीति विषयक समस्याएं", "दीर्घकालीन युद्ध के बारे में" तथा "युद्ध और रणनीति की समस्याएं" आदि अपनी रचनाओं में इन विचारों का खण्डन किया, और मौजूदा लेख में उन्होंने चीनी क्रान्ति के दीर्घकालीन सशस्त्र संघर्ष को चलाने में, जिसने छापामार युद्ध का रूप धारण कर लिया, प्राप्त अनुभवों का सैद्धान्तिक सारांश प्रस्तुत किया। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के उत्तरकाल में, और खासकर तीसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के काल में, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलाए गए सशस्त्र संघर्ष का मुख्य रूप छापामार युद्ध से विकसित होकर नियमित युद्ध में बदल गया। इसका कारण था क्रान्तिकारी शक्तियों का और ज्यादा विकास

होना तथा शत्रु की परिस्थितियों में परिवर्तन होना। तीसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के उत्तरकाल में इस सशस्त्र संघर्ष ने विकसित होकर और भी बड़े पैमाने के युद्ध का रूप धारण कर लिया, जिसका संचालन ऐसी बड़ी फौजी फारमेशनों द्वारा किया जाता था जो भारी हथियारों से लैस थीं और शत्रु के भारी मोर्चेबन्दी वाले स्थलों पर धावा बोलने में समर्थ थीं।

वर्तमान परिस्थिति और पार्टी के कार्य*

१० अक्तूबर १९३९

१. साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध का छिड़ जाना एक नए आर्थिक और राजनीतिक संकट से अपनी जान छुड़ाने की साम्राज्यवादी देशों की कोशिश का नतीजा है। चाहे जर्मन पक्ष की दृष्टि से देखा जाए या आंग्ल-फ्रांसीसी पक्ष की दृष्टि से, यह युद्ध अपने स्वरूप में एक अन्यायपूर्ण, अपहारक और साम्राज्यवादी युद्ध है। दुनियाभर की कम्युनिस्ट पार्टियों को चाहिए कि वे इस युद्ध का दृढ़ता से विरोध करें और सामाजिक-जनवादी पार्टियों की इस युद्ध का समर्थन करके सर्वहारा वर्ग से गद्दारी करने वाली अपराधपूर्ण कार्यवाही का विरोध करें। समाजवादी सोवियत संघ शान्ति की नीति पर पहले की ही भांति अडिग है, दोनों युद्धरत पक्षों के प्रति कड़ाई से तटस्थता का पालन कर रहा है तथा उसने अपनी सशस्त्र सेनाएं पोलैण्ड में भेजकर जर्मन हमलावर फौजों को पूर्व की ओर बढ़ने से रोक दिया है, पूर्वी योरप में शान्ति को मजबूत बनाया है और पश्चिमी उकराइन और बैलोरूस के अपने बन्धु-राष्ट्रों को पोलैण्ड के शासकों के उत्पीड़न से मुक्त करा दिया है। अन्तरराष्ट्रीय प्रतिक्रियावादी शक्तियों के

---

*यह फैसला कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के लिए लिखा था।

किसी भी सम्भावित प्रहार को न होने देने के लिए सोवियत संघ ने अपने पड़ोसी देशों के साथ कई संधियां कर ली हैं और वह विश्व-शान्ति फिर से कायम करने के प्रयत्न में जुटा हुआ है।

२. इस नई अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में जापानी साम्राज्यवाद की नीति है अपनी भावी अन्तरराष्ट्रीय दुस्साहसपूर्ण हरकतों के विस्तार की तैयारी के रूप में चीन का सवाल हल कर डालने के लिए चीन पर हमला करने में अपनी पूरी शक्ति लगा देना। वह जिस नीति के सहारे चीन का सवाल हल कर डालने की कोशिश कर रहा है, वह इस प्रकार है :

(क) अधिकृत इलाकों के बारे में उसकी नीति है पूरे चीन को गुलाम बनाने की तैयारी के रूप में इन अधिकृत इलाकों पर अपनी पकड़ का शिकंजा अच्छी तरह कस लेना। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उसे जापान-विरोधी छापामार आधार-क्षेत्रों का "सफाया कर लेना" है, आर्थिक साधन-स्रोतों का शोषण कर लेना है, कठपुतली शासन कायम कर देना है और चीनी जनता की राष्ट्रीय भावना को मिटा देना है।

(ख) चीन के पृष्ठभागीय इलाकों के बारे में उसकी नीति है मुख्य रूप से राजनीतिक हमला करना और सहायक रूप में फौजी हमला करना। राजनीतिक हमले का अर्थ जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे को भंग करने, क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग में दरारें पैदा करने और क्वोमिन्ताङ सरकार को आत्मसमर्पण करने के लिए फुसलाने पर जोर देना है, न कि बड़े पैमाने के फौजी हमलों पर जोर देना।

मौजूदा दौर में इस बात की अधिक सम्भावना नहीं है कि शत्रु कोई बड़े पैमाने का रणनीतिक हमला करे जैसा कि उसने ऊहान पर किया था, कारण, दुश्मन को पिछले दो वर्षों के दौरान चीन के वीरतापूर्ण प्रतिरोध की मार खानी पड़ी है और उसे सैन्य-शक्ति व वित्तीय साधनों के अभाव का सामना करना पड़ा है। इस मायने में प्रतिरोध-युद्ध बुनियादी तौर पर रणनीतिक ठहराव के दौर में पहुंच चुका है। यह रणनीतिक ठहराव का दौर हमारे प्रत्याक्रमण की तैयारी का दौर है। लेकिन पहली बात यह है कि जब हम यह कहते हैं कि ठहराव की स्थिति बुनियादी तौर पर पैदा हो चुकी है तो हम शत्रु द्वारा मुहिम में आक्रमण करने की सम्भावना से इनकार नहीं करते ; इस समय छाङशा पर दुश्मन का हमला हो रहा है और बाद में दूसरे स्थानों पर भी हमला हो सकता है। दूसरी बात यह है कि जैसे-जैसे नियमित मोर्चे पर ठहराव की सम्भावना बढ़ती जाएगी, वैसे-वैसे शत्रु हमारे छापामार आधार-क्षेत्रों में "सफाया करने" की अपनी कार्यवाहियों में तेजी लाता जाएगा। तीसरी बात यह है कि यदि चीन शत्रु-अधिकृत इलाकों पर से दुश्मन के कब्जे को भंग न कर सका और उसने उन इलाकों पर शत्रु का शिकंजा मजबूत होने दिया और उनकी लूट-खसोट करने में शत्रु के उद्देश्यों को पूरा होने दिया, यदि चीन शत्रु के राजनीतिक हमलों को विफल करने में तथा प्रतिरोध, एकता व प्रगति पर डटे रहने में असफल रहा और इस तरह प्रत्याक्रमण के लिए शक्तियां न जुटा सका, अथवा यदि क्वोमिन्ताङ सरकार ने अपने आप घुटने टेक दिए, तो भविष्य में शत्रु द्वारा बड़े पैमाने पर हमला किए जाने की सम्भावना बनी रहेगी। दूसरे शब्दों में, जो ठहराव की स्थिति आज पैदा हो

चुकी है, उसे शत्रु या आत्मसमर्पणकारी अब भी भंग कर सकते हैं।

३. आज की परिस्थिति में जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे के अन्दर आत्मसमर्पण, फूट और प्रतिगमन का खतरा अब भी सबसे बड़ा खतरा है, मौजूदा कम्युनिस्ट-विरोधी व प्रतिगामी कार्यवाहियां अब भी बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े पूंजीपतियों के वर्ग की आत्मसमर्पण की तैयारी के कदम हैं। प्रत्याक्रमण के लिए शक्ति जुटाने के सिलसिले में अब भी हमारा कार्य यह है कि हमारी पार्टी के ७ जुलाई के घोषणापत्र में प्रस्तुत किए गए तीन महान राजनीतिक नारों – "प्रतिरोध-युद्ध पर डटे रहो और आत्मसमर्पण का विरोध करो", "एकता पर डटे रहो और फूट का विरोध करो" और "प्रगति पर डटे रहो और प्रतिगमन का विरोध करो" – पर कारगर रूप से अमल करने के लिए देशभर में तमाम देशभक्तों के साथ सहयोग करके जन-समुदाय को गोलबन्द किया जाए। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, शत्रु के पृष्ठभाग में यह आवश्यक है कि छापामार युद्ध पर डटे रहा जाए, दुश्मन की "सफाया करने" की कार्यवाहियों को पराजित कर दिया जाए, शत्रु-अधिकृत इलाकों पर से उसके कब्जे को भंग कर दिया जाए और ऐसे प्रगतिशील राजनीतिक व आर्थिक सुधार लागू किए जाएं जो जापान का प्रतिरोध करने वाले विशाल जन-समुदाय के लिए लाभप्रद हों। नियमित मोर्चे पर यह आवश्यक है कि फौजी रक्षा को बनाए रखा जाए और शत्रु की हर सम्भावित आक्रमणात्मक मुहिम को विफल कर दिया जाए। हमारे पृष्ठभाग में यह आवश्यक है कि राजनीतिक सुधार तेजी से और संजीदगी के साथ लागू किए जाएं, क्वोमिन्ताङ की एक पार्टी की तानाशाही खत्म कर दी जाए, एक ऐसी राष्ट्रीय एसेम्बली

बुलाई जाए जो सही मायने में जनता की अभिलाषा का प्रतिनिधित्व करती हो और जो सही मायने में सत्तासम्पन्न हो, एक संविधान बनाकर स्वीकृत कराया जाए और वैधानिक सरकार को अमली जामा पहनाया जाए। किसी भी प्रकार का ढुलमुलपन दिखाना या टालमटोल करना अथवा कोई विपरीत नीति अपनाना बिलकुल गलत है। साथ ही हमारी पार्टी के सभी स्तरों के नेतृत्वकारी संगठनों व तमाम पार्टी-सदस्यों को वर्तमान परिस्थिति में और अधिक चौकन्ना रहना चाहिए और अपनी पार्टी और उसके नेतृत्व में काम करने वाली सशस्त्र सेनाओं व राजनीतिक सत्ता के संगठनों को विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक तौर पर पूरी शक्ति से सुदृढ़ बनाना चाहिए ताकि चीनी क्रान्ति को जोखिम में डालने वाले किसी भी सम्भावित संकट का सामना करने के लिए तैयार रहा जाए और पार्टी व क्रान्ति को अप्रत्याशित हानियों से बचाया जा सके।

बुद्धिजीवियों को बड़ी तादाद में भरती करो*

१ दिसम्बर १९३९

१. दीर्घ और निर्मम राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध में, नए चीन के निर्माण के महान संघर्ष में, कम्युनिस्ट पार्टी को चाहिए कि वह बुद्धिजीवियों को भरती करने में सिद्धहस्त हो जाए, क्योंकि सिर्फ इसी तरह से वह सशस्त्र प्रतिरोध की महान शक्ति संगठित करने में, लाखों-करोड़ों किसानों को संगठित करने में, क्रान्तिकारी सांस्कृतिक आन्दोलन का विकास करने में तथा क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चे का विस्तार करने में समर्थ होगी। बुद्धिजीवियों के शामिल हुए बिना क्रान्ति में विजय हासिल करना असम्भव है।

२. पिछले तीन वर्ष के दौरान हमारी पार्टी और हमारी सेना ने बुद्धिजीवियों को भरती करने के मामले में काफी कोशिश की है, और बड़ी तादाद में क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों को पार्टी, सेना, सरकारी संस्थाओं, सांस्कृतिक आन्दोलन और जन-आन्दोलन में शामिल कर लिया गया है और इस तरह संयुक्त मोर्चे का विस्तार हुआ है; यह एक बड़ी उपलब्धि है। लेकिन सेना के बहुत से कार्यकर्ता बुद्धिजीवियों के महत्व को अब भी नहीं समझ पाए हैं, वे अब भी

---

*यह फैसला कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के लिए लिखा था।

बुद्धिजीवियों को आशंकाभरी दृष्टि से देखते हैं और यहां तक कि उनका बहिष्कार करने पर भी उतारू हैं। हमारे अनेक प्रशिक्षण-संस्थान बड़ी तादाद में नौजवान छात्रों को भरती करने में अब भी हिचकिचाते हैं। हमारे अनेक स्थानीय पार्टी-संगठन अब भी बुद्धिजीवियों को पार्टी में दाखिल नहीं होने देना चाहते। यह सब इस बात को न समझ पाने का नतीजा है कि क्रान्तिकारी कार्य के लिए बुद्धिजीवियों का कितना महत्व है, औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक देशों के बुद्धिजीवियों और पूंजीवादी देशों के बुद्धिजीवियों में क्या अन्तर है, जमींदार वर्ग व पूंजीपति वर्ग की सेवा करने वाले बुद्धिजीवियों और मजदूर वर्ग व किसान वर्ग की सेवा करने वाले बुद्धिजीवियों में क्या अन्तर है, और ऐसी स्थिति कितनी संगीन है जिसमें पूंजीवादी राजनीतिक पार्टियां बुद्धिजीवियों को अपनी ओर खींच लेने के लिए हमसे होड़ कर रही हैं और जिसमें जापानी साम्राज्यवादी भी हर सम्भव उपाय से चीनी बुद्धिजीवियों को खरीद लेने और उनके मानस को दूषित कर डालने की कोशिश में लगे हुए हैं; और यह सब खासकर इस अनुकूल परिस्थिति को न समझ पाने का नतीजा है कि हमारी पार्टी और हमारी सेना भली-भांति परखे हुए कार्यकर्ताओं की एक मजबूत रीढ़ तैयार कर चुकी हैं और इस तरह से बुद्धिजीवियों का नेतृत्व करने में समर्थ बन चुकी हैं।

३. इसलिए अब से इन बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए :

(क) युद्ध-क्षेत्रों के तमाम पार्टी-संगठनों और पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली तमाम फौजी यूनिटों को चाहिए कि वे हमारी सेना, प्रशिक्षण-संस्थानों और सरकारी संस्थाओं में बुद्धिजीवियों

को बड़ी तादाद में भरती कर लें। जो बुद्धिजीवी जापान से लड़ने के इच्छुक हों और अपेक्षाकृत वफादार, मेहनती और कष्ट-सहिष्णु हों, उन सभी को हमें विविध उपायों से भरती कर लेना चाहिए; उन्हें राजनीतिक शिक्षा देनी चाहिए तथा युद्ध और काम में अपने आपको तपा लेने और सेना, सरकार व जनता की सेवा करने में उनकी मदद करनी चाहिए; और ठोस स्थिति के अनुसार उन बुद्धिजीवियों को पार्टी में दाखिल कर लेना चाहिए जो पार्टी-सदस्य बनने की कसौटी पर खरे उतरते हों। जो बुद्धिजीवी पार्टी में दाखिल होने लायक न हों या पार्टी में दाखिल न होना चाहते हों, उनके साथ भी हमें अच्छे कामकाजी सम्बन्ध रखने चाहिए और अपने साथ काम करने में उनका पथ-प्रदर्शन करते रहना चाहिए।

(ख) बड़ी तादाद में बुद्धिजीवियों को भरती करने की नीति को लागू करने में हमें निस्सन्देह शत्रु और पूंजीवादी राजनीतिक पार्टियों के भेजे तत्वों और दूसरे निष्ठाहीन तत्वों की घुसपैठ रोकने पर पूरा ध्यान देना चाहिए। ऐसे तत्वों की घुसपैठ रोकने में हमें सख्ती से काम लेना चाहिए। ऐसे तत्वों में से जो लोग पहले ही हमारी पार्टी, सेना या सरकारी संस्थाओं में घुस आए हों, उन्हें अकाट्य प्रमाणों के आधार पर दृढ़ता के साथ लेकिन साथ ही विवेक के साथ चुन-चुन कर अलग कर देना चाहिए। लेकिन ऐसा करते समय हमें उन बुद्धिजीवियों पर जो अपेक्षाकृत वफादार हों, हरगिज शक नहीं करना चाहिए, और बेगुनाह लोगों के खिलाफ प्रतिक्रान्तिकारियों के झूठे आरोपों से हमें पूरी तरह खबरदार रहना चाहिए।

(ग) उन तमाम बुद्धिजीवियों को, जो अपेक्षाकृत वफादार और कुछ हद तक उपयोगी हैं, हमें उपयुक्त काम सौंप देना चाहिए और उन्हें राजनीतिक शिक्षा देने और उनका पथ-प्रदर्शन करने का काम अच्छी तरह करना चाहिए ताकि लम्बे संघर्ष के दौरान वे कदम-ब-कदम अपनी कमजोरियों पर काबू पा सकें, अपने दृष्टिकोण को क्रान्तिकारी बना सकें, आम जनता के साथ अपने आपको एकरूप कर सकें और पुराने पार्टी-सदस्यों और पुराने कार्यकर्ताओं के साथ घुल-मिल सकें तथा पार्टी के मजदूर-किसान सदस्यों के साथ घुल-मिल सकें।

(घ) कुछ ऐसे कार्यकर्ताओं को और खासकर हमारी मुख्य सैन्य-शक्तियों के कुछ ऐसे कार्यकर्ताओं को, जो हमारे काम में बुद्धिजीवियों के शामिल होने के खिलाफ हों, ठीक तरह से समझा-बुझा देना चाहिए ताकि वे हमारे काम में बुद्धिजीवियों के शामिल होने की आवश्यकता को जान लें। साथ ही हमें मजदूर-किसान कार्यकर्ताओं को अपनी पढ़ाई में पूरा जोर लगाने और अपने सांस्कृतिक स्तर को उन्नत करने के लिए बढ़ावा देने का काम भी कारगर ढंग से करना चाहिए। इस तरह मजदूर-किसान कार्यकर्ताओं के बुद्धिजीवी बनने और बुद्धिजीवियों के मजदूर-किसान बनने का काम एक साथ पूरा हो सकेगा।

(ङ) ऊपर बताए गए उसूल क्वोमिन्ताङ-शासित इलाकों में और जापान-अधिकृत इलाकों में भी मुख्य रूप से लागू किए जाने लायक हैं ; लेकिन वहां बुद्धिजीवियों को पार्टी में दाखिल करते समय उनकी वफादारी के परिमाण पर और अधिक ध्यान देना चाहिए, ताकि पार्टी-संगठन के और भी

अधिक पुख्ता रहने की गारन्टी हो सके। पार्टी के बाहर के उन व्यापक बुद्धिजीवियों के साथ, जो पार्टी के हमदर्द हैं, हमें उपयुक्त सम्पर्क बनाए रखना चाहिए और उन्हें जापान का प्रतिरोध करने तथा जनवाद प्राप्त करने के लिए हो रहे महान संघर्ष में, सांस्कृतिक आन्दोलन में और संयुक्त मोर्चे के काम में संगठित कर लेना चाहिए।

४. तमाम पार्टी-कामरेडों को यह बात समझ लेनी चाहिए कि बुद्धिजीवियों के प्रति सही नीति अपनाना क्रान्ति की जीत के लिए एक महत्वपूर्ण शर्त है। बुद्धिजीवियों के प्रति वह त्रुटिपूर्ण रवैया नहीं दुहराया जाना चाहिए जिसे भूमि-क्रान्ति के दौरान अनेक स्थानों और फौजी यूनिटों के पार्टी-संगठनों ने अपनाया था ; मौजूदा बुद्धिजीवियों की मदद लिए बिना सर्वहारा वर्ग अपने बुद्धिजीवी पैदा नहीं कर सकता। केन्द्रीय कमेटी को आशा है कि सभी स्तरों की पार्टी-कमेटियां और तमाम पार्टी-कामरेड इस मामले पर संजीदगी के साथ ध्यान देंगे।

चीनी क्रान्ति और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी*

दिसम्बर १९३९

अध्याय १

चीनी समाज

१. चीनी राष्ट्र

चीन दुनिया के सबसे बड़े देशों में से एक है, उसका क्षेत्रफल लगभग पूरे योरप के बराबर है। हमारे इस विशाल देश में विस्तृत उपजाऊ भूमि है जो हमारे लिए खुराक और कपड़ा मुहय्या करती है; देश के एक कोने से दूसरे कोने तक पर्वतशृंखलाएं फैली हुई हैं, जिनमें विस्तृत वन और समृद्ध खनिज-भण्डार मौजूद हैं; अनेक नदियां और झीलें हैं, जो जल-परिवहन व सिंचाई के लिए उपयोगी हैं; और एक बहुत लम्बा समुद्र-तट है जो समुद्रपार के राष्ट्रों के साथ सम्पर्क कायम करने के लिए संचार की सुविधा प्रदान करता है। प्राचीन काल से ही हमारे पूर्वज इस विशाल भूमि पर मेहनत

* "चीनी क्रान्ति और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी" एक पाठ्य-पुस्तक है, जिसे कामरेड माओ त्सेतुङ और येनान में काम करने वाले कुछ अन्य कामरेडों ने एक साथ मिलकर १९३९ के जाड़ों में लिखा था। "चीनी समाज" नामक पहले अध्याय का मसौदा दूसरे कामरेडों ने तैयार किया था और कामरेड माओ त्सेतुङ

करते आए हैं, जिन्दगी बसर करते आए हैं और अपने परिवार में वृद्धि करते आए हैं।

चीन की मौजूदा सीमाएं ये हैं : चीन का उत्तर-पूर्व व उत्तर-पश्चिम और उसके पश्चिम का एक भाग सोवियत समाजवादी लोकतंत्र संघ से मिलता है ; उसका ठीक उत्तरी भाग मंगोलिया लोक गणराज्य से मिलता है ; उसके पश्चिम का एक भाग और उसका दक्षिण-पश्चिमी भाग अफगानिस्तान, भारत, भूटान और नेपाल से मिलता है ; उसके दक्षिण में बर्मा और वियतनाम हैं ; और पूर्व में कोरिया है, इस ओर वह जापान और फिलिपीन का भी निकट पड़ोसी है। यह भौगोलिक अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति बाहर से चीनी जनता की क्रान्ति को लाभदायक और हानिकारक स्थितियां प्रदान करती है। सोवियत संघ की सीमा से लगा होना, योरप और अमरीका के मुख्य साम्राज्यवादी देशों से काफी दूर होना तथा उसके इर्द-गिर्द बहुत से औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक देशों का होना एक लाभदायक बात है। यह एक हानिकारक बात है कि जापानी साम्राज्यवाद अपनी भौगोलिक समीपता इस्तेमाल करते हुए चीन की समस्त जातियों के अस्तित्व और चीनी जनता की क्रान्ति को खतरे में डालता रहता है।

आजकल चीन की आबादी ४५ करोड़ है जो दुनिया की कुल

ने उसे सुधारा था। दूसरा अध्याय "चीनी क्रान्ति" खुद कामरेड माओ त्सेतुङ ने लिखा था। तीसरे अध्याय को, जो "पार्टी-निर्माण" के बारे में था, उन कामरेडों ने अधूरा ही छोड़ दिया था जो उसे तैयार कर रहे थे। उक्त दो प्रकाशित अध्यायों ने और विशेषकर दूसरे अध्याय ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता

आबादी का लगभग एक चौथाई हिस्सा है। इसमें नव्वे फीसदी से ज्यादा लोग हान जाति के हैं। इसके अलावा दूसरे लोग बीसियों अल्पसंख्यक जातियों के हैं जिनमें मंगोल, ह्वेइ, तिब्बती, वेवुर, म्याओ, ई, च्वाङ, चुङच्या और कोरियाई आदि जातियां शामिल हैं ; यद्यपि उनके सांस्कृतिक विकास का स्तर अलग-अलग है, फिर भी उन सबका एक लम्बा इतिहास है। चीन एक विशाल जनसंख्या वाला बहुजातीय देश है।

दुनिया के दूसरे बहुत से राष्ट्रों की ही तरह चीनी राष्ट्र भी (यहां हमारा अभिप्राय मुख्यतः हान जाति से है) अपने विकास के इतिहास में दसियों हजार साल तक वर्गहीन आदिम कम्यूनों की स्थिति से गुजर चुका है। इन आदिम कम्यूनों के विघटन और वर्ग-समाज में संक्रमण से लेकर आज तक कोई चार हजार साल बीत चुके हैं, जिसके दौरान पहले दास समाज का और फिर सामन्ती समाज का प्रादुर्भाव हुआ। चीनी राष्ट्र की सभ्यता के समूचे इतिहास में उसकी कृषि और दस्तकारी अपने विकास के उच्च स्तर के लिए प्रसिद्ध रही हैं। बहुत से महान विचारक, वैज्ञानिक, आविष्कारक, राजनीतिज्ञ, रणनीतिज्ञ, साहित्यकार और कलाकार हो चुके हैं और हमारे यहां क्लासिकी ग्रन्थों का समृद्ध भण्डार मौजूद है। चीन में कुतुबनुमा का आविष्कार प्राचीन काल में ही हो चुका

को शिक्षित करने में महान भूमिका अदा की है। दूसरे अध्याय में कामरेड माओ त्सेतुङ ने नव-जनवाद पर जो विचार व्यक्त किए हैं, उनका बाद में जनवरी १९४० में लिखी गई "नव-जनवाद के बारे में" नामक अपनी रचना में उन्होंने पर्याप्त विकास किया।

था।[1] कागज बनाने की कला १,८०० साल पहले ही मालूम कर ली गई थी।[2] ब्लाक-छपाई का आविष्कार १,३०० साल पहले[3] और छपाई के काम आने वाले टाइप का आविष्कार ८०० साल पहले[4] हो चुका था। चीन के लोग योरपवासियों से पहले ही बारूद इस्तेमाल करने लगे थे।[5] इसलिए चीन संसार के प्राचीनतम सभ्य देशों में से एक है और इसके पास लगभग चार हजार साल पुराना लिखित इतिहास मौजूद है।

चीनी राष्ट्र दुनियाभर में न सिर्फ अपनी परिश्रमशीलता और कष्ट-सहिष्णुता के लिए बल्कि आजादी के प्रति अपने उत्कट प्रेम और समृद्ध क्रान्तिकारी परम्पराओं के लिए भी मशहूर है। उदाहरण के लिए, हान जाति का इतिहास इस बात का प्रमाण है कि चीनी जनता अन्धकारमय शासन को कभी बर्दाश्त नहीं करती, बल्कि उसे उखाड़ फेंकने अथवा बदल डालने के लिए हमेशा क्रान्तिकारी साधनों का इस्तेमाल करती है। हान जाति के हजारों साल के इतिहास में जमींदारों और रईसजादों के अन्धकारमय शासन के खिलाफ सैंकड़ों छोटे-बड़े किसान विद्रोह हुए। और राजवंशों के अधिकांश परिवर्तन इन किसान विद्रोहों की शक्ति के कारण ही हुए। चीन की तमाम जातियों की जनता विदेशी उत्पीड़न का विरोध करती आई है और उसे समाप्त करने के लिए अनिवार्य रूप से विद्रोह करती आई है। वह समानता के आधार पर एकता कायम करने का पक्षपोषण करती है, और एक जाति द्वारा दूसरी जाति के उत्पीड़न का विरोध करती है। चीनी राष्ट्र के हजारों वर्षों के इतिहास में बहुत से राष्ट्रीय वीर और क्रान्तिकारी नेता

पैदा हुए हैं। इस प्रकार चीनी राष्ट्र एक गौरवशाली क्रान्तिकारी परम्परा और एक शानदार ऐतिहासिक विरासत वाला राष्ट्र है।

२. प्राचीन सामन्ती समाज

हालांकि चीन एक महान राष्ट्र है और हालांकि वह एक भारी जनसंख्या, एक लम्बे इतिहास, एक समृद्ध क्रान्तिकारी परम्परा और एक शानदार ऐतिहासिक विरासत वाला विशाल देश है, फिर भी दास समाज से सामन्ती समाज में संक्रमण के बाद उसका आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक विकास एक लम्बे अरसे तक बड़ी धीमी रफ्तार से होता रहा। यह सामन्ती समाज चओ वंश और छिन वंश से शुरू होकर लगभग तीन हजार साल तक बना रहा।

चीन के सामन्ती काल की आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार थीं :

(१) आत्मनिर्भरता वाली एक प्राकृतिक अर्थव्यवस्था की प्रधानता थी। किसान अपने लिए न सिर्फ कृषि-पदार्थ पैदा करते थे, बल्कि अपनी जरूरत की दस्तकारी की अधिकतर चीजें भी खुद ही तैयार करते थे। जमींदार और रईसजादे किसानों से जो कुछ लगान के रूप में शोषण करते थे वह भी मुख्यतया व्यक्तिगत उपभोग के लिए ही होता था, विनिमय के लिए नहीं। हालांकि उस समय विनिमय की प्रणाली का विकास भी हुआ, पर समूचे अर्थतंत्र में उसने कोई निर्णयात्मक भूमिका अदा नहीं की।

(२) सामन्ती शासक वर्ग ने, जिसमें जमींदार, रईसजादे और

सम्राट शामिल थे, अत्यधिक भूमि पर अधिकार कर लिया था, जबकि किसानों के पास बहुत कम जमीन थी अथवा जरा भी जमीन नहीं थी। जमींदारों, रईसजादों और शाही परिवार की जमीन को किसान अपने कृषि-औजारों से जोतते थे और फसल का ४०, ५०, ६०, ७०, यहां तक कि ८० प्रतिशत से भी ज्यादा हिस्सा उन्हें जमींदारों, रईसजादों और शाही परिवार के व्यक्तिगत उपभोग के लिए देना पड़ता था। दरअसल किसान तब भी भूदास ही थे।

(३) न सिर्फ जमींदार, रईसजादे और शाही परिवार के लोग किसानों के शोषण से प्राप्त होने वाले लगान पर निर्भर रहते थे, बल्कि जमींदार वर्ग का राज्य किसानों को इस बात के लिए मजबूर करता था कि वे नजराना व कर देकर और बेगार करके सरकारी अफसरों की भारी तादाद का और एक ऐसी सेना का भरण-पोषण करें जो मुख्यतया किसानों का ही दमन करने के लिए बनाई गई थी।

(४) जमींदार वर्ग का सामन्ती राज्य सामन्ती शोषण की इस व्यवस्था की रक्षा करने वाला सत्ताधारी संगठन था। जब छिन वंश के जमाने से पहले यह सामन्ती राज्य परस्पर विरोधी छोटी-छोटी रियासतों में खण्डित हो गया, तो प्रथम छिन सम्राट द्वारा चीन का एकीकरण किए जाने के बाद यह राज्य एकतंत्रीय और केन्द्रीकृत बन गया, यद्यपि सामन्ती फूट किसी हद तक फिर भी बनी रही। सामन्ती राज्य में सर्वोच्च सत्ता सम्राट के हाथ में रहती थी। वह देशभर में सशस्त्र सेनाओं, अदालतों, सरकारी खजानों और राजकीय अनाज-गोदामों के इनचार्ज अफसर नियुक्त करता था और जमींदारों व शरीफजादों पर निर्भर रहकर उन्हें सामन्ती

शासन की पूरी व्यवस्था का आधार बनाए रखता था।

ऐसे सामन्ती आर्थिक शोषण और सामन्ती राजनीतिक उत्पीड़न के अधीन चीनी किसान सदियों तक दरिद्रता और दुख में गुलामों जैसा जीवन बिताते रहे। सामन्ती व्यवस्था की बेड़ियों में जकड़े हुए किसानों को कोई व्यक्तिगत आजादी हासिल नहीं थी। जमींदार को किसानों के प्रति मनमाने ढंग से गाली-गलौज करने, मारपीट करने और हत्या तक कर डालने का अधिकार था, और किसानों को कोई भी राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं था। जमींदार वर्ग द्वारा किए गए खूंखार शोषण और उत्पीड़न के परिणामस्वरूप पैदा होने वाली किसानों की अत्यन्त दरिद्रता तथा उनका अत्यन्त पिछड़ापन ही इस बात का बुनियादी कारण था कि चीनी समाज का सामाजिक-आर्थिक विकास कई हजार साल तक एक ही स्तर पर टिका रहा।

सामन्ती समाज में मुख्य अन्तरविरोध किसान वर्ग और जमींदार वर्ग के दरमियान था।

उस समाज की सम्पत्ति और संस्कृति को पैदा करने वाले बुनियादी वर्ग केवल किसान और दस्तकार मजदूर ही थे।

जमींदार वर्ग द्वारा किसानों के निर्मम आर्थिक शोषण और राजनीतिक उत्पीड़न ने किसानों को अनेक बार जमींदार वर्ग के शासन के खिलाफ विद्रोह करने के लिए बाध्य किया। छिन वंश में छन शङ, ऊ क्वाङ, श्याङ य्वी और ल्यू पाङ,[६] हान वंश में शिनशि, फिङलिन, लाल भौंह, कांसे का घोड़ा[७] और पीली पगड़ी[८], स्वेइ वंश में ली म्यी और तओ च्येन-त,[९] थाङ वंश में वाङ श्येन-च और ह्वाङ छाओ,[१०] सुङ वंश में सुङ च्याङ और फ़ाङ ला,[११]

ख्वान वंश में चू ख्वान-चाङ[१२] और मिङ वंश में ली चि-छङ[१३] से लेकर छिङ वंश में थाइफिङ स्वर्गिक राज्य[१४] की क्रान्ति तक, छोटे-बड़े सैकड़ों विद्रोह हुए, जो सबके सब किसान विद्रोह अथवा किसानों के क्रान्तिकारी युद्ध ही थे। जिस पैमाने पर चीन के इतिहास में किसान विद्रोह और किसान युद्ध हुए हैं उसकी मिसाल और कहीं नहीं मिलती। चीन के सामन्ती समाज के ऐतिहासिक विकास की वास्तविक प्रेरक शक्ति किसानों द्वारा किए गए ये वर्ग-संघर्ष, किसान विद्रोह और किसान युद्ध ही थे। हर अपेक्षाकृत बड़े किसान विद्रोह और किसान युद्ध ने तत्कालीन सामन्ती शासन को एक आघात पहुंचाया और इस प्रकार समाज की उत्पादक शक्तियों को कमोबेश आगे बढ़ाया। मगर उस समय नई उत्पादक शक्तियों और नए उत्पादन-सम्बन्धों तथा नई वर्ग-शक्तियों और किसी प्रगतिशील राजनीतिक पार्टी का अस्तित्व न था, इसलिए किसान विद्रोहों और किसान युद्धों को ऐसा सही नेतृत्व नहीं मिल सका जैसा कि आज सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रदान किया जाता है; परिणामस्वरूप हर किसान क्रान्ति असफल रही और जमींदारों व रईसजादों ने क्रान्ति के दौरान या क्रान्ति के बाद किसान क्रान्ति को हमेशा ही राजवंशों को बदलने के लिए लीवर के तौर पर इस्तेमाल किया। इस प्रकार किसानों के हर बड़े क्रान्तिकारी संघर्ष के बाद हालांकि समाज की कमोबेश प्रगति हुई, मगर सामन्ती आर्थिक सम्बन्ध और सामन्ती राजनीतिक व्यवस्था बुनियादी तौर पर ज्यों की त्यों बनी रही।

सिर्फ पिछले सौ वर्षों में ही उपरोक्त स्थिति में एक नए प्रकार का परिवर्तन हुआ है।

३. आज का औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, चीनी समाज पिछले तीन हजार साल तक एक सामन्ती समाज रहा। लेकिन क्या वह आज भी पूरे तौर पर सामन्ती समाज है? नहीं, चीन बदल चुका है। १८४० के अफीम-युद्ध[१५] के बाद चीन कदम-ब-कदम एक अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज में बदलता गया। जब जापानी साम्राज्यवादियों ने १८ सितम्बर १९३१ की घटना में चीन के खिलाफ अपना सशस्त्र आक्रमण शुरू किया, उसी समय से चीन एक कदम और आगे बढ़कर औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज में बदल गया। अब हम इस परिवर्तन की प्रक्रिया की चर्चा करेंगे।

जैसा कि दूसरे परिच्छेद में बताया जा चुका है, चीन का सामन्ती समाज लगभग तीन हजार साल तक रहा। विदेशी पूंजीवाद की घुसपैठ के कारण ही उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में चीनी समाज में बड़े-बड़े परिवर्तन हुए।

चूंकि चीन के सामन्ती समाज में तिजारती माल वाली अर्थ-व्यवस्था का विकास हो चुका था, इसलिए उसमें पूंजीवाद के बीज निहित थे। अगर विदेशी पूंजीवाद का असर न भी पड़ता, तो भी चीन अपने आप धीरे-धीरे पूंजीवादी समाज में विकसित हो जाता। विदेशी पूंजीवाद की घुसपैठ ने इस प्रक्रिया को तेज कर दिया। विदेशी पूंजीवाद ने चीन की सामाजिक अर्थव्यवस्था को छिन्न-भिन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। उसने एक तरफ तो चीन

की आत्मनिर्भरता वाली प्राकृतिक अर्थव्यवस्था की बुनियादें खोखली कर दीं और शहरों की दस्तकारियों व किसानों की घरेलू दस्तकारियों को तबाह कर डाला, तथा दूसरी तरफ शहरों और देहातों में तिजारती माल वाली अर्थव्यवस्था के विकास की रफ्तार को बढ़ा दिया।

इन हालात ने न सिर्फ चीन की सामन्ती अर्थव्यवस्था की बुनियादों को छिन्न-भिन्न करने की भूमिका अदा की, बल्कि चीन में पूंजीवादी उत्पादन के विकास के लिए कुछ वस्तुगत परिस्थितियों और सम्भावनाओं को भी जन्म दिया। प्राकृतिक अर्थव्यवस्था की तबाही ने पूंजीवाद के लिए तिजारती माल की मण्डी पैदा कर दी तथा भारी संख्या में किसानों व दस्तकारों के दिवालियेपन ने पूंजीवाद के लिए श्रम-शक्ति का बाजार तैयार कर दिया।

दरअसल कुछ व्यापारियों, जमींदारों और नौकरशाहों ने विदेशी पूंजीवाद से प्रभावित होकर और सामन्ती आर्थिक ढांचे में कुछ दरारें पड़ जाने के कारण, उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, आज से साठ साल पहले, आधुनिक उद्योग में पूंजी लगाना शुरू कर दिया था। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में और बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में, यानी लगभग चालीस साल पहले, चीन के राष्ट्रीय पूंजीवाद ने आगे की ओर अपना पहला कदम रखा। फिर तकरीबन बीस साल पहले, यानी प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध के दौरान चूंकि योरप व अमरीका के साम्राज्यवादी देश युद्ध में उलझे हुए थे और उन्होंने चीन पर अपना उत्पीड़नकारी शिकंजा अस्थाई रूप से ढीला कर दिया था, चीन के राष्ट्रीय उद्योग ने, मुख्य रूप से कपड़ा उद्योग और आटा-पिसाई उद्योग ने और अधिक तरक्की की।

चीन के राष्ट्रीय पूंजीवाद के उद्भव और विकास का इतिहास चीनी पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के उद्भव और विकास का इतिहास भी है। जिस प्रकार व्यापारियों, जमींदारों और नौकरशाहों का एक भाग चीनी पूंजीपति वर्ग का पूर्वरूप था, उसी प्रकार किसानों और दस्तकार मजदूरों का एक भाग चीनी सर्वहारा वर्ग का पूर्वरूप था। विशेष सामाजिक वर्गों के रूप में चीनी पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग बिलकुल नवजात वर्ग हैं तथा उनका अस्तित्व चीन के इतिहास में पहले कभी नहीं था। सामन्ती समाज के गर्भ से ये दोनों ही नए सामाजिक वर्गों के रूप में प्रकट हुए हैं। ये चीन के पुराने (सामन्ती) समाज के गर्भ से पैदा होने वाले जुड़वां बच्चे हैं, जिनका एक दूसरे से सम्बन्ध भी है और शत्रुता भी। लेकिन चीनी सर्वहारा वर्ग का उद्भव और विकास न सिर्फ चीनी राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के उद्भव और विकास के साथ-साथ हुआ बल्कि उन कारोबारों के साथ-साथ भी हुआ जो चीन में साम्राज्यवादियों ने प्रत्यक्ष रूप से चलाए थे। अतएव चीनी सर्वहारा वर्ग की एक बहुत बड़ी संख्या चीनी पूंजीपति वर्ग से ज्यादा पुरानी और ज्यादा अनुभवी है तथा इसीलिए उसकी सामाजिक शक्ति और सामाजिक बुनियाद ज्यादा बड़ी और ज्यादा व्यापक है।

मगर पूंजीवाद का उपरोक्त उद्भव और विकास चीन में साम्राज्यवाद की घुसपैठ के बाद होने वाले परिवर्तन का महज एक पहलू है। इसका एक अन्य सहगामी और अवरोधकारी पहलू भी है, अर्थात चीनी पूंजीवाद के विकास को रोकने के लिए साम्राज्यवादियों और चीन की सामन्ती शक्तियों की आपसी सांठगांठ।

चीन में अतिक्रमण करने वाली साम्राज्यवादी ताकतों का उद्देश्य

यह कदापि नहीं है कि सामन्ती चीन को पूंजीवादी चीन में बदल दिया जाए। इसके विपरीत उनका उद्देश्य चीन को अपना अर्ध-उपनिवेश अथवा उपनिवेश बनाना है।

अपने इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए साम्राज्यवादी ताकतों ने उत्पीड़न के फौजी, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक उपायों का इस्तेमाल किया है और कर रही हैं, जिसके परिणामस्वरूप चीन कदम-ब-कदम अर्ध-उपनिवेश और उपनिवेश बनता जा रहा है। वे उपाय निम्नलिखित हैं :

(१) साम्राज्यवादी ताकतों ने चीन के खिलाफ बहुत से आक्रमणकारी युद्ध छेड़े हैं, जैसे १८४० में ब्रिटेन द्वारा छेड़ा गया अफीम-युद्ध, १८५७ में अंग्रेजों और फ्रांसीसियों की संयुक्त सेनाओं द्वारा छेड़ा गया युद्ध,[१६] १८८४ का चीन-फ्रांस युद्ध,[१७] १८९४ का चीन-जापान युद्ध और १९०० में आठ ताकतों की संयुक्त सेनाओं द्वारा छेड़ा गया युद्ध[१८]। चीन को युद्ध में हराने के बाद साम्राज्यवादी ताकतों ने न सिर्फ चीन द्वारा रक्षित बहुत से पड़ोसी देशों पर कब्जा कर लिया, बल्कि चीन के भी कुछ इलाकों पर या तो जबरदस्ती कब्जा कर लिया या उन्हें "पट्टे" पर ले लिया। मिसाल के तौर पर जापान ने थाइवान और फङहू द्वीपसमूह पर कब्जा कर लिया और ल्युइशुन बन्दरगाह को "पट्टे" पर ले लिया ; बरतानिया ने हाङकाङ को हथिया लिया और फ्रांस ने क्वाङचओवान को "पट्टे" पर ले लिया। इलाका हड़पने के अतिरिक्त उन्होंने भारी हरजाना भी वसूल किया। इस प्रकार चीन के इस विशाल सामन्ती साम्राज्य पर भीषण प्रहार किए गए।

(२) साम्राज्यवादी ताकतों ने चीन को बहुत सी असमान

सन्धियां करने पर मजबूर किया, जिनके जरिए उन्होंने चीन में अपनी नौसेना और थलसेना रखने का अधिकार और कानसुलर न्यायाधिकार[१९] हथिया लिया और समूचे चीन को कई साम्राज्यवादी ताकतों के प्रभाव-क्षेत्रों में बांट लिया[२०]।

(३) साम्राज्यवादी ताकतों ने इन असमान सन्धियों के जरिए चीन के तमाम महत्वपूर्ण व्यापारिक बन्दरगाहों को अपने नियंत्रण में कर लिया और बहुत से बन्दरगाहों के कुछ क्षेत्रों को पट्टे पर लेकर सीधे अपने प्रशासन में रख लिया[२१]। उन्होंने चीन की चुंगी, वैदेशिक व्यापार और संचार (समुद्र, थल, नदी और वायु) की व्यवस्था को भी अपने नियंत्रण में कर लिया। इस प्रकार वे चीन के बाजारों को अपने माल से पाटने लगे और चीन को अपने औद्योगिक माल की मण्डी बनाने में सफल हो गए तथा साथ ही उन्होंने चीन के कृषि-उत्पादन को भी अपनी साम्राज्यवादी जरूरतों के अनुरूप ढाल लिया।

(४) साम्राज्यवादी ताकतों ने चीन में हल्के और भारी उद्योग के बहुत से कारोबार भी चलाए ताकि वे उसके कच्चे माल और सस्ती मजदूरी को यहीं इस्तेमाल कर सकें। इस प्रकार उन्होंने सीधे चीन के राष्ट्रीय उद्योग पर आर्थिक दबाव डाला तथा उसकी उत्पादक शक्तियों के विकास को अवरुद्ध किया।

(५) साम्राज्यवादी ताकतों ने चीन सरकार को कर्जा देकर और चीन में अपने बैंक स्थापित करके चीन की बैंक-व्यवस्था और वित्त-व्यवस्था पर अपनी इजारेदारी कायम कर ली। इस प्रकार उन्होंने न सिर्फ तिजारती माल की होड़ में चीन के राष्ट्रीय पूंजीवाद को पछाड़ दिया बल्कि चीन की बैंक-व्यवस्था और वित्त-व्यवस्था

पर भी अपना शिकंजा कस लिया।

(६) साम्राज्यवादी ताकतों ने चीन में व्यापारिक शहरों से लेकर दूरस्थ दरिद्रताग्रस्त भीतरी इलाकों तक दलाल-पूंजीपतियों और सूदखोर-व्यापारियों द्वारा किए जाने वाले शोषण का जाल सा बिछा दिया तथा अपनी सेवा में दलाल-पूंजीपति वर्ग और सूदखोर-व्यापारी वर्ग पैदा कर लिए, ताकि व्यापक चीनी किसानों तथा जन-समुदाय के दूसरे तबकों का आसानी से शोषण किया जा सके।

(७) साम्राज्यवादी ताकतों ने दलाल-पूंजीपति वर्ग के अलावा सामन्ती जमींदार वर्ग को भी चीन में अपने शासन का मुख्य सम्बल बनाया। साम्राज्यवाद "सबसे पहले बहुसंख्यक जनता के खिलाफ पुरानी समाज-व्यवस्था के शासक वर्गों – सामन्ती जमींदारों और व्यापारी व सूदखोर पूंजीपतियों – के साथ गठजोड़ कायम कर लेता है। साम्राज्यवाद हर जगह (विशेषकर देहातों में) पूंजीवाद से पहले के शोषण के उन तमाम रूपों को सुरक्षित रखने और स्थाई बनाए रखने का प्रयत्न करता है जो उसके प्रतिक्रियावादी संश्रयकारियों के अस्तित्व के लिए आधार का काम देते हैं।" २१ "साम्राज्यवादी ताकतें और चीन में उनकी तमाम वित्तीय व सैनिक शक्ति एक ऐसी ताकत बन गई है जो सामन्ती अवशेषों को उनके समूचे नौकरशाही-युद्धपतिवादी ऊपरी ढांचे समेत सहारा देती है, उन्हें प्रोत्साहित करती है, पोषित करती है और सुरक्षित रखती है।" २१

(८) साम्राज्यवादी ताकतें प्रतिक्रियावादी चीन सरकार को बड़ी मात्रा में गोला-बारूद और हथियार सप्लाई करती हैं तथा बड़ी तादाद में सैनिक सलाहकार मुहय्या करती हैं, ताकि युद्ध-

सरदारों की आपस की लड़ाई जारी रहे और चीनी जनता को दबाया जा सके।

(९) उपरोक्त उपायों के अलावा साम्राज्यवादी ताकतों ने चीनी जनता के दिमाग में विष घोलने के प्रयत्न कभी शिथिल नहीं किए। यह उनकी सांस्कृतिक आक्रमण की नीति ही है। और यह आक्रामक नीति मिशनरियों के कार्य के जरिए, अस्पताल और स्कूल खोलने के जरिए, तथा अखबार प्रकाशित करके और चीनी विद्यार्थियों को विदेश जाकर पढ़ने का लालच देकर अमल में लाई जाती है। इसका मकसद है उनके हितों की सेवा करने वाले बुद्धिजीवी-कार्यकर्ताओं को तैयार करना और व्यापक चीनी जनता की आंखों में धूल झोंकना।

(१०) १८ सितम्बर १९३१ की घटना से जापानी साम्राज्यवाद के बड़े पैमाने के हमले ने अर्ध-औपनिवेशिक चीन के एक बड़े भाग को जापान के उपनिवेश में बदल डाला है।

उपरोक्त हालात चीन में साम्राज्यवाद की घुसपैठ के बाद हुए नए परिवर्तन का दूसरा पहलू हैं – यह सामन्ती चीन के अर्ध-सामन्ती, अर्ध-औपनिवेशिक और औपनिवेशिक चीन में बदले जाने की खून से लथपथ तस्वीर है।

इससे जाहिर होता है कि साम्राज्यवादी ताकतों ने चीन पर अपने हमले से एक तरफ तो चीन के सामन्ती समाज के विघटन और पूंजीवाद के तत्वों के उद्भव को तेज कर दिया है, जिससे कि एक सामन्ती समाज को अर्ध-सामन्ती समाज में बदल दिया गया है, और दूसरी तरफ उन्होंने अपना बर्बर शासन चीन पर लाद दिया है, जिससे कि एक स्वाधीन चीन को अर्ध-औपनिवेशिक व

औपनिवेशिक चीन में बदल दिया गया है।

इन दोनों पहलुओं को एक साथ रखकर हम देख सकते हैं कि चीन के औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज की निम्नलिखित विशेषताएं हैं :

(१) सामन्ती काल की आत्मनिर्भरता वाली प्राकृतिक अर्थ-व्यवस्था की बुनियादें नष्ट हो चुकी हैं, लेकिन जमींदार वर्ग द्वारा किसानों का शोषण, जो सामन्ती शोषण-व्यवस्था का आधार था, न सिर्फ ज्यों का त्यों बना हुआ है बल्कि उसने दलाल-पूंजी व सूदखोर-पूंजी के शोषण के साथ जुड़कर स्पष्ट रूप से चीन के सामाजिक-आर्थिक जीवन में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया है।

(२) राष्ट्रीय पूंजीवाद का कुछ हद तक विकास हो चुका है और चीन के राजनीतिक व सांस्कृतिक जीवन में उसने काफी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, लेकिन वह चीन की सामाजिक अर्थव्यवस्था का मुख्य रूप नहीं बन पाया ; वह बहुत कमजोर है और उसने अधिकांश रूप से, अलग-अलग मात्रा में, विदेशी साम्राज्य-वाद और घरेलू सामन्तवाद से नाता जोड़ा हुआ है।

(३) सम्राटों और रईसजादों के एकतंत्रीय शासन का तख्ता उलट दिया गया है और उसके स्थान पर पहले जमींदार वर्ग का युद्धपति-नौकरशाही शासन कायम हुआ है और फिर जमींदार वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग का संयुक्त अधिनायकत्व। जापान-अधिकृत इलाकों में जापानी साम्राज्यवाद और उसकी कठपुतलियों की हुकूमत है।

(४) साम्राज्यवाद ने सिर्फ चीन की मुख्य वित्तीय और आर्थिक धमनियों को ही नहीं, बल्कि राजनीतिक और सैनिक

शक्ति को भी अपने नियंत्रण में कर लिया है। जापान-अधिकृत इलाकों में हर चीज जापानी साम्राज्यवाद के हाथ में है।

(५) चूंकि चीन पर अनेक साम्राज्यवादी देशों का पूरा अथवा आंशिक आधिपत्य कायम हो चुका है, चूंकि चीन दरअसल एक लम्बे अरसे से भीतरी फूट का शिकार बना हुआ है और चूंकि चीन का क्षेत्रफल बहुत विशाल है, इसलिए उसका आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक विकास बड़े ही असन्तुलित रूप से हुआ है।

(६) साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के दोहरे उत्पीड़न के कारण और विशेषकर जापानी साम्राज्यवाद के बड़े पैमाने के आक्रमण के परिणामस्वरूप, चीन की व्यापक जनता और विशेषकर किसान लोग अधिकाधिक गरीब होते जा रहे हैं, यहां तक कि वे भारी संख्या में दिवालिया हो गए हैं। वे भूख और सर्दी में जीवन बिता रहे हैं और उन्हें कोई राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं है। चीनी जनता जिस कदर गरीब है और वह आजादी से जिस कदर महरूम है उसकी मिसाल कहीं मुश्किल से मिलेगी।

ये हैं चीन के औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज की विशेषताएं।

यह स्थिति मुख्यतया जापानी व दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियों के द्वारा निर्धारित की गई है ; यह विदेशी साम्राज्यवाद और घरेलू सामन्तवाद के दरमियान सांठगांठ का नतीजा है।

साम्राज्यवाद और चीनी राष्ट्र के बीच का अन्तरविरोध तथा सामन्तवाद और व्यापक जन-समुदाय के बीच का अन्तरविरोध, ये दोनों आधुनिक चीनी समाज के मुख्य अन्तरविरोध हैं। निस्सन्देह अन्तरविरोध और भी हैं, जैसे पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के

बीच का अन्तरविरोध और प्रतिक्रियावादी शासक वर्गों के भीतर के अन्तरविरोध। लेकिन साम्राज्यवाद और चीनी राष्ट्र के बीच का अन्तरविरोध प्रधान अन्तरविरोध है। इन अन्तरविरोधों के बीच संघर्ष होने और इनके तीव्र होने के परिणामस्वरूप क्रान्तिकारी आन्दोलनों का सतत विकास अनिवार्य है। आधुनिक चीन और समकालीन चीन की महान क्रान्तियों का उद्भव और विकास इन्हीं बुनियादी अन्तरविरोधों के आधार पर हुआ है।

अध्याय २

चीनी क्रान्ति

१. पिछले सौ साल के क्रान्तिकारी आन्दोलन

साम्राज्यवाद द्वारा चीनी सामन्तवाद के साथ सांटगांठ करके चीन को अर्ध-उपनिवेश और उपनिवेश बनाने का इतिहास चीनी जनता द्वारा साम्राज्यवाद और उसके गुर्गों के खिलाफ किए गए संघर्ष का इतिहास भी है। अफीम-युद्ध, थाइफिङ स्वर्गिक-राज्य आन्दोलन, चीन-फ्रांस युद्ध, चीन-जापान युद्ध, १८९८ का सुधारवादी आन्दोलन, ई हो थ्वान आन्दोलन, १९११ की क्रान्ति, ४ मई आन्दोलन, ३० मई आन्दोलन, उत्तरी अभियान, भूमि-क्रान्ति युद्ध और वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध – ये तमाम इस बात का सबूत हैं कि साम्राज्यवाद और उसके गुर्गों के खिलाफ लड़ने में चीनी जनता ने अदम्य साहस का परिचय दिया है।

पिछले सौ साल के दौरान चीनी जनता ने जो अदम्य, सतत

और वीरतापूर्ण संघर्ष चलाए हैं, उनके परिणामस्वरूप साम्राज्यवाद चीन को न तो आज तक गुलाम बना पाया है और न कभी गुलाम बना पाएगा।

हालांकि जापानी साम्राज्यवाद अब अपनी पूरी ताकत से चीन पर बड़े पैमाने का हमला कर रहा है और चीन के बहुत से जमींदारों और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के तत्वों ने, अप्रच्छन्न और प्रच्छन्न वाङ चिङ-वेइ जैसे लोगों ने, शत्रु के आगे पहले ही आत्मसमर्पण कर दिया है अथवा आत्मसमर्पण करने की तैयारी कर रहे हैं, फिर भी बहादुर चीनी जनता निश्चित रूप से लड़ाई जारी रखेगी। यह वीरतापूर्ण संघर्ष तब तक बन्द नहीं होगा जब तक कि चीनी जनता जापानी साम्राज्यवाद को चीन से नहीं मार भगाएगी और अपने देश को मुकम्मिल तौर पर मुक्त नहीं करा लेगी।

अगर १८४० के अफीम-युद्ध से गिना जाए तो चीनी जनता के राष्ट्रीय क्रान्तिकारी संघर्ष का इतिहास पूरे सौ साल का है, अथवा १९११ की क्रान्ति से गिना जाए तो भी यह तीस साल का हो चुका है। क्रान्ति की यह प्रक्रिया अभी पूरी नहीं हुई और क्रान्ति का कार्य किसी महत्वपूर्ण सफलता के साथ पूरा नहीं हो पाया, इसलिए चीनी जनता को, खास तौर से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को चाहिए कि वह दृढ़ता से लड़ते रहने की जिम्मेदारी अपने कन्धों पर उठा ले।

आखिर क्रान्ति के प्रहार के लक्ष्य क्या हैं? उसके कार्य क्या हैं? उसकी प्रेरक शक्तियां क्या हैं? उसका स्वरूप क्या है? और उसका भविष्य क्या है? अब हम इन्हीं सवालों पर विचार करेंगे।

२. चीनी क्रान्ति के प्रहार के लक्ष्य

पहले अध्याय के तीसरे परिच्छेद में किए गए विश्लेषण से हम यह जान गए हैं कि वर्तमान चीनी समाज एक औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज है। जब हम चीनी समाज के स्वरूप को स्पष्ट रूप से समझ लेंगे, सिर्फ तभी हम चीनी क्रान्ति के प्रहार के लक्ष्यों, उसके कार्यों, उसकी प्रेरक शक्तियों और उसके स्वरूप को तथा उसके भविष्य और उसके भावी संक्रमण को स्पष्ट रूप से समझ पाएंगे। इसलिए चीनी समाज के स्वरूप को यानी चीन की परिस्थितियों को स्पष्ट रूप से समझना ही क्रान्ति की तमाम समस्याओं को स्पष्ट रूप से समझने की कुंजी है।

जब वर्तमान चीनी समाज का स्वरूप औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती है, तो चीनी क्रान्ति की वर्तमान मंजिल में उसके प्रहार के मुख्य लक्ष्य अर्थात उसके मुख्य दुश्मन आखिर कौन हैं?

कोई और न होकर, वे हैं साम्राज्यवाद और सामन्तवाद, साम्राज्यवादी देशों का पूंजीपति वर्ग और हमारे अपने देश का जमींदार वर्ग। कारण यह कि वर्तमान मंजिल में चीनी समाज के मुख्य उत्पीड़क और उसकी तरक्की की राह के मुख्य रोड़े कोई और न होकर, ये दोनों ही हैं। चीनी जनता का उत्पीड़न करने में ये दोनों ही एक दूसरे से सांठगांठ करते हैं, तथा साम्राज्यवाद चीनी जनता का अव्वल दर्जे का और बेहद खूंखार दुश्मन है क्योंकि साम्राज्यवाद द्वारा किया जाने वाला राष्ट्रीय उत्पीड़न अत्यन्त कष्टदायी होता है।

चीन में जापान के सशस्त्र अतिक्रमण के बाद से जापानी साम्राज्यवाद और उसके साथ सांठगांठ करने वाले तमाम चीनी गद्दार व प्रतिक्रियावादी चीनी क्रान्ति के मुख्य दुश्मन बन गए हैं, चाहे वे खुल्लमखुल्ला आत्मसमर्पण कर चुके हों अथवा आत्मसमर्पण करने की तैयारी कर रहे हों।

चीनी पूंजीपति वर्ग ने, जो साम्राज्यवादी उत्पीड़न का शिकार भी है, १९११ की क्रान्ति जैसे क्रान्तिकारी संघर्षों का नेतृत्व किया था और उनमें मुख्य नेतृत्वकारी भूमिका अदा की थी, तथा उसने उत्तरी अभियान और वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध जैसे क्रान्तिकारी संघर्षों में हिस्सा लिया है। लेकिन १९२७ से १९३७ तक के लम्बे अरसे में, इस वर्ग के उच्च तबके ने, यानी उस हिस्से ने जिसका प्रतिनिधित्व क्वोमिन्ताङ का प्रतिक्रियावादी गुट करता है, साम्राज्यवाद से सांठगांठ की, जमींदार वर्ग के साथ प्रतिक्रियावादी गठजोड़ कायम किया, अपने उन मित्रों – कम्युनिस्ट पार्टी, सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग के दूसरे हिस्सों – के साथ जिन्होंने उसकी सहायता की थी, गद्दारी की, चीनी क्रान्ति के साथ गद्दारी की और उसे असफल बनाया। इसलिए उस समय क्रान्तिकारी जनता और क्रान्तिकारी राजनीतिक पार्टी (कम्युनिस्ट पार्टी) को पूंजीपति वर्ग के इन तत्वों को क्रान्ति के प्रहार का एक लक्ष्य बनाना पड़ा। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के एक हिस्से ने, जिसका प्रतिनिधि वाङ चिङ-वेइ है, गद्दारी कर दी है और वे लोग दुश्मन से जा मिले हैं। इसलिए, जापान-विरोधी जनता को बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के इन तत्वों को, जिन्होंने हमारे राष्ट्रीय हितों के

साथ गद्दारी की है, क्रान्ति के प्रहार का एक लक्ष्य बनाना पड़ता है।

तब यह बात साफ है कि चीनी क्रान्ति के दुश्मन बहुत ताकतवर हैं। उनमें न सिर्फ शक्तिशाली साम्राज्यवादी शामिल हैं बल्कि शक्तिशाली सामन्ती शक्तियां भी शामिल हैं, और किसी निश्चित समय में पूंजीपति वर्ग के प्रतिक्रियावादी, जो जनता का विरोध करने के लिए साम्राज्यवादियों और सामन्ती शक्तियों के साथ सांठगांठ करते हैं, भी शामिल हो जाते हैं। अतएव क्रान्तिकारी चीनी जनता के दुश्मनों की शक्ति को कम करके आंकने का विचार गलत है।

ऐसे दुश्मनों के रहते, चीनी क्रान्ति केवल एक दीर्घकालीन और निर्मम क्रान्ति ही हो सकती है। ऐसे शक्तिशाली दुश्मनों के रहते, लम्बे समय तक काम किए बिना क्रान्तिकारी शक्तियों का संचय नहीं किया जा सकता और उन्हें एक ऐसी फौलादी ताकत में नहीं बदला जा सकता जो दुश्मन को अन्तिम रूप से शिकस्त देने की सामर्थ्य रखती हो। ऐसे दुश्मनों के रहते, जो चीनी क्रान्ति को इतनी निर्दयता से कुचल डालते हैं, क्रान्तिकारी शक्तियों के लिए, जब तक वे भली-भांति मजबूत न हो जाएं और अपनी अडिगता प्रदर्शित न कर दें, दुश्मन के मोर्चों पर कब्जा करना तो दरकिनार, अपने ही मोर्चों को कायम रखना भी असम्भव है। अतएव यह विचार गलत है कि चीन की क्रान्तिकारी शक्तियों का निर्माण पलभर में हो सकता है अथवा चीन का क्रान्तिकारी संघर्ष महज एक रात में सफल हो सकता है।

ऐसे दुश्मनों के रहते, चीनी क्रान्ति का मुख्य तरीका अथवा मुख्य रूप सशस्त्र संघर्ष ही होना चाहिए, शान्तिपूर्ण संघर्ष नहीं। कारण

यह कि हमारे दुश्मनों ने चीनी जनता की शान्तिपूर्ण गतिविधियों को असम्भव बना दिया है और चीनी जनता को तमाम राजनीतिक आजादी से वंचित कर दिया है। स्तालिन ने कहा है: "चीन में सशस्त्र क्रान्ति सशस्त्र प्रतिक्रान्ति से लोहा ले रही है। यह चीनी क्रान्ति की विशेषताओं और श्रेष्ठताओं में से एक है।"[१४] यह निरूपण बिलकुल सही है। इसलिए सशस्त्र संघर्ष, क्रान्तिकारी युद्ध, छापामार युद्ध और फौजी काम की उपेक्षा करने का विचार गलत है।

ऐसे दुश्मनों के रहते, क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों का सवाल पैदा हो जाता है। चूंकि चीन के महत्वपूर्ण शहरों पर शक्तिशाली साम्राज्यवादियों और उनके प्रतिक्रियावादी चीनी संश्रयकारियों का लम्बे समय से कब्जा रहा है, इसलिए क्रान्तिकारी पांतों के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे पिछड़े हुए गांवों को अपने उन्नत और मजबूत आधार-क्षेत्रों में बदल दें तथा उन्हें क्रान्ति के विशाल सैनिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गढ़ बना दें, जिससे वे अपने खूंखार दुश्मनों के खिलाफ, जो शहरों को देहाती इलाकों पर हमला करने के लिए इस्तेमाल करते हैं, लड़ सकें, तथा इस प्रकार वे दीर्घकालीन लड़ाई के जरिए अपनी क्रान्ति में कदम-ब-कदम पूर्ण विजय प्राप्त कर सकें; ऐसा करना उनके लिए आवश्यक है, यदि वे साम्राज्यवाद और उसके गुर्गों के साथ समझौता न करना चाहती हों और लड़ाई जारी रखने का संकल्प रखती हों, तथा यदि वे अपनी शक्तियों का संचय करना चाहती हों और उन्हें फौलादी रूप देना चाहती हों तथा अपने शक्तिशाली दुश्मन के साथ निर्णयात्मक लड़ाई तब तक न होने देना चाहती हों जब तक उनकी अपनी शक्ति काफी नहीं हो जाती। ऐसी स्थिति में चीनी क्रान्ति के लिए पहले देहाती

क्षेत्रों में विजय प्राप्त करना सम्भव है क्योंकि चीन का आर्थिक विकास असन्तुलित ढंग से हुआ है (उसकी अर्थव्यवस्था एकीकृत पूंजीवादी अर्थव्यवस्था नहीं है), क्योंकि उसकी भूमि विशाल है (जिससे क्रान्तिकारी शक्तियों के लिए स्थान बदलने की गुंजाइश बनी रहती है), क्योंकि प्रतिक्रान्तिकारी खेमे में फूट और अन्तर-विरोधों का बोलबाला है और क्योंकि किसानों के, जो क्रान्ति की मुख्य शक्ति हैं, संघर्ष का नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी – सर्वहारा वर्ग की पार्टी – कर रही है ; लेकिन दूसरी तरफ ठीक ये ही परिस्थितियां क्रान्ति को असन्तुलित और उसकी पूर्ण विजय प्राप्त करने के कार्य को लम्बा व कठिन बना देती हैं। इस प्रकार यह बात साफ हो जाती है कि ऐसे क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों में दीर्घकालीन क्रान्तिकारी संघर्ष का रूप मुख्यतया किसान छापामार युद्ध है, जिसे चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलाया जाता है। इसलिए देहाती इलाकों को क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों के रूप में इस्तेमाल करने की जरूरत को नजरअन्दाज करना, किसानों के बीच परिश्रमपूर्वक कार्य करने की उपेक्षा करना और छापामार युद्ध की उपेक्षा करना गलत है।

लेकिन सशस्त्र संघर्ष पर जोर देने का मतलब यह नहीं होता कि संघर्ष के दूसरे रूपों को त्याग दिया जाए ; इसके विपरीत, सशस्त्र संघर्ष तब तक कामयाब नहीं हो सकता जब तक संघर्ष के दूसरे रूपों के साथ उसका तालमेल कायम न किया जाए। और देहाती आधार-क्षेत्रों में काम करने पर जोर देने का मतलब यह नहीं होता कि शहरों में और उन अन्य विशाल देहाती क्षेत्रों में, जो अभी तक दुश्मन के शासन में हैं, काम करना छोड़ दिया जाए ; इसके विपरीत, शहरों में और इन अन्य विशाल देहाती क्षेत्रों में

काम किए बगैर हमारे देहाती आधार-क्षेत्र अलगाव की स्थिति में पड़ जाएंगे और क्रान्ति पराजित हो जाएगी। यही नहीं, क्रान्ति का अन्तिम उद्देश्य है शहरों पर, यानी दुश्मन के मुख्य अड्डों पर कब्जा कर लेना, और जब तक शहरों में काफी काम नहीं किया जाएगा तब तक यह उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता।

इस प्रकार यह बात भी साफ हो जाती है कि देहाती क्षेत्रों और शहरों में क्रान्ति तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक दुश्मन की फौज को, जो जनता के खिलाफ उसका एक मुख्य हथियार है, नष्ट नहीं कर दिया जाता। इसलिए दुश्मन की फौज को लड़ाई में नेस्त-नाबूद करने के अलावा, एक महत्वपूर्ण काम यह भी है कि उसे छिन्न-भिन्न कर दिया जाए।

यह भी स्पष्ट हो जाता है कि कम्युनिस्ट पार्टी को उन शहरों और देहाती इलाकों में, जिन पर शत्रु ने एक लम्बे अरसे से कब्जा जमा रखा है और प्रतिक्रियावादी व अन्धकारपूर्ण शासन कायम किया हुआ है, अपने प्रचार-कार्य और संगठनात्मक कार्य में जल्दबाजी और दुस्साहसवादी नीति नहीं अपनानी चाहिए बल्कि उसे चुनिंदा कार्यकर्ताओं व संगठनों को लम्बे समय के लिए भूमिगत कार्य में लगाने, शक्ति का संचय करने और अधिक अच्छे मौके की प्रतीक्षा करने की नीति अपनानी चाहिए। दुश्मन के खिलाफ किए जाने वाले संघर्षों में जनता का नेतृत्व करते समय पार्टी को एक ऐसी कार्यनीति अपनानी चाहिए जिसके अन्तर्गत वह उन तमाम कानूनों व फरमानों को, जिनका खुले रूप से और जायज तरीके से इस्तेमाल किया जा सकता है, और उन तमाम चीजों को, जिनकी इजाजत सामाजिक रीति-रिवाज देते हैं, इस्तेमाल करते हुए,

न्यायोचित आधार पर, अपना फायदा देखते हुए और संयत रूप से लड़ने के उसूल के अनुसार, संघर्ष को कदम-ब-कदम, आहिस्ता-आहिस्ता और स्थिरता से आगे बढ़ाती जाए; व्यर्थ के शोरगुल और अन्धाधुन्ध संघर्ष से कभी सफलता प्राप्त नहीं हो सकती।

३. चीनी क्रान्ति के कार्य

जब इस मंजिल में चीनी क्रान्ति के मुख्य दुश्मन साम्राज्यवाद और सामन्ती जमींदार वर्ग हैं, तो क्रान्ति के वर्तमान कार्य क्या हैं?

निस्सन्देह उसके मुख्य कार्य हैं इन दोनों दुश्मनों पर प्रहार करना, यानी साम्राज्यवादी उत्पीड़न को खत्म करने के लिए राष्ट्रीय क्रान्ति करना और सामन्ती जमींदारों के उत्पीड़न का तख्ता उलट देने के लिए जनवादी क्रान्ति करना; उसका सर्वप्रमुख कार्य है साम्राज्यवाद का तख्ता उलट देने के लिए राष्ट्रीय क्रान्ति करना।

चीनी क्रान्ति के ये दोनों बड़े कार्य एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। जब तक साम्राज्यवादी शासन का तख्ता नहीं उलट दिया जाता, तब तक सामन्ती जमींदार वर्ग का शासन भी खत्म नहीं किया जा सकता, क्योंकि साम्राज्यवाद सामन्ती जमींदार वर्ग का मुख्य समर्थक है। इसके विपरीत, जब तक सामन्ती जमींदार वर्ग का तख्ता उलटने के लिए किसानों को मदद नहीं दी जाती, तब तक साम्राज्यवादी शासन को उखाड़ फेंकने के लिए शक्तिशाली क्रान्तिकारी दस्तों का निर्माण सम्भव नहीं, क्योंकि चीन में साम्राज्यवादी शासन का मुख्य सामाजिक आधार सामन्ती जमींदार वर्ग है और चीनी क्रान्ति की मुख्य शक्ति किसान हैं। इसलिए राष्ट्रीय क्रान्ति

और जनवादी क्रान्ति ये दोनों बुनियादी कार्य अलग-अलग होते हुए भी आपस में जुड़े हुए हैं।

दरअसल ये दोनों ही क्रान्तिकारी कार्य एक दूसरे से सम्बद्ध हो चुके हैं, क्योंकि आज चीन की राष्ट्रीय क्रान्ति का मुख्य कार्य जापानी साम्राज्यवादी हमलावरों के खिलाफ लड़ना है, और इस युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए जनवादी क्रान्ति के कार्य को सम्पन्न करना जरूरी है। राष्ट्रीय क्रान्ति और जनवादी क्रान्ति को क्रान्ति की दो बिलकुल अलग मंजिलें समझना गलत है।

४. चीनी क्रान्ति की प्रेरक शक्तियां

वर्तमान मंजिल में चीनी समाज के स्वरूप और चीनी क्रान्ति के प्रहार के लक्ष्यों और उसके कार्यों, जिनका विश्लेषण व निर्धारण ऊपर किया गया है, के अनुसार देखा जाए तो चीनी क्रान्ति की प्रेरक शक्तियां क्या हैं?

जब चीनी समाज एक औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज है, जब चीनी क्रान्ति के प्रहार के लक्ष्य मुख्यतया चीन पर विदेशी साम्राज्यवादी शासन और घरेलू सामन्तवाद हैं और जब चीनी क्रान्ति का कार्य इन दोनों उत्पीड़कों का तख्ता उलट देना है, तो चीनी समाज के विभिन्न वर्गों और तबकों में से कौन से वर्ग और तबके ऐसे हैं जो उनसे लड़ने की सामर्थ्य रखने वाली शक्तियां बन सकते हैं? यह वर्तमान मंजिल में चीनी क्रान्ति की प्रेरक शक्तियों का सवाल है। चीनी क्रान्ति की बुनियादी कार्य-नीति की समस्या को सही ढंग से हल करने के लिए इस सवाल को

साफ-साफ समझ लेना निहायत जरूरी है।

चीन के मौजूदा समाज में कौन-कौन से वर्ग हैं? उसमें जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग हैं; जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग का उच्च तबका चीनी समाज में शासक वर्ग हैं। दूसरी तरफ सर्वहारा वर्ग है, किसान वर्ग है और किसानों को छोड़कर निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य विभिन्न हिस्से हैं; चीन के भारी अधिकांश क्षेत्रों में ये तीन वर्ग आज भी शासित वर्ग हैं।

चीनी क्रान्ति के प्रति इन वर्गों का रुख और दृष्टिविन्दु पूर्णतया उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति से ही निर्धारित होता है। इस प्रकार सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था का स्वरूप केवल क्रान्ति के प्रहार के लक्ष्यों और उसके कार्यों को ही नहीं बल्कि क्रान्ति की प्रेरक शक्तियों को भी निर्धारित करता है।

आइए, अब हम चीनी समाज के विभिन्न वर्गों का विश्लेषण करें।

१. जमींदार वर्ग

जमींदार वर्ग चीन में साम्राज्यवादी शासन का मुख्य सामाजिक आधार है; यह एक ऐसा वर्ग है जो सामन्ती व्यवस्था को इस्तेमाल करते हुए किसानों का शोषण और उत्पीड़न करता है, चीन के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में चीनी समाज की प्रगति को रोकता है तथा किसी भी प्रकार की प्रगतिशील भूमिका अदा नहीं करता।

इसलिए जमींदार वर्ग एक वर्ग के रूप में क्रान्ति के प्रहार का लक्ष्य है, उसकी प्रेरक शक्ति नहीं।

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में बड़े जमींदारों के एक हिस्से ने बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के एक हिस्से (आत्मसमर्पणवादियों) के साथ-साथ जापानी आक्रमणकारियों के सामने आत्मसमर्पण कर दिया है और वह देशद्रोही बन गया है, जबकि बड़े जमींदारों का एक अन्य हिस्सा बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के एक अन्य हिस्से (कट्टरतावादियों) के साथ-साथ अधिकाधिक ढुलमुल होता जा रहा है, हालांकि वह अभी तक जापान-विरोधी खेमे में ही मौजूद है। लेकिन बहुत से जागरूक शरीफजादे, जो मध्यम और छोटे जमींदार हैं और जिन पर कुछ पूंजीवादी रंग भी चढ़ चुका है, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के लिए कुछ उत्साह दिखाते हैं, और इसलिए मुश्तरका प्रतिरोध-युद्ध में हमें उनके साथ एकता स्थापित करनी चाहिए।

२. पूंजीपति वर्ग

पूंजीपति वर्ग में बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के बीच फर्क है।

बड़े दलाल-पूंजीपतियों का वर्ग एक ऐसा वर्ग है जो सीधा साम्राज्यवादी देशों के पूंजीपतियों की सेवा करता है और उन्हीं के टुकड़ों पर पलता है; देहातों में सामन्ती शक्तियों के साथ उसका अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इसलिए चीनी क्रान्ति के इतिहास में वह कभी भी क्रान्ति की प्रेरक शक्ति नहीं रहा, बल्कि क्रान्ति के प्रहार का लक्ष्य रहा है।

मगर बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग के विभिन्न हिस्से विभिन्न साम्राज्यवादी देशों के वफादार हैं, इसलिए जब साम्राज्यवादी देशों के आपसी अन्तरविरोध बहुत तेज हो जाते हैं और क्रान्ति के

प्रहार का लक्ष्य मुख्य रूप से कोई एक साम्राज्यवादी देश बन जाता है, तो दलाल-पूंजीपति वर्ग के उन हिस्सों के लिए, जो दूसरे साम्राज्य-वादी ग्रुपों की सेवा कर रहे हैं, किसी हद तक और कुछ समय के लिए तत्कालीन साम्राज्यवाद-विरोधी मोर्चे में शामिल हो जाना सम्भव हो जाता है। लेकिन ज्यों ही उनके आका चीनी क्रान्ति के खिलाफ हो जाते हैं, उसी क्षण वे भी क्रान्ति का विरोध करने लगते हैं।

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में बड़े पूंजीपतियों के वर्ग का जापान-परस्त हिस्सा (आत्मसमर्पणवादी) या तो आत्मसमर्पण कर चुका है या आत्मसमर्पण की तैयारी कर रहा है। बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के योरप-परस्त और अमरीका-परस्त हिस्से (कट्टरतावादी) अभी तक जापान-विरोधी खेमे में होते हुए भी अधिकाधिक ढुल-मुलपन दिखा रहे हैं तथा वे जापान का प्रतिरोध और कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध एक साथ करने की दुरंगी चाल चल रहे हैं। बड़े पूंजी-पतियों के वर्ग के आत्मसमर्पणवादियों के प्रति हम शत्रु जैसा व्यवहार करने और दृढ़ता से कुचलने की नीति अपनाते हैं। बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के कट्टरतावादियों के प्रति हम एक क्रान्तिकारी दोहरी नीति अपनाते हैं: एक तरफ तो हम उनके साथ संश्रय कायम करते हैं क्योंकि वे अभी तक जापान का प्रतिरोध करते हैं, और हमें उनके और जापानी साम्राज्यवाद के बीच के अन्तरविरोधों से फायदा उठाना चाहिए, लेकिन दूसरी तरफ हम उनके खिलाफ दृढ़ता से संघर्ष करते हैं क्योंकि वे एक ऐसी कम्युनिस्ट-विरोधी और जन-विरोधी दमनकारी नीति अपनाते हैं जो जापान-प्रतिरोध और एकता की जड़ काटती है, ऐसे संघर्ष चलाए बिना जापान-प्रतिरोध और एकता दोनों को नुकसान पहुंचेगा।

राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग एक दुरंगे चरित्र वाला वर्ग है।

वह एक ओर तो साम्राज्यवाद से उत्पीड़ित है और सामन्त-वाद की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है, इसलिए इन दोनों से उसका अन्तरविरोध है। इस मायने में वह क्रान्तिकारी शक्तियों का एक हिस्सा है। चीनी क्रान्ति के इतिहास में उसने साम्राज्यवाद और नौकरशाहों व युद्ध-सरदारों की सरकार के खिलाफ लड़ने में किसी हद तक उत्साह दिखाया है।

लेकिन दूसरी ओर उसमें साम्राज्यवाद व सामन्तवाद का मुकम्मिल विरोध करने के साहस का अभाव है, क्योंकि वह आर्थिक व राजनीतिक दृष्टि से कमजोर है और साम्राज्यवाद व सामन्त-वाद के साथ अपने आर्थिक सम्बन्धों को उसने अब भी पूरी तरह नहीं तोड़ा है। जब जनता की क्रान्तिकारी शक्तियां विकसित होकर मजबूत बन जाती हैं, तो यह बात और स्पष्ट रूप से सामने आ जाती है।

राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के इस दुरंगे चरित्र से यह नतीजा निकलता है कि किसी निश्चित समय और किसी हद तक यह साम्राज्यवाद के खिलाफ और नौकरशाहों व युद्ध-सरदारों की सरकार के खिलाफ क्रान्ति में भाग ले सकता है और क्रान्तिकारी शक्तियों का एक हिस्सा बन सकता है; लेकिन किसी दूसरे समय इसके बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग का अनुयायी बनने और प्रतिक्रान्ति में उसका सह-अपराधी बनने का खतरा भी बना रहता है।

चीन के राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का, जो मुख्यतया मध्यम पूंजीपति वर्ग है, राजनीतिक सत्ता पर वास्तविक अधिकार कभी नहीं रहा, बल्कि बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग की, जिनका

सत्ता पर कब्जा रहा है, प्रतिक्रियावादी नीतियों ने उसे सीमित रखा है, हालांकि १९२७ से १९३१ (१८ सितम्बर की घटना से पहले) तक की अवधि में इसने क्रान्ति का विरोध करने में उनका साथ दिया था। जापान-प्रतिरोध के काल में यह न सिर्फ बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के आत्मसमर्पणवादियों से बल्कि बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के कट्टरतावादियों से भी भिन्न है, और इस प्रकार यह अब तक हमारा अपेक्षाकृत अच्छा संश्रयकारी रहा है। इसलिए राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के प्रति एक विवेकपूर्ण नीति अपनाना निहायत जरूरी है।

३. किसानों को छोड़कर निम्न-पूंजीपति वर्ग के विभिन्न हिस्से

किसानों को छोड़कर निम्न-पूंजीपति वर्ग में बुद्धिजीवियों, छोटे व्यापारियों, दस्तकारों और आजाद पेशे वाले लोगों की बड़ी तादाद शामिल है।

उनकी स्थिति किसी हद तक किसान वर्ग में शामिल मध्यम किसानों से मिलती-जुलती है। वे सब साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के उत्पीड़न का शिकार हैं और वे दिन-ब-दिन दिवालिया अथवा तबाह होते जा रहे हैं।

अतएव निम्न-पूंजीपति वर्ग के ये हिस्से क्रान्ति की एक प्रेरक शक्ति हैं और सर्वहारा वर्ग के विश्वसनीय संश्रयकारी हैं। वे सिर्फ सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में ही अपनी मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

आइए, अब हम किसानों को छोड़कर निम्न-पूंजीपति वर्ग के विभिन्न हिस्सों का विश्लेषण करें।

पहले, बुद्धिजीवी और नौजवान विद्यार्थी। इन लोगों का कोई अलग वर्ग अथवा तबका नहीं होता। लेकिन अपनी पारिवारिक उत्पत्ति, रहन-सहन की स्थितियों और राजनीतिक दृष्टिबिन्दु के लिहाज से आज चीन के बुद्धिजीवियों और नौजवान विद्यार्थियों में से अधिकांश लोगों को निम्न-पूंजीपति वर्ग में रखा जा सकता है। पिछली चन्द दशाब्दियों में चीन में बुद्धिजीवियों और नौजवान विद्यार्थियों की संख्या बहुत बढ़ गई है। इनमें से उन लोगों को छोड़कर जो साम्राज्यवादियों और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग से जा मिले हैं और जनता के खिलाफ उनके लिए काम करते हैं, अधिकांश लोग साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के उत्पीड़न के शिकार हैं, तथा बेकारी के डर से अथवा पढ़ना छूट जाने के डर से परेशान हैं। इसलिए क्रान्ति के प्रति उनका तीव्र रुझान होता है। उन्होंने कमोबेश पूंजीवादी वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त किया है, उनमें राजनीतिक सूझ-बूझ है और वे चीनी क्रान्ति की वर्तमान मंजिल में अक्सर हिरावल भूमिका अदा करते हैं अथवा एक सेतु की भूमिका अदा करते हैं। १९११ की क्रान्ति से पहले विदेशों में चीनी विद्यार्थियों द्वारा चलाया गया आन्दोलन, १९१९ का ४ मई आन्दोलन, १९२५ का ३० मई आन्दोलन और १९३५ का ९ दिसम्बर आन्दोलन इस बात के ज्वलन्त प्रमाण हैं। खास तौर पर उन बुद्धिजीवियों की एक बड़ी संख्या, जो अपेक्षाकृत गरीब हैं, मजदूरों और किसानों के साथ मिलकर क्रान्ति में भाग ले सकती है और उसका समर्थन कर सकती है। चीन में मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा पहलेपहल बुद्धिजीवियों और नौजवान विद्यार्थियों में ही व्यापक रूप से फैली और उन्होंने ही

इसे स्वीकार किया। क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों की शिरकत के बिना क्रान्तिकारी शक्तियों को संगठित और क्रान्तिकारी कार्य को सम्पन्न नहीं किया जा सकता। लेकिन बुद्धिजीवी लोग जब तक तन-मन से क्रान्तिकारी जन-संघर्षों में नहीं कूद पड़ते अथवा आम जनता के हितों की सेवा करने और उसके साथ एकरूप हो जाने का पक्का इरादा नहीं कर लेते, तब तक उनमें अक्सर मनोगतवाद और व्यक्तिवाद की प्रवृत्तियां बनी रहती हैं, उनके विचार अव्यावहारिक होते हैं और उनकी कार्यवाहियों में दृढ़ निश्चय की कमी बनी रहती है। इसलिए हालांकि चीन में क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों का जन-समुदाय हिरावल भूमिका अथवा एक सेतु की भूमिका अदा कर सकता है, फिर भी यह नहीं हो सकता कि उनमें से सभी लोग अन्त तक क्रान्तिकारी बने रहेंगे। उनमें से कुछ लोग बड़ी नाजुक घड़ी आने पर क्रान्तिकारी पांतों को छोड़ जाएंगे और निष्क्रिय बन जाएंगे, यहां तक कि चन्द लोग क्रान्ति के दुश्मन भी बन जाएंगे। बुद्धिजीवी लोग केवल दीर्घकालीन जन-संघर्षों के दौरान ही अपनी इन कमियों को दूर कर सकते हैं।

दूसरे, छोटे व्यापारी। वे लोग छोटी-छोटी दुकानें चलाते हैं, आम तौर पर कोई कर्मचारी नहीं रखते या चन्द कर्मचारी रखते हैं। साम्राज्यवाद, बड़े पूंजीपतियों के वर्ग और सूदखोरों के शोषण के कारण उनके सिर पर दिवालियेपन का खतरा हमेशा मंडराता रहता है।

तीसरे, दस्तकार। उनकी तादाद बहुत ज्यादा है। उनके पास अपने उत्पादन-साधन होते हैं। वे कोई मजदूर नहीं रखते अथवा

एक-दो शागिर्द या सहायक रख लेते हैं। उनकी स्थिति मध्यम किसानों जैसी ही है।

चौथे, आजाद पेशे वाले लोग। उनमें डाक्टर और दूसरे व्यवसाय अपनाने वाले लोग शामिल हैं। वे लोग दूसरों का शोषण नहीं करते अथवा करते भी हैं तो बहुत कम। उनकी स्थिति दस्तकारों जैसी ही है।

निम्न-पूंजीपति वर्ग के इन हिस्सों से एक विशाल जन-समुदाय बन जाता है, जिसे हमें अपने पक्ष में कर लेना चाहिए, जिसके हितों की हमें रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि आम तौर पर वे लोग क्रान्ति में शामिल हो सकते हैं अथवा उसका समर्थन कर सकते हैं और हमारे अच्छे संश्रयकारी हैं। उनकी कमजोरी यह है कि उनमें से कुछ लोग पूंजीपति वर्ग से आसानी से प्रभावित हो जाते हैं; अतएव हमें उनके बीच क्रान्तिकारी प्रचार-कार्य और संगठनात्मक कार्य करना चाहिए।

४. किसान वर्ग

किसान लोग चीन की कुल आबादी का लगभग ८० प्रतिशत हैं और चीन की मौजूदा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मुख्य शक्ति हैं।

किसान वर्ग में तेजी से ध्रुवीकरण हो रहा है।

पहले, धनी किसान। ये लोग देहातों की आबादी का लगभग ५ प्रतिशत हैं (अथवा जमींदारों समेत करीब १० प्रतिशत हैं), और ये देहाती पूंजीपति वर्ग कहलाते हैं। चीन के अधिकांश धनी किसान अपनी जमीन का एक हिस्सा काश्त पर देते हैं, सूदखोरी करते हैं और खेत-मजदूरों का भी निर्दयता से शोषण करते हैं, तथा

उनके शोषण का स्वरूप अर्ध-सामन्ती है। लेकिन वे आम तौर पर खुद भी श्रम करते हैं, और इस दृष्टि से किसानों में शामिल हैं। धनी किसानों की उत्पादन-प्रणाली एक निश्चित काल तक उपयोगी बनी रहेगी। आम तौर पर यह सम्भव है कि धनी किसान, किसान जन-समुदाय के साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष में अपनी कुछ शक्ति लगाएं और जमींदारों के खिलाफ की जाने वाली भूमि-क्रान्ति के संघर्ष में तटस्थ रहें। इसलिए हमें धनी किसानों को जमींदारों से कोई अन्तर न रखने वाला वर्ग नहीं समझ लेना चाहिए और समय से पहले ही धनी किसानों को खत्म कर देने की नीति नहीं अपनानी चाहिए।

दूसरे, मध्यम किसान। ये लोग चीन की देहाती आबादी का लगभग २० प्रतिशत हैं। ये लोग आम तौर पर दूसरों का शोषण नहीं करते और आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर हैं (जब फसल अच्छी हो तो ये लोग कुछ बचत कर सकते हैं, और कभी-कभी मजदूरी देकर कुछ काम लेते हैं अथवा छोटी-मोटी रकमें सूद पर भी चढ़ा देते हैं), बल्कि साम्राज्यवाद, जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग द्वारा खुद इनका ही शोषण किया जाता है। इन्हें कोई राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं है। इनमें से कुछ लोगों के पास काफी जमीन नहीं है और इनके सिर्फ एक हिस्से (खुशहाल मध्यम किसानों) के पास कुछ अतिरिक्त जमीन है। मध्यम किसान न सिर्फ साम्राज्य-वाद-विरोधी क्रान्ति और भूमि-क्रान्ति में शामिल हो सकते हैं, बल्कि समाजवाद को भी स्वीकार कर सकते हैं। इसलिए सारे के सारे मध्यम किसान सर्वहारा वर्ग के विश्वसनीय संश्रयकारी बन सकते हैं और क्रान्ति की एक महत्वपूर्ण प्रेरक शक्ति हैं। क्रान्ति

के प्रति मध्यम किसानों का रुख सकारात्मक है अथवा नकारात्मक, यह क्रान्ति की हार-जीत का निर्णय करने वाले तत्वों में से एक तत्व है। और भूमि-क्रान्ति के बाद, जब देहातों की आबादी में मध्यम किसान बहुसंख्या में होंगे, तो यह बात खास तौर पर सही साबित होगी।

तीसरे, गरीब किसान। चीन में खेत-मजदूरों समेत गरीब किसानों की संख्या देहातों की आबादी का लगभग ७० प्रतिशत है। गरीब किसान व्यापक किसान जन-समुदाय हैं जिसके पास बिलकुल जमीन नहीं अथवा बहुत कम जमीन है, और ये लोग देहातों का अर्ध-सर्वहारा वर्ग हैं तथा ये लोग चीनी क्रान्ति की सबसे भारी तादाद वाली प्रेरक शक्ति, सर्वहारा वर्ग के स्वाभाविक और अत्यन्त विश्वसनीय संश्रयकारी तथा चीन की क्रान्तिकारी शक्तियों का एक मुख्य दस्ता हैं। गरीब किसान और मध्यम किसान अपनी मुक्ति सिर्फ सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में ही हासिल कर सकते हैं, तथा केवल गरीब किसानों और मध्यम किसानों के साथ दृढ़ संश्रय कायम करके ही सर्वहारा वर्ग क्रान्ति को सफल बना सकता है। वरना ये दोनों ही बातें मुमकिन नहीं। "किसान" शब्द का मतलब मुख्य रूप से गरीब किसानों और मध्यम किसानों से ही है।

५. सर्वहारा वर्ग

चीन के सर्वहारा वर्ग में आधुनिक औद्योगिक मजदूरों की संख्या २५ लाख से ३० लाख तक है, शहरों में छोटे उद्योग-धन्धों और दस्तकारियों में काम करने वाले मजदूरों और दुकान-कर्मचारियों की संख्या १ करोड़ २० लाख के करीब है; इसके अलावा एक

बड़ी संख्या देहाती सर्वहारा (खेत-मजदूरों) और शहरों व देहातों के अन्य सम्पत्तिहीन लोगों की है।

हर जगह के सर्वहारा वर्ग की इन बुनियादी खूबियों – अर्थ-व्यवस्था के सबसे उन्नत रूप के साथ सम्पर्क होना, संगठन और अनुशासन की प्रबल भावना होना और निजी उत्पादन-साधन न होना – के अलावा चीनी सर्वहारा वर्ग की अपनी भी बहुत सी खास खूबियां हैं।

वे खूबियां कौन सी हैं ?

पहले, चीनी सर्वहारा वर्ग क्रान्तिकारी संघर्ष में किसी दूसरे वर्ग की तुलना में कहीं अधिक दृढ़ता के साथ और कहीं अधिक मुकम्मिल तौर पर जुटा हुआ है क्योंकि वह तिहरे उत्पीड़न (साम्राज्य-वाद, पूंजीपति वर्ग और सामन्ती शक्तियों के उत्पीड़न) का शिकार है, एक ऐसे उत्पीड़न का जिसके समान बर्बरता और क्रूरता दुनिया के किसी और देश में शायद ही देखने को मिले। चूंकि औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक चीन में योरप की तरह सामाजिक सुधार-वाद का कोई आर्थिक आधार नहीं, इसलिए थोड़े से मजदूर-द्रोहियों को छोड़कर समूचा सर्वहारा वर्ग अत्यन्त क्रान्तिकारी है।

दूसरे, चीनी सर्वहारा वर्ग ने ज्यों ही क्रान्ति के मंच पर कदम रखा, वह अपनी क्रान्तिकारी पार्टी – चीनी कम्युनिस्ट पार्टी – के नेतृत्व में आ गया और चीनी समाज में राजनीतिक तौर पर सबसे जागरूक वर्ग बन गया।

तीसरे, चूंकि चीनी सर्वहारा वर्ग का जन्म ज्यादातर दिवालिया किसानों से हुआ है, इसलिए किसान जन-समुदाय से उसका स्वा-

भाविक सम्बन्ध है, जिससे किसानों के साथ घनिष्ठ संश्रय स्थापित करना उसके लिए सहज है।

अतएव अपनी चन्द लाजमी कमजोरियों के बावजूद, मिसाल के तौर पर अपनी थोड़ी संख्या (किसानों के मुकाबले), अपनी कम उम्र (पूंजीवादी देशों के सर्वहारा वर्ग के मुकाबले) और अपनी शिक्षा के नीचे स्तर (पूंजीपति वर्ग के मुकाबले) के बावजूद, चीनी सर्वहारा वर्ग चीनी क्रान्ति की मूल प्रेरक शक्ति है। सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व के बिना चीनी क्रान्ति कभी भी सफल नहीं हो सकती। अतीत काल का एक उदाहरण लीजिए, १९११ की क्रान्ति इसलिए असफल रही क्योंकि सर्वहारा वर्ग ने उसमें जागरूकता से भाग नहीं लिया था और कम्युनिस्ट पार्टी उस समय स्थापित नहीं हुई थी। हाल की मिसाल लीजिए, १९२४-२७ की क्रान्ति ने कुछ समय तक भारी सफलता प्राप्त की क्योंकि सर्वहारा वर्ग ने इसमें जागरूकता से भाग लिया और नेतृत्व किया, तथा उस समय कम्यु-निस्ट पार्टी मौजूद थी ; अन्त में यह क्रान्ति भी असफल रही क्योंकि बाद में बड़े पूंजीपतियों के वर्ग ने सर्वहारा वर्ग के साथ अपने संश्रय के प्रति और मुश्तरका क्रान्तिकारी कार्यक्रम के प्रति विश्वासघात किया, तथा इसका कारण यह भी था कि चीनी सर्वहारा वर्ग और उसकी राजनीतिक पार्टी को अभी क्रान्ति का काफी अनुभव प्राप्त नहीं हुआ था। वर्तमान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को ही लीजिए, चूंकि सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का नेतृत्व कर रही है, इसलिए समूचा राष्ट्र एकताबद्ध हो गया है और महान जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध शुरू हो चुका है और दृढ़तापूर्वक लड़ा जा रहा है।

चीनी सर्वहारा वर्ग को यह बात समझ लेनी चाहिए कि यद्यपि वह उच्चतम राजनीतिक चेतना और संगठन की उच्चतम भावना रखने वाला वर्ग है, तथापि वह केवल अपनी ही ताकत के बूते पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता। विजय के लिए उसे विभिन्न हालात के अनुसार उन तमाम क्रान्तिकारी वर्गों और तबकों के साथ, जो क्रान्ति में भाग ले सकते हैं, एकता कायम करनी होगी और क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चा कायम करना होगा। चीनी समाज के तमाम वर्गों में, किसान मजदूर वर्ग के सुदृढ़ संश्रयकारी हैं, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग विश्वसनीय संश्रयकारी है और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग एक निश्चित समय के लिए और एक निश्चित सीमा तक संश्रयकारी है। यह चीन के आधुनिक क्रान्तिकारी इतिहास द्वारा प्रमाणित एक बुनियादी नियम है।

६. खानाबदोश

चीन की औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक स्थिति ने देहाती और शहरी बेरोजगारों के एक बड़े जन-समूह को जन्म दिया है। जीविका कमाने के सभी उचित साधनों से वंचित हो जाने के कारण उनमें से बहुत से लोग जीविका के अनुचित साधन अपनाने के लिए मजबूर हो जाते हैं। यही वजह है कि अनेक लोग डाकू, गुण्डे, भिखारी और वेश्या के रूप में तथा अंधविश्वासों के जरिए रोजी कमाने वाले बन गए हैं। यह सामाजिक तबका ढुलमुल रहता है। इसमें से कुछ लोग प्रतिक्रियावादी शक्तियों द्वारा आसानी से खरीदे जा सकते हैं, बाकी लोग क्रान्ति में शामिल हो सकते हैं। इन लोगों में रचनात्मक गुणों का अभाव होता है, और रचनात्मक प्रवृत्ति के बजाय विध्वंसात्मक प्रवृत्ति अधिक होती है; क्रान्ति में शामिल होने के बाद ऐसे लोग क्रान्तिकारी पांतों में घुमन्तू विद्रोहियों तथा अराजकतावादियों की विचारधारा का स्रोत बन जाते हैं। इसलिए हमें उनका पुन:संस्कार करने में निपुण होना चाहिए तथा उनकी विध्वंसकारी प्रवृत्तियों को रोकने पर ध्यान देना चाहिए।

ऊपर जो कुछ कहा गया है वह चीनी क्रान्ति की प्रेरक शक्तियों के बारे में हमारा विश्लेषण है।

५. चीनी क्रान्ति का स्वरूप

अब हमने चीनी समाज के स्वरूप के बारे में अर्थात चीन की विशिष्ट परिस्थितियों के बारे में एक समझ हासिल कर ली है; यह समझ चीन की तमाम क्रान्तिकारी समस्याओं को हल करने के लिए एक बुनियादी आधार है। चीनी क्रान्ति के प्रहार के लक्ष्यों, उसके कार्यों और उसकी प्रेरक शक्तियों के बारे में भी हमारे विचार स्पष्ट हैं; ये क्रान्ति की वर्तमान मंजिल के बुनियादी सवाल हैं, जो चीनी समाज के विशेष स्वरूप अर्थात चीन की विशिष्ट परि-स्थितियों से पैदा होते हैं। यह सब समझ लेने के बाद, अब हम चीनी क्रान्ति की वर्तमान मंजिल के एक दूसरे बुनियादी सवाल को अर्थात चीनी क्रान्ति के स्वरूप को समझ सकते हैं।

वर्तमान मंजिल में चीनी क्रान्ति का स्वरूप आखिर क्या है? यह पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति है अथवा सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति? जाहिर है कि यह दूसरी नहीं बल्कि पहली किस्म की क्रान्ति है।

चूंकि चीनी समाज एक औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज है, चूंकि चीनी क्रान्ति के मुख्य दुश्मन साम्राज्य-वाद और सामन्तवाद हैं, चूंकि क्रान्ति का कार्य इन दो मुख्य दुश्मनों का तख्ता उलट देने के लिए राष्ट्रीय और जनवादी क्रान्ति करना है, जिसमें कभी-कभी पूंजीपति वर्ग भी शामिल होता है, तथा चूंकि बड़े पूंजीपतियों के वर्ग द्वारा क्रान्ति के साथ गद्दारी किए जाने पर और उसका शत्रु बन जाने पर भी, क्रान्ति के प्रहार का निशाना साम्राज्यवाद और सामन्तवाद को ही बनाया जाता है और सामान्य पूंजीवाद व पूंजीवादी निजी सम्पत्ति को नहीं बनाया जाता – चूंकि यह सब सच है, इसलिए वर्तमान मंजिल में चीनी क्रान्ति का स्वरूप सर्वहारा-समाजवादी नहीं बल्कि पूंजीवादी-जनवादी है।[२५]

लेकिन आज के चीन में पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति पुरानी आम किस्म की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति नहीं है, जो अब पुरानी पड़ चुकी है, बल्कि एक नई खास किस्म की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति है। हम इसे नव-जनवादी क्रान्ति कहते हैं, और यह क्रान्ति चीन में तथा दूसरे तमाम औपनिवेशिक और अर्ध-औपनिवेशिक देशों में विकसित हो रही है। यह नव-जनवादी क्रान्ति दुनिया की सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति का एक अंग है, क्योंकि यह साम्राज्यवाद अर्थात अन्तरराष्ट्रीय पूंजीवाद का डटकर विरोध करती है। राजनीतिक तौर पर यह साम्राज्यवादियों, देशद्रोहियों और प्रतिक्रियावादियों पर क्रान्तिकारी वर्गों का संयुक्त अधिनायकत्व कायम कर लेती है तथा चीनी समाज का पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाले समाज में रूपान्तर करने का विरोध करती है। आर्थिक रूप से इसका लक्ष्य साम्राज्यवादियों, देशद्रोहियों और प्रतिक्रियावादियों की बड़ी

पूंजी और उनके बड़े-बड़े कारोबारों का राष्ट्रीयकरण करना है और जमींदारों की भूमि को किसानों में बांटना है, जबकि यह सामान्य निजी पूंजीवादी कारोबारों को सुरक्षित रखती है और धनी किसान अर्थव्यवस्था को समाप्त नहीं करती। इस प्रकार, नई किस्म की यह जनवादी क्रान्ति एक ओर तो पूंजीवाद के लिए मार्ग साफ कर देती है और दूसरी ओर समाजवाद के लिए आवश्यक स्थितियां पैदा करती है। चीनी क्रान्ति की वर्तमान मंजिल औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती समाज को खत्म करके समाजवादी समाज की स्थापना करने की संक्रमणकालीन मंजिल है, अर्थात यह नव-जनवादी क्रान्ति की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया प्रथम विश्वयुद्ध और रूसी अक्तूबर क्रान्ति के बाद ही शुरू हुई, चीन में १६१६ के ४ मई आन्दोलन के साथ ही शुरू हुई। नव-जनवादी क्रान्ति सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में जन-समुदाय की एक साम्राज्य-वाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी क्रान्ति है। चीनी समाज सिर्फ इसी क्रान्ति के जरिए समाजवाद की ओर अभियान कर सकता है ; अन्य कोई रास्ता नहीं है।

इस प्रकार की नव-जनवादी क्रान्ति अतीत काल की योरप और अमरीका की जनवादी क्रान्तियों से बिलकुल अलग किस्म की है, क्योंकि इसके परिणामस्वरूप पूंजीपति वर्ग का अधिनायकत्व कायम करने के बजाय सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में तमाम क्रान्तिकारी वर्गों के संयुक्त मोर्चे का अधिनायकत्व कायम किया जाता है। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में आधार-क्षेत्रों में जो जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता

कायम हुई है, वह जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की सत्ता है ; यह न तो पूंजीपति वर्ग का और न सर्वहारा वर्ग का ही एक-वर्गीय अधिनायकत्व है, बल्कि सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में क्रान्तिकारी वर्गों का संयुक्त अधिनायकत्व है। ऐसे तमाम लोग जो जापान का प्रतिरोध करने और जनवाद लागू करने का पक्षपोषण करते हैं, इस राजनीतिक सत्ता में शामिल हो सकते हैं, चाहे वे किसी भी पार्टी या ग्रुप के क्यों न हों।

इस प्रकार की नव-जनवादी क्रान्ति समाजवादी क्रान्ति से भी भिन्न होती है, क्योंकि यह चीन में साम्राज्यवादियों, देशद्रोहियों और प्रतिक्रियावादियों के शासन का ही तख्ता उलट देती है, लेकिन किसी ऐसे पूंजीवादी तत्व को नष्ट नहीं करती जो अब भी साम्राज्य-वाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी संघर्ष में भाग ले सकता है।

इस प्रकार की नव-जनवादी क्रान्ति १९२४ में डा० सुन यात-सेन द्वारा प्रतिपादित तीन जन-सिद्धान्तों वाली क्रान्ति से बुनियादी तौर पर मेल खाती है। उस साल "क्वोमिन्ताङ की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस के घोषणापत्र" में डा० सुन यात-सेन ने कहा था :

> आधुनिक राज्यों की तथाकथित जनवादी व्यवस्था पर सामान्यत: पूंजीपति वर्ग का एकाधिकार है और यह महज आम लोगों को उत्पीड़ित करने का साधन बन गई है। इसके विपरीत क्वोमिन्ताङ के जनवाद के सिद्धान्त का मतलब है वह जनवाद, जिसमें सभी आम लोगों का हिस्सा हो और जो चन्द लोगों की निजी मिलकियत न हो।

उन्होंने आगे कहा :

> ऐसे तमाम निजी कारोबारों को, वे चाहे चीनियों के हों अथवा विदेशियों के, जिनकी मिलकियत का स्वरूप इजारे-दाराना है अथवा जिनका पैमाना इतना बड़ा है कि उन्हें निजी प्रबन्ध में नहीं चलाया जा सकता, जैसे बैंकिंग, रेलवे और हवाई उड़ान, सरकार अपने हाथ में ले लेगी, ताकि निजी पूंजी जनता के आर्थिक जीवन को नियंत्रित न करे। यह पूंजी का नियमन करने का एक मुख्य उसूल है।

और फिर डा० सुन यात-सेन ने घरेलू और वैदेशिक नीति के बुनि-यादी उसूल की चर्चा करते हुए अपनी वसीयत में लिखा : "हमें व्यापक जन-समुदाय को जागृत करना चाहिए और दुनिया के हर ऐसे राष्ट्र के साथ, जो हमारे साथ समानता का बरताव करे, एकता कायम करके मुश्तरका संघर्ष करना चाहिए।" इस प्रकार पुराने जनवाद के तीन जन-सिद्धान्त, जो पुरानी अन्तरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय परिस्थितियों के अनुरूप थे, नव-जनवाद के तीन जन-सिद्धान्तों में ढाल दिए गए जो नई अन्तरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय परिस्थितियों के अनुरूप हैं। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने २२ सितम्बर १९३७ के घोषणापत्र में जब यह ऐलान किया कि "तीन जन-सिद्धान्तों की आज चीन को जरूरत है, उन्हें पूर्ण रूप से कार्या-न्वित करने के लिए संघर्ष करने को हमारी पार्टी तैयार है", तो उसने और किसी का नहीं, इन्हीं तीन जन-सिद्धान्तों का हवाला दिया था। इन तीन जन-सिद्धान्तों का मतलब है डा० सुन यात-सेन की तीन महान नीतियों – रूस से संश्रय, कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग

और किसान-मजदूरों की सहायता—पर आधारित तीन जन-सिद्धान्त। नई अन्तरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय परिस्थितियों में किसी भी किस्म के तीन जन-सिद्धान्त, जो इन तीन महान नीतियों को छोड़ दें, क्रान्तिकारी नहीं हैं। (यहां हम इस बात की व्याख्या नहीं करेंगे कि कम्युनिज्म और तीन जन-सिद्धान्त जहां जनवादी क्रान्ति के बुनियादी राजनीतिक कार्यक्रम के बारे में एक जैसे हैं, वहां बाकी सब बातों के बारे में एक दूसरे से भिन्न हैं।)

इस प्रकार चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति में सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य तबकों की भूमिका को न तो संघर्ष के लिए शक्तियों की पांतबन्दी (यानी संयुक्त मोर्चे) में नजरअन्दाज किया जा सकता है और न राजसत्ता संगठित करने में। जो कोई भी इन वर्गों की अवहेलना करने की चेष्टा करेगा, वह निश्चित रूप से चीनी राष्ट्र के भविष्य की समस्या को अथवा चीन की किसी भी समस्या को हल नहीं कर पाएगा। चीनी क्रान्ति की वर्तमान मंजिल में हमें एक ऐसा जनवादी गणराज्य स्थापित करने का प्रयत्न करना चाहिए जिसमें मजदूरों, किसानों और निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य तबकों का निश्चित स्थान हो और वे निश्चित भूमिका अदा करें। दूसरे शब्दों में, यह मजदूरों, किसानों, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग और उन तमाम अन्य लोगों के, जो साम्राज्यवाद और सामन्तवाद का विरोध करते हैं, क्रान्तिकारी संश्रय पर आधारित जनवादी गणराज्य होना चाहिए। ऐसा गणराज्य सिर्फ सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में ही पूर्ण रूप से कायम किया जा सकता है।

६. चीनी क्रान्ति का भविष्य

अब जबकि वर्तमान मंजिल में चीनी समाज का स्वरूप और चीनी क्रान्ति के प्रहार के लक्ष्य, उसके कार्य, उसकी प्रेरक शक्तियां और उसका स्वरूप—ये सब बुनियादी समस्याएं स्पष्ट हो चुकी हैं, क्रान्ति के भविष्य को समझ लेना अर्थात चीनी पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति और सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति के, अथवा चीनी क्रान्ति की वर्तमान मंजिल और भावी मंजिल के, आपसी सम्बन्ध को समझ लेना आसान हो गया है।

चूंकि मौजूदा मंजिल में चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति पुरानी आम किस्म की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति नहीं, बल्कि एक नई खास किस्म की जनवादी क्रान्ति है—एक नव-जनवादी क्रान्ति है—और चूंकि यह बीसवीं शताब्दी के चौथे और पांचवें दशकों के एक ऐसे नए अन्तरराष्ट्रीय वातावरण में हो रही है जिसकी विशेषता है समाजवाद का उदय और पूंजीवाद का पतन, चूंकि यह दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान और क्रान्ति के युग में हो रही है, इसलिए इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं कि चीनी क्रान्ति का भविष्य आखिरकार पूंजीवाद नहीं बल्कि समाजवाद और कम्युनिज्म है।

फिर भी यह जरा भी आश्चर्य की बात नहीं बल्कि सर्वथा पूर्वानुमानित ही है कि चूंकि वर्तमान मंजिल में चीनी क्रान्ति का मकसद है समाज की मौजूदा औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामन्ती हालत को बदल देना, यानी नव-जनवादी क्रान्ति को पूरा करने की कोशिश करना, इसलिए क्रान्ति की विजय के बाद जब पूंजीवाद के विकास की राह के रोड़े दूर कर दिए जाएंगे तो चीनी

समाज में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का किसी हद तक विकास होगा। आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए चीन में जनवादी क्रान्ति की बिजय के परिणामस्वरूप पूंजीवाद का किसी हद तक बिकास होना अनिवार्य है। लेकिन यह चीनी क्रान्ति का पूरा परिणाम नहीं, बल्कि सिर्फ इस परिणाम का एक पहलू होगा। चीनी क्रान्ति का पूरा परिणाम एक तरफ तो पूंजीवादी तत्वों के विकास के रूप में होगा और दूसरी तरफ समाजवादी तत्वों के विकास के रूप में। समाजवादी तत्व क्या होंगे? देश की राजनीतिक शक्तियों में सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी का अधिकाधिक बढ़ता हुआ सापेक्ष महत्व, सर्व-हारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व जिसे किसान, बुद्धिजीवी और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग के लोग पहले ही स्वीकार कर चुके हैं अथवा करने की सम्भावना रखते हैं, तथा अर्थव्यवस्था का राजकीय क्षेत्र जिस पर जनवादी गणराज्य की मिलकियत होगी, और अर्थव्यवस्था का सहकारी क्षेत्र जिस पर मेहनतकश जनता की मिलकियत होगी। ये सब समाजवादी तत्व होंगे। इसके साथ-साथ अन्तरराष्ट्रीय वातावरण अनुकूल होने के कारण इन तत्वों से इस बात की भी बहुत भारी सम्भावना पैदा हो जाती है कि चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति अन्त में पूंजीवादी भविष्य से बच जाएगी और समाजवादी भविष्य में प्रवेश करेगी।

७. चीनी क्रान्ति का दोहरा कार्य और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी

इस अध्याय के पिछले परिच्छेदों का सारांश निकालने के बाद हम यह देख सकते हैं कि समूची चीनी क्रान्ति के सामने दोहरा

कार्य मौजूद है। यों कह लीजिए कि इसमें पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति (नव-जनवादी क्रान्ति) और सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति, अर्थात क्रान्ति की वर्तमान और भावी दोनों मंजिलें शामिल हैं। इस दोहरे क्रान्तिकारी कार्य के नेतृत्व की जिम्मेदारी चीन के सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक पार्टी – कम्युनिस्ट पार्टी पर है, जिसके नेतृत्व के बिना कोई क्रान्ति सफल नहीं हो सकती।

चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति (नव-जनवादी क्रान्ति) को पूरा करना और तमाम आवश्यक परिस्थितियों के परिपक्व हो जाने पर उसे समाजवादी क्रान्ति की मंजिल में बदल देना – कुल मिलाकर यही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का गौरवशाली और महान क्रान्तिकारी कार्य है। प्रत्येक पार्टी-सदस्य को इसे पूरा करने का प्रयत्न करना चाहिए और किसी भी हालत में इसे अधूरा नहीं छोड़ना चाहिए। कुछ अपरिपक्व पार्टी-सदस्य सोचते हैं कि हमारा कार्य वर्तमान जनवादी क्रान्ति तक ही सीमित है और इसमें भावी समाजवादी क्रान्ति शामिल नहीं है, अथवा यह कि वर्तमान क्रान्ति या भूमि-क्रान्ति ही वास्तव में एक समाजवादी क्रान्ति है। ऐसे लोगों को यह स्पष्ट रूप से बता दिया जाना चाहिए कि उनके ये विचार गलत हैं। हर पार्टी-सदस्य को यह जान लेना चाहिए कि यदि सम्पूर्ण रूप से देखा जाए, तो चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाले चीन के क्रान्तिकारी आन्दोलन की दो मंजिलें हैं, अर्थात जनवादी क्रान्ति की मंजिल और समाजवादी क्रान्ति की मंजिल, जो स्वरूप में क्रान्ति की दो अलग-अलग प्रक्रियाएं हैं, और केवल पहली प्रक्रिया के पूरे हो जाने के बाद ही दूसरी प्रक्रिया को पूरा किया जा सकता है। जनवादी क्रान्ति समाजवादी क्रान्ति

की आवश्यक तैयारी है, तथा समाजवादी क्रान्ति जनवादी क्रान्ति की अनिवार्य प्रवृत्ति है। समाजवादी समाज और कम्युनिस्ट समाज की स्थापना करना ही वह अन्तिम लक्ष्य है जिसके लिए सभी कम्युनिस्ट प्रयत्नशील हैं। चीनी क्रान्ति में सही नेतृत्व के लिए यह आवश्यक है कि जनवादी क्रान्ति और समाजवादी क्रान्ति के बीच के फर्क और उनके पारस्परिक सम्बन्ध इन दोनों को साफ-साफ समझ लिया जाए।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अलावा कोई दूसरी राजनीतिक पार्टी (चाहे वह पूंजीपति वर्ग की पार्टी हो या निम्न-पूंजीपति वर्ग की पार्टी) ऐसी नहीं है जो चीन की दो महान क्रान्तियों – जनवादी क्रान्ति और समाजवादी क्रान्ति – को मुकम्मिल तौर पर पूरा करने के कार्य का नेतृत्व करने में समर्थ हो। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने जन्म के पहले ही दिन से इस दोहरे कार्य को अपने कन्धों पर ले लिया है और इसे पूरा करने के लिए वह पिछले अठारह वर्षों से अथक संघर्ष करती आ रही है।

यह कार्य बेहद गौरवशाली भी है और बेहद कठिन भी। और इसे एक ऐसी बोलशेविकीकृत चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के बिना, जो देशव्यापी व जनव्यापी हो और जो विचारधारात्मक, राजनीतिक और संगठनात्मक रूप से पूरी तरह सुदृढ़ हो, पूरा नहीं किया जा सकता। इसलिए प्रत्येक पार्टी-सदस्य का यह कर्तव्य है कि वह ऐसी कम्युनिस्ट पार्टी के निर्माण में सक्रिय रूप से भाग ले।

नोट

१ परम्परागत विश्वास के अनुसार, चीन में कुतुबनुमा का आविष्कार बहुत पहले ही हो चुका था। "ल्वी पु-वेइ का पंचांग" में चुम्बक की शक्ति का उल्लेख ईसापूर्व तीसरी शताब्दी में युद्धरत-राज्य काल में ही किया जा चुका था, जिससे यह पता चलता है कि चीनी लोग उस जमाने में ही चुम्बक की शक्ति जान चुके थे। ईसा की पहली शताब्दी के आरम्भ में, यानी पूर्वी हान वंश के प्रारम्भिक काल में, वाङ छुङ ने अपनी "लुन हङ" नामक पुस्तक में लिखा था कि चुम्बक दक्षिण की ओर संकेत करता है, जिससे यह पता चलता है कि चुम्बकीय ध्रुवोन्मुखता की खोज उस समय तक हो चुकी थी। १२वीं शताब्दी के प्रारम्भ में, यानी सुङ वंश के सम्राट ह्वेइ चुङ के जमाने में, चू ल्वी द्वारा लिखे गए "फिङ-चओ के बारे में" और श्वी चिङ द्वारा लिखे गए "श्वानहो-संवत के वर्षों में दूत की हैसियत से कोरिया में बौद्ध ग्रन्थ की खोज" नामक यात्रा विवरणों में समुद्री यात्रा में कुतुबनुमा के प्रयोग का वर्णन किया गया था, जिससे यह पता चलता है कि चीन में कुतुबनुमा का इस्तेमाल उस समय तक व्यापक रूप से किया जाने लगा था।

२ पूर्वी हान वंश के एक खोजा छाए लुन ने कागज का आविष्कार किया, जिसे उसने छाल, सन, चीथड़ों और मछली पकड़ने के पुराने जालों से बनाया था। १०५ ईसवी (सम्राट हो ती के शासन का अन्तिम वर्ष) में छाए लुन ने अपना आविष्कार सम्राट के सामने पेश किया और उसके बाद कागज बनाने की विधि तमाम चीन में फैल गई। उस समय कागज "छाए हओ च" कहलाता था।

३ ब्लाक-छपाई का आविष्कार स्वेइ वंश में लगभग ६०० ईसवी में हुआ।

४ छपाई के अलग-अलग टाइपों का आविष्कार सुङ वंश के सम्राट रन चुङ के शासन-काल के छिङली-संवत के वर्षों में (१०४१-४८ ईसवी) पी शङ ने किया।

५ परम्परागत विश्वास के अनुसार चीन में बारूद का आविष्कार नवीं

शताब्दी में हुआ। और ११वीं शताब्दी तक उसका इस्तेमाल तोपें चलाने में होने लगा।

६ यहां चीन के प्रथम महान किसान विद्रोह का हवाला दिया गया है। ईसापूर्व २०९ में, यानी छिन वंश के दूसरे सम्राट के शासन के प्रथम वर्ष, छन शङ और ऊ क्वाङ ने एक सीमावर्ती चौकी पर ड्यूटी देने के लिए साथ जाने वाले ९०० आदमियों का नेतृत्व करके छिश्येन काउन्टी (अब आनह्वेइ प्रान्त की सूश्येन काउन्टी) में छिन वंश के अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। इसे देशव्यापी समर्थन प्राप्त हुआ था। श्याङ य्वी और उसके चाचा श्याङ ल्याङ ने ऊ नामक स्थान (अब च्याङसू प्रान्त की ऊश्येन काउन्टी) में, तथा ल्यू पाङ ने फेङ नामक स्थान (अब च्याङसू प्रान्त की फेङश्येन काउन्टी – अनु०) में विद्रोह कर दिया। श्याङ य्वी की फौज ने छिन वंश की मुख्य सैन्य-शक्ति का सफाया कर दिया और ल्यू पाङ की फौज ने क्वानचुङ क्षेत्र और छिन वंश की राजधानी पर कब्जा कर लिया। इसके बाद ल्यू पाङ और श्याङ य्वी के बीच लड़ाई हुई जिसमें श्याङ य्वी को पराजित किया गया और उसकी मृत्यु हो गई, ल्यू पाङ ने छिन राज्य का तख्ता उलटकर सम्राट की पदवी धारण की और हान वंश की नींव डाली।

७ पश्चिमी हान वंश के अन्तिम काल में जगह-जगह किसान उपद्रव और छोटे-बड़े किसान विद्रोह हुए। ८ ईसवी में वाङ माङ ने हान वंश का तख्ता उलट दिया, खुद गद्दी पर बैठ गया और किसान उपद्रव को शान्त करने के लिए उसने कुछ सुधार के उपाय निकाले। लेकिन उस समय चीन का दक्षिणी भाग भुखमरी का बुरी तरह शिकार था, भूखी जनता ने शिनशि (अब हुपे प्रान्त की चिङशान काउन्टी) के वाङ क्वाङ और वाङ फङ नामक व्यक्तियों को अपना नेता चुन लिया और बगावत कर दी। इस किसान सेना ने नानयाङ नामक स्थान तक लड़ाई की थी, और यह "शिनशि फौज" कहलाती थी। फिङलिन (हुपे प्रान्त की वर्तमान स्वेइश्येन काउन्टी के उत्तर-पूर्व में) नामक स्थान में छन मू नामक व्यक्ति ने एक हजार से ज्यादा आदमियों का नेतृत्व करके विद्रोह कर दिया। उसकी सेना "फिङलिन फौज" कहलाती थी। "लाल भौंह" और "कांसे का घोड़ा" भी किसान फौजें थीं जिन्होंने वाङ माङ के शासन-काल में बगावत की। "कांसे का घोड़ा" ने अपना विद्रोह मध्य हुपे में और "लाल भौंह" ने अपना विद्रोह मध्य शानतुङ में किया था। "लाल भौंह" का नेता फान छुङ था और उसका यह नाम इसलिए पड़ा क्योंकि उसके सिपाही अपनी भौंहें लाल कर लेते थे। यह उस समय की सबसे बड़ी किसान फौज थी।

८ १८४ ईसवी में, पूर्वी हान वंश के सम्राट लिङ ती के काल में, चाङ च्याओ ने किसान विद्रोह का नेतृत्व किया। उसके सैनिक पीली पगड़ी पहनकर अपनी निशानी प्रकट करते थे।

९ सातवीं शताब्दी के आरम्भ में, यानी स्वेइ वंश के अन्तिम दिनों में, किसानों ने क्रमश: कई विद्रोह किए। ली म्यी और तओ च्येन-त उस समय के किसान विद्रोहों के नेता थे। ली म्यी हनान में था और तओ च्येन-त हुपे में था। इन दोनों की विद्रोही फौजें बहुत प्रभावकारी थीं।

१० ८७४ ईसवी में (थाङ वंश के सम्राट शी चुङ के शासन-काल में) वाङ श्येन-च ने शानतुङ में विद्रोह कर दिया। अगले साल ह्वाङ छाओ ने उसके समर्थन में एक बगावत संगठित की। विस्तृत विवरण के लिए देखिए : "पार्टी के भीतर गलत विचारों को सुधारने के बारे में", नोट ३ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

११ सुङ च्याङ और फाङ ला बारहवीं शताब्दी के आरम्भ में सुङ वंश के सम्राट ह्वेइ चुङ के शासन-काल के श्वानहो-संवत के वर्षों में चीन के उत्तरी भाग और दक्षिणी भाग के दो किसान विद्रोहों के प्रसिद्ध नेता थे। सुङ च्याङ शानतुङ, हुपे, हनान और च्याङसू के सीमावर्ती क्षेत्र में सक्रिय था, जबकि फाङ ला चच्याङ और आनह्वेइ प्रान्तों में।

१२ १३५१ ईसवी में, यानी य्वान वंश के सम्राट शुन ती के शासन-काल के चचङ-संवत के ग्यारहवें वर्ष, विभिन्न स्थानों की जनता ने विद्रोह कर दिए। आनह्वेइ प्रान्त के फङयाङ नामक स्थान का चू य्वान-चाङ नामक व्यक्ति उस फौज में शामिल हो गया जो क्वो चि-शिङ के नेतृत्व में य्वान वंश के विरुद्ध लड़ रही थी। क्वो की मृत्यु के बाद वह इस फौज का सेनापति बन गया। आखिरकार, उसने मंगोल वंश का तख्ता उलट दिया और मिङ वंश की स्थापना करने वाला सम्राट बन गया।

१३ देखिए : "पार्टी के भीतर गलत विचारों को सुधारने के बारे में", नोट ४

("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

१४ देखिए : "जापानी-साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यनीति के बारे में", नोट ३४ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

१५ १८वीं शताब्दी के अन्त से लगातार कई दशाब्दियों तक ब्रिटेन चीन को अधिकाधिक मात्रा में अफीम का निर्यात करता रहा। इस व्यापार ने न सिर्फ चीनी जनता को भारी नुकसान पहुंचाया बल्कि बड़ी मात्रा में चीन की चांदी भी लूट ली। इससे चीन में विरोध की तीव्र भावना उत्पन्न हुई। १८४० में चीन के साथ अपने व्यापार की रक्षा का बहाना बनाकर ब्रिटेन ने चीन पर सशस्त्र आक्रमण कर दिया। लिन त्से-श्वी के नेतृत्व में चीनी सेना ने उसका प्रतिरोध किया और क्वाङतुङ की जनता ने अपने आप "अंग्रेजों का दमन करने वाली कोर" संगठित कर ली, जिसने बरतानवी हमलावर फौजों पर भीषण प्रहार किए। मगर भ्रष्ट छिङ सरकार ने १८४२ में बरतानवी हमलावरों के साथ "नानकिङ सन्धि" पर हस्ताक्षर कर लिए। इस सन्धि में यह तय किया गया कि चीन बरतानिया को तावान अदा करेगा और हाङकाङ ब्रिटेन को सौंप देगा, शांघाई, फूचओ, अमोय, निङपो और क्वाङचओ को ब्रिटिश व्यापार के लिए खोल दिया जाएगा और चीन में बरतानिया से आयात किए जाने वाले माल पर चुंगी की दर चीन और बरतानिया मिलकर निश्चित करेंगे।

१६ १८५६ से १८६० तक ब्रिटेन और फ्रांस ने संयुक्त रूप से चीन के खिलाफ एक आक्रमणकारी युद्ध चलाया। अमरीका और जारशाही रूस उनकी बगल से सहायता कर रहे थे। छिङ वंश की सरकार उस समय अपनी तमाम शक्ति थाइफिङ स्वर्गिक राज्य की किसान क्रान्ति को दबाने में लगा रही थी और उसने विदेशी हमलावरों के खिलाफ निष्क्रिय प्रतिरोध की नीति अपनाई। अंग्रेज-फ्रांसीसी सेनाओं ने क्वाङचओ, थ्येनचिन और पेकिङ जैसे महत्वपूर्ण शहरों पर क्रमशः कब्जा कर लिया तथा पेकिङ में य्वान मिङ य्वान महल को लूट लिया और उसमें आग लगा दी और छिङ सरकार को "थ्येनचिन सन्धि" और "पेकिङ सन्धि" करने पर मजबूर किया। इन सन्धियों में की गई मुख्य व्यवस्थाओं में थ्येनचिन, न्यूच्वाङ, तङचओ, थाइवान, तानश्वेइ, छाऊचओ, छ्युङचओ, नानकिङ, चनच्याङ, च्योच्याङ और हानखओ को व्यापारिक बन्दरगाहों के तौर पर खोल देना और चीन के भीतरी भाग में विदेशियों को यात्रा, धर्म-प्रचार और अन्तरदेशीय जहाजरानी के विशेषाधिकार देना शामिल थे। तब से विदेशी हमलावर शक्तियां चीन के तमाम समुद्रतटवर्ती प्रान्तों में फैल गई और देश के भीतरी भाग में दूर तक घुस गईं।

१७ १८८४-८५ में फ्रांसीसी हमलावरों ने वियतनाम पर और चीन के क्वाङशी, फ़ूच्येन, थाइवान और चच्याङ प्रान्तों पर सशस्त्र आक्रमण किया। चीनी फौजों ने फ़ङ चि-छाए और ल्यू युङ-फू की अगुवाई में वीरतापूर्वक प्रतिरोध किया और अनेक जीतें हासिल कीं। लेकिन भ्रष्ट छिङ सरकार ने युद्ध में जीतें हासिल करने के बावजूद अपमानजनक "थ्येनचिन सन्धि" पर हस्ताक्षर कर दिए।

१८ ई हो थ्वान आन्दोलन को, जो चीनी जनता द्वारा छेड़ा गया एक विदेशी-आक्रमण-विरोधी आन्दोलन था, कुचलने के लिए १९०० में आठ साम्राज्यवादी देशों – ब्रिटेन, अमरीका, जर्मनी, फ्रांस, जारशाही रूस, जापान, इटली और आस्ट्रिया – ने अपनी संयुक्त सेनाएं भेजकर चीन पर हमला कर दिया। चीनी जनता ने वीरतापूर्वक प्रतिरोध किया। आठ देशों की संयुक्त सेनाओं ने ताकू पर कब्जा जमा लिया और थ्येनचिन व पेकिङ पर अधिकार कर लिया। १९०१ में छिङ सरकार ने आठ साम्राज्यवादी देशों के साथ सन्धि कर ली। सन्धि में की गई मुख्य व्यवस्थाएं ये थी कि चीन इन देशों को ४५ करोड़ ल्याङ चांदी की भारी रकम जंगी तावान के तौर पर अदा करेगा, और इन साम्राज्यवादी देशों को पेकिङ में तथा पेकिङ से थ्येनचिन और शानहाएक्वान तक के इलाके में सेनाएं रखने का अनुचित विशेषाधिकार भी प्राप्त होगा।

१९ कानसुलर न्यायाधिकार एक ऐसा खास विशेषाधिकार था जिसे साम्राज्यवादी देशों द्वारा पुराने चीन की सरकारों पर थोपी गई असमान सन्धियों में शामिल किया गया था। इसकी शुरुआत १८४३ की चीन-बरतानिया हूमन सन्धि तथा १८४४ की चीन-अमरीका वाङशा सन्धि से हुई थी। इसका मतलब यह था कि किसी ऐसे देश का निवासी, जिसे चीन में कानसुलर न्यायाधिकार प्राप्त हो, अगर दीवानी अथवा फौजदारी मुकदमे में प्रतिवादी हो, तो इस मुकदमे

की सुनवाई चीनी अदालत में नहीं बल्कि चीन स्थित उसके अपने देश के कानसुल के सामने होगी।

२० ये प्रभाव-क्षेत्र चीन के विभिन्न भागों में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में उन साम्राज्यवादी देशों द्वारा कायम किए गए थे जिन्होंने चीन के खिलाफ आक्रमणकारी युद्ध छेड़े। इनमें से हरेक देश ने उन इलाकों की हदबन्दी कर ली जो उसके आर्थिक और सैनिक प्रभाव में आ गए। इस तरह याङत्सी घाटी के निचले और मध्य भाग के प्रान्तों को ब्रिटिश प्रभाव-क्षेत्र, युन्नान, क्वाङतुङ और क्वाङशी को फ्रांसीसी प्रभाव-क्षेत्र, शानतुङ को जर्मन प्रभाव-क्षेत्र, फूच्येन को जापानी प्रभाव-क्षेत्र और तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्तों को जारशाही रूसी प्रभाव-क्षेत्र बना दिया गया। १९०५ के रूस-जापान युद्ध के बाद तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्तों का दक्षिणी भाग जापानी प्रभाव-क्षेत्र बन गया।

२१ विदेशों द्वारा पट्टे पर लिए गए क्षेत्र वे थे जिन्हें साम्राज्यवादी देशों ने छिङ वंश की सरकार को विवश करके चीन के समुद्रों व नदियों के कई तटवर्ती स्थानों को व्यापारिक बन्दरगाहों के तौर पर खोल देने के बाद, इन बन्दरगाहों के एक निश्चित क्षेत्र को अपने मन के मुताबिक हथियाकर कायम किया था। इन तथाकथित पट्टे पर लिए गए क्षेत्रों में उन्होंने चीन के कानून और प्रशासन से सर्वथा स्वतंत्र औपनिवेशिक शासन की साम्राज्यवादी व्यवस्था कायम कर ली। इन क्षेत्रों के जरिए साम्राज्यवादी, चीन के सामन्ती वर्ग व दलाल-पूंजीपति वर्ग की हुकूमत पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष राजनीतिक व आर्थिक नियंत्रण रखते थे। १९२४-२७ की क्रान्ति के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की अगुवाई में क्रान्तिकारी जनता ने इन क्षेत्रों को वापस लेने का आन्दोलन चलाया और जनवरी १९२७ में हानखओ और च्योच्याङ में ब्रिटेन द्वारा अधिकृत क्षेत्रों को वापस ले लिया। मगर क्रान्ति के प्रति च्याङ काई-शेक की गद्दारी के बाद साम्राज्यवादियों ने चीन में अपने अधिकृत विभिन्न क्षेत्रों पर कब्जा जमाए रखा।

२२ देखिए: कोमिन्तर्न की छठी कांग्रेस में स्वीकृत "औपनिवेशिक तथा अर्ध-औपनिवेशिक देशों के क्रान्तिकारी आन्दोलन सम्बन्धी स्थापनाएं"।

२३ २४ मई १९२७ को कोमिन्तर्न की कार्यकारिणी कमेटी के आठवें पूर्ण अधिवेशन में जे० वी० स्तालिन द्वारा दिए गए "चीनी क्रान्ति और कोमिन्तर्न के कार्य" शीर्षक भाषण से उद्धृत।

२४ जे० वी० स्तालिन, "चीन में क्रान्ति का भविष्य"।

२५ देखिए: वी० आई० लेनिन, "सामाजिक-जनवादी पार्टी का भूमि-कार्यक्रम"।

चीनी जनता के मित्र स्तालिन

२० दिसम्बर १६३६

२१ दिसम्बर को कामरेड स्तालिन साठ वर्ष के हो जाएंगे। हमें यकीन है कि उनके जन्म-दिन पर समूची दुनिया के उन सभी क्रान्तिकारी लोगों के दिल, जो इस शुभ दिन से परिचित हैं, उत्साहपूर्ण व स्नेहपूर्ण बधाइयां देंगे।

स्तालिन को बधाई देना कोई औपचारिक बात नहीं है। स्तालिन को बधाई देने का मतलब है उनका और उनके कार्य का समर्थन करना, समाजवाद की विजय का समर्थन करना और उनके द्वारा मानव जाति को दिखाए गए रास्ते का समर्थन करना, इसका मतलब है एक परमप्रिय मित्र का समर्थन करना। कारण, मानव जाति की भारी बहुसंख्या आज उत्पीड़ित है, तथा मानव जाति केवल स्तालिन द्वारा दिखाए गए रास्ते पर चलकर और उनकी सहायता से ही उत्पीड़न से मुक्ति प्राप्त कर सकती है।

हमारी चीनी जनता को, जो अपने इतिहास में एक अत्यन्त भीषण उत्पीड़न के काल से गुजर रही है, दूसरों की मदद की बेहद सख्त जरूरत है। "गीत-संग्रह" में कहा गया है, "पक्षी गाता है, अपने मित्र का ध्यान आकर्षित करने के लिए"। हमारी वर्तमान स्थिति ठीक ऐसी ही है।

लेकिन हमारे मित्र कौन हैं ?

चीनी जनता के कुछ तथाकथित मित्र, खुदसाख्ता दोस्त हैं, तथा कुछ चीनी लोग भी बिना सोचे-समझे ही उन्हें अपना मित्र मान बैठते हैं। लेकिन ऐसे मित्रों को केवल थाङ वंश के प्रधान मन्त्री ली लिन-फ़ू[१] की श्रेणी में रखा जा सकता है जो "मुंह में राम, बगल में छुरी" वाला एक कुख्यात व्यक्ति था। वे वास्तव में "मुंह में राम, बगल में छुरी" वाले "मित्र" हैं। वे लोग भला कौन हैं? वे साम्राज्यवादी ही हैं, जो चीन के प्रति हमदर्दी का ढोंग रचते हैं।

लेकिन हमारे दूसरे किस्म के मित्र भी हैं, ऐसे मित्र जो हमारे प्रति सच्ची हमदर्दी रखते हैं और हमें अपना भाई समझते हैं। वे लोग कौन हैं? वे हैं सोवियत जनता और स्तालिन।

चीन में अपने विशेषाधिकारों को किसी भी अन्य देश ने नहीं छोड़ा ; केवल सोवियत संघ ने ही ऐसा किया है।

हमारी पहली महान क्रान्ति के दौरान सभी साम्राज्यवादियों ने हमारा विरोध किया ; केवल सोवियत संघ ने ही हमें सहायता दी।

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध शुरू होने के बाद से किसी भी साम्राज्यवादी देश की सरकार ने हमें सच्ची मदद नहीं दी ; केवल सोवियत संघ ने ही अपनी वायु-सेना और रसद-सप्लाई के जरिए हमारी मदद की।

क्या मुद्दा पूरी तरह स्पष्ट नहीं है ?

केवल समाजवादी देश, उसके नेता और उसकी जनता, तथा समाजवादी विचारक, राजनीतिज्ञ और मेहनतकश ही चीनी राष्ट्र और चीनी जनता के मुक्ति-कार्य को सच्ची मदद दे सकते हैं, तथा

उनकी मदद के बिना हमारा कार्य अन्तिम विजय प्राप्त नहीं कर सकेगा।

स्तालिन चीनी जनता के मुक्ति-कार्य के सच्चे मित्र हैं। स्तालिन के प्रति चीनी जनता के हार्दिक प्रेम व आदर-भाव को तथा सोवियत संघ के प्रति हमारी सच्ची मैत्री को, फूट डालने की किसी भी किस्म की कोशिशों, अफवाहों व लांछनों के जरिए हरगिज आंच नहीं आ सकती।

नोट

[१] ली लिन-फ़ू (ईसा की आठवीं शताब्दी) थाङ वंश के सम्राट श्वान चुङ का प्रधान मन्त्री था। "चि च थुङ च्येन" नामक ग्रन्थावली में उसके विषय में इस प्रकार लिखा गया है : "प्रधान मन्त्री ली लिन-फ़ू ने हर तरीके से उन तमाम लोगों को खत्म कराने की कोशिश की, जो योग्यता और शोहरत में उससे बढ़कर थे, सम्राट के कृपापात्र थे और उसके लिए एक खतरा थे। विशेषकर वह विद्वानों से ईर्ष्या करता था। दिखावटी तौर पर वह उनके सामने मीठी बातें करता था और सदगुणी बनता था, लेकिन गुप्त रूप से उनके विरुद्ध साजिशें रचता था। इसलिए वह अपने समकालीन लोगों में 'मुंह में राम, बगल में छुरी' वाला व्यक्ति कहलाता था।"

नारमन बेथ्यून की स्मृति में

२१ दिसम्बर १९३९

कामरेड नारमन बेथ्यून[१] केनेडियन कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य थे। उनकी उम्र लगभग पचास साल की थी जब उन्हें केनेडियन कम्युनिस्ट पार्टी और अमरीकी कम्युनिस्ट पार्टी ने चीन भेजा। उन्होंने जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में चीन की मदद करने के लिए हजारों मील का रास्ता तय करने का कष्ट उठाया। पिछले साल वसन्त में वे येनान पहुंचे और बाद में ऊथाए पर्वत में काम करने चले गए, जहां अपनी ड्यूटी पर काम करते हुए दुर्भाग्यवश उनका देहान्त हो गया। आखिर वह कौन सी भावना है जिससे प्रेरित होकर एक विदेशी ने चीनी जनता के मुक्ति-कार्य को निस्वार्थ भावना के साथ अपना खुद का कार्य समझ लिया? वह अन्तरराष्ट्र-वादी भावना है, कम्युनिस्ट भावना है, जिससे हर चीनी कम्युनिस्ट को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। लेनिनवाद हमें यह सिखाता है कि पूंजीवादी देशों के सर्वहारा वर्ग को उपनिवेशों व अर्ध-उपनिवेशों की जनता के मुक्ति-संघर्ष का समर्थन करना चाहिए और उपनिवेशों व अर्ध-उपनिवेशों के सर्वहारा वर्ग को पूंजीवादी देशों के सर्वहारा वर्ग के मुक्ति-संघर्ष का समर्थन करना चाहिए; सिर्फ तभी विश्व-क्रान्ति विजयी हो सकती है।[२] कामरेड बेथ्यून ने इस लेनिनवादी कार्यदिशा पर अमल किया। हम चीनी कम्युनिस्टों को भी इस

कार्यदिशा पर अमल करना चाहिए। हमें सभी पूंजीवादी देशों के सर्वहारा वर्ग के साथ, जापान, बरतानिया, अमरीका, जर्मनी, इटली और अन्य सभी पूंजीवादी देशों के सर्वहारा वर्ग के साथ एकता कायम कर लेनी चाहिए ; तभी हम साम्राज्यवाद का तख्ता उलटने, अपने राष्ट्र और अपनी जनता को मुक्त कराने तथा दुनिया के अन्य राष्ट्रों व जनगण को मुक्त कराने में कामयाबी हासिल कर सकेंगे। यही हमारा अन्तरराष्ट्रवाद है, एक ऐसा अन्तरराष्ट्रवाद जिसके जरिए हम संकीर्ण राष्ट्रवाद और संकीर्ण देशभक्ति का विरोध करते हैं।

कामरेड बेथ्यून की भावना, बिना किसी स्वार्थ के दिलोजान से दूसरों की सेवा करने की उनकी भावना, असीमित जिम्मेदारी के साथ काम करने तथा सभी साथियों और जनता के प्रति असीमित स्नेह रखने के रवैये के रूप में प्रकट हुई। हरेक कम्युनिस्ट को उनसे सीखना चाहिए। ऐसे लोगों की तादाद कम नहीं है जो गैरजिम्मेदारी से काम करते हैं, भारी काम के बदले हल्के काम करना पसन्द करते हैं, भारी काम दूसरों के मत्थे मढ़ देते हैं और हल्के काम खुद चुन लेते हैं। ऐसे लोग हर मौके पर दूसरों के मुकाबले अपने ही हित को प्रमुखता देते हैं। जब कभी वे मामूली सा भी योगदान करते हैं, तो घमण्ड में चूर हो जाते हैं और अपने योगदान का ढोल पीटते फिरते हैं, इस डर से कि कहीं ऐसा न हो कि दूसरों को इसका पता ही न लगे। वे साथियों और जनता के प्रति गरम-जोशी नहीं बल्कि रुखाई, उदासीनता और अन्यमनस्कता का रवैया अपनाते हैं। वास्तव में ऐसे लोग कम्युनिस्ट नहीं हैं, अथवा कम से कम यह तो कह सकते हैं कि वे सच्चे कम्युनिस्ट नहीं हैं। युद्ध के मोर्चे से लौटने वाले लोग

जब भी बेथ्यून की चर्चा करते हैं, उनमें कोई भी ऐसा नहीं जो उनकी भरपूर तारीफ न करता हो और उनकी भावना से प्रभावित न हुआ हो। शानशी-छाहाड़-हपे सीमान्त क्षेत्र के जिस किसी भी सैनिक या सिविलियन ने डाक्टर बेथ्यून से इलाज कराया है और जिस किसी ने भी उन्हें काम करते देखा है, उनमें कोई ऐसा नहीं जो उनकी भावना से प्रभावित न हुआ हो। हरेक कम्युनिस्ट को कामरेड बेथ्यून की इस सच्ची कम्युनिस्ट भावना से अवश्य शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

कामरेड बेथ्यून एक डाक्टर थे, चिकित्सा उनका पेशा था और वे अपनी चिकित्सा-तकनीक के स्तर को लगातार उन्नत करते जाते थे ; आठवीं राह सेना के तमाम चिकित्सकों में उनका चिकित्सा-स्तर बहुत ऊंचा था। यह उन लोगों के लिए एक बहुत ही अच्छा सबक है जो कोई अन्य काम देखते ही अपना काम बदल देना चाहते हैं और जो तकनीकी काम को तुच्छ और भविष्यहीन समझते हुए उसकी उपेक्षा करते हैं।

कामरेड बेथ्यून से मेरी केवल एक बार मुलाकात हुई थी। इसके बाद उन्होंने मुझे अनेक पत्र लिखे। लेकिन काम में व्यस्त रहने के कारण मैं उन्हें केवल एक ही पत्र भेज सका, और वह भी न जाने उन्हें मिला या नहीं। उनकी मृत्यु से मुझे बेहद दुख हुआ है। आज हम सब लोग उनका स्मरण कर रहे हैं, जिससे यह जाहिर होता है कि उनकी भावना का लोगों पर कितना गहरा प्रभाव पड़ा है। हम सबको उनकी पूर्ण निस्वार्थता की भावना से सीखना चाहिए। इस भावना से काम करने वाला हर आदमी जनता के लिए बहुत उपयोगी साबित हो सकता है। आदमी की योग्यता ज्यादा अथवा

कम हो सकती है, लेकिन अगर उसमें यह भावना हो, तो वह एक उदात्त, शुद्धहृदय, चरित्रवान और हीन रुचियों से अलग रहने वाला व्यक्ति बन जाता है तथा एक ऐसा व्यक्ति बन जाता है जो जनता के लिए अत्यन्त मूल्यवान है।

नोट

१ मशहूर डाक्टर नारमन बेथ्यून केनेडियन कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य थे। १९३६ में, जब जर्मन और इटालवी फासिस्ट लुटेरों ने स्पेन पर आक्रमण किया, उस समय उन्होंने मोर्चे पर जाकर फासिस्ट-विरोधी स्पेनी जनता की खिदमत में काम किया। १९३७ में चीन का जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध शुरू होने के बाद, वे केनेडियनों और अमरीकियों का एक चिकित्सा-दल लेकर चीन के मुक्त क्षेत्र में आ पहुंचे। अप्रैल १९३८ में वे येनान से शानशी-छाहाड़-हपे सीमान्त क्षेत्र में चले गए जहां उन्होंने लगभग दो साल तक कार्य किया। उनकी आत्म-बलिदान की भावना, काम के प्रति उत्साह और जिम्मेदारी की भावना, ये सभी हमारे सामने एक आदर्श उपस्थित करते हैं। एक घायल सिपाही का आपरेशन करते समय उनके रक्त में विष फैल गया और १२ नवम्बर १९३९ को हपे प्रान्त की थाडश्येन काउन्टी में उनका देहान्त हो गया।

२ देखिए: जे० वी० स्तालिन, "लेनिनवाद के आधारभूत सिद्धान्त" का छठा भाग "राष्ट्र का सवाल"।

नव-जनवाद के बारे में

जनवरी १९४०

१. चीन किधर?

जब से प्रतिरोध-युद्ध शुरू हुआ तब से सारे देश में एक सजीव वातावरण छा गया है, लोगों में यह भावना पैदा हो गई है कि गतिरोध से बाहर निकलने की राह ढूंढ़ ली गई है, और अब लोग निराश होकर माथे पर बल नहीं पड़ने देते। लेकिन, इधर कुछ समय से सुलह-समझौते और कम्युनिज्म-विरोध का शोरगुल एक बार फिर वातावरण में फैल गया है, और लोग एक बार फिर भ्रमित हो उठे हैं। सबसे ज्यादा संवेदनशील और सबसे पहले प्रभावित होने वाले लोग हैं सांस्कृतिक जगत के लोग तथा नौजवान छात्र। अतएव एक बार फिर यह सवाल उठता है: क्या किया जाए? चीन किधर जा रहा है? इसलिए, "चीनी संस्कृति"[१] के प्रकाशन के अवसर पर, चीन के राजनीतिक तथा सांस्कृतिक रुझानों को स्पष्ट करना लाभप्रद हो सकता है। मैं संस्कृति के मामलों में अनभिज्ञ हूं; मैं उनका अध्ययन करना चाहता हूं, लेकिन अभी मैंने ऐसा करना शुरू ही किया है। सौभाग्यवश, येनान में ऐसे अनेक साथी मौजूद हैं जिन्होंने इस क्षेत्र में विस्तारपूर्वक लिखा है, अतएव मेरे अनगढ़ शब्द वही काम अंजाम दे सकते हैं जैसा कि किसी रंगमंचीय कार्यक्रम

के पहले घड़ियालों का बजाया जाना। हो सकता है कि राष्ट्र के सांस्कृतिक जगत के प्रगतिशील लोगों के लिए हमारी बातों में सत्य का एक कण मौजूद हो, और हो सकता है कि ये बातें उन्हें खुद अपने मूल्यवान योगदान के साथ आगे आने के लिए एक हल्का प्रोत्साहन दें, तथा हम आशा करते हैं कि वे लोग ऐसे सही निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए जो हमारी राष्ट्रीय आवश्यकताओं को पूरा कर सकें, हमारे साथ बहस में शामिल होंगे। "तथ्यों से सत्य की तलाश करना" एक वैज्ञानिक रुख है, और बड़ी ढिठाई के साथ त्रुटिहीनता का दावा करने तथा जनता के सामने व्याख्यान झाड़ने जैसे वहशियाना रुख से कभी भी मामला तय नहीं हो सकेगा। जो मुसीबतें हमारे राष्ट्र पर आ पड़ी हैं वे अत्यन्त गम्भीर हैं, और केवल एक वैज्ञानिक रुख तथा उत्तरदायित्व की भावना ही उसे मुक्ति-पथ पर आगे ले जा सकती है। सत्य केवल एक ही है, और यह प्रश्न कि कोई उस पर पहुंच गया है या नहीं, मनोगत गर्वोक्ति पर नहीं वस्तुगत व्यवहार पर निर्भर करता है। सत्य की एकमात्र कसौटी करोड़ों लोगों का क्रान्तिकारी व्यवहार है। मैं समझता हूं कि इस बात को "चीनी संस्कृति" का रुख माना जा सकता है।

२. हम एक नए चीन का निर्माण करना चाहते हैं

हम कम्युनिस्ट अनेकों वर्षों से न केवल एक राजनीतिक तथा आर्थिक क्रान्ति के लिए बल्कि एक सांस्कृतिक क्रान्ति के लिए भी संघर्ष करते आए हैं। और हमारा ध्येय है चीनी राष्ट्र के लिए एक नए समाज तथा एक नए राज्य का निर्माण करना। उस नए समाज

तथा नए राज्य की न केवल एक नई राजनीति होगी तथा एक नया अर्थतंत्र होगा, बल्कि एक नई संस्कृति भी होगी। दूसरे शब्दों में, हम न केवल यह चाहते हैं कि राजनीतिक रूप से उत्पीड़ित तथा आर्थिक रूप से शोषित चीन को राजनीतिक रूप से स्वतंत्र तथा आर्थिक रूप से समृद्ध चीन में बदल दें, बल्कि यह भी चाहते हैं कि एक ऐसे चीन को जो पुरानी संस्कृति के प्रभुत्व में ज्ञानशून्य और पिछड़ा हुआ रहा है, नई संस्कृति के प्रभुत्व में एक ज्ञानसम्पन्न तथा प्रगतिशील चीन में बदल दें। संक्षेप में, हम एक नए चीन का निर्माण करना चाहते हैं। सांस्कृतिक क्षेत्र में हमारा ध्येय एक नई चीनी राष्ट्रीय संस्कृति का निर्माण करना है।

३. चीन की ऐतिहासिक विशिष्टताएं

हम एक नई राष्ट्रीय संस्कृति का निर्माण करना चाहते हैं, लेकिन वह संस्कृति आखिर किस प्रकार की होनी चाहिए?

कोई भी संस्कृति-विशेष (एक विचारधारात्मक रूप की दृष्टि से) एक समाज-विशेष की राजनीति तथा अर्थतंत्र का ही प्रतिबिम्ब होती है, और बदले में उसका उस समाज-विशेष की राजनीति और अर्थतंत्र पर एक जबरदस्त प्रभाव और असर पड़ता है; लेकिन अर्थतंत्र आधार होता है और राजनीति अर्थतंत्र की केन्द्रित अभिव्यक्ति। यह राजनीति और अर्थतंत्र के साथ संस्कृति के सम्बन्ध तथा अर्थतंत्र के साथ राजनीति के सम्बन्ध के बारे में हमारा बुनियादी दृष्टिकोण है। इससे यह नतीजा निकलता है कि संस्कृति का रूप पहले राजनीतिक तथा आर्थिक रूप द्वारा निश्चित होता है, और

केवल इसके बाद ही वह एक राजनीतिक तथा आर्थिक रूप पर क्रियाशील होता है और उसे प्रभावित करता है। मार्क्स ने कहा है: "मनुष्य की चेतना उसके अस्तित्व को निश्चित नहीं करती, बल्कि इसके विपरीत, उसका सामाजिक अस्तित्व उसकी चेतना को निश्चित करता है।"[१] उन्होंने यह भी कहा है: "दार्शनिकों ने तरह-तरह से दुनिया की सिर्फ व्याख्या ही की है; लेकिन मसला उसे बदलने का है।"[१] इन वैज्ञानिक स्थापनाओं ने मानव इतिहास में पहली बार चेतना और अस्तित्व के बीच के सम्बन्धों की समस्या को सही तौर पर हल किया है, और ये स्थापनाएं यथार्थ के प्रतिबिम्ब के रूप में ज्ञान के उस गत्यात्मक क्रान्तिकारी सिद्धान्त में निहित बुनियादी धारणाएं हैं जिसकी आगे चलकर लेनिन ने गहन रूप से व्याख्या की। चीन की सांस्कृतिक समस्याओं का विवेचन करते समय हमें इन बुनियादी धारणाओं को निश्चित रूप से ध्यान में रखना चाहिए।

इस प्रकार यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि चीन की पुरानी राष्ट्रीय संस्कृति के प्रतिक्रियावादी तत्व, जिन्हें हम बहिष्कृत करना चाहते हैं, पुरानी राष्ट्रीय राजनीति तथा अर्थतंत्र के साथ अविभाज्य रूप से जुड़े हुए हैं, जबकि नई राष्ट्रीय संस्कृति, जिसका हम निर्माण करना चाहते हैं, नई राष्ट्रीय राजनीति तथा अर्थतंत्र के साथ अविभाज्य रूप से जुड़ी हुई है। चीनी राष्ट्र की पुरानी राजनीति व अर्थतंत्र उसकी पुरानी संस्कृति का आधार बने हैं, ठीक वैसे ही जैसे उसकी नई राजनीति व अर्थतंत्र उसकी नई संस्कृति का आधार बनेंगे।

चीन की पुरानी राजनीति तथा अर्थतंत्र क्या हैं? और उसकी

पुरानी संस्कृति क्या है?

चओ और छिन राजवंशों के जमाने से चीनी समाज एक सामन्ती समाज था, उसी तरह जैसे उसकी राजनीति तथा अर्थतंत्र भी सामन्ती थे। और राजनीति तथा अर्थतंत्र को प्रतिबिम्बित करने वाली प्रधान संस्कृति एक सामन्ती संस्कृति थी।

चीन पर विदेशी पूंजीवाद के आक्रमण और चीनी समाज में पूंजीवादी तत्वों के क्रमिक विकास के समय से, यह देश धीरे-धीरे एक औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती समाज में बदल गया है। चीन आज जापान-अधिकृत क्षेत्रों में औपनिवेशिक है, क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में बुनियादी तौर पर अर्ध-औपनिवेशिक है, और इन दोनों ही क्षेत्रों में प्रधानतया सामन्ती अथवा अर्ध-सामन्ती है। यह है आज के चीनी समाज का स्वरूप और हमारे देश की स्थिति। इस समाज की राजनीति तथा अर्थतंत्र प्रधानतया औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती हैं, और इस राजनीति तथा अर्थतंत्र को प्रतिबिम्बित करने वाली प्रधान संस्कृति भी औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती है।

ये प्रधान राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक रूप ही हमारी क्रान्ति के प्रहार के निशाने हैं। जिस चीज को हम दूर करना चाहते हैं वह है पुरानी औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती राजनीति एवं अर्थतंत्र और इनकी सेवा में संलग्न पुरानी संस्कृति। और जिस चीज का हम निर्माण करना चाहते हैं वह इनके ठीक विपरीत है, अर्थात, चीनी राष्ट्र की नई राजनीति, नया अर्थतंत्र और नई संस्कृति।

तब फिर, चीनी राष्ट्र की नई राजनीति तथा नया अर्थतंत्र

क्या हैं, और उसकी नई संस्कृति क्या है ?

अपने इतिहास के दौरान चीनी क्रान्ति को अनिवार्यतः दो मंजिलों से गुजरना होगा, पहली मंजिल है जनवादी क्रान्ति और दूसरी समाजवादी क्रान्ति ; ये दोनों ही अपने स्वरूप में भिन्न दो क्रान्तिकारी प्रक्रियाएं हैं। यहां जनवाद पुरानी श्रेणी का यानी पुराना जनवाद नहीं, बल्कि नई श्रेणी का यानी नया जनवाद है।

इस प्रकार यह बात दावे के साथ कही जा सकती है कि चीन की नई राजनीति नव-जनवाद की राजनीति है, चीन का नया अर्थतंत्र नव-जनवाद का अर्थतंत्र है और चीन की नई संस्कृति नव-जनवाद की संस्कृति है।

मौजूदा समय में चीनी क्रान्ति की ऐतिहासिक विशिष्टताएं ऐसी ही हैं। चीनी क्रान्ति में भाग लेने वाली किसी भी राजनीतिक पार्टी, ग्रुप अथवा व्यक्ति को, जो इस बात को समझने में असफल रहेगा, क्रान्ति का निर्देशन करने और उसे विजय तक ले जाने में कामयाबी हासिल नहीं होगी, और उसे जनता अलग फेंक देगी और वह सिर धुनता रह जाएगा।

४. चीनी क्रान्ति विश्व-क्रान्ति का एक अंग है

चीनी क्रान्ति की ऐतिहासिक विशिष्टता यह है कि वह दो मंजिलों, जनवाद तथा समाजवाद, में विभाजित है ; इनमें से पहला अब सामान्य जनवाद नहीं है, बल्कि चीनी किस्म का जनवाद, एक नए और विशेष प्रकार का जनवाद, अर्थात नव-जनवाद है। तब फिर, यह ऐतिहासिक विशिष्टता कैसे अस्तित्व में आई ? क्या यह पिछले सौ वर्ष से अस्तित्व में है, अथवा हाल ही की उपज है ?

चीन के और विश्व के ऐतिहासिक विकास के संक्षिप्त अध्ययन से यह मालूम हो जाता है कि यह विशिष्टता अफीम युद्ध के तुरन्त बाद नहीं प्रकट हुई, बल्कि बाद में, प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध और रूस की अक्तूबर क्रान्ति के बाद अस्तित्व में आई। आइए, अब हम इसकी उत्पत्ति की प्रक्रिया पर गौर करें।

स्पष्टतः, मौजूदा चीनी समाज के औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती स्वरूप से यह बात निश्चित हो जाती है कि चीनी क्रान्ति को अनिवार्य रूप से दो मंजिलों में विभाजित किया जाना चाहिए। पहला कदम है समाज के औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती रूप को एक स्वाधीन जनवादी समाज में बदल देना। दूसरा कदम है क्रान्ति को आगे ले जाना और एक समाजवादी समाज का निर्माण करना। इस समय चीनी क्रान्ति पहला कदम उठा रही है।

पहले कदम के लिए तैयारी की अवधि १८४० के अफीम युद्ध से शुरू हुई, अर्थात जब चीन का सामन्ती समाज एक अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती समाज में बदलना शुरू हुआ। इस अवधि के दौरान थाइफिङ स्वर्गिक राज्य का आन्दोलन, चीन-फ्रांस युद्ध, चीन-जापान युद्ध, १८९८ का सुधारवादी आन्दोलन, १९११ की क्रान्ति, ४ मई आन्दोलन, उत्तरी अभियान, भूमि-क्रान्ति युद्ध और जापान के खिलाफ मौजूदा प्रतिरोध-युद्ध हुए। इन्होंने मिलकर पूरी एक शताब्दी ले ली और एक मायने में ये इसी पहले कदम के द्योतक हैं, चीनी जनता द्वारा विभिन्न अवसरों पर तथा विभिन्न सीमाओं तक उठाए गए पहले कदम के द्योतक हैं, जिसे उसने एक

स्वाधीन जनवादी समाज का निर्माण करने और पहली क्रान्ति को पूरा करने के हेतु साम्राज्यवाद तथा सामन्ती शक्तियों के विरुद्ध चलाए जाने वाले संघर्ष के रूप में उठाया। १९११ की क्रान्ति अपेक्षाकृत पूर्ण अर्थ में उस क्रान्ति की शुरुआत थी। अपने सामाजिक स्वरूप में यह क्रान्ति एक पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति है, एक सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति नहीं। यह क्रान्ति अभी पूरी नहीं हुई है और इसमें अभी भी भारी प्रयत्नों की जरूरत है, क्योंकि आज तक भी इसके शत्रु अत्यधिक शक्तिशाली हैं। जब डा० सुन यात-सेन ने यह कहा था कि "क्रान्ति अभी पूरी नहीं हुई, मेरे सब साथियों को कोशिश जारी रखनी चाहिए", तो वे पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति का ही जिक्र कर रहे थे।

किन्तु १९१४ में प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध के छिड़ने और १९१७ की रूसी अक्तूबर क्रान्ति के फलस्वरूप भूमण्डल के छठे भाग पर एक समाजवादी राज्य की स्थापना होने के बाद, चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति में एक परिवर्तन आया।

इन घटनाओं से पहले, चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति विश्व की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की पुरानी श्रेणी के ही अन्दर आती थी, जिसका यह एक अंग थी।

इन घटनाओं के बाद से, चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति बदलकर पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की नई श्रेणी के अन्दर आ गई है, और जहां तक क्रान्तिकारी शक्तियों की कतारबन्दी का सम्बन्ध है, यह विश्व की सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति का अंग बन गई है।

ऐसा क्यों हुआ है? क्योंकि प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध ने

और प्रथम विजयी समाजवादी क्रान्ति, यानी अक्तूबर क्रान्ति ने विश्व इतिहास की समूची धारा को बदल दिया है और एक नए युग का सूत्रपात कर दिया है।

यह एक ऐसा युग है जिसमें विश्व पूंजीवादी मोर्चा भूमण्डल के एक भाग में (दुनिया के छठे भाग में) धराशायी हो गया है और अन्य भागों में अपनी पतनोन्मुखता को पूरी तरह प्रकट कर चुका है, जिसमें बाकी बचे हुए पूंजीवादी भाग उपनिवेशों तथा अर्ध-उपनिवेशों पर और अधिक निर्भर रहे बिना अपना अस्तित्व कायम नहीं रख सकते, जिसमें एक समाजवादी राज्य स्थापित हो चुका है और यह घोषणा कर चुका है कि वह तमाम उपनिवेशों व अर्ध-उपनिवेशों के मुक्ति-आन्दोलन का सक्रियता से समर्थन करेगा, और जिसमें पूंजीवादी देशों का सर्वहारा वर्ग दिन-ब-दिन अपने आपको सामाजिक-साम्राज्यवादी स्वरूप वाली सामाजिक-जनवादी पार्टियों के प्रभाव से मुक्त करता जा रहा है और उपनिवेशों व अर्ध-उपनिवेशों के मुक्ति-आन्दोलन के प्रति अपने समर्थन का ऐलान कर चुका है। इस युग में, किसी भी औपनिवेशिक अथवा अर्ध-औपनिवेशिक देश की कोई भी क्रान्ति, जो साम्राज्यवाद अर्थात अन्तरराष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग अथवा अन्तरराष्ट्रीय पूंजीवाद के विरुद्ध हो, पूंजीवादी-जनवादी विश्व-क्रान्ति की पुरानी श्रेणी में नहीं आती, बल्कि नई श्रेणी में आती है। वह अब पुरानी किस्म की पूंजीपति वर्ग की या पूंजीवादी विश्व-क्रान्ति का हिस्सा नहीं है, बल्कि नई विश्व-क्रान्ति यानी विश्व की सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति का हिस्सा है। इस प्रकार के क्रान्तिकारी उपनिवेशों व अर्ध-उपनिवेशों को अब विश्व पूंजीवाद के प्रतिक्रान्तिकारी मोर्चे के संश्रयकारी नहीं समझा जा

सकता ; वे विश्व समाजवाद के क्रान्तिकारी मोर्चे के संश्रयकारी बन गए हैं।

यद्यपि एक औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक देश में ऐसी क्रान्ति अपनी पहली मंजिल अथवा पहले कदम के दौरान अपने सामाजिक स्वरूप में अभी भी बुनियादी तौर पर पूंजीवादी-जनवादी ही है, और यद्यपि इसका वस्तुगत उद्देश्य पूंजीवाद के विकास के लिए रास्ता साफ करना ही है, फिर भी अब यह क्रान्ति पूंजीपति वर्ग के नेतृत्व में चलने वाली एक ऐसी पुरानी किस्म की क्रान्ति नहीं है जिसका ध्येय एक पूंजीवादी समाज की और पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाले राज्य की स्थापना करना है। यह सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में एक नई किस्म की क्रान्ति है जिसका ध्येय, पहली मंजिल में, एक नव-जनवादी समाज की और तमाम क्रान्तिकारी वर्गों के संयुक्त अधिनायकत्व वाले राज्य की स्थापना करना है। इस प्रकार, यह क्रान्ति वस्तुतः समाजवाद के विकास के पथ को और अधिक प्रशस्त कर देती है। इसकी प्रगति के दौरान, शत्रु के पक्ष में और हमारे संश्रयकारियों की पांतों के अन्दर होने वाले परिवर्तनों के कारण, इस क्रान्ति की और भी अनेक उप-मंजिलें हो सकती हैं, लेकिन इसका बुनियादी स्वरूप फिर भी अपरिवर्तित रहता है।

ऐसी क्रान्ति साम्राज्यवाद पर भरपूर कुठाराघात करती है, और इसलिए साम्राज्यवाद इसे सहन नहीं करता बल्कि इसका विरोध करता है। लेकिन, समाजवाद इसे स्वीकृति देता है और समाजवादी देश तथा समाजवादी अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग इसका समर्थन करते हैं।

इसलिए, ऐसी क्रान्ति अनिवार्य रूप से सर्वहारा-समाजवादी

विश्व-क्रान्ति का अंग बन जाती है।

यह सही स्थापना कि "चीनी क्रान्ति विश्व-क्रान्ति का एक अंग है", चीन की प्रथम महान क्रान्ति के दौरान १९२४-२७ में ही पेश की जा चुकी थी। इसे चीनी कम्युनिस्टों ने प्रस्तुत किया था और उस समय के साम्राज्यवाद-विरोधी तथा सामन्तवाद-विरोधी संघर्ष में भाग लेने वाले सभी लोगों ने इसका अनुमोदन किया था। लेकिन, इस स्थापना के महत्व को उन दिनों पूरी तरह स्पष्ट नहीं किया गया, जिसके परिणामस्वरूप इसे केवल अस्पष्ट रूप से ही समझा जा सका था।

यहां "विश्व-क्रान्ति" का तात्पर्य पुरानी विश्व-क्रान्ति से नहीं है, क्योंकि पुरानी पूंजीवादी विश्व-क्रान्ति बहुत पहले ही समाप्त हो चुकी है ; बल्कि इसका तात्पर्य नई विश्व-क्रान्ति, समाजवादी विश्व-क्रान्ति से है। इसी प्रकार, "एक अंग" का तात्पर्य पुरानी पूंजीवादी क्रान्ति के नहीं बल्कि नई समाजवादी क्रान्ति के एक अंग से है। यह एक जबरदस्त परिवर्तन है जो चीन और विश्व के इतिहास में अनुपम है।

चीनी कम्युनिस्टों द्वारा प्रस्तुत यह सही स्थापना स्तालिन के सिद्धान्त पर आधारित है।

१९१८ में ही, अक्तूबर क्रान्ति की प्रथम वर्षगांठ के उपलक्ष में लिखे गए एक लेख में स्तालिन ने कहा था :

> अक्तूबर क्रान्ति का महान विश्वव्यापी महत्व मुख्यतया इस बात में निहित है कि :
>
> (१) इसने राष्ट्रीय सवाल के दायरे को व्यापकतर बना

दिया है और उसे योरप में राष्ट्रीय उत्पीड़न का मुकाबला करने के खास प्रश्न से उत्पीड़ित जनगण, उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों को साम्राज्यवाद से मुक्त कराने के आम प्रश्न में परिवर्तित कर दिया है ;

(२) इसने उनकी मुक्ति के लिए व्यापक सम्भावनाएं पैदा कर दी हैं और उसकी ओर बढ़ने के लिए सही रास्ते खोल दिए हैं, और इस तरह पश्चिम तथा पूर्व के उत्पीड़ित जनगण के मुक्ति-कार्य को अत्यधिक आगे बढ़ाया है और उन्हें साम्राज्य-वाद के खिलाफ विजयी संघर्ष की विशाल धारा में सम्मिलित कर दिया है ;

(३) परिणामस्वरूप, इसने विश्व साम्राज्यवाद के विरुद्ध क्रान्तियों के एक नए मोर्चे की रचना करके, जो पश्चिम के सर्वहारा से लेकर, रूसी क्रान्ति से होते हुए, पूर्व के उत्पीड़ित जनगण तक फैला हुआ है, समाजवादी पश्चिम तथा गुलामी में जकड़े हुए पूर्व के बीच एक पुल का निर्माण किया है।[४]

उक्त लेख लिखने के बाद से स्तालिन ने अनेक बार इस सिद्धान्त की स्पष्ट व्याख्या की है कि उपनिवेशों तथा अर्ध-उपनिवेशों में क्रान्तियां पुरानी श्रेणी से नाता तोड़ चुकी हैं और सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति का अंग बन गई हैं। सबसे स्पष्ट और सबसे सूक्ष्म व्याख्या ३० जून १९२५ को प्रकाशित एक लेख में प्रस्तुत की गई, जिसमें स्तालिन ने उस समय के यूगोस्लाव राष्ट्रवादियों के साथ एक विवाद चलाया था। यह लेख, जिसका शीर्षक है "राष्ट्रीय सवाल एक बार फिर", चाङ चुङ-श द्वारा अनूदित "राष्ट्रीय सवाल के

बारे में स्तालिन के विचार" नामक एक पुस्तक में शामिल किया गया है। इसमें निम्नलिखित लेखांश शामिल है :

सेमिच ने स्तालिन की पुस्तिका "मार्क्सवाद और राष्ट्रीय सवाल" के, जो १९१२ के अन्त में लिखी गई थी, एक लेखांश का हवाला दिया है। उसमें कहा गया है कि "उदीयमान पूंजीवाद की स्थिति में राष्ट्रीय संघर्ष पूंजीपति वर्गों का आपस का संघर्ष होता है।" स्पष्टतया, इसके द्वारा सेमिच यह सुझाने की कोशिश कर रहा है कि मौजूदा ऐतिहासिक स्थिति में राष्ट्रीय आन्दोलन के सामाजिक महत्व की व्याख्या करने वाला उसका फार्मूला सही है। लेकिन स्तालिन की यह पुस्तिका साम्राज्यवादी युद्ध से पहले लिखी गई थी, जब राष्ट्रीय सवाल को मार्क्सवादियों द्वारा अभी विश्वव्यापी महत्व का प्रश्न नहीं समझा जाता था, जब आत्मनिर्णय के अधिकार के लिए मार्क्सवादियों की बुनियादी मांग को सर्वहारा क्रान्ति का अंग नहीं बल्कि पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति का अंग माना जाता था। इस बात को न देखना हास्यास्पद होगा कि तब से अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति मूल रूप से बदल गई है, कि एक ओर तो युद्ध ने और दूसरी ओर रूस में अक्तूबर क्रान्ति ने राष्ट्रीय सवाल को पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के एक अंग से सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति के एक अंग में परिणत कर दिया है। अक्तूबर १९१६ में ही, "आत्मनिर्णय के बारे में किए गए विचार-विमर्श का सारांश" शीर्षक अपने लेख में लेनिन ने कहा था कि राष्ट्रीय सवाल का मुख्य मुद्दा, आत्मनिर्णय का अधिकार, अब आम जनवादी आन्दोलन का हिस्सा नहीं रह

गया है, यह आम सर्वहारा वर्ग का, समाजवादी क्रान्ति का एक अंगभूत हिस्सा बन चुका है। राष्ट्रीय सवाल पर लेनिन की और रूसी कम्युनिज्म के अन्य प्रतिनिधियों की बाद की रचनाओं का मैं जिक्र तक नहीं कर रहा। इस सबके बाद, आज, जबकि एक नई ऐतिहासिक स्थिति के परिणामस्वरूप हम एक नए युग में, सर्वहारा क्रान्ति के युग में पदार्पण कर चुके हैं, रूस में पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के जमाने में लिखी गई स्तालिन की पुस्तिका के लेखांश के सेमिच द्वारा दिए गए हवाले का क्या अर्थ हो सकता है? इसका अर्थ सिर्फ यह हो सकता है कि सेमिच स्थान और काल के बाहर, जीवन्त ऐतिहासिक स्थिति पर ध्यान दिए बगैर उद्धरण देता है और फलतः द्वन्द्ववाद की सबसे बुनियादी आवश्यकताओं का उल्लंघन करता है, और इस तथ्य को नजरअन्दाज करता है कि जो बात किसी एक ऐतिहासिक स्थिति के लिए सही है वह किसी अन्य ऐतिहासिक स्थिति में गलत साबित हो सकती है।

इससे यह देखा जा सकता है कि विश्व-क्रान्तियां दो प्रकार की हैं, जिनमें से पहली पूंजीपति वर्ग की अथवा पूंजीवादी श्रेणी की है। इस प्रकार की विश्व-क्रान्ति का युग काफी अरसा पहले ही बीत चुका है; वह १९१४ में ही, जब प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध छिड़ा, और विशेष रूप से १९१७ में, जब रूसी अक्तूबर क्रान्ति हुई, समाप्त हो गया। इसके बाद दूसरी किस्म की विश्व-क्रान्ति, यानी सर्वहारा-समाजवादी विश्व-क्रान्ति शुरू हुई। पूंजीवादी देशों का सर्वहारा वर्ग इस क्रान्ति की मुख्य शक्ति है और उपनिवेशों

तथा अर्ध-उपनिवेशों का उत्पीड़ित जनगण इसका संश्रयकारी है। किसी उत्पीड़ित राष्ट्र के चाहे कोई भी वर्ग, पार्टियां अथवा व्यक्ति क्रान्ति में शामिल होते हों, और चाहे वे खुद इस मुद्दे के प्रति सचेत हों अथवा न हों, उसे समझते हों अथवा न समझते हों, जब तक वे साम्राज्यवाद का विरोध करते हैं, उनकी क्रान्ति सर्वहारा-समाजवादी विश्व-क्रान्ति का अंग बन जाती है और वे उसके संश्रयकारी बन जाते हैं।

आज, चीनी क्रान्ति का महत्व और अधिक बढ़ गया है। यह एक ऐसा समय है जबकि पूंजीवाद का आर्थिक संकट तथा राजनीतिक संकट दुनिया को दिन-ब-दिन द्वितीय विश्वयुद्ध की ओर घसीट रहे हैं, जबकि सोवियत संघ समाजवाद से कम्युनिज्म में संक्रमण करने के काल में पहुंच गया है और साम्राज्यवादी युद्ध तथा पूंजीवादी प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध लड़ने में वह सारी दुनिया के सर्वहारा वर्ग तथा उत्पीड़ित राष्ट्रों का नेतृत्व करने और सहायता करने में समर्थ है, जबकि पूंजीवादी देशों का सर्वहारा वर्ग पूंजीवाद का तख्ता उलटने और समाजवाद की स्थापना करने की तैयारी कर रहा है, और जबकि चीन में सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग, बुद्धिजीवी और निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में एक महान स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति बन गए हैं। आज, जबकि हम ऐसी स्थिति में हैं, क्या हमें यह मूल्यांकन नहीं करना चाहिए कि चीनी क्रान्ति का विश्वव्यापी महत्व और अधिक बढ़ गया है? मैं समझता हूं कि हमें ऐसा करना चाहिए। चीनी क्रान्ति विश्व-क्रान्ति का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग बन गई है।

यद्यपि चीनी क्रान्ति इस पहली मंजिल में (अपनी अनेक उप-

मंजिलों सहित) अपने सामाजिक स्वरूप में एक नई किस्म की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति है और खुद अभी तक एक सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति नहीं है, तथापि वह एक अरसा पहले ही सर्वहारा-समाजवादी विश्व-क्रान्ति का अंग बन चुकी है और अब तो वह इस विश्व-क्रान्ति का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग तथा एक महान संश्रयकारी भी बन चुकी है। हमारी क्रान्ति में पहला कदम या पहली मंजिल निश्चय ही चीनी पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाले एक पूंजीवादी समाज की स्थापना नहीं है, और हो भी नहीं सकती, बल्कि इसके परिणामस्वरूप चीनी सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में चीन के तमाम क्रान्तिकारी वर्गों के संयुक्त अधिनायकत्व वाले एक नव-जनवादी समाज की स्थापना होगी। तब क्रान्ति को आगे बढ़ाकर दूसरी मंजिल में पहुंचा दिया जाएगा, जिसमें चीन में एक समाजवादी समाज की स्थापना की जाएगी।

यह है आज की चीनी क्रान्ति की, पिछले बीस वर्षों की (१९१९ के ४ मई आन्दोलन से गणना करते हुए) नई क्रान्तिकारी प्रक्रिया की, बुनियादी विशिष्टता और उसका ठोस जीवन्त सारतत्व।

५. नव-जनवाद की राजनीति

चीनी क्रान्ति की नई ऐतिहासिक विशिष्टता यह है कि वह दो मंजिलों में विभाजित है, जिनमें से पहली मंजिल नव-जनवादी क्रान्ति है। यह विशिष्टता चीन के अन्दरूनी राजनीतिक तथा आर्थिक सम्बन्धों में अपने आपको ठोस रूप में किस तरह अभिव्यक्त करती है? आइए, हम इस प्रश्न पर विचार करें।

१९१९ के ४ मई आन्दोलन से पहले (जिसे १९१४ के प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध और १९१७ की रूसी अक्तूबर क्रान्ति के बाद चलाया गया), पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति का राजनीतिक नेतृत्व निम्न-पूंजीपति वर्ग तथा पूंजीपति वर्ग (अपने बुद्धिजीवियों के जरिए) करते थे। चीनी सर्वहारा वर्ग तब तक एक जागृत तथा स्वाधीन वर्ग-शक्ति के रूप में राजनीतिक रंगमंच पर प्रकट नहीं हुआ था, बल्कि उसने क्रान्ति में निम्न-पूंजीपति वर्ग तथा पूंजीपति वर्ग के अनुयायी की हैसियत से हिस्सा लिया था। १९११ की क्रान्ति के समय सर्वहारा वर्ग की ऐसी ही स्थिति थी।

४ मई आन्दोलन के बाद, चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति का राजनीतिक नेतृत्व पूंजीपति वर्ग के हाथ में नहीं रहा बल्कि सर्वहारा वर्ग के हाथ में आ गया, यद्यपि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग का क्रान्ति में हिस्सा लेना अभी जारी था। चीनी सर्वहारा वर्ग अपनी परिपक्वता और रूसी क्रान्ति के प्रभाव के फलस्वरूप तेजी के साथ एक जागृत तथा स्वाधीन राजनीतिक शक्ति बन गया। यह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ही थी जिसने "साम्राज्यवाद का नाश हो" का नारा पेश किया और सम्पूर्ण पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के लिए एक मुकम्मिल प्रोग्राम प्रस्तुत किया, तथा यह केवल कम्युनिस्ट पार्टी ही थी जिसने भूमि-क्रान्ति को अंजाम दिया।

एक औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक देश का पूंजीपति वर्ग होने और साम्राज्यवाद द्वारा उत्पीड़ित होने के कारण, चीन का राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग विदेशी साम्राज्यवादियों और नौकरशाहों व युद्ध-सरदारों की घरेलू सरकारों का विरोध करने में (ऐसी घरेलू सरकारों का विरोध करने के उदाहरण १९११ की क्रान्ति

और उत्तरी अभियान की अवधियों में पाए जा सकते हैं), साम्राज्यवाद के युग में भी कुछ खास अवधियों में और एक खास हद तक अपना क्रान्तिकारी गुण बनाए रखता है, और ऐसे शत्रुओं के खिलाफ जिनका वह विरोध करने को तैयार है, सर्वहारा वर्ग तथा निम्न-पूंजीपति वर्ग के साथ सहयोग कायम कर सकता है। इस दृष्टि से चीन का पूंजीपति वर्ग पुराने जारशाही रूस के पूंजीपति वर्ग से भिन्न है। चूंकि पुराना जारशाही रूस एक फौजी-सामन्ती साम्राज्यवाद था जो अन्य देशों पर आक्रमण करता था, इसलिए रूसी पूंजीपति वर्ग में क्रान्तिकारी गुण का बिलकुल अभाव था। वहां सर्वहारा वर्ग का कार्य पूंजीपति वर्ग का विरोध करना था, उसके साथ सहयोग कायम करना नहीं। लेकिन, चीन एक औपनिवेशिक तथा अर्ध-औपनिवेशिक देश है और वह दूसरों के आक्रमण का शिकार है, इसलिए उसके राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग में कुछ खास अवधियों में और एक खास हद तक क्रान्तिकारी गुण मौजूद रहता है। यहां सर्वहारा वर्ग का कार्य राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के क्रान्तिकारी गुण को नजरअन्दाज किए बिना साम्राज्यवाद के और नौकरशाहों व युद्ध-सरदारों की सरकारों के खिलाफ एक संयुक्त मोर्चा बनाना है।

लेकिन, इसके साथ ही, एक औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक देश का पूंजीपति वर्ग होने के कारण और इसलिए आर्थिक व राजनीतिक दृष्टि से अत्यधिक कमजोर होने के कारण, चीन के राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की एक और खासियत है, अर्थात क्रान्ति के शत्रुओं के साथ सुलह-समझौते करने की प्रवृत्ति। क्रान्ति में भाग लेते समय भी वह साम्राज्यवाद के साथ पूरी तरह सम्बन्ध-विच्छेद

करने के लिए अनिच्छुक रहता है, इसके अलावा देहाती क्षेत्रों में लगान के जरिए किए जाने वाले शोषण के साथ उसका निकट सम्बन्ध है; इस प्रकार वह न तो साम्राज्यवाद को पूरी तरह से उखाड़ फेंकने का इच्छुक है और न उसमें समर्थ ही, सामन्ती शक्तियों को पूरी तरह से उखाड़ फेंकना तो दरकिनार। अतएव चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की दोनों बुनियादी समस्याओं अथवा दोनों कार्यों में से किसी एक को भी राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग द्वारा हल अथवा पूरा नहीं किया जा सकता। जहां तक चीन के बड़े पूंजीपतियों के वर्ग का सम्बन्ध है, जिसका प्रतिनिधित्व क्वोमिन्ताङ करती है, वह १९२७ से १९३७ तक की समूची अवधि के दौरान साम्राज्यवाद की बांहों में शरण लिए रहा और सामन्ती शक्तियों के साथ संश्रय कायम करके क्रान्तिकारी जनता का विरोध करता रहा। १९२७ में और उसके बाद के कुछ समय तक, चीन के राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग ने भी प्रतिक्रान्ति का अनुगमन किया। मौजूदा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान, बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के उस हिस्से ने जिसका प्रतिनिधित्व वाङ चिङ-वेइ करता है, शत्रु के सामने आत्मसमर्पण कर दिया है, जो बड़े पूंजीपतियों के वर्ग द्वारा किया गया एक अन्य विश्वासघात है। इस लिहाज से चीन का पूंजीपति वर्ग योरपीय तथा अमरीकी देशों और विशेषकर फ्रांस के पूर्वकालीन पूंजीपति वर्ग से भिन्न है। उन देशों में, और विशेषकर फ्रांस में, जब पूंजीपति वर्ग अभी अपने क्रान्तिकारी युग में था तो पूंजीवादी क्रान्ति अपेक्षाकृत पूर्णता लिए हुए थी, जबकि चीन के पूंजीपति वर्ग में इस पूर्णता का भी अभाव है।

एक ओर क्रान्ति में शामिल होने की सम्भावना और दूसरी

श्रौर क्रान्ति के शत्रुओं के साथ सुलह-समझौता करने की प्रवृत्ति–ऐसा ही है चीन के पूंजीपति वर्ग का दुरंगा चरित्र, श्रौर वह दोनों श्रोर रुख किए रहता है। योरपीय तथा अमरीकी इतिहास में भी पूंजीपति वर्ग इस दुरंगे चरित्र का भागीदार रहा है। एक प्रबल शत्रु का सामना होने पर, वह शत्रु के विरुद्ध मजदूरों व किसानों के साथ एकता कायम कर लेता था, लेकिन जब मजदूर व किसान जागृत हो जाते थे, तो वह पलटकर मजदूरों व किसानों के विरुद्ध शत्रु के साथ एकता कायम कर लेता था। यह पूंजीपति वर्ग पर दुनिया में सर्वत्र लागू होने वाला एक श्राम नियम है, लेकिन चीन के पूंजीपति वर्ग में यह लक्षण अधिक प्रबल रूप से मौजूद है।

चीन में यह बात बिलकुल स्पष्ट हो गई है कि जो कोई साम्राज्यवाद श्रौर सामन्ती शक्तियों को उखाड़ फेंकने में जनता का नेतृत्व कर सकेगा वही जनता का विश्वास प्राप्त करने में समर्थ होगा, क्योंकि ये दोनों, श्रौर विशेषकर साम्राज्यवाद, जनता के घातक शत्रु हैं। श्राज, जो कोई जापानी साम्राज्यवाद को निकाल बाहर करने में जनता का नेतृत्व कर सकेगा श्रौर जनवादी सरकार कायम करने में समर्थ होगा, वही जनता का त्राता बन सकेगा। इतिहास ने सिद्ध कर दिया है कि चीन का पूंजीपति वर्ग इस जिम्मेदारी को नहीं निभा सकता; यह अनिवार्य रूप से सर्वहारा वर्ग के कन्धों पर आ पड़ी है।

इसलिए सर्वहारा वर्ग, किसान, बुद्धिजीवी तथा निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्से निस्सन्देह चीन के भाग्य का निर्णय करने वाली बुनियादी शक्तियां हैं। ये वर्ग, जिनमें से कुछ तो जागृत हो चुके हैं श्रौर अन्य जागृति की प्रक्रिया से गुजर रहे हैं, अनिवार्य रूप से चीन

जनवादी गणराज्य में राजसत्ता तथा सरकारी ढांचे के बुनियादी संघटक अंग होंगे, श्रौर उनकी नेतृत्वकारी शक्ति सर्वहारा वर्ग होगा। चीन जनवादी गणराज्य को, जिसकी हम अब स्थापना करना चाहते हैं, निश्चय ही सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में तमाम साम्राज्यवाद-विरोधी श्रौर सामन्तवाद-विरोधी लोगों के संयुक्त अधिनायकत्व के अन्तर्गत एक जनवादी गणराज्य होना चाहिए, अर्थात एक नव-जनवादी गणराज्य होना चाहिए, अपनी तीन महान नीतियों से युक्त सच्चे क्रान्तिकारी नए तीन जन-सिद्धान्तों वाला गणराज्य होना चाहिए।

यह नव-जनवादी गणराज्य एक श्रोर तो पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व के अन्तर्गत पुराने योरपीय-अमरीकी ढंग के पूंजीवादी गणराज्य से भिन्न होगा, जो एक पुराना जनवादी गणराज्य है श्रौर जो अब पुराना पड़ चुका है। दूसरी श्रोर, यह सर्वहारा अधिनायकत्व के अन्तर्गत सोवियत ढंग के समाजवादी गणराज्य से भी भिन्न होगा, जो सोवियत समाजवादी लोकतंत्र संघ में फल-फूल रहा है श्रौर जो तमाम पूंजीवादी देशों में भी स्थापित होगा श्रौर निस्सन्देह ही श्रौद्योगिक रूप से उन्नत तमाम देशों में राजसत्ता तथा सरकारी ढांचे का प्रधान रूप बन जाएगा। किन्तु एक खास ऐतिहासिक अवधि में, यह रूप श्रौपनिवेशिक तथा अर्ध-श्रौपनिवेशिक देशों की क्रान्तियों के लिए उपयुक्त नहीं है। अतः, इस अवधि के दौरान तमाम श्रौपनिवेशिक तथा अर्ध-श्रौपनिवेशिक देशों की क्रान्तियों में राज्य के एक तीसरे रूप को, अर्थात नव-जनवादी गणराज्य को ही अपनाया जाना चाहिए। यह एक खास ऐतिहासिक अवधि के लिए उपयुक्त रूप है श्रौर इसलिए एक संक्रमणकालीन रूप भी

है ; तथापि यह एक ऐसा रूप है जो आवश्यक है और जिससे बचा नहीं जा सकता।

इस प्रकार दुनिया में अनेक प्रकार के राज्य-तंत्रों को उनकी राजनीतिक सत्ता के वर्ग-स्वरूप के अनुसार तीन बुनियादी श्रेणियों में रखा जा सकता है : (१) पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाले गणराज्य ; (२) सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व वाले गणराज्य ; और (३) कई क्रान्तिकारी वर्गों के संयुक्त अधिनायकत्व वाले गणराज्य।

पहली श्रेणी में पुराने जनवादी राज्य हैं। आज, द्वितीय साम्राज्यवादी युद्ध छिड़ने के बाद से अनेक पूंजीवादी देशों में, जो पूंजीपति वर्ग के खूनी सैन्यवादी अधिनायकत्व के शासन के अन्तर्गत हैं अथवा आ रहे हैं, जनवाद का चिन्ह लेशमात्र भी नहीं रह गया है। जमींदारों तथा पूंजीपति वर्ग के संयुक्त अधिनायकत्व वाले कुछ देशों को भी इसी श्रेणी में रखा जा सकता है।

दूसरी श्रेणी का राज्य सोवियत संघ में विद्यमान है, और पूंजीवादी देशों में इसके जन्म की स्थितियां परिपक्व हो रही हैं। भविष्य में, एक खास अवधि के लिए यह रूप सारी दुनिया में राज्य का प्रधान रूप होगा।

तीसरी श्रेणी में है औपनिवेशिक तथा अर्ध-औपनिवेशिक देशों की क्रान्तियों में अपनाया जाने वाला राज्य का संक्रमणकालीन रूप। इन क्रान्तियों में प्रत्येक की अनिवार्य रूप से अपनी खुद की विशिष्टताएं होंगी, लेकिन आम विषय की दृष्टि से इनमें केवल छोटी-मोटी विभिन्नताएं ही होंगी। जब तक ये औपनिवेशिक अथवा अर्ध-औपनिवेशिक देशों की क्रान्तियां रहेंगी, इनकी राजसत्ता व

सरकारी ढांचे का रूप अनिवार्यतः बुनियादी तौर पर एक जैसा होगा, अर्थात कई साम्राज्यवाद-विरोधी वर्गों के संयुक्त अधिनायकत्व के अन्तर्गत एक नव-जनवादी राज्य। आज के चीन में, जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चा राज्य के नव-जनवादी रूप का प्रतिनिधित्व करता है। यह जापान-विरोधी और साम्राज्यवाद-विरोधी है ; यह एक संयुक्त मोर्चा भी है, कई क्रान्तिकारी वर्गों का एक संश्रय भी है। लेकिन अफसोस यह है कि इस तथ्य के बावजूद कि प्रतिरोध-युद्ध इतने लम्बे अरसे से चल रहा है, जनवाद को लागू करने का काम, कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व वाले जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्रों को छोड़कर, देश के अधिकांश भाग में मुश्किल से शुरू हुआ है, और इस बुनियादी कमजोरी का फायदा उठाकर जापानी साम्राज्यवादी लम्बे डग बढ़ाते हुए हमारे देश में घुस आए हैं। अगर इसके बारे में कुछ न किया गया, तो हमारे राष्ट्र का भविष्य गम्भीर रूप से खतरे में पड़ जाएगा।

यहां चर्चा का विषय है "राज्य-तंत्र" का प्रश्न। छिङ राजवंश के अन्तिम वर्षों से लेकर अनेक दशाब्दियों के बहस-मुबाहिसे के बाद भी यह प्रश्न अभी तक नहीं सुलझ पाया। वस्तुतः यह महज राज्य के अन्दर विभिन्न सामाजिक वर्गों की हैसियत का सवाल है। पूंजीपति वर्ग आम तौर पर वर्ग-हैसियत की समस्या को छिपाता है और "राष्ट्रीय" लेबिल के नीचे अपनी एकवर्गीय तानाशाही चलाता है। ऐसा छिपाव क्रान्तिकारी जनता के लिए कतई फायदेमन्द नहीं है और इस मामले को उसे स्पष्ट रूप से समझा दिया जाना चाहिए। "राष्ट्रीय" संज्ञा ठीक है, लेकिन इसमें प्रतिक्रान्तिकारियों तथा देशद्रोहियों को हरगिज शामिल नहीं किया जा सकता। आज

जिस किस्म के राज्य की हमें आवश्यकता है वह प्रतिक्रान्तिकारियों तथा देशद्रोहियों पर तमाम क्रान्तिकारी वर्गों का अधिनायकत्व है।

> आधुनिक राज्यों की तथाकथित जनवादी व्यवस्था पर सामान्यतः पूंजीपति वर्ग का एकाधिकार है और यह महज आम लोगों को उत्पीड़ित करने का साधन बन गई है। इसके विपरीत क्वोमिन्ताङ के जनवाद के सिद्धान्त का मतलब है वह जनवाद, जिसमें सभी आम लोगों का हिस्सा हो और जो चन्द लोगों की निजी मिलकियत न हो।

यह गम्भीर ऐलान क्वोमिन्ताङ की प्रथम राष्ट्रीय कांग्रेस के, जो क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग की अवधि के दौरान १६२४ में हुई थी, घोषणापत्र में किया गया था। पिछले सोलह वर्षों से खुद क्वोमिन्ताङ इस ऐलान का उल्लंघन कर रही है, और इसके परिणाम-स्वरूप उसने मौजूदा गम्भीर राष्ट्रीय संकट पैदा कर दिया है। यह उसकी एक भारी भूल है, और हम आशा करते हैं कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की शुद्धिकारक ज्वालाओं में वह अपने को ठीक कर लेगी।

जहां तक "शासन-तंत्र" का प्रश्न है, उसका ताल्लुक इस बात से है कि राजनीतिक सत्ता को किस रूप में संगठित किया जाता है, अर्थात कोई सामाजिक वर्ग अपने शत्रुओं का विरोध करने और अपनी रक्षा करने के लिए राजनीतिक सत्ता के संगठनों को किस रूप में संगठित करता है। ऐसा कोई राज्य नहीं है जिसके पास उसका प्रतिनिधित्व करने के लिए राजनीतिक सत्ता का एक उपयुक्त यंत्र

न हो। चीन अब राष्ट्रीय जन-प्रतिनिधि सभा से लेकर प्रान्तीय, काउन्टी, जिला और श्याङ जन-प्रतिनिधि सभा तक विभिन्न स्तर की जन-प्रतिनिधि सभाओं वाली व्यवस्था को अपना सकता है, जिसमें सभी स्तर अपने-अपने सरकारी संगठनों का चुनाव करें। लेकिन अगर राज्य में हर क्रान्तिकारी वर्ग का उसकी हैसियत के अनुसार उचित प्रतिनिधित्व करना हो, जनता की इच्छा की उचित अभिव्यक्ति करनी हो, क्रान्तिकारी संघर्षों का उचित मार्गदर्शन करना हो और नव-जनवाद की भावना की उचित अभिव्यक्ति करनी हो, तो लिंग, आस्था, सम्पत्ति अथवा शिक्षा आदि का भेद किए बिना एक सचमुच व्यापक तथा समान मताधिकार वाली व्यवस्था लागू की जानी चाहिए। जनवादी केन्द्रीयता की व्यवस्था ऐसी ही है। केवल जनवादी केन्द्रीयता पर आधारित सरकार ही तमाम क्रान्तिकारी लोगों की आकांक्षा को पूरी तरह अभिव्यक्त कर सकती है और क्रान्ति के शत्रुओं के खिलाफ सर्वाधिक कारगर ढंग से लड़ सकती है। सरकार और सेना में "चन्द लोगों की निजी मिलकियत" से इनकार करने की भावना अवश्य होनी चाहिए; एक सच्ची जनवादी व्यवस्था के बिना इस मकसद को हासिल नहीं किया जा सकेगा और शासन-तंत्र तथा राज्य-तंत्र के बीच सामंजस्य कायम नहीं होगा।

राज्य-तंत्र यानी तमाम क्रान्तिकारी वर्गों का एक संयुक्त अधिनायकत्व, और शासन-तंत्र यानी जनवादी केन्द्रीयता – ये नव-जनवाद की राजनीति, नव-जनवाद के गणराज्य, जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे के गणराज्य, तीन महान नीतियों से युक्त नए तीन जन-सिद्धान्तों वाले गणराज्य, एक सामर्थ्यवान चीन गणराज्य को

संगठित करते हैं। आज हमारे पास नाम के लिए तो एक चीन गणराज्य है किन्तु यथार्थ में नहीं, और हमारा वर्तमान कार्य है एक ऐसे यथार्थ का निर्माण करना जो इस नाम के अनुरूप हो।

ऐसे हैं वे आन्तरिक राजनीतिक सम्बन्ध जिन्हें एक क्रान्तिकारी चीन को, एक जापानी आक्रमण के खिलाफ लड़ने वाले चीन को कायम करने चाहिए और अवश्य करने चाहिए ; "राष्ट्रीय निर्माण" के हमारे मौजूदा कार्य के लिए एकमात्र सही दिशा यही है।

६. नव-जनवाद का अर्थतंत्र

अगर चीन में एक ऐसे गणराज्य की स्थापना की जानी है, तो उसे न केवल अपनी राजनीति में बल्कि अपने अर्थतंत्र में भी नव-जनवादी होना चाहिए।

बड़े बैंकों और उद्योग-वाणिज्य के बड़े कारोबारों का स्वामित्व उसके अपने हाथ में होगा।

> ऐसे तमाम निजी कारोबारों को, चाहे वे चीनियों के हों अथवा विदेशियों के, जिनकी मिलकियत का स्वरूप इजारेदाराना है अथवा जिनका पैमाना इतना बड़ा है कि उन्हें निजी प्रबन्ध में नहीं चलाया जा सकता, जैसे बैंकिंग, रेलवे और हवाई उड़ान, सरकार अपने हाथ में ले लेगी, ताकि निजी पूंजी जनता के आर्थिक जीवन को नियंत्रित न करे। यह पूंजी का नियमन करने का एक मुख्य उसूल है।

यह क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग की अवधि के दौरान हुई क्वोमिन्ताङ की प्रथम राष्ट्रीय कांग्रेस के घोषणापत्र में किया गया एक और गम्भीर ऐलान है, और यह नव-जनवादी गणराज्य के आर्थिक ढांचे के लिए एक सही नीति है। सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व वाले नव-जनवादी गणराज्य में राजकीय अर्थतंत्र का स्वरूप समाजवादी होगा और वह समूचे राष्ट्रीय अर्थतंत्र में नेतृत्वकारी शक्ति होगा, लेकिन यह गणराज्य न तो साधारण पूंजीवादी निजी सम्पत्ति को जब्त करेगा और न ऐसे पूंजीवादी उत्पादन के विकास पर पाबन्दी ही लगाएगा जो "जनता के आर्थिक जीवन को नियंत्रित" नहीं करता, क्योंकि चीन का अर्थतंत्र अभी भी बहुत पिछड़ा हुआ है।

यह गणराज्य जमींदारों की जमीन को जब्त करने और उसे उन किसानों में वितरित करने के लिए जिनके पास बहुत थोड़ी जमीन है या बिलकुल नहीं है, कुछ आवश्यक कदम उठाएगा, "जमीन जोतने वालों को" के डा० सुन यात-सेन के नारे को कार्यान्वित करेगा, देहाती क्षेत्रों में सामन्ती सम्बन्धों का खातमा कर देगा, और जमीन पर किसानों की निजी मिलकियत कायम कर देगा। देहाती क्षेत्रों में धनी किसानों के अर्थतंत्र के अस्तित्व की इजाजत दी जाएगी। ऐसी है "जमीन की मिलकियत के समानीकरण" की नीति। "जमीन जोतने वालों को" का नारा इस नीति का सही नारा है। आम तौर पर, इस मंजिल में समाजवादी कृषि की स्थापना नहीं की जाएगी, हालांकि "जमीन जोतने वालों को" के आधार पर विकसित विभिन्न प्रकार के सहकारी संस्थानों में समाजवाद के तत्व मौजूद होंगे।

चीन के अर्थतंत्र को निश्चय ही "पूंजी के नियमन" और "जमीन

की मिलकियत के समानीकरण" के पथ पर विकसित होना चाहिए, और "चन्द लोगों की निजी मिलकियत" में हरगिज नहीं रहना चाहिए ; हमें चन्द पूंजीपतियों और जमींदारों को "जनता के आर्थिक जीवन को नियंत्रित करने" की इजाजत हरगिज नहीं देनी चाहिए ; हमें योरपीय-अमरीकी किस्म के पूंजीवादी समाज की स्थापना हरगिज नहीं करनी चाहिए अथवा पुराने अर्ध-सामन्ती समाज के बने रहने की इजाजत हरगिज नहीं देनी चाहिए। जो कोई भी प्रगति की इस दिशा के विपरीत जाने का दुस्साहस करेगा, वह निश्चय ही न सिर्फ असफल होगा बल्कि एक दुर्भेद्य दीवार से जा टकराएगा।

ऐसे हैं वे आन्तरिक आर्थिक सम्बन्ध जिन्हें एक क्रान्तिकारी चीन को, जापानी आक्रमण के खिलाफ लड़ने वाले चीन को कायम करना होगा और अनिवार्य रूप से कायम करना होगा।

ऐसा है नव-जनवाद का अर्थतंत्र।

और नव-जनवाद की राजनीति दरअसल नव-जनवाद के अर्थतंत्र की ही केन्द्रित अभिव्यक्ति है।

७. पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व का खण्डन

सारे देश में ९० प्रतिशत से अधिक लोग नव-जनवादी राजनीति तथा नव-जनवादी अर्थतंत्र वाले इस प्रकार के गणराज्य के पक्ष में हैं ; इसके अलावा दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

क्या पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाले पूंजीवादी समाज की स्थापना के रास्ते पर चला जाए ? निश्चय ही, यह योरपीय तथा

अमरीकी पूंजीपति वर्ग द्वारा अपनाया गया पुराना रास्ता है। लेकिन कोई इसे चाहे या न चाहे, न तो अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति और न ही घरेलू परिस्थिति चीन को ऐसा करने की अनुमति देती है।

अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति की दृष्टि से देखा जाए, तो यह रास्ता अवरुद्ध हो चुका है। मूलतः, मौजूदा अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति पूंजीवाद तथा समाजवाद के बीच संघर्ष की परिस्थिति है, जिसमें पूंजीवाद का पतन हो रहा है और समाजवाद का उत्थान। पहले तो अन्तरराष्ट्रीय पूंजीवाद, यानी साम्राज्यवाद, चीन में पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाले पूंजीवादी समाज की स्थापना की इजाजत नहीं देगा। वस्तुतः आधुनिक चीन का इतिहास चीन पर साम्राज्यवादी आक्रमण का, चीन की स्वाधीनता और उसके पूंजीवादी विकास के प्रति साम्राज्यवादी विरोध का ही इतिहास है। चीन में पहले की क्रान्तियां इसलिए विफल हुई क्योंकि साम्राज्यवाद ने उनका गला घोंट दिया, और असंख्य क्रान्तिकारी शहीद इसके प्रति रोष प्रकट करते हुए शहीद हो गए। आज, एक शक्तिशाली जापानी साम्राज्यवाद चीन में जबरन घुसता चला आ रहा है और उसे एक उपनिवेश में बदल देना चाहता है ; हमारे देश में चीन चीनी पूंजीवाद का विकास नहीं कर रहा बल्कि जापान जापानी पूंजीवाद का विकास कर रहा है ; और हमारे देश में चीनी पूंजीपति वर्ग नहीं बल्कि जापानी पूंजीपति वर्ग अपना अधिनायकत्व चला रहा है। यह सच है कि यह एक ऐसा काल है जिसमें साम्राज्यवाद मृत्यु-शय्या पर छटपटा रहा है — "साम्राज्यवाद मरणासन्न पूंजीवाद है"[१]। मगर चूंकि वह मर रहा है, इसलिए अपनी जिन्दगी बनाए रखने

के लिए वह उपनिवेशों व अर्ध-उपनिवेशों पर और भी अधिक निर्भर है और किसी भी उपनिवेश अथवा अर्ध-उपनिवेश को इस बात की इजाजत हरगिज नहीं देगा कि वह अपने पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाले पूंजीवादी समाज जैसी किसी चीज की स्थापना करे। चूंकि जापानी साम्राज्यवाद गम्भीर आर्थिक तथा राजनीतिक संकट के दलदल में फंस गया है, यानी वह मर रहा है, इसलिए वह जरूर चीन पर आक्रमण करेगा, उसे जरूर एक उपनिवेश में बदल देगा और इस प्रकार चीन में पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व की स्थापना करने तथा राष्ट्रीय पूंजीवाद का विकास करने के रास्ते को अवरुद्ध कर देगा।

दूसरे, समाजवाद इसकी इजाजत नहीं देगा। दुनिया की सारी साम्राज्यवादी ताकतें हमारी दुश्मन हैं, और समाजवादी देश तथा अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग की सहायता के बिना चीन अपनी स्वाधीनता प्राप्त नहीं कर सकता। दूसरे शब्दों में, वह सोवियत संघ की सहायता के बिना और उस सहायता के बिना जो जापान, ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस, जर्मनी और इटली का सर्वहारा वर्ग अपने-अपने देश में पूंजीवाद के विरुद्ध संघर्ष के जरिए प्रदान करता है, ऐसा नहीं कर सकता। यद्यपि यह कोई नहीं कह सकता कि चीनी क्रान्ति की विजय इन तमाम देशों की, अथवा इनमें से एक या दो देशों की क्रान्ति की विजय के बाद ही होगी, पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनके सर्वहारा वर्ग की शक्ति लगाए बिना हम नहीं जीत सकते। विशेषकर सोवियत संघ की सहायता प्रतिरोध-युद्ध में चीन की अन्तिम विजय के लिए एकदम अपरिहार्य है। सोवियत संघ की सहायता से इनकार करने से क्रान्ति विफल हो जाएगी। क्या

१९२७ के बाद की सोवियत-विरोधी मुहिमों[१] से असाधारण रूप से स्पष्ट सबक नहीं मिलते? दुनिया आज क्रान्तियों और युद्धों के एक नए युग में है, एक ऐसे युग में जिसमें पूंजीवाद असंदिग्ध रूप से मर रहा है और समाजवाद असंदिग्ध रूप से फल-फूल रहा है। इन परिस्थितियों में, चीन में साम्राज्यवाद और सामन्तवाद को पराजित करने के बाद, पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाले पूंजीवादी समाज की स्थापना की इच्छा करना क्या महज खयाली पुलाव पकाना नहीं होगा?

यद्यपि प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध और अक्तूबर क्रान्ति के बाद कुछ विशिष्ट स्थितियों (ग्रीक आक्रमण को पीछे धकेलने में पूंजीपति वर्ग द्वारा सफलता प्राप्त किए जाने और सर्वहारा वर्ग के कमजोर होने) के कारण पूंजीपति वर्ग के कमालवादी अधिनायकत्व वाले छोटे से तुर्की[१] का उदय हुआ था, पर द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद और सोवियत संघ में समाजवादी निर्माण पूरा होने के बाद, कोई दूसरा तुर्की नहीं बन सकता, ४५ करोड़ आबादी वाला "तुर्की" तो किसी भी सूरत में नहीं बन सकता। चीन की विशिष्ट स्थितियों (पूंजीपति वर्ग की कमजोरी व उसकी सुलह-समझौते की प्रवृत्ति और सर्वहारा वर्ग की प्रबलता व उसकी क्रान्तिकारी पूर्णता) के कारण, चीन में तुर्की जैसी घटनाएं इतनी आसानी से कभी नहीं हो सकतीं। क्या १९२७ में प्रथम महान क्रान्ति के विफल होने के बाद चीन के पूंजीपति वर्ग के सदस्यों ने कमालवाद के लिए शोर नहीं मचाया था? लेकिन चीन का कमाल कहां है? और चीन का पूंजीपति वर्ग का अधिनायकत्व तथा पूंजीवादी समाज कहां है? इसके अलावा, कमालवादी तुर्की को भी अन्ततः अपने को

आंग्ल-फ्रांसीसी साम्राज्यवाद की बांहों में फेंकना पड़ा, और वह दिन-ब-दिन एक अर्ध-उपनिवेश तथा प्रतिक्रियावादी साम्राज्यवादी दुनिया का हिस्सा बनता गया। आज की अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में, उपनिवेशों तथा अर्ध-उपनिवेशों के "वीर" या तो साम्राज्यवादी मोर्चे पर कतारबन्द हो जाते हैं और विश्व-प्रतिक्रान्ति की शक्तियों का अंग बन जाते हैं, या साम्राज्यवाद-विरोधी मोर्चे पर कतारबन्द हो जाते हैं और विश्व-क्रान्ति की शक्तियों का अंग बन जाते हैं। इन दोनों में से एक को अपनाना होगा, क्योंकि कोई तीसरा रास्ता नहीं है।

घरेलू परिस्थिति की दृष्टि से देखा जाए, तो चीनी पूंजीपति वर्ग को अब तक अपना सबक सीख लेना चाहिए था। ज्यों ही सर्वहारा वर्ग की और किसान-समुदाय व निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्सों के जन-समुदाय की ताकत ने १९२७ की क्रान्ति को विजय तक पहुंचाया, चीन के पूंजीपति वर्ग ने, बड़े पूंजीपतियों के वर्ग की अगुवाई में, व्यापक जन-समुदाय को ठोकर मारकर एक ओर कर दिया, क्रान्ति के फल को अकेले ही हथिया लिया, साम्राज्यवाद तथा सामन्ती शक्तियों के साथ एक प्रतिक्रान्तिकारी गठजोड़ कायम कर लिया, और दस वर्षों तक "कम्युनिस्टों का विनाश करने" के युद्ध में अपनी पूरी शक्ति लगाए रखी। लेकिन नतीजा क्या हुआ? आज, जबकि एक शक्तिशाली शत्रु हमारी भूमि पर भीतर तक घुस आया है और पिछले दो वर्षों से जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध चल रहा है, क्या यह सम्भव है कि अभी भी योरपीय तथा अमरीकी पूंजीपति वर्ग के पुराने पड़ चुके नुस्खों की नकल करने की कोशिश की जाए? "दस वर्षों तक कम्युनिस्टों का विनाश करके" भी इस "विनाश" से पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व वाला कोई पूंजीवादी समाज अस्तित्व में नहीं आया। क्या यह सम्भव है कि एक बार और कोशिश करने की बात सोची जाए? यह सच है कि "दस वर्षों तक कम्युनिस्टों का विनाश करके" इस "विनाश" से "एकदलीय अधिनायकत्व" अस्तित्व में आया, लेकिन यह एक अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती अधिनायकत्व है। यही नहीं, "कम्युनिस्टों का विनाश करने" के चार वर्षों (१९२७ से १८ सितम्बर १९३१ की घटना तक) के अन्त में, इस "विनाश" से "मंचूक्वो" अस्तित्व में आ गया तथा और छै वर्ष के "विनाश करने" के बाद, १९३७ में, जापानी साम्राज्यवादी चीन की लम्बी दीवार के दक्षिण में घुस आए। आज अगर कोई एक और दशाब्दी तक "विनाश करने" की लीला जारी रखना चाहता है, तो इसका अर्थ एक नए किस्म का "कम्युनिस्टों का विनाश करना" होगा, जो पुराने से कुछ न कुछ भिन्न होगा। लेकिन क्या किसी तेज कदम वाले व्यक्ति ने "कम्युनिस्टों का विनाश करने" के इस नए कार्य को शीघ्रता व निर्भीकता के साथ हाथ में नहीं ले लिया है? हां, यह वाङ चिङ-वेइ है जो एक नए किस्म का जाना-माना कम्युनिस्ट-विरोधी व्यक्ति बन गया है। जो कोई भी उसके गिरोह में शामिल होना चाहता है, वह खुशी से ऐसा कर सकता है; लेकिन क्या पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व, पूंजीवादी समाज, कमालवाद, एक आधुनिक राज्य, एकदलीय अधिनायकत्व, "एक वाद" का सिद्धान्त, इत्यादि के बारे में मक्कारी के साथ बातें करते समय यह और भी लज्जाजनक साबित नहीं होगा? और अगर कोई वाङ चिङ-वेइ गिरोह में शामिल होने के बजाय जापान-विरोधियों के

शिविर में आना चाहता है लेकिन साथ ही यह कल्पना भी करता है कि एक बार युद्ध में जीत हासिल हो जाने पर वह जापान से लड़ने वाली जनता को ठोकर मारकर एक ओर कर देगा और प्रतिरोध-युद्ध में प्राप्त विजय के फलों को हथिया लेगा तथा "शाश्वत एक-दलीय अधिनायकत्व" कायम कर सकेगा, तो क्या वह महज दिवा-स्वप्न नहीं देख रहा? "जापान से लड़ो!" "जापान से लड़ो!" लेकिन आखिर लड़ कौन रहा है? मजदूरों व किसानों और निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्सों के बिना आप एक कदम भी नहीं चल सकते। अब भी जो कोई उन्हें ठोकर मारकर एक ओर करने की हिम्मत करेगा, वह खुद कुचल दिया जाएगा। क्या यह भी सामान्य सूझबूझ का मामला नहीं बन चुका है? लेकिन ऐसा जान पड़ता है कि चीनी पूंजीपति वर्ग में कट्टरपंथियों ने (मैं केवल कट्टरपंथियों की ओर ही संकेत कर रहा हूं) पिछले बीस वर्षों में कुछ भी सबक नहीं सीखा। क्या वे अब भी नहीं चिल्ला रहे हैं: "कम्युनिस्ट पार्टी पर अंकुश लगाओ", "कम्युनिस्ट पार्टी को क्षयग्रस्त करो" और "कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करो"? क्या हमने "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय" और उसके बाद "दुश्मन पार्टियों की समस्या से निपटने के उपाय" और फिर "दुश्मन पार्टियों की समस्या से निपटने के लिए निर्देश" नहीं देखे हैं? बाप रे! इस तरह "रोकथाम करते जाने" और "निपटते जाने" से वे हमारे राष्ट्र के लिए और खुद अपने लिए किस प्रकार का भविष्य तैयार करने जा रहे हैं? हम इन महानुभावों को सच्चे दिल से सलाह देते हैं: अपनी आंखें खोलो, चीन और दुनिया पर अच्छी तरह नजर डालो, देखो कि देश के भीतर और बाहर की

परिस्थितियां कैसी हैं, और अपनी गलतियों को मत दोहराओ। अगर तुम लोग अपनी गलतियों पर अड़े रहोगे, तो हमारे राष्ट्र का भविष्य निश्चय ही तबाह हो जाएगा। लेकिन मुझे यकीन है कि तुम्हारी जिन्दगी भी अच्छी नहीं बीतेगी। यह एकदम सच है, एकदम निश्चित है कि अगर चीन के पूंजीपति वर्ग के कट्टरपंथी लोग सचेत नहीं होंगे, तो उनके अच्छे दिन कभी नहीं आएंगे, वे केवल अपने ही हाथों अपनी कब्र खोद लेंगे। इसलिए हम आशा करते हैं कि चीन का जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चा कायम रखा जाएगा और सिर्फ एक गुट की इजारेदारी के बजाय सभी के सहयोग से जापान-विरोधी कार्य को विजय तक पहुंचाया जाएगा; यही एक-मात्र अच्छी नीति है – अन्य कोई भी नीति अच्छी नहीं है। यह हम कम्युनिस्टों द्वारा तुम्हें दी गई एक सच्ची सलाह है, और बाद में हमें यह दोष न देना कि हमने तुम्हें पहले ही आगाह नहीं किया था।

"यदि भोजन हो तो सबको बांटकर खाना चाहिए।" चीन की इस पुरानी कहावत में बहुत सच्चाई भरी है। चूंकि शत्रु से लड़ने में हम सभी लोग हिस्सा बंटाते हैं, इसलिए भोजन करने में भी हम सबको हिस्सा बंटाना चाहिए, जो भी काम हम करें उसमें हम सबको हिस्सा बंटाना चाहिए, और शिक्षा प्राप्त करने के अवसर की सुलभता में हम सबको हिस्सा बंटाना चाहिए। ऐसी मनोवृत्तियां जैसे "मैं और अकेले मैं ही सब कुछ लूंगा" और "कोई भी मुझे नुकसान पहुंचाने की जुर्रत न करे", सामन्ती सरदारों की पुरानी तिकड़मों के अलावा कुछ भी नहीं है और बीसवीं शताब्दी के पांचवें दशक में इनसे काम नहीं चलेगा।

हम कम्युनिस्ट ऐसे किसी व्यक्ति को कभी अलग नहीं करेंगे

जो क्रान्तिकारी है ; हम उन तमाम वर्गों, तबकों, राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों और व्यक्तियों के साथ, जो जापानी आक्रमण के विरुद्ध अन्त तक लड़ने को तैयार हैं, संयुक्त मोर्चे पर अविचल रहेंगे और दीर्घकाल तक सहयोग करेंगे। लेकिन अगर कुछ लोग कम्युनिस्ट पार्टी को एक ओर धकेलना चाहते हों, तो वे कामयाब नहीं होंगे ; अगर वे संयुक्त मोर्चे में फूट डालना चाहते हों, तो वे कामयाब नहीं होंगे। चीन को निश्चय ही जापान के खिलाफ लड़ते रहना होगा, एकता बनाए रखना होगा और प्रगति करते रहना होगा ; हम ऐसे किसी व्यक्ति को बर्दाश्त नहीं कर सकते जो आत्मसमर्पण करने, फूट डालने अथवा प्रतिगमन करने की कोशिश करता हो।

८. "वामपंथी" लफ्फाजी का खण्डन

अगर पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व का पूंजीवादी रास्ता अपनाना असम्भव है, तो क्या सर्वहारा अधिनायकत्व का समाजवादी रास्ता अपनाना सम्भव है ?

नहीं, वह भी सम्भव नहीं है।

निस्सन्देह, मौजूदा क्रान्ति पहला कदम है, जो आगे चलकर दूसरे कदम, यानी समाजवाद के कदम में विकसित हो जाएगा। और चीन में सच्चा सुख-चैन सिर्फ तभी प्राप्त किया जा सकेगा जब वह समाजवादी युग में प्रवेश करेगा। लेकिन आज समाजवाद को लागू करने का काल नहीं है। चीन में क्रान्ति का मौजूदा कार्य साम्राज्यवाद तथा सामन्तवाद से लड़ना है, और जब तक यह कार्य पूरा नहीं हो जाता, तब तक समाजवाद का प्रश्न ही नहीं उठता।

चीनी क्रान्ति को अनिवार्य रूप से दो कदम उठाने हैं, पहला नव-जनवाद का और फिर समाजवाद का। इसके अलावा, पहले कदम के लिए काफी लम्बे समय की आवश्यकता होगी और उसे रातोंरात पूरा नहीं किया जा सकता। हम लोग शेखचिल्ली नहीं हैं और अपने सामने मौजूद वास्तविक स्थितियों से अपने को अलग नहीं कर सकते।

कुछ वैमनस्यपूर्ण प्रचारक, इन दोनों अलग-अलग क्रान्तिकारी मंजिलों को जानबूझकर उलझाते हुए, इस बात को साबित करने के लिए कि तीन जन-सिद्धान्त सब प्रकार की क्रान्तियों पर लागू होते हैं और इसलिए कम्युनिज्म अपने अस्तित्व के उद्देश्य को खो चुका है, तथाकथित "एक ही क्रान्ति के सिद्धान्त" की वकालत करते हैं। इस "सिद्धान्त" का इस्तेमाल करते हुए वे कम्युनिज्म और कम्युनिस्ट पार्टी का, आठवीं राह सेना तथा नई चौथी सेना का, और शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र का बड़े जोरशोर से विरोध करते हैं। उनका वास्तविक उद्देश्य है सभी प्रकार की क्रान्तियों का उन्मूलन करना, एक पूर्ण पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति का विरोध करना, जापानी आक्रमण का पूर्ण प्रतिरोध करने का विरोध करना और जापानी आक्रमणकारियों के सामने आत्मसमर्पण करने के लिए जनमत तैयार करना। इसे जापानी साम्राज्यवादियों द्वारा जानबूझकर बढ़ावा दिया जा रहा है। ऊहान पर अपने अधिकार के बाद वे यह समझ गए हैं कि सिर्फ फौजी ताकत ही चीन को गुलाम नहीं बना सकती, इसलिए उन्होंने राजनीतिक आक्रमणों तथा आर्थिक फुसलावों का सहारा लिया है। उनका राजनीतिक आक्रमण जापान-विरोधी मोर्चे में ढुलमुल तत्वों को प्रलोभन देने, संयुक्त

मोर्चे में फूट डालने और क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग की जड़ काटने के रूप में प्रकट होता है। उनके आर्थिक फुसलावे तथाकथित "संयुक्त कारोबारों" का रूप धारण करते हैं। मध्य तथा दक्षिण चीन में जापानी आक्रमणकारी, चीनी पूंजीपतियों को ऐसे कारोबारों में ५१ प्रतिशत पूंजी लगाने की इजाजत दे रहे हैं और बाकी ४९ प्रतिशत पूंजी जापानी रहती है ; उत्तर चीन में वे चीनी पूंजीपतियों को ४९ प्रतिशत पूंजी लगाने की इजाजत दे रहे हैं और बाकी ५१ प्रतिशत पूंजी जापानी रहती है। जापानी आक्रमणकारियों ने चीनी पूंजीपतियों की भूतपूर्व परिसम्पत्ति को पूंजी-विनियोग में पूंजीगत शेयरों के रूप में लौटा देने का भी वायदा किया है। मुनाफों की उम्मीद पर कुछ ऐसे पूंजीपति जिनकी जमीर मर चुकी है, तमाम नैतिक सिद्धान्तों को भूल जाते हैं और एक दांव खेलने के लिए अकुलाने लगते हैं। पूंजीपतियों का एक हिस्सा जिसका प्रतिनिधित्व वाङ चिङ-वेइ करता है, आत्मसमर्पण कर भी चुका है। जापान-विरोधी मोर्चे के अन्दर दुबककर बैठा हुआ एक और हिस्सा भी उस ओर जाने की सोच रहा है। लेकिन उनके दिल में चोर है और वे डरते हैं कि कम्युनिस्ट उनके बाहर जाने की राह को रोक देंगे, और इससे भी बढ़कर वे इस बात से डरते हैं कि आम जनता उन्हें गद्दार करार देगी। इसलिए उन्होंने एक साथ मिलकर दिमाग लड़ाया है और सांस्कृतिक जगत तथा प्रकाशन-प्रसारण जगत में आधार तैयार करने का फैसला किया है। अपनी नीति निश्चित करने के बाद, उन्होंने जरा भी वक्त गंवाए बिना कुछ "आध्यात्मवाद-विक्रेताओं"[८] को और चन्द त्रात्सकीवादियों को भाड़े पर रख लिया है, जो अपनी कलम को बरछी की तरह

चलाते हुए सभी दिशाओं में घुमा रहे हैं और पागलों की तरह ऊधम मचा रहे हैं। अतएव उन लोगों को धोखा देने के लिए, जो यह नहीं जानते कि उनके चारों ओर दुनिया में क्या हो रहा है, तिकड़मों की यह समूची पिटारी सामने रखी गई – "एक ही क्रान्ति का सिद्धान्त" बघारना, और ये कहानियां गढ़ना कि कम्युनिज्म चीन की राष्ट्रीय स्थितियों के अनुकूल नहीं है, कि चीन में कम्युनिस्ट पार्टी की कोई आवश्यकता नहीं है, कि आठवीं राह सेना व नई चौथी सेना प्रतिरोध-युद्ध की जड़ काट रही हैं और बिना लड़े महज इधर-उधर घूम रही हैं, कि शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र एक सामन्ती पृथकतावादी हुकूमत है, कि कम्युनिस्ट पार्टी एक अवज्ञाकारी, बहुमत-विरोधी, षड्यंत्रकारी और विध्वंसकारी पार्टी है – और इन सबका उद्देश्य है पूंजीपतियों को उपयुक्त मौके पर अपना ४९ या ५१ प्रतिशत हिस्सा प्राप्त करने के लिए आधार प्रदान करना तथा इस तरह राष्ट्र के हितों को शत्रु के हाथों बेच डालना। यह दरअसल "धरनों तथा खम्भों को चुराकर उनकी जगह सड़ा-गला काठ लगा देना" है – आत्मसमर्पण के लिए जनता के दिमाग पर अपना असर डालना अर्थात लोकमत तैयार करना है। ये महानुभाव, जो जाहिरा तौर पर पूरी गम्भीरता के साथ, कम्युनिज्म तथा कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करने के लिए "एक ही क्रान्ति के सिद्धान्त" की वकालत करने का ढोंग रच रहे हैं, केवल अपने ४९ या ५१ प्रतिशत हिस्से के पीछे पड़े हैं। इन लोगों ने भला कितनी माथापच्ची की होगी ! "एक ही क्रान्ति का सिद्धान्त" महज क्रान्ति न करने का सिद्धान्त है, और यही इस मामले का सारतत्व है।

लेकिन कुछ अन्य लोग, जो जाहिरा तौर पर बुरे इरादे नहीं रखते, ऐसे हैं जो "एक ही क्रान्ति के सिद्धान्त" तथा "एक ही बार में राजनीतिक क्रान्ति तथा सामाजिक क्रान्ति दोनों को पूरा करने" के कोरे काल्पनिक विचार में बहक गए हैं ; वे यह नहीं समझते कि हमारी क्रान्ति कई मंजिलों में विभाजित है, यह कि हम क्रान्ति की पहली मंजिल को पूरा करने के बाद ही उसकी दूसरी मंजिल में प्रवेश कर सकते हैं, और यह कि "एक ही बार में दोनों को पूरा करने" जैसी कोई चीज नहीं है। उनका यह विचार भी इसी प्रकार अत्यन्त हानिकर है, क्योंकि वह क्रान्ति में उठाए जाने वाले कदमों को आपस में उलझा देता है और मौजूदा कार्य के लिए किए जाने वाले प्रयास को कमजोर बना देता है। इन दो क्रान्तिकारी मंजिलों के बारे में यह कहना सही है और यह क्रान्तिकारी विकास के बारे में मार्क्सवादी सिद्धान्त के साथ मेल खाता है कि पहली मंजिल दूसरी मंजिल के लिए स्थितियां तैयार करती है, तथा ये दोनों मंजिलें सिलसिलेवार आनी चाहिए, इनके बीच पूंजीवादी अधिनायकत्व की किसी भी मंजिल की इजाजत नहीं दी जानी चाहिए। लेकिन, यह कथन सच्चे क्रान्तिकारियों द्वारा नामंजूर किया गया एक काल्पनिक विचार है कि जनवादी क्रान्ति का अपना एक निश्चित कार्य नहीं होता और अपनी एक निश्चित अवधि नहीं होती बल्कि उसके जनवादी कार्य के साथ एक अन्य कार्य को, अर्थात समाजवादी कार्य को, जिसे सिर्फ एक अन्य अवधि में ही सम्पन्न किया जा सकता है, मिलाकर एक साथ सम्पन्न किया जा सकता है, और इसे ही वे "एक ही बार में दोनों को पूरा करना" कहते हैं।

९. कट्टरपंथियों का खण्डन

पूंजीपति वर्ग के कट्टरपंथी आगे आकर कहते हैं : जब तुम कम्युनिस्टों ने समाजवादी समाज-व्यवस्था को बाद की मंजिल के लिए स्थगित कर दिया है और यह ऐलान भी कर दिया है कि "जिन तीन जन-सिद्धान्तों की आज चीन को जरूरत है, उन्हें पूर्ण रूप से कार्यान्वित करने के लिए संघर्ष करने को हमारी पार्टी तैयार है"[६], तो फिर ठीक है, फिलहाल अपने कम्युनिज्म को ताक पर रख दो। इधर हाल में तथाकथित "एक वाद" के सिद्धान्त के रूप में इस प्रकार के विवाद से एक भारी कोलाहल मचाया गया है। सार रूप में यह पूंजीपति वर्ग की स्वेच्छाचारिता के लिए कट्टरपंथियों द्वारा की गई चीख-पुकार ही है। फिर भी, शिष्टाचार के लिए हम इसे महज सामान्य सूझबूझ का पूर्ण अभाव कह सकते हैं।

कम्युनिज्म सर्वहारा वर्ग की एक पूर्ण विचार-व्यवस्था होने के साथ-साथ एक नई समाज-व्यवस्था भी है। वह अन्य किसी भी विचार-व्यवस्था और समाज-व्यवस्था से भिन्न है, तथा वह मानव जाति के इतिहास में सबसे ज्यादा पूर्ण, सबसे ज्यादा प्रगतिशील, सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी और सबसे ज्यादा युक्तिसंगत व्यवस्था है। सामन्तवादी विचार-व्यवस्था और समाज-व्यवस्था का स्थान अब केवल ऐतिहासिक अजायबघर में ही रह गया है। दुनिया के एक भाग में (सोवियत संघ में) पूंजीवादी विचार-व्यवस्था और समाज-व्यवस्था भी अब अजायबघर की वस्तु बन चुकी है, और अन्य देशों में उसकी स्थिति "उस मरणासन्न व्यक्ति के समान है जो पश्चिम की पहाड़ियों में डूबते हुए सूरज की तरह अपनी आखिरी

सांसें गिन रहा हो", और वहां भी उसे शीघ्र ही अजायबघर में पहुंचा दिया जाएगा। केवल कम्युनिस्ट विचार-व्यवस्था और समाज-व्यवस्था ही ऐसी है जो यौवन और जीवन-शक्ति से ओत-प्रोत है, तथा पहाड़ों को गिराने और समुद्र को उलटने वाली भूकम्पकारी शक्ति के साथ सारी दुनिया में फैलती जा रही है। चीन में वैज्ञानिक कम्युनिज्म का प्रवेश होने से जनता का दृष्टि-पथ अधिक व्यापक बन गया है और चीनी क्रान्ति का रूप बदल गया है। कम्युनिज्म के मार्गदर्शन के बिना चीन की जनवादी क्रान्ति हरगिज सफल नहीं हो सकती, अगली मंजिल पर पहुंचने की बात तो दूर रही। यही कारण है कि पूंजीपति वर्ग के कट्टरपंथी इतने जोरशोर से यह मांग कर रहे हैं कि कम्युनिज्म को "ताक पर" रख दिया जाए। लेकिन उसे "ताक पर" हरगिज नहीं रखा जा सकता, क्योंकि कम्युनिज्म को "ताक पर" रख देने से चीन को विनाश का सामना करना पड़ेगा। आज सारी दुनिया अपनी मुक्ति के लिए कम्युनिज्म पर निर्भर है, और चीन इसका अपवाद नहीं है।

हर कोई जानता है कि कम्युनिस्ट पार्टी के पास उस समाज-व्यवस्था के बारे में, जिसकी वह वकालत करती है, एक तात्कालिक और एक भावी कार्यक्रम है, एक न्यूनतम और एक अधिकतम कार्यक्रम है। मौजूदा अवधि के लिए नव-जनवाद, और भविष्य के लिए समाजवाद ; ये दोनों एक ही संघटित सम्पूर्ण के दो भाग हैं, जो एक ही कम्युनिस्ट विचारधारा द्वारा निर्देशित होते हैं। इसलिए, क्या इस आधार पर कि कम्युनिस्ट पार्टी का न्यूनतम कार्यक्रम तीन जन-सिद्धान्तों के राजनीतिक उसूलों के साथ बुनियादी रूप से मेल खाता है, कम्युनिज्म को "ताक पर" रख देने के लिए शोर

मचाना हद दर्जे की बेहूदगी नहीं है? इन दोनों की इस बुनियादी अनुरूपता के कारण ही हम कम्युनिस्टों के लिए "तीन जन-सिद्धान्तों को जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे का राजनीतिक आधार" मानना सम्भव हुआ है और इस बात को स्वीकार करना सम्भव हुआ है कि "जिन तीन जन-सिद्धान्तों की आज चीन को जरूरत है, उन्हें पूर्ण रूप से कार्यान्वित करने के लिए संघर्ष करने को हमारी पार्टी तैयार है" ; वरना ऐसी कोई सम्भावना न होती। यह जनवादी क्रान्ति की मंजिल में कम्युनिज्म और तीन जन-सिद्धान्तों के बीच कायम किया गया एक संयुक्त मोर्चा है, और जब डा० सुन यात-सेन ने यह कहा था कि "कम्युनिज्म तीन जन-सिद्धान्तों का अच्छा मित्र है"[१०], तो उनका तात्पर्य इसी संयुक्त मोर्चे से था। कम्युनिज्म को अस्वीकार करना दरअसल संयुक्त मोर्चे को अस्वीकार करना है। कट्टरपंथियों ने कम्युनिज्म को अस्वीकार करने की ऐसी बेहूदा दलीलें सिर्फ इसीलिए गढ़ डाली हैं क्योंकि वे संयुक्त मोर्चे को नामंजूर करना चाहते हैं और अपने एकदलीय सिद्धान्त पर चलना चाहते हैं।

इसके अलावा, "एक वाद" का सिद्धान्त भी बिलकुल बेतुका है। जब तक वर्ग मौजूद हैं, तब तक जितने वर्ग हैं उतने ही सिद्धान्त होंगे, यहां तक कि एक ही वर्ग में विभिन्न दलों के अपने अलग-अलग सिद्धान्त भी हो सकते हैं। जब सामन्ती वर्ग का सामन्ती सिद्धान्त, पूंजीपति वर्ग का पूंजीवादी सिद्धान्त, बौद्धों का बौद्ध मत, ईसाइयों का ईसाई मत और किसानों का बहुदेववाद मौजूद है, तथा इधर हाल के कुछ वर्षों में जब कुछ लोगों ने कमालवाद, फासिस्टवाद, जीवनशक्तिवाद[११], और "श्रम के अनुसार वितरण के सिद्धान्त"[१२] की वकालत की है, तो फिर सर्वहारा वर्ग का अपना कम्युनिज्म

क्यों नहीं हो सकता ? जब यहां असंख्य "वाद" मौजूद हैं, तो फिर सिर्फ कम्युनिज्म को देखते ही उसे "ताक पर" रख देने की चीख-पुकार क्यों ? साफ बात यह है कि उसे "ताक पर" रख देने से काम नहीं चलेगा। ज्यादा अच्छा यह होगा कि हम प्रतियोगिता करें। अगर कम्युनिज्म को पराजित कर दिया गया, तो हम कम्युनिस्ट बड़ी शालीनता से अपनी हार मान लेंगे। लेकिन अगर ऐसा न हुआ तो फिर "एक वाद" की बकवास को, जो जनवाद के सिद्धान्त का उल्लंघन करती है, जितनी जल्दी हो सके, "ताक पर" रख दिया जाए।

गलतफहमी से बचने और कट्टरपंथियों की ज्ञानवृद्धि के लिए इस बात को स्पष्ट रूप से बताना जरूरी है कि तीन जन-सिद्धान्त और कम्युनिज्म कहां आपस में मेल खाते हैं और कहां नहीं।

दोनों की तुलना करने पर उनकी समानताएं और भिन्नताएं दोनों नजर आ जाती हैं।

पहले हम उनकी समानताओं को लेते हैं। ये चीन में पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की मंजिल के दौरान दोनों सिद्धान्तों के बुनियादी राजनीतिक कार्यक्रम में पाई जाती हैं। राष्ट्रवाद, जनवाद और जन-जीविका के ये तीन क्रान्तिकारी राजनीतिक उसूल, जिन्हें १९२४ में डा० सुन यात-सेन ने तीन जन-सिद्धान्तों की पुनर्व्याख्या करते समय पेश किया था, चीन में जनवादी क्रान्ति की मंजिल के लिए निर्धारित कम्युनिज्म के राजनीतिक कार्यक्रम से बुनियादी तौर पर मेल खाते हैं। इन समानताओं के कारण और तीन जन-सिद्धान्तों के कार्यान्वित किए जाने के कारण, दोनों सिद्धान्तों और दोनों पार्टियों का संयुक्त मोर्चा अस्तित्व में आ गया है। इस पहलू को नजरअन्दाज करना गलत है।

इसके बाद हम उनकी भिन्नताओं को लेते हैं। (१) जनवादी क्रान्ति की मंजिल के लिए निर्धारित कार्यक्रम के एक भाग में भिन्नता है। कम्युनिज्म के समूचे जनवादी क्रान्ति सम्बन्धी राजनीतिक कार्यक्रम में जनता के लिए पूर्ण अधिकार, आठ घण्टे का श्रमदिन और एक सम्पूर्ण भूमि-क्रान्ति शामिल हैं, जबकि तीन जन-सिद्धान्तों में ये बातें शामिल नहीं हैं। जब तक ये मुद्दे तीन जन-सिद्धान्तों में जोड़े नहीं जाते और उन पर अमल करने का इरादा पैदा नहीं हो जाता, तब तक इन दोनों जनवादी कार्यक्रमों में केवल बुनियादी तौर पर ही समानता रहेगी और उन्हें पूर्ण समानता वाले कार्यक्रम नहीं कहा जा सकेगा। (२) दोनों में एक और भिन्नता यह है कि एक में समाजवादी क्रान्ति की मंजिल शामिल है, और दूसरे में नहीं। कम्युनिज्म में जनवादी क्रान्ति की मंजिल के अलावा समाजवादी क्रान्ति की मंजिल भी शामिल है, इसलिए अपने न्यूनतम कार्यक्रम के अलावा उसका एक अधिकतम कार्यक्रम भी है, अर्थात समाजवाद और कम्युनिज्म को कार्यान्वित करने का कार्यक्रम। तीन जन-सिद्धान्तों में केवल जनवादी क्रान्ति की मंजिल ही मौजूद है, समाजवादी क्रान्ति की मंजिल नहीं, इसलिए उनका केवल एक न्यूनतम कार्यक्रम है, अधिकतम कार्यक्रम नहीं, अर्थात उनके पास समाजवाद और कम्युनिज्म को कार्यान्वित करने का कोई कार्यक्रम नहीं है। (३) दोनों के विश्व-दृष्टिकोण में भिन्नता है। कम्युनिज्म का विश्व-दृष्टिकोण द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद और ऐतिहासिक भौतिकवाद है, जबकि तीन जन-सिद्धान्त इतिहास की व्याख्या जन-जीविका की भाषा में करते हैं, जो सार रूप में एक द्वैतवादी अथवा आदर्शवादी दृष्टिकोण है ; ये दोनों ही विश्व-दृष्टिकोण एक दूसरे

के विपरीत हैं। (४) दोनों की क्रान्तिकारी पूर्णता में अन्तर है। कम्युनिस्ट लोग सिद्धान्त और व्यवहार को एक साथ मिलाते हैं, अर्थात उनमें क्रान्तिकारी पूर्णता होती है। तीन जन-सिद्धान्तों के अनुयायी, केवल उन लोगों को छोड़कर जो क्रान्ति के प्रति तथा सत्य के प्रति पूर्णतया वफादार रहते हैं, सिद्धान्त और व्यवहार को एक साथ नहीं मिलाते तथा उनकी कथनी व करनी में परस्पर अन्तरविरोध होता है, अर्थात उनमें क्रान्तिकारी पूर्णता का अभाव होता है। ऊपर हमने दोनों की भिन्नताएं बता दी हैं। इनसे कम्युनिस्टों और तीन जन-सिद्धान्तों के अनुयाइयों के बीच फर्क मालूम हो जाता है। इस फर्क को नजरअन्दाज करना, सिर्फ एकता के ही पहलू को देखना और अन्तरविरोध के पहलू को न देखना, निस्सन्देह बहुत गलत है।

जहां एक बार यह सब समझ में आ गया, तो इस बात को समझ लेना भी आसान हो जाता है कि जब पूंजीपति वर्ग के कट्टरपंथी लोग यह मांग करते हैं कि कम्युनिज्म को "ताक पर" रख दिया जाए तो उनका क्या मकसद होता है। अगर इसका अर्थ पूंजीपति वर्ग की स्वेच्छाचारिता नहीं है, तो उनकी इस मांग में सामान्य सूझबूझ का पूर्ण अभाव है।

१०. तीन जन-सिद्धान्त, पुराने और नए

पूंजीपति वर्ग के कट्टरपंथियों को ऐतिहासिक परिवर्तन की कोई समझ नहीं है; उनका ज्ञान इतना कम है कि वह नहीं के बराबर है। उन्हें न तो कम्युनिज्म और तीन जन-सिद्धान्तों के बीच का

अन्तर ज्ञात है और न नए तथा पुराने तीन जन-सिद्धान्तों के बीच का।

हम कम्युनिस्ट "तीन जन-सिद्धान्तों को जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का राजनीतिक आधार" मानते हैं, हम यह स्वीकार करते हैं कि "जिन तीन जन-सिद्धान्तों की आज चीन को जरूरत है, उन्हें पूर्ण रूप से कार्यान्वित करने के लिए संघर्ष करने को हमारी पार्टी तैयार है", और हम यह स्वीकार करते हैं कि कम्युनिज्म के न्यूनतम कार्यक्रम और तीन जन-सिद्धान्तों के राजनीतिक उसूलों के बीच बुनियादी तौर पर समानता है। लेकिन ये किस प्रकार के तीन जन-सिद्धान्त हैं? ये वही तीन जन-सिद्धान्त हैं जिनकी डा० सुन यात-सेन ने "क्वोमिन्ताङ की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस के घोषणा-पत्र" में पुनर्व्याख्या की थी, उनके अलावा अन्य कोई नहीं। मैं उम्मीद करता हूं कि कट्टरपंथी महानुभाव "कम्युनिस्ट पार्टी पर अंकुश लगाने", "कम्युनिस्ट पार्टी को क्षयग्रस्त करने" और "कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करने" जैसे काम से, जिसमें वे इतने उल्लास के साथ लगे हुए हैं, क्षणभर का अवकाश लेकर इस घोषणापत्र पर एक नजर डालेंगे। इस घोषणापत्र में डा० सुन यात-सेन ने कहा था: "यही है क्वोमिन्ताङ के तीन जन-सिद्धान्तों की सच्ची व्याख्या।" इसलिए केवल यही असली तीन जन-सिद्धान्त हैं और बाकी सब नकली हैं। तीन जन-सिद्धान्तों की "सच्ची व्याख्या" केवल वही है जो "क्वोमिन्ताङ की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस के घोषणापत्र" में मौजूद है, और बाकी सब व्याख्याएं झूठी हैं। सम्भवतः यह कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा उड़ाई गई "अफवाह" नहीं है, क्योंकि क्वोमिन्ताङ के अनेक सदस्यों ने और खुद मैंने इस घोषणापत्र को स्वीकृत होते देखा है।

यह घोषणापत्र तीन जन-सिद्धान्तों के इतिहास में दो अलग-अलग युगों में अन्तर करता है। इससे पहले, ये तीन जन-सिद्धान्त पुरानी श्रेणी के थे ; ये एक अर्ध-उपनिवेश की पुरानी पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के तीन जन-सिद्धान्त थे, पुराने जनवाद के तीन जन-सिद्धान्त थे, पुराने तीन जन-सिद्धान्त थे।

इसके बाद, ये नई श्रेणी के अन्दर आ गए ; ये एक अर्ध-उपनिवेश की नई पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति के तीन जन-सिद्धान्त, नव-जनवाद के तीन जन-सिद्धान्त, नए तीन जन-सिद्धान्त बन गए। यही और केवल यही नए जमाने के क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्त हैं।

नए जमाने के क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्त, नए और असली तीन जन-सिद्धान्त, रूस से संश्रय, कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग और किसान-मजदूरों की सहायता की तीन महान नीतियों को समाविष्ट करते हैं। नए जमाने में इन तीन महान नीतियों के बिना, अथवा इनमें से किसी एक नीति के बिना, तीन जन-सिद्धान्त झूठे या अपूर्ण रह जाते हैं।

सबसे पहले, क्रान्तिकारी, नए और असली तीन जन-सिद्धान्तों में रूस से संश्रय अवश्य शामिल होना चाहिए। जो हालात आज मौजूद हैं, उनमें यह बिलकुल साफ है कि अगर रूस से, समाजवादी देश से संश्रय की नीति न अपनाई गई, तो अनिवार्य रूप से साम्राज्यवाद से, साम्राज्यवादी शक्तियों से संश्रय की नीति अपनाई जाएगी। क्या १९२७ के बाद ठीक यही नहीं हुआ था ? जहां एक बार समाजवादी सोवियत संघ और साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच संघर्ष और अधिक तीव्र हुआ, तो चीन को इन दोनों में से किसी एक या दूसरे पक्ष का समर्थन करना ही होगा। यह एक अनिवार्य रुझान है। क्या किसी एक पक्ष की ओर झुकने से बचना सम्भव है ? नहीं, यह महज एक भ्रम है। सारी दुनिया इन दोनों में से किसी एक या दूसरे मोर्चे के पक्ष में खिंच जाएगी, और तब "तटस्थता" महज एक धोखाधड़ी साबित होगी। यह बात चीन के बारे में विशेष रूप से सच है, जो अपने भूखण्ड में भीतर तक घुस आई एक साम्राज्यवादी शक्ति के खिलाफ लड़ते समय सोवियत संघ की सहायता के बिना अन्तिम विजय की कल्पना तक नहीं कर सकता। अगर रूस से संश्रय को साम्राज्यवाद से संश्रय के लिए कुरबान कर दिया जाता है, तो "क्रान्तिकारी" शब्द को तीन जन-सिद्धान्तों से निकाल देना होगा, जो तब प्रतिक्रियावादी हो जाएंगे। अन्ततोगत्वा "तटस्थ" तीन जन-सिद्धान्त नाम की कोई चीज नहीं होती ; वे या तो क्रान्तिकारी होते हैं या प्रतिक्रान्तिकारी। क्या "दोनों पक्षों से होने वाले प्रहारों का मुकाबला करना"[११] जैसा कि वाङ चिङ-वेइ ने एक बार कहा था, और ऐसे तीन जन-सिद्धान्तों को रखना जो इस "मुकाबले" के काम आएं, अधिक वीरतापूर्ण नहीं होगा ? दुर्भाग्यवश, इसके आविष्कारक वाङ चिङ-वेइ ने खुद भी ऐसे तीन जन-सिद्धान्तों का परित्याग कर दिया है (अथवा उन्हें "ताक पर" रख दिया है), क्योंकि उसने साम्राज्यवाद से संश्रय कायम करने वाले तीन जन-सिद्धान्तों को अपना लिया है। अगर यह दलील दी जाए कि पूर्वी और पश्चिमी साम्राज्यवाद में फर्क है, और वाङ चिङ-वेइ के विपरीत, जिसने पूर्वी साम्राज्यवाद से नाता जोड़ लिया है, कोई पूर्व की ओर कूच करने और हमला करने के लिए कुछ पश्चिमी साम्राज्यवादियों से सम्बन्ध जोड़ ले, तो क्या ऐसी कार्यवाही पर्याप्त क्रान्तिकारी नहीं होगी ? लेकिन, चाहे आपको पसन्द हो या न हो ,पश्चिम के

साम्राज्यवादी देश सोवियत संघ तथा कम्युनिज्म का विरोध करने पर तुले हुए हैं, और अगर आप उनसे नाता जोड़ लेते हैं तो वे आपसे उत्तर की ओर कूच करने तथा आक्रमण करने को कहेंगे, और आपकी क्रान्ति कहीं की भी नहीं रह जाएगी। इन तमाम परिस्थितियों से यह निश्चित हो गया है कि क्रान्तिकारी, नए और असली तीन जन-सिद्धान्तों में रूस से संश्रय अवश्य शामिल होना चाहिए तथा किसी भी हालत में रूस के खिलाफ साम्राज्यवाद से संश्रय नहीं।

दूसरे, क्रान्तिकारी, नए और असली तीन जन-सिद्धान्तों में कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग अवश्य शामिल होना चाहिए। आप या तो कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग करेंगे या उसका विरोध करेंगे। कम्युनिज्म का विरोध करना जापानी साम्राज्यवादियों तथा वाङ चिङ-वेइ की नीति है, और अगर आप भी यही चाहते हैं तो ठीक है, वे आपको अपनी कम्युनिस्ट-विरोधी कम्पनी में शामिल होने के लिए आमंत्रित करेंगे। लेकिन क्या यह बड़े सन्देहास्पद ढंग से एक गद्दार बन जाने जैसा नहीं जान पड़ेगा? आप कह सकते हैं कि "मैं जापान का नहीं, बल्कि किसी अन्य देश का अनुसरण कर रहा हूं।" यह एक निरी हास्यास्पद बात होगी। आप चाहे किसी का अनुसरण क्यों न करें, जिस क्षण आप कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करते हैं, तभी आप गद्दार बन जाते हैं, क्योंकि इसके बाद आप जापान का प्रतिरोध नहीं कर सकते। अगर आप कहते हैं, "मैं स्वतंत्र रूप से कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करूंगा", तो यह भी आपकी थोथी बकवास है। एक उपनिवेश अथवा अर्ध-उपनिवेश के "वीर", साम्राज्यवाद की ताकत पर निर्भर रहे बिना ही भला प्रतिक्रान्ति के ऐसे महान कार्य को कैसे कर सकते हैं? दुनिया की

तकरीबन सभी साम्राज्यवादी ताकतें दस वर्ष के लम्बे अरसे में कम्युनिस्ट पार्टी के खिलाफ इकट्ठी हो गई थीं, लेकिन वे नाकाम रहीं। तो फिर आज अचानक ही आप इसका विरोध "स्वतंत्र रूप से" कैसे कर सकते हैं? हमसे कहा जाता है कि सीमान्त क्षेत्र के बाहर कुछ लोग अब यह कह रहे हैं: "कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करना अच्छा है, लेकिन आप इसमें कभी सफल नहीं हो सकते।" यह कथन अगर महज सुनी-सुनाई बात नहीं तो इसका केवल आधा अंश गलत है, क्योंकि "कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करने" में भला "अच्छाई" क्या है? लेकिन इस कथन का बाकी आधा अंश सच है, आप निश्चय ही "इसमें कभी सफल नहीं हो सकते"। इसका बुनियादी कारण कम्युनिस्ट नहीं बल्कि आम जनता है, क्योंकि आम जनता कम्युनिस्ट पार्टी को पसन्द करती है और उसका "विरोध करना" पसन्द नहीं करती। अगर आप एक ऐसे मौके पर जबकि हमारा राष्ट्रीय शत्रु हमारे देश के भीतर तक घुसता आ रहा है, कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करते हैं तो आम जनता आपकी जान के पीछे पड़ जाएगी; वह आपके प्रति जरा भी दया नहीं दिखाएगी। यह बिलकुल निश्चित है। जो कोई भी कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करना चाहता है, उसे इस बात के लिए तैयार रहना चाहिए कि उसे धूल में मिला दिया जाएगा। अगर आप धूल में मिला दिए जाने के इच्छुक नहीं हैं, तो बेहतर यही है कि आप इसका विरोध करना छोड़ दें। तमाम कम्युनिस्ट-विरोधी "वीरों" के लिए यह हमारी सच्ची सलाह है। इस तरह यह बात बिलकुल स्पष्ट हो गई है कि आज के तीन जन-सिद्धान्तों में कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग अवश्य शामिल होना चाहिए, वरना ये सिद्धान्त नष्ट

हो जाएंगे। तीन जन-सिद्धान्तों के लिए यह जीवन-मरण का प्रश्न है। कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग करके वे जीवित रहेंगे ; कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करके वे नष्ट हो जाएंगे। क्या कोई साबित कर सकता है कि नतीजा इसके विपरीत होगा ?

तीसरे, क्रान्तिकारी, नए और असली तीन जन-सिद्धान्तों में किसान-मजदूरों की सहायता की नीति अवश्य शामिल होनी चाहिए। इस नीति को अस्वीकार करना, किसान-मजदूरों की हार्दिक सहायता न करना अथवा डा० सुन यात-सेन की वसीयत में लिखी "व्यापक जन-समुदाय को जागृत करने" की बात का पालन न करना, क्रान्ति की पराजय और खुद अपनी पराजय के लिए रास्ता तैयार करने के समान है। स्तालिन ने कहा है : "राष्ट्रीय सवाल मूलतः एक किसानों का सवाल है।"[१४] इसका मतलब है कि चीनी क्रान्ति मूलतः एक किसान क्रान्ति है और जापान के खिलाफ मौजूदा प्रतिरोध मूलतः किसानों द्वारा किया जाने वाला प्रतिरोध है। मूलतः, नव-जनवाद की राजनीति का अर्थ है किसानों को उनके अधिकार प्रदान करना। नए तथा असली तीन जन-सिद्धान्त मूलतः एक किसान क्रान्ति के ही सिद्धान्त हैं। मूलतः, लोक संस्कृति का अर्थ है किसानों के सांस्कृतिक स्तर को उन्नत करना। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध मूलतः एक किसान युद्ध ही है। हम आज एक ऐसे समय में रहते हैं जबकि "पहाड़ों पर चले जाने का सिद्धान्त"[१५] लागू होता है ; मीटिंगें करना, काम करना, कक्षाएं लगाना, अखबारों का प्रकाशन करना, किताबें लिखना, नाट्य-प्रदर्शन करना, यह सब पहाड़ों पर किया जाता है, और यह सब मूलतः किसानों के लिए है। प्रतिरोध-युद्ध को जारी रखने और हमें जीवित रखने के लिए

मूलतः किसान ही सब कुछ प्रदान करते हैं। "मूलतः" से हमारा मतलब बुनियादी तौर पर है, जनता के अन्य हिस्सों को नजरअन्दाज करके नहीं, जैसा कि स्तालिन ने खुद समझाया है। यह बात एक स्कूली बच्चा भी जानता है कि चीन की आबादी में ८० प्रतिशत लोग किसान हैं। अतएव किसान समस्या चीनी क्रान्ति की बुनियादी समस्या है और किसानों की शक्ति चीनी क्रान्ति की मुख्य शक्ति है। चीन की आबादी में मजदूरों का स्थान संख्या के लिहाज से किसानों के बाद दूसरा है। चीन में औद्योगिक मजदूरों की संख्या दसियों लाख है और दस्तकार मजदूरों व खेत-मजदूरों की संख्या करोड़ों में है। चीन विभिन्न उद्योगों में काम करने वाले अपने मजदूरों के बिना जीवित नहीं रह सकता, क्योंकि वे ही अर्थतंत्र के औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादक हैं। आधुनिक औद्योगिक मजदूर वर्ग के बिना क्रान्ति सफल नहीं हो सकती, क्योंकि वही चीनी क्रान्ति का नेता और सबसे अधिक क्रान्तिकारी वर्ग है। इन परिस्थितियों में, क्रान्तिकारी, नए और असली तीन जन-सिद्धान्तों में किसान-मजदूरों की सहायता की नीति को निश्चय ही शामिल किया जाना चाहिए। अन्य सभी प्रकार के तीन जन-सिद्धान्त, जो इस नीति से रहित हैं और जो किसानों व मजदूरों की हार्दिक सहायता नहीं करते अथवा "व्यापक जन-समुदाय को जागृत करने" की बात का पालन नहीं करते, अवश्य नष्ट हो जाएंगे।

इस प्रकार यह बात स्पष्ट हो गई है कि ऐसे किन्हीं तीन जन-सिद्धान्तों का कोई भविष्य नहीं है जो रूस से संश्रय, कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग और किसान-मजदूरों की सहायता की तीन महान नीतियों से विमुख हो गए हों। तीन जन-सिद्धान्तों के हर सच्चे

अनुयायी को इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए।

तीन महान नीतियों वाले तीन जन-सिद्धान्त – दूसरे शब्दों में क्रान्तिकारी, नए और असली तीन जन-सिद्धान्त – ही नव-जनवाद के तीन जन-सिद्धान्त हैं, पुराने तीन जन-सिद्धान्तों का विकास हैं, डा० सुन यात-सेन का एक महान योगदान हैं और उस युग की उपज हैं जिसमें चीनी क्रान्ति समाजवादी विश्व-क्रान्ति का अंग बन चुकी है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी यह समझती है कि केवल यही तीन जन-सिद्धान्त ऐसे हैं जिनकी "आज चीन को जरूरत है", और वह यह घोषित करती है कि "उन्हें पूर्ण रूप से कार्यान्वित करने के लिए संघर्ष करने को हमारी पार्टी तैयार है"। यही वे तीन जन-सिद्धान्त हैं जो जनवादी क्रान्ति की मंजिल के लिए निर्धारित कम्युनिस्ट पार्टी के राजनीतिक कार्यक्रम के साथ, अर्थात उसके न्यूनतम कार्यक्रम के साथ बुनियादी रूप से मेल खाते हैं।

जहां तक पुराने तीन जन-सिद्धान्तों का सम्बन्ध है, वे चीनी क्रान्ति की पुरानी अवधि की उपज थे। रूस उस समय एक साम्राज्यवादी ताकत था, और स्वभावतः उससे संश्रय कायम करने की नीति नहीं अपनाई जा सकती थी; उस समय हमारे देश में कोई कम्युनिस्ट पार्टी अस्तित्व में न थी, और स्वभावतः उससे सहयोग कायम करने की नीति नहीं हो सकती थी; मजदूर-किसानों के आन्दोलन का पूरा राजनीतिक महत्व अभी प्रकट नहीं हुआ था और उसने लोगों का ध्यान अभी अपनी ओर आकर्षित नहीं किया था, और स्वभावतः उनसे संश्रय कायम करने की नीति नहीं अपनाई जा सकती थी। इसलिए १९२४ में किए गए क्वोमिन्ताङ के पुनर्गठन से पहले की अवधि के तीन जन-सिद्धान्त पुरानी श्रेणी के थे, और वे पुराने पड़ चुके थे। यदि क्वोमिन्ताङ ने उन्हें नए तीन जन-सिद्धान्तों में विकसित न कर लिया होता तो वह आगे नहीं बढ़ सकती थी। डा० सुन यात-सेन ने अपनी विवेकशीलता के जरिए इस बात को समझ लिया, सोवियत संघ तथा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की मदद हासिल की और तीन जन-सिद्धान्तों की इस प्रकार पुनर्व्याख्या की कि उन्हें जमाने के अनुकूल नई विशिष्टताओं से लैस कर दिया; परिणामस्वरूप, तीन जन-सिद्धान्तों और कम्युनिज्म के बीच एक संयुक्त मोर्चा कायम हो गया, पहली बार क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग स्थापित हो गया, सारे देश की जनता की सहानुभूति हासिल हो गई और १९२४-२७ की क्रान्ति छेड़ दी गई।

पुराने तीन जन-सिद्धान्त पुराने जमाने में क्रान्तिकारी थे और उस काल की ऐतिहासिक विशिष्टताओं को प्रतिबिम्बित करते थे। लेकिन अगर पुरानी बात को नए जमाने में दोहराया जाए जबकि नए तीन जन-सिद्धान्त कायम हो चुके हैं, अथवा रूस से संश्रय का विरोध किया जाए जबकि समाजवादी राज्य की स्थापना हो चुकी है, अथवा कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग का विरोध किया जाए जबकि कम्युनिस्ट पार्टी अस्तित्व में आ चुकी है, या किसान-मजदूरों की सहायता की नीति का विरोध किया जाए जबकि वे जाग चुके हैं और अपनी राजनीतिक शक्ति प्रदर्शित कर चुके हैं, तो यह प्रतिक्रियावाद कहलाएगा जो जमाने से अनभिज्ञ है। १९२७ से लेकर प्रतिक्रियावाद की अवधि इसी अनभिज्ञता का परिणाम थी। पुरानी कहावत है : "जो कोई भी जमाने के लक्षणों को समझता है वह एक महान व्यक्ति है।" मैं आशा करता हूं कि तीन जन-सिद्धान्तों के अनुयायी आज इसे ध्यान में रखेंगे।

अगर तीन जन-सिद्धान्त पुरानी श्रेणी के हुए, तो कम्युनिज्म के न्यूनतम कार्यक्रम के साथ बुनियादी तौर पर उनकी कोई समानता नहीं होगी, क्योंकि वे अतीत के होंगे और पुराने पड़ चुके होंगे। ऐसे किसी भी प्रकार के तीन जन-सिद्धान्त जो रूस, कम्युनिस्ट पार्टी और किसान-मजदूरों का विरोध करते हैं, निश्चित रूप से प्रतिक्रियावादी हैं ; कम्युनिज्म के न्यूनतम कार्यक्रम के साथ उनकी जरा भी समानता नहीं है, यही नहीं, बल्कि वे कम्युनिज्म के दुश्मन हैं, और दोनों के बीच समान आधार होने का तो सवाल ही नहीं उठता। इस बात पर भी तीन जन-सिद्धान्तों के अनुयाइयों को बड़ी संजीदगी के साथ विचार करना चाहिए।

बहरहाल, जब तक साम्राज्यवाद तथा सामन्तवाद का विरोध करने का काम बुनियादी तौर पर पूरा नहीं हो जाता, तब तक अन्तःचेतना वाले लोग नए तीन जन-सिद्धान्तों का परित्याग कभी नहीं करेंगे। केवल वाङ चिङ-वेइ और उसके जैसे लोग ही ऐसा करते हैं। वे अपने उन नकली तीन जन-सिद्धान्तों को जो रूस, कम्युनिस्ट पार्टी और किसान-मजदूरों का विरोध करते हैं, चाहे कितने ही जोर से क्यों न आगे लाएं, निश्चय ही अन्तःचेतना व न्याय-भावना से सम्पन्न ऐसे लोगों का अभाव नहीं होगा जो डा० सुन यात-सेन के असली तीन जन-सिद्धान्तों का समर्थन करना जारी रखेंगे। जब १९२७ की प्रतिक्रिया के बाद भी असली तीन जन-सिद्धान्तों के अनेक अनुयाइयों ने चीनी क्रान्ति के लिए प्रयास करना जारी रखा, तो आज जबकि राष्ट्रीय शत्रु हमारे भूखण्ड में भीतर तक घुस आया है, ऐसे लोगों की संख्या निस्सन्देह सैकड़ों-हजारों तक पहुंच जाएगी। हम कम्युनिस्ट तीन जन-सिद्धान्तों के तमाम सच्चे अनुयाइयों के साथ दीर्घकाल तक सहयोग बनाए रखेंगे, और गद्दारों व कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टर दुश्मनों को छोड़कर, अपने किसी भी मित्र का कभी परित्याग नहीं करेंगे।

११. नव-जनवाद की संस्कृति

ऊपर हमने नई अवधि में चीनी राजनीति की ऐतिहासिक विशिष्टताओं और नव-जनवादी गणराज्य के प्रश्न को समझाया है। अब हम संस्कृति के प्रश्न पर विचार कर सकते हैं।

कोई भी संस्कृति एक समाज-विशेष की राजनीति व अर्थतंत्र का ही विचारधारात्मक प्रतिबिम्ब होती है। चीन में एक साम्राज्यवादी संस्कृति है जो राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्रों में साम्राज्यवादियों के शासन अथवा आंशिक शासन का प्रतिबिम्ब है। इस संस्कृति को चीन में साम्राज्यवादियों द्वारा सीधे चलाए जाने वाले सांस्कृतिक संगठनों द्वारा ही नहीं बल्कि अनेक ऐसे चीनियों द्वारा भी बढ़ावा दिया जाता है जो शरमो-हया पूरी तरह खो चुके हैं। इस कोटि में वह समूची संस्कृति आती है जो एक गुलाम विचारधारा को साकार रूप देती है। चीन में एक अर्ध-सामन्ती संस्कृति भी है जो उसकी अर्ध-सामन्ती राजनीति व अर्थतंत्र को प्रतिबिम्बित करती है, और जिसके पक्षधरों में वे सब लोग शामिल हैं जो कनफ्यूशियस की पूजा, कनफ्यूशियसी धर्मसूत्रों के अध्ययन, पुरानी नैतिक-संहिता और पुराने विचारों की वकालत करते हैं तथा नई संस्कृति और नए विचारों का विरोध करते हैं। साम्राज्यवादी संस्कृति और अर्ध-सामन्ती संस्कृति सगी बहनें हैं और उन्होंने चीन की नई संस्कृति

के विरुद्ध एक प्रतिक्रियावादी सांस्कृतिक गठबन्धन कायम कर लिया है। इस प्रकार की प्रतिक्रियावादी संस्कृति साम्राज्यवादियों और सामन्ती वर्ग की सेवा करती है और उसका खात्मा कर दिया जाना चाहिए। जब तक उसका खात्मा नहीं किया जाता, तब तक किसी भी प्रकार की नई संस्कृति का निर्माण नहीं किया जा सकता। विध्वंस के बिना कोई निर्माण नहीं होता, बांध के बिना कोई बहाव नहीं होता और विराम के बिना कोई गति नहीं होती ; दोनों ही जीवन-मरण के संघर्ष में गूंथे हुए हैं।

जहां तक नई संस्कृति का सम्बन्ध है, वह नई राजनीति और नए अर्थतंत्र का ही विचारधारात्मक प्रतिबिम्ब है और उनकी ही सेवा करती है।

जैसा कि हम परिच्छेद ३ में बता चुके हैं, चीन में जब से पूंजीवादी अर्थतंत्र का उद्‌भव हुआ है तब से चीनी समाज का स्वरूप कदम-ब-कदम बदलता गया है ; अब यह एक सम्पूर्ण सामन्ती समाज नहीं बल्कि एक अर्ध-सामन्ती समाज है, यद्यपि सामन्ती अर्थतंत्र की अभी भी प्रधानता है। सामन्ती अर्थतंत्र की तुलना में यह पूंजीवादी अर्थतंत्र जरा नया है। पूंजीपति वर्ग, निम्न-पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक शक्तियां नई राजनीतिक शक्तियां हैं जो इस नए पूंजीवादी अर्थतंत्र के साथ ही उत्पन्न और विकसित हुई हैं। और यह नई संस्कृति विचारधारात्मक क्षेत्र में इन नई आर्थिक व राजनीतिक शक्तियों को प्रतिबिम्बित करती है और उनकी सेवा करती है। पूंजीवादी अर्थतंत्र के बिना, पूंजीपति वर्ग, निम्न-पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के बिना, और इन वर्गों की राजनीतिक शक्तियों के बिना, नई विचारधारा अथवा नई संस्कृति का उद्‌भव न हो पाता।

ये सभी नई राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक शक्तियां चीन की क्रान्तिकारी शक्तियां हैं, जो पुरानी राजनीति, पुराने अर्थतंत्र और पुरानी संस्कृति के विरुद्ध हैं। पुरातन के दो भाग हैं, एक है चीन की अपनी अर्ध-सामन्ती राजनीति, अर्थतंत्र व संस्कृति, और दूसरा है साम्राज्यवाद की राजनीति, अर्थतंत्र व संस्कृति, और उसमें बाद वाला भाग इस गठबन्धन का प्रमुख भाग है। दोनों ही भाग बुरे हैं और उन्हें पूर्णतया नष्ट कर दिया जाना चाहिए। चीनी समाज में नए और पुराने के बीच का संघर्ष आम जनता (विभिन्न क्रान्तिकारी वर्गों) की नई शक्तियों और साम्राज्यवाद व सामन्ती वर्ग की पुरानी शक्तियों के बीच का संघर्ष है। यह क्रान्ति और प्रतिक्रान्ति के बीच का संघर्ष है। समय के लिहाज से अगर इसे अफीम युद्ध से गिना जाए तो यह संघर्ष पूरे सौ वर्ष चल चुका है, और अगर १९११ की क्रान्ति से गिना जाए तो यह लगभग तीस वर्ष चल चुका है।

लेकिन जैसा कि पहले बताया जा चुका है, क्रान्तियों का भी नए और पुराने में वर्गीकरण किया जा सकता है, और जो क्रान्ति एक ऐतिहासिक अवधि में नई है वह एक अन्य ऐतिहासिक अवधि में पुरानी हो जाती है। चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की शताब्दी को दो मुख्य मंजिलों में बांटा जा सकता है, पहली मंजिल अस्सी साल की है और दूसरी बीस साल की। प्रत्येक की अपनी एक बुनियादी ऐतिहासिक विशिष्टता है, यानी प्रथम अस्सी वर्षों में चीन की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति पुरानी श्रेणी में आती है, जबकि अन्तिम बीस वर्षों में, अन्तरराष्ट्रीय तथा घरेलू राजनीतिक परि-

स्थिति में परिवर्तन होने के कारण, यह क्रान्ति नई श्रेणी में आती है। पुराना जनवाद प्रथम अस्सी वर्षों की विशिष्टता है। नव-जनवाद अन्तिम बीस वर्षों की विशिष्टता है। यह अन्तर राजनीति में भी लागू होता है और संस्कृति में भी।

संस्कृति के क्षेत्र में यह अन्तर किस तरह प्रकट होता है? इस बात को हम आगे समझाएंगे।

१२. चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति की ऐतिहासिक विशिष्टताएं

सांस्कृतिक अथवा विचारधारात्मक मोर्चे पर, ४ मई आन्दोलन से पहले का काल और उसके बाद का काल, ये दो भिन्न ऐतिहासिक काल हैं।

४ मई आन्दोलन से पहले, चीन के सांस्कृतिक मोर्चे पर होने वाला संघर्ष पूंजीपति वर्ग की नई संस्कृति और सामन्ती वर्ग की पुरानी संस्कृति के बीच का संघर्ष था। ४ मई आन्दोलन से पहले, आधुनिक-स्कूल व्यवस्था और शाही-परीक्षा व्यवस्था के बीच,[१६] नई विद्या और पुरानी विद्या के बीच, तथा पश्चिमी विद्या और चीनी विद्या के बीच जो संघर्ष हुए उन सबका स्वरूप यही था। उस समय के तथाकथित आधुनिक स्कूलों, नई विद्या अथवा पश्चिमी विद्या, का ध्यान मुख्यतया प्राकृतिक विज्ञानों और पूंजीपति वर्ग के सामाजिक-राजनीतिक सिद्धान्तों पर केन्द्रित था, जिनकी पूंजीपति वर्ग के प्रतिनिधियों को जरूरत थी (हमने "मुख्यतया" इसलिए

कहा है क्योंकि चीनी सामन्तवाद के हानिकारक अवशेष आंशिक रूप से तब भी बाकी थे)। उस समय, नई विद्या की विचारधारा ने चीनी सामन्तवादी विचारधारा से संघर्ष करने में एक क्रान्तिकारी भूमिका अदा की और पुराने काल की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की सेवा की। लेकिन, चूंकि चीनी पूंजीपति वर्ग में शक्ति की कमी थी और दुनिया साम्राज्यवाद के युग में प्रवेश कर चुकी थी, इसलिए यह पूंजीवादी विचारधारा चन्द ही दौरों में टिक सकी और विदेशी साम्राज्यवाद की गुलाम बनाने वाली विचारधारा और सामन्तवाद की "पुरातन की ओर जाने" वाली विचारधारा के प्रतिक्रियावादी गठबन्धन द्वारा पीछे धकेल दी गई; ज्यों ही इस प्रतिक्रियावादी विचारधारात्मक गठबन्धन ने एक छोटा सा प्रत्याक्रमण शुरू किया, तो तथाकथित नई विद्या ने अपने झण्डे झुका दिए, अपने नगाड़ों को ढांप दिया और पलायन कर दिया, तथा अपना बाह्य रूप तो कायम रखा लेकिन अपनी अन्तरात्मा खो दी। साम्राज्यवाद के युग में पुरानी पूंजीवादी-जनवादी संस्कृति दुर्बल व जर्जर बन गई और उसकी विफलता अनिवार्य हो गई।

लेकिन ४ मई आन्दोलन से स्थिति बदल गई है। चीन में एक बिलकुल नई सांस्कृतिक शक्ति अस्तित्व में आ गई है; वह है चीनी कम्युनिस्टों द्वारा निर्देशित कम्युनिस्ट संस्कृति व विचारधारा, अथवा कम्युनिस्ट विश्व-दृष्टिकोण तथा सामाजिक क्रान्ति का सिद्धान्त। ४ मई आन्दोलन १९१९ में हुआ, और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना तथा चीन के मजदूर आन्दोलन की वास्तविक शुरुआत १९२१ में हुई – यह सब प्रथम विश्वयुद्ध और अक्तूबर क्रान्ति के बाद अर्थात एक ऐसे समय में हुआ जब राष्ट्रीय सवाल

और दुनिया के औपनिवेशिक क्रान्तिकारी आन्दोलनों में एक परिवर्तन आया, और इस प्रकार चीनी क्रान्ति तथा विश्व-क्रान्ति के बीच का सम्बन्ध बिलकुल स्पष्ट हो गया। चीन की नई राजनीतिक शक्ति – सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी ने चीन के राजनीतिक रंगमंच पर कदम रखा, और इसके फलस्वरूप नई सांस्कृतिक शक्ति ने नई वर्दी में और नए हथियारों के साथ तमाम सम्भावित संश्रय-कारियों को एकत्र करके और अपनी पांतों को रण के लिए व्यूहबद्ध करके, साम्राज्यवादी संस्कृति तथा सामन्ती संस्कृति पर वीरतापूर्ण आक्रमण कर दिए हैं। इस नई शक्ति ने सामाजिक विज्ञान और कला-साहित्य के क्षेत्र में विशाल डग भरे हैं, चाहे वह दर्शन, अर्थशास्त्र, राजनीतिक विज्ञान, सैनिक विज्ञान, इतिहास, साहित्य अथवा कला (नाटक, सिनेमा, संगीत, मूर्तिकला और चित्रकला सहित) कोई भी क्षेत्र क्यों न हो। पिछले बीस वर्षों से इस नई सांस्कृतिक शक्ति ने जिस ओर भी धावा बोला वहीं विचारधारात्मक विषय-वस्तु और रूप दोनों ही क्षेत्रों में (उदाहरणार्थ, लिखित भाषा में) एक महान क्रान्ति हुई है। इसका प्रभाव इतना जबर्दस्त है और इसकी शक्ति इतनी प्रबल है कि यह जहां भी जाती है अजेय रहती है। इसने जितनी संख्या में लोगों को अपने पीछे एकत्र किया है, चीन के इतिहास में उसकी कोई मिसाल नहीं है। लू शुन इस नई सांस्कृतिक शक्ति के सबसे महान और सबसे साहसी ध्वजवाहक थे। लू शुन चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति के प्रधान सेनानी थे ; वे न केवल एक महान साहित्यकार थे बल्कि एक महान विचारक तथा महान क्रान्तिकारी भी थे। लू शुन कभी न झुकने वाले फौलादी व्यक्ति थे, किसी भी किस्म की जीहुजूरी अथवा चाटुकारिता से

कोसों दूर थे ; औपनिवेशिक व अर्ध-औपनिवेशिक लोगों में यह गुण अत्यन्त मूल्यवान है। लू शुन सांस्कृतिक मोर्चे पर राष्ट्र के भारी बहुमत का प्रतिनिधित्व करते हुए शत्रु के गढ़ पर आक्रमण करने वाले सबसे सही, सबसे बहादुर, सबसे दृढ़, सबसे वफादार, सबसे उत्साही और अभूतपूर्व राष्ट्रीय वीर थे। जो रास्ता उन्होंने अपनाया, वही चीनी राष्ट्र की नई संस्कृति का रास्ता है।

४ मई आन्दोलन से पहले, चीन की नई संस्कृति पुरानी-जनवादी किस्म की थी और विश्व पूंजीपति वर्ग की पूंजीवादी सांस्कृतिक क्रान्ति का अंग थी। ४ मई आन्दोलन से यह नव-जनवादी किस्म की हो गई है और विश्व सर्वहारा वर्ग की समाजवादी सांस्कृतिक क्रान्ति का अंग बन गई है।

४ मई आन्दोलन से पहले, चीन के नए सांस्कृतिक आन्दोलन का, उसकी सांस्कृतिक क्रान्ति का नेतृत्व पूंजीपति वर्ग कर रहा था, जो तब भी एक नेतृत्वकारी भूमिका अदा करता था। ४ मई आन्दोलन के बाद इस वर्ग की संस्कृति व विचारधारा इसकी राजनीति से भी अधिक पिछड़ गई हैं और कोई नेतृत्वकारी भूमिका अदा करने योग्य नहीं रह गई हैं ; अधिक से अधिक, वे क्रान्तिकारी अवधियों के दौरान किसी हद तक एक संश्रयकारी का काम दे सकती हैं, जबकि इस संश्रय के नेतृत्व की जिम्मेदारी अनिवार्यतः सर्वहारा वर्ग की संस्कृति व विचारधारा के कन्धों पर है। यह एक अकाट्य तथ्य है।

नव-जनवादी संस्कृति विशाल जन-समुदाय की साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी संस्कृति है ; आज यह जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की संस्कृति है। इस संस्कृति का नेतृत्व केवल

सर्वहारा वर्ग की संस्कृति व विचारधारा यानी कम्युनिज्म की विचारधारा ही कर सकती है, किसी अन्य वर्ग की संस्कृति व विचारधारा नहीं। संक्षेप में, नव-जनवादी संस्कृति सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में आम जनता की साम्राज्यवाद-विरोधी व सामन्तवाद-विरोधी संस्कृति ही है।

१३. चार अवधियां

एक सांस्कृतिक क्रान्ति राजनीतिक क्रान्ति व आर्थिक क्रान्ति का विचारधारात्मक प्रतिबिम्ब होती है और उनकी ही सेवा करती है। चीन में राजनीतिक क्रान्ति की ही भांति सांस्कृतिक क्रान्ति में भी एक संयुक्त मोर्चा है।

पिछले बीस वर्षों की सांस्कृतिक क्रान्ति में संयुक्त मोर्चे के इतिहास को चार अवधियों में बांटा जा सकता है। पहली अवधि में १९१९ से १९२१ तक के दो वर्ष आते हैं, दूसरी अवधि में १९२१ से १९२७ तक के छै वर्ष, तीसरी अवधि में १९२७ से १९३७ तक के दस वर्ष, और चौथी अवधि में १९३७ से अब तक के तीन वर्ष।

पहली अवधि १९१९ के ४ मई आन्दोलन से लेकर १९२१ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना तक रही। ४ मई आन्दोलन इसकी मुख्य युगप्रवर्तक घटना थी।

४ मई आन्दोलन एक साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन होने के साथ-साथ एक सामन्तवाद-विरोधी आन्दोलन भी था। इसका मुख्य ऐतिहासिक महत्व एक ऐसे लक्षण के रूप में दिखाई देता है जो १९११ की क्रान्ति में मौजूद नहीं था, यानी साम्राज्यवाद और

सामन्तवाद के प्रति उसका मुकम्मिल और अविचल विरोध। ४ मई आन्दोलन में यह गुण इसलिए मौजूद था क्योंकि उस समय चीन में पूंजीवादी अर्थतंत्र ने अपने विकास के रास्ते पर एक कदम और आगे बढ़ा दिया था, और क्योंकि रूस, जर्मनी और आस्ट्रिया-हंगरी इन तीन बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियों का पतन होते देखकर तथा दो अन्य साम्राज्यवादी शक्तियों, ब्रिटेन और फ्रांस, को कमजोर होते देखकर और रूसी सर्वहारा वर्ग को एक समाजवादी राज्य की स्थापना करते देखकर तथा जर्मनी, हंगरी और इटली के सर्वहारा वर्ग को क्रान्ति के लिए उठते देखकर, चीन के क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों में चीनी राष्ट्र की मुक्ति के लिए नई आशाएं पैदा हो गई थीं। ४ मई आन्दोलन का सूत्रपात उस समय की विश्व-क्रान्ति, रूसी क्रान्ति और लेनिन के आवाहन पर हुआ था। यह उस समय की विश्व सर्वहारा क्रान्ति का एक अंग था। यद्यपि उस समय कम्युनिस्ट पार्टी अस्तित्व में नहीं आई थी, पर ऐसे बुद्धिजीवी बड़ी संख्या में मौजूद थे जो रूसी क्रान्ति का समर्थन करते थे और जिन्हें कम्युनिस्ट विचारधारा का प्रारम्भिक ज्ञान था। ४ मई आन्दोलन शुरू में जनता के तीन हिस्सों – कम्युनिस्ट बुद्धिजीवियों, क्रान्तिकारी निम्न-पूंजीवादी बुद्धिजीवियों और पूंजीपति वर्ग के बुद्धिजीवियों (अन्तिम हिस्सा इस आन्दोलन का दक्षिण पक्ष था) – के एक संयुक्त मोर्चे का क्रान्तिकारी आन्दोलन था। इसकी कमजोरी यह थी कि यह बुद्धिजीवियों तक ही सीमित था और मजदूर व किसान इसमें शामिल नहीं हुए थे। लेकिन ज्यों ही यह ३ जून आन्दोलन[१७] में विकसित हुआ, तो केवल बुद्धिजीवी ही नहीं बल्कि सर्वहारा वर्ग, निम्न-पूंजीपति वर्ग तथा पूंजीपति वर्ग का व्यापक

जन-समुदाय भी इसमें शामिल हो गया, और यह एक राष्ट्रव्यापी क्रान्तिकारी आन्दोलन बन गया। जिस सांस्कृतिक क्रान्ति का ४ मई आन्दोलन ने सूत्रपात किया, वह सामन्ती संस्कृति का पूरी तरह विरोध करती थी, और चीन के इतिहास के उदयकाल से ऐसी महान और सम्पूर्ण सांस्कृतिक क्रान्ति पहले कभी नहीं हुई थी। "पुरानी नैतिकता का विरोध करो और नई नैतिकता का अनुमोदन करो!" तथा "पुराने साहित्य का विरोध करो और नए साहित्य का अनुमोदन करो!" उन दिनों इन दो महान पताकाओं को ऊंचा उठाए हुए, इस सांस्कृतिक क्रान्ति ने महान योगदान किया। उस समय इस सांस्कृतिक आन्दोलन का मजदूरों व किसानों के बीच व्यापक रूप से फैल जाना सम्भव नहीं था। इसने "जन-साधारण के लिए साहित्य" का नारा पेश किया, लेकिन वास्तव में उस समय "जन-साधारण" का तात्पर्य केवल शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग के बुद्धिजीवियों तथा पूंजीपति वर्ग के बुद्धिजीवियों से ही, अर्थात नगरवासी बुद्धिजीवियों से ही था। विचारधारा और कार्यकर्ताओं दोनों की ही दृष्टि से ४ मई आन्दोलन ने १९२१ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना के लिए और ३० मई आन्दोलन तथा उत्तरी अभियान के लिए भूमि तैयार कर दी। इस अवधि में पूंजीपति वर्ग के बुद्धिजीवी ४ मई आन्दोलन का दक्षिण पक्ष थे, और उनमें से अधिकतर लोगों ने दूसरी अवधि में शत्रु के साथ सुलह-समझौता कर लिया और प्रतिक्रियावाद के पक्ष में चले गए।

दूसरी अवधि में, जिसकी युगप्रवर्तक घटनाएं चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना, ३० मई आन्दोलन और उत्तरी अभियान थीं, ४ मई आन्दोलन के दौरान कायम किया गया तीन वर्गों का संयुक्त

मोर्चा जारी रखा गया और उसे विस्तृत किया गया, उसमें किसान वर्ग को भी शामिल किया गया और इन तमाम वर्गों का एक राजनीतिक संयुक्त मोर्चा कायम किया गया, जिसने प्रथम क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग का रूप धारण किया। डा० सुन यात-सेन न केवल इसलिए एक महान व्यक्ति थे कि उन्होंने १९११ की महान क्रान्ति का नेतृत्व किया (यद्यपि यह पुरानी अवधि की ही जनवादी क्रान्ति थी), बल्कि इसलिए भी कि "अपने को दुनिया के रुझानों के अनुकूल ढालते हुए और आम जनता की मांगों को पूरा करते हुए", रूस से संश्रय, कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग और किसान-मजदूरों की सहायता की तीन महान क्रान्तिकारी नीतियों को पेश करने, तीन जन-सिद्धान्तों को नया अर्थ प्रदान करने और इस प्रकार तीन महान नीतियों वाले नए तीन जन-सिद्धान्तों को प्रस्थापित करने की सामर्थ्य उनके अन्दर मौजूद थी। इससे पहले, तीन जन-सिद्धान्तों का शैक्षणिक व अकादमिक जगत पर अथवा नौजवानों पर नगण्य प्रभाव पड़ा था, क्योंकि उन्होंने साम्राज्यवाद का विरोध करने अथवा सामन्ती समाज-व्यवस्था और सामन्ती संस्कृति व विचारधारा का विरोध करने का नारा नहीं लगाया था। वे तब पुराने तीन जन-सिद्धान्त थे जिन्हें लोग कुछ व्यक्तियों द्वारा सत्ता हथियाने, दूसरे शब्दों में, सरकारी पदों को हासिल करने के लिए अस्थायी रूप से उठाया गया झण्डा समझते थे, एक ऐसा झण्डा जो विशुद्ध रूप से राजनीतिक दांवपेंचों के लिए इस्तेमाल किया जाता था। इसके बाद तीन महान नीतियों वाले नए तीन जन-सिद्धान्त सामने आए। क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच सहयोग तथा दोनों पार्टियों के क्रान्तिकारी सदस्यों के संयुक्त प्रयासों ने इन

नए तीन जन-सिद्धान्तों को सारे चीन में फैला दिया, जिसमें शैक्षणिक व अकादमिक जगत का एक भाग और नौजवान छात्रों का व्यापक समुदाय भी शामिल थे। इसका एकमात्र कारण यह था कि मूल तीन जन-सिद्धान्त, साम्राज्यवाद-विरोधी व सामन्तवाद-विरोधी तीन महान नीतियों वाले नव-जनवादी तीन जन-सिद्धान्तों में विकसित हो गए थे। इस विकास के बिना तीन जन-सिद्धान्तों में समाविष्ट विचारों का फैलना असम्भव हो जाता।

इस अवधि के दौरान, ये क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्त क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के तथा तमाम क्रान्तिकारी वर्गों के संयुक्त मोर्चे का राजनीतिक आधार बन गए, और चूंकि "कम्युनिज्म तीन जन-सिद्धान्तों का अच्छा मित्र है", इसलिए उन दोनों के बीच एक संयुक्त मोर्चा कायम हो गया। सामाजिक वर्गों की दृष्टि से यह सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग और पूंजीपति वर्ग का संयुक्त मोर्चा था। कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रकाशित "साप्ताहिक मार्गदर्शक", क्वोमिन्ताङ द्वारा शांघाई से प्रकाशित "रिपब्लिकन दैनिक समाचार" तथा विभिन्न स्थानों से प्रकाशित अन्य अखबारों को अपनी कार्यवाही के आधार के रूप में इस्तेमाल करते हुए, दोनों पार्टियों ने साम्राज्यवाद-विरोध का संयुक्त रूप से प्रचार किया, कनफ्यूशियस की पूजा करने और कनफ्यूशियसी धर्मसूत्रों का अध्ययन करने पर आधारित सामन्तवादी शिक्षा का संयुक्त रूप से विरोध किया और सामन्ती साहित्य व क्लासिकी भाषा की लेखन-शैली का संयुक्त रूप से विरोध किया, तथा साम्राज्यवाद-विरोधी व सामन्तवाद-विरोधी विषय-वस्तु से सम्पन्न नए साहित्य और आम बोलचाल की लेखन-शैली को

बढ़ावा दिया। क्वाङतुङ प्रान्त के युद्धों और उत्तरी अभियान के दौरान, उन्होंने चीन की फौजों को साम्राज्यवाद-विरोधी व सामन्तवाद-विरोधी विचारों की शिक्षा देकर उनमें सुधार किया। "भ्रष्टाचारी अफसरों का नाश हो" और "स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों का नाश हो" के नारे करोड़ों किसानों के बीच बुलन्द किए गए, तथा महान किसान क्रान्तिकारी संघर्ष छेड़े गए। इन सब कारणों से और सोवियत संघ की सहायता से उत्तरी अभियान विजयी रहा। लेकिन ज्यों ही बड़े पूंजीपतियों का वर्ग सत्तारूढ़ हुआ, यह क्रान्ति समाप्त हो गई, और इस प्रकार एक बिलकुल नई राजनीतिक परिस्थिति पैदा हो गई।

तीसरी अवधि १९२७-३७ की नई क्रान्तिकारी अवधि थी। चूंकि दूसरी अवधि के अन्त में क्रान्तिकारी शिविर के अन्दर एक परिवर्तन आ चुका था और चीन के बड़े पूंजीपतियों का वर्ग साम्राज्यवादी व सामन्ती शक्तियों के प्रतिक्रान्तिकारी शिविर में चला गया था तथा राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग भी उसका अनुसरण कर रहा था, इसलिए क्रान्तिकारी शिविर में पहले के चार वर्गों में से केवल तीन ही वर्ग रह गए थे, अर्थात सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्से (क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों सहित); और इसके फलस्वरूप चीनी क्रान्ति ने अनिवार्य रूप से एक नई अवधि में प्रवेश किया जिसमें अकेले चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने ही आम जनता का नेतृत्व किया। यह अवधि एक ओर तो "घेरा डालने और विनाश करने" के प्रतिक्रान्तिकारी अभियानों की अवधि थी और दूसरी ओर क्रान्ति के गहन होने की। "घेरा डालने और विनाश करने" के प्रतिक्रान्तिकारी अभियान दो प्रकार के

थे – फौजी और सांस्कृतिक। क्रान्ति का गहन होना भी दो प्रकार का था ; देहाती क्रान्ति तथा सांस्कृतिक क्रान्ति दोनों में ही गहनता आ गई थी। साम्राज्यवादियों के उकसावे पर, "घेरा डालने और विनाश करने" के इन दोनों प्रकार के अभियानों में सारे देश की और सारी दुनिया की प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों को जुटाया गया, जो दस साल के लम्बे अरसे तक चलते रहे और निर्ममता की दृष्टि से अभूतपूर्व थे; लाखों कम्युनिस्टों और नौजवान छात्रों को कत्ल कर दिया गया और दसियों लाख मजदूर व किसान क्रूर उत्पीड़न के शिकार हुए। इन सब बातों के लिए जिम्मेदार लोगों की नजर में यह स्पष्ट रूप से निश्चित था कि कम्युनिज्म और कम्युनिस्ट पार्टी का "सदा-सर्वदा के लिए खात्मा" किया जा सकता है। लेकिन नतीजा इसके विपरीत ही हुआ ; "घेरा डालने और विनाश करने" के दोनों प्रकार के अभियान बुरी तरह विफल हुए। फौजी अभियान के परिणामस्वरूप, लाल सेना ने जापान का प्रतिरोध करने के लिए उत्तर की ओर कूच किया, और सांस्कृतिक अभियान के परिणामस्वरूप, १६३५ में नौजवानों के ६ दिसम्बर क्रान्तिकारी आन्दोलन का सूत्रपात हुआ। और इन दोनों प्रकार के प्रतिक्रान्तिकारी अभियानों का सम्मिलित परिणाम था सारे देश में जनता की जागृति। ये तीन सकारात्मक परिणाम थे। सबसे आश्चर्यजनक बात यह हुई कि क्वोमिन्ताङ का "घेरा डालने और विनाश करने" का सांस्कृतिक अभियान क्वोमिन्ताङ इलाकों में भी पूर्णतया नाकाम रहा, यद्यपि कम्युनिस्ट पार्टी वहां की तमाम सांस्कृतिक संस्थाओं में बिलकुल असुरक्षित स्थिति में थी। ऐसा क्यों हुआ ? क्या इस पर देर तक और गहराई से सोच-विचार नहीं करना चाहिए ?

"घेरा डालने और विनाश करने" के ऐसे ही अभियानों के बीच लू शुन, जो कम्युनिस्ट विचारधारा से लैस थे, चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति के युगपुरुष बन गए।

"घेरा डालने और विनाश करने" के प्रतिक्रान्तिकारी अभियानों का नकारात्मक परिणाम था जापानी साम्राज्यवाद द्वारा हमारे देश के अन्दर घुस आना। यही इस बात का मुख्य कारण है कि आज तक भी सारे देश की जनता उन दस वर्षों के कम्युनिस्ट-विरोध से गहरी नफरत करती है।

इस अवधि के संघर्षों के दौरान, क्रान्तिकारी पक्ष जनता के साम्राज्यवाद-विरोधी तथा सामन्तवाद-विरोधी नव-जनवाद व नए तीन जन-सिद्धान्तों पर कायम रहा, जबकि प्रतिक्रान्तिकारी पक्ष ने साम्राज्यवाद के निर्देशन में जमींदार वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के संश्रय वाली स्वेच्छाचारी हुकूमत थोप दी। उस स्वेच्छाचारी हुकूमत ने डा० सुन यात-सेन की तीन महान नीतियों और उनके नए तीन जन-सिद्धान्तों की राजनीतिक व सांस्कृतिक दोनों ही दृष्टियों से हत्या कर डाली, और चीनी राष्ट्र के लिए विनाशकारी परिणाम पैदा कर दिए।

चौथी अवधि मौजूदा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध की अवधि है। टेढ़ेमेढ़े रास्ते पर चलती हुई, चीनी क्रान्ति अब फिर से चार वर्गों के संयुक्त मोर्चे पर आ गई है ; लेकिन इस संयुक्त मोर्चे का दायरा अब कहीं अधिक व्यापक हो गया है क्योंकि इसकी ऊपरी श्रेणी में शासक वर्गों के अनेक सदस्य शामिल हैं, इसकी बिचली श्रेणी में राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग व निम्न-पूंजीपति वर्ग शामिल हैं, और इसकी निचली श्रेणी में समस्त सर्वहारा वर्ग शामिल है, जिससे

राष्ट्र के विभिन्न वर्ग व तबके जापानी साम्राज्यवाद का दृढ़तापूर्वक प्रतिरोध करने वाले गठबन्धन के सदस्य बन गए हैं। इस अवधि का पहला चरण ऊहान के पतन से पहले तक रहा। इसके दौरान देश के हर क्षेत्र में एक सजीव वातावरण था; राजनीतिक दृष्टि से जनवादीकरण का रुझान मौजूद था और सांस्कृतिक दृष्टि से काफी व्यापक गतिविधियां हो रही थीं। ऊहान के पतन से दूसरा चरण शुरू हो गया है, जिसके दौरान राजनीतिक स्थिति में अनेक परिवर्तन हो गए हैं, बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के एक हिस्से ने शत्रु के सामने आत्मसमर्पण कर दिया है और उसका दूसरा हिस्सा भी प्रतिरोध-युद्ध की शीघ्र समाप्ति का इच्छुक है। सांस्कृतिक क्षेत्र में यह स्थिति ये छिङ और चाङ च्युन-माए आदि की प्रतिक्रियावादी कार्यवाहियों के रूप में और भाषण व प्रेस की आजादी के दमन के रूप में प्रकट हुई है।

इस संकट को दूर करने के लिए, तमाम प्रतिरोध-विरोधी, एकता-विरोधी तथा प्रगति-विरोधी विचारों के खिलाफ दृढ़तापूर्वक संघर्ष चलाया जाना चाहिए, और जब तक इन प्रतिक्रियावादी विचारों को कुचल नहीं दिया जाता, तब तक प्रतिरोध-युद्ध में विजय की आशा नहीं की जा सकती। इस संघर्ष का क्या परिणाम होगा? सारे देश के लोगों के दिमाग में यह एक बड़ा सवाल है। घरेलू और अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति की दृष्टि से देखा जाए तो चीनी जनता की विजय निश्चित है, चाहे प्रतिरोध के मार्ग में कितनी ही बाधाएं क्यों न हों। ४ मई आन्दोलन से अब तक गत बीस वर्षों के दौरान की गई प्रगति न केवल पिछले अस्सी वर्षों की प्रगति से बढ़कर है बल्कि वस्तुतः चीन के इतिहास में पिछले हजारों वर्षों के दौरान

की गई प्रगति से भी बढ़कर है। क्या हम इस बात की कल्पना नहीं कर सकते कि आने वाले बीस वर्षों में चीन और कितनी प्रगति कर लेगा? अंधकार की तमाम शक्तियों का बोलबाला होने से, चाहे वे घरेलू हों या विदेशी, हमारे राष्ट्र पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा है; लेकिन यह बोलबाला जहां इस बात का द्योतक है कि अंधकार की शक्तियों में अभी भी कुछ दम बाकी है, वहां इस बात का भी द्योतक है कि वे अपनी मृत्यु-शय्या पर पड़ी छटपटा रही हैं और व्यापक जनता कदम-ब-कदम अपनी विजय के निकट पहुंचती जा रही है। यह बात चीन के लिए, समूचे पूर्व के लिए और समस्त संसार के लिए सच है।

१४. संस्कृति के स्वरूप के बारे में कुछ गलत विचार

हर नई चीज कठोर और तीव्र संघर्ष की भट्टी में तपकर निकलती है। यह बात नई संस्कृति के बारे में भी सच है जिसने पिछले बीस वर्षों में तीन मोड़ों से गुजरते हुए एक टेढ़ेमेढ़े रास्ते का अनुसरण किया है, और इस दौरान हुए संघर्ष में अच्छे और बुरे दोनों की परख भी हो गई है।

पूंजीपति वर्ग के कट्टरपंथी लोग राजनीतिक सत्ता के प्रश्न की ही तरह संस्कृति के प्रश्न पर भी एकदम गलत हैं। वे न तो चीन की इस नई अवधि की ऐतिहासिक विशिष्टताओं को समझते हैं, और न जनता की नव-जनवादी संस्कृति को ही स्वीकार करते हैं। उनका प्रस्थान-बिन्दु है पूंजीपति वर्ग की स्वेच्छाचारिता, जो संस्कृति के क्षेत्र में पूंजीपति वर्ग की सांस्कृतिक स्वेच्छाचारिता बन जाती

है। ऐसा लगता है कि तथाकथित योरप-अमरीका परस्त पढ़े-लिखे लोगों[१८] का एक हिस्सा (यहां मैं केवल एक हिस्से का ही जिक्र कर रहा हूं), जिसने दरअसल अतीत काल में सांस्कृतिक मोर्चे पर क्वोमिन्ताङ सरकार के "कम्युनिस्टों का विनाश करने" के अभियान का समर्थन किया था, अब कम्युनिस्ट पार्टी पर "अंकुश लगाने" और उसे "क्षयग्रस्त करने" की उसकी नीति का समर्थन कर रहा है। वे लोग यह नहीं चाहते कि मजदूर व किसान राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में अपना सिर ऊंचा उठाएं। पूंजीपति वर्ग के कट्टरपंथियों की सांस्कृतिक स्वेच्छाचारिता का यह रास्ता अवरुद्ध है; राजनीतिक स्वेच्छाचारिता के सवाल की ही तरह इसमें भी घरेलू व अन्तरराष्ट्रीय पूर्वशर्तों का अभाव है। इसलिए बेहतर होगा कि ऐसी सांस्कृतिक स्वेच्छाचारिता को भी "ताक पर" रख दिया जाए।

जहां तक हमारी राष्ट्रीय संस्कृति के दिशामान का सम्बन्ध है, कम्युनिस्ट विचारधारा उसके पथप्रदर्शक की भूमिका अदा करती है, और हमें मजदूर वर्ग के बीच समाजवाद व कम्युनिज्म का प्रचार करने और किसान समुदाय व जनता के अन्य हिस्सों को समुचित रूप से और कदम-ब-कदम समाजवादी शिक्षा देने की भरपूर कोशिश करनी चाहिए। फिर भी समग्र रूप में देखा जाए, तो हमारी राष्ट्रीय संस्कृति अभी समाजवादी नहीं है।

सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व की वजह से नव-जनवाद की राजनीति, अर्थतंत्र व संस्कृति सभी में समाजवादी तत्व मौजूद है, और यह महज एक साधारण तत्व नहीं बल्कि एक निर्णायक तत्व है। लेकिन अगर राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक स्थिति को समग्र रूप में

देखा जाए तो यह अभी तक नव-जनवादी ही है, समाजवादी नहीं। कारण, चीनी क्रान्ति अपनी मौजूदा मंजिल में पूंजीवाद का तख्ता उलटने के लिए की जाने वाली एक समाजवादी क्रान्ति नहीं बल्कि एक पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति है, जिसका केन्द्रीय कार्य मुख्यतया विदेशी साम्राज्यवाद और घरेलू सामन्तवाद का विरोध करना है। राष्ट्रीय संस्कृति के क्षेत्र में यह समझना गलत है कि आज की समूची राष्ट्रीय संस्कृति एक समाजवादी संस्कृति है अथवा होनी चाहिए। यह कम्युनिस्ट विचारधारा के प्रचार-प्रसार को संघर्ष का एक फौरी कार्यक्रम कार्यान्वित करने के साथ उलझा देना है तथा समस्याओं की जांच-पड़ताल करने, अनुसन्धान-कार्य करने, काम का निपटारा करने और कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने में कम्युनिस्ट दृष्टिबिन्दु व तरीके के प्रयोग को चीन की जनवादी क्रान्ति की मंजिल में समूची राष्ट्रीय शिक्षा व राष्ट्रीय संस्कृति की कार्यदिशा के साथ उलझा देना है। समाजवादी अन्तर्वस्तु वाली राष्ट्रीय संस्कृति अनिवार्य रूप से समाजवादी राजनीति व समाजवादी अर्थतंत्र का प्रतिबिम्ब होगी। हमारी राजनीति और अर्थतंत्र में समाजवादी तत्व मौजूद हैं, और इसलिए ये समाजवादी तत्व हमारी राष्ट्रीय संस्कृति में भी प्रतिबिम्बित होते हैं; किन्तु हमारे समाज को समग्र रूप से देखा जाए तो हमारे यहां अभी एक सम्पूर्ण समाजवादी राजनीति व अर्थतंत्र मौजूद नहीं हैं, इसलिए एक सम्पूर्ण समाजवादी राष्ट्रीय संस्कृति भी मौजूद नहीं हो सकती। चूंकि मौजूदा चीनी क्रान्ति विश्व की सर्वहारा-समाजवादी क्रान्ति का ही एक अंग है, इसलिए आज के चीन की नई संस्कृति भी विश्व की सर्वहारा-समाजवादी नई संस्कृति का ही एक अंग है और उसकी एक महान संश्रयकारी है।

हालांकि इस अंग में समाजवादी संस्कृति के महत्वपूर्ण तत्व मौजूद हैं, फिर भी यह समूची राष्ट्रीय संस्कृति, विश्व की सर्वहारा-समाजवादी नई संस्कृति की धारा में एक सम्पूर्ण समाजवादी संस्कृति के रूप में नहीं, बल्कि आम जनता की साम्राज्यवाद-विरोधी व सामन्तवाद-विरोधी नव-जनवादी संस्कृति के रूप में मिल जाती है। चूंकि मौजूदा चीनी क्रान्ति सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व के बिना नहीं चल सकती, इसलिए चीन की नई संस्कृति भी सर्वहारा वर्ग की संस्कृति व विचारधारा के नेतृत्व यानी कम्युनिस्ट विचारधारा के नेतृत्व के बिना नहीं चल सकती। लेकिन चूंकि मौजूदा मंजिल में इस प्रकार के नेतृत्व का मतलब है एक साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी राजनीतिक व सांस्कृतिक क्रान्ति में आम जनता का नेतृत्व करना, इसलिए चीन की नई राष्ट्रीय संस्कृति की अन्तर्वस्तु अब भी समग्र रूप से समाजवादी नहीं बल्कि नव-जनवादी है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज कम्युनिस्ट विचारधारा को और भी अधिक व्यापक रूप से फैलाना चाहिए और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अध्ययन में और अधिक जोर लगाना चाहिए, वरना हम न सिर्फ चीनी क्रान्ति को भावी समाजवादी मंजिल तक ले जाने में असमर्थ साबित होंगे, बल्कि मौजूदा जनवादी क्रान्ति का विजय तक पथप्रदर्शन करने में भी असमर्थ साबित होंगे। लेकिन हमें न सिर्फ कम्युनिस्ट विचारधारा और कम्युनिस्ट समाज-व्यवस्था का प्रचार करने तथा संघर्ष के नव-जनवादी कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के बीच फर्क करना चाहिए, बल्कि समस्याओं की जांच-पड़ताल करने, अनुसन्धान-कार्य करने, काम का निपटारा करने और कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने के कम्युनिस्ट सिद्धान्त व तरीके तथा समूची राष्ट्रीय संस्कृति

की नव-जनवादी कार्यदिशा के बीच भी फर्क करना चाहिए। इन दोनों को एक दूसरे से उलझा देना निस्सन्देह बिलकुल अनुपयुक्त होगा।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि मौजूदा मंजिल में चीन की नई राष्ट्रीय संस्कृति की अन्तर्वस्तु न तो पूंजीपति वर्ग की सांस्कृतिक स्वेच्छाचारिता है और न सर्वहारा वर्ग का विशुद्ध समाजवाद, बल्कि यह सर्वहारा-समाजवादी संस्कृति व विचारधारा के नेतृत्व में आम जनता का साम्राज्यवाद-विरोधी व सामन्तवाद-विरोधी नव-जनवाद है।

१५. एक राष्ट्रीय, वैज्ञानिक और लोक संस्कृति

नव-जनवादी संस्कृति एक राष्ट्रीय संस्कृति है। यह साम्राज्यवादी उत्पीड़न का विरोध करती है और चीनी राष्ट्र के सम्मान व स्वाधीनता की हिमायत करती है। यह हमारे अपने राष्ट्र की है और हमारी अपनी राष्ट्रीय विशिष्टताएं लिए हुए है। यह अन्य तमाम राष्ट्रों की समाजवादी व नव-जनवादी संस्कृतियों से सम्बद्ध है और इनका सम्बन्ध इस प्रकार का है कि ये एक दूसरे से कुछ न कुछ ग्रहण करती हैं और एक दूसरे के विकास में मदद देती हैं तथा परस्पर मिलकर एक नई विश्व संस्कृति का निर्माण करती हैं; लेकिन एक क्रान्तिकारी राष्ट्रीय संस्कृति होने के नाते यह किसी भी राष्ट्र की साम्राज्यवादी प्रतिक्रियावादी संस्कृति से कभी सम्बद्ध नहीं हो सकती। चीन को खुद अपनी संस्कृति के पोषण के लिए विदेशी प्रगतिशील संस्कृति को एक अच्छी-खासी मात्रा में आत्म-

सात करना चाहिए। यह काम अतीत में बहुत कम मात्रा में किया गया था। हमें सिर्फ आज की समाजवादी व नव-जनवादी संस्कृतियों से ही नहीं बल्कि दूसरे देशों की प्राचीन संस्कृतियों से, उदाहरण के लिए विभिन्न पूंजीवादी देशों की नवजागरण युग की संस्कृतियों से भी, ऐसी सभी चीजों को आत्मसात कर लेना चाहिए जो आज हमारे लिए जरा भी उपयोगी हैं। लेकिन हमें ऐसी तमाम विदेशी सामग्री को गुणदोष का विवेचन किए बिना यांत्रिक ढंग से कभी नहीं अपनाना चाहिए, बल्कि इस तरह अपनाना चाहिए जैसे हम अपने भोजन को अपनाते हैं – सबसे पहले उसे चबाते हैं, फिर उसे आमाशय व अंतड़ियों में रसों व स्रावों के साथ होने वाली पाचनक्रिया के हवाले कर देते हैं, और इसके बाद उसे आत्मसात करने योग्य पोषक तत्वों और परित्याग करने योग्य मल-पदार्थों के रूप में अलग करके मल-पदार्थों को निकाल बाहर कर देते हैं और पोषक तत्वों को अपना लेते हैं, तथा तभी यह हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है। "सम्पूर्ण पश्चिमीकरण"[१६] की वकालत करना गलत है। विदेशी सामग्री को ज्यों का त्यों आत्मसात करने के परिणामस्वरूप चीन को अतीत काल में बहुत नुकसान उठाना पड़ा। इसी प्रकार, चीन में मार्क्सवाद को लागू करने में भी चीनी कम्युनिस्टों को निश्चय ही मार्क्सवाद की सर्वव्यापी सच्चाई को चीनी क्रान्ति के ठोस अमल के साथ पूरी तरह और उचित रूप से मिलाना चाहिए, अथवा दूसरे शब्दों में, यह तभी उपयोगी हो सकता है जब मार्क्सवाद की सर्वव्यापी सच्चाई को चीन की राष्ट्रीय विशिष्टताओं के साथ मिलाया जाएगा और वह एक निश्चित राष्ट्रीय रूप ग्रहण कर लेगा, तथा उसे किसी भी हालत में मनोगत ढंग से, महज एक

फार्मूले के रूप में हरगिज लागू नहीं किया जाना चाहिए। जो मार्क्सवादी मार्क्सवाद को फार्मूले का रूप दे देते हैं, वे मार्क्सवाद व चीनी क्रान्ति के साथ एक मूर्खतापूर्ण खिलवाड़ कर रहे हैं। चीनी क्रान्ति की पांतों में ऐसे लोगों के लिए कोई जगह नहीं है। चीनी संस्कृति का अपना रूप होना चाहिए, अपना राष्ट्रीय रूप होना चाहिए। रूप राष्ट्रीय और अन्तर्वस्तु नव-जनवादी – ऐसी ही है आज की हमारी नई संस्कृति।

नव-जनवादी संस्कृति एक वैज्ञानिक संस्कृति है। यह तमाम सामन्ती व अंधविश्वासपूर्ण विचारों का विरोध करती है, और तथ्यों से सत्य की तलाश करने का, वस्तुगत सत्य का और सिद्धान्त को व्यवहार के साथ मिलाने का पक्षपोषण करती है। इस मुद्दे पर, चीनी सर्वहारा वर्ग के वैज्ञानिक विचारों और चीनी पूंजीपति वर्ग के उन भौतिकवादियों व प्राकृतिक वैज्ञानिकों के बीच जो प्रगतिशील हैं, साम्राज्यवाद, सामन्तवाद व अंधविश्वास के विरुद्ध एक संयुक्त मोर्चा कायम करने की सम्भावना तो मौजूद है, किन्तु किसी भी प्रतिक्रियावादी आदर्शवाद के साथ संयुक्त मोर्चा कायम करने की सम्भावना किसी भी सूरत में मौजूद नहीं है। राजनीतिक कार्यवाही के दौरान कम्युनिस्ट कुछ आदर्शवादियों और यहां तक कि धार्मिक लोगों के साथ भी एक साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी संयुक्त मोर्चा कायम कर सकते हैं, लेकिन उनके आदर्शवाद अथवा धार्मिक सिद्धान्तों का समर्थन कभी नहीं कर सकते। चीन के सामन्ती समाज की लम्बी अवधि के दौरान एक शानदार प्राचीन संस्कृति का निर्माण किया गया। इस प्राचीन संस्कृति के विकास का अध्ययन करना, इसके सामन्तवादी कूड़े-

कचरे को हटा देना और इसके जनवादी सारतत्व को आत्मसात कर लेना हमारी नई राष्ट्रीय संस्कृति को विकसित करने और हमारे राष्ट्रीय आत्मविश्वास को बढ़ाने के लिए एक आवश्यक शर्त है, लेकिन हमें गुणदोष का विवेचन किए बिना सभी चीजों को किसी भी हालत में ग्रहण नहीं करना चाहिए। जनता की उत्कृष्ट प्राचीन संस्कृति को, जिसका कमोबेश एक जनवादी व क्रान्तिकारी स्वरूप था, पुराने सामन्ती शासक वर्ग की समस्त पतनशील चीजों से अलग करना आवश्यक है। चीन की मौजूदा नई राजनीति और नया अर्थतंत्र उसकी पुरानी राजनीति और पुराने अर्थतंत्र से ही विकसित हुए हैं, और उसकी मौजूदा नई संस्कृति भी उसकी पुरानी संस्कृति से ही विकसित हुई है ; इसलिए, हमें निश्चय ही अपने इतिहास का आदर करना चाहिए और उसे काटकर अलग नहीं कर देना चाहिए। लेकिन, इतिहास के लिए आदर का अर्थ है उसे एक विज्ञान के रूप में उचित स्थान प्रदान करना और उसके द्वन्द्वात्मक विकास का आदर करना, तथा अतीत का गुणगान करते हुए वर्तमान का निषेध न करना अथवा सामन्ती जहर की किसी भी बूंद की प्रशंसा न करना। जहां तक आम जनता और नौजवान छात्रों का सम्बन्ध है, मुख्य बात यह है कि उनका आगे की ओर देखने के लिए पथप्रदर्शन किया जाए, न कि पीछे की ओर देखने के लिए।

नव-जनवादी संस्कृति आम जनता की संस्कृति है और इसलिए एक जनवादी संस्कृति है। इसे मेहनतकश मजदूर-किसान समुदाय की, जो राष्ट्र की जनसंख्या का ९० प्रतिशत से अधिक है, सेवा करनी चाहिए, और कदम-ब-कदम उसकी अपनी संस्कृति बन जाना चाहिए। क्रान्तिकारी कार्यकर्ताओं को प्रदान किए जाने वाले

ज्ञान और क्रान्तिकारी जनता को प्रदान किए जाने वाले ज्ञान के दर्जे के बीच, सांस्कृतिक स्तर उन्नत करने और लोक-प्रचलित करने के कार्य के बीच फर्क किया जाना चाहिए और परस्पर संगति स्थापित की जानी चाहिए। क्रान्तिकारी संस्कृति व्यापक जन-समुदाय के लिए एक जबर्दस्त क्रान्तिकारी हथियार है। यह क्रान्ति के आने से पहले उसके लिए विचारधारात्मक आधार तैयार करती है और क्रान्ति के दौरान यह आम क्रान्तिकारी मोर्चे के अन्तर्गत एक महत्वपूर्ण व आवश्यक जुझारू मोर्चा है। क्रान्तिकारी सांस्कृतिक कार्य में जुटे हुए लोग इसी सांस्कृतिक मोर्चे पर विभिन्न स्तरों पर तैनात कमाण्डर हैं। "बिना क्रान्तिकारी सिद्धान्त के कोई क्रान्तिकारी आन्दोलन नहीं हो सकता" ; [२०] इस प्रकार हम देख सकते हैं कि क्रान्तिकारी व्यावहारिक आन्दोलन के लिए क्रान्तिकारी सांस्कृतिक आन्दोलन का होना कितना महत्वपूर्ण है। सांस्कृतिक व व्यावहारिक दोनों ही आन्दोलन जन-समुदाय के होने चाहिए। इसलिए जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में तमाम प्रगतिशील सांस्कृतिक कार्यकर्ताओं के पास अपनी सांस्कृतिक सेना, अर्थात व्यापक जन-समुदाय का होना आवश्यक है। एक ऐसा क्रान्तिकारी सांस्कृतिक कार्यकर्ता जो आम जनता के सम्पर्क से दूर है, एक "सेनाविहीन सेनानी" है, जिसकी गोलन्दाजी की शक्ति शत्रु को धराशायी नहीं कर सकती। इस ध्येय की प्राप्ति के लिए, चीनी भाषा की लिपि में, आवश्यक स्थितियां पैदा होने पर, सुधार किया जाना चाहिए, और हमारी भाषा को जनता की भाषा के और ज्यादा निकट लाया जाना चाहिए, तथा इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि जनता ही हमारी क्रान्तिकारी संस्कृति का अनन्त स्रोत है।

एक राष्ट्रीय, वैज्ञानिक व लोक संस्कृति ही ग्राम जनता की साम्राज्यवाद-विरोधी व सामन्तवाद-विरोधी संस्कृति है, नव-जनवाद की संस्कृति है, चीनी राष्ट्र की नई संस्कृति है।

नव-जनवाद की राजनीति, अर्थतंत्र व संस्कृति का सम्मिलन — यही नव-जनवादी गणराज्य है, यही नाम और यथार्थ दोनों में चीनी गणराज्य है, यही नया चीन है जिसका हम निर्माण करना चाहते हैं।

वह देखो, नया चीन हमारी नजरों के सामने है। आओ, हम सब उसका अभिवादन करें!

नए चीन के मस्तूल क्षितिज के ऊपर उठ चुके हैं। आओ, हम सब उसके स्वागत में हर्षध्वनि करें!

अपने दोनों हाथ उठा लो। नया चीन हमारा है!

नोट

१ "चीनी संस्कृति" जनवरी १९४० में येनान में स्थापित की गई एक पत्रिका थी; यह लेख पहली बार इसी पत्रिका के प्रथम अंक में प्रकाशित हुआ था।

२ कार्ल मार्क्स, "राजनीतिक अर्थशास्त्र की समालोचना में एक योगदान", प्राक्कथन।

३ कार्ल मार्क्स, "फायरबाख सम्बन्धी स्थापनाएं"।

४ जे० वी० स्तालिन, "अक्तूबर क्रान्ति और राष्ट्रीय सवाल"।

५ वी० आई० लेनिन, "साम्राज्यवाद, पूंजीवाद की चरम अवस्था"।

६ ये सोवियत-विरोधी मुहिमें च्याङ काई-शेक द्वारा क्रान्ति के प्रति विश्वासघात किए जाने के बाद क्वोमिन्ताङ सरकार द्वारा उकसाई गई थीं। १३ दिसम्बर

१९२७ को, क्वोमिन्ताङ ने क्वाङचओ में सोवियत वाइस-कान्सुल की हत्या कर दी और अगले दिन नानकिङ में स्थित क्वोमिन्ताङ सरकार ने "रूस से सम्बन्ध तोड़ने का आदेश" जारी करके, विभिन्न प्रान्तों में सोवियत कान्सुलों को दी गई सरकारी मान्यता वापस ले ली और सोवियत वाणिज्य प्रतिष्ठानों को अपनी गतिविधि बन्द करने का आदेश दे दिया। अगस्त १९२९ में च्याङ काई-शेक ने साम्राज्यवादियों के उकसावे पर, उत्तर-पूर्व में सोवियत संघ के विरुद्ध भड़कावे की कार्यवाहियां कीं, जिनके परिणामस्वरूप सशस्त्र मुठभेड़ें हुईं।

७ कमाल प्रथम विश्वयुद्ध के बाद तुर्की के सौदागर पूंजीपति वर्ग का प्रतिनिधि था। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने अपने अधीनस्थ राज्य यूनान को तुर्की के विरुद्ध सशस्त्र आक्रमण करने के लिए भड़काया, लेकिन तुर्की की जनता ने सोवियत संघ की मदद से १९२२ में यूनानी फौजों को हरा दिया। १९२३ में कमाल तुर्की का राष्ट्रपति चुना गया। स्तालिन ने कहा था :

> कमालवादी क्रान्ति, विदेशी साम्राज्यवादियों के विरुद्ध संघर्ष के दौरान उठ खड़ी हुई उच्च श्रेणियों की क्रान्ति है, राष्ट्रीय सौदागर पूंजीपति वर्ग की क्रान्ति है, जिसका विकास बाद में सारतः किसानों व मजदूरों के विरुद्ध, एक भूमि-क्रान्ति की हर सम्भावना के विरुद्ध होने वाला है। (देखिए: स्तालिन, "सुन यात-सेन विश्वविद्यालय के छात्रों से बातचीत")।

८ यहां कामरेड माओ त्सेतुङ का संकेत चाङ च्युन-माए और उसके गिरोह की ओर है। ४ मई आन्दोलन के बाद चाङ च्युन-माए ने खुल्लमखुल्ला विज्ञान का विरोध किया और आध्यात्मवाद की, जिसे वह "आत्मिक संस्कृति" कहता था, वकालत की, और इस प्रकार वह "आध्यात्मवाद-विक्रेता" कहलाया जाने लगा। च्याङ काई-शेक और जापानी आक्रमणकारियों का समर्थन करने के लिए उसने च्याङ काई-शेक के आदेश पर दिसम्बर १९३८ में "श्री माओ त्सेतुङ के नाम खुला पत्र" प्रकाशित किया, जिसमें उसने आठवीं राह सेना, नई चौथी सेना और शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र के उन्मूलन का वहशियाना प्रचार किया।

९ देखिए : क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग की स्थापना पर चीनी कम्युनिस्ट

पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का घोषणापत्र, जिसे सितम्बर १९३७ में जारी किया गया था।

१० देखिए : डा० सुन यात-सेन द्वारा १९२४ में दिए गए "जन-जीविका के सिद्धान्त पर भाषण", भाषण २।

११ छन ली-फू ने, जो च्याङ काई-शेक गुट के खुफिया विभाग के कुख्यात सरगनाओं में से एक था, कई प्रतिक्रियावादी जरखरीद-लेखकों से "जीवन-शक्तिवाद" शीर्षक एक बेसिरपैर का ऊटपटांग लेख लिखवाया, जिसमें क्वो-मिन्ताङ के फासिज्म का ढोल पीटा गया था और जिसे छन ली-फू के कुख्यात नाम से प्रकाशित किया गया था।

१२ "श्रम के अनुसार वितरण का सिद्धान्त" शानशी प्रान्त के बड़े जमींदारों और बड़े दलाल-पूंजीपतियों के प्रतिनिधि, युद्ध-सरदार येन शी-शान द्वारा निर्लज्जतापूर्वक पेश किया गया एक शब्दाडम्बरपूर्ण नारा था।

१३ "दोनों पक्षों से होने वाले प्रहारों का मुकाबला करना" – यह वाङ चिङ-वेइ द्वारा १९२७ में क्रान्ति के साथ गद्दारी करने के बाद लिखे गए एक लेख का शीर्षक था।

१४ "यूगोस्लाविया के राष्ट्रीय सवाल के बारे में" शीर्षक भाषण जे० वी० स्तालिन द्वारा ३० मार्च १९२५ को कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल की कार्यकारिणी समिति के यूगोस्लाव कमीशन में दिया गया था। इसमें स्तालिन ने कहा था :

> ...किसान समुदाय राष्ट्रीय आन्दोलन की मुख्य सेना है... किसानों की इस सेना के बिना कोई शक्तिशाली राष्ट्रीय आन्दोलन न तो है और न हो सकता है। यही मतलब होता है जब कहा जाता है कि राष्ट्रीय सवाल मूलतः एक किसानों का सवाल है।

१५ कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा देहातों में क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्र कायम करने पर जोर दिए जाने के विरुद्ध, कम्युनिस्ट पार्टी के अन्दर मौजूद कुछ कठमुल्लावादियों ने इसे "पहाड़ों पर चले जाने का सिद्धान्त" कहकर इस पर व्यंग किया था। यहां कामरेड माओ त्सेतुङ ने इस व्यंग्योक्ति का प्रयोग देहाती क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों की महान भूमिका को समझाने के लिए किया है।

१६ आधुनिक-स्कूल व्यवस्था योरप तथा अमरीका के पूंजीवादी देशों की

शिक्षा-व्यवस्था के नमूने पर आधारित थी। शाही-परीक्षा व्यवस्था सामन्ती चीन की पुरानी परीक्षा व्यवस्था थी। १९वीं शताब्दी के अन्त में चीन के सुधारवादी बुद्धिजीवियों ने शाही-परीक्षा व्यवस्था को खत्म करने और आधुनिक स्कूलों की स्थापना करने पर जोर दिया।

१७ ३ जून आन्दोलन देशभक्तिपूर्ण ४ मई आन्दोलन की एक नई मंजिल था। ३ जून १९१९ को पेकिङ में छात्रों ने सेना तथा पुलिस द्वारा किए गए उत्पीड़न और दमन के खिलाफ सार्वजनिक सभाएं कीं और भाषण दिए। उन्होंने हड़ताल कर दी और यह हड़ताल शांघाई, नानकिङ, थ्येनचिन, हाङचओ, ऊहान और च्योच्याङ तथा शानतुङ और आनह्वेइ प्रान्तों के मजदूरों व व्यापारियों में फैल गई। इस प्रकार ४ मई आन्दोलन एक व्यापक जन-आन्दोलन में परिणत हो गया, जिसमें सर्वहारा वर्ग, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग तथा राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग सभी ने भाग लिया।

१८ तथाकथित योरप-अमरीका परस्त पढ़े-लिखे लोग वे थे जिनका प्रतिनिधित्व हू श करता था।

१९ "सम्पूर्ण पश्चिमीकरण" चीनी पूंजीपति वर्ग के उन चन्द बुद्धिजीवियों द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण था जो पश्चिम की घिसी-पिटी व्यक्तिवादी पूंजीवादी संस्कृति की आंख मूंदकर प्रशंसा करते थे और सभी क्षेत्रों में पूंजीवादी योरप व अमरीका की पूरी नकल करने की वकालत करते थे।

२० वी० आई० लेनिन, "क्या करें?", अध्याय १, परिच्छेद ४।

आत्मसमर्पण के खतरे को दूर करो और स्थिति को बेहतर बनाने का प्रयास करो*

२८ जनवरी १९४०

वर्तमान घटना-विकास ने यह साबित कर दिया है कि केन्द्रीय कमेटी द्वारा किए गए मूल्यांकन सही हैं। बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग द्वारा अपनाई गई आत्मसमर्पणवादी कार्य-दिशा सर्वहारा वर्ग, किसानों, शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग और मध्यम पूंजीपति वर्ग द्वारा अपनाई गई सशस्त्र प्रतिरोध की कार्य-दिशा के बिलकुल विपरीत है, तथा इन दोनों ही कार्यदिशाओं के बीच संघर्ष जारी है। इस समय दोनों ही कार्यदिशाएं मौजूद हैं और भविष्य में इन दोनों में से कोई एक विजयी होगी। इस सम्बन्ध में हमारी समूची पार्टी के कामरेडों को जिस चीज का एहसास हो जाना बहुत जरूरी है वह यह है कि आत्मसमर्पण, कम्युनिस्ट-विरोध और प्रतिगमन के गम्भीर मामलों को, जो विभिन्न स्थानों पर देखने में आए हैं, अलग-थलग घटनाओं के रूप में नहीं देखना चाहिए। हमें उनकी गम्भीरता को समझना चाहिए, उनके विरुद्ध दृढ़तापूर्वक संघर्ष करना चाहिए तथा उनके प्रभाव से दब नहीं जाना चाहिए। अगर

---

* यह कामरेड माओ त्सेतुङ द्वारा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की ओर से लिखा गया एक अन्त:पार्टी निर्देश है।

हमारे अन्दर यह भावना मौजूद न रही, अगर हमने इन घटनाओं से दृढ़तापूर्वक निपटने की सही नीति न अपनाई, अगर हमने क्वोमिन्ताङ कट्टरतावादियों को "कम्युनिस्ट पार्टी पर फौजी नियंत्रण" और "कम्युनिस्ट पार्टी पर राजनीतिक नियंत्रण" की नीति कार्यान्वित करने दी और अगर हम संयुक्त मोर्चा भंग हो जाने के डर में ही मुब्तिला रहे, तो हमारे प्रतिरोध-युद्ध के भविष्य के लिए खतरा पैदा हो जाएगा, आत्मसमर्पणवाद और कम्युनिस्ट-विरोध देशभर में फैल जाएगा और संयुक्त मोर्चे के भंग होने का वास्तविक खतरा पैदा हो जाएगा। लेकिन यह बात बिलकुल स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि प्रतिरोध-युद्ध जारी रखने, एकता बनाए रखने और प्रगति जारी रखने के हमारे संघर्ष के लिए अनुकूल अनेक वस्तुगत परिस्थितियां देश के अन्दर तथा बाहर अब भी मौजूद हैं। मिसाल के लिए, चीन के प्रति जापान हमेशा की ही तरह अब भी एक अत्यन्त कठोर नीति अपनाए हुए है; एक तरफ बरतानिया, अमरीका और फ्रांस तथा दूसरी तरफ जापान के बीच मौजूद अन्तरविरोधों के कुछ हल्का पड़ जाने के बावजूद भी उनके बीच कोई वास्तविक सामंजस्य पैदा नहीं हो सका है और योरपीय युद्ध के कारण पूर्व में बरतानिया और फ्रांस की स्थिति कमजोर हो गई है, इसलिए किसी दूरपूर्वी म्यूनिख सम्मेलन का आयोजन करना बहुत मुश्किल है; और सोवियत संघ चीन की सक्रिय रूप से मदद कर रहा है। ये अन्तरराष्ट्रीय तत्व हैं जिनकी वजह से क्वोमिन्ताङ का आत्मसमर्पण या सुलह-समझौता कर सकना अथवा कोई देशव्यापी कम्युनिस्ट-विरोधी युद्ध छेड़ सकना मुश्किल हो गया है। देश के भीतर, कम्युनिस्ट पार्टी और आठवीं राह सेना व नई चौथी सेना

आत्मसमर्पणवाद का दृढ़तापूर्वक विरोध कर रही हैं तथा प्रतिरोध और एकता की नीति का दृढ़तापूर्वक पक्षपोषण कर रही हैं; मध्यवर्ती वर्ग भी आत्मसमर्पण की नीति के विरुद्ध हैं; और क्वोमिन्ताङ के अन्दर मौजूद आत्मसमर्पणवादी और कट्टरतावादी लोग सत्तारूढ़ होते हुए भी संख्या की दृष्टि से अल्पमत में हैं। ये घरेलू तत्व हैं जिनकी वजह से क्वोमिन्ताङ का आत्मसमर्पण या सुलह-समझौता कर सकना अथवा कोई देशव्यापी कम्युनिस्ट-विरोधी युद्ध छेड़ सकना मुश्किल हो गया है। इन परिस्थितियों में हमारी पार्टी का कार्य यह है कि उसे एक तरफ तो आत्मसमर्पणवादियों और कट्टरतावादियों के फौजी व राजनीतिक हमलों का दृढ़तापूर्वक प्रतिरोध करना चाहिए तथा दूसरी तरफ उसे राजनीतिक पार्टियों, सरकारी संगठनों, फौजों, नागरिकों और बुद्धिजीवियों के संयुक्त मोर्चे का सक्रिय रूप से विकास करना चाहिए और इस बात के लिए यथाशक्ति प्रयास करना चाहिए कि वह क्वोमिन्ताङ के बहुसंख्यक लोगों को, मध्यवर्ती तबकों को और जापान-विरोधी फौजों में हमारे प्रति हमदर्दी रखने वाले लोगों को अपने पक्ष में कर ले, जन-आन्दोलन को अधिकाधिक गहराई तक ले जाए, बुद्धिजीवियों को अपने पक्ष में कर ले, जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाए, जापान-विरोधी सशस्त्र शक्तियों और जापान-विरोधी राजनीतिक सत्ता के संगठनों का प्रसार करे तथा खुद अपने को सुदृढ़ बनाए और अपनी प्रगति को सुनिश्चित कर दे। अगर ये दोनों ही कार्य हम साथ-साथ कर सके, तो हम बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के आत्मसमर्पण के खतरे को दूर कर सकेंगे और समूची परिस्थिति को बेहतर बना सकेंगे। इसलिए, पार्टी की वर्तमान

आम नीति यह है कि समूची परिस्थिति को बेहतर बनाने का प्रयास किया जाए और साथ ही हर तरह के सम्भावित संकटों के प्रति सतर्क रहा जाए (ऐसे संकट अभी तक सीमित और स्थानीय स्तर पर ही पैदा हुए हैं)।

अब चूंकि वाङ चिङ-वेइ ने अपनी वतनफरोश संधि[१] का ऐलान कर दिया है और च्याङ काई-शेक ने राष्ट्र के नाम अपना संदेश प्रकाशित कर दिया है, इसलिए एक तरफ तो शान्ति कायम करने के लिए चलाए जाने वाले आन्दोलन को अवश्य ही धक्का लगेगा और प्रतिरोध का पक्षपोषण करने वाली शक्तियों में अवश्य ही वृद्धि होगी, तथा दूसरी तरफ, "कम्युनिस्ट पार्टी पर फौजी नियंत्रण" और "कम्युनिस्ट पार्टी पर राजनीतिक नियंत्रण" जारी रहेगा, स्थानीय घटनाएं पहले से ज्यादा होने लगेंगी, और यह भी सम्भव है कि क्वोमिन्ताङ हम पर हमला करने के लिए तथाकथित "विदेशी शत्रु के खिलाफ एकता कायम करने" पर जोर दे। इसका कारण यह है कि प्रतिरोध और प्रगति का पक्षपोषण करने वाली शक्तियां निकट भविष्य में इतनी शक्तिशाली नहीं बन सकतीं कि वे आत्म-समर्पणवादी और प्रतिगामी शक्तियों पर पूरी तरह हावी हो जाएं। हमारी नीति यह है कि हम देश के उन सभी भागों में, जहां कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन मौजूद हैं, वाङ चिङ-वेइ की वतनफरोश संधि के खिलाफ अपने प्रचार को दूर-दूर तक फैला देने में कोई भी कसर उठा नहीं रखेंगे। च्याङ काई-शेक अपने संदेश में तो यह कहता है कि वह प्रतिरोध-युद्ध जारी रखेगा, लेकिन वह न तो राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाने की आवश्यकता पर जोर देता है और न प्रतिरोध और प्रगति पर डटे रहने की किसी नीति की ही चर्चा

करता है, जिसके बिना प्रतिरोध-युद्ध में डटे रहना बिलकुल असम्भव है। इसलिए वाङ चिङ-वेइ का विरोध करने के आन्दोलन में हमें इन बातों पर जोर देना चाहिए: (१) प्रतिरोध-युद्ध को अन्त तक चलाने की राष्ट्रीय नीति का समर्थन करो और वाङ चिङ-वेइ की वतनफरोश संधि का विरोध करो; (२) समूचे देश की जनता एक हो जाए और गद्दार वाङ चिङ-वेइ तथा उसकी कठपुतली केन्द्रीय सरकार का तख्ता उलट दे; (३) क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के सहयोग का समर्थन करो और वाङ चिङ-वेइ की कम्युनिज्म-विरोधी नीति को कुचल दो; (४) वाङ चिङ-वेइ मार्का छिपे हुए गद्दारों का नाश हो, कम्युनिज्म-विरोध वाङ चिङ-वेइ की एक साजिश है जिसका मकसद जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे में फूट डालना है; (५) राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाओ और अन्दरूनी "टकराव" दूर करो; (६) राजनीतिक सुधार लागू करो, वैधानिक व्यवस्था कायम करने के आन्दोलन को आगे बढ़ाओ और जनवाद को लागू करो; (७) राजनीतिक पार्टियों पर से पाबन्दियां हटा लो और जापान-विरोधी पार्टियों व ग्रुपों को कानूनी हैसियत प्रदान करो; (८) जनता में भाषण देने और सभा बुलाने की आजादी के अधिकार की गारन्टी करो, ताकि वह जापानी आक्रमणकारियों और चीनी गद्दारों के विरुद्ध संघर्ष कर सके; (९) जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाओ और वाङ चिङ-वेइ मार्का गद्दारों की फूटपरस्त साजिशों का विरोध करो; (१०) प्रतिरोध-युद्ध में सचमुच अच्छी तरह लड़ने वाली फौजों का समर्थन करो और मोर्चों के लिए प्रचुर मात्रा में रसद-सप्लाई करो; और (११) प्रतिरोध के कार्य की सेवा करने वाली

सांस्कृतिक गतिविधियों को बढ़ावा दो, प्रगतिशील नौजवानों की रक्षा करो और दुश्मन से गठबन्धन कायम करने वाले विचारों की हर तरह की अभिव्यक्ति पर प्रतिबन्ध लगा दो। इन नारों का व्यापक रूप से प्रचार करना चाहिए। हर जगह भारी संख्या में लेखों, घोषणापत्रों, पर्चों और पुस्तिकाओं को प्रकाशित करना चाहिए और भाषण आयोजित करने चाहिए, तथा स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अन्य नारे भी इनमें जोड़ देने चाहिए।

वाङ चिङ-वेइ की वतनफरोश संधि की निन्दा करने के लिए १ फरवरी को येनान में एक आम सभा का आयोजन किया जाएगा। सभी व्यवसायों की जनता के साथ मिलकर और क्वोमिन्ताङ के जापान-विरोधी सदस्यों के साथ मिलकर, हमें इस तरह की आम सभाएं फरवरी के प्रारम्भ या मध्य में सभी स्थानों पर आयोजित करनी चाहिए, ताकि आत्मसमर्पण के विरुद्ध, गद्दारों के विरुद्ध और "टकराव" के विरुद्ध एक देशव्यापी उभार पैदा किया जा सके।

नोट

[१] वाङ चिङ-वेइ ने १९३९ के अन्त में जापानी हमलावरों के साथ एक वतनफरोश गुप्त संधि पर हस्ताक्षर किए, जो "जापान और चीन के सम्बन्धों को पुनर्व्यवस्थित करने का प्रोग्राम" कहलाती है। इस संधि की मुख्य बातें इस प्रकार थीं :

(१) उत्तर-पूर्वी चीन को जापान के हवाले कर दिया जाए और "मंगोलियाई प्रदेश" (अर्थात तत्कालीन स्वेय्वान, छाहाड़ और उत्तरी शानशी), उत्तरी चीन, याङत्सी घाटी के निचले भाग और दक्षिणी चीन के द्वीपों को "घनिष्ठ जापान-चीन गठबन्धन का क्षेत्र" बना दिया जाए, जिस पर जापानी फौजें स्थाई रूप से अपना कब्जा कायम कर लें।

(२) केन्द्रीय सरकार से लेकर स्थानीय सरकार तक सभी स्तरों की कठपुतली हुकूमतें जापानी सलाहकारों या अधिकारियों की देखरेख में काम करें।

(३) कठपुतली फौज और पुलिस की ट्रेनिंग जापानी फौजी निर्देशकों द्वारा की जाए तथा उनका साज-सामान भी जापान द्वारा ही सप्लाई किया जाए।

(४) कठपुतली सरकार की वित्तीय और आर्थिक नीतियों, उसके औद्योगिक व कृषि कारोबारों तथा उसके संचार-साधनों को जापान के नियंत्रण में रखा जाए और चीन के प्राकृतिक साधन-स्रोतों का शोषण जापान को निर्बाध रूप से करने दिया जाए।

(५) समस्त जापान-विरोधी गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाए।

तमाम जापान-विरोधी शक्तियों को एकताबद्ध करो और कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के खिलाफ संघर्ष करो*

१ फरवरी १६४०

हम येनान के सभी व्यवसायों के लोग आज यहां क्यों सभा कर रहे हैं? हम यहां गद्दार वाङ चिङ-वेइ की भर्त्सना करने के लिए सभा कर रहे हैं, हम यहां तमाम जापान-विरोधी शक्तियों को एकताबद्ध करने और कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के खिलाफ संघर्ष करने के लिए सभा कर रहे हैं।

हम कम्युनिस्ट लोग बार-बार यह बता चुके हैं कि जापानी साम्राज्यवाद चीन को गुलाम बनाने की नीति अपनाने पर तुला हुआ है। जापान में चाहे कैसा ही मंत्रिमण्डल क्यों न स्थापित हो जाए, वह चीन को गुलाम बनाने और अपना उपनिवेश बना डालने की अपनी बुनियादी नीति को हरगिज नहीं बदलेगा। इस बात से अत्यन्त भयभीत होकर वाङ चिङ-वेइ ने, जो चीन के बड़े पूंजी-पतियों के वर्ग के जापान-परस्त गुट का राजनीतिक प्रतिनिधि है,

---

* यह भाषण कामरेड माओ त्सेतुङ ने येनान में वाङ चिङ-वेइ की भर्त्सना करने के लिए आयोजित एक विशाल जन-सभा में दिया था।

जापान के सामने घुटने टेक दिए हैं और जापान के साथ देशद्रोह-पूर्ण समझौता कर लिया है, तथा इस प्रकार उसने चीन को जापानी साम्राज्यवाद के हाथ बेच दिया है। यही नहीं, वह जापान-विरोधी सरकार के खिलाफ एक कठपुतली सरकार कायम करना चाहता है और जापान-विरोधी फौज के खिलाफ एक कठपुतली फौज कायम करना चाहता है। आजकल वह च्याङ काई-शेक का विरोध करने की चर्चा कम करता है और सुनने में यह आया है कि वह "च्याङ के साथ संश्रय कायम करने" की नीति अपना चुका है। कम्युनिस्टों का विरोध करना जापान और वाङ चिङ-वेइ दोनों का मुख्य उद्देश्य है। इस बात को समझते हुए कि कम्युनिस्ट पार्टी सबसे मुकम्मिल तौर पर जापान का प्रतिरोध करती है तथा क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग के परिणामस्वरूप जापान का प्रतिरोध करने के लिए और अधिक शक्ति पैदा हो जाएगी, वे लोग इस सहयोग को तोड़ने और इन दोनों पार्टियों को एक दूसरे से अलग करके उन्हें अलगाव की स्थिति में डालने, अथवा इससे भी एक कदम आगे बढ़कर इन दोनों को एक दूसरे के खिलाफ लड़ाने की जीतोड़ कोशिश कर रहे हैं। इसलिए वे लोग हर जगह गड़बड़ी पैदा कराने के लिए क्वोमिन्ताङ के कट्टरतावादियों को इस्तेमाल कर रहे हैं। हुनान में फिङच्याङ हत्याकाण्ड [१] हो चुका है; हनान में छ्वेशान हत्याकाण्ड [२] हो चुका है; शानशी में पुरानी सेना ने नई सेना पर हमला बोल दिया; [३] हपे में चाङ इन-ऊ ने आठवीं राह सेना पर हमला बोल दिया; [४] शानतुङ में छिन छी-रुङ ने छापामारों पर हमला बोल दिया; [५] पूर्वी हुपे में छङ रू-ह्वाए ने पांच-छै सौ कम्युनिस्टों की हत्या कर डाली; [६] और शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त

क्षेत्र के खिलाफ कट्टरतावादी लोग अन्दर से "अड्डे कायम करने व जाल बिछाने" [७] और बाहर से "नाकाबन्दी" करने की कोशिश कर रहे हैं तथा सशस्त्र हमले की तैयारी कर रहे हैं [८]। इसके अलावा उन्होंने प्रगतिशील नौजवानों को काफी बड़ी तादाद में गिरफ्तार कर लिया है और उन्हें नजरबन्दी कैम्पों में डाल दिया है; [९] उन्होंने आध्यात्मवाद-विक्रेता चाङ च्युन-माए को अपना भाड़े का टट्टू बनाकर उसके जरिए कम्युनिस्ट पार्टी को तोड़ने, शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र को भंग करने तथा आठवीं राह सेना व नई चौथी सेना का विघटन करने के प्रतिक्रियावादी प्रस्ताव पेश करवाए हैं; उन्होंने त्रात्सकीवादी ये छिङ और अन्य लोगों को अपना भाड़े का टट्टू बनाकर उनसे कम्युनिस्ट पार्टी पर गालियों की बौछार करने वाले लेख लिखवाए हैं। इन सब बातों का सिर्फ एक मकसद है – जापान का प्रतिरोध करने की परिस्थिति को बिगाड़ना और सारे देश की जनता को गुलाम बना देना। [१०]

इस प्रकार वाङ चिङ-वेइ गुट और क्वोमिन्ताङ के कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादी एक दूसरे से सांठगांठ करते हुए काम कर रहे हैं, एक बाहर से तो दूसरा भीतर से, तथा उन्होंने हंगामा मचाकर वातावरण को एकदम खराब कर दिया है।

इन हालात को देखकर बहुत से लोग गुस्से से भर गए हैं और वे यह समझने लगे हैं कि अब जापान का प्रतिरोध जारी रखने की कोई आशा नहीं रही तथा क्वोमिन्ताङ के सभी सदस्य शोहदे हैं जिनका विरोध किया जाना चाहिए। हमें बता देना चाहिए कि उनका गुस्सा करना बिलकुल वाजिब है, कारण, ऐसी गम्भीर परिस्थिति को देखकर भला कौन ऐसा होगा जिसे गुस्सा न आए? लेकिन

जापान का प्रतिरोध जारी रखने की आशा अब भी बनी हुई है, और यह नहीं कि क्वोमिन्ताङ के सभी सदस्य शोहदे हैं। क्वोमिन्ताङ के अलग-अलग हिस्सों के बारे में अलग-अलग नीतियां अपनानी चाहिए। उन अन्तःचेतनाहीन शोहदों को, जिन्होंने आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना की पीठ पर छुरा घोंपने, फिङच्याङ हत्याकाण्ड और छ्वेशान हत्याकाण्ड करने, सीमान्त क्षेत्र में तोड़फोड़ करने तथा प्रगतिशील सेनाओं व संगठनों और प्रगतिशील व्यक्तियों पर प्रहार करने की जुर्रत की, हरगिज बरदाश्त नहीं करना चाहिए तथा उन पर जवाबी प्रहार करना चाहिए ; उन्हें किसी भी किस्म की रियायत देने का सवाल ही नहीं उठता। कारण, वे लोग इतने ज्यादा अन्तःचेतनाहीन हैं कि हमारे राष्ट्र के शत्रु द्वारा हमारी प्रादेशिक भूमि में दूर तक प्रवेश किए जाने के बावजूद वे लोग टकराव पैदा कर रहे हैं, हत्याकाण्ड कर रहे हैं और फूट डाल रहे हैं। वे लोग चाहे कुछ भी सोच रहे हों, वास्तव में वे जापान और वाङ चिङ-वेइ की मदद कर रहे हैं, तथा उनमें से कुछ लोग शुरू से ही छिपे हुए गद्दार हैं। इन लोगों को सजा न देना गलत होगा ; यह दुश्मन के साथ सांठगांठ करने वालों और गद्दारों को प्रोत्साहन देना कहलाएगा, राष्ट्रीय प्रतिरोध-युद्ध व मातृभूमि के प्रति गैरवफादारी कहलाएगा, शोहदों को संयुक्त मोर्चा भंग करने की रियायत देना कहलाएगा, तथा हमारी पार्टी की नीति का उल्लंघन कहलाएगा। लेकिन आत्मसमर्पणवादियों और कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों पर प्रहार करने की नीति का एकमात्र उद्देश्य है जापान का प्रतिरोध जारी रखना और जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की हिफाजत करना। इसलिए हमें क्वोमिन्ताङ के उन सदस्यों के प्रति, जो प्रतिरोध-युद्ध के प्रति

वफादार हैं और आत्मसमर्पणवादी व कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादी नहीं हैं, सद्भावपूर्ण रुख अपनाना चाहिए, उनके साथ एकता कायम करनी चाहिए, उनका सम्मान करना चाहिए और उनके साथ दीर्घकालीन सहयोग करने के लिए तैयार रहना चाहिए, जिससे हमारे देश को सुव्यवस्थित किया जा सके। जो कोई इस तरह आचरण नहीं करता, वह भी पार्टी की नीति का उल्लंघन करता है।

हमारी पार्टी की दो नीतियां हैं : एक तरफ तो वह तमाम प्रगतिशील शक्तियों और उन तमाम लोगों को एकताबद्ध करती है जो जापान का प्रतिरोध करने के कार्य के प्रति वफादार हैं, यह एक नीति है ; और दूसरी तरफ वह तमाम अन्तःचेतनाहीन शोहदों का, आत्मसमर्पणवादियों और कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों का विरोध करती है, यह दूसरी नीति है। हमारी पार्टी की इन नीतियों का एक ही मकसद है – मौजूदा परिस्थिति को बेहतर बनाना और जापान को परास्त करना। कम्युनिस्ट पार्टी और समूचे देश की जनता के सामने यह कार्य मौजूद है कि तमाम जापान-विरोधी और प्रगतिशील शक्तियों को एकताबद्ध किया जाए, तमाम आत्मसमर्पणवादी और प्रतिगामी शक्तियों का मुकाबला किया जाए, तथा मौजूदा परिस्थिति को बेहतर बनाने की भरसक कोशिश की जाए और उसे बिगड़ने से रोका जाए। यही हमारी बुनियादी नीति है। हम आशावादी हैं, हम हरगिज निराशावादी अथवा मायूस नहीं बनेंगे। आत्मसमर्पणवादियों और कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के किसी भी तरह के प्रहार से हम डरते नहीं। हमें उनको चकनाचूर कर देना चाहिए और हम उनको अवश्य चकनाचूर कर सकेंगे। चीन अपनी राष्ट्रीय मुक्ति अवश्य प्राप्त करेगा ;

चीन कभी नष्ट नहीं होगा। चीन अवश्य प्रगति करेगा ; उसका वर्तमान प्रतिगमन महज एक अस्थाई घटना है।

आज की सभा में हम समूचे देश की जनता के सामने यह बात स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि समूचे देश की जनता की एकता व प्रगति जापान का प्रतिरोध करने के लिए अनिवार्य हैं। कुछ लोग केवल जापान का प्रतिरोध करने पर जोर देते हैं, लेकिन वे लोग एकता व प्रगति पर जोर नहीं देना चाहते, यहां तक कि इनका जिक्र तक नहीं करते। ऐसा करना गलत है। सच्ची और सुदृढ़ एकता कायम किए बिना, तेजी से और ठोस रूप में प्रगति किए बिना भला प्रतिरोध-युद्ध कैसे जारी रखा जा सकता है? क्वोमिन्ताङ के भीतर मौजूद कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादी एकीकरण पर जोर देते हैं, लेकिन उनका तथाकथित "एकीकरण" नकली एकीकरण है असली नहीं, युक्तिहीन एकीकरण है युक्तियुक्त नहीं, महज वाह्य रूप का एकीकरण है वास्तविक नहीं। वे लोग एकीकरण की चीख-पुकार मचाते हैं, लेकिन जिस चीज को वे वास्तव में चाहते हैं वह है कम्युनिस्ट पार्टी, आठवीं राह सेना व नई चौथी सेना तथा शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र को तोड़ देना, यह बहाना बनाकर कि चीन का एकीकरण तब तक नहीं हो सकता जब तक इनका अस्तित्व बना रहेगा ; वे लोग देश का सब कुछ क्वोमिन्ताङ के हवाले कर देना चाहते हैं। वे लोग अपनी एक ही पार्टी की तानाशाही को न सिर्फ जारी रखना चाहते हैं बल्कि उसका विस्तार भी करना चाहते हैं। अगर ऐसा हो जाए, तो भला एकीकरण कैसे हो सकेगा? सच बात तो यह है कि अगर कम्युनिस्ट पार्टी, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना तथा शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र

आगे न आते और गृहयुद्ध खत्म करने और जापान का प्रतिरोध करने के लिए एकताबद्ध हो जाने का सच्चे दिल से पक्षपोषण न करते, तो जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा कायम करने में पहलकदमी करने वाला और शीआन घटना का शान्तिपूर्ण हल निकालने में अगुवाई करने वाला कोई न रह जाता, तथा जापान का प्रतिरोध करने की कोई सम्भावना नहीं रह जाती। और आज अगर कम्युनिस्ट पार्टी, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना, शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र तथा सभी जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्र आगे न आते तथा सच्चे दिल से जापान का प्रतिरोध जारी न रखते और आत्मसमर्पण, फूटपरस्ती व प्रतिगमन की खतरनाक प्रवृत्तियों का मुकाबला न करते, तो परिस्थिति सचमुच बहुत बिगड़ जाती। आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना के कई लाख सैनिक चालीस जापानी डिवीजनों में से सत्रह डिवीजनों को लड़ाई में उलझाकर दुश्मन की फौजों के चालीस फीसदी हिस्से की रोकथाम कर रहे हैं।[11] आखिर इन सेनाओं को क्यों तोड़ा जाए? शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र देश का सबसे प्रगतिशील क्षेत्र है, यह एक जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्र है। यहां, पहले, कोई भ्रष्टाचारी अफसर नहीं है ; दूसरे, कोई स्थानीय निरंकुश तत्व या बुरा शरीफजादा नहीं है ; तीसरे, कोई जुआरी नहीं है ; चौथे, कोई वेश्या नहीं है ; पांचवें, कोई रखैल नहीं है ; छठे, कोई भिखारी नहीं है ; सातवें, कोई अपने निजी हित के लिए संकुचित गुट बनाने वाला नहीं है ; आठवें, कोई निराशा व शिथिलता का वातावरण नहीं है ; नवें, कोई पेशेवर टकराववाज[12] नहीं है ; और दसवें, कोई राष्ट्रीय संकट का फायदा उठाकर मुनाफा-

खोरी करने वाला नहीं है। सीमान्त क्षेत्र को आखिर क्यों तोड़ा जाए? सिर्फ परले सिरे के बेशर्म लोग ही ऐसा शर्मनाक सुझाव पेश करते हैं। भला इन कट्टरतावादियों को क्या हक है कि वे हमारे खिलाफ एक भी शब्द कहें? नहीं, साथियो! जिस चीज की आज जरूरत है वह सीमान्त क्षेत्र को भंग करना नहीं बल्कि समूचे देश में उसकी मिसाल पर चलना है, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना को तोड़ना नहीं बल्कि समूचे देश में उनकी मिसाल पर चलना है, कम्युनिस्ट पार्टी को भंग करना नहीं बल्कि समूचे देश में उसकी मिसाल पर चलना है, प्रगतिशील लोगों को पिछड़े हुए लोगों के स्तर पर वापस ले जाना नहीं बल्कि पिछड़े हुए लोगों को प्रगतिशील लोगों के स्तर पर ले जाना है। हम कम्युनिस्ट लोग एकीकरण के सबसे बड़े हिमायती हैं; यह हम ही लोग हैं जिन्होंने संयुक्त मोर्चे का सूत्रपात किया है और उसे कायम रखा है तथा जिन्होंने एकीकृत जनवादी गणराज्य का नारा पेश किया है। ये सब चीजें भला और कौन पेश कर सकता था? इन सब चीजों पर भला और कौन अमल कर सकता था? सिर्फ पांच य्वान के मासिक भत्ते[11] से भला और कौन सन्तुष्ट हो सकता था? इतनी साफ-सुथरी और भ्रष्टाचार-रहित सरकार भला और कौन बना सकता था? एकीकरण भी अलग-अलग किस्म का होता है। आत्मसमर्पणवादियों का अपना अलग एकीकरण का विचार है, वे लोग हमको आत्मसमर्पण के रूप में एकीकृत करना चाहते हैं; कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों का भी अपना अलग एकीकरण का विचार है, वे लोग हमको फूट व प्रतिगमन के रूप में एकीकृत करना चाहते हैं। क्या उनके इन विचारों को हम लोग स्वीकार कर सकते हैं? क्या एक

ऐसा एकीकरण जो प्रतिरोध-युद्ध, एकता और प्रगति पर आधारित न हो, सच्चा एकीकरण कहला सकता है? अथवा युक्तियुक्त एकीकरण कहला सकता है? या वास्तविक एकीकरण कहला सकता है? ये कैसी शेखचिल्ली की सी बातें हैं! आज हमने यहां एकीकरण के बारे में अपना विचार पेश करने के लिए सभा बुलाई है। हमारा एकीकरण का विचार दरअसल सारे देश की जनता का एकीकरण का विचार है, हर ईमानदार आदमी का एकीकरण का विचार है। यह एकीकरण का विचार प्रतिरोध-युद्ध, एकता और प्रगति पर आधारित है। केवल प्रगति के जरिए ही हम एकता कायम कर सकते हैं; केवल एकता के जरिए ही हम जापान का प्रतिरोध कर सकते हैं; तथा केवल प्रगति, एकता और प्रतिरोध के जरिए ही हम एकीकरण कर सकते हैं। यही हमारा एकीकरण का विचार है, एक असली, युक्तियुक्त और वास्तविक एकीकरण का विचार है। एक नकली, युक्तिहीन और महज बाह्य रूप के एकीकरण का विचार एक ऐसा विचार है जो हमें राष्ट्रीय गुलामी की ओर ले जाएगा तथा जो अन्त:चेतनाहीन लोगों का विचार है। ऐसे लोग कम्युनिस्ट पार्टी, आठवीं राह सेना व नई चौथी सेना, तथा जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्रों को नष्ट कर देना चाहते हैं और तमाम स्थानीय जापान-विरोधी शक्तियों का सफाया कर देना चाहते हैं, ताकि क्वोमिन्ताङ के अधीन एकीकरण किया जा सके। यह एक षड्यंत्र है, एकीकरण की आड़ में तानाशाही शासन को बनाए रखने की कोशिश है, एकीकरण का बकरे का सिर लटकाकर एक ही पार्टी की तानाशाही का कुत्ते का गोश्त बेचने की कोशिश है; यह उन बेहया शोहदों की साजिश और बकवास है जो सारी

शर्म-हया खो चुके हैं। हम आज यहां ठीक इसीलिए सभा कर रहे हैं ताकि उनके रूप में मौजूद इस कागजी बाघ में छेद कर दें। हमें इन कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों का दृढ़ता से मुकाबला करते रहना चाहिए।

नोट

१ देखिए : "प्रतिक्रियावादियों को सजा देनी ही होगी", नोट १।

२ ११ नवम्बर १९३९ को हनान प्रान्त की छवेशान काउन्टी में तैनात क्वोमिन्ताङ के १,८०० से ज्यादा गुप्त एजेन्टों और सैनिकों ने छवेशान काउन्टी के चूकओचन नामक स्थान में नई चौथी सेना के पृष्ठभागीय कार्यालय पर धावा बोल दिया। दो सौ से ज्यादा लोगों की हत्या कर दी गई जिनमें प्रतिरोध-युद्ध में घायल हुए नई चौथी सेना के कार्यकर्ता व सैनिक तथा उनके परिवार के लोग शामिल थे।

३ पुरानी सेना का मतलब उन फौजों से है जो शानशी स्थित क्वोमिन्ताङ युद्ध-सरदार येन शी-शान के अधीन थीं। नई सेना जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के शुरू में शानशी में जनता की जापान-विरोधी सशस्त्र सैन्य-शक्ति थी जो चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व व असर में विकसित हुई थी। नई सेना को मौत से न डरने वाली जापान-विरोधी पलटन भी कहा जाता था। दिसम्बर १९३९ में च्याङ काई-शेक और येन शी-शान ने नई सेना को नष्ट करने के लिए पश्चिमी शानशी में अपनी छै फौजी कोरों को केन्द्रित करके उस पर आक्रमण कर दिया, लेकिन उन्हें मुंह की खानी पड़ी। साथ ही दक्षिण-पूर्वी शानशी में येन की फौजों ने याङछङ-चिनछङ क्षेत्र की जापान-विरोधी जनवादी काउन्टी सरकारों व जन-संगठनों पर हमला कर दिया तथा कम्युनिस्टों व प्रगतिशील व्यक्तियों की बहुत बड़ी तादाद में हत्या कर डाली।

४ चाङ इन-ऊ हपे प्रान्त में तैनात क्वोमिन्ताङ डाकू गुट की शान्ति-रक्षक कोर का कमाण्डर था। १९३९ के शुरू से ही वह च्याङ काई-शेक के आदेश पर आठवीं राह सेना पर लगातार हमला करता रहता था। उसी साल जून में उसने अपनी सेना के साथ आगे बढ़कर हपे प्रान्त की शनश्येन काउन्टी में स्थित आठवीं राह सेना के पृष्ठभागीय संस्थानों पर आकस्मिक हमला बोल दिया तथा चार सौ से ज्यादा कार्यकर्ताओं व सैनिकों को मार डाला।

५ अप्रैल १९३९ में शानतुङ प्रान्त के क्वोमिन्ताङ गवर्नर शन हुङ-ल्ये के निर्देशन पर, छिन छी-रुङ की लुटेरी सेनाओं ने पोशान में आठवीं राह सेना के शानतुङ कालम की तीसरी छापामार टुकड़ी पर धावा बोल दिया तथा रेजिमेन्टल अफसरों समेत चार सौ से ज्यादा सैनिकों को मार डाला।

६ सितम्बर १९३९ में पूर्वी हपे के क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादी छङ रू-ह्वाए ने अपनी लुटेरी सेनाओं को समेटकर नई चौथी सेना के पृष्ठभागीय संस्थानों पर हमला बोल दिया और पांच-छै सौ कम्युनिस्टों को मार डाला।

७ क्वोमिन्ताङ के गुप्त एजेन्ट व जासूस शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र के शहरों में अपने अड्डे बनाकर और इन तमाम अड्डों को एक जाल में पिरोकर प्रतिक्रान्तिकारी कार्यवाहियां करते थे। इस तरह के कार्य को वे लोग "अड्डे कायम करने व जाल बिछाने" का कार्य कहते थे।

८ १९३९ की सरदियों से १९४० के वसन्त तक क्वोमिन्ताङ फौजों ने शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र में छुनह्वा, श्युनई, चङनिङ, निङश्येन और चन-य्वान नामक पांच काउन्टी-केन्द्रों पर कब्जा कर लिया।

९ जर्मन और इटालवी फासिस्टों की नकल करते हुए, क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों ने जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान अनेक नजरबन्दी कैम्प कायम किए, जो उत्तर-पश्चिम में लानचओ और शीआन से दक्षिण-पूर्व में कानचओ और शाङराओ तक फैले हुए थे। इन कैम्पों में कम्युनिस्टों, देशभक्तों और प्रगतिशील नौजवानों को भारी तादाद में नजरबन्द किया गया।

१० अक्तूबर १९३८ में ऊहान के पतन के बाद, क्वोमिन्ताङ ने अपनी कम्यु-निस्ट-विरोधी गतिविधियां बढ़ा दीं। फरवरी १९३९ में च्याङ काई-शेक ने "कम्युनिस्ट समस्या से निपटने के उपाय" तथा "जापान-अधिकृत क्षेत्रों में कम्यु-निस्ट कार्यवाहियों को रोकने के उपाय" जैसे प्रतिक्रियावादी दस्तावेज गुप्त

रूप से जारी किए, तथा क्वोमिन्ताङ-अधिकृत क्षेत्रों में और मध्य चीन व उत्तर चीन में कम्युनिस्ट पार्टी पर राजनीतिक दमन व फौजी प्रहारों को दिनोंदिन बढ़ाया। दिसम्बर १९३९ से मार्च १९४० तक इस तरह के दमन व प्रहारों का एक उभार आया, जो प्रथम कम्युनिस्ट-विरोधी हमला कहलाया। यहां कामरेड माओ त्सेतुङ ने जो दो मिसालें दी हैं, यानी शेनशी व कानसू में शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र पर हमला करना और पश्चिमी शानशी में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली जापान-विरोधी सेना पर, जिसे मौत से न डरने वाली पलटन कहते थे, हमला करना, वे प्रथम कम्युनिस्ट-विरोधी हमले के दौरान क्वोमिन्ताङ द्वारा किए गए बड़े पैमाने के दो फौजी हमले थे। इसके बाद फरवरी और मार्च १९४० में च्याङ काई-शेक के आदेश पर क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादी चू ह्वाए-पिङ ने फाङ पिङ-श्युन, चाङ इन-ऊ और हुओ ऊ-युङ की लुटेरी सेनाओं के साथ मिलकर तीन कालमों से थाएहाङ इलाके में स्थित आठवीं राह सेना पर हमला बोल दिया। आठवीं राह सेना ने इस हमले को पूरी तरह पराजित कर दिया, क्वोमिन्ताङ की तीन डिवीजनों को नष्ट कर दिया और इस प्रकार च्याङ काई-शेक द्वारा छेड़े गए प्रथम कम्युनिस्ट-विरोधी हमले को पूरी तरह शिकस्त दे दी।

११ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली सेना ने बाद में और अधिक जापानी हमलावर सैनिकों का प्रतिरोध किया। १९४३ में आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना जापान की आक्रमणकारी सैन्य-शक्ति के ६४ फीसदी हिस्से तथा कठपुतली फौजों के ९५ फीसदी हिस्से के खिलाफ लड़ रही थीं। देखिए: "मिलीजुली सरकार के बारे में" शीर्षक रचना का "दो युद्ध-मोर्चे" नामक परिच्छेद ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ ३)।

१२ "पेशेवर टकराववाज" का मतलब क्वोमिन्ताङ के उन लोगों से है जिनका पेशा केवल कम्युनिस्टों का विरोध करना ही था।

१३ उस समय कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जापान-विरोधी फौजों और जापान-विरोधी सरकारी दफ्तरों में काम करने वाले हरेक व्यक्ति को भोजन-भत्ते व अन्य भत्ते के रूप में एक महीने में औसतन पांच य्वान चांदी के सिक्के मिलते थे।

क्वोमिन्ताङ से दस मांगें*

१ फरवरी १९४०

१ फरवरी को येनान में वाङ चिङ-वेइ के खिलाफ आयोजित यह विशाल जन-सभा न्यायोचित रोष के साथ सर्वसम्मति से उसकी देशद्रोहपूर्ण और आत्मसमर्पणवादी कार्यवाहियों की निन्दा करने तथा जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को अन्त तक चलाने का संकल्प करती है। वर्तमान संकट पर काबू पाने और प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने की गारन्टी करने के लिए, हम देश को बचाने के उद्देश्य से दस मुख्य सुझाव पेश करते हैं, इस उम्मीद से कि राष्ट्रीय सरकार, सभी राजनीतिक पार्टियां व ग्रुप, प्रतिरोध-युद्ध में लड़ने वाले सभी अफसर व सिपाही तथा हमारे सभी देशबन्धु उन्हें स्वीकार कर लेंगे और उन पर अमल करेंगे।

१. समूचे राष्ट्र को वाङ चिङ-वेइ जैसे लोगों की निन्दा करने दो। आज जबकि देशद्रोही वाङ चिङ-वेइ ने अपना गिरोह इकट्ठा कर लिया है, दुश्मन के साथ गठजोड़ कायम करके अपने देश के साथ गद्दारी की है और दुश्मन के साथ देशद्रोहपूर्ण गुप्त समझौते कर लिए हैं, और इस प्रकार बाघ की चाकरी करने वाली लोमड़ी

* यह एक खुला तार है जिसे कामरेड माओ त्सेतुङ ने वाङ चिङ-वेइ के खिलाफ येनान में आयोजित विशाल जन-सभा की तरफ से तैयार किया था।

की भूमिका अदा की है, समस्त देशवासी उसे मौत की सजा देने की मांग कर रहे हैं। लेकिन यहां सिर्फ अप्रच्छन्न वाङ चिङ-वेइ जैसे लोगों की ही बात कही गई है और प्रच्छन्न वाङ चिङ-वेइ जैसे लोगों की अभी तक चर्चा नहीं की गई है। प्रच्छन्न वाङ चिङ-वेइ जैसे लोग या तो बड़ी होशियारी से बड़े अहम ओहदे हथियाए हुए हैं और बड़ी शान से इधर-उधर फिर रहे हैं, या अपना असली रूप छिपाकर समाज के हर क्षेत्र में घुसपैठ किए हुए हैं। वास्तव में भ्रष्टाचारी अफसर लोग इस गिरोह के अंग हैं तथा सभी टकराव पैदा करने वाले लोग इसके चाकर हैं। जब तक वाङ चिङ-वेइ जैसे लोगों की निन्दा करने के लिए राष्ट्रव्यापी आन्दोलन नहीं चलाया जाता, एक ऐसा आन्दोलन जिसे शहरों व देहातों में ऊपर की कतारों से निचली कतारों तक चलाया गया हो और जिसमें सभी राजनीतिक पार्टियों, सरकारी संगठनों, सशस्त्र सेनाओं, जन-संगठनों, प्रेस और शैक्षणिक प्रतिष्ठानों को गोलबन्द कर लिया गया हो, तब तक वाङ चिङ-वेइ जैसे लोगों के गिरोह को हरगिज समाप्त नहीं किया जा सकेगा, इसके विपरीत वह अपनी दुष्टतापूर्ण सरगर्मियां जारी रखेगा तथा बाहर से दुश्मन के लिए दरवाजा खोलकर और भीतर से तोड़फोड़ करके बेअन्त नुकसान पहुंचाएगा। सरकार को एक फरमान जारी करना चाहिए जिसमें वाङ चिङ-वेइ जैसे लोगों की निन्दा करने के लिए जनता का आवाहन किया जाए। जहां कहीं इस फरमान पर अमल न किया जाए, वहां के अधिकारियों को दोषी ठहराया जाए। वाङ चिङ-वेइ जैसे लोगों के गिरोह को निश्चित रूप से नष्ट कर दिया जाए। यह पहली बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

२. एकता को सुदृढ़ बनाओ। आजकल कुछ लोग एकता की बात नहीं बल्कि एकीकरण की बात करते हैं, तथा एकीकरण से उनका मतलब महज यह है कि कम्युनिस्ट पार्टी को तोड़ दिया जाए, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना को भंग कर दिया जाए, शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र को खत्म कर दिया जाए तथा सभी जगहों की जापान-विरोधी शक्तियों को तहस-नहस कर दिया जाए। ऐसी बातों में जिस चीज की उपेक्षा की जाती है वह यह तथ्य है कि कम्युनिस्ट पार्टी, आठवीं राह सेना व नई चौथी सेना तथा शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र समूचे चीन में एकीकरण का सबसे ज्यादा दृढ़ता से पक्षपोषण करते हैं। क्या यही वे नहीं हैं जिन्होंने शीआन घटना को शान्तिपूर्ण ढंग से हल करने की सलाह दी थी? क्या यही वे नहीं हैं जिन्होंने जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का सूत्रपात किया, एक एकीकृत जनवादी गणराज्य की स्थापना का प्रस्ताव रखा तथा इन दोनों की स्थापना के लिए जी-जान से कोशिश की? क्या यही वे नहीं हैं जो राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के अग्रिम मोर्चे पर खड़े होकर दुश्मन की सत्रह डिवीजनों का मुकाबला कर रहे हैं, मध्यवर्ती मैदानों व उत्तर-पश्चिम की रक्षा कर रहे हैं और उत्तरी चीन व याङत्सी नदी के निचले हिस्से के दक्षिण में स्थित क्षेत्रों की हिफाजत कर रहे हैं, तथा तीन जन-सिद्धान्तों और "सशस्त्र प्रतिरोध व राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्यक्रम" को दृढ़ता से कार्यान्वित कर रहे हैं? फिर भी ज्यों ही वाङ चिङ-वेइ खुलेआम कम्युनिस्टों का विरोध और जापानियों का पक्षपोषण करने लगा, तो चाङ च्युन-माए और ये छिङ जैसे बाजीगरों ने उसके सुर में सुर मिलाते हुए बदनीयती

भरे लेख लिखे तथा कम्युनिस्ट-विरोधी गुट व कट्टरपंथी गुट भी टकराव पैदा करके उसमें शरीक हो गए। एकीकरण के नाम पर तानाशाही शासन लागू कर दिया गया है। एकता के उसूल को ठुकराकर फूटपरस्ती की कार्यवाहियों का सूत्रपात कर दिया गया है। समा चाओ की चाल राह चलता हर आदमी जान चुका है।[1] कम्युनिस्ट पार्टी, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना तथा सीमान्त क्षेत्र दृढ़ता से असली एकीकरण का पक्षपोषण करते हैं और नकली एकीकरण का विरोध करते हैं, युक्तियुक्त एकीकरण का पक्षपोषण करते हैं और युक्तिहीन एकीकरण का विरोध करते हैं, तथा वास्तविक एकीकरण का पक्षपोषण करते हैं और वाह्य रूप के एकीकरण का विरोध करते हैं। वे एकीकरण का पक्षपोषण प्रतिरोध के लिए करते हैं आत्मसमर्पण के लिए नहीं, एकता के लिए करते हैं फूटपरस्ती के लिए नहीं, प्रगति के लिए करते हैं प्रतिगमन के लिए नहीं। केवल इन तीनों – प्रतिरोध, एकता और प्रगति – के आधार पर किया गया एकीकरण ही असली, युक्तियुक्त और वास्तविक एकीकरण है। किसी अन्य आधार पर एकीकरण करना, चाहे किसी भी प्रकार की साजिशों अथवा चालों से काम लिया गया हो, वास्तव में "रथ को उत्तर की ओर हांकते हुए दक्षिण की ओर जाने" के समान है ; इस बात से हम सहमत नहीं हैं। सभी स्थानीय जापान-विरोधी शक्तियों की समान रूप से अच्छी तरह देखभाल की जानी चाहिए, न कि उनमें से कुछ के प्रति भेदभाव और कुछ अन्य के प्रति पक्षपात बरतना चाहिए ; उन सभी पर विश्वास करना चाहिए, उन्हें रसद-सप्लाई की जानी चाहिए, उनका समर्थन किया जाना चाहिए और उन्हें पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

लोगों के साथ बरताव करते समय ईमानदारी से काम लेना चाहिए, पाखण्डीपन से नहीं ; फराखदिली से काम लेना चाहिए, तंगदिली से नहीं। अगर सचमुच इस तरह काम किया गया, तो सिर्फ बुरी नीयत रखने वाले लोगों को छोड़कर बाकी सभी लोग एकताबद्ध हो जाएंगे और राष्ट्रीय एकीकरण का रास्ता अपना लेंगे। यह एक अपरिवर्तनीय सच्चाई है कि एकीकरण का आधार एकता होनी चाहिए तथा एकता का आधार प्रगति होनी चाहिए, तथा केवल प्रगति के जरिए ही एकता की स्थापना की जा सकती है और केवल एकता के जरिए ही एकीकरण प्राप्त किया जा सकता है। यह दूसरी बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

३. वैधानिक सरकार को कार्यान्वित करो। अनेक वर्षों तक "राजनीतिक अभिभावकता" बनाए रखने का कोई नतीजा नहीं निकल पाया। "किसी चीज को अगर हद से ज्यादा दूर तक धकेला जाए तो वह अपने विपरीत तत्व में बदल जाती है" ; इसलिए वैधानिक सरकार का सवाल अब सामने आ खड़ा हुआ है। मगर बोलने की आजादी अब भी नहीं है, राजनीतिक पार्टियों पर से पाबन्दी अब भी नहीं हटाई गई तथा वैधानिकता का हर जगह उल्लंघन किया जाता है। अगर संविधान को इन्हीं बातों के आधार पर बनाया गया तो वह महज रद्दी सरकारी कागजात का पुलिन्दा रह जाएगा। इस प्रकार की वैधानिकता एक ही पार्टी की तानाशाही से कदापि भिन्न नहीं होगी। आज जबकि एक गहरा राष्ट्रीय संकट पैदा हो गया है तथा बाहर से जापानी और वाङ चिङ-वेइ हैरान-परेशान कर रहे हैं और अन्दर से गद्दार तोड़फोड़ कर रहे हैं, यदि

नीति में परिवर्तन न किया गया तो राष्ट्र और जनता का अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा। सरकार को चाहिए कि वह फौरन राजनीतिक पार्टियों पर से पाबन्दी हटा ले और विचारों की आजादी को प्रोत्साहन दे, जिससे यह जाहिर हो सके कि वह ईमानदारी से वैधानिकता को कार्यान्वित करना चाहती है। जनता का पूर्ण विश्वास प्राप्त करने और राष्ट्र के भाग्य को नया रूप देने के लिए इससे ज्यादा फौरी और कोई बात नहीं। यह तीसरी बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

४. टकराव को खत्म कर दो। जब से पिछले वर्ष मार्च में "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय" अपनाए जाने लगे, तब से समूचे देश में कम्युनिस्ट पार्टी पर अंकुश लगाने, उसे क्षयग्रस्त करने और उसका विरोध करने की चीख-पुकार मची हुई है, एक के बाद एक दुखद घटनाएं हुई हैं तथा खून की नदियां बह चुकी हैं। सिर्फ इतने से ही सन्तुष्ट न होकर, गत वर्ष अक्तूबर में "दुश्मन पार्टियों की समस्या से निपटने के उपाय" भी अपनाए जाने लगे। इसके अलावा उत्तर-पश्चिमी, उत्तरी और मध्य चीन में "दुश्मन पार्टियों की समस्या से निपटने के लिए निर्देश" भी जारी किए गए हैं। लोग कहते हैं कि कम्युनिस्ट पार्टी पर "राजनीतिक नियंत्रण" अब "फौजी नियंत्रण" में बदल गया है; ऐसा कहना सही है और वास्तविक स्थिति भी ऐसी ही है। कम्युनिस्ट पार्टी पर नियंत्रण लागू करना दरअसल कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करना ही है। और कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करना मक्कारी व दुष्टता से भरी हुई वह स्कीम है जिसका इस्तेमाल करके जापानी और वाङ चिङ-वेइ चीन को गुलाम बनाना चाहते हैं। यही वजह है कि लोग इसके बारे में चिन्तित हो गए हैं और एक दूसरे से चर्चा करते हैं तथा उन्हें डर है कि दस वर्ष पहले की अत्यन्त दुखदायी घटना कहीं फिर न दोहराई जाए। मामला इतना आगे बढ़ गया है कि हुनान प्रान्त में फिङच्याङ हत्याकाण्ड और हनान प्रान्त में छ्वेशान हत्याकाण्ड हुए, हुपे प्रान्त में चाङ इन-ऊ ने आठवीं राह सेना पर हमला किया, शानतुङ प्रान्त में छिन छी-रुङ ने छापामारों पर हमला किया, पूर्वी हुपे में छङ रू-ह्वाए ने पांच-छै सौ कम्युनिस्टों की निर्मम हत्या की, पूर्वी कानसू में केन्द्रीय सेना ने आठवीं राह सेना की गैरीजन फौज पर बड़े पैमाने का हमला किया, तथा अभी हाल ही में शानशी प्रान्त में वह दुखद घटना हुई जिसमें पुरानी सेना ने नई सेना पर धावा बोल दिया तथा आठवीं राह सेना के मोर्चों का अतिक्रमण किया। अगर इस तरह की घटनाओं को तुरन्त न रोका गया तो दोनों पक्षों का बेड़ा गर्क हो जाएगा, और तब जापान पर विजय प्राप्त करने की उम्मीद भला कैसे की जा सकेगी ? एकता व प्रतिरोध-युद्ध के हित के लिए सरकार को चाहिए कि वह एक फरमान जारी करके इन हत्याकाण्डों को रचने वाले सभी लोगों को सजा दे तथा समूचे राष्ट्र के सामने ऐलान करे कि इस तरह की घटनाओं को फिर कभी हरगिज नहीं होने दिया जाएगा। यह चौथी बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

५. नौजवानों की रक्षा करो। हाल ही में शीआन के निकट नजरबन्दी कैम्प कायम किए गए हैं, और यह जानकर लोगों में आतंक फैल गया है कि वहां उत्तर-पश्चिमी और मध्यवर्ती प्रान्तों के सात सौ से अधिक प्रगतिशील नौजवानों को नजरबन्द किया

गया है, उन्हें मानसिक और शारीरिक बन्धनों से जकड़ा गया है तथा उनके साथ कैदियों का सा बरताव किया जा रहा है। आखिर उन्होंने ऐसा कौन सा अपराध किया है जो उन पर इस तरह अत्याचार किया जा रहा है? नौजवान लोग राष्ट्र का सर्वश्रेष्ठ अंग होते हैं, तथा खास तौर पर प्रगतिशील नौजवान तो प्रतिरोध-युद्ध में हमारी अत्यन्त मूल्यवान सम्पत्ति हैं। हर आदमी को अपनी इच्छानुसार आस्था रखने की आजादी होनी चाहिए; विचारों का हिंसा के जरिए हरगिज दमन नहीं किया जा सकता। पिछले दस वर्ष के "सांस्कृतिक दमन" के अपराध के बारे में हर कोई जानता है; क्या आज उसे फिर से दोहराया जाए? सरकार को चाहिए कि वह फौरन एक राष्ट्रव्यापी आदेश जारी करके नौजवानों की रक्षा करे, शीआन के निकट के नजरबन्दी कैम्पों को खत्म कर दे तथा विभिन्न स्थानों में नौजवान लोगों पर अत्याचार करने पर कड़ी रोक लगा दे। यह पांचवीं बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

६. मोर्चे का समर्थन करो। जो फौजें अग्रिम मोर्चे पर लड़ रही हैं तथा जिन्होंने अपनी सेवाओं का शानदार रिकार्ड कायम किया है, जैसे आठवीं राह सेना, नई चौथी सेना और कुछ अन्य फौजी यूनिटें, उनके साथ बेहद खराब बरताव किया जा रहा है; उन्हें बहुत कम कपड़ा-लत्ता और बहुत कम खाना मुहय्या किया जाता है तथा गोला-बारूद और दवाइयों को अपर्याप्त मात्रा में सप्लाई किया जाता है। फिर भी बेशर्म गद्दारों को उन पर मनमाना लांछन लगाने की छूट दी गई है। उनके बारे में गैरजिम्मेदाराना और बेतुकी बातें कही गई हैं जिन्हें सुनते-सुनते हमारे कान पक गए हैं। उनके श्रेष्ठ कारनामों पर उन्हें पुरस्कृत नहीं किया जाता और उनकी शानदार सेवाओं का उल्लेख तक नहीं किया जाता, उल्टे उनके खिलाफ अधिकाधिक निर्लज्जतापूर्ण झूठे आरोप लगाए जाते हैं और नापाक साजिशें रची जाती हैं। इस अजीबोगरीब हालत में हमारे अफसरों व सिपाहियों का जोश ठण्डा पड़ जाता है और दुश्मन को ही खुशी होती है; इस हालत को हरगिज जारी नहीं रहने देना चाहिए। सैनिकों का जोश बुलन्द करने और इस प्रकार लड़ाई में मदद करने के लिए सरकार को चाहिए कि वह एक तरफ अग्रिम मोर्चे पर तैनात सैनिकों को, जिन्होंने अच्छी सेवा का रिकार्ड कायम किया है, पर्याप्त मात्रा में रसद-सप्लाई करे तथा दूसरी तरफ उन पर गद्दारों द्वारा लगाए गए लांछनों और आरोपों पर कड़ी रोक लगा दे। यह छठी बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

७. खुफिया विभाग को गैरकानूनी करार दो। खुफिया एजेन्ट इस कदर अंधेरगर्दी मचाते हैं और हिंसा का सहारा लेते हैं कि लोग उनकी तुलना थाङ राजवंश के चओ शिङ और लाइ च्युन-छन[१] से तथा मिङ राजवंश के वेइ चुङ-श्येन और ल्यू चिन[१] से करते हैं। दुश्मन के बजाय अपने ही देशवासियों को प्रहार का निशाना बनाकर वे लोग अनगिनत हत्याएं कर रहे हैं और बेशुमार घूस खाकर भी उनकी भूख नहीं मिटती; वास्तव में खुफिया विभाग अफवाहें फैलाने वालों का सदर-मुकाम है तथा देशद्रोह और काले कारनामे करने वालों का अड्डा है। आम लोग हर जगह इन पाशविक खुफिया एजेन्टों से भयभीत होकर उनसे कन्नी काटते हैं। अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए सरकार को चाहिए कि वह इस

खुफिया विभाग की तमाम गतिविधियों को फौरन गैरकानूनी करार दे तथा उसका पुनर्गठन करके उसकी गतिविधियों का निशाना केवल दुश्मनों और गद्दारों को ही बनाए, ताकि जनता का विश्वास फिर से प्राप्त किया जा सके और राज्य की बुनियादों को मजबूत बनाया जा सके। यह सातवीं बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

८. भ्रष्टाचारी अफसरों को बरखास्त करो। ऐसे अफसर भी हैं जिन्होंने प्रतिरोध-युद्ध शुरू होने के बाद से राष्ट्रीय संकट का फायदा उठाकर कुल १० करोड़ य्वान हड़प लिए हैं तथा जिनके पास आठ-नौ रखैलें हैं।* जबरन भरती, सरकारी बौण्ड, आर्थिक नियंत्रण, अकाल-पीड़ितों और युद्ध-शरणार्थियों की सहायता, ये सभी निरपवाद रूप से भ्रष्टाचारी अफसरों के पैसा बनाने के धन्धे बन गए हैं। जहां इस तरह के भेड़ियों का झुण्ड उत्पात मचा रहा हो, वहां भला यह कैसे हो सकता है कि देश के मामले गड़बड़-घोटाले में न हों। जनता के बीच असन्तोष और रोष अपनी चरम सीमा तक पहुंच चुका है, लेकिन इन अफसरों की नृशंसता का पर्दाफाश करने की जुर्रत किसी में नहीं है। देश को तहस-नहस होने से बचाने के लिए यह जरूरी है कि फौरन कारगर कदम उठाकर सभी भ्रष्टाचारी अफसरों को निकाल बाहर किया जाए। यह आठवीं बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

९. डा० सुन यात-सेन की वसीयत को कार्यान्वित करो। वसीयत में कहा गया है :

> पिछले चालीस वर्षों से मैं चीन के लिए आजादी और समानता प्राप्त करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय क्रान्ति के कार्य में जुटा हुआ हूं। इन चालीस वर्षों के अनुभवों से मुझे गहराई से मालूम हो गया है कि इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए हमें व्यापक जन-समुदाय को जागृत करना चाहिए. . .

यह सचमुच एक उल्लेखनीय वक्तव्य है, तथा हम ४५ करोड़ चीनी लोग इससे परिचित हैं। लेकिन इस वसीयत की रट ज्यादा लगाई जाती है और उसे अमल में कम उतारा जाता है। वसीयत का उल्लंघन करने वालों को तो पुरस्कृत किया जाता है और उसे कार्यान्वित करने वालों को सजा दी जाती है। इससे ज्यादा बेहूदगी और क्या हो सकती है ? सरकार को यह फरमान जारी कर देना चाहिए कि जो कोई भी वसीयत का उल्लंघन करने की जुर्रत करेगा तथा व्यापक जन-समुदाय को जागृत करने के बजाय उसे कुचलने की कोशिश करेगा, उसे डा० सुन यात-सेन के प्रति विश्वासघात करने के अपराध में सजा दी जाएगी। यह नवीं बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

१०. तीन जन-सिद्धान्तों को कार्यान्वित करो। तीन जन-सिद्धान्त क्वोमिन्ताङ के मूल सिद्धान्त हैं। फिर भी बहुत से लोग कम्युनिस्ट-विरोध को अपना सर्वोपरि कार्य बनाकर प्रतिरोध-युद्ध के प्रयासों को तिलांजलि दे रहे हैं, तथा जैसे-जैसे जनता जापान का प्रतिरोध करने के लिए उठ खड़ी हो रही है, वे उसका दमन करने और उसे पीछे घसीटने की हरचन्द कोशिश कर रहे हैं, जिसका मतलब है राष्ट्रवाद के सिद्धान्त का परित्याग कर देना ; अफसर लोग जनता

को सभी जनवादी अधिकारों से वंचित कर रहे हैं, जिसका मतलब है जनवाद के सिद्धान्त का परित्याग कर देना ; वे लोग जनता की मुसीबतों की अनदेखी कर रहे हैं, जिसका मतलब है जन-जीविका के सिद्धान्त का परित्याग कर देना। ऐसे लोग तीन जन-सिद्धान्तों के बारे में सिर्फ जबानी जमा-खर्च करते हैं, तथा यदि कोई उन सिद्धान्तों पर गम्भीरतापूर्वक अमल करने की कोशिश करता है, तो वे या तो उसकी यह कहकर खिल्ली उड़ाते हैं कि वह बेकार अपनी टांग अड़ाने वाला व्यक्ति है, या उसको कड़ी सजा देते हैं। इस प्रकार तरह-तरह की अजीबोगरीब बातें एक के बाद एक सामने आ रही हैं तथा तीन जन-सिद्धान्तों पर से लोगों का विश्वास उठ चुका है। समूचे देश में तीन जन-सिद्धान्तों का सख्ती से पालन करने के लिए तुरन्त एक अत्यन्त स्पष्ट आदेश जारी कर दिया जाना चाहिए। जो लोग इस आदेश का उल्लंघन करें उन्हें सख्त सजा दी जानी चाहिए, और जो लोग इसका पालन करें उन्हें पर्याप्त रूप से पुरस्कृत किया जाना चाहिए। केवल इसी तरह तीन जन-सिद्धान्तों को एक न एक दिन अमली जामा पहनाया जा सकेगा तथा प्रतिरोध-युद्ध में विजय प्राप्त करने की बुनियाद कायम की जा सकेगी। यह दसवीं बात है जिसे मंजूर करने और अमल में उतारने की मांग हम आपसे करते हैं।

ये दस सुझाव राष्ट्र को बचाने और जापान का प्रतिरोध करने के लिए अनिवार्य उपाय हैं। आज जबकि दुश्मन चीन के खिलाफ अपने आक्रमण में उत्तरोत्तर बढ़ोतरी कर रहा है तथा गद्दार वाङ चिङ-वेइ चारों तरफ उत्पात मचा रहा है, हम भला इस खतरे के प्रति चुप्पी कैसे साध सकते हैं। यदि आप हमारे इन सुझावों को

मंजूर करने और उन पर अमल करने की कृपा करें, तो प्रतिरोध-युद्ध और चीनी राष्ट्र के मुक्ति-कार्य को भारी फायदा पहुंचेगा। हमने अपने ये विचार इसलिए प्रकट किए हैं क्योंकि हम इनका अत्यन्त फौरी महत्व समझते हैं, और हम आपके समुचित उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

नोट

[1] समा चाओ, वेइ राज्य (२२०-२६५ ई०) का एक प्रधान मंत्री था। वह साजिश रचकर राजगद्दी पर बैठना चाहता था, लेकिन उसकी इस कुआकांक्षा की पोल खुल गई। अतएव, सम्राट ने उससे निपटने के लिए अपने वफादार अफसरों से परामर्श करते हुए कहा: "समा चाओ की चाल राह चलता हर आदमी जान चुका है।" बाद में इस कथन को आम तौर पर उस आदमी के लिए इस्तेमाल किया जाने लगा जिसका षड्यंत्र दूसरे लोगों को मालूम हो गया हो। —अनु०

[2] चाओ शिङ और लाइ च्युन-छन, थाङ राजवंश की साम्राज्ञी ऊ त्से-थ्येन के शासन-काल में (ईसा की सातवीं शताब्दी के अन्त में) दो अत्यन्त क्रूर अफसर थे। उन्होंने अपने जासूसों का जाल फैला दिया था और जिन लोगों को वे नापसन्द करते थे, उन्हें मनमाने ढंग से हर तरह के झूठे जुर्म लगाकर गिरफ्तार कर लेते थे और तरह-तरह की नृशंसतापूर्ण यातनाएं देकर उनकी हत्या कर देते थे।

[3] ल्यू चिन, मिङ राजवंश के सम्राट ऊ चुङ के शासन-काल (ईसा की १६वीं शताब्दी) का एक खोजा था, और वेइ चुङ-श्येन, मिङ राजवंश के सम्राट शी चुङ के शासन-काल (ईसा की १७वीं शताब्दी) का एक खोजा था। उन्होंने "छाङ वेइ" (रक्षक कोर) नामक एक विशाल जासूसी संगठन का इस्तेमाल

करके पूरी सत्ता हथिया ली और जनता के विचारों व गतिविधियों को नियंत्रित कर दिया। जो लोग उनका विरोध करते थे, उनका दमन किया जाता था या उनको निर्ममता से हत्या कर दी जाती थी।

[४] यहां उस समय शीआन में तैनात क्वोमिन्ताङ के प्रतिक्रियावादी फौजी गवर्नर च्याङ तिङ-वन की ओर संकेत है।

"चीनी मजदूर" पत्रिका का परिचय

७ फरवरी १९४०

"चीनी मजदूर" पत्रिका[१] का प्रकाशन आवश्यक है। चीन के मजदूर वर्ग ने अपनी खुद की राजनीतिक पार्टी – चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में, पिछले बीस वर्षों में वीरतापूर्ण संघर्ष चलाए हैं और वह जनता का सबसे अधिक जागृत हिस्सा तथा चीनी क्रान्ति का अगुआ बन गया है। साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के खिलाफ किसानों तथा अन्य तमाम क्रान्तिकारी जनता को गोलबन्द करते हुए उसने एक नव-जनवादी चीन की स्थापना करने तथा जापानी साम्राज्यवाद को बाहर खदेड़ देने के लिए संघर्ष किया है और इस बारे में उसका एक विशिष्ट योगदान रहा है। लेकिन अभी चीनी क्रान्ति को विजय प्राप्त नहीं हुई है और खुद मजदूर वर्ग को एकताबद्ध करने के लिए और किसानों तथा निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य तबकों, बुद्धिजीवियों और अन्य तमाम क्रान्तिकारी जनता को एकताबद्ध करने के लिए अभी भारी प्रयत्न करने की आवश्यकता है। यह एक जबरदस्त राजनीतिक तथा संगठनात्मक कार्य है। इस कार्य को पूरा करने की जिम्मेदारी चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, प्रगतिशील मजदूरों तथा समस्त मजदूर वर्ग पर है। मजदूर वर्ग और समूची जनता की अन्तिम मुक्ति केवल समाजवाद के अन्तर्गत

ही प्राप्त की जा सकती है और यही वह अन्तिम लक्ष्य है जिसे प्राप्त करने के लिए चीनी मजदूर वर्ग को संघर्ष करना चाहिए। लेकिन समाजवाद की मंजिल में प्रवेश करने से पहले साम्राज्यवाद-विरोधी तथा सामन्तवाद-विरोधी जनवादी क्रान्ति की मंजिल से गुजरना अनिवार्य है। इसलिए चीन के मजदूर वर्ग का फौरी कार्य है खुद मजदूर वर्ग को एकताबद्ध करना तथा जनता को एकताबद्ध करना, साम्राज्यवाद व सामन्तवाद का विरोध करना और एक नए चीन, एक नव-जनवादी चीन के लिए संघर्ष करना। ठीक इसी कार्य को नजर में रखते हुए "चीनी मजदूर" पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

"चीनी मजदूर" पत्रिका सरल भाषा में मजदूरों के सम्मुख अनेक प्रश्नों के क्यों और कैसे पर प्रकाश डालेगी, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध में मजदूर वर्ग के संघर्ष की वास्तविक स्थिति के बारे में बताएगी तथा प्राप्त अनुभवों का निचोड़ निकालेगी, और इस तरह यह अपने कार्य को पूरा करने के लिए प्रयत्न करेगी।

"चीनी मजदूर" पत्रिका को चाहिए कि वह मजदूरों को शिक्षा देने तथा उनके बीच पैदा होने वाले कार्यकर्ताओं को ट्रेनिंग देने के लिए एक स्कूल बन जाए ; और पाठकगण उसके विद्यार्थी होंगे। शिक्षा द्वारा मजदूरों के बीच से बहुत से ऐसे कार्यकर्ताओं को तैयार करना निहायत जरूरी है जो जानकार और सुयोग्य हों और जो महज खोखली शोहरत के चक्कर में न हों तथा ईमानदारी से काम करने के लिए तैयार हों। इस तरह के कार्यकर्ताओं की एक बड़ी संख्या के बिना मजदूर वर्ग के लिए मुक्ति प्राप्त करना असम्भव है।

मजदूर वर्ग को चाहिए कि वह क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों द्वारा

दी जाने वाली मदद का स्वागत करे और कभी भी उससे इनकार न करे। कारण यह है कि उनकी मदद के बिना न तो मजदूर वर्ग खुद आगे बढ़ सकता है और न ही क्रान्ति सफल हो सकती है।

मैं आशा करता हूं कि इस पत्रिका का सम्पादन-कार्य भली-भांति किया जाएगा और यह पत्रिका बड़ी संख्या में सजीव रचनाओं को प्रकाशित करेगी तथा ऐसे निर्जीव व घिसे-पिटे लेखों से सावधानी के साथ बचेगी जो बिलकुल निकम्मे, नीरस और दुरूह होते हैं।

पत्रिका का प्रकाशन शुरू होने के बाद उसे संजीदगी के साथ और बखूबी चलाया जाना चाहिए। यह पत्रिका के कर्मचारीमंडल की और साथ ही पाठकों की जिम्मेदारी है। यह निहायत जरूरी है कि पाठक अपने सुझाव भेजते रहें तथा छोटे-छोटे पत्रों व लेखों द्वारा यह व्यक्त करते रहें कि उन्हें क्या पसन्द है और क्या नहीं। इस पत्रिका को सफल बनाने का तरीका यही है।

उपरोक्त शब्दों में मैंने अपनी आशाएं व्यक्त कर दी हैं; इन्हें "चीनी मजदूर" पत्रिका के परिचय के तौर पर समझिए।

नोट

१ "चीनी मजदूर" पत्रिका एक मासिक पत्रिका थी जिसका प्रकाशन फरवरी १९४० में येनान में शुरू हुआ था। इसे चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के ट्रेड यूनियन कमीशन की तरफ से प्रकाशित किया जाता था।

हमें एकता और प्रगति पर जोर देना चाहिए*

१० फरवरी १९४०

प्रतिरोध, एकता और प्रगति – ये हैं तीन मुख्य उसूल जिन्हें कम्युनिस्ट पार्टी ने पिछले साल ७ जुलाई को प्रतिरोध-युद्ध की दूसरी जयन्ती के उपलक्ष में प्रस्तुत किया था। ये तीनों एक ही वस्तु के अविभाज्य अंग हैं, और इनमें से किसी को भी छोड़ा नहीं जा सकता। अगर एकता और प्रगति को छोड़कर सिर्फ प्रतिरोध पर ही जोर दिया गया, तो इस प्रकार का प्रतिरोध न तो सुदृढ़ हो सकेगा और न दीर्घकाल तक चल सकेगा। एकता और प्रगति के प्रोग्राम के बिना किया गया प्रतिरोध देर-सबेर अवश्य ही आत्मसमर्पण में बदल जाएगा अथवा पराजय में परिणत हो जाएगा। हम कम्युनिस्टों का मत है कि इन तीनों को एक दूसरे से जरूर मिला देना चाहिए। प्रतिरोध के लिए यह आवश्यक है कि आत्मसमर्पण के खिलाफ, जापान के साथ वाङ चिङ-वेइ द्वारा किए गए देशद्रोहपूर्ण समझौते के खिलाफ, वाङ चिङ-वेइ की कठपुतली सरकार के खिलाफ तथा जापान-विरोधी मोर्चे में छिपे हुए तमाम गद्दारों और आत्मसमर्पण-वादियों के खिलाफ संघर्ष किया जाए। एकता के लिए यह आवश्यक

* यह लेख कामरेड माओ त्सेतुङ ने येनान के "नव चीन समाचार" के लिए उसकी पहली वर्षगांठ के अवसर पर लिखा था।

है कि फूटपरस्त कार्यवाहियों और अन्दरूनी टकराव का विरोध किया जाए, जापान-विरोधी मोर्चे के पीछे से आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना तथा अन्य तमाम प्रगतिशील शक्तियों की पीठ पर छुरा घोंपने का विरोध किया जाए, दुश्मन के पृष्ठभाग में स्थित जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों में और शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र में, जो आठवीं राह सेना का पृष्ठभागीय क्षेत्र है, तोड़फोड़ करने का विरोध किया जाए, तथा कम्युनिस्ट पार्टी के कानूनी दर्जे को नामंजूर करने का और "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने" के लिए तैयार किए गए दस्तावेजों की बौछार का विरोध किया जाए। प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि प्रतिगमन का तथा तीन जन-सिद्धान्तों और "सशस्त्र प्रतिरोध व राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्यक्रम" को उठाकर ताक पर रख देने का विरोध किया जाए, डा० सुन यात-सेन द्वारा अपने वसीयतनामे में दिए गए आदेश – "व्यापक जन-समुदाय को जागृत करने" – को ठुकरा देने का विरोध किया जाए, प्रगतिशील नौजवान लोगों को नजरबन्दी कैम्पों में डालने का विरोध किया जाए, प्रतिरोध-युद्ध के शुरू के दिनों में बोलने और प्रकाशन करने की जो थोड़ी-बहुत आजादी थी उसे खत्म करने का विरोध किया जाए, वैधानिक सरकार की स्थापना के आन्दोलन को चन्द नौकरशाहों की निजी मिलकियत में बदल देने की स्कीम का विरोध किया जाए, शानशी में नई सेना पर प्रहार करने तथा आत्म-बलिदान संघ को कुचलने और प्रगतिशील व्यक्तियों का कत्लेआम करने[1] का विरोध किया जाए, श्येनयाङ-ब्वोलिन राजमार्ग और लुङहाए रेलवे पर तीन जन-सिद्धान्त नौजवान संघ द्वारा लोगों का अपहरण करने[2] का विरोध किया जाए, नौ रखैलें रखने और राष्ट्रीय संकट से फायदा उठाकर दस करोड़ य्वान की सम्पत्ति बनाने जैसी शर्मनाक कार्यवाहियों का विरोध किया जाए, तथा भ्रष्टाचारी अफसरों और स्थानीय निरंकुश तत्वों व बुरे शरीफजादों द्वारा बेलगाम होकर किए जाने वाले अत्याचारों का विरोध किया जाए। इन सबका विरोध किए बिना और एकता व प्रगति के बिना, प्रतिरोध की चर्चा करना कोरी लफ्फाजी है, विजय की आशा करना व्यर्थ है। "नव चीन समाचार" के प्रकाशन के दूसरे वर्ष उसकी राजनीतिक दिशा क्या होगी ? वह होगी एकता और प्रगति पर जोर देना तथा इस प्रकार उन तमाम दुष्टतापूर्ण कार्यवाहियों का विरोध करना जो प्रतिरोध-युद्ध के लिए नुकसानदेह हैं, ताकि जापान का प्रतिरोध करने के हमारे कार्य में और अधिक कामयाबियां हासिल की जा सकें।

नोट

१ "आत्म-बलिदान संघ" "शानशी प्रान्त में राष्ट्रीय पुनरुद्धार के लिए आत्म-बलिदान संघ" का संक्षिप्त नाम था, जो १९३६ से लेकर जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के प्रारम्भिक काल तक की अवधि में शानशी प्रान्त में कायम किया गया एक जापान-विरोधी स्थानीय जन-संगठन था। इस संगठन ने कम्युनिस्ट पार्टी के साथ घनिष्ठ सहयोग कायम किया और वहां जापान-विरोधी लड़ाइयों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। दिसम्बर १९३९ में येन शी-शान ने शानशी प्रान्त के पश्चिमी हिस्से में इस संघ का खुल्लमखुल्ला दमन शुरू कर दिया तथा कम्युनिस्टों, उक्त संघ के कार्यकर्ताओं और अन्य प्रगतिशील व्यक्तियों की बहुत

बड़ी संख्या में निर्दयतापूर्वक हत्या कर दी।

[२] १९३९ में क्वोमिन्ताङ ने श्येनयाङ-य्वीलिन राजमार्ग और लुङहाए रेलवे पर अपने मोहरे तीन जन-सिद्धान्त नौजवान संघ के "होस्टलों" के रूप में अनेक जांच-चौकियां कायम करके नाकेबन्दी कर दी। इन "होस्टलों" में नियुक्त गुप्त एजेन्ट क्वोमिन्ताङ फौजों के साथ मिलकर शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र में आने-जाने वाले प्रगतिशील नौजवानों और बुद्धिजीवियों को गिरफ्तार करते थे तथा उन्हें नजरबन्दी कैम्पों में डाल देते थे, जहां या तो उनकी निर्दयतापूर्वक हत्या कर दी जाती थी अथवा उन्हें मुखबिर बनने के लिए मजबूर किया जाता था।

नव-जनवादी वैधानिक सरकार*

२० फरवरी १९४०

यह अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है कि आज येनान के विभिन्न व्यवसायों की जनता के प्रतिनिधियों की सभा वैधानिक सरकार प्रोत्साहन संघ के उद्‌घाटन के लिए हो रही है तथा वैधानिकता में हर आदमी दिलचस्पी लेने लगा है। हमारे इस संघ का उद्देश्य क्या है ? इसका उद्देश्य है जनता की इच्छा को पूर्ण रूप से अभिव्यक्त करना, जापान को पराजित करना और नए चीन का निर्माण करना।

जापान के खिलाफ सशस्त्र प्रतिरोध, जिसका हम सब समर्थन करते हैं, चलाया जा रहा है; सवाल अब केवल उस पर डटे रहने का है। लेकिन एक और चीज है, जिसे जनवाद कहते हैं और जिस पर अमल नहीं हो रहा। आज के चीन के लिए ये दोनों ही परम महत्व रखते हैं। वैसे तो चीन में अनेक बातों का अभाव है, लेकिन स्वाधीनता और जनवाद इनमें प्रमुख हैं। इनमें से किसी भी एक

* यह कामरेड माम्रो त्सेतुङ द्वारा येनान वैधानिक सरकार प्रोत्साहन संघ के सामने दिया गया भाषण है। च्याङ काई-शेक के धोखेभरे प्रचार से भ्रमित अनेक पार्टी-कामरेड उस समय यह सोचते थे कि शायद क्वोमिन्ताङ सचमुच वैधानिक सरकार की स्थापना करे। इस भाषण में कामरेड माम्रो त्सेतुङ ने च्याङ काई-शेक की धोखाधड़ी का पर्दाफाश किया और "वैधानिक सरकार"

के बिना चीन के मामले ठीक से नहीं चलाए जा सकते। और जहां इन दो बातों का अभाव है, वहीं दो फाजिल बातें भी हैं। ये क्या हैं? ये हैं साम्राज्यवादी उत्पीड़न और सामन्तवादी उत्पीड़न। इन दो फाजिल बातों के कारण ही चीन औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती देश बन गया है। आज राष्ट्र की प्रमुख मांगें हैं स्वाधीनता तथा जनवाद, और इसलिए हमें साम्राज्यवाद तथा सामन्तवाद का विनाश कर देना चाहिए। इनका दृढ़तापूर्वक, सम्पूर्ण रूप से और निर्ममता के साथ विनाश कर देना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि केवल निर्माण की ही आवश्यकता है, विनाश की नहीं। हम पूछना चाहते हैं: वाङ चिङ-वेइ का विनाश होना चाहिए कि नहीं? जापानी साम्राज्यवाद का विनाश होना चाहिए कि नहीं? सामन्ती व्यवस्था का विनाश होना चाहिए कि नहीं? जब तक इन बुराइयों का खात्मा न हो जाए, तब तक निर्माण का सवाल ही नहीं उठता। केवल इनका विनाश करके ही चीन को बचाया जा सकता है और निर्माण की शुरुआत की जा सकती है; नहीं तो यह केवल निष्प्रयोजन स्वप्न सिद्ध होगा। केवल पुराने और सड़े-गले का विनाश करके ही हम नए और टिकाऊ का निर्माण कर सकते हैं। स्वाधीनता और जनवाद को मिला दिया जाए तो यह होगा जनवाद पर आधारित प्रतिरोध या प्रतिरोध की सेवा

के प्रचार-शस्त्र को उसके हाथ से छीनकर उसे च्याङ से जनवाद और आजादी की मांग करने के लिए जनता को आन्दोलित करने वाला शस्त्र बना दिया। इस पर च्याङ काई-शेक ने अपनी जादू की पिटारी समेट ली और समूचे प्रतिरोध-युद्ध के दौरान फिर कभी अपनी तथाकथित "वैधानिक सरकार" का प्रचार करने का साहस नहीं किया।

करने वाला जनवाद। जनवाद के बिना प्रतिरोध असफल रहेगा। जनवाद के बिना प्रतिरोध जारी नहीं रखा जा सकता। यदि जनवाद होगा तो हम अवश्य जीतेंगे, चाहे प्रतिरोध में आठ-दस वर्ष क्यों न लग जाएं।

वैधानिक सरकार क्या है? यह एक जनवादी सरकार है। अभी-अभी हमारे बुजुर्ग कामरेड ऊ[1] ने जो कुछ कहा उससे मैं सहमत हूं। आज हमें किस प्रकार की जनवादी सरकार चाहिए? नव-जनवादी सरकार, नव-जनवादी वैधानिक सरकार। यह न तो पुरानी, जीर्ण-शीर्ण, योरपीय-अमरीकी किस्म की तथाकथित जनवादी सरकार है जो पूंजीपति वर्ग का अधिनायकत्व है, और न ही अभी सोवियत संघ की तरह की जनवादी सरकार है जो एक सर्वहारा अधिनायकत्व है।

पुरानी किस्म के जनवाद का, जिस पर दूसरे देशों में अमल होता है, जमाना गुजर चुका है और वह प्रतिक्रियावादी हो गया है। किसी भी परिस्थिति में हमें इस प्रकार की प्रतिक्रियावादी चीज को स्वीकार नहीं करना चाहिए। चीनी कट्टरपंथी जिस तरह की वैधानिक सरकार की बातें कर रहे हैं वह विदेशों में पाई जाने वाली पुरानी किस्म की पूंजीपति वर्ग की जनवादी सरकार ही है। लेकिन वे जब इसकी बात करते हैं तो इसका मतलब यह नहीं होता कि वास्तव में वे लोग इसे चाहते हैं, वे तो जनता को धोखा देने के लिए ही इसका उपयोग करते हैं। वास्तव में वे लोग एक ही पार्टी की फासिस्टवादी तानाशाही चाहते हैं। दूसरी ओर चीन का राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग निश्चय ही इस प्रकार की वैधानिक सरकार कायम करना चाहता है और वह चीन में पूंजीपति वर्ग का अधि-

नायकत्व स्थापित करना चाहता है, लेकिन वह कभी सफल नहीं होगा। कारण, चीन की जनता ऐसी सरकार नहीं चाहती और वह पूंजीपति वर्ग द्वारा चलाई जाने वाली एकवर्गीय तानाशाही का स्वागत नहीं करेगी। चीन के मामलों का निर्णय चीनी जनता की विशाल बहुसंख्या द्वारा होना चाहिए और अकेले पूंजीपति वर्ग द्वारा ही सरकार पर इजारा कायम किए जाने की बात को बिलकुल ठुकरा दिया जाना चाहिए। तो फिर समाजवादी जनवाद कैसा है? बेशक, यह बहुत अच्छा है और अन्ततोगत्वा यह जनवाद सारी दुनिया में छा जाएगा। लेकिन आज चीन में अभी भी इस प्रकार का जनवाद व्यावहारिक नहीं है, इसलिए फिलहाल हमें इसके बिना ही काम चलाना पड़ता है। भविष्य में, विशिष्ट परिस्थितियों के होने पर ही इसे लागू किया जा सकेगा। आज हमें जिस प्रकार की जनवादी सरकार की आवश्यकता है, वह न तो पुराने किस्म का जनवाद है और न ही अभी समाजवादी जनवाद है, बल्कि वह नव-जनवाद ही है जो आज के चीन की हालतों के अनुकूल है। जिस वैधानिक सरकार के स्थापना-कार्य को प्रोत्साहन देना है वह नव-जनवादी वैधानिक सरकार ही हो सकती है।

नव-जनवादी वैधानिक सरकार आखिर क्या है? यह चीनी गद्दारों और प्रतिक्रियावादियों के विरुद्ध कई क्रान्तिकारी वर्गों का एक संयुक्त अधिनायकत्व है। एक बार किसी ने कहा था, "यदि भोजन हो तो सबको बांटकर खाना चाहिए।" मेरे खयाल से यह बात नव-जनवाद के लिए मिसाल बन सकती है। जिस प्रकार भोजन में सबका साझा होना चाहिए, उसी प्रकार राजसत्ता पर भी किसी एक पार्टी, ग्रुप या वर्ग का एकाधिकार नहीं होना चाहिए।

डाक्टर सुन यात-सेन ने "क्वोमिन्ताङ की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस के घोषणापत्र" में इस विचार को बड़ी अच्छी तरह व्यक्त किया था :

> आधुनिक राज्यों की तथाकथित जनवादी व्यवस्था पर सामान्यत: पूंजीपति वर्ग का एकाधिकार है और यह महज आम लोगों को उत्पीड़ित करने का साधन बन गई है। इसके विपरीत क्वोमिन्ताङ के जनवाद के सिद्धान्त का मतलब है वह जनवाद, जिसमें सभी आम लोगों का हिस्सा हो और जो चन्द लोगों की निजी मिलकियत न हो।

साथियो, वैधानिक सरकार के अध्ययन के लिए हमें विभिन्न पुस्तकें पढ़नी चाहिए, लेकिन सबसे बढ़कर हमें इस घोषणापत्र को पढ़ना चाहिए और उक्त वाक्यों को रट लेना चाहिए। "जिसमें सभी आम लोगों का हिस्सा हो और जो चन्द लोगों की निजी मिलकियत न हो" – यह है उसका सारतत्व, जिसे हम नव-जनवादी वैधानिक सरकार कहते हैं, अर्थात वही जिसे हम चीनी गद्दारों और प्रतिक्रियावादियों के विरुद्ध कई क्रान्तिकारी वर्गों का संयुक्त अधिनायकत्व कहते हैं; आज हमें ऐसी ही वैधानिक सरकार की आवश्यकता है। और जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की वैधानिक सरकार का यही रूप होना चाहिए।

आज की इस सभा का उद्देश्य है वैधानिक सरकार की स्थापना के लिए प्रोत्साहित या प्रेरित करना। हमें यह "प्रेरणा" क्यों देनी पड़ती है? यदि सब लोग आगे बढ़ रहे होते तो किसी को प्रेरित करने की आवश्यकता न होती। हम आज यह सभा करने की

जहमत क्यों कर रहे हैं ? क्योंकि कुछ लोग आगे बढ़ने के बजाय लेट गए हैं और हिलने से इनकार कर रहे हैं। वे न केवल आगे बढ़ने से इनकार कर रहे हैं, बल्कि पीछे जाना चाहते हैं। आप उनसे आगे बढ़ने को कहिए, तो वे मर भले ही जाएं लेकिन आगे नहीं बढ़ेंगे। ये लोग कट्टरपंथी हैं। ये लोग ऐसे अड़ियल हैं कि इन्हें "प्रेरणा" देने के लिए हमें यह सभा करनी पड़ रही है। यह "प्रेरणा" शब्द कहां से आता है ? सबसे पहले इस सिलसिले में इसे किसने लागू किया ? हमने नहीं, बल्कि उस महान और श्रद्धेय व्यक्ति डाक्टर सुन यात-सेन ने, जिन्होंने कहा : "पिछले चालीस वर्षों से मैं . . . राष्ट्रीय क्रान्ति के कार्य में जुटा हुआ हूं।" उनका वसीयतनामा पढ़िए और आपको निम्नांकित शब्द मिलेंगे : "अभी हाल में मैंने राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाने की सिफारिश की है . . . और यथासम्भव कम से कम समय में इसे बुलाने के लिए विशेषतः प्रेरणा दी जानी चाहिए। आप लोगों को मेरा यह हार्दिक आदेश है।" साथियो ! यह कोई साधारण "आदेश" नहीं है, बल्कि "हार्दिक आदेश" है। एक "हार्दिक आदेश" कोई मामूली आदेश नहीं होता, इसलिए इसकी हल्केपन के साथ उपेक्षा कैसे की जा सकती है ? और फिर, "यथासम्भव कम से कम समय में" ; पहले, लम्बे से लम्बे समय में नहीं, दूसरे, अपेक्षाकृत लम्बे समय में नहीं, और तीसरे, कम समय में भी नहीं, बल्कि "यथासम्भव कम से कम समय में"। यदि यथासम्भव कम से कम समय में हम राष्ट्रीय एसेम्बली को अस्तित्व में लाना चाहते हैं, तो फिर हमें इसके लिए "प्रेरणा" देनी होगी। डाक्टर सुन यात-सेन का निधन हुए पन्द्रह वर्ष गुजर चुके हैं, लेकिन जिस राष्ट्रीय एसेम्बली की सिफारिश उन्होंने की थी वह आज

तक नहीं बुलाई गई। राजनीतिक अभिभावकता का नाटक रचते-रचते कुछ लोगों ने व्यर्थ ही समय गंवा दिया है, "यथासम्भव कम से कम समय" को लम्बे से लम्बा समय कर दिया है, और फिर भी वे डाक्टर सुन यात-सेन के नाम की माला जपते रहते हैं। डाक्टर सुन यात-सेन की आत्मा अपने इन बेवफा शिष्यों को कितना कोस रही होगी ! यह नितान्त स्पष्ट है कि बिना "प्रेरणा" के प्रगति नहीं होगी। "प्रेरणा" इसलिए दी जानी चाहिए क्योंकि अनेक लोग पीछे को जा रहे हैं और दूसरे अनेक लोग अभी भी जागे नहीं हैं।

चूंकि कुछ लोग आगे नहीं बढ़ रहे हैं, इसलिए हमें उनको प्रेरित करना पड़ता है। और दूसरे लोगों की गति धीमी है, इसलिए हमें उनको प्रेरित करना पड़ता है। इसीलिए हमने अनेकों प्रोत्साहन संघ कायम किए हैं। नौजवानों ने वैधानिक सरकार प्रोत्साहन संघ स्थापित किए हैं, और इसी प्रकार महिलाओं, मजदूरों, स्कूलों, सरकारी संस्थाओं और फौजी यूनिटों ने भी। यह सब जीवन-शक्ति से ओतप्रोत है और बहुत ही अच्छा है। और आज हम यह महासंघ भी इसी उद्देश्य से कायम कर रहे हैं जिससे कि हम सब एक साथ मिलकर वैधानिक सरकार की तुरत स्थापना करने और डाक्टर सुन यात-सेन की शिक्षाओं पर फौरी अमल करने के लिए कार्यवाही करने की प्रेरणा दे सकें।

कुछ लोग कहते हैं : "आप तो येनान में हैं और वे लोग विभिन्न अन्य जगहों में हैं। यदि वे कोई ध्यान नहीं देते, तो उन्हें प्रेरित करने से क्या फायदा है ?" हां, फायदा जरूर है। कारण, स्थिति बदल रही है और उन्हें मजबूर होकर ध्यान देना पड़ेगा। यदि हम और अधिक

सभाएं करते हैं, और अधिक लेख लिखते हैं, और अधिक भाषण देते हैं तथा और अधिक तार भेजते हैं, तो उनके लिए ध्यान न देना असम्भव हो जाएगा। मेरे खयाल में येनान में कायम अनेक प्रोत्साहन संघों का दोहरा मकसद है। पहला तो यह कि समस्या का अध्ययन किया जाए और दूसरा यह कि लोगों को आगे ढकेला जाए। हमें अध्ययन क्यों करना चाहिए? क्योंकि मान लो वे आगे नहीं बढ़ते और आप उन्हें प्रेरित करते हैं और वे आपसे पूछते हैं कि धक्का क्यों दे रहे हो, तब आपको उत्तर देना ही होगा। यह करने के लिए हमें वैधानिक सरकार की तमाम समस्याओं का गहन अध्ययन करना होगा। हमारे बुजुर्ग कामरेड ऊ कुछ तफसील से इसी के बारे में बता रहे थे। सभी स्कूलों, सरकारी संस्थाओं और फौजी यूनिटों तथा जनता के सभी तबकों को वैधानिक सरकार की इस समस्या का, जो हमारे सामने मौजूद है, अध्ययन करना चाहिए।

इसका अध्ययन कर लेने पर ही लोगों को हम आगे ढकेल सकते हैं। उनको आगे ढकेलने का मतलब उन्हें "प्रेरित करना" है, और जैसे-जैसे हम हर क्षेत्र में आगे ढकेलेंगे वैसे-वैसे सभी चीजें भी कदम-ब-कदम आगे बढ़ेंगी। अनेक छोटी-छोटी धाराएं मिलकर एक बड़ी नदी का रूप ले लेंगी और तमाम सड़ी-गली व गन्दी चीजों को बहा ले जाएंगी, तथा इस प्रकार नव-जनवादी वैधानिक सरकार का उदय होगा। इस प्रकार धकियाने का बहुत प्रभाव पड़ेगा। हम जो कुछ येनान में करेंगे, उसका सारे देश पर अवश्य प्रभाव पड़ेगा।

साथियो! क्या आप यह समझते हैं कि सभाएं हो जाने और

तार भेज देने से ही कट्टरपंथी झुक जाएंगे, आगे बढ़ना शुरू कर देंगे और हमारे आदेशों का पालन करने लगेंगे? नहीं, वे ऐसे आज्ञाकारी नहीं हैं। उनमें से बहुत सारे तो कट्टरपंथियों के लिए स्थापित विशिष्ट प्रशिक्षण स्कूलों के स्नातक हैं। वे आज कट्टरपंथी हैं, कल भी रहेंगे और परसों भी। कट्टरपंथी का मतलब क्या है? "कट्टर" का मतलब है गैर-लचीला होना और "पंथी" का अर्थ है पथ पर चलने वाला, प्रगति के विरुद्ध पथ पर चलने वाला, आज भी, कल भी और परसों भी। हम ऐसे ही लोगों को कट्टरपंथी कहते हैं। उन्हें ऐसा बनाना कि वे हमारी बात सुनें, कोई आसान काम नहीं है।

जहां तक दुनिया में अभी तक की वैधानिक सरकारों का सम्बन्ध है, चाहे वे बरतानिया, फ्रांस व संयुक्त राज्य अमरीका में हों या सोवियत संघ में, वे सभी इस प्रकार स्थापित की गई हैं कि क्रान्ति सफल होने के बाद ही जनवाद की वास्तविक स्थापना को मान्यता देने के लिए एक बुनियादी कानून यानी संविधान को जारी किया गया है। लेकिन चीन की स्थिति भिन्न है। चीन में क्रान्ति अभी सफल नहीं हुई और हमारे सीमान्त क्षेत्र को छोड़कर वास्तव में कहीं भी जनवादी सरकार नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि आज का चीन अर्ध-औपनिवेशिक तथा अर्ध-सामन्ती प्रशासन के अन्तर्गत है, और यदि एक अच्छा संविधान जारी कर भी दिया जाए तो भी अनिवार्यतः सामन्ती शक्तियां बाधा पहुंचाएंगी और कट्टरपंथी लोग अड़ंगे लगाएंगे, इसलिए उस पर सुचारु रूप से अमल करना असम्भव हो जाएगा। इस प्रकार, वैधानिक सरकार के लिए चलने वाले मौजूदा आन्दोलन को एक ऐसे जनवाद की प्राप्ति के लिए

प्रयास करने हैं जो अभी तक उपलब्ध नहीं हुआ, न कि जनवाद की वास्तविक स्थापना को मान्यता देनी है। यह एक बड़ा संघर्ष है, तथा निश्चय ही यह कोई हल्का या आसान मामला नहीं है।

जिन लोगों ने हमेशा ही वैधानिक सरकार का विरोध किया है,[2] वे आज उसके पक्ष में जबानी जमा-खर्च कर रहे हैं। क्यों? क्योंकि उनके ऊपर जापान से लड़ने की इच्छुक जनता का दबाव है और उन्हें कुछ ढीला होना पड़ा है। यहां तक कि वे लोग बड़े जोर-शोर से चिल्ला रहे हैं, "हम वैधानिक सरकार का सदा से ही पक्षपोषण करते रहे हैं!" तथा भारी शोरगुल मचा रहे हैं। बरसों से हम "वैधानिक सरकार" की बात सुन तो रहे हैं, लेकिन हमने उसका निशान अभी तक नहीं देखा। वे लोग कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं; वैधानिक सरकार के मामले में उन्हें दुरंगे चरित्र वाला कहा जा सकता है। "सदा से ही पक्षपोषण करते रहे हैं" — उनका यह कथन इसी धोखाधड़ी की जीती-जागती मिसाल है। आज के कट्टरपंथी इसी तरह के दुरंगे चरित्र वाले लोग हैं। उनकी वैधानिक सरकार एक धोखे की टट्टी है। निकट भविष्य में ही आपको एक संविधान मिल सकता है और इसके साथ एक प्रेसिडेन्ट भी। लेकिन जहां तक जनवाद और आजादी का सम्बन्ध है, ऊपर वाला ही जानता है कि वे इन्हें कब देंगे? चीन में एक संविधान रह चुका है। क्या छाओ खुन ने एक संविधान जारी नहीं किया था?[3] लेकिन जनवाद और आजादी कहां थी? जहां तक प्रेसिडेन्टों का मामला है, वे तो कई हो चुके हैं। पहले प्रेसिडेन्ट सुन यात-सेन थे; वे तो अच्छे थे लेकिन य्वान श-खाए ने उन्हें अलग कर दिया। दूसरा था य्वान श-खाए, तीसरा ली य्वान-हुङ,[4] चौथा फ़ङ क्वो-चाङ[5] और पांचवां श्वी श-छाङ;[6] ऐसे प्रेसिडेन्ट तो सचमुच बहुत हुए हैं, लेकिन इनमें से क्या कोई किसी निरंकुश सम्राट से भिन्न था? ऐसे संविधान और प्रेसिडेन्ट दोनों ही नकली थे। बरतानिया, फ्रांस और संयुक्त राज्य अमरीका की आजकल की तथाकथित वैधानिक और जनवादी सरकारें दरअसल आदमखोर सरकारें हैं। यही बात मध्य और दक्षिण अमरीका में भी देखने में आती है, जहां अनेक देश गणराज्य का साइनबोर्ड लटकाए हुए हैं, लेकिन वहां दरअसल जनवाद का नामोनिशान तक नहीं है। चीन के मौजूदा कट्टरपंथी भी ऐसे ही हैं। वैधानिक सरकार की उनकी बात केवल "बकरी का सिर लटकाकर कुत्ते का गोश्त बेचने" के समान है। वे वैधानिक सरकार का बकरी का सिर दिखाते हैं और एक ही पार्टी की तानाशाही का कुत्ते का गोश्त बेचते हैं। मैं उन पर निराधार प्रहार नहीं कर रहा हूं; मेरी बात का पक्का आधार है, क्योंकि वे वैधानिक सरकार की बात तो करते हैं लेकिन जनता को रत्तीभर भी आजादी नहीं देते।

साथियो! सच्ची वैधानिक सरकार आसानी से प्राप्त नहीं होगी, वह तो कठिन संघर्ष के द्वारा ही प्राप्त हो सकती है। इसलिए आपको यह आशा नहीं करनी चाहिए कि हमारी सभाएं होते ही, हमारे तार जाते ही और लेख लिखते ही तत्काल वैधानिक सरकार आ जाएगी। और न ही आपको यह आशा करनी चाहिए कि जन राजनीतिक परिषद[7] में प्रस्ताव पास करते ही, राष्ट्रीय सरकार के आदेश जारी करते ही, १२ नवम्बर को राष्ट्रीय एसेम्बली[8] बुलाते ही, संविधान जारी करते ही और यहां तक कि एक प्रेसिडेन्ट चुने जाते ही सब कुछ अच्छा हो जाएगा और दुनिया में सब कुछ

ठीक हो जाएगा। यह असम्भव है, इसलिए आप भ्रम में न पड़ें। और आम जनता को भी यह बात समझाने की आवश्यकता है जिससे वह भ्रमित न हो। मामला कभी भी इतना आसान नहीं होगा।

तो फिर क्या इस कार्य में हम नाकामयाब रहे हैं? मामला इतना कठिन है कि मालूम होता है, वैधानिक सरकार की उम्मीद ही नहीं है। लेकिन ऐसा भी नहीं है। अब भी वैधानिक सरकार की आशा बनी हुई है, और सच पूछिए तो बहुत बड़ी आशा बनी हुई है, तथा निश्चय ही चीन एक नव-जनवादी राज्य बन जाएगा। क्यों? कठिनाइयां कट्टरपंथियों द्वारा की जाने वाली गड़बड़ियों के कारण आती हैं, लेकिन वे लोग सदा के लिए कट्टरपंथी नहीं बने रह सकते और इसीलिए हमें अब भी बड़ी आशाएं हैं। दुनिया के कट्टरपंथी आज कट्टरपंथी हो सकते हैं, कल भी कट्टरपंथी रह सकते हैं और परसों भी, लेकिन सदा के लिए नहीं; आखिरकार उन्हें बदलना ही होगा। मिसाल के लिए, वाङ चिङ-वेइ लम्बे अरसे तक कट्टरपंथी बना रहा, लेकिन जापान-विरोधी कतारों में वह कट्टरपंथी का नाटक जारी न रख सका और जापानियों की गोद में चला गया। दूसरी मिसाल चाङ क्वो-थाओ की है; वह भी एक लम्बे अरसे तक कट्टरपंथी बना रहा, लेकिन जब हमने उसके विरुद्ध कई सभाएं कीं और बार-बार संघर्ष किया तो वह भी भाग खड़ा हुआ। वास्तव में, कट्टरपंथी कट्टर भले ही हों लेकिन वे मृत्यु तक कट्टरपंथी नहीं बने रह सकते और अन्त में बदल जाते हैं – कुत्ते की टट्टी जैसी गन्दी और घृणित चीज में बदल जाते हैं। कुछ लोग बदलकर बेहतर बन जाते हैं और यह भी उनके खिलाफ हमारे

निरन्तर संघर्ष से होता है – वे अपनी गलतियों को कबूल कर लेते हैं और बदलकर बेहतर बन जाते हैं। संक्षेप में बात यह है कि कट्टरपंथी अन्ततः बदलते जरूर हैं। उनके पास हमेशा अनेक योजनाएं होती हैं, दूसरों की कीमत पर लाभ उठाने की और दुरंगा चरित्र अपनाने की, आदि-आदि। लेकिन परिणाम सदा उनकी इच्छा के विपरीत होता है। वे लाजिमी तौर पर शुरुआत दूसरों को हानि पहुंचाकर करते हैं, और अन्त में खुद ही तबाह हो जाते हैं। एक बार हमने कहा था कि चेम्बरलेन "किसी बड़े पत्थर को उठाकर खुद अपने ही पांव तोड़ बैठेगा" और अब यह सच साबित हो चुका है। चेम्बरलेन ने सोवियत जनता के पांव तोड़ने के लिए हिटलर रूपी पत्थर का इस्तेमाल करना चाहा, लेकिन पिछले वर्ष सितम्बर के उस दिन से, जब एक पक्ष में जर्मनी और दूसरे पक्ष में बरतानिया व फ्रांस के बीच युद्ध शुरू हुआ, उसके हाथ का पत्थर उसके अपने ही पांवों पर गिर पड़ा। तब से आज तक वह इसका दुख भोग रहा है। चीन में ऐसी बहुत सी मिसालें हैं। य्वान श-खाए आम जनता के पांव तोड़ना चाहता था, लेकिन इसका परिणाम यह हुआ कि वह खुद अपने को ही घायल कर बैठा और सम्राट बनने के कुछ ही महीनों बाद मर गया[६]। त्वान छी-रुइ, श्वी श-छाङ, छाओ खुन, ऊ फेइ-फू आदि लोग जनता का दमन करना चाहते थे, लेकिन अन्ततोगत्वा जनता द्वारा उन्हें उखाड़ फेंका गया। जो कोई भी दूसरों की कीमत पर फायदा उठाना चाहता है, उसका अन्त अच्छा नहीं होगा।

मेरा विचार है कि यदि आज के कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरपंथी आगे नहीं बढ़ते तो वे भी इस नियम का अपवाद न होंगे। एकीकरण

के खूबसूरत बहाने के जरिए वे प्रगतिशील शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र, प्रगतिशील आठवीं राह सेना व नई चौथी सेना, प्रगतिशील कम्युनिस्ट पार्टी और जन-संगठनों का खात्मा करने की योजना बना रहे हैं। उनके पास इस प्रकार की अनेक योजनाएं हैं। लेकिन मेरा विश्वास है कि इनके परिणामस्वरूप कट्टरपंथियों द्वारा प्रगतिवाद का खात्मा नहीं, बल्कि प्रगतिवाद द्वारा उनके कट्टरपंथीपन का खात्मा होगा। अपने खात्मे से बचने के लिए कट्टरपंथियों के सामने आगे बढ़ने के सिवाय कोई और चारा नहीं है। इसलिए हमने अक्सर उन्हें आठवीं राह सेना, कम्युनिस्ट पार्टी और सीमान्त क्षेत्र पर आक्रमण न करने की सलाह दी। यदि वे आक्रमण करना ही चाहते हैं, तो उन्हें एक ऐसा प्रस्ताव पास करना चाहिए जिसकी शुरुआत इस प्रकार हो : "हम कट्टरपंथी अपने खात्मे के लिए और कम्युनिस्टों को विकास का सुअवसर प्रदान करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ होकर, कम्युनिस्ट पार्टी और सीमान्त क्षेत्र पर आक्रमण करने की जिम्मेदारी लेते हैं।" इन कट्टरपंथियों को "कम्युनिस्टों का दमन" करने का प्रचुर अनुभव है, और यदि वे एक बार फिर इस अनुभव को दोहराना चाहते हैं तो वे ऐसा करने के लिए स्वतंत्र हैं। पेटभर भोजन करने और बढ़िया नींद लेने के बाद, यदि वे कुछ "दमन" करना चाहते हैं, तो उनकी मर्जी। अलबत्ता, उन्हें उपर्युक्त प्रस्ताव को अमल में लाने के लिए तैयार रहना चाहिए, क्योंकि यह प्रस्ताव अपरिवर्तनीय है। पिछले दस वर्षों में "कम्युनिस्टों का दमन" अनिवार्य रूप से इसी प्रस्ताव के अनुरूप हुआ है। आगे भी कोई "दमन" इसी के अनुरूप होगा। इसलिए मैं तो सलाह दूंगा कि वे "दमन" के रास्ते पर न जाएं, क्योंकि सारा राष्ट्र

प्रतिरोध, एकता और प्रगति चाहता है, न कि "कम्युनिस्टों का दमन"। इसलिए जो कोई भी "कम्युनिस्टों का दमन" करने की कोशिश करेगा वह मुंह की खाएगा।

संक्षेप में, प्रतिगमन का फल अन्ततोगत्वा उस पर अमल करने वाले की इच्छा के विपरीत होता है। इस नियम का अपवाद न आधुनिक काल में है और न प्राचीन काल में, न चीन में है और न अन्यत्र कहीं।

आज वैधानिक सरकार के बारे में भी यही बात सही है। अगर कट्टरपंथी इसका विरोध करते रहते हैं, तो परिणाम निश्चय ही उनकी इच्छा के विपरीत होगा। वैधानिक सरकार के आन्दोलन का मार्ग कट्टरपंथियों के निश्चय के अनुकूल नहीं, बल्कि उनकी इच्छा के विपरीत होगा, और वह अपरिहार्य रूप से जनता द्वारा निर्धारित मार्ग पर चलेगा। यह निश्चित है, क्योंकि सारे देश की जनता की यही मांग है और चीन के ऐतिहासिक विकास की धारा और समूचे विश्व का रुझान भी इसी ओर है। इसका प्रतिरोध कौन कर सकता है? इतिहास के चक्के को पीछे नहीं ढकेला जा सकता। लेकिन, जिस काम का बीड़ा हमने उठाया है वह कल सबेरे ही पूरा नहीं होने जा रहा, उसमें समय लगेगा; उसके लिए भरपूर प्रयास की आवश्यकता है, उसे लापरवाही से नहीं किया जा सकता; उसके लिए विशाल जन-समुदाय को गोलबन्द करने की आवश्यकता है, उसे महज चन्द आदमियों द्वारा ही पुरअसर तरीके से पूरा नहीं किया जा सकता। यह बहुत अच्छी बात है कि हम आज यहां यह सभा कर रहे हैं; अपनी सभा के बाद हम लेख लिखेंगे और तार भेजेंगे तथा हम ऐसी ही सभाएं ऊथाए पहाड़ों, थाएहाङ पहाड़ों,

उत्तरी चीन, मध्य चीन और देश के अन्य भागों में करेंगे। यदि हम यह काम चन्द वर्षों तक करते रहें, तो प्राय: सब ठीक-ठाक हो जाएगा। हमें इसे अच्छी तरह करना चाहिए, हमें जनवाद और आजादी को जरूर हासिल करना चाहिए, हमें नव-जनवादी वैधानिक सरकार की स्थापना जरूर करनी चाहिए। यदि ऐसा न किया गया और कट्टरपंथियों की चलने दी गई, तो राष्ट्र गुलाम बन जाएगा। राष्ट्रीय गुलामी से बचने का यही उपाय है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सबको कोशिश करनी चाहिए। यदि हम ऐसा करेंगे, तो हमारे कार्य की सफलता की भारी उम्मीद हो जाएगी। हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि कट्टरपंथी आखिर अल्पसंख्या में ही तो हैं; बहुसंख्या कट्टरपंथियों की नहीं बल्कि ऐसे लोगों की है जो आगे बढ़ सकते हैं। अल्पसंख्या के खिलाफ बहुसंख्या और उससे जुड़े हुए हमारे प्रयास से आशा और अधिक बढ़ जाएगी। इसलिए मैं कहता हूं, यद्यपि काम कठिन है, फिर भी उसके पूरा होने की बहुत अधिक आशा है।

नोट

१ बुजुर्ग कामरेड ऊ कामरेड ऊ य्वी-चाङ हैं, जो उस समय येनान वैधानिक सरकार प्रोत्साहन संघ के अध्यक्ष थे।

२ "जिन लोगों" से क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादी गुट की ओर संकेत है जिसका सरगना च्याङ काई-शेक था।

३ १९२३ में छाओ खुन ने, जो एक उत्तरी युद्ध-सरदार था, संसद में पांच हजार चांदी की मुद्रा प्रति मत की दर से ५९० मत खरीद लिए और अपने आपको प्रेसिडेन्ट चुनवा लिया। उसने फिर एक संविधान जारी किया जिसे रिश्वतखोर संसद-सदस्यों ने बनाया था। उस समय लोग इसे "छाओ खुन संविधान" या "रिश्वतखोरी का संविधान" कहते थे।

४ ली य्वान-हुङ पहले छिङ राजवंश की सशस्त्र सेना की एक ब्रिगेड का कमाण्डर था। १९११ के ऊछाङ विद्रोह के दौरान उसके मातहत अफसरों और सैनिकों ने उसे क्रान्ति का पक्ष लेने के लिए मजबूर कर दिया, और उसे हुपे प्रान्त का फौजी गवर्नर बना दिया गया। उत्तरी युद्ध-सरदारों के गुट के शासन-काल में वह पहले वाइस-प्रेसिडेन्ट और बाद में प्रेसिडेन्ट बना।

५ फ़ङ क्वो-चाङ, य्वान श-खाए का एक मातहत अफसर था। य्वान श-खाए की मृत्यु के बाद वह उत्तरी युद्ध-सरदारों के गुट के चली (हपे प्रान्त) ग्रुप का नेता बना। १९१७ में उसने ली य्वान-हुङ को भगा दिया और स्वयं पेकिङ सरकार का प्रेसिडेन्ट बन बैठा।

६ श्वी श-छाङ उत्तरी युद्ध-सरदारों के गुट की सेवा करने वाला एक राजनीतिज्ञ था। १९१८ में उसे त्वान छी-रुइ द्वारा नियंत्रित संसद ने प्रेसिडेन्ट चुन लिया।

७ जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध शुरू हो जाने के बाद क्वोमिन्ताङ सरकार ने अनिच्छापूर्वक "जन राजनीतिक परिषद" बनाई जो केवलमात्र एक सलाहकारी संस्था थी। इसके सभी सदस्य क्वोमिन्ताङ सरकार द्वारा "निमंत्रित" किए जाते थे। नाम के लिए तो उसमें सभी जापान-विरोधी राजनीतिक पार्टियों और ग्रुपों के प्रतिनिधि सम्मिलित किए गए थे, लेकिन उस पर आधिपत्य क्वोमिन्ताङ के बहुमत का ही था। उसके पास क्वोमिन्ताङ सरकार द्वारा अपनाई जाने वाली नीतियों या उपायों को प्रभावित करने वाली कोई शक्ति न थी। च्याङ काई-शेक और क्वोमिन्ताङ जैसे-जैसे प्रतिक्रियावादी बनते गए, वैसे-वैसे परिषद में क्वोमिन्ताङ और अन्य प्रतिक्रियावादियों की संख्या बढ़ती गई, तथा जनवादी व्यक्तियों की संख्या कम होती गई और उनकी भाषण-स्वतंत्रता और भी घटा दी गई। इस प्रकार यह परिषद दिनोंदिन महज क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों के हाथ का खिलौना बनती गई। १९४१ की दक्षिणी आनह्वेइ घटना के बाद परिषद के कम्युनिस्ट सदस्यों ने क्वोमिन्ताङ द्वारा अपनाए गए

प्रतिक्रियावादी उपायों का विरोध करने के लिए अनेक बार इसकी मीटिंगों का बहिष्कार किया।

[8] कम्युनिस्टों और दूसरी पार्टियों व ग्रुपों के जनवादी व्यक्तियों के सुझाव पर सितम्बर १९३९ में जन राजनीतिक परिषद की चौथी मीटिंग में एक प्रस्ताव पास किया गया जिसमें क्वोमिन्ताङ सरकार से मांग की गई कि वह एक निश्चित तिथि पर राष्ट्रीय एसेम्बली बुलाए और वैधानिक सरकार की स्थापना करे। नवम्बर १९३९ में क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के छठवें पूर्ण अधिवेशन में घोषणा की गई कि १२ नवम्बर १९४० को राष्ट्रीय एसेम्बली का अधिवेशन बुलाया जाएगा। हालांकि जनता को धोखा देने के लिए इसे बहुत ज्यादा प्रचारित किया गया, लेकिन बाद में इस पर अमल हुआ ही नहीं।

[9] य्वान श-खाए ने १२ दिसम्बर १९१५ को अपने को सम्राट घोषित कर दिया, लेकिन २२ मार्च १९१६ को उसे मजबूर होकर अपना यह खिताब छोड़ना पड़ा।

जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों में राजनीतिक सत्ता के सवाल के बारे में*

६ मार्च १९४०

१. यह एक ऐसा समय है जब क्वोमिन्ताङ के कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादी इस बात का सख्त विरोध कर रहे हैं कि हम उत्तरी चीन व मध्य चीन में और अन्य स्थानों पर जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता कायम करें जबकि हमें उसे अवश्य ही कायम करना चाहिए तथा मुख्य जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों में ऐसा करना हमारे लिए सम्भव हो चुका है। राजनीतिक सत्ता के सवाल के बारे में हम लोग कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के खिलाफ उत्तरी, मध्य और उत्तर-पश्चिमी चीन में जो संघर्ष चला रहे हैं, उससे समूचे देश में संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के संगठनों की स्थापना करने के कार्य को आगे बढ़ाने में मदद मिलती है, तथा समूचे राष्ट्र की नजरें बड़ी तत्परता से उसकी ओर लगी हुई हैं। अतएव, इस सवाल का सावधानी से निपटारा करना चाहिए।

२. प्रतिरोध-युद्ध के दौरान जिस राजनीतिक सत्ता की स्थापना हम लोग कर रहे हैं उसका स्वरूप राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे वाला है।

* यह अन्तःपार्टी निर्देश कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की तरफ से लिखा था।

यह उन तमाम लोगों की राजनीतिक सत्ता है जो प्रतिरोध और जनवाद दोनों का समर्थन करते हैं; यह गद्दारों व प्रतिक्रियावादियों पर कई क्रान्तिकारी वर्गों का संयुक्त जनवादी अधिनायकत्व है। यह जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग के प्रतिक्रान्तिकारी अधिनायकत्व से भिन्न है तथा भूमि-क्रान्ति काल के मजदूर-किसानों के जनवादी अधिनायकत्व से भी भिन्न है। इस राजनीतिक सत्ता के स्वरूप को स्पष्ट रूप से समझने और इसे संजीदगी के साथ कार्यान्वित करने से सारे देश में जनवादीकरण के कार्य को आगे बढ़ाने में भारी मदद मिलेगी। किसी भी किस्म के भटकाव से, चाहे वह "वामपंथी" हो अथवा दक्षिणपंथी, समूचे देश की जनता पर बहुत बुरा असर पड़ेगा।

३. हृपे प्रान्तीय एसेम्बली का अधिवेशन बुलाने और हृपे प्रशासनिक परिषद का चुनाव कराने का, जिनकी तैयारियां अभी शुरू ही हुई हैं, भारी महत्व है। इसी प्रकार उत्तर-पश्चिमी शानशी, शानतुङ, ह्वाए नदी के उत्तर में स्थित क्षेत्रों, स्वेइते व फ़ूश्येन काउन्टियों और पूर्वी कानसू में राजनीतिक सत्ता के नए संगठनों की स्थापना का भी भारी महत्व है। हमें संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के उसूल के अनुसार चलना चाहिए तथा हर किस्म के "वामपंथी" अथवा दक्षिणपंथी भटकावों से बचने की भरपूर कोशिश करनी चाहिए। इस समय मध्यम पूंजीपति वर्ग और जागृत शरीफजादों को अपने पक्ष में करने के काम को नजरअन्दाज करने का "वामपंथी" भटकाव ज्यादा गम्भीर खतरा बना हुआ है।

४. जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के उसूल के अनुरूप, एक-तिहाई स्थान कम्युनिस्टों को, एक-तिहाई स्थान हमारी पार्टी के बाहर के वामपंथी प्रगतिशील व्यक्तियों को तथा एक-तिहाई स्थान उन मध्यवर्ती तत्वों को दिए जाएं जो न वामपंथी हैं और न दक्षिणपंथी।

५. इस बात की गारन्टी कर देनी चाहिए कि राजनीतिक सत्ता के संगठनों में कम्युनिस्ट नेतृत्वकारी भूमिका अदा करें, और इसलिए जो पार्टी-सदस्य एक-तिहाई स्थान ग्रहण करें वे राजनीति की दृष्टि से अत्यन्त योग्य व्यक्ति होने चाहिए। यह शर्त पूरी होने पर अधिक प्रतिनिधित्व के बिना ही पार्टी के नेतृत्व की गारन्टी की जा सकेगी। नेतृत्व का मतलब यह नहीं है कि इसे नारा मानकर सुबह से रात तक गला फाड़-फाड़ कर बुलन्द किया जाए और रोबदाब के साथ दूसरों से हमारी आज्ञा का पालन कराया जाए, बल्कि इसका मतलब है पार्टी की सही नीतियों और अपने खुद के आदर्श कार्य के जरिए पार्टी के बाहर के लोगों को समझाना-बुझाना और उन्हें शिक्षित करना, ताकि वे स्वेच्छा से हमारे प्रस्तावों को मान लें।

६. हमारी पार्टी के बाहर के प्रगतिशील व्यक्तियों को एक-तिहाई स्थान दिए जाने चाहिए क्योंकि उनके सम्बन्ध निम्न-पूंजीपति वर्ग के व्यापक जन-समुदाय के साथ हैं। निम्न-पूंजीपति वर्ग के व्यापक जन-समुदाय को अपने पक्ष में करने के लिए इसका भारी महत्व है।

७. एक-तिहाई स्थान मध्यवर्ती तत्वों को देने का हमारा मकसद है मध्यम पूंजीपति वर्ग व जागृत शरीफजादों को अपने पक्ष में करना। कट्टरतावादियों को अलगाव में डालने के लिए इन हिस्सों को अपने पक्ष में करना एक महत्वपूर्ण कदम है। इस समय हमें इन

हिस्सों की शक्ति को नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए तथा उनके साथ व्यवहार करने में सावधानी बरतनी चाहिए।

८. कम्युनिस्ट पार्टी के बाहर के व्यक्तियों के प्रति, चाहे उनके सम्बन्ध किसी पार्टी के साथ हों अथवा न हों और चाहे वे किसी भी पार्टी के सदस्य क्यों न हों, हमारा रवैया सहयोगपूर्ण होना चाहिए, बशर्ते कि वे जापान का प्रतिरोध करने का पक्षपोषण करते हों और कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सहयोग करने को तैयार हों।

६. स्थानों के वितरण के बारे में ऊपर जो बात कही गई है वह पार्टी की असली नीति है, तथा इस मामले में किसी भी सूरत में बेमन से काम नहीं करना चाहिए। इस नीति को कार्यान्वित करने के लिए हमें उन पार्टी-सदस्यों को शिक्षित करना चाहिए जो राजनीतिक सत्ता के संगठनों में काम करते हैं, पार्टी के बाहर के लोगों के साथ सहयोग करने में उनके द्वारा दिखाई जाने वाली संकीर्णता को, जो अनिच्छा व संकोच के रूप में प्रकट होती है, दूर करना चाहिए तथा जनवादी कार्यशैली अपनाने को प्रोत्साहन देना चाहिए, यानी कोई भी कार्यवाही करने से पहले पार्टी के बाहर के लोगों से सलाह-मशविरा करना और बहुमत से मंजूरी ले लेना। साथ ही हमें चाहिए कि पार्टी के बाहर के लोगों को विभिन्न समस्याओं पर अपनी राय जाहिर करने के लिए भरपूर प्रोत्साहन दें तथा उनकी रायों को ध्यान से सुनें। हमें ऐसा हरगिज नहीं सोचना चाहिए कि हमारे पास सेना और राजनीतिक सत्ता होने की वजह से सब कुछ बिना शर्त हमारे ही फैसलों के मुताबिक चलेगा, तथा इस कारण हमें इस बात की अवहेलना नहीं करनी चाहिए कि हम गैर-पार्टी लोगों को अपने मत के पक्ष में करने के लिए उन्हें समझाने-

बुझाने की कोशिश करें, ताकि वे लोग हमारे मत को खुशी-खुशी और पूरे दिल से कार्यान्वित कर सकें।

१०. स्थानों के वितरण के बारे में जो आंकड़े ऊपर दिए गए हैं वे मोटे तौर पर निर्धारित ऐसे कोटा हैं जिन्हें यांत्रिक रूप से नहीं भर दिया जाना चाहिए ; यह एक अनुपात है जिसे हर इलाके को अपनी ठोस परिस्थितियों के अनुसार लागू करना चाहिए। राजनीतिक सत्ता के सबसे निचले स्तर के संगठनों में इस अनुपात में कुछ रद्दोबदल किया जा सकता है, ताकि जमींदारों और बुरे शरीफजादों को मौका पाकर राजनीतिक सत्ता के संगठनों के भीतर न घुसने दिया जाए। जहां इस प्रकार के संगठन काफी समय से मौजूद हैं, जैसे शानशी-छाहाड़-हपे सीमान्त क्षेत्र, मध्य हपे क्षेत्र, थाए-हाङ पर्वत क्षेत्र और दक्षिण हपे क्षेत्र, वहां इस उसूल की रोशनी में अपनी नीति की फिर से जांच-पड़ताल करनी चाहिए। और जब कभी राजनीतिक सत्ता का कोई नया संगठन कायम किया जाए, तो इसी उसूल पर अमल करना चाहिए।

११. मताधिकार के बारे में जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की नीति यह होनी चाहिए कि जापान-प्रतिरोध और जनवाद के हामी हर चीनी को, अठारह वर्ष का हो जाने पर वर्ग, जाति, लिंग, धार्मिक विश्वास, पार्टी-सम्बन्ध और शिक्षा-स्तर का लिहाज किए बिना चुनने और चुने जाने का हक हो। जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के संगठनों का चुनाव जनता द्वारा किया जाना चाहिए। उनका संगठनात्मक रूप जनवादी केन्द्रीयता पर आधारित होना चाहिए।

१२. जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के

संगठनों में नीति सम्बन्धी सभी प्रमुख उपायों का बुनियादी प्रस्थान-बिन्दु होना चाहिए जापानी साम्राज्यवाद का विरोध करना, जापान का प्रतिरोध करने वाली जनता की रक्षा करना, सभी जापान-विरोधी सामाजिक तबकों के हितों का यथोचित रूप से समायोजन करना, मजदूरों व किसानों के रहन-सहन में सुधार करना तथा गद्दारों व प्रतिक्रियावादियों का दमन करना।

१३. हमारी राजनीतिक सत्ता के संगठनों में काम करने वाले जो लोग पार्टी के बाहर के हैं उनसे यह मांग नहीं की जानी चाहिए कि वे कम्युनिस्टों की ही तरह रहें, बोलें और काम करें, वरना उनमें असन्तोष या बेचैनी की भावना पैदा हो सकती है।

१४. केन्द्रीय कमेटी के सभी प्रादेशिक और उप-प्रादेशिक ब्यूरोओं, सभी क्षेत्रीय पार्टी-कमेटियों और फौजी यूनिटों के सभी प्रधानों को हिदायत दी जाती है कि वे पार्टी-सदस्यों के सामने इस निर्देश की स्पष्ट रूप से व्याख्या करें और इस बात की गारन्टी करें कि इस पर हमारी राजनीतिक सत्ता के संगठनों के कार्य में पूरी तरह अमल किया जाएगा।

जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे में कार्यनीति सम्बन्धी मौजूदा समस्याएं*

११ मार्च १९४०

१. मौजूदा राजनीतिक परिस्थिति इस प्रकार है :

(क) चीन के प्रतिरोध-युद्ध ने जापानी साम्राज्यवाद पर करारी चोट की है, अब और कोई फौजी हमला बड़े पैमाने पर शुरू करने में जापानी साम्राज्यवाद असमर्थ हो चुका है; नतीजा यह हुआ है कि शत्रु की और हमारी तुलनात्मक शक्ति अब रणनीतिक ठहराव की मंजिल में पहुंच गई है। लेकिन शत्रु अब भी चीन को अपने अधीन कर लेने की अपनी बुनियादी नीति पर अड़ा हुआ है; इस नीति को वह हमारे जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की जड़ काटने, पृष्ठभागीय इलाकों में अपने "सफाया" अभियानों को और प्रचण्ड बनाते जाने और अपने आर्थिक हमले को और तेज करने जैसे उपायों से अमल में ला रहा है।

(ख) बरतानिया और फ्रांस योरप की लड़ाई के मारे पूर्वी

* कामरेड माओ त्सेतुङ ने यह रूपरेखा येनान में आयोजित पार्टी के वरिष्ठ कार्यकर्ताओं की मीटिंग में प्रस्तुत की गई अपनी रिपोर्ट के लिए तैयार की थी।

जगत में अपनी स्थिति कमजोर पा रहे हैं, जबकि अमरीका "पहाड़ पर बैठकर बाघों के लड़ने का तमाशा देखने" की अपनी नीति पर कायम है, इसलिए फिलहाल पूर्व का म्यूनिख सम्मेलन बुलाना असम्भव है।

(ग) सोवियत संघ ने अपनी विदेश नीति में नई सफलताएं प्राप्त की हैं और वह चीन के प्रतिरोध-युद्ध का सक्रियता से समर्थन करने की अपनी नीति पर कायम है।

(घ) बड़े पूंजीपतियों के वर्ग का जापान-परस्त भाग जापान के आगे पूरा आत्मसमर्पण तो कर ही चुका है, अब वह कठपुतली की भूमिका निभाने को भी तैयार है। बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के योरप-परस्त और अमरीका-परस्त भाग जापान का प्रतिरोध करना जारी रख सकते हैं, लेकिन सुलह-समझौते की ओर उनका झुकाव अब भी गम्भीर रूप से बना हुआ है। वे दुरंगी नीति अपनाते हैं, एक तरफ तो वे जापान से निपटने में विविध गैर-क्वोमिन्ताङ शक्तियों से एका बनाए रखना चाहते हैं, और दूसरी तरफ इन शक्तियों को तथा खास तौर से कम्युनिस्ट पार्टी और दूसरी प्रगतिशील शक्तियों को कुचल डालने में कुछ भी उठा नहीं रखते। ऐसे लोग जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे का कट्टरतावादी भाग हैं।

(ङ) मध्यवर्ती शक्तियां, जिनमें मध्यम पूंजीपति वर्ग, जागृत शरीफजादे और क्षेत्रीय प्रभुत्वशाली गुट हैं, अक्सर प्रगतिशील शक्तियों और कट्टरतावादी शक्तियों के बीच का मध्यवर्ती रुख अपनाती हैं क्योंकि उनके अन्तरविरोध एक ओर तो बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग की

मुख्य शासक शक्तियों से हैं और दूसरी ओर मजदूर वर्ग और किसान समुदाय से। ये लोग जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे का मध्यवर्ती भाग हैं।

(च) इधर हाल में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में सर्वहारा वर्ग, किसान समुदाय और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग की प्रगतिशील शक्तियां पहले से बहुत अधिक बढ़ गई हैं और ऐसे आधार-क्षेत्र बना लेने में बुनियादी रूप से सफल हो गई हैं जिनमें जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता स्थापित कर ली गई है। देशभर में हर जगह के मजदूरों, किसानों और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग पर उनका प्रभाव बहुत अधिक है और मध्यवर्ती शक्तियों के ऊपर भी अच्छा-खासा है। जापान-प्रतिरोध की रणभूमि में कम्युनिस्ट लगभग उतनी ही बड़ी जापानी सेना से लड़ रहे हैं जितनी बड़ी से क्वोमिन्ताङ। वे जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे का प्रगतिशील भाग हैं।

ऐसी है चीन की मौजूदा राजनीतिक परिस्थिति। इस परिस्थिति में इस बात की सम्भावना अब भी मौजूद है कि स्थिति बिगड़ने न दी जाए बल्कि उसे बेहतर बना लिया जाए; केन्द्रीय कमेटी के १ फरवरी वाले प्रस्ताव बिलकुल सही हैं।

२. प्रतिरोध-युद्ध में विजय की बुनियादी शर्त है जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे का विस्तार करना और उसे सुदृढ़ बनाना। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जिस कार्यनीति की आवश्यकता है, वह है प्रगतिशील शक्तियों का विकास करने, मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में करने और कट्टरतावादी शक्तियों का विरोध करने की कार्य-

नीति ; ये तीनों एक दूसरी से जुड़ी हुई अविभाज्य कड़ियां हैं, और सभी जापान-विरोधी शक्तियों के साथ एकता कायम करने का साधन संघर्ष है। जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे के दौर में एकता का साधन है संघर्ष और संघर्ष का लक्ष्य है एकता। अगर एकता को संघर्ष के जरिए प्राप्त किया गया, तो वह कायम रहेगी ; अगर एकता को रियायत के जरिए कायम किया गया, तो वह नष्ट हो जाएगी। पार्टी के कामरेड इस सच्चाई को धीरे-धीरे समझते जा रहे हैं। फिर भी ऐसे लोग अभी बहुत हैं जो इस बात को नहीं समझते ; कुछ लोगों का ख्याल है कि संघर्ष से संयुक्त मोर्चे में फूट पड़ जाएगी या यह कि संघर्ष का असीमित रूप से प्रयोग किया जा सकता है, और कुछ दूसरे लोग मध्यवर्ती शक्तियों के प्रति गलत कार्यनीति अपनाते हैं या कट्टरतावादी शक्तियों के बारे में उनकी धारणाएं गलत हैं। इन सब गलतियों को दुरुस्त कर लेना होगा।

३. प्रगतिशील शक्तियों के विकास का मतलब है सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग की शक्तियों का विकास करना, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना का साहस के साथ विस्तार करना, व्यापक पैमाने पर अनेक जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्र स्थापित करना, देशभर में हर कहीं कम्युनिस्ट पार्टी के संगठनों का निर्माण करना, मजदूरों, किसानों, नौजवानों, स्त्रियों और बच्चों के राष्ट्रीय जन-आन्दोलनों का विकास करना, देश के सभी भागों में बुद्धिजीवियों को अपने पक्ष में करना, और व्यापक जन-समुदाय के बीच वैधानिक सरकार की मांग के आन्दोलन को जनवाद हासिल करने के संघर्ष के रूप में फैलाना। केवल प्रगतिशील शक्तियों का निरन्तर विकास ही

स्थिति को बिगड़ने से रोक सकता है, आत्मसमर्पण और फूट की रोकथाम कर सकता है और प्रतिरोध-युद्ध की विजय के लिए एक पक्की और फौलादी नींव डाल सकता है। लेकिन प्रगतिशील शक्तियों का विकास करना संघर्ष की एक ऐसी गम्भीर प्रक्रिया है जिसमें केवल जापानी साम्राज्यवादियों और गद्दारों के खिलाफ ही नहीं बल्कि कट्टरतावादियों के खिलाफ भी निर्ममता के साथ संघर्ष करना होगा। कारण, कट्टरतावादी प्रगतिशील शक्तियों की बढ़ोतरी के विरोधी हैं, जबकि मध्यवर्ती शक्तियां इस बढ़ोतरी के बारे में शंकाशील रहती हैं। कट्टरतावादियों के खिलाफ अविचल संघर्ष किए बिना, और उस संघर्ष में ठोस कामयाबियां हासिल किए बिना हम कट्टरतावादियों के दबाव को बेअसर किए रखने और मध्यवर्ती शक्तियों की शंकाएं दूर करने में कामयाब नहीं हो सकेंगे। ऐसी सूरत में प्रगतिशील शक्तियों के विकास की कोई गुंजाइश नहीं रहेगी।

४. मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में करने का मतलब है मध्यम पूंजीपति वर्ग, जागृत शरीफजादों और क्षेत्रीय प्रभुत्वशाली गुटों को अपनी ओर कर लेना। ये तीन अलग-अलग श्रेणियों के हैं, मगर हालात ऐसे हैं कि ये तीनों ही मध्यवर्ती शक्तियों में शामिल हैं। मध्यम पूंजीपति वर्ग राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग ही है, जो दलाल-पूंजीपति वर्ग यानी बड़े पूंजीपतियों के वर्ग से अलग है। यद्यपि मजदूरों के साथ इस वर्ग के अपने वर्ग-अन्तरविरोध होते हैं और यद्यपि मजदूर वर्ग की स्वतंत्रता इसे भाती नहीं है, तथापि यह वर्ग जापान का प्रतिरोध करना चाहता है और राजनीतिक सत्ता भी खुद अपने हाथ में लेना चाहता है, क्योंकि जापान-अधिकृत क्षेत्रों

में तो जापानी साम्राज्यवाद इसका उत्पीड़न करता है और क्वो-मिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में बड़े जमींदारों का वर्ग और बड़े पूंजीपतियों का वर्ग इसे सीमित रखते हैं। जापान का प्रतिरोध करने के मामले में यह वर्ग संयुक्त प्रतिरोध के पक्ष में है, तथा राजनीतिक सत्ता हासिल करने के मामले में वैधानिक सरकार के आन्दोलन का पक्षपोषण करता है और प्रगतिशील लोगों और कट्टरतावादियों के बीच के अन्तरविरोधों का लाभ उठाकर अपना उल्लू सीधा कर लेना चाहता है। यह एक ऐसी श्रेणी है जिसे हमें अपने पक्ष में कर लेना होगा। जागृत शरीफजादे जमींदार वर्ग का वामपक्ष हैं यानी इस वर्ग का वह भाग हैं जिस पर पूंजीपति वर्ग का रंग चढ़ा हुआ है, और उनका राजनीतिक रवैया मोटे तौर पर मध्यम पूंजीपति वर्ग से मिलता-जुलता है। किसान समुदाय के साथ अपने वर्ग-अन्तरविरोध के बावजूद बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजी-पतियों के वर्ग के साथ भी उनके अपने अन्तरविरोध हैं। कट्टरता-वादियों का समर्थन वे नहीं करते और हमारे और कट्टरतावादियों के बीच के अन्तरविरोधों का लाभ उठाकर वे भी अपना राजनीतिक मकसद हासिल करना चाहते हैं। इन लोगों को भी हमें हरगिज नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए और उन्हें अपने पक्ष में करने की नीति अपनानी चाहिए। क्षेत्रीय प्रभुत्वशाली गुटों में दो प्रकार की शक्तियां शामिल हैं : एक तो वे हैं जो चन्द क्षेत्रों को अपने नियंत्रण में रखती हैं और दूसरी वे "विविध प्रकार की सेनाएं" हैं जिनके नियंत्रण में कोई क्षेत्र नहीं है। हालांकि प्रगतिशील शक्तियों के साथ इन गुटों के अन्तरविरोध हैं, फिर भी इनके अन्तरविरोध क्वो-मिन्ताङ की केन्द्रीय सरकार के साथ भी हैं क्योंकि अब वह इन

लोगों के हितों को हानि पहुंचाकर अपना स्वार्थ साधने की नीति पर चलती है ; ये गुट भी अपने राजनीतिक मकसद हासिल करने के लिए हमारे और कट्टरतावादियों के बीच के अन्तरविरोधों का लाभ उठाना चाहते हैं। क्षेत्रीय प्रभुत्वशाली गुटों के अधिकतर नेता बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के हैं और इसलिए प्रतिरोध-युद्ध के दौरान किसी-किसी मौके पर प्रगतिशील लगने के बावजूद ये फिर जल्द ही प्रतिक्रियावादी बन जाते हैं ; फिर भी क्वोमिन्ताङ के केन्द्रीय अधिकारियों के साथ अपने अन्तर-विरोधों के कारण कट्टरतावादियों के खिलाफ हमारे संघर्ष में उनके तटस्थ बने रहने की सम्भावना मौजूद है, बशर्ते कि हम सही नीति पर चलें। मध्यवर्ती शक्तियों की जिन तीन श्रेणियों की चर्चा ऊपर की गई है, उनके प्रति हमारी नीति उन्हें अपने पक्ष में करने की है। लेकिन यह नीति किसानों और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग को अपने पक्ष में करने की नीति से भिन्न है ; इतना ही नहीं, मध्यवर्ती शक्तियों की प्रत्येक श्रेणी के लिए यह नीति अलग-अलग प्रकार की है। जहां किसानों और शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग को हमें अपने बुनियादी संश्रयकारियों के रूप में अपने पक्ष में करना होगा, वहां मध्यवर्ती शक्तियों को महज साम्राज्यवाद-विरोधी संश्रयकारियों के रूप में अपने पक्ष में करना होगा। मध्यवर्ती शक्तियों में मध्यम पूंजीपति वर्ग और जागृत शरीफजादों के लिए यह सम्भव है कि वे जापान के खिलाफ हमारी मुश्तरका लड़ाई में और जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता स्थापित करने में भी हमारा साथ दें, लेकिन भूमि-क्रान्ति से वे डरते हैं। कट्टरतावादियों के विरुद्ध हमारे संघर्ष में, इनमें से कुछ लोग तो किसी हद तक हमारा साथ

दे सकते हैं, जबकि कुछ दूसरे लोग मित्रतापूर्ण तटस्थता बरत सकते हैं और उनसे भी भिन्न एक तीसरे प्रकार के लोग अनिच्छापूर्वक तटस्थता का रुख अपना सकते हैं। क्षेत्रीय प्रभुत्वशाली गुट, प्रतिरोध-युद्ध में हमारे साथ होने के अलावा कट्टरतावादियों के विरुद्ध हमारे संघर्ष में अधिक से अधिक अस्थाई तटस्थता ही बरतेंगे ; वे जनवादी राजनीतिक सत्ता की स्थापना में हमारा साथ देने को राजी नहीं होंगे, क्योंकि वे खुद ही बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के हैं। मध्यवर्ती शक्तियों का रवैया ढुलमुलपन का होता है और उनका टूटकर अलग-अलग हो जाना लाजिमी है ; हमें उनके ढुलमुल रुख को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त ढंग से उन्हें समझाना-बुझाना चाहिए और उनकी आलोचना करनी चाहिए।

जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे के दौर में मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में करना हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य तो है पर उसे निभाना चन्द शर्तें पूरी होने पर ही सम्भव हो सकता है। वे हैं : (१) हमारी ताकत भरपूर हो ; (२) हम उनके हितों का ध्यान रखें ; और (३) कट्टरतावादियों के खिलाफ अपने संघर्ष में अविचल रहें और बराबर जीतें हासिल करते रहें। ये शर्तें पूरी न हों तो मध्यवर्ती शक्तियां ढुलमुलपन दिखाएंगी या यहां तक कि हमारे ऊपर कट्टरतावादियों के हमले होने पर उनकी संश्रय-कारी भी बन सकती हैं, क्योंकि हमें अलगाव में डालने के लिए कट्टरतावादी भी मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में मिला लेने की भरसक कोशिश कर रहे हैं। चीन में मध्यवर्ती शक्तियां काफी वजनदार हैं और कट्टरतावादियों के विरुद्ध हमारे संघर्ष में वे अक्सर पल्ला भारी करने वाला निर्णायक तत्व साबित हो सकती

हैं ; इसलिए इन शक्तियों के साथ बरताव करते समय हमें बड़ी संजीदगी से काम लेना चाहिए।

५. फिलहाल, कट्टरतावादी शक्तियां बड़े जमींदारों के वर्ग और बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के रूप में ही हैं। ये वर्ग इस समय दो ग्रुपों में बंटे हुए हैं : एक ग्रुप उन लोगों का है जिन्होंने जापान के आगे आत्मसमर्पण कर दिया है, दूसरा उनका है जो जापान का प्रतिरोध करने के हामी हैं ; धीरे-धीरे इन वर्गों का अन्तर और भी अधिक बढ़ जाएगा। बड़े पूंजीपतियों के वर्ग में इस समय जापान का प्रति-रोध करने का हामी ग्रुप आत्मसमर्पणवादी ग्रुप से भिन्न है। यह ग्रुप दुरंगी नीति पर चलता है। जापान-विरोधी एकता का हामी तो यह अब भी है, मगर साथ ही अपने भावी आत्मसमर्पण की तैयारी के सिलसिले में प्रगतिशील शक्तियों को कुचल डालने की हद दर्जे की प्रतिक्रियावादी नीति भी अपनाता है। चूंकि यह अब भी जापान-विरोधी एकता का हामी है, इसलिए कोशिश करके हम इसे जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे में अब भी बनाए रख सकते हैं, और जितनी अधिक देर तक रख सकें उतना ही बेहतर होगा। इस ग्रुप को अपने पक्ष में करने और इसके साथ सहयोग करने की अपनी नीति की उपेक्षा करना और यह समझना गलत होगा कि यह ग्रुप तो वास्तव में आत्मसमर्पण कर चुका है और अब कम्युनिस्ट-विरोधी युद्ध छेड़ने ही वाला है। लेकिन साथ ही हमें इसकी प्रति-क्रियावादी नीति के खिलाफ संघर्ष चलाने की कार्यनीति भी अपनानी चाहिए और इसके खिलाफ अविचल रूप से विचारधारात्मक, राजनीतिक और फौजी संघर्ष करना चाहिए, क्योंकि देश में हर कहीं यह ग्रुप प्रगतिशील शक्तियों को कुचल डालने की प्रतिक्रिया-

वादी नीति पर चलता है, क्योंकि क्रान्तिकारी तीन जन-सिद्धान्तों के मुश्तरका कार्यक्रम पर अमल करने के बजाय यह ग्रुप ऐसा करने के हमारे प्रयासों का हठपूर्वक विरोध करता है, क्योंकि हमारे लिए जो सीमाएं इसने बांध रखी हैं उन्हें पार करने से हमें रोकने के लिए यह जीतोड़ कोशिश करता है अर्थात हमें भी यह ठीक उसी निष्क्रिय प्रतिरोध की सीमाओं में घेरे रखना चाहता है जिस पर कि यह खुद अमल करता है, और इससे भी आगे बढ़कर यह हमें पचा लेना चाहता है और पचाने में विफल होने पर हमारे ऊपर विचारधारात्मक, राजनीतिक और फौजी दबाव डालता है। ऐसी है कट्टरतावादियों की दुरंगी नीति की काट करने के लिए हमारी क्रान्तिकारी दोहरी नीति और ऐसी है संघर्ष के जरिए एकता कायम करने की हमारी नीति। यदि हम विचारधारा के क्षेत्र में सही क्रान्तिकारी सिद्धान्त पेश कर सकें और इस ग्रुप के प्रतिक्रान्तिकारी सिद्धान्त पर करारी चोट कर सकें, यदि हम राजनीति के क्षेत्र में काल-विशेष के अनुकूल कार्यनीति अपनाकर इस ग्रुप की कम्युनिस्ट-विरोधी और प्रगतिवादी-विरोधी नीतियों पर करारी चोट कर सकें, तथा यदि हम फौजी क्षेत्र में यथोचित उपायों का अवलम्बन करके इस ग्रुप के फौजी हमलों का मुंहतोड़ जवाब दे सकें, तो हम इसकी प्रतिक्रियावादी नीति के कारगर दायरे को सीमित रखने में सफल हो सकेंगे, प्रगतिशील शक्तियों की हैसियत स्वीकार करने के लिए इस ग्रुप को मजबूर करने में कामयाब हो सकेंगे और प्रगतिशील शक्तियों का विकास करने, मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में करने और कट्टरतावादी शक्तियों को अलगाव में डालने में समर्थ हो सकेंगे। साथ ही, जो कट्टरतावादी अब भी जापान का प्रतिरोध करने को

राजी हों, उन्हें जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे में और अधिक देर तक बनाए रखने में भी हम समर्थ हो सकेंगे और इस प्रकार हम एक ऐसे बड़े पैमाने के गृहयुद्ध को भी जैसा कि पहले हुआ था, रोकने में समर्थ हो सकेंगे। अतएव जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे के दौर में कट्टरतावादियों के खिलाफ हमारे संघर्ष का उद्देश्य प्रगतिशील शक्तियों को नुकसान से बचाने और उन्हें लगातार बढ़ने देने के लिए कट्टरतावादियों के हमलों की रोकथाम करना भर ही नहीं बल्कि जापान के खिलाफ कट्टरतावादियों के प्रतिरोध को ज्यादा से ज्यादा देर तक टिकाए रखना और बड़े पैमाने का गृहयुद्ध टालने के लिए उनके साथ अपने सहयोग को कायम रखना भी है। संघर्ष के बिना ये प्रगतिशील शक्तियां कट्टरतावादी शक्तियों द्वारा मिटा दी जाएंगी, संयुक्त मोर्चे की हस्ती मिट जाएगी, शत्रु के आगे कट्टरतावादियों का आत्मसमर्पण निर्विघ्न रूप से सम्पन्न हो जाएगा और गृहयुद्ध छिड़ जाएगा। इसलिए सभी जापान-विरोधी शक्तियों को एक करने, परिस्थिति का रुख मोड़कर उसे अपने अनुकूल कर लेने और बड़े पैमाने का गृहयुद्ध टालने का अनिवार्य साधन कट्टरतावादियों के खिलाफ संघर्ष करना ही है। हमारा सारा अनुभव इस सच्चाई की पुष्टि कर चुका है।

फिर भी जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे के दौर में कट्टरतावादियों के खिलाफ अपने संघर्ष में हमें कई उसूलों पर ध्यान देना होगा। उनमें पहला है आत्मरक्षा का उसूल। जब तक हम पर हमला न हो, तब तक हम हमला नहीं करेंगे; अगर हम पर हमला किया गया, तो हम जरूर जवाबी हमला करेंगे। कहने का मतलब यह कि उकसावा न होने पर हमें दूसरों पर कभी भी हमला

नहीं करना चाहिए, लेकिन अगर हम पर हमला हो तो हमें जवाबी हमला करने से कभी नहीं चूकना चाहिए। हमारे संघर्ष का रक्षात्मक स्वरूप इसी बात में निहित है। कट्टरतावादियों के फौजी हमलों को दृढ़ता के साथ, सर्वांगीण रूप से, समग्र रूप से और सम्पूर्ण रूप से चकनाचूर कर देना चाहिए। दूसरा है विजय का उसूल। जीत की पूरी गारन्टी न होने पर हम लड़ेंगे ही नहीं ; योजना के बिना, तैयारी के बिना और कामयाबी के भरोसे के बिना हमें कभी भी लड़ना नहीं चाहिए। हमें यह जान लेना चाहिए कि कट्टरतावादियों के आपसी अन्तरविरोधों का किस तरह लाभ उठाया जाए, और बहुत से कट्टरतावादियों से एक साथ निबटने की कोशिश हमें हरगिज नहीं करनी चाहिए, बल्कि पहले हमें सिर्फ उन्हीं पर वार करना चाहिए जो उनमें सबसे ज्यादा प्रतिक्रियावादी हों। हमारे संघर्ष का सीमित स्वरूप इसी बात में निहित है। तीसरा है युद्ध-विराम का उसूल। कट्टरतावादियों के हमले के पैर उखाड़ दिए जाने के बाद, उनके द्वारा नए हमले किए जाने से पहले हमें यह जान लेना चाहिए कि हमें कब रुकना है और कब उस खास लड़ाई को बन्द कर देना है। इस दौरान दोनों पक्षों के बीच युद्ध-विराम किया जाना चाहिए। युद्ध-विराम की सूरत में हमें कट्टरतावादियों के साथ एकता कायम करने में पहल करनी चाहिए और अगर वे राजी हों तो उनके साथ शान्ति-समझौता कर लेना चाहिए। अन्तहीन लड़ाई जारी रखने या कामयाबी के बहाव में बह जाने की भूल तो हमें किसी भी सूरत में नहीं करनी चाहिए। हर संघर्ष का अस्थाई स्वरूप इसी बात में निहित है। कट्टरतावादियों की ओर से कोई नया हमला हो जाने पर ही हमें कोई नया संघर्ष छेड़कर उस हमले की काट करनी चाहिए। इन तीनों उसूलों को दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है : "न्यायोचित आधार पर", "अपना फायदा देखते हुए" और "संयत रूप से" लड़ते रहना। न्यायोचित आधार वाले, अपने फायदे को देखने वाले और संयत रूप से किए गए इस प्रकार के संघर्ष पर डटे रहकर हम प्रगतिशील शक्तियों का विकास कर सकते हैं, मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में कर सकते हैं और कट्टरतावादी शक्तियों को अलगाव में डाल सकते हैं तथा साथ ही कट्टरतावादी शक्तियों को इस बात के लिए मजबूर भी कर सकते हैं कि हम पर हमला करने, शत्रु से समझौता करने या बड़े पैमाने का गृहयुद्ध छेड़ने के पहले उन्हें बार-बार सोचना पड़े। इस तरह स्थिति को मोड़ देकर अपने अनुकूल बना लेना सम्भव हो सकेगा।

६. क्वोमिन्ताङ एक ऐसी पंचमेल पार्टी है जिसमें कट्टरतावादी भी हैं, मध्यवर्ती तत्व भी और प्रगतिशील भी ; कुल मिलाकर उसे कट्टरतावादी पार्टी के समकक्ष रखना ठीक नहीं होगा। कुछ लोग क्वोमिन्ताङ को बस कट्टरतावादियों ही कट्टरतावादियों की पार्टी मान बैठते हैं क्योंकि उसकी केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी ने "दुश्मन पार्टियों की कार्यवाहियों की रोकथाम करने के उपाय" जैसे प्रतिक्रान्तिकारी टकराव पैदा करने वाले फरमान जारी किए हैं और देश में हर कहीं विचारधारात्मक, राजनीतिक और फौजी मामलों में प्रतिक्रान्तिकारी टकराव पैदा करने में ही अपनी रत्ती-रत्ती शक्ति जुटा रखी है। लेकिन ऐसा मान बैठना गलत है। क्वोमिन्ताङ के अन्दर कट्टरतावादी अब भी उस पार्टी की नीतियों को अपने आदेशानुसार चलाने की स्थिति में बने हुए हैं, लेकिन वे अल्पसंख्या

में हैं जबकि बहुसंख्यक सदस्य (बहुतेरे लोग तो बस नामभर को ही क्वोमिन्ताङ के सदस्य हैं) जरूरी तौर पर कट्टरतावादी नहीं हैं। क्वोमिन्ताङ के अन्दर मौजूद अन्तरविरोधों का लाभ उठाने, उसके भिन्न-भिन्न भागों के अन्तर को परखकर चलने की नीति अपनाने और यथाशक्ति उसके मध्यवर्ती और प्रगतिशील भागों के साथ एकता कायम करने के लिए यह जरूरी है कि हम इस मुद्दे को साफ-साफ समझ लें।

७. जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों की राजनीतिक सत्ता के सवाल के बारे में हमें इस बात की गारन्टी करनी चाहिए कि उन क्षेत्रों में जो राजनीतिक सत्ता स्थापित हो, वह जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की ही हो। क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में फिलहाल ऐसी कोई भी राजनीतिक सत्ता मौजूद नहीं है। ऐसी राजनीतिक सत्ता जापान-प्रतिरोध और जनवाद दोनों का समर्थन करने वाले सभी लोगों की राजनीतिक सत्ता है, यानी गद्दारों और प्रतिक्रियावादियों पर कई क्रान्तिकारी वर्गों का संयुक्त जनवादी अधिनायकत्व ही है। ऐसी राजनीतिक सत्ता जमींदार वर्ग और पूंजीपति वर्ग के अधिनायकत्व से भिन्न है और सही मायनों में मजदूर-किसानों के जनवादी अधिनायकत्व से भी कुछ भिन्न है। राजनीतिक सत्ता के संगठनों में स्थानों का बंटवारा इस हिसाब से होना चाहिए : एक-तिहाई स्थान सर्वहारा वर्ग और गरीब किसानों की नुमाइंदगी करने वाले कम्युनिस्टों को, एक-तिहाई स्थान निम्न-पूंजीपति वर्ग की नुमाइंदगी करने वाले वामपक्षी प्रगतिशील लोगों को और बचे हुए एक-तिहाई स्थान मध्यम पूंजीपति वर्ग और जागृत शरीफ-जादों की नुमाइंदगी करने वाले मध्यवर्ती और दूसरे तत्वों को

मिलें। राजनीतिक सत्ता के इन संगठनों में शिरकत के लिए अयोग्य ठहराए गए लोग सिर्फ गद्दार और कम्युनिस्ट-विरोधी तत्व ही हैं। स्थानों के बंटवारे का यह सामान्य नियम जरूरी है, इसके बिना जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के उसूल को बरकरार रखना सम्भव नहीं होगा। स्थानों के बंट-वारे की यह नीति हमारी पार्टी की असली नीति है और इसे सख्ती से कार्यान्वित किया जाना चाहिए ; इस मामले में किसी भी सूरत में बेमन से काम नहीं करना चाहिए। यह एक सामान्य नियम है और इसे विशेष स्थितियों के अनुसार ही लागू करना चाहिए, सबके हिस्से के पद यांत्रिक ढंग से भर देने मात्र से काम नहीं चलेगा। राजनीतिक सत्ता के सबसे निचले संगठनों के अन्दर इस अनुपात में हेरफेर भी करना पड़ सकता है ताकि जमींदारों और बुरे शरीफ-जादों को सत्ता पर गालिब होने से रोका जा सके ; लेकिन इस नीति की जो बुनियादी भावना है उसका उल्लंघन नहीं करना चाहिए। हमें ऐसे सवालों की बौछार नहीं लगा देनी चाहिए कि राजनीतिक सत्ता के इन संगठनों में जो गैर-कम्युनिस्ट व्यक्ति नियुक्त किए जाएं वे किसी पार्टी से सम्बन्ध रखते हैं या नहीं और अगर सम्बन्ध रखते हैं तो किस पार्टी से। जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता वाले क्षेत्रों में चाहे क्वोमिन्ताङ हो अथवा कोई और, सभी राजनीतिक पार्टियों को कानूनी हैसियत दी जानी चाहिए बशर्ते कि वे कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध न करती हों और उससे सहयोग करती हों। मताधिकार के सवाल पर संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता की नीति यह होनी चाहिए कि जापान-प्रतिरोध और जनवाद के हामी हर चीनी को, अठारह वर्ष का हो जाने पर

वर्ग, जाति, पार्टी-सम्बन्ध, लिंग, धार्मिक विश्वास और शिक्षा-स्तर का लिहाज किए बिना चुनने और चुने जाने का हक हो। जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के संगठनों का चुनाव जनता द्वारा किया जाना चाहिए और चुनाव के बाद संपुष्टि के लिए उन्हें राष्ट्रीय सरकार से आवेदन करना चाहिए। उनका संगठनात्मक रूप जनवादी केन्द्रीयता पर आधारित होना चाहिए। जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के संगठनों में नीति सम्बन्धी सभी प्रमुख उपायों का बुनियादी प्रस्थान-बिन्दु होना चाहिए जापानी साम्राज्यवाद का विरोध करना, पक्के गद्दारों और प्रतिक्रियावादियों का विरोध करना, जापान का प्रतिरोध करने वाली जनता की रक्षा करना, सभी जापान-विरोधी सामाजिक तबकों के हितों का यथोचित रूप से समायोजन करना और मजदूरों व किसानों के रहन-सहन में सुधार करना। जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की इस राजनीतिक सत्ता की स्थापना पूरे देश पर बड़ा ही महत्वपूर्ण प्रभाव डालेगी और राष्ट्रीय पैमाने पर जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के लिए नमूने का काम देगी; इसलिए सभी पार्टी-कामरेडों को चाहिए कि वे इस नीति को गहराई से समझ लें और दृढ़ता के साथ लागू करें।

८. प्रगतिशील शक्तियों का विकास करने, मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में करने और कट्टरतावादी शक्तियों को अलगाव में डालने के अपने संघर्ष में हमें बुद्धिजीवियों की, जिन्हें अपने पक्ष में करने के लिए कट्टरतावादी एड़ी-चोटी का पसीना एक कर रहे हैं, भूमिका को कभी नजरअन्दाज नहीं करना चाहिए; इसलिए सभी प्रगतिशील बुद्धिजीवियों को कम्युनिस्ट पार्टी के प्रभाव में

लाने के लिए प्रयत्न करने की नीति बड़ी ही महत्वपूर्ण और आवश्यक है।

९. अपने प्रचार-कार्य में हमें निम्नलिखित कार्यक्रम पर जोर देना चाहिए :

(क) जापान का संयुक्त रूप से प्रतिरोध करने के लिए व्यापक जन-समुदाय को जागृत करके डा० सुन यात-सेन के वसीयतनामे को लागू करो;

(ख) जापानी साम्राज्यवाद का दृढ़ता से प्रतिरोध करके और पूर्ण राष्ट्रीय मुक्ति और चीन की सभी जातियों की समानता के लिए भरपूर प्रयत्न करके राष्ट्रवाद के सिद्धान्त को लागू करो;

(ग) जापान का प्रतिरोध करने और राष्ट्र को बचाने की पूरी आजादी जनता को देकर और सभी स्तरों पर सरकार चुनने में उसे समर्थ बनाकर तथा जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की क्रान्तिकारी जनवादी राजनीतिक सत्ता की स्थापना करके जनवाद के सिद्धान्त को लागू करो;

(घ) बेजा टैक्सों व तरह-तरह की लेवियों की वसूली का खात्मा करके, लगान और सूद कम करके, आठ घंटे का श्रम-दिन लागू करके, कृषि, उद्योग और व्यापार का विकास करके तथा जनता के रहन-सहन में सुधार करके जन-जीविका के सिद्धान्त को लागू करो;

(ङ) च्याङ काई-शेक की यह घोषणा लागू करो कि "हर व्यक्ति को, चाहे वह जवान हो या बूढ़ा, उत्तर में हो या दक्षिण

में, जापान का प्रतिरोध करने और हमारी मातृभूमि की रक्षा करने की जिम्मेदारी उठा लेनी चाहिए।"

ये सभी मुद्दे क्वोमिन्ताङ द्वारा खुद ही प्रकाशित उस कार्यक्रम के अन्दर मौजूद हैं जो साथ ही क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी का मुश्तरका कार्यक्रम भी है। लेकिन जापान-प्रतिरोध के अलावा इस कार्यक्रम के किसी भी और भाग को क्वोमिन्ताङ ने लागू नहीं किया है ; इसे लागू करने में केवल कम्युनिस्ट पार्टी और प्रगतिशील शक्तियां ही समर्थ हैं। यह एक सबसे सरल कार्यक्रम है और व्यापक जन-समुदाय का जाना-सुना हुआ है ; फिर भी बहुत से कम्युनिस्ट जन-समुदाय को गोलबन्द करने तथा कट्टरतावादियों को अलगाव में डालने के लिए इसे अपने अस्त्र के रूप में इस्तेमाल करने में असफल रहते हैं। अब से हमें इस कार्यक्रम के पांचों मुद्दों पर अपना ध्यान बराबर बनाए रखना होगा और सार्वजनिक-सूचनाओं, घोषणापत्रों, पर्चों, लेखों, भाषणों, वक्तव्यों आदि के जरिए इन्हें लोकप्रिय बनाना होगा। क्वोमिन्ताङ क्षेत्रों में यह कार्यक्रम अभी भी महज प्रचार का ही कार्यक्रम बना हुआ है, मगर जिन क्षेत्रों में आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना पहुंच चुकी हैं उनमें यह कार्यक्रम व्यवहार का कार्यक्रम बन चुका है। इस कार्यक्रम पर अमल करते समय हम कानून के दायरे में बने रहते हैं, और इस पर अमल का विरोध करके कट्टरतावादी ही कानून का उल्लंघन करते हैं। पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति की मंजिल में क्वोमिन्ताङ का यह कार्यक्रम बुनियादी तौर पर वैसा ही है जैसा हमारा कार्यक्रम, लेकिन क्वोमिन्ताङ की विचारधारा कम्युनिस्ट पार्टी की विचारधारा से बिलकुल भिन्न है। जनवादी क्रान्ति के इसी मुश्तरका कार्यक्रम को हमें अमल में लाना है, मगर क्वोमिन्ताङ की विचारधारा का अनुगमन हमें किसी भी सूरत में नहीं करना चाहिए।

जापान-विरोधी शक्तियों का खुलकर विकास करो और कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के हमलों का प्रतिरोध करो*

४ मई १९४०

१. दुश्मन के पृष्ठभाग के तमाम क्षेत्रों में और तमाम युद्ध-क्षेत्रों में समानता पर जोर दिया जाना चाहिए, विशिष्टता पर नहीं ; इसके विपरीत आचरण करना भारी भूल होगी। हालांकि हर क्षेत्र की अपनी विशिष्टताएं हैं, लेकिन सब क्षेत्रों में यह समानता भी है कि उन्हें दुश्मन का सामना करना पड़ता है तथा वे सभी क्षेत्र प्रतिरोध-युद्ध में जुटे हुए हैं, चाहे वे उत्तर, मध्य अथवा दक्षिण चीन में हों या याङत्सी नदी के उत्तर या दक्षिण में, अथवा मैदान, पहाड़ या झील के इलाके में तथा चाहे उनमें जुटी हुई सैन्य-शक्ति आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना हो अथवा दक्षिण चीन

*पार्टी के दक्षिण-पूर्वी ब्यूरो के नाम यह निर्देश कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की तरफ से लिखा था। जिस समय यह निर्देश लिखा गया, उस समय पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के सदस्य और दक्षिण-पूर्वी ब्यूरो के सचिव कामरेड श्याङ इङ गम्भीर दक्षिणपंथी दृष्टिकोण अपनाए हुए थे। उन्होंने केन्द्रीय कमेटी की नीति को दृढ़ता से कार्यान्वित नहीं किया। वे जन-समुदाय को पूर्ण रूप से जागृत करने, जापान-अधिकृत क्षेत्रों में मुक्त क्षेत्रों

छापामार दस्ता[१]। अतः इन सभी क्षेत्रों में हम विस्तार कर सकते हैं और हमें विस्तार करना चाहिए। विस्तार करने की इस नीति को केन्द्रीय कमेटी बार-बार आपको बता चुकी है। विस्तार करने का मतलब है शत्रु द्वारा अधिकृत सभी क्षेत्रों में पहुंच जाना, तथा क्वोमिन्ताङ द्वारा लगाए गए प्रतिबन्धों को न मानना बल्कि क्वोमिन्ताङ द्वारा मान्य सीमाओं को पार कर लेना, दूसरों से सरकारी नियुक्तियों की उम्मीद न करना अथवा वित्तीय सहायता के लिए उच्च पदाधिकारियों पर निर्भर न रहना बल्कि इसके बदले सशस्त्र सेनाओं का स्वतंत्र रूप से और भरपूर शक्ति से विस्तार करना, बिना किसी हिचकिचाहट के आधार-क्षेत्रों की स्थापना करना और इन आधार-क्षेत्रों में जन-समुदाय को स्वतंत्र रूप से जागृत करना और कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में काम करने वाली जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता के संगठनों की स्थापना करना। मिसाल के लिए च्याङसू प्रान्त में कू चू-थुङ, लङ शिन और हान त-छिन[२] जैसे कम्युनिस्ट-विरोधी तत्वों द्वारा किए जाने वाले मौखिक हमलों, नियंत्रण और उत्पीड़न के बावजूद, हमें पश्चिम में नानकिङ से लेकर पूर्व में समुद्रतट तक तथा दक्षिण में हाङचओ से लेकर उत्तर में श्वीचओ तक उन तमाम इलाकों को यथासम्भव तेजी के साथ सुव्यवस्थित और योजनाबद्ध रूप से अपने हाथ में ले लेना चाहिए जिन पर अधिकार करना सम्भव हो; और हमें सशस्त्र सेनाओं का स्वतंत्र रूप से विस्तार करना चाहिए, राजनीतिक सत्ता के संगठनों की स्थापना करनी चाहिए, जापान का प्रतिरोध करने के लिए टैक्स लगाने के उद्देश्य से वित्तीय कार्यालयों की स्थापना करनी चाहिए तथा कृषि, उद्योग व वाणिज्य को उन्नत करने के लिए आर्थिक एजेन्सियों की स्थापना करनी चाहिए, तथा भारी तादाद में कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने के लिए विभिन्न प्रकार के स्कूल खोलने चाहिए। केन्द्रीय कमेटी पहले आपको यह हिदायत दे चुकी है कि आप लोग इस वर्ष के भीतर च्याङसू और चच्याङ प्रान्तों में दुश्मन के पृष्ठभाग में जापान-विरोधी सशस्त्र शक्तियों के सैनिकों व राइफलों की तादाद १,००,००० तक बढ़ा लें तथा तुरन्त राजनीतिक सत्ता के संगठन कायम करें। पता नहीं इस विषय में आप लोगों ने कौन-कौन से ठोस कदम उठाए हैं? पहले भी मौके हाथ से निकलने दिए गए हैं, और अगर इस वर्ष उन्हें फिर हाथ से निकलने दिया गया, तो हालात और अधिक मुश्किल हो जाएंगे।

२. एक ऐसे समय जबकि क्वोमिन्ताङ के कम्युनिस्ट-विरोधी

का विस्तार करने तथा जन-सेना में बढ़ोतरी करने का साहस नहीं करते थे, क्वोमिन्ताङ के सम्भावित प्रतिक्रियावादी हमले की गम्भीरता को पर्याप्त रूप से नहीं समझ पाए थे तथा इसलिए दिमागी तौर पर और संगठनात्मक रूप से उसके लिए तैयार नहीं थे। जब यह निर्देश दक्षिण-पूर्वी ब्यूरो में पहुंचा, तो कामरेड छन ई ने, जो ब्यूरो के एक सदस्य और नई चौथी सेना की पहली टुकड़ी के कमाण्डर थे, तुरन्त इस निर्देश को कार्यान्वित कर दिया, मगर कामरेड श्याङ इङ तब भी इसे कार्यान्वित करने को तैयार नहीं हुए। उन्होंने क्वोमिन्ताङ के सम्भावित प्रतिक्रियावादी हमले का मुकाबला करने की बिलकुल तैयारी नहीं की, जिसके परिणामस्वरूप उनके अधीन फौजें उस समय बिलकुल शक्तिहीन हो गईं जब जनवरी १९४१ में च्याङ काई-शेक ने दक्षिणी आनह्वेइ घटना रची। दक्षिणी आनह्वेइ में हमें नौ हजार सैनिकों की हानि उठानी पड़ी और खुद कामरेड श्याङ इङ भी प्रतिक्रियावादियों के हाथों मारे गए।

कट्टरतावादी, कम्युनिस्ट पार्टी की रोकथाम करने, उस पर अंकुश लगाने और उसका विरोध करने की नीति पर बड़ी हठधर्मी के साथ अड़े हुए हैं तथा इस प्रकार जापान के सामने आत्मसमर्पण करने की तैयारी कर रहे हैं, हमें संघर्ष पर जोर देना चाहिए, एकता पर नहीं ; इसके विपरीत आचरण करना एक भारी भूल होगी। इसलिए सैद्धान्तिक, राजनीतिक अथवा फौजी क्षेत्र में हमें कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के उन तमाम कानूनों, आदेशों, प्रचार-कार्यों और मौखिक हमलों का, जिनका मकसद कम्युनिस्ट पार्टी की रोकथाम करना, उस पर अंकुश लगाना और उसका विरोध करना हो, उसूली तौर पर दृढ़ता से प्रतिरोध करना चाहिए तथा उनके खिलाफ दृढ़ता से संघर्ष करने का रुख अपनाना चाहिए। इस संघर्ष को न्यायोचित आधार पर, अपना फायदा देखते हुए और संयत रूप से लड़ने के उसूल पर आधारित होना चाहिए, यानी आत्मरक्षा, विजय और युद्ध-विराम के उसूलों पर आधारित होना चाहिए, जिसका मतलब यह है कि हर मौजूदा ठोस संघर्ष का स्वरूप रक्षात्मक, सीमित और अस्थाई है। कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के तमाम प्रतिक्रियावादी कानूनों, आदेशों, प्रचार-कार्यों और मौखिक हमलों के खिलाफ हमें शठे-शाठ्यम कार्यवाही करनी चाहिए और उनके खिलाफ दृढ़ता से संघर्ष करना चाहिए। मिसाल के लिए, जब उन्होंने यह मांग की कि हमारी चौथी टुकड़ी और पांचवीं टुकड़ी[३] को दक्षिण की ओर भेज दिया जाए, तो हमने इसके जवाब में इस बात पर जोर दिया कि हम किसी भी हालत में ऐसा नहीं करेंगे ; जब उन्होंने यह मांग की कि ये फ़ङ और चाङ युन-ई[४] के अधीन यूनिटों को दक्षिण की ओर भेज दिया

जाए, तो हमने इसके जवाब में इन यूनिटों के कुछ हिस्सों को उत्तर की ओर भेजने की इजाजत मांगी ; जब उन्होंने यह आरोप लगाया कि हमने फौजी भरती की व्यवस्था का उल्लंघन किया है, तो हमने उनसे यह मांग की कि वे नई चौथी सेना के लिए फौजी भरती के क्षेत्रों को बढ़ाने दें ; जब उन्होंने कहा कि हम लोग गलत प्रचार कर रहे हैं, तो हमने उनसे यह मांग की कि वे अपना तमाम कम्युनिस्ट-विरोधी प्रचार बन्द कर दें तथा टकराव पैदा करने वाले तमाम फरमान और हुक्म रद्द कर दें ; और जब कभी वे हम पर फौजी हमले करेंगे, तो हम उन्हें जवाबी हमलों के जरिए चकनाचूर कर देंगे। इस शठे-शाठ्यम नीति पर अमल करने के लिए हम न्यायोचित आधार पर खड़े हैं। हर मामले में जब हम न्यायोचित आधार पर खड़े हैं, तो न सिर्फ हमारी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी को कार्यवाही करनी चाहिए बल्कि हमारी फौज की हर यूनिट को भी कार्यवाही करनी चाहिए। चाङ युन-ई ने ली फिन-श्येन के साथ और ली श्येन-न्येन ने ली चुङ-रन के साथ जो किया वह नीचे के स्तर द्वारा ऊपर के स्तर के प्रति दृढ़ विरोध प्रकट किए जाने की अच्छी मिसालें हैं।[५] कट्टरतावादियों के प्रति इस प्रकार का सख्त रुख अपनाना तथा उनके खिलाफ न्यायोचित आधार पर, अपना फायदा देखते हुए और संयत रूप से संघर्ष करने की नीति पर अमल करना ही एकमात्र उपाय है जिसके जरिए कट्टरतावादियों को एक ऐसी स्थिति में डाल दिया जा सकता है जिसमें डर के मारे उन्हें हमारा दमन करने की जुर्रत ही नहीं होगी, कम्युनिस्ट पार्टी की रोकथाम करने, उस पर अंकुश लगाने और उसका विरोध करने की कट्टरता-वादियों की कार्यवाहियों के दायरे को छोटा किया जा सकता

है, उन्हें हमारे कानूनी दर्जे को मान्यता देने के लिए मजबूर किया जा सकता है, तथा उन्हें फूट पैदा करने से पहले बार-बार सोचने के लिए मजबूर किया जा सकता है। इसलिए संघर्ष आत्मसमर्पण के खतरे पर काबू पाने, परिस्थिति को बेहतर बनाने तथा क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग को मजबूत बनाने का सबसे महत्वपूर्ण साधन है। कट्टरतावादियों के खिलाफ संघर्ष में डटे रहना ही एकमात्र उपाय है जिसके जरिए हम अपनी पार्टी और सेना में जुझारू भावना को प्रोत्साहित कर सकते हैं, अपने साहस का पूर्ण विकास कर सकते हैं, अपने कार्यकर्ताओं के बीच एकता बढ़ा सकते हैं, अपनी शक्ति में वृद्धि कर सकते हैं तथा अपनी सेना और पार्टी को सुदृढ़ बना सकते हैं। मध्यमार्गियों के साथ अपने सम्बन्धों को निभाते समय कट्टरतावादियों के खिलाफ संघर्ष में डटे रहना ही एकमात्र उपाय है जिसके जरिए मध्यमार्गियों में से ढुलमुल तत्वों को अपने पक्ष में किया जा सकता है और मध्यमार्गियों में हमारे साथ हमदर्दी रखने वालों को सम्बल प्रदान किया जा सकता है – अन्य कोई रास्ता नहीं है। इसी तरह, संघर्ष की नीति ही एकमात्र नीति है जो इस बात की गारन्टी कर देती है कि समूची पार्टी और समूची सेना राष्ट्रीय पैमाने के सम्भावित संकट के विरुद्ध मानसिक रूप से सतर्क रहें तथा अपने काम में तैयारियां करें। वरना १९२७ की गलती[६] फिर से दोहराई जाएगी।

३. वर्तमान परिस्थिति का मूल्यांकन करते समय हमें यह बात साफ तौर पर समझ लेनी चाहिए कि जहां आत्मसमर्पण का खतरा अत्यधिक बढ़ गया है वहां इस पर काबू पाने की सम्भावना अब भी बनी हुई है। वर्तमान फौजी मुठभेड़ें अब भी स्थानीय हैं, राष्ट्रव्यापी

नहीं। ये हमारे विपक्षियों[७] की रणनीतिक टोह की ही कार्यवाहियां हैं, तुरन्त बड़े पैमाने पर "कम्युनिस्टों का विनाश" करने की कार्यवाहियां नहीं; ये उनके आत्मसमर्पण की तैयारी के ही कदम हैं, तुरन्त आत्मसमर्पण करने के कदम नहीं। हमारा कार्य है केन्द्रीय कमेटी द्वारा निर्धारित तिहरी नीति यानी "प्रगतिशील शक्तियों का विकास करने", "मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में कर लेने" और "कट्टरतावादी शक्तियों को अलगाव की स्थिति में डाल देने" की नीति को, जो एकमात्र सही नीति है, अविचल रूप से और भरपूर शक्ति से कार्यान्वित करना, जिससे आत्मसमर्पण के खतरे पर काबू पाया जा सके और परिस्थिति को पहले से बेहतर बनाया जा सके। परिस्थिति का मूल्यांकन करने और अपने कार्य निश्चित करने में किसी भी प्रकार के "वामपंथी" या दक्षिणपंथी भटकावों की ओर इंगित न करना और उन्हें ठीक न करना बेहद खतरनाक साबित होगा।

४. चौथी और पांचवीं टुकड़ियों द्वारा पूर्वी आनह्वेइ में हान तछिन और ली चुङ-रन के हमलों के खिलाफ की गई आत्मरक्षात्मक लड़ाई तथा ली श्येन-न्येन के कालम द्वारा मध्य व पूर्वी हुपे में कट्टरतावादियों के हमलों के खिलाफ की गई आत्मरक्षात्मक लड़ाई, ह्वाए नदी के उत्तर में फङ श्वे-फ़ङ की टुकड़ी द्वारा किए गए अविचल संघर्ष, याङत्सी नदी के उत्तर में ये फ़ेइ की सैन्य-शक्तियों का विस्तार, तथा आठवीं राह सेना के २०,००० से ज्यादा सैनिकों द्वारा दक्षिण की तरफ ह्वाए नदी के उत्तर में स्थित क्षेत्रों में और पूर्वी आनह्वेइ व उत्तरी च्याङसू में अभियान करना[८] – ये सभी न सिर्फ निहायत जरूरी और बिलकुल सही कार्यवाहियां थीं, बल्कि

दक्षिणी आनह्वेइ और दक्षिणी च्याङसू में आप लोगों पर हमला करने से पहले कू चू-थुङ को बार-बार सोचने पर मजबूर करने के लिए भी ये अनिवार्य कदम थे। इसका मतलब यह हुआ कि हम याङत्सी नदी के उत्तर में जितनी ज्यादा विजयें हासिल करते जाएंगे और जितना ज्यादा विस्तार करते जाएंगे, उतना ही ज्यादा कू चू-थुङ भी याङत्सी नदी के दक्षिण में मनमानी कार्यवाही करने में संकोच करेगा तथा आपके लिए दक्षिणी आनह्वेइ और दक्षिणी च्याङसू में अपनी भूमिका अदा करना उतना ही आसान होगा। इसी तरह आठवीं राह सेना, नई चौथी सेना और दक्षिण चीन छापामार दस्ता जितना ज्यादा उत्तर-पश्चिम, उत्तर, मध्य और दक्षिण चीन में विस्तार करेंगे तथा कम्युनिस्ट पार्टी का समूचे देश में जितना ज्यादा विकास होगा, आत्मसमर्पण के खतरे पर काबू पाने और परिस्थिति को बेहतर बनाने की सम्भावना उतनी ही ज्यादा बढ़ जाएगी तथा हमारी पार्टी के लिए देश के सभी भागों में अपनी भूमिका अदा करना उतना ही आसान हो जाएगा। उल्टा मूल्यांकन करना और उल्टी कार्यनीतियां अपनाना, यानी यह विचार रखना कि हमारी शक्ति का जितना ज्यादा विस्तार होगा उतना ही ज्यादा कट्टरतावादी लोग आत्मसमर्पण की तरफ झुकेंगे, कट्टरतावादियों को हम जितनी ज्यादा रियायतें देंगे उतना ही ज्यादा वे जापान का विरोध करेंगे, अथवा यह कि समूचा देश आपसी फूट के कगार पर खड़ा है और क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग अब असम्भव हो गया है, बिलकुल गलत है।

५. जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान समूचे देश के लिए हमारी नीति जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की

नीति है। दुश्मन के पृष्ठभाग में जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्रों की स्थापना करना जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति पर ही आधारित है। राजनीतिक सत्ता के सवाल के बारे में आप लोगों को केन्द्रीय कमेटी के फैसलों का दृढ़ता से पालन करना चाहिए।

६. क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में हमारी नीति युद्ध-क्षेत्रों और दुश्मन के पृष्ठभाग में स्थित क्षेत्रों में अपनाई जाने वाली नीति से भिन्न है। क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में हमारी नीति है चुनिंदा कार्यकर्ताओं व संगठनों को लम्बे समय के लिए भूमिगत कार्य में लगाना, शक्ति का संचय करना और अधिक अच्छे मौके की प्रतीक्षा करना, तथा जल्दबाजी करने और अपने आपको जाहिर होने देने से बचना। इस उसूल के अनुरूप कि हमें अपने संघर्ष न्यायोचित आधार पर, अपना फायदा देखते हुए और संयत रूप से चलाने चाहिए, कट्टरतावादियों का मुकाबला करने में हमारी कार्यनीति यह होनी चाहिए कि हम क्वोमिन्ताङ के उन तमाम कानूनों व फरमानों को, जिनका हम इस्तेमाल कर सकते हैं, तथा उन तमाम चीजों को, जिनकी इजाजत सामाजिक रीति-रिवाज देते हैं, इस्तेमाल करके अविचल और सुनिश्चित संघर्ष चलाएं तथा अपनी शक्ति का संचय करें। अगर हमारी पार्टी के किसी सदस्य को क्वोमिन्ताङ में शामिल होने के लिए मजबूर किया जाता है, तो उसे शामिल हो जाना चाहिए; हमारे पार्टी-सदस्यों को सभी जगहों पर "पाओ च्या" प्रशासनिक संगठनों में तथा शैक्षणिक, आर्थिक और फौजी संगठनों में घुस जाना चाहिए; उन्हें केन्द्रीय सेना और "विविध प्रकार की सेनाओं"[६] में संयुक्त मोर्चे के कार्य

यानी मैत्री कायम करने के कार्य का व्यापक रूप से विकास करना चाहिए। इसी प्रकार, सभी क्वोमिन्ताङ क्षेत्रों में पार्टी की बुनियादी नीति है प्रगतिशील शक्तियों (पार्टी-संगठनों और जन-आन्दोलनों) का विकास करना, मध्यवर्ती शक्तियों (इनकी कुल सात श्रेणियां हैं, यानी राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग, जागृत शरीफजादे, "विविध प्रकार की सेनाएं", क्वोमिन्ताङ के मध्यमार्गी,[10] केन्द्रीय सेना के मध्य-मार्गी,[11] निम्न-पूंजीपति वर्ग की उच्च श्रेणी, तथा छोटी-छोटी राजनीतिक पार्टियां व ग्रुप) को अपने पक्ष में कर लेना तथा कट्टरता-वादी शक्तियों को अलगाव की स्थिति में डाल देना, ताकि आत्म-समर्पण के खतरे पर काबू पाया जा सके और परिस्थिति को पहले से बेहतर बनाया जा सके। साथ ही हमें स्थानीय या राष्ट्रीय पैमाने के हर सम्भावित संकट का मुकाबला करने के लिए पूरी तरह तैयार रहना चाहिए। क्वोमिन्ताङ क्षेत्रों में हमारे पार्टी-संगठनों को पूरी तरह गुप्त रखा जाना चाहिए। दक्षिण-पूर्वी ब्यूरो[12] में तथा सभी प्रान्तीय, विशेष, काउन्टी और जिला कमेटियों में काम करने वाले सभी व्यक्तियों (पार्टी-सचिव से लेकर रसोइये तक) की एक-एक करके कड़ी और सूक्ष्म जांच की जानी चाहिए, तथा किसी भी ऐसे व्यक्ति को जिस पर जरा भी शक हो, इन नेतृत्वकारी संस्थाओं में कतई नहीं रहने देना चाहिए। अपने कार्यकर्ताओं की हिफाजत करने के लिए भारी सावधानी बरतनी चाहिए, तथा खुले अथवा अधखुले रूप में कार्यवाही करने वाले जिस किसी कार्यकर्ता के सामने क्वोमिन्ताङ द्वारा उसे गिरफ्तार किए जाने या उसकी हत्या की जाने का खतरा मौजूद हो, उसे किसी अन्य क्षेत्र में भेज दिया जाना चाहिए और भूमिगत कार्य में लगा दिया जाना चाहिए

अथवा उसका तबादला फौज में कर दिया जाना चाहिए। जापान-अधिकृत क्षेत्रों (शांघाई, नानकिङ, ऊहू, ऊशी अथवा किसी अन्य बड़े, मझोले और छोटे शहर तथा देहाती इलाके) में भी हमारी नीति बुनियादी तौर पर वही है जिसे क्वोमिन्ताङ क्षेत्रों में लागू किया जाता है।

७. उपरोक्त कार्यनीतिक निर्देश का फैसला केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो द्वारा अपनी हाल ही की मीटिंग में किया गया था, तथा दक्षिण-पूर्वी ब्यूरो और फौजी उप-कमीशन के साथियों से निवेदन किया जाता है कि वे इस पर विचार-विमर्श करें, इसे पार्टी-संगठनों और सेना के सभी कार्यकर्ताओं के बीच प्रसारित करें तथा दृढ़ता से कार्यान्वित करें।

८. कामरेड श्याङ इङ को हिदायत दी जाती है कि वे इस निर्देश को दक्षिणी आनह्वेइ में प्रसारित करें, तथा कामरेड छन ई को हिदायत दी जाती है कि वे इसे दक्षिणी च्याङसू में प्रसारित करें। विचार-विमर्श करने और प्रसारित करने का कार्य इस तार के मिलने के बाद एक महीने के अन्दर पूरा कर लिया जाए। कामरेड श्याङ इङ को चाहिए कि वे समूचे क्षेत्र में केन्द्रीय कमेटी की नीति के अनुरूप पार्टी व सेना के कार्य का इन्तजाम करने का उत्तरदायित्व सम्भालें तथा इसके परिणाम की रिपोर्ट केन्द्रीय कमेटी को भेजें।

नोट

१ दक्षिण चीन छापामार दस्ता, दक्षिण चीन में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में कार्यवाही करने वाली कई जापान-विरोधी छापामार यूनिटों का आम नाम था।

१ कू चू-थुङ, लङ शिन और हान त-छिन प्रतिक्रियावादी जनरल थे जिन्हें उस समय क्वोमिन्ताङ सरकार द्वारा च्याङसू, चच्याङ, दक्षिणी आनह्वेइ, च्याङशी और अन्य स्थानों में तैनात किया गया था।

२ उस समय नई चौथी सेना की चौथी और पांचवीं टुकड़ियां च्याङसू-आनह्वेइ सीमा पर ह्वाए नदी की घाटी में एक जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र का निर्माण कर रही थीं।

३ कामरेड ये थ्रेङ और कामरेड चाङ युन-ई के अधीन नई चौथी सेना की यूनिटें उस समय याङत्सी नदी के उत्तर में मध्य च्याङसू और पूर्वी आनह्वेइ में जापान-विरोधी छापामार युद्ध चला रही थीं तथा एक जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र का निर्माण कर रही थीं।

४ मार्च और अप्रैल १६४० में आनह्वेइ प्रान्त के क्वोमिन्ताङ गवर्नर ली फिन-श्येन तथा पांचवें युद्ध-क्षेत्र के क्वोमिन्ताङ कमाण्डर ली चुङ-रन ने, जो दोनों क्वाङशी गुट के युद्ध-सरदार थे, आनह्वेइ-हुपे सीमान्त क्षेत्र में स्थित नई चौथी सेना की यूनिटों पर बड़े पैमाने पर हमला कर दिया। जापान-प्रतिरोध में तोड़फोड़ करने के उनके अपराध के प्रति याङत्सी नदी के उत्तर में स्थित नई चौथी सेना की यूनिटों के कमाण्डर कामरेड चाङ युन-ई तथा हुपे-हनान अभियानकारी कालम के कमाण्डर कामरेड ली श्येन-न्येन ने कड़ा विरोध प्रकट किया तथा उनके हमले को पीछे धकेल दिया।

५ १६२७ की गलती का तात्पर्य यहां छन तू-श्यू के दक्षिणपंथी अवसरवाद से है।

६ यहां तात्पर्य क्वोमिन्ताङ के कट्टरतावादियों से है जिनका सरगना च्याङ काई-शेक था।

७ जनवरी १६४० में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने ह्वाए नदी के उत्तर में और पूर्वी आनह्वेइ व उत्तरी च्याङसू में नई चौथी सेना के जापान-विरोधी संघर्ष में सहायता करने के लिए आठवीं राह सेना के २०,००० से अधिक सैनिकों को कुमक के तौर पर उत्तर चीन से उत्तरी च्याङसू में भेजा।

८ क्वोमिन्ताङ के भीतर च्याङ काई-शेक गुट अपनी खुद की सशस्त्र सेनाओं को "केन्द्रीय सेना" के नाम से तथा अन्य गुटों की सेनाओं को "विविध प्रकार की सेनाओं" के नाम से पुकारता था। वह "विविध प्रकार की सेनाओं" के प्रति भेदभाव बरतता था तथा उनके प्रति "केन्द्रीय सेना" के समान बरताव नहीं करता था।

१० "क्वोमिन्ताङ के मध्यमार्गियों" से यहां क्वोमिन्ताङ के उन गुटों और व्यक्तियों से तात्पर्य है जो किसी एक निश्चित काल में कम्युनिस्ट-विरोधी कार्यवाहियों में अधिक सक्रिय नहीं थे या तटस्थ रुख अपनाए हुए थे।

११ क्वोमिन्ताङ की "केन्द्रीय सेना" यद्यपि च्याङ काई-शेक की अपनी सेना थी, फिर भी उसमें कुछ अफसर और इक्की-दुक्की टुकड़ियां ऐसी भी थीं जो जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान कम्युनिस्ट-विरोधी कार्यवाहियों में अधिक सक्रिय नहीं थीं या तटस्थ रुख अपनाए हुए थीं। "केन्द्रीय सेना के मध्यमार्गियों" का तात्पर्य उन्हीं लोगों से है।

१२ दक्षिण-पूर्वी ब्यूरो चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की तरफ से १६३८-४१ के दौरान दक्षिण-पूर्वी चीन (जिसमें च्याङसू, चच्याङ, आनह्वेइ, च्याङशी, हुपे और हुनान शामिल थे) के कार्य का नेतृत्व करता था।

अन्त तक एकता बनाए रखो

जुलाई १९४०

जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध आरम्भ होने की तीसरी जयन्ती और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की उन्नीसवीं जयन्ती लगभग एक ही समय पड़ती हैं। प्रतिरोध-युद्ध की जयन्ती मनाते समय आज हम कम्युनिस्टों को अपनी जिम्मेदारी और भी अधिक महसूस हो रही है। चीनी राष्ट्र को बचाने की जिम्मेदारी सभी जापान-विरोधी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों तथा समूची जनता के कन्धों पर है, लेकिन हम कम्युनिस्टों के विचार में हमारे कन्धों पर इसकी और भी ज्यादा जिम्मेदारी है। हमारी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने वर्तमान परिस्थिति के बारे में एक घोषणा जारी की है, जिसका सारतत्व है अन्त तक प्रतिरोध-युद्ध जारी रखने और अन्त तक एकता बनाए रखने का आवाहन करना। हमें उम्मीद है कि इस घोषणा को मित्र-पार्टियों और मित्र-सेनाओं तथा समूची जनता का समर्थन प्राप्त होगा, और खास तौर पर सभी कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे इसमें निर्धारित की गई कार्यदिशा को संजीदगी से कार्यान्वित करें।

सभी कम्युनिस्टों को यह बात समझ लेनी चाहिए कि अन्त तक प्रतिरोध-युद्ध जारी रखकर ही अन्त तक एकता बनाए रखी जा

सकती है तथा अन्त तक एकता बनाए रखकर ही अन्त तक प्रतिरोध-युद्ध जारी रखा जा सकता है। इसलिए कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे प्रतिरोध और एकता दोनों में ही मिसाल कायम करें। हमारे विरोध का निशाना केवल दुश्मन तथा कट्टर आत्मसमर्पणकारी और कम्युनिस्ट-विरोधी तत्व हैं; बाकी तमाम लोगों के साथ हमें संजीदगी से एकता कायम कर लेनी चाहिए। हर जगह कट्टर आत्मसमर्पणकारी और कम्युनिस्ट-विरोधी तत्व केवल अल्पसंख्या में हैं। मैंने एक स्थानीय सरकार की जांच-पड़ताल की और पता लगाया कि कुल १,३०० के स्टाफ में से सिर्फ ४०-५० आदमी यानी ४ प्रतिशत से भी कम लोग कट्टर कम्युनिस्ट-विरोधी हैं, जबकि बाकी तमाम लोग एकता और प्रतिरोध के इच्छुक हैं। बेशक, कट्टर आत्मसमर्पणकारी और कम्युनिस्ट-विरोधी तत्वों को हम बरदाश्त नहीं कर सकते, क्योंकि ऐसा करने का मतलब होगा उन्हें प्रतिरोध-युद्ध में फूट डालने और एकता को तहस-नहस करने की इजाजत देना; हमें आत्मसमर्पणकारियों का दृढ़ता से विरोध करना चाहिए तथा अपनी रक्षा के लिए कम्युनिस्ट-विरोधी तत्वों के हमलों का दृढ़ता से जवाब देना चाहिए। ऐसा न करना दक्षिणपंथी अवसरवाद होगा तथा इससे एकता और प्रतिरोध-युद्ध को नुकसान पहुंचेगा। लेकिन उन तमाम लोगों के प्रति एकता की नीति अपनानी चाहिए जो आत्मसमर्पण और कम्युनिस्ट-विरोध पर हठधर्मी के साथ नहीं अड़े हुए हैं। कारण, उनमें से कुछ लोग दुरंगे चरित्र वाले हैं, कुछ लोग मजबूरन ऐसा कर रहे हैं तथा कुछ अन्य लोग अस्थाई रूप से भटक गए हैं; एकता बनाए रखने और प्रतिरोध-युद्ध जारी रखने के लिए हमें इन तमाम लोगों को अपने पक्ष में कर लेना चाहिए।

ऐसा न करना "वामपंथी" अवसरवाद होगा तथा इससे भी एकता और प्रतिरोध-युद्ध को नुकसान पहुंचेगा। सभी कम्युनिस्टों को यह बात समझ लेनी चाहिए कि हमने जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे का सूत्रपात किया है और हमें इस पर डटे रहना चाहिए। आज जबकि राष्ट्रीय संकट गहरा होता जा रहा है और दुनिया की परिस्थिति में भारी परिवर्तन होता जा रहा है, हमें चीनी राष्ट्र को बचाने की अत्यन्त भारी जिम्मेदारी को अपने कन्धों पर उठा लेना चाहिए। हमें जापानी साम्राज्यवाद को अवश्य ही परास्त कर देना चाहिए तथा चीन को अवश्य ही एक स्वाधीन, स्वतंत्र और जनवादी गणराज्य बना लेना चाहिए; इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें यथासम्भव अधिकाधिक लोगों के साथ एकता कायम करनी चाहिए, चाहे वे किसी पार्टी व ग्रुप के सदस्य हों अथवा न हों। कम्युनिस्टों को सिद्धान्तहीन संयुक्त मोर्चा कायम नहीं करना चाहिए, तथा इसलिए उन तमाम स्कीमों का विरोध करना चाहिए जो कम्युनिस्ट पार्टी को क्षयग्रस्त करती हों, उस पर नियंत्रण लगाती हों, उस पर अंकुश लगाती हों और उसका दमन करती हों, तथा उन्हें पार्टी के भीतर दक्षिणपंथी अवसरवाद का विरोध करना चाहिए। लेकिन इसके साथ-साथ कम्युनिस्टों को अपनी पार्टी की संयुक्त मोर्चे की नीति का सम्मान करने में भी नहीं चूकना चाहिए, और इसलिए, प्रतिरोध के उसूल के आधार पर, उन्हें उन तमाम लोगों के साथ एकता कायम करनी चाहिए जो अब भी जापान का प्रतिरोध करना चाहते हैं, तथा उन्हें पार्टी के भीतर "वामपंथी" अवसरवाद का विरोध करना चाहिए।

इस प्रकार, जहां तक राजनीतिक सत्ता का सवाल है, हम संयुक्त

मोर्चे की राजनीतिक सत्ता का पक्षपोषण करते हैं; हम एक ही पार्टी के अधिनायकत्व का, चाहे वह किसी दूसरी पार्टी का अधिनायकत्व हो अथवा कम्युनिस्ट पार्टी का, पक्षपोषण नहीं करते, लेकिन हम सभी राजनीतिक पार्टियों व ग्रुपों, सभी व्यवसायों की जनता और सभी सशस्त्र सेनाओं के संयुक्त अधिनायकत्व, अर्थात संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता का पक्षपोषण करते हैं। जब भी हम दुश्मन के पृष्ठभाग में दुश्मन व कठपुतली-शासन को नष्ट करने के बाद जापान-विरोधी राजनीतिक सत्ता के संगठन कायम करें, उस समय हमें अपनी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा निर्धारित "तीन-तिहाई व्यवस्था" पर अमल करना चाहिए, ताकि सभी सरकारी अथवा जन-प्रतिनिधियों के संगठनों में कम्युनिस्टों को एक-तिहाई स्थान मिलें और बाकी दो-तिहाई स्थान उन लोगों को मिलें जो प्रतिरोध और जनवाद का पक्षपोषण करते हैं, चाहे वे अन्य पार्टियों व ग्रुपों के सदस्य हों अथवा न हों। सरकारी कामकाज में हर कोई शामिल हो सकता है, बशर्ते कि वह आत्मसमर्पणकारी न हो और कम्युनिस्ट-विरोधी न हो। जापान-विरोधी राजनीतिक सत्ता के अन्तर्गत हर राजनीतिक पार्टी व ग्रुप को अपना अस्तित्व बनाए रखने और अपनी गतिविधियां जारी रखने का अधिकार होगा, बशर्ते कि वह आत्मसमर्पणकारी न हो और कम्युनिस्ट-विरोधी न हो।

सशस्त्र सेनाओं के सवाल के बारे में, हमारी पार्टी की घोषणा में यह स्पष्ट कर दिया गया है कि हम "अपने पार्टी-संगठनों को किसी भी मित्र-सेना में न फैलाने" के फैसले पर अमल करते रहेंगे। जिन स्थानीय पार्टी-संगठनों ने इस फैसले पर सख्ती से अमल नहीं

किया उन्हें तुरन्त अपनी गलती सुधार लेनी चाहिए। उन तमाम सशस्त्र सेनाओं के प्रति, जो आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना के साथ फौजी टकराव पैदा नहीं करतीं, मैत्रीपूर्ण रुख अपनाना चाहिए। उन सेनाओं के साथ भी फिर से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध कायम कर लेने चाहिए जिन्होंने टकराव पैदा किया है, बशर्ते कि उन्होंने ऐसा करना बन्द कर दिया हो। सशस्त्र सेनाओं के सवाल के बारे में हमारी संयुक्त मोर्चे की नीति यही है।

जहां तक अन्य मामलों के बारे में हमारी नीतियों का ताल्लुक है, चाहे वे वित्तीय, आर्थिक, सांस्कृतिक व शैक्षणिक मामले हों अथवा जासूसी-विरोधी मामले, प्रतिरोध के हितों को ध्यान में रखते हुए हमें विभिन्न वर्गों के हितों को सुव्यवस्थित करने के कार्य को प्रस्थान-बिन्दु बनाकर संयुक्त मोर्चे की नीति पर अमल करना चाहिए तथा दक्षिणपंथी और "वामपंथी" दोनों किस्म के अवसरवाद का विरोध करना चाहिए।

वर्तमान अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति ऐसी है जिसमें साम्राज्यवादी युद्ध सारी दुनिया में फैलता जा रहा है तथा इसके परिणामस्वरूप पैदा होने वाले अत्यन्त गम्भीर राजनीतिक व आर्थिक संकट अनिवार्य रूप से अनेक देशों में क्रान्तियों को जन्म देंगे। हम युद्धों और क्रान्तियों के एक नए युग में हैं। सोवियत संघ, जो इस साम्राज्यवादी युद्ध के भंवर में नहीं फंसा, दुनिया की तमाम उत्पीड़ित जनता और तमाम उत्पीड़ित राष्ट्रों का मददगार है। ये तत्व चीन के प्रतिरोध-युद्ध के लिए अनुकूल हैं। लेकिन साथ ही आत्मसमर्पण का खतरा पहले से कहीं अधिक बढ़ गया है, क्योंकि जापानी साम्राज्यवाद दक्षिण-पूर्वी एशिया पर आक्रमण की तैयारी में चीन पर अपने

हमलों को तेज करता जा रहा है, और इस प्रकार वह निश्चय ही चीन के कुछ ढुलमुल तत्वों को आत्मसमर्पण के लिए प्रलोभन देगा। प्रतिरोध-युद्ध का चौथा वर्ष एक अत्यन्त कठिन वर्ष होगा। हमारा कार्य है तमाम जापान-विरोधी शक्तियों को एकताबद्ध करना, आत्मसमर्पणकारियों का विरोध करना, सभी कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करना और राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध पर डटे रहना। इस कार्य को पूरा करने के लिए सभी कम्युनिस्टों को मित्र-पार्टियों और मित्र-सेनाओं के साथ एकता कायम करनी चाहिए। हमें यकीन है कि हमारी पार्टी के सभी सदस्यों, मित्र-पार्टियों और मित्र-सेनाओं तथा समूची जनता की मुश्तरका कोशिशों के जरिए हम आत्म-समर्पण की रोकथाम करने, कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने, जापानी आक्रमणकारियों को बाहर खदेड़ने तथा अपने खोए हुए प्रदेशों को वापस लेने में अवश्य कामयाब होंगे। हमारे प्रतिरोध-युद्ध का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है।

नीति के बारे में*

२५ दिसम्बर १९४०

कम्युनिस्ट-विरोधी प्रहारों के मौजूदा भीषण तूफान में हमारे द्वारा अपनाई जाने वाली नीति का निर्णयात्मक महत्व है। किन्तु हमारे अनेक कार्यकर्ता इस बात को समझ नहीं पाते कि पार्टी की मौजूदा नीति और भूमि-क्रान्ति के दौरान पार्टी द्वारा अपनाई गई नीति के बीच भारी अन्तर होना चाहिए। इस बात को लाजिमी तौर पर समझ लेना चाहिए कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के समूचे काल में हमारी पार्टी जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की अपनी नीति को किन्हीं भी हालतों में नहीं बदलेगी तथा भूमि-क्रान्ति के दस सालों में अपनाई गई अनेक नीतियों को आज ठीक उसी रूप में दोहराया भी नहीं जाना चाहिए। खास तौर पर, भूमि-क्रान्ति के अन्तिम काल में अपनाई गई अनेक उग्रवामपंथी नीतियों को न सिर्फ आज जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के काल में बिलकुल लागू नहीं किया जा सकता, बल्कि उन्हें लागू करना उस समय भी गलत था, और वे इन दो बुनियादी विशेषताओं को न समझ पाने की वजह से ही पैदा हुई थीं कि चीनी क्रान्ति एक

* यह अन्तःपार्टी निर्देश कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की ओर से लिखा था।

अर्ध-औपनिवेशिक देश की पूंजीवादी-जनवादी क्रान्ति है तथा वह एक दीर्घकालीन क्रान्ति है। इन उग्रवामपंथी नीतियों की कुछ मिसालें थीं क्वोमिन्ताङ की "घेरा डालने और विनाश करने" की पांचवीं मुहिम तथा उसके विरोध में हमारे द्वारा चलाई गई जवाबी मुहिम को प्रतिक्रान्ति और क्रान्ति के बीच एक निर्णायक लड़ाई के रूप में मानने वाली प्रस्थापना, (उग्रवामपंथी श्रम और कर नीतियों के जरिए) पूंजीपति वर्ग का तथा (निकृष्ट भूमि देकर) धनी किसानों का आर्थिक रूप से उन्मूलन, (रंचमात्र जमीन न देकर) जमींदारों का शारीरिक रूप से उन्मूलन, बुद्धिजीवियों पर प्रहार, प्रतिक्रान्तिकारियों का दमन करने में "वामपंथी" भटकाव, राजनीतिक सत्ता के संगठनों पर कम्युनिस्टों का एकाधिकार, आम शिक्षा में केन्द्रीय लक्ष्य के रूप में कम्युनिज्म को प्रस्तुत करना, (बड़े शहरों पर हमला करने और छापामार युद्ध की भूमिका से इनकार करने वाली) उग्रवामपंथी सैन्य नीति, श्वेत इलाकों में कार्य करने के बारे में अपनाई गई मुहिमजोई की नीति, तथा अनुशासन-सम्बन्धी उपायों का दुरुपयोग करके साथियों पर प्रहार करने की पार्टी के अन्दर अपनाई गई नीति। ये उग्रवामपंथी नीतियां, जो प्रथम महान क्रान्ति के अन्तिम काल में छन तू-श्यू के दक्षिणपंथी अवसरवाद के ठीक विपरीत थीं, "वामपंथी" अवसरवाद की गलती की अभिव्यक्ति थीं। प्रथम महान क्रान्ति के अन्तिम काल में केवल संश्रय कायम करने और बिलकुल संघर्ष न करने की नीति अपनाई गई, जबकि भूमि-क्रान्ति के अन्तिम काल में केवल संघर्ष करने और (केवल किसान समुदाय के बुनियादी तबकों को अपवाद के रूप में छोड़कर) बिलकुल संश्रय कायम न करने की

नीति अपनाई गई – ये दोनों दो अलग-अलग उग्रवादी नीतियों के ज्वलन्त उदाहरण हैं। इन दोनों ही उग्रवादी नीतियों ने पार्टी और क्रान्ति को भारी नुकसान पहुंचाया।

जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे के बारे में आज हमारी नीति न तो केवल संश्रय कायम करने और बिलकुल संघर्ष न करने की नीति है और न वह केवल संघर्ष करने और बिलकुल संश्रय कायम न करने की नीति है, बल्कि वह संश्रय कायम करने के साथ-साथ संघर्ष करने की नीति है। ठोस रूप में वह इस प्रकार है :

(१) जापान-प्रतिरोध का पक्षपोषण करने वाले सभी लोगों को (अर्थात सभी जापान-विरोधी मजदूरों, किसानों, सैनिकों, विद्यार्थियों व बुद्धिजीवियों और व्यापारियों को) जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे में एकताबद्ध हो जाना चाहिए।

(२) संयुक्त मोर्चे के भीतर हमारी नीति स्वतंत्रता और पहलकदमी की नीति होनी चाहिए, अर्थात एकता और स्वतंत्रता दोनों ही आवश्यक हैं।

(३) जहां तक फौजी रणनीति का सवाल है, हमारी नीति है एक एकीकृत रणनीति के अन्तर्गत स्वतंत्र रूप से और पहलकदमी अपने हाथ में रखते हुए छापामार युद्ध करना ; हमें बुनियादी तौर पर छापामार लड़ाई चलानी चाहिए, लेकिन अनुकूल स्थिति आने पर चलायमान लड़ाई चलाने का कोई भी मौका हाथ से नहीं जाने देना चाहिए।

(४) कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के विरुद्ध संघर्ष करते समय हमारी नीति है अन्तरविरोधों का फायदा उठाना, बहुसंख्यक लोगों को अपने पक्ष में कर लेना, मुट्ठीभर लोगों का

विरोध करना और अपने दुश्मनों को एक-एक करके कुचल देना ; तथा न्यायोचित आधार पर, अपना फायदा देखते हुए और संयत रूप से संघर्ष करते रहना।

(५) शत्रु-अधिकृत और क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में हमारी नीति है एक तरफ तो संयुक्त मोर्चे को यथासम्भव बड़े पैमाने पर विकसित करना और दूसरी तरफ चुनिंदा कार्यकर्ताओं व संगठनों को भूमिगत कार्य में लगाना ; संगठन और संघर्ष के रूपों के बारे में हमारी नीति है चुनिंदा कार्यकर्ताओं व संगठनों को लम्बे समय के लिए भूमिगत कार्य में लगाना, शक्ति का संचय करना और अधिक अच्छे मौके की प्रतीक्षा करना।

(६) जहां तक देश के भीतर विभिन्न वर्गों के बीच के सम्बन्धों का सवाल है, हमारी बुनियादी नीति है प्रगतिशील शक्तियों का विकास करना, मध्यवर्ती शक्तियों को अपने पक्ष में कर लेना तथा कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों को अलगाव की स्थिति में डाल देना।

(७) कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के प्रति हमारी नीति, जिस हद तक वे अभी भी जापान का प्रतिरोध करने के पक्ष में हैं, उस हद तक उनके साथ एकता कायम करने, और जिस हद तक वे कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करने के लिए संकल्पबद्ध हैं, उस हद तक उनको अलगाव की स्थिति में डालने की एक क्रान्तिकारी दोहरी नीति है। जहां तक जापान का प्रतिरोध करने का सवाल है, इन कट्टरतावादियों का भी दुरंगा चरित्र है, तथा जिस हद तक वे अभी भी जापान का प्रतिरोध करने के पक्ष में हैं, उस हद तक हमारी नीति उनके साथ एकता कायम करने की है और

जिस हद तक वे डावांडोल होते हैं (मिसाल के तौर पर जब वे गुप्त रूप से जापानी आक्रमणकारियों के साथ सांठगांठ करते हैं और वाङ चिङ-वेइ तथा अन्य गद्दारों का विरोध करने में निष्क्रिय रहते हैं), उस हद तक हमारी नीति उनके विरुद्ध संघर्ष करने और उनको अलगाव की स्थिति में डालने की है। जहां तक कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करने का सवाल है, इन कट्टरतावादियों का स्वरूप भी दुरंगा है, इसलिए उनके प्रति हमारी नीति का स्वरूप भी दोहरा होना चाहिए ; जिस हद तक वे क्वोमिन्ताङ-कम्युनिस्ट सहयोग को बिलकुल खत्म कर देने के लिए अभी भी तैयार नहीं हैं, उस हद तक हमारी नीति उनके साथ संश्रय कायम करने की है, लेकिन जिस हद तक वे हमारी पार्टी और जनता के खिलाफ दमनकारी नीति अपनाते हैं तथा सशस्त्र प्रहार करते हैं, उस हद तक हमारी नीति उनके विरुद्ध संघर्ष करने और उनको अलगाव की स्थिति में डाल देने की है। इस प्रकार के दुरंगे चरित्र वाले लोगों तथा गद्दारों व जापान-परस्त तत्वों के बीच हम फर्क करते हैं।

(८) यहां तक कि गद्दारों और जापान-परस्त तत्वों के बीच भी दुरंगे चरित्र वाले लोग विद्यमान हैं जिनके प्रति हमें भी उसी भांति एक क्रान्तिकारी दोहरी नीति अपनानी चाहिए। जिस हद तक वे जापान-परस्त हैं, उस हद तक हमारी नीति उन पर प्रहार करने और उनको अलगाव में डालने की है, लेकिन जिस हद तक वे डावांडोल होते हैं, उस हद तक हमारी नीति उन्हें अपनी ओर ज्यादा नजदीक लाने तथा उन्हें अपने पक्ष में कर लेने की है। हम इस प्रकार के दुरंगे चरित्र वाले तत्वों तथा वाङ चिङ-वेइ, वाङ ई-थाङ[१] और श यओ-सान[२] जैसे सरासर गद्दारों के बीच फर्क करते हैं।

(९) हमें एक तरफ जापान-परस्त बड़े जमींदारों व बड़े पूंजीपतियों, जो प्रतिरोध करने के विरुद्ध हैं, तथा दूसरी तरफ बरतानिया-परस्त और अमरीका-परस्त बड़े जमींदारों व बड़े पूंजीपतियों, जो प्रतिरोध करने के पक्ष में हैं, के बीच फर्क करना चाहिए ; इसी प्रकार हमें एक तरफ दुरंगे चरित्र वाले बड़े जमींदारों व बड़े पूंजीपतियों, जो जापान का प्रतिरोध करने के पक्ष में तो हैं किन्तु ढुलमुल हैं और जो एकता कायम करने के पक्ष में तो हैं किन्तु कम्युनिस्ट-विरोधी भी हैं, तथा दूसरी तरफ राष्ट्रीय पूंजीपतियों, मध्यम व छोटे जमींदारों और जागृत शरीफजादों, जिनके चरित्र में दुरंगापन अपेक्षाकृत कम होता है, के बीच भी फर्क करना चाहिए। इन फर्कों को ध्यान में रखकर ही हम अपनी नीति निर्धारित करते हैं। ऊपर बताई गई ये भिन्न नीतियां वर्ग-सम्बन्धों में विद्यमान इन फर्कों पर आधारित हैं।

(१०) हम साम्राज्यवाद से भी इसी ढंग से निपटते हैं। कम्युनिस्ट पार्टी सभी किस्म के साम्राज्यवाद का विरोध करती है, किन्तु हम एक तरफ जापानी साम्राज्यवाद, जो चीन पर आक्रमण कर रहा है तथा दूसरी तरफ अन्य साम्राज्यवादी ताकतों, जो अभी ऐसा नहीं कर रही हैं, के बीच फर्क करते हैं ; हम एक तरफ जर्मन और इटालवी साम्राज्यवादियों, जो जापान के संश्रयकारी हैं और जिन्होंने "मंचूक्वो" को मान्यता दे दी है तथा दूसरी तरफ ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादियों, जो जापान के विरोध में हैं, के बीच फर्क करते हैं ; तथा हम कल के ब्रिटेन और अमरीका, जो दूरपूर्व में म्यूनिख-नीति का अनुसरण करते थे और जापानी आक्रमण के विरुद्ध चीन द्वारा किए जाने वाले प्रतिरोध की जड़ काटते थे

तथा आज के ब्रिटेन और अमरीका, जो अपनी इस नीति को त्यागकर चीन द्वारा किए जाने वाले प्रतिरोध के पक्ष में हो गए हैं, के बीच भी फर्क करते हैं। हमारी कार्यनीतियों का उसूल अब भी यही है : अन्तरविरोधों का फायदा उठाना, बहुसंख्यक लोगों को अपने पक्ष में कर लेना, मुट्ठीभर लोगों का विरोध करना और अपने दुश्मनों को एक-एक करके कुचल देना। हमारी विदेश नीति क्वोमिन्ताङ की विदेश नीति से भिन्न है। क्वोमिन्ताङ यह दावा करती है कि "दुश्मन केवल एक है तथा बाकी सब मित्र हैं"; वह ऊपर से यह दिखाती है कि जापान को छोड़कर बाकी सब देशों के साथ उसका व्यवहार एक-समान है, किन्तु वस्तुतः वह बरतानिया-परस्त और अमरीका-परस्त है। जहां तक हमारा सम्बन्ध है, हमें अपनी तरफ से फर्क करना चाहिए : पहले, हमें सोवियत संघ तथा पूंजीवादी देशों के बीच फर्क करना चाहिए, दूसरे, हमें एक तरफ ब्रिटेन व अमरीका तथा दूसरी तरफ जर्मनी व इटली के बीच फर्क करना चाहिए, तीसरे, हमें ब्रिटेन व अमरीका की जनता तथा इन देशों की साम्राज्यवादी सरकारों के बीच फर्क करना चाहिए, और चौथे, ब्रिटेन व अमरीका द्वारा अपने दूरपूर्वी म्यूनिख काल के दौरान अपनाई गई नीति तथा उनकी वर्तमान नीति के बीच फर्क करना चाहिए। इन फर्कों को ध्यान में रखकर ही हम अपनी नीति निर्धारित करते हैं। क्वोमिन्ताङ के बिलकुल विपरीत हमारी बुनियादी नीति है युद्ध का स्वतंत्र रूप से संचालन करने और स्वावलम्बी बनने के उसूल पर कायम रहते हुए विदेशी सहायता को यथासम्भव इस्तेमाल करना, न कि विदेशी सहायता पर पूर्णतः निर्भर होकर या किसी न किसी साम्राज्यवादी गुट से चिपके रहकर इस उसूल

का परित्याग कर देना, जैसा क्वोमिन्ताङ करती है।

कार्यनीति के सवाल पर अनेक पार्टी-कार्यकर्ताओं के एकतरफा विचारों को तथा इनके परिणामस्वरूप "वामपंथ" और दक्षिणपंथ के बीच होने वाले उनके ढुलमुलपन को दुरुस्त करने के लिए हमें चाहिए कि पार्टी की अतीतकालीन और वर्तमानकालीन नीति में होने वाले परिवर्तनों व घटना-क्रमों के बारे में चौमुखी और सुसम्बद्ध समझदारी हासिल करने में उनकी मदद करें। उग्रवामपंथी दृष्टिकोण पार्टी में गड़बड़ी पैदा कर रहा है और अभी भी पार्टी के लिए मुख्य खतरा बना हुआ है। क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों में अनेक ऐसे लोग हैं जो चुनिंदा कार्यकर्ताओं व संगठनों को लम्बे समय के लिए भूमिगत कार्य में लगाने, शक्ति का संचय करने और अधिक अच्छे मौके की प्रतीक्षा करने की नीति को संजीदगी से कार्यान्वित नहीं कर पाते, क्योंकि वे क्वोमिन्ताङ की कम्युनिस्ट-विरोधी नीति की गम्भीरता को वास्तविकता से कम करके आंकते हैं। इसके साथ ही, अन्य अनेक लोग ऐसे भी हैं जो संयुक्त मोर्चे का प्रसार करने की नीति को कार्यान्वित नहीं कर पाते क्योंकि वे मामलों को अत्यधिक सरलता से देखने के कारण समूची क्वोमिन्ताङ को बिलकुल बेकार समझते हैं तथा इसीलिए यह नहीं समझ पाते कि उन्हें क्या करना चाहिए। ऐसी ही स्थिति जापान-अधिकृत क्षेत्रों में भी विद्यमान है।

क्वोमिन्ताङ-शासित क्षेत्रों और जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों में उन दक्षिणपंथी विचारों पर अब बुनियादी तौर पर काबू पा लिया गया है जिनका किसी समय वहां बोलबाला था ; इन विचारों को मानने वाले लोग संघर्ष को त्यागकर केवल संश्रय कायम करने पर जोर देते थे तथा जापान का प्रतिरोध करने के बारे में क्वोमिन्ताङ की प्रवृत्ति को बढ़ा-चढ़ा कर आंकते थे, और इसीलिए उन्होंने क्वोमिन्ताङ तथा कम्युनिस्ट पार्टी के बीच विद्यमान उसूली फर्क को धुंधला बना दिया, संयुक्त मोर्चे के भीतर स्वतंत्रता व पहलकदमी की नीति को ठुकरा दिया, बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े पूंजीपतियों के वर्ग और क्वोमिन्ताङ का तुष्टीकरण किया तथा जापान-विरोधी क्रान्तिकारी शक्तियों का साहस के साथ प्रसार करने और क्वोमिन्ताङ द्वारा कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करने व उस पर अंकुश लगाने की नीति के विरुद्ध दृढ़तापूर्वक संघर्ष करने के बजाय खुद अपने ही हाथ बांध लिए। किन्तु क्वोमिन्ताङ द्वारा रचे गए कम्युनिस्ट-विरोधी "टकराव" तथा उसके खिलाफ हमारे द्वारा चलाए गए रक्षात्मक संघर्षों के परिणामस्वरूप १९३९ के जाड़ों से अनेक स्थानों पर एक उग्रवामपंथी प्रवृत्ति पैदा हो गई है। इस प्रवृत्ति को कुछ हद तक तो दूर कर दिया गया है किन्तु पूरी तरह से अभी दूर नहीं किया गया है, और अनेक स्थानों पर ठोस नीतियों में इसकी अभिव्यक्ति अभी भी होती रहती है। इसलिए अपनी ठोस नीतियों को परखना और निर्धारित करना अब हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है।

चूंकि ठोस नीतियों के बारे में सिलसिलेवार निर्देश हमारी केन्द्रीय कमेटी पहले ही जारी कर चुकी है, इसलिए अब यहां पर केवल कुछ बातों को ही सारांश रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

राजनीतिक सत्ता के संगठन। "तीन-तिहाई व्यवस्था", जिसके अन्तर्गत राजनीतिक सत्ता के संगठनों में केवल एक-तिहाई स्थान कम्युनिस्टों को प्राप्त हैं तथा अनेक गैर-कम्युनिस्ट लोगों को भी उनमें

शामिल किया जाता है, दृढ़तापूर्वक लागू की जानी चाहिए। उत्तरी च्याङसू जैसे क्षेत्रों में, जहां जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता की स्थापना करने की हमने अभी शुरुआत की है, कम्युनिस्टों का अनुपात एक-तिहाई से भी कम रखा जा सकता है। निम्न-पूंजीपति वर्ग, राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग और जागृत शरीफजादों के प्रतिनिधियों को भी, जो कम्युनिस्ट पार्टी का सक्रिय रूप से विरोध नहीं करते, सरकार तथा जन-प्रतिनिधि संस्थाओं दोनों में शामिल किया जाना चाहिए और क्वोमिन्ताङ के उन सदस्यों को भी, जो कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध नहीं करते, इनमें भाग लेने की अनुमति दी जानी चाहिए। यहां तक कि थोड़ी संख्या में दक्षिणपंथियों को भी जन-प्रतिनिधि संस्थाओं में शामिल होने दिया जा सकता है। हमारी पार्टी को हर बात पर अपना एकाधिकार कदापि नहीं कायम करना चाहिए। हम केवल बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग और बड़े जमींदारों के वर्ग के अधिनायकत्व का विनाश कर रहे हैं, न कि उसके स्थान पर कम्युनिस्ट पार्टी का एकदलीय अधिनायकत्व कायम कर रहे हैं।

श्रम नीति। यदि प्रतिरोध-युद्ध में मजदूरों के जोश को पूरी तरह से जगाना है, तो उनके रहन-सहन की हालत में सुधार किया जाना चाहिए। किन्तु साथ ही हमें इस बारे में भी कठोर रूप से सतर्क रहना चाहिए कि हम उग्रवामपंथी न बनें ; तनख्वाहों में अत्यधिक बढ़ोतरी या काम के घंटों में अत्यधिक कटौती नहीं होनी चाहिए। वर्तमान परिस्थितियों में, आठ घंटे का श्रमदिन समूचे चीन में लागू नहीं किया जा सकता और उत्पादन के कुछ क्षेत्रों में अभी भी दस घंटे का श्रमदिन लागू रखने की इजाजत दी जानी चाहिए। उत्पादन के अन्य क्षेत्रों में काम के घंटे वहां की परिस्थितियों के अनुसार निश्चित किए जाने चाहिए। श्रम और पूंजी के बीच एक बार अनुबन्ध हो जाने पर मजदूरों को श्रम-अनुशासन का पालन करना चाहिए तथा पूंजीपतियों को कुछ मुनाफा हासिल करने देना चाहिए। अन्यथा, कारखाने बन्द हो जाएंगे जो न तो प्रतिरोध-युद्ध के लिए फायदेमन्द होगा और न मजदूरों के लिए ही। विशेष रूप से देहाती इलाकों में मजदूरों के रहन-सहन और तनख्वाहों के स्तर को बहुत ऊंचा नहीं उठाना चाहिए, वरना इससे किसानों में असन्तोष पैदा हो जाएगा, मजदूरों के बीच बेरोजगारी उत्पन्न होगी और उत्पादन में गिरावट आ जाएगी।

भूमि नीति। पार्टी-सदस्यों और किसानों को यह बात समझा दी जानी चाहिए कि यह मुकम्मिल भूमि-क्रान्ति करने का समय नहीं है और भूमि-क्रान्ति के दौरान अपनाए गए अनेक सिलसिलेवार उपायों को आज की हालत में अपनाया नहीं जा सकता। एक तरफ हमारी वर्तमान नीति में इस बात की व्यवस्था होनी चाहिए कि जमींदार लगान और सूद में कटौती करेंगे, क्योंकि इससे जापान का प्रतिरोध करने के लिए बुनियादी किसान समुदाय की सक्रियता को जगाने में मदद मिलती है, किन्तु यह कटौती बहुत ज्यादा नहीं होनी चाहिए। आम तौर पर भूमि के लगान में २५ प्रतिशत की कटौती की जानी चाहिए, और अगर किसान समुदाय इससे अधिक कटौती की मांग करता है तो काश्तकार को अपनी पैदावार का ६० या ७० प्रतिशत भाग अपने पास रखने की इजाजत दे देनी चाहिए, किन्तु इससे अधिक की इजाजत नहीं देनी चाहिए। कर्जों पर लिए जाने वाले सूद में इतनी ज्यादा कटौती नहीं होनी

चाहिए कि ऋण का लेन-देन ही असम्भव हो जाए। दूसरी तरफ हमारी नीति में इस बात की व्यवस्था होनी चाहिए कि किसान लगान और सूद का भुगतान करेंगे तथा जमींदार भूमि और अन्य सम्पत्ति पर अपना स्वामित्व बनाए रखेंगे। सूद की दर इतनी कम नहीं होनी चाहिए कि किसान के लिए कर्ज लेना ही असम्भव हो जाए और न पुराने हिसाब-किताब का निपटारा इस ढंग से किया जाना चाहिए कि किसानों द्वारा रेहन रखी हुई भूमि उन्हें मुफ्त में वापस मिल जाए।

कर नीति। कर आमदनी के अनुसार लगाए जाने चाहिए। अत्यन्त गरीब लोगों को छोड़कर, जिन्हें करों की छूट दे देनी चाहिए, आमदनी वाले बाकी सभी लोगों को राज्य को कर देना चाहिए, जिसका मतलब यह है कि कुल जनसंख्या के ८० प्रतिशत से अधिक लोगों को, जिनमें मजदूर और किसान भी शामिल हैं, यह बोझ उठा लेना चाहिए तथा समूचा बोझ केवल जमींदारों और पूंजी-पतियों के कन्धों पर ही नहीं रखा जाना चाहिए। सेना के लिए धन जुटाने के साधन के रूप में लोगों को गिरफ्तार करके उन पर जुर्माना ठोकने की प्रथा पर पाबन्दी लगा दी जानी चाहिए। जब तक हम एक नई व अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त कर-व्यवस्था नहीं निकाल लेते तब तक हम क्वोमिन्ताङ की मौजूदा कर-व्यवस्था को ही उचित संशोधनों के साथ इस्तेमाल कर सकते हैं।

जासूसी-विरोधी नीति। कट्टर गद्दारों और कम्युनिस्ट-विरोधियों का हमें दृढ़ता के साथ दमन करना चाहिए, अन्यथा हम जापान-विरोधी क्रान्तिकारी शक्तियों की रक्षा करने में समर्थ नहीं होंगे। लेकिन बहुत ज्यादा मारकाट नहीं होनी चाहिए और किसी भी

निर्दोष व्यक्ति को अपराधी नहीं ठहराया जाना चाहिए। प्रतिक्रिया-वादियों के बीच ढुलमुल तत्वों और अनिच्छा से अनुसरण करने वाले लोगों के साथ हमें नरमी से बरताव करना चाहिए। अपराधियों पर मुकदमा चलाते समय उनको दिया जाने वाला शारीरिक दण्ड दृढ़ता से समाप्त कर दिया जाना चाहिए ; मुकदमे में प्रस्तुत किए गए प्रमाणों की गुरुता पर जोर देना चाहिए और आत्म-स्वीकृति को केवल यकीन के आधार पर सही नहीं मान लेना चाहिए। युद्ध में हमारे द्वारा बन्दी बनाए गए जापानी सैनिकों, कठपुतली सैनिकों या कम्युनिस्ट-विरोधी सैनिकों के प्रति हमारी नीति है केवल उन लोगों को छोड़कर जिनसे जनता अत्यन्त घृणा करती है और जो मृत्यु-दण्ड पाने लायक हैं तथा जिन्हें मृत्यु-दण्ड देने के आदेश की पुष्टि उच्च अधिकारियों द्वारा की जा चुकी है, बाकी सभी सैनिकों को रिहा कर देना। बन्दियों के बीच ऐसे लोगों की भारी संख्या को जिन्हें प्रतिक्रियावादी सेनाओं में शामिल होने के लिए मजबूर किया गया है किन्तु जो क्रान्ति का थोड़ा-बहुत समर्थन करते हैं, हमारी सेना की सेवा करने के लिए अपने पक्ष में मिला लेना चाहिए, बाकी लोगों को रिहा कर देना चाहिए और यदि वे हमारे खिलाफ लड़ाई में फिर से बन्दी बना लिए जाएं तो उन्हें फिर रिहा कर देना चाहिए। हमें उनको अपमानित नहीं करना चाहिए, उनकी व्यक्तिगत वस्तुओं को नहीं लेना चाहिए या उनको अपने विचार बदलने के लिए मजबूर नहीं करना चाहिए, बल्कि बिना किसी अपवाद के उनके साथ निश्छलता और नरमी का बरताव करना चाहिए। चाहे वे कितने ही प्रतिक्रियावादी क्यों न हों, हमारी नीति यही रहनी चाहिए। प्रतिक्रियावादियों के खेमे को अलगाव की स्थिति में डालने के लिए

यह अत्यन्त उपयोगी है। जहां तक गद्दारों का सवाल है, उन लोगों को छोड़कर जिन्होंने नृशंस अपराध किए हैं, बाकी लोग यदि अपनी कम्युनिस्ट-विरोधी गतिविधियों का परित्याग कर देते हैं तो उन्हें सुधरने का मौका देना चाहिए ; और यदि वे वापस लौटकर क्रान्ति की पांतों में शामिल होने की इच्छा जाहिर करते हैं तो उन्हें दुबारा अपनाया जा सकता है, किन्तु उन्हें फिर से पार्टी में शामिल होने की इजाजत नहीं देनी चाहिए। क्वोमिन्ताङ के आम खुफिया एजेन्टों को और जापानी जासूसों व चीनी गद्दारों को एक ही नजर से नहीं देखा जाना चाहिए ; इन दोनों के स्वरूप में फर्क किया जाना चाहिए और उसी के अनुरूप उनके साथ बरताव किया जाना चाहिए। गड़बड़ी की ऐसी स्थिति को जिसमें कोई भी सरकारी या गैर-सरकारी संगठन गिरफ्तारियां कर सकता है, समाप्त किया जाना चाहिए। प्रतिरोध-युद्ध के हित में क्रान्तिकारी व्यवस्था की स्थापना करने के लिए यह बात तय कर दी जानी चाहिए कि गिरफ्तारियां करने का अधिकार, युद्ध की कार्यवाही में संलग्न सैनिक यूनिटों को छोड़कर केवल सरकार के न्याय-विभाग या सार्वजनिक सुरक्षा विभाग को ही प्राप्त होगा।

जनता के अधिकार। यह बात तय कर दी जानी चाहिए कि उन सभी जमींदारों और पूंजीपतियों को, जो जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के खिलाफ नहीं हैं, वही वैयक्तिक अधिकार व सम्पत्ति-सम्बन्धी अधिकार और मतदान का अधिकार प्राप्त होंगे तथा वही भाषण, सभा, संगठन, राजनीतिक आस्था और धार्मिक विश्वास की आजादियां प्राप्त होंगी जो मजदूरों और किसानों को प्राप्त हैं। सरकार केवल हमारे आधार-क्षेत्रों में तोड़फोड़ करने वाले और दंगे करने वाले लोगों के खिलाफ ही कार्यवाही करेगी तथा बाकी सभी लोगों की रक्षा करेगी और उनको सताएगी नहीं।

आर्थिक नीति। हमें सक्रिय रूप से उद्योग और कृषि का विकास करना चाहिए और वस्तुओं के वितरण को प्रोत्साहित करना चाहिए। यदि पूंजीपति हमारे जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों में आकर अपना कारोबार शुरू करने के इच्छुक हों तो उन्हें ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। निजी कारोबार को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए तथा राजकीय कारोबारों को हमारी अर्थव्यवस्था का केवल एक भाग समझा जाना चाहिए। इन सबके पीछे हमारा उद्देश्य आत्मनिर्भरता हासिल करना है। इस बात की सावधानी बरती जानी चाहिए कि किसी भी उपयोगी कारोबार को नुकसान न पहुंचने पाए। हमारी चुंगी नीति और मुद्रा नीति दोनों ही को कृषि, उद्योग तथा व्यापार का विकास करने की हमारी बुनियादी नीति के अनुरूप होना चाहिए और उसके विपरीत नहीं होना चाहिए। अपरिष्कृत और असावधानीपूर्ण ढंग से नहीं, बल्कि निष्ठापूर्ण और सावधानीपूर्ण ढंग से अर्थव्यवस्था का संगठन करके आत्म-निर्भरता हासिल करना हमारे आधार-क्षेत्रों को एक लम्बे काल तक बनाए रखने के लिए एक आवश्यक तत्व है।

सांस्कृतिक और शैक्षणिक नीति। यह नीति विशाल जन-समुदाय के बीच, प्रतिरोध-युद्ध के लिए आवश्यक ज्ञान और कौशल को तथा राष्ट्रीय स्वाभिमान की भावना को बढ़ाने और प्रसारित करने के कार्य पर केन्द्रित होनी चाहिए। पूंजीवादी-उदारपंथी शिक्षकों, सांस्कृतिक जगत के व्यक्तियों, पत्रकारों, विद्वानों और तकनीकी विशेषज्ञों को हमारे आधार-क्षेत्रों में आने तथा स्कूलों व समाचारपत्रों

के संचालन और अन्य कार्यों में हमारे साथ सहयोग करने की इजाजत दी जानी चाहिए। जापान का प्रतिरोध करने के लिए थोड़ा-बहुत उत्साह प्रकट करने वाले सभी बुद्धिजीवियों और विद्यार्थियों को हमें अपने विद्यालयों में दाखिल करना चाहिए, उन्हें कम अवधि में पूरी हो जाने वाली ट्रेनिंग देनी चाहिए और तत्पश्चात सेना, सरकार या जन-संगठनों में कार्य करने के लिए उनकी नियुक्ति कर देनी चाहिए ; हमें साहस के साथ उनको अपनी ओर मिला लेना चाहिए, उन्हें काम सौंपना चाहिए तथा उनकी पदोन्नति करनी चाहिए। प्रतिक्रियावादियों द्वारा मौका पाकर हमारे बीच घुस आने के खतरे के बारे में हमको जरूरत से ज्यादा सावधान या अत्यधिक भयभीत नहीं होना चाहिए। अनिवार्य रूप से कुछ ऐसे तत्व हमारे बीच घुस आएंगे, किन्तु अध्ययन और कार्य के दौरान उनको निकाल बाहर करने का मौका हमें मिल जाएगा। प्रत्येक आधार-क्षेत्र को अपना छापाखाना स्थापित करना चाहिए, पुस्तकों और समाचारपत्रों का प्रकाशन करना चाहिए तथा उनका वितरण करने और उन्हें पाठकों तक पहुंचाने की व्यवस्था करनी चाहिए। जहां तक सम्भव हो सके, प्रत्येक आधार-क्षेत्र को कार्यकर्ताओं की ट्रेनिंग के लिए बड़े-बड़े स्कूल खोलने चाहिए, तथा ये स्कूल जितने अधिक और बड़े हों, उतना ही अच्छा है।

सैन्य नीति। आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना का अधिकतम प्रसार किया जाना चाहिए, क्योंकि वे जापानी-आक्रमण-विरोधी राष्ट्रीय युद्ध को चलाने में चीनी जनता की सबसे विश्वसनीय सशस्त्र सैन्य-शक्तियां हैं। जब तक क्वोमिन्ताङ की फौजें हम पर प्रहार न करें तब तक उन पर प्रहार न करने की अपनी नीति को

हमें जारी रखना चाहिए तथा उन्हें अपना मित्र बनाने के लिए हमें हर सम्भव उपाय करना चाहिए। हमारी सेना के निर्माण में सहायता करने के लिए, हमसे हमदर्दी रखने वाले अफसरों को, चाहे वे क्वोमिन्ताङ के सदस्य हों, चाहे उनका किसी दल से सम्बन्ध न हो, आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना में शामिल करने में हमें कोई कसर न उठा रखनी चाहिए। हमारी सेनाओं में मौजूद ऐसी स्थिति को जिसमें केवल अधिक संख्या के आधार पर हर चीज पर कम्युनिस्टों का दखल विद्यमान रहता है, बदलने के लिए कुछ न कुछ अवश्य किया जाना चाहिए। निस्सन्देह, हमारी मुख्य सेनाओं में "तीन-तिहाई व्यवस्था" लागू नहीं की जानी चाहिए, किन्तु जब तक सेना का नेतृत्व हमारी पार्टी के हाथ में बना रहता है (यह एक अनिवार्य और अलंघनीय आवश्यकता है) तब तक हमारी सेना के सैन्य और तकनीकी विभागों का निर्माण करने के कार्य में भारी संख्या में हमदर्दों के शामिल होने से भयभीत होने की कोई जरूरत नहीं है। आज, जबकि हमारी पार्टी और हमारी सेना की विचारधारात्मक और संगठनात्मक बुनियादें मजबूती से डाली जा चुकी हैं, हमारी पांतों में हमदर्दों को (बेशक, तोड़फोड़ करने वाले लोगों को नहीं) भारी तादाद में शामिल किए जाने से न केवल कोई खतरा नहीं है, बल्कि यह सचमुच एक अनिवार्य नीति है, क्योंकि अगर ऐसा नहीं किया गया तो समूचे देश की हमदर्दी हासिल करना और अपनी क्रान्तिकारी शक्तियों का प्रसार करना हमारे लिए असम्भव हो जाएगा।

संयुक्त मोर्चे की कार्यनीति के इन सभी उसूलों और इनके अनुरूप निर्धारित की गई ठोस नीतियों को समूची पार्टी द्वारा दृढ़ता से लागू

किया जाना चाहिए। आज, जबकि जापानी आक्रमणकारी चीन के विरुद्ध अपने आक्रमण को और ज्यादा तेज कर रहे हैं तथा बड़े जमींदारों का वर्ग और बड़े पूंजीपतियों का वर्ग कम्युनिस्ट पार्टी और जनता के प्रति दमनकारी नीतियां चला रहे हैं और उन पर सशस्त्र प्रहार कर रहे हैं, जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को जारी रखने, संयुक्त मोर्चे का विस्तार करने, समूची जनता की हमदर्दी हासिल करने तथा वर्तमान स्थिति को बेहतर बनाने का एकमात्र उपाय है कार्यनीति के उन उसूलों और ठोस नीतियों को लागू करना जिनकी रूपरेखा ऊपर स्पष्ट की गई है। लेकिन गलतियों को सुधारते समय हमें कदम-ब-कदम चलना चाहिए, और ऐसी जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए जिससे कार्यकर्ताओं के बीच असन्तोष पैदा हो जाए, जनता के बीच अविश्वास उत्पन्न हो जाए, जमींदारों द्वारा जवाबी प्रहार शुरू हो जाए तथा अन्य अवांछनीय घटनाएं घटित होने लगें।

नोट

१ वाङ ई-थाङ उत्तरी युद्ध-सरदारों के जमाने का एक बड़ा नौकरशाह तथा जापान-परस्त गद्दार था। १९३५ के उत्तरी चीन घटना-क्रम के बाद च्याङ काई-शेक ने क्वोमिन्ताङ सरकार की नौकरी करने के लिए उसे सेवानिवृत्ति से फिर वापस बुला लिया। १९३८ में उसने उत्तरी चीन में एक जापानी कठपुतली के रूप में काम किया तथा उसे बोगस "उत्तरी चीन राजनीतिक परिषद" का अध्यक्ष बना दिया गया।

२ शि यूश्रो-सान एक क्वोमिन्ताङ युद्ध-सरदार था जो अक्सर चोला बदलता रहता था। जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध शुरू होने के बाद वह क्वोमिन्ताङ के दसवें सेना-ग्रुप का प्रधान सेनापति रहा; उसने हपे प्रान्त के दक्षिणी हिस्से में जापानी सशस्त्र सेनाओं के साथ सांठगांठ करके आठवीं राह सेना पर प्रहार करने, जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता के संगठनों का विनाश करने और कम्युनिस्टों व प्रगतिशील व्यक्तियों का कत्लेआम करने के अलावा और कुछ भी नहीं किया।

दक्षिणी आनह्वेइ घटना के बारे में आदेश और वक्तव्य

जनवरी १९४१

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के क्रान्तिकारी फौजी कमीशन का आदेश

येनान, २० जनवरी १९४१

राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना की नई चौथी सेना ने प्रतिरोध-युद्ध में अपनी अनूठी सेवाओं के जरिए देश-विदेश में ख्याति प्राप्त कर ली है। कमाण्डर ये थिङ ने दुश्मन के खिलाफ सेना का नेतृत्व करने में एक अद्वितीय रिकार्ड कायम किया है। लेकिन हाल ही में जब यह सेना आदेश का पालन करते हुए उत्तर की ओर कूच कर रही थी, उस समय जापान-परस्त गुट ने विश्वासघात करके इस सेना पर अचानक हमला कर दिया तथा कमाण्डर ये थिङ को, जो लड़ते-लड़ते घायल हो गए थे और थककर चूर हो गए थे, जेल में बन्द कर दिया। इस सेना की पहली टुकड़ी के कमाण्डर छन ई और सेना के चीफ आफ स्टाफ चाङ युन-ई द्वारा भेजे गए तारों के जरिए दक्षिणी आनह्वेइ घटना की समूची जानकारी प्राप्त करने के बाद, कमीशन इस घटना के प्रति अपना भारी रोष तथा हमारे साथियों

के प्रति अपनी गहरी व्यग्रता प्रकट करता है। जापान-परस्त गुट द्वारा प्रतिरोध-युद्ध को तहस-नहस करने, जनता की सशस्त्र सैन्य-शक्तियों पर प्रहार करने और गृहयुद्ध छेड़ने के लिए किए गए भारी जुर्म से निपटने के लिए अपनाए जाने वाले उपायों के अलावा, कमीशन छन ई को राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना की नई चौथी सेना का कार्यवाहक कमाण्डर, चाङ युन-ई को डिप्टी कमाण्डर, लाइ छ्वान-चू को चीफ आफ स्टाफ और तङ चि-ह्वेइ को राजनीतिक विभाग का निर्देशक नियुक्त करता है। कार्यवाहक कमाण्डर छन ई और उनके सहयोगियों को हिदायत दी जाती है कि वे अपनी कोशिशें सेना को मजबूत बनाने, उसकी पांतों की एकता को सुदृढ़ बनाने, जनता के साथ उसके अच्छे सम्बन्ध कायम करने, तीन जन-सिद्धान्तों पर अमल करने, डा० सुन यात-सेन की वसीयत पर कायम रहने और जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे को सुदृढ़ और विस्तृत करने के कार्य में लगा दें तथा अपनी जनता और अपने देश की रक्षा करने, प्रतिरोध-युद्ध अन्त तक चलाने और जापान-परस्त गुट द्वारा किए जाने वाले हमलों से अपने को बचाने के लिए संघर्ष करें।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के क्रान्तिकारी फौजी कमीशन के प्रवक्ता द्वारा शिनह्वा समाचार एजेन्सी के संवाददाता को दिया गया वक्तव्य

२२ जनवरी १९४१

हाल ही में हुई कम्युनिस्ट-विरोधी दक्षिणी आनह्वेइ घटना की तैयारी काफी लम्बे समय से चल रही थी। वर्तमान घटना-विकास

एक राष्ट्रव्यापी संकट-काल का महज एक प्रारम्भिक दौर है। जब से जापानी आक्रमणकारियों ने जर्मनी और इटली के साथ अपना त्रिपक्षीय संश्रय[1] कायम किया है, तब से उन्होंने चीन में परिवर्तन लाने की अपनी कोशिशें बेहद बढ़ा दी हैं, ताकि चीन-जापान युद्ध का निर्णय जल्दी ही हो जाए। उनका मकसद है जापान-विरोधी आन्दोलन को कुचलने के लिए खुद चीनियों को ही इस्तेमाल करना तथा जापान द्वारा दक्षिण की ओर कूच करने के लिए उसके पृष्ठभाग को मजबूत बनाना, ताकि वह बरतानिया के खिलाफ हिटलर की आक्रमणात्मक कार्यवाही के साथ तालमेल कायम करने के लिए दक्षिण की तरफ आजादी से अभियान कर सके। जापान-परस्त गुट के बहुत से सरगनाओं ने क्वोमिन्ताङ के पार्टी, सरकार व सेना के संगठनों में काफी समय से पांव जमाए हुए हैं तथा वे लोग दिन-रात सरगरमियां कर रहे हैं। उनके षड्यंत्र की तैयारी पिछले वर्ष के अन्त तक पूरी हो चुकी थी। दक्षिणी आनह्वेइ में नई चौथी सेना की यूनिटों पर हमला करना तथा १७ जनवरी का प्रतिक्रियावादी आदेश जारी करना इस षड्यंत्र की केवल पहली खुली निशानियां हैं। अब एक के बाद एक अत्यन्त गम्भीर घटनाएं होंगी। जापानी आक्रमणकारियों और जापान-परस्त गुट के षड्यंत्र का विस्तृत विवरण क्या है? वह इस प्रकार है:

(१) हो इङ-छिन और पाए छुङ-शी की तरफ से चू तेह, फङ त-ह्वाए, ये थिङ और श्याङ इङ के नाम १९ अक्तूबर और ८ दिसम्बर को भेजे गए दो तारों[1] को प्रकाशित करना, जिससे लोकमत तैयार किया जा सके।

(२) गृहयुद्ध छेड़ने की तैयारी करने के लिए समाचारपत्रों

में फौजी अनुशासन और फौजी आदेशों का पालन करने के महत्व का प्रचार करना।

(३) दक्षिणी आनह्वेइ में स्थित नई चौथी सेना की यूनिटों का सफाया कर देना।

(४) यह ऐलान करना कि नई चौथी सेना ने "बगावत" कर दी है, तथा उसके सरकारी नाम को खत्म कर देना।

ये चारों कदम उठाए जा चुके हैं।

(५) थाङ अन-पो, ली फिन-श्येन, वाङ चुङ-ल्येन और हान त-छिन को मध्य चीन की "कम्युनिस्ट दमनकारी" विभिन्न राह सेनाओं के कमाण्डरों के रूप में नियुक्त करना तथा ली चुङ-रन को सर्वोच्च सेनापति के रूप में नियुक्त करना, ताकि जापानी फौजों के घनिष्ठ सहयोग से फङ श्वे-फङ, चाङ यून-ई और ली श्येन-न्येन के अधीन नई चौथी सेना की यूनिटों पर हमला किया जा सके तथा यदि इसमें कामयाबी हासिल हो जाए तो और आगे बढ़कर आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना की शानतुङ और उत्तरी च्याङसू स्थित यूनिटों पर हमला किया जा सके।

यह कदम फिलहाल उठाया जा रहा है।

(६) यह ऐलान करने के लिए बहाना खोजना कि आठवीं राह सेना ने "बगावत" कर दी है, उसके सरकारी नाम को खत्म कर देना तथा चू तेह और फङ त-ह्वाए की गिरफ्तारी का आदेश जारी कर देना।

इस कदम की फिलहाल तैयारी की जा रही है।

(७) छुङकिङ, शीआन और क्वेइलिन में आठवीं राह सेना के सम्पर्क कार्यालयों को बन्द कर देना तथा चओ ऐन-लाइ, ये च्येन-

इङ, तुङ पी-ऊ और तङ इङ-छाओ को गिरफ्तार कर लेना।

यह कदम क्वेइलिन में सम्पर्क कार्यालय बन्द करने की कार्यवाही के साथ शुरू हो गया है।

(८) "नव चीन दैनिक" को बन्द कर देना।

(९) शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र पर आक्रमण करना और येनान पर कब्जा कर लेना।

(१०) छुङकिङ और विभिन्न प्रान्तों में जापान का प्रतिरोध करने का पक्षपोषण करने वाले जाने-माने लोगों को भारी तादाद में गिरफ्तार करना तथा जापान-विरोधी आन्दोलन को कुचल देना।

(११) सभी प्रान्तों में कम्युनिस्ट पार्टी के संगठनों को तहस-नहस कर देना और भारी तादाद में कम्युनिस्टों की पकड़-धकड़ करना।

(१२) मध्य और दक्षिणी चीन से जापानी फौजों के पीछे हटने पर, क्वोमिन्ताङ सरकार द्वारा "खोए हुए प्रदेशों को फिर से प्राप्त किए जाने" का ऐलान करना तथा साथ ही तथाकथित "सम्मानपूर्ण शान्ति" की स्थापना की आवश्यकता का प्रचार करना।

(१३) जापान द्वारा अपनी फौजें मध्य और दक्षिणी चीन से कुमक के तौर पर उत्तरी चीन में ले जाकर आठवीं राह सेना पर अत्यन्त भीषण हमला करना तथा क्वोमिन्ताङ फौजों के साथ सहयोग कायम करके समूची आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना को नेस्तनाबूद कर देना।

(१४) आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना पर लगातार आक्रमण जारी रखने के साथ-साथ, क्वोमिन्ताङ फौजों और जापानी

फौजों के बीच सभी मोर्चों पर गत वर्ष की लड़ाईबन्दी की स्थिति जारी रखना ताकि उसे एक आम युद्ध-विराम और शान्तिपूर्ण समझौता-वार्ता की स्थिति में बदला जा सके।

(१५) क्वोमिन्ताङ सरकार द्वारा जापान के साथ एक शान्ति सन्धि पर हस्ताक्षर करना और त्रिपक्षीय संश्रय में उसका शामिल हो जाना।

ये कदम उठाने के लिए आजकल सक्रियता से तैयारियां की जा रही हैं।

ऐसी है जापान और जापान-परस्त गुट के षड्यंत्र की सामान्य रूपरेखा। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने अपने ७ जुलाई १९३९ के घोषणापत्र में बताया है : "वर्तमान परिस्थिति में आत्मसमर्पणवाद सबसे बड़ा खतरा है, तथा कम्युनिज्म-विरोध आत्मसमर्पण की तैयारी के लिए उठाया जाने वाला कदम है।" ७ जुलाई १९४० के घोषणापत्र में कहा गया है : "आत्मसमर्पण का खतरा पहले कभी इतने गम्भीर रूप में पैदा नहीं हुआ जितना कि वह आज है, तथा प्रतिरोध-युद्ध की कठिनाइयां पहले कभी इतनी बड़ी नहीं रहीं जितनी कि वे आज हैं।" चू तेह, फङ त-ह्वाए, ये थिङ और श्याङ इङ ने गत वर्ष अपने ९ नवम्बर के तार[१] में यह बात और अधिक ठोस रूप में पेश की थी :

> देश में कुछ लोग आत्मसमर्पण के लिए रास्ता साफ करने की कोशिश में एक नए कम्युनिस्ट-विरोधी हमले की साजिश रच रहे हैं।... वे चीन और जापान द्वारा "कम्युनिस्टों का दमन करने" के तथाकथित संयुक्त प्रयत्नों के जरिए प्रतिरोध-युद्ध को समाप्त करना चाहते हैं। वे प्रतिरोध-युद्ध की जगह गृहयुद्ध को देना चाहते हैं, स्वाधीनता की जगह आत्मसमर्पण को देना चाहते हैं, एकता की जगह फूट को देना चाहते हैं और रोशनी की जगह अंधेरे को देना चाहते हैं। उनकी सरगरमियां दुष्टतापूर्ण हैं और उनके मनसूबे कुटिलतापूर्ण हैं। लोग एक दूसरे को समाचार सुनाते हैं और भयभीत हो उठते हैं। निस्सन्देह, परिस्थिति इतनी नाजुक कभी नहीं रही जितनी कि आज है।

इस प्रकार दक्षिणी आनह्वेइ घटना और छुङकिङ स्थित फौजी परिषद का १७ जनवरी का आदेश सिलसिलेवार अनेक घटनाओं की महज एक शुरुआत हैं। खास तौर से १७ जनवरी के आदेश का गम्भीर राजनीतिक अर्थ है। इस तथ्य से कि इस प्रतिक्रान्तिकारी आदेश को जारी करने वाले लोगों ने खुलेआम ऐसा करने की जुर्रत की और व्यापक निन्दा का खतरा उठाया, यह जाहिर होता है कि वे पूरी दरार पैदा करने और सरासर आत्मसमर्पण करने का इरादा कर चुके थे। कारण, चीन में बड़े जमींदारों और बड़े पूंजीपतियों के कमजोर वर्गों के राजनीतिक प्रतिनिधि, अपने आकाओं के बिना एक इंच भी आगे नहीं सरक सकते, उनके द्वारा इतनी बड़ी जिम्मेदारी उठाए जाने का तो सवाल ही नहीं उठता जिसने सारी दुनिया को हिला दिया है। वर्तमान परिस्थिति में यह बहुत मुश्किल नजर आता है कि जिन लोगों ने उक्त आदेश जारी किया उनके इरादे बदल दिए जाएं, तथा समूचे राष्ट्र की फौरी कार्यवाही और जोरदार अन्तरराष्ट्रीय राजनयिक दबाव के बिना

शायद ऐसा करना बिलकुल असम्भव है। अतएव समूचे राष्ट्र के सामने फौरी कार्य यह है कि वह परिस्थिति-विकास पर अत्यन्त सतर्कता से ध्यान दे तथा प्रतिक्रियावादियों द्वारा पैदा की जाने वाली किसी भी संकटकालीन स्थिति का सामना करने को तैयार रहे ; इसमें जरा भी लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए। जहां तक चीन के भविष्य का सवाल है, यह मामला बिलकुल स्पष्ट है। यदि जापानी आक्रमणकारी और जापान-परस्त गुट अपने षड्यंत्र में सफल भी हो गए, तो भी हम चीनी कम्युनिस्ट और चीनी जनता उन्हें अपने अत्याचारी शासन को अनिश्चित काल तक कायम नहीं रखने देंगे ; न सिर्फ हमारा यह फर्ज है कि हम परिस्थिति को काबू में कर लेने के लिए आगे बढ़ें, बल्कि ऐसा करने की अपनी क्षमता पर भी हमें पूरा भरोसा है। परिस्थिति चाहे कितनी ही अंधकारपूर्ण क्यों न हो, रास्ता चाहे कितना ही कांटोंभरा क्यों न हो और इस रास्ते में चाहे कितनी ही कीमत क्यों न चुकानी पड़े (नई चौथी सेना की यूनिटों की दक्षिणी आनह्वेइ में हुई क्षति इस कीमत का एक हिस्सा है), जापानी आक्रमणकारियों और जापान-परस्त गुट का विनाश अवश्य होगा। इसके कारण ये हैं :

(१) चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को अब आसानी से धोखा नहीं दिया जा सकता और कुचला नहीं जा सकता, जैसा कि १९२७ में होता था। अब यह एक प्रमुख पार्टी बन चुकी है जो मजबूती के साथ अपने पैरों पर खड़ी है।

(२) अन्य पार्टियों व ग्रुपों (जिनमें क्वोमिन्ताङ भी शामिल है) के बहुत से सदस्य, जो राष्ट्रीय गुलामी की घोर विपत्ति से चिन्तित हैं, निश्चय ही आत्मसमर्पण और गृहयुद्ध नहीं करना चाहते। कुछ लोगों की आंखों में कुछ समय के लिए धूल झोंकी जा चुकी है, लेकिन समय बीतने पर उन्हें अक्ल आ सकती है।

(३) यही बात फौजों के बारे में भी कही जा सकती है। उनमें ज्यादातर फौजें ऐसी हैं जो मजबूर होकर कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध करती हैं।

(४) चीनी जनता की विशाल बहुसंख्या विदेशी राष्ट्र की गुलाम हरगिज नहीं बनना चाहती।

(५) साम्राज्यवादी युद्ध एक महान परिवर्तन की पूर्ववेला में पहुंच चुका है। साम्राज्यवाद पर निर्भर रहने वाली जोंकों का इस समय चाहे कितना ही बोलबाला क्यों न हो, जल्दी ही उन्हें महसूस होने लगेगा कि उनके आका विश्वसनीय नहीं हैं। जब पेड़ गिर जाएगा और बन्दर तितर-बितर हो जाएंगे, तो समूची परिस्थिति बदल जाएगी।

(६) अनेक देशों में क्रान्ति का छिड़ना सिर्फ समय का सवाल है, तथा यह निश्चित है कि विजय के लिए किए जाने वाले मुश्तरका संघर्ष के दौरान ये क्रान्तियां और चीनी क्रान्ति एक दूसरे का समर्थन करेंगी।

(७) सोवियत संघ दुनिया की सबसे बलशाली शक्ति है, तथा वह प्रतिरोध-युद्ध को अन्त तक चलाने में चीन को निश्चित रूप से सहायता देगा।

इन सभी कारणों से हमें उम्मीद है कि जो लोग आग से खेल रहे हैं वे घमण्ड में चूर नहीं होंगे। अब हम उन्हें औपचारिक रूप से यह चेतावनी देते हैं : जरा सम्भल जाओ। यह आग कोई खेलने की चीज नहीं है। अपनी खुद की चमड़ी को बचाओ ! अगर तुमने

ठंडे दिमाग से इस मामले पर विचार किया, तो तुम्हें तुरन्त गम्भीरता के साथ निम्नलिखित कदम उठाने होंगे :

(१) सर्वनाश के कगार पर खड़े अपने घोड़ों की लगाम खींच लो और अपने उकसावे बन्द कर दो।

(२) १७ जनवरी का प्रतिक्रियावादी आदेश वापस ले लो और खुलेआम कबूल करो कि तुम बिलकुल गलत थे।

(३) हो इङ-छिन, कू चू-थुङ और शाङक्वान युन-श्याङ को सजा दो, जो दक्षिणी आनह्वेइ घटना के मुख्य अपराधी हैं।

(४) ये थिङ को रिहा करो और उन्हें नई चौथी सेना के कमाण्डर के पद पर फिर से बहाल करो।

(५) दक्षिणी आनह्वेइ में बन्दी बनाए गए तमाम सैनिकों और छीने गए तमाम हथियारों को नई चौथी सेना को लौटा दो।

(६) नई चौथी सेना के उन तमाम अफसरों व सिपाहियों को जो दक्षिणी आनह्वेइ में घायल हो गए थे तथा उन तमाम अफसरों व सिपाहियों के परिवारों को जो वहां मारे गए थे, हर्जाना दो।

(७) मध्य चीन से अपनी "कम्युनिस्ट दमनकारी" फौजों को वापस बुला लो।

(८) उत्तर-पश्चिम की नाकेबन्दी-पंक्ति[३] को खत्म कर दो।

(९) तमाम देशभक्त राजनीतिक बन्दियों को रिहा कर दो।

(१०) एक ही पार्टी की तानाशाही को खत्म करो और जनवादी सरकार कायम करो।

(११) तीन जन-सिद्धान्तों पर अमल करो और डा० सुन यात-सेन की वसीयत का पालन करो।

(१२) जापान-परस्त गुट के सरगनाओं को गिरफ्तार करो

और देश के कानून के मुताबिक उन पर मुकदमा चलाओ।

इसमें कोई शक नहीं कि अगर इन बारह बातों पर अमल किया जाए तो स्थिति फिर से आम दिनों जैसी हो जाएगी, और हम कम्युनिस्ट व समूची जनता निश्चित रूप से मामलों को हद से बाहर नहीं जाने देंगे। वरना "मुझे डर है कि ची सुन की कठिनाइयां च्वानय्वी से नहीं पैदा होंगी बल्कि घर में ही पैदा हो जाएंगी"[४]; दूसरे शब्दों में प्रतिक्रियावादी लोग पत्थर उठाकर खुद अपने ही पांव तोड़ बैठेंगे, और तब हम चाहते हुए भी उनकी कोई सहायता नहीं कर पाएंगे। हम सहयोग की कद्र करते हैं, लेकिन उनको भी सहयोग की अहमियत को समझना चाहिए। साफ-साफ कहें तो हमारे द्वारा रियायतें दिए जाने की भी एक सीमा है ; अब हमारे द्वारा रियायतें दिए जाने की स्थिति खत्म हो चुकी है। उन्होंने पहली चोट की है, और यह एक करारी चोट है। अगर उन्हें अपने भविष्य के बारे में जरा भी चिन्ता है तो उन्हें खुद आगे बढ़कर मरहम-पट्टी करनी चाहिए। "अगर कुछ भेड़ों के खो जाने के बाद भी बाड़े को ठीक-ठाक कर लिया जाता है तो इसे गनीमत समझना चाहिए"। उनके लिए यह एक जिन्दगी और मौत का सवाल है, और हम ऐसा महसूस करते हैं कि हमें यह आखिरी सलाह उन्हें दे देनी चाहिए। लेकिन अगर उन्हें अपनी करनी का पछतावा नहीं होता और वे अपनी गलत कार्यवाहियां जारी रखते हैं, तो चीन की जनता बरदाश्त की सीमा खत्म हो जाने के कारण उन्हें उठाकर कूड़े-करकट के ढेर में फेंक देगी, और फिर इसके बाद पछताने से कुछ नहीं बनेगा। जहां तक नई चौथी सेना का ताल्लुक है, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के क्रान्तिकारी फौजी कमीशन ने २० जनवरी

को एक आदेश जारी करके छन ई को कार्यवाहक कमाण्डर, चाङ युन-ई को डिप्टी कमाण्डर, लाइ छ्वान-चू को चीफ ग्राफ स्टाफ और तङ चि-ह्वेइ को राजनीतिक विभाग का निर्देशक नियुक्त कर दिया है। नई चौथी सेना के ९०,००० से ज्यादा सैनिक अभी मध्य चीन और च्याङसू के दक्षिणी भाग में मौजूद हैं, वह जापानी आक्रमणकारियों तथा कम्युनिस्ट-विरोधी फौजों के संड़सीनुमा हमलों के बावजूद तमाम कठिनाइयों का मुकाबला करते हुए बराबर लड़ती रहेगी और अपने राष्ट्र की वफादारी से सेवा करने में कभी नहीं चूकेगी। इस बीच उसकी बिरादराना सेना की यूनिटें, आठवीं राह सेना की यूनिटें, उसे संड़सीनुमा हमलों का शिकार होते देखकर चुपचाप नहीं बैठी रहेंगी, बल्कि उसे जरूरी सहायता देने के लिए निश्चित रूप से उचित कदम उठाएंगी – यह मैं दो टूक कह सकता हूं। जहां तक छुङकिङ की फौजी परिषद के प्रवक्ता द्वारा दिए गए बयान का ताल्लुक है, उसके बारे में महज यही टिप्पणी की जा सकती है कि उसमें परस्पर-विरोधी बातें कही गई हैं। जहां एक तरफ छुङकिङ की फौजी परिषद ने अपने आदेश में यह कहा कि नई चौथी सेना ने "बगावत" कर दी है, वहां दूसरी तरफ प्रवक्ता ने यह कहा कि नई चौथी सेना का लक्ष्य नानकिङ-शांघाई-हाङचाो त्रिकोण क्षेत्र में प्रवेश करना है ताकि वहां एक आधार-क्षेत्र कायम किया जा सके। अब फर्ज कीजिए कि हम उसकी बात मान लेते हैं, तो क्या नानकिङ-शांघाई-हाङचाो त्रिकोण क्षेत्र में प्रवेश करने को "बगावत" कहा जा सकेगा ? छुङकिङ के उस खरदिमाग प्रवक्ता ने इतना भी नहीं सोचा कि उस इलाके में नई चौथी सेना आखिर किसके खिलाफ बगावत करेगी ? क्या यह इलाका जापानियों

के कब्जे में नहीं है ? तब फिर आप नई चौथी सेना को उस इलाके में जाने से क्यों रोकते हैं और दक्षिणी आनह्वेइ में ही उसका सफाया क्यों कर डालना चाहते हैं ? हां, निस्सन्देह ! जापानी साम्राज्यवाद के वफादार चाकर आखिर यही तो किया करते हैं। इसीलिए एक सफाया-मुहिम में उन्होंने सात डिवीजनें जमा करने की योजना बनाई, इसीलिए उन्होंने १७ जनवरी का आदेश जारी किया और इसीलिए उन्होंने ये थिङ पर मुकदमा चलाया। इसके बावजूद मैं अब भी यही कहता हूं कि छुङकिङ का प्रवक्ता बिलकुल मूर्ख है, बिना किसी किस्म के दबाव के उसने खुद ही सारा भेद खोल दिया है और इस प्रकार सारी जनता के सामने जापानी साम्राज्यवाद की साजिशों को बेनकाब कर दिया है।

नोट

१ त्रिपक्षीय संश्रय से तात्पर्य है जर्मनी, इटली और जापान के बीच २७ सितम्बर १९४० को बरलिन में हुई त्रिपक्षीय फौजी सन्धि।

२ ये दोनों बदनाम तार १९४० की सरदियों में च्याङ काई-शेक द्वारा उस समय भेजे गए जब उसने दूसरा कम्युनिस्ट-विरोधी हमला शुरू किया, तथा इन पर क्वोमिन्ताङ सरकार की फौजी परिषद के चीफ और डिप्टी चीफ आफ जनरल स्टाफ हो इङ-छिन और पाए छुङ-शी के हस्ताक्षर थे। १९ अक्तूबर के तार में दुश्मन द्वारा अधिकृत क्षेत्रों में दृढ़तापूर्वक लड़ रही आठवीं राह सेना और नई चौथी सेना पर बड़ी बेशरमी के साथ लांछन लगाए गए थे तथा उनकी फौजी यूनिटों को, जो पीली नदी के दक्षिण में दुश्मन द्वारा अधिकृत क्षेत्रों में जापानियों के खिलाफ लड़ रही थीं, जबरन आदेश दिया गया था कि वे एक निश्चित तारीख

तक पीली नदी के उत्तर में चली जाएं। सशस्त्र प्रतिरोध के लिए एकता के हित में कामरेड चू तेह, कामरेड फङ त-ह्वाए, कामरेड ये थिङ और कामरेड श्याङ इङ ने ६ नवम्बर को हो इङ-छिन और पाए छुङ-शी के नाम भेजे गए अपने मुश्तरका जवाब में यह मान लिया कि वे दक्षिणी आनह्वेइ में स्थित अपनी फौजों को उत्तर में हटा लेंगे, लेकिन इसके साथ ही उन्होंने उक्त लांछनों का मुंहतोड़ जवाब भी दिया। ८ दिसम्बर का तार, जिस पर हो इङ-छिन और पाए छुङ-शी के हस्ताक्षर थे और जो ६ नवम्बर के तार का जवाब था, कम्युनिस्ट-विरोधी लोकमत तैयार करने का दूसरा प्रयत्न था।

[१] यह नाकेबन्दी-पंक्ति क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों द्वारा शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र के चारों तरफ कायम की गई थी। १९३९ से उन्होंने सीमान्त क्षेत्र के चारों ओर के लोगों को बेगार करने के लिए मजबूर किया तथा किलेबन्दियों, पत्थर की दीवारों और खन्दकों की पांच कतारें कायम कीं। यह नाकेबन्दी-पंक्ति पश्चिम में निङश्या से शुरू होकर दक्षिण में चिङश्वेइ नदी के साथ-साथ चलती हुई पूर्व में पीली नदी तक कई प्रान्तों में बनाई गई थी। दक्षिणी आनह्वेइ घटना की पूर्ववेला में इस सीमान्त क्षेत्र की घेरेबन्दी के लिए तैनात क्वोमिन्ताङ फौजों की तादाद बढ़ाकर २,००,००० से ज्यादा कर दी गई थी।

[४] यह उद्धरण "कनफ्यूशियस का सूक्ति-संग्रह" नामक रचना से लिया गया है। कनफ्यूशियस ने यह बात उस समय कही जब लू राज्य का मंत्री ची सुन पड़ोस के एक छोटे से राज्य च्वानय्वी पर हमला करने वाला था।

दूसरे कम्युनिस्ट-विरोधी हमले को परास्त करने के बाद की परिस्थिति*

१८ मार्च १९४१

१. दूसरा कम्युनिस्ट-विरोधी हमला,[१] जो हो इङ-छिन और पाए छुङ-शी के तार (गत वर्ष १९ अक्तूबर के तार) से शुरू हुआ, दक्षिणी आनह्वेइ घटना और च्याङ काई-शेक के १७ जनवरी के आदेश[२] के जरिए अपने चरम-बिन्दु पर पहुंच गया; च्याङ काई-शेक का ६ मार्च का कम्युनिस्ट-विरोधी भाषण और जन राजनीतिक परिषद का कम्युनिस्ट-विरोधी प्रस्ताव[३] उसकी पृष्ठरक्षक-कार्यवाहियां हैं। अब से सम्भवतया परिस्थिति अस्थाई तौर पर कुछ सुधर जाए। एक ऐसे समय जबकि विश्व के दो मुख्य साम्राज्यवादी गुटों के बीच एक निर्णयात्मक संघर्ष छिड़ने वाला है, चीन के बड़े पूंजीपतियों के वर्ग का वह भाग जो बरतानिया-परस्त और अमरीका-परस्त है तथा जो अब भी जापानी आक्रमणकारियों का विरोध करता है, अब यह जरूरी समझने लगा है कि क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के वर्तमान तनावपूर्ण सम्बन्धों में अस्थाई रूप से कुछ सुधार किया जाए। इसके अलावा

*यह अन्तःपार्टी निर्देश कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की तरफ से लिखा था।

क्वोमिन्ताङ, खुद अपने भीतर की परिस्थिति के कारण (उसके केन्द्रीय और स्थानीय सत्ताधिकारियों के बीच, सी० सी० गुट और राजनीति-विज्ञान ग्रुप के बीच, सी० सी० गुट और फू शिङ सोसायटी के बीच, कट्टरतावादियों और मध्यमार्गियों के बीच अन्तर-विरोध मौजूद हैं तथा सी० सी० गुट और फू शिङ सोसायटी के अपने अन्दर भी अन्तरविरोध मौजूद हैं), घरेलू परिस्थिति के कारण (व्यापक जन-समुदाय क्वोमिन्ताङ के अत्याचारी शासन का विरोध करता है और कम्युनिस्ट पार्टी से हमदर्दी रखता है), तथा हमारी पार्टी की नीति के कारण (विरोध-आन्दोलन जारी रखने की नीति के कारण), इन सम्बन्धों के तनाव को पिछले पांच महीनों की तरह चरम-बिन्दु पर कायम नहीं रख सकती। अतएव, इस समय च्याङ काई-शेक को अस्थाई रूप से तनाव कुछ कम करने की जरूरत है।

२. पिछले दिनों जो संघर्ष हुआ है उससे यह व्यक्त होता है कि क्वोमिन्ताङ की स्थिति में कुछ गिरावट आई है और कम्युनिस्ट पार्टी की स्थिति पहले से बेहतर हो गई है, तथा यह दोनों पार्टियों की तुलनात्मक शक्ति में हुए परिवर्तन का मुख्य तत्व है। इन सभी बातों ने च्याङ काई-शेक को मजबूर कर दिया है कि वह अपनी स्थिति और अपने रुख पर फिर से गौर करे। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा पर जोर देते हुए और इस बात का प्रचार करते हुए कि दलगत राजनीति अब पुरानी पड़ चुकी है, वह अपने आपको एक ऐसे "राष्ट्रीय नेता" के रूप में पेश कर रहा है जो घरेलू अन्तरविरोधों से ऊपर उठ चुका हो, तथा वह वर्ग और पार्टी के प्रति निष्पक्षता का स्वांग रच रहा है और इस प्रकार बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े

पूंजीपतियों के वर्ग और क्वोमिन्ताङ के शासन की हिफाजत करने का अपना मकसद पूरा करना चाहता है। लेकिन अगर उसकी यह कोशिश महज धोखाधड़ी साबित हुई और उसका मकसद नीति सम्बन्धी कोई असली परिवर्तन करना न हुआ, तो यह निश्चित है कि उसे कामयाबी हासिल नहीं होगी।

३. हाल ही के कम्युनिस्ट-विरोधी हमले के प्रारम्भिक काल में हमारी पार्टी ने आम लोगों के हितों को ध्यान में रखकर जो सुलह करने और रियायतें देने की नीति अपनाई (जैसा कि गत वर्ष ६ नवम्बर के तार में बताया गया) उसे व्यापक जनता की सहानुभूति प्राप्त हुई, तथा दक्षिणी आनह्वेइ घटना के बाद हमने जो जोरदार जवाबी हमला शुरू किया (जैसा कि हमारे द्वारा पेश की गई बारह मांगों के दो सैटों[४], जन राजनीतिक परिषद में शरीक होने से हमारे द्वारा इनकार किए जाने तथा देशव्यापी विरोध-आन्दोलन से जाहिर हो गया) उसे फिर एक बार समूची जनता का समर्थन प्राप्त हुआ। न्यायोचित आधार पर, अपना फायदा देखते हुए और संयत रूप से संघर्ष चलाने की हमारी यह नीति नवीनतम कम्युनिस्ट-विरोधी हमले को परास्त करने के लिए निहायत जरूरी थी, तथा यह उपयोगी भी साबित हो चुकी है। जब तक क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच के मुख्य मतभेदों का समुचित हल नहीं निकलता, तब तक हमें क्वोमिन्ताङ के जापान-परस्त और कम्युनिस्ट-विरोधी गुटों द्वारा रची गई दक्षिणी आनह्वेइ घटना के खिलाफ तथा उनके द्वारा किए गए सभी तरह के राजनीतिक व फौजी उत्पीड़न के खिलाफ सख्त विरोध जाहिर करने के अपने आन्दोलन को जारी रखने में और अपनी प्रथम

बारह मांगों के लिए प्रचार-कार्य बढ़ा देने में किसी किस्म की ढिलाई नहीं आने देनी चाहिए।

४. अपने द्वारा शासित क्षेत्रों में क्वोमिन्ताङ हमारी पार्टी का और अन्य प्रगतिशील व्यक्तियों का उत्पीड़न करने की अपनी नीति में तथा अपने कम्युनिस्ट-विरोधी प्रचार में हरगिज ढील नहीं आने देगी, अतएव हमारी पार्टी को अपनी सतर्कता बढ़ा लेनी चाहिए। ह्वाए नदी के उत्तर में स्थित क्षेत्रों में, पूर्वी आनह्वेइ में और मध्य हुपे में क्वोमिन्ताङ अपने हमले जारी रखेगी, तथा हमारी सशस्त्र सेनाओं को चाहिए कि दृढ़ता के साथ उसे परास्त कर दें। सभी आधार-क्षेत्रों को चाहिए कि वे केन्द्रीय कमेटी के गत वर्ष २५ दिसम्बर के निर्देश[५] का सख्ती से पालन करें, पार्टी के भीतर कार्यनीति-सम्बन्धी शिक्षा के कार्य में जोर लगाएं तथा उग्रवामपंथी विचारों को सुधार लें, ताकि हम जापान-विरोधी जनवादी आधार-क्षेत्रों को लम्बे अरसे तक अडिग रूप से बनाए रख सकें। समूचे देश में, जिसमें निस्सन्देह सभी आधार-क्षेत्र शामिल हैं, हमें इस गलत मूल्यांकन का कि क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच अन्तिम दरार पड़ चुकी है या शीघ्र ही पड़ने वाली है, और इस मूल्यांकन से पैदा होने वाले बहुत से गलत विचारों का विरोध करना चाहिए।

नोट

[१] दूसरे कम्युनिस्ट-विरोधी हमले के विस्तृत विवरण के लिए देखिए: "क्वोमिन्ताङ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमेटी के ग्यारहवें पूर्ण अधिवेशन और तीसरी जन राजनीतिक परिषद के दूसरे अधिवेशन के बारे में एक टिप्पणी" ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ ३)।

[२] यह १७ जनवरी १९४१ को च्याङ काई-शेक द्वारा राष्ट्रीय सरकार की फौजी परिषद की ओर से दिया गया प्रतिक्रान्तिकारी आदेश था, जो नई चौथी सेना को भंग करने के लिए दिया गया था। विस्तृत विवरण के लिए देखिए इसी ग्रन्थ में "दक्षिणी आनह्वेइ घटना के बारे में आदेश और वक्तव्य" नामक रचना में "वक्तव्य" वाला भाग।

[३] ६ मार्च १९४१ को च्याङ काई-शेक ने जन राजनीतिक परिषद की एक मीटिंग में एक कम्युनिस्ट-विरोधी भाषण दिया। अपना वही पुराना राग अलापते हुए कि "समूचे राजनीतिक व फौजी मामलों का निर्देशन" "एकीकृत" रूप से किया जाना चाहिए, उसने ऐलान किया कि दुश्मन के पृष्ठभाग में जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता के संगठनों को तोड़ दिया जाए तथा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली जनता की सशस्त्र सैन्य-शक्तियों को, उसके "आदेशों और योजनाओं" के अनुरूप "निर्दिष्ट क्षेत्रों में केन्द्रित कर दिया जाए"। उसी दिन, "जन राजनीतिक परिषद" ने, जिस पर क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों का प्रभुत्व मौजूद था, एक प्रस्ताव पास किया जिसमें च्याङ काई-शेक के कम्युनिस्ट-विरोधी और जन-विरोधी अपराधों की पैरवी की गई और जन राजनीतिक परिषद के कम्युनिस्ट सदस्यों पर, जिन्होंने दक्षिणी आनह्वेइ घटना के खिलाफ अपना विरोध प्रकट करने के लिए परिषद की मीटिंग में भाग लेने से इनकार किया था, भीषण प्रहार किया गया।

[४] "बारह मांगों" का पहला सैट, जिसे जन राजनीतिक परिषद के कम्युनिस्ट सदस्यों ने १५ फरवरी १९४१ को परिषद के अधिवेशन में पेश किया था, उन बारह मांगों की ही तरह था जिन्हें "दक्षिणी आनह्वेइ घटना के बारे में आदेश और वक्तव्य" में सूचीबद्ध किया गया था। दूसरा सैट २ मार्च १९४१ को जन राजनीतिक परिषद के कम्युनिस्ट सदस्यों ने च्याङ काई-शेक के सामने, परिषद के अधिवेशन में शामिल होने की शर्त के रूप में पेश किया था, तथा उसमें पेश की गई मांगें इस प्रकार थीं :

(१) समूचे देश में कम्युनिस्ट-विरोधी फौजी हमलों को फौरन बन्द कर दो।

(२) समूचे देश में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और तमाम जनवादी पार्टियों व ग्रुपों पर राजनीतिक ज़ुल्म ढाना बन्द करो, उनके कानूनी दर्जे को मान्यता दो तथा शीआन, छुङकिङ, क्वेइयाङ और अन्य स्थानों में गिरफ्तार किए गए उनके तमाम सदस्यों को रिहा करो।

(३) विभिन्न स्थानों में जिन किताब की दुकानों को बन्द कर दिया गया है उन पर से प्रतिबन्ध हटा लो तथा डाकखानों में जापान-विरोधी किताबों व अखबारों को जब्त करने के आदेश को रद्द कर दो।

(४) "नव चीन दैनिक" पर लगाई गई तमाम पाबन्दियां हटा लो।

(५) शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र के कानूनी दर्जे को मान्यता दो।

(६) दुश्मन के पृष्ठभाग में जापान-विरोधी जनवादी राजनीतिक सत्ता के संगठनों को मान्यता दो।

(७) मध्य, उत्तरी और उत्तर-पश्चिमी चीन के गैरिजन क्षेत्रों के विभाजन में यथापूर्व स्थिति बनाए रखो।

(८) कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली सशस्त्र सेनाओं को अठारहवीं ग्रुप-सेना के अलावा एक अन्य ग्रुप-सेना का निर्माण करने दो और इस प्रकार कुल छै फौजी कोर बनने दो।

(९) दक्षिणी आनह्वेइ घटना के दौरान गिरफ्तार किए गए सभी कार्यकर्ताओं को रिहा कर दो तथा इस घटना में मरने वालों के परिवारों को सहायता देने के लिए धन दो।

(१०) दक्षिणी आनह्वेइ घटना के दौरान गिरफ्तार किए गए तमाम सिपाहियों को रिहा कर दो और उनके सभी हथियार उन्हें लौटा दो।

(११) सभी पार्टियों व ग्रुपों की एक संयुक्त कमेटी बनाओ, जिसमें हर पार्टी व ग्रुप का एक प्रतिनिधि हो, तथा क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के प्रतिनिधियों को इस कमेटी का क्रमशः अध्यक्ष और उपाध्यक्ष नियुक्त कर दो।

(१२) जन राजनीतिक परिषद के अध्यक्ष-मण्डल में कम्युनिस्ट प्रतिनिधियों को शामिल करो।

[१] २५ दिसम्बर का निर्देश "नीति के बारे में" शीर्षक लेख के रूप में इसी ग्रन्थ में शामिल किया गया है।

दूसरे कम्युनिस्ट-विरोधी हमले को विफल कर दिए जाने के बारे में निष्कर्ष*

८ मई १९४१

जैसा कि केन्द्रीय कमेटी के १८ मार्च के निर्देश में बताया गया है, दूसरा कम्युनिस्ट-विरोधी हमला खत्म हो गया है। इसके बाद देश-विदेश की नई परिस्थितियों में जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के जारी रहने की स्थिति आ गई है। इन नई परिस्थितियों में ये नए तत्व जुड़ गए हैं : साम्राज्यवादी युद्ध का विस्तार, अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का उभार, सोवियत संघ और जापान के बीच की तटस्थता-सन्धि,[1] क्वोमिन्ताङ के दूसरे कम्युनिस्ट-विरोधी हमले की हार और इसके फलस्वरूप क्वोमिन्ताङ की राजनीतिक हैसियत में गिरावट तथा कम्युनिस्ट पार्टी की राजनीतिक हैसियत में उन्नति, और इसके अलावा चीन के खिलाफ एक नए व्यापक पैमाने के आक्रमण के लिए जापान द्वारा हाल ही में की गई तैयारियां। हमारे लिए यह निहायत जरूरी है कि हम जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध को अविचल रूप से जारी रखने में देशभर की जनता को एकताबद्ध करने के लिए, और बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े पूंजी-

* यह अन्तःपार्टी निर्देश कामरेड माओ त्सेतुङ ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के लिए लिखा था।

पतियों के वर्ग द्वारा आत्मसमर्पण के खतरे पर तथा उनकी कम्युनिस्ट-विरोधी उल्टी धारा पर लगातार कारगर रूप से काबू पाने के लिए, हाल के कम्युनिस्ट-विरोधी हमले के खिलाफ हमारी पार्टी के वीरतापूर्ण व विजयपूर्ण संघर्ष में हासिल किए गए सबकों का अध्ययन करें और उनसे सीखें।

१. चीन के दो मुख्य अन्तरविरोधों में से चीन और जापान के बीच का राष्ट्रीय अन्तरविरोध अब भी बुनियादी अन्तरविरोध बना हुआ है और चीन का अन्दरूनी वर्ग-अन्तरविरोध अब भी अधीनस्थ अन्तरविरोध बना हुआ है। यह तथ्य कि एक राष्ट्रीय दुश्मन हमारे देश के भीतर काफी दूर तक घुस आया है, हमारी हर चीज में निर्णायक भूमिका अदा करता है। जब तक चीन और जापान के बीच का अन्तरविरोध तीव्र रहेगा, तब तक बड़े जमींदारों का वर्ग व बड़े पूंजीपतियों का वर्ग, चाहे वे पूरे के पूरे गद्दारी व आत्मसमर्पण क्यों न कर बैठें, १९२७ की १२ अप्रैल की घटना[1] और २१ मई की घटना[2] की पुनरावृत्ति करके १९२७ जैसी परिस्थिति हरगिज पैदा नहीं कर सकेंगे। कुछ कामरेडों के इस मूल्यांकन को वस्तुगत तथ्यों ने गलत साबित कर दिया है कि पहला कम्युनिस्ट-विरोधी हमला[3] २१ मई की घटना की पुनरावृत्ति है और फिर दूसरा कम्युनिस्ट-विरोधी हमला भी १२ अप्रैल की घटना व २१ मई की घटना की ही पुनरावृत्ति है। इन कामरेडों से यह गलती इसलिए हुई क्योंकि वे इस बात को भूल बैठे कि राष्ट्रीय अन्तरविरोध बुनियादी अन्तरविरोध है।

२. ऐसी परिस्थिति में, बरतानिया-परस्त व अमरीका-परस्त बड़े जमींदारों का वर्ग तथा बड़े पूंजीपतियों का वर्ग, जो क्वोमिन्ताङ

सरकार की सारी नीति का निर्देशन करते हैं, अब भी दुरंगे चरित्र वाले वर्ग बने हुए हैं। एक ओर तो वे जापान के विरुद्ध खड़े होते हैं और दूसरी ओर कम्युनिस्ट पार्टी तथा व्यापक जनता का, जिसका प्रतिनिधित्व कम्युनिस्ट पार्टी करती है, विरोध करते हैं। और उनके जापान-प्रतिरोध तथा कम्युनिज्म-विरोध का भी अपना-अपना दुरंगा चरित्र है। जहां तक उनके जापान-प्रतिरोध का ताल्लुक है, वे जापान के विरुद्ध खड़े तो होते हैं, लेकिन उसके खिलाफ युद्ध को सरगरमी के साथ नहीं चलाते, वाङ चिङ-वेइ और दूसरे गद्दारों का सक्रियता के साथ विरोध नहीं करते, और यहां तक कि कभी-कभी जापान के शान्ति-दूतों के साथ सांठगांठ भी कर बैठते हैं। जहां तक उनके कम्युनिज्म-विरोध का ताल्लुक है, वे कम्युनिस्ट पार्टी का विरोध तो करते हैं, और यहां तक आगे बढ़ गए हैं कि उन्होंने दक्षिणी आनह्वेइ घटना भी रच डाली और १७ जनवरी का आदेश भी जारी कर दिया, लेकिन इसके साथ ही वे कम्युनिस्ट पार्टी से मुकम्मिल फूट भी नहीं चाहते और अब भी उसके प्रति एक तरफ मारने तथा दूसरी तरफ पुचकारने की नीति अपनाते हैं। हाल ही में हुए कम्युनिस्ट-विरोधी हमले ने फिर एक बार इन तथ्यों को सही साबित कर दिया है। चीन की राजनीति के बेहद पेचीदा होने की वजह से यह आवश्यक है कि हमारे कामरेड इस पर अत्यन्त गहराई से ध्यान दें। चूंकि बरतानिया-परस्त व अमरीका-परस्त बड़े जमींदारों का वर्ग व बड़े पूंजीपतियों का वर्ग अब भी जापान का प्रतिरोध कर रहे हैं तथा हमारी पार्टी के प्रति अब भी एक तरफ मारने तथा दूसरी तरफ पुचकारने की नीति अपना रहे हैं, इसलिए हमारी पार्टी की नीति यह है कि "हम उनसे वैसा ही बरताव करेंगे, जैसा कि वे

हमसे करते हैं",[१] यानी अगर आप मारते हैं तो हम भी मारेंगे और अगर आप पुचकारते हैं तो हम भी पुचकारेंगे। यही है क्रान्तिकारी दोहरी नीति। जब तक बड़े जमींदारों का वर्ग और बड़े पूंजीपतियों का वर्ग पूरी तरह गद्दार नहीं बन जाते, तब तक हमारी यह नीति नहीं बदलेगी।

३. क्वोमिन्ताङ की कम्युनिस्ट-विरोधी नीति का सामना करने के लिए कार्यनीतियों के एक सम्पूर्ण समूह की जरूरत है और असावधानी या लापरवाही कतई नहीं बरतनी चाहिए। बड़े जमींदारों का वर्ग व बड़े पूंजीपतियों का वर्ग, जिनका प्रतिनिधित्व च्याङ काई-शेक करता है, जनता की क्रान्तिकारी शक्तियों के प्रति जो दुश्मनी व क्रूरता बरतते हैं वह न सिर्फ दस वर्ष के कम्युनिस्ट-विरोधी युद्ध से साबित हो गई है, बल्कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के दौरान हुए दो कम्युनिस्ट-विरोधी हमलों से, खासकर दूसरे कम्युनिस्ट-विरोधी हमले के दौरान हुई दक्षिणी आनह्वेइ घटना से पूरी तरह साबित हो गई है। जनता की कोई भी क्रान्तिकारी शक्ति अगर च्याङ काई-शेक द्वारा नष्ट किए जाने से बचना चाहती है और इस बात के लिए च्याङ काई-शेक को मजबूर करना चाहती है कि वह उसके अस्तित्व को माने, तो उसके सामने च्याङ काई-शेक की प्रतिक्रान्तिकारी नीतियों के खिलाफ शठे-शाठ्यम संघर्ष चलाने के अलावा और कोई चारा नहीं है। हाल के कम्युनिस्ट-विरोधी हमले के दौरान कामरेड श्याङ इङ के अवसरवाद[२] के कारण हुई हार से सारी पार्टी को गम्भीर सबक सीखना चाहिए। लेकिन संघर्ष को न्यायोचित आधार पर, अपना फायदा देखते हुए और संयत रूप से चलाया जाना चाहिए; अगर इन तीन बातों में से

किसी भी एक बात की कमी रही, तो हमें नुकसान उठाना पड़ेगा।

४. क्वोमिन्ताङ कट्टरतावादियों के खिलाफ संघर्ष में बड़े दलाल-पूंजीपतियों के वर्ग तथा उस राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के बीच जिसके चरित्र में दलालपन नहीं है या कुछ कम है, भेद किया जाना चाहिए और घोर प्रतिक्रियावादी बड़े जमींदारों तथा जागृत शरीफजादों व मामूली जमींदारों के बीच भेद किया जाना चाहिए। यह मध्यमार्गियों को अपने पक्ष में करने की हमारी पार्टी की कोशिशों और "तीन-तिहाई व्यवस्था" के आधार पर राजनीतिक सत्ता कायम करने की सैद्धान्तिक बुनियाद है, और इस पर पिछले साल मार्च से केन्द्रीय कमेटी बार-बार जोर देती रही है। इसके सही होने की हाल के कम्युनिस्ट-विरोधी हमले में फिर एक बार पुष्टि हो गई है। दक्षिणी आनह्वेइ घटना के पहले हमारे द्वारा अपनाया गया दृष्टि-बिन्दु, जिसे ९ नवम्बर के तार[३] में जाहिर कर दिया गया है, इस घटना के बाद हमारे द्वारा राजनीतिक प्रत्याक्रमण की ओर मुड़ जाने के लिए बिलकुल जरूरी था; वरना हम मध्यमार्गियों को अपने पक्ष में न कर पाते। क्योंकि, अगर मध्यमार्गियों को बार-बार अपने अनुभवों से शिक्षा न मिली होती, तो वे यह नहीं समझ पाते कि हमारी पार्टी को क्वोमिन्ताङ कट्टरतावादियों के खिलाफ डटकर संघर्ष चलाने की क्यों जरूरत पड़ती है, एकता को महज संघर्ष के ही जरिए क्यों हासिल किया जा सकता है और संघर्ष का परित्याग करने से किसी भी किस्म की एकता क्यों हासिल नहीं की जा सकती। हालांकि क्षेत्रीय प्रभुत्वशाली ग्रुप के नेतृत्वकारी तत्व बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े पूंजीपतियों के वर्ग के लोग हैं, फिर भी उनके और केन्द्रीय सरकार पर नियंत्रण रखने वाले बड़े जमींदारों व बड़े पूंजी-

पतियों के बीच अन्तरविरोध होने की वजह से उन्हें आम तौर पर मध्यमार्गी ही समझा जाना चाहिए और उनके साथ भी वैसा ही बरताव किया जाना चाहिए। येन शी-शान ने, जो पहले कम्युनिस्ट-विरोधी हमले में सबसे ज्यादा सरगरम रहा, दूसरे कम्युनिस्ट-विरोधी हमले में मध्यमार्गी दृष्टिबिन्दु अपनाया ; हालांकि क्वाङशी गुट, जिसने पहले कम्युनिस्ट-विरोधी हमले में मध्यमार्गी दृष्टिबिन्दु अपनाया था, दूसरे हमले में कम्युनिस्ट-विरोधी पक्ष में जा पहुंचा, फिर भी उसके और च्याङ काई-शेक गुट के बीच अन्तरविरोध मौजूद है तथा उसे और च्याङ काई-शेक गुट को एक जैसा नहीं समझा जाना चाहिए। बाकी क्षेत्रीय प्रभुत्वशाली ग्रुपों के बारे में तो यह बात और भी ज्यादा लागू होती है। मगर हमारे कामरेडों में बहुत से लोग आज भी जमींदार वर्ग व पूंजीपति वर्ग के विभिन्न ग्रुपों को एक जैसा समझते हैं, मानो दक्षिणी आनह्वेइ घटना के बाद समूचा जमींदार वर्ग और समूचा पूंजीपति वर्ग गद्दार बन गए हों ; यह चीन की पेचीदा राजनीति को सरल समझना है। अगर हमने इस दृष्टिकोण को अपनाया होता और समूचे जमींदार वर्ग और समूचे पूंजीपति वर्ग को क्वोमिन्ताङ कट्टरतावादियों जैसा ही समझा होता, तो हम अपने को अलगाव की स्थिति में डाल देते। यह जानना जरूरी है कि चीनी समाज एक ऐसा समाज है जिसका दरमियाना हिस्सा बड़ा है और दोनों सिरे छोटे हैं,* तथा अगर कम्युनिस्ट पार्टी मध्यवर्ती वर्गों के जन-समुदाय को अपने पक्ष में नहीं कर सकी और उनसे अपनी स्थिति के मुताबिक उचित भूमिका अदा नहीं करवा सकी, तो वह चीन की समस्याओं को हल नहीं कर पाएगी।

५. चूंकि कुछ कामरेड इस बात के बारे में डावांडोल हो गए

हैं कि चीन और जापान के बीच का अन्तरविरोध बुनियादी अन्तर-विरोध है, तथा इसके फलस्वरूप उन्होंने चीन के वर्ग-सम्बन्धों का गलत मूल्यांकन किया है, इसलिए वे कभी-कभी पार्टी की नीति के बारे में भी डावांडोल हो उठते हैं। अपने इस मूल्यांकन के आधार पर कि दक्षिणी आनह्वेइ घटना १२ अप्रैल और २१ मई की घटनाओं की पुनरावृत्ति है, ये कामरेड यह सोचते मालूम पड़ते हैं कि पिछले साल २५ दिसम्बर को केन्द्रीय कमेटी द्वारा जारी किया गया नीति-निर्देश अब लागू नहीं होता या कम से कम पूरे तौर पर लागू नहीं होता। उनका यह मत है कि हमारे लिए अब ऐसी राजसत्ता की आवश्यकता नहीं रही जिसमें वे सभी लोग शामिल हों जो प्रतिरोध-युद्ध और जनवाद का पक्षपोषण करते हैं, बल्कि केवल मजदूरों, किसानों व शहरी निम्न-पूंजीपति वर्ग की तथाकथित राजसत्ता की ही आवश्यकता है। उनका यह मत है कि हमारे लिए अब जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के काल की संयुक्त मोर्चे की नीति की आवश्यकता नहीं रही, बल्कि दस वर्ष के गृहयुद्ध काल की सी भूमि-क्रान्ति की नीति की आवश्यकता है। इन कामरेडों के दिमाग में पार्टी की सही नीति कम से कम अस्थाई रूप से अस्पष्ट हो गई है।

६. इन कामरेडों को जब पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का यह आदेश मिला कि वे क्वोमिन्ताङ द्वारा डाली जाने वाली सम्भावित फूट, यानी सबसे बुरे सम्भावित घटना-विकास का सामना करने के लिए तैयार हो जाएं, तो वे अन्य सम्भावनाओं को भूल बैठे। वे यह नहीं समझते कि जहां एक तरफ सबसे बुरी सम्भावना के लिए तैयार रहना अत्यन्त आवश्यक है, वहां इसका मतलब यह नहीं कि अनुकूल सम्भा-वनाओं की अवहेलना की जाए ; इसके विपरीत सबसे बुरी सम्भावना

के लिए तैयार हो जाना ही अनुकूल सम्भावनाएं पैदा करने और उन्हें यथार्थता में बदल देने की एक शर्त है। इस बार, चूंकि हम क्वोमिन्ताङ द्वारा डाली जाने वाली फूट का सामना करने के लिए पूरी तरह तैयार रहे, इसलिए क्वोमिन्ताङ को आसानी से फूट डालने की हिम्मत नहीं हुई।

७. इससे भी ज्यादा तादाद ऐसे कामरेडों की है जो राष्ट्रीय संघर्ष और वर्ग-संघर्ष की एकता को समझने में असमर्थ रहते हैं, संयुक्त मोर्चे से सम्बन्धित नीति और वर्ग-नीति को समझने में असमर्थ रहते हैं, तथा फलस्वरूप संयुक्त मोर्चे से सम्बन्धित शिक्षा और वर्ग-शिक्षा की एकता को समझने में असमर्थ रहते हैं। उनका मत है कि दक्षिणी आनह्वेइ घटना के बाद, संयुक्त मोर्चे से सम्बन्धित शिक्षा से अलग वर्ग-शिक्षा पर खास जोर दिया जाना चाहिए। वे अब भी यह नहीं समझ पाते कि जापानी-आक्रमण-विरोधी युद्ध के पूरे काल में देश की उच्च व मध्यम श्रेणियों के उन तमाम लोगों के प्रति जो अब भी जापान का मुकाबला कर रहे हैं, चाहे वे बड़े जमींदारों के वर्ग व बड़े पूंजीपतियों के वर्ग में हों अथवा मध्यवर्ती वर्गों में, पार्टी की यही सम्पूर्ण नीति है – यानी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति (एक दोहरी नीति), जिसके एकता और संघर्ष दो पहलू हैं। यहां तक कि कठपुतली सेनाओं, गद्दारों और जापान-परस्त तत्वों पर भी, सिर्फ उन लोगों को छोड़कर जो अपने कुकर्मों पर हरगिज पछतावा नहीं करते और जिन्हें दृढ़तापूर्वक कुचल दिया जाना चाहिए, यही दोहरी नीति लागू की जानी चाहिए। हमारी पार्टी अपने सदस्यों और आम जनता को जो शिक्षा देती है उसमें भी ये दोनों पहलू सम्मिलित हैं, अर्थात वह सर्वहारा वर्ग तथा किसान

वर्ग और निम्न-पूंजीपति वर्ग के अन्य हिस्सों को यह सिखाती है कि वे जापान का मुकाबला करने के लिए पूंजीपति वर्ग और जमींदार वर्ग की विभिन्न श्रेणियों के साथ भिन्न-भिन्न तरीकों से एकता कैसे कायम करें, और साथ ही उनके खिलाफ उसी दर्जे तक संघर्ष कैसे चलाएं जिस दर्जे तक वे सुलह-समझौता करते हैं, डावांडोल होते हैं और कम्युनिस्टों का विरोध करते हैं। संयुक्त मोर्चे से सम्बन्धित नीति वास्तव में वर्ग-नीति ही है और ये दोनों अविभाज्य हैं। जो लोग इस बात को साफ तौर पर नहीं समझ पाते, वे अन्य अनेक समस्याओं को भी साफ तौर पर नहीं समझ पाएंगे।

८. कुछ अन्य कामरेड ऐसे भी हैं जो इस बात को नहीं समझते कि शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र और उत्तरी व मध्य चीन में स्थित जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों का सामाजिक स्वरूप नव-जनवादी बन चुका है। इस बात को परखने के लिए कि किसी क्षेत्र का सामाजिक स्वरूप नव-जनवादी है या नहीं, मुख्य कसौटी यह है कि वहां की राजनीतिक सत्ता में व्यापक जन-समुदाय के प्रतिनिधि शामिल हैं अथवा नहीं और इस राजनीतिक सत्ता का नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी के हाथ में है अथवा नहीं। इसलिए कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलने वाली संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक सत्ता ही नव-जनवादी समाज की मुख्य निशानी है। कुछ लोगों का विचार है कि नव-जनवाद को केवल तभी कार्यान्वित समझा जा सकता है जब वहां दस वर्ष के गृहयुद्ध काल की सी भूमि-क्रान्ति चलाई गई हो ; लेकिन यह विचार गलत है। इस समय आधार-क्षेत्रों की राजनीतिक व्यवस्था उस समूची जनता के संयुक्त मोर्चे की राजनीतिक व्यवस्था है जो जापान-प्रतिरोध और जनवाद का

समर्थन करती है, उनकी अर्थव्यवस्था एक ऐसी अर्थव्यवस्था है जिसमें अर्ध-औपनिवेशिक व अर्ध-सामन्ती तत्वों को बुनियादी तौर पर खत्म कर दिया गया है, तथा उनकी संस्कृति व्यापक जन-समुदाय की साम्राज्यवाद-विरोधी व सामन्तवाद-विरोधी संस्कृति है। इसलिए, चाहे राजनीति की दृष्टि से देखा जाए अथवा अर्थ-व्यवस्था या संस्कृति की दृष्टि से, वे जापान-विरोधी आधार-क्षेत्र जिनमें केवल लगान व सूद कम करने की नीति ही अमल में लाई गई है, और शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र जिसमें भूमि-क्रान्ति मुकम्मिल तौर पर पूरी हो चुकी है, इन दोनों का स्वरूप नव-जनवादी है। जब जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों की मिसाल को देशभर में लागू कर दिया जाएगा, तो पूरा चीन एक नव-जनवादी गणराज्य बन जाएगा।

नोट

[१] यहां १३ अप्रैल १९४१ को सोवियत संघ और जापान के बीच हुई उस तटस्थता-सन्धि का उल्लेख किया गया है जिसके जरिए सोवियत संघ की पूर्वी सीमा पर शान्ति को सुदृढ़ बनाया गया और इस प्रकार सोवियत संघ पर मुश्तरका हमला करने की जर्मनी, इटली व जापान की साजिश को धूल में मिला दिया गया। यह सोवियत संघ की शान्तिपूर्ण विदेश नीति की एक भारी विजय साबित हुई।

[२] १२ अप्रैल की घटना, १२ अप्रैल १९२७ को शांघाई में च्याङ काई-शेक द्वारा किए गए प्रतिक्रान्तिकारी राजविप्लव की घटना थी, जिसमें बड़ी संख्या में कम्युनिस्टों तथा क्रान्तिकारी मजदूरों, किसानों व बुद्धिजीवियों को कत्ल कर

दिया गया। देखिए : "हुनान के किसान आन्दोलन की जांच-पड़ताल की रिपोर्ट" शीर्षक रचना का नोट ६ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

[३] देखिए : "चिङकाङशान पहाड़ों में संघर्ष" शीर्षक रचना का नोट १७ ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ १)।

[४] पहला कम्युनिस्ट-विरोधी हमला च्याङ काई-शेक द्वारा १९३९ की सरदियों से १९४० के वसन्त तक चलाया गया था। देखिए : "तमाम जापान-विरोधी शक्तियों को एकताबद्ध करो और कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के खिलाफ संघर्ष करो" शीर्षक रचना का नोट १०।

[५] "कनफ्यूशियस का मध्यस्थता का सिद्धान्त" नामक पुस्तक के १३वें अध्याय पर सुङ वंश के दार्शनिक चू शी (११३०-१२०० ईसवी) की टीका से उद्धृत।

[६] देखिए : "जापान-विरोधी शक्तियों का खुलकर विकास करो और कम्युनिस्ट-विरोधी कट्टरतावादियों के हमलों का प्रतिरोध करो" नामक रचना का शीर्षक-नोट।

[७] यह तार ९ नवम्बर १९४० को १८वीं ग्रुप-सेना (आठवीं राह सेना – अनु०) के कमाण्डर-इन-चीफ चू तेह और डिप्टी कमाण्डर-इन-चीफ फङ त-ह्वाए तथा नई चौथी सेना के कमाण्डर ये थिङ और उप-कमाण्डर श्याङ इङ द्वारा क्वोमिन्ताङ के हो इङ-छिन और पाए छुङ-शी के १९ अक्तूबर १९४० के तार के जवाब में भेजा गया था। कम्युनिस्ट पार्टी पर हमला करने और जापान के सामने आत्म-समर्पण करने की क्वोमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों की साजिशों का पर्दाफाश करते हुए, उन्होंने अपने तार में हो इङ-छिन और पाए छुङ-शी के इस बेहूदा प्रस्ताव का खण्डन किया कि नई चौथी सेना और आठवीं राह सेना को पीली नदी के दक्षिण से पीली नदी के उत्तर में हट जाना चाहिए। लेकिन सम्पूर्ण स्थिति का खयाल रखते हुए जापान के खिलाफ एकता कायम रखने के लिए सुलह-समझौता करने के इरादे से उन्होंने याङत्सी नदी के दक्षिण में तैनात नई चौथी सेना को याङत्सी के उत्तर में हटा लेना मंजूर कर लिया और इसके साथ ही क्वोमिन्ताङ और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच मौजूद अनेक महत्वपूर्ण विवादास्पद प्रश्नों का हल करने की मांग पेश की। इस तार ने मध्यमार्गियों की सहानुभूति प्राप्त की और च्याङ काई-शेक को अलगाव की स्थिति में डाल दिया।

* चीनी समाज के बारे में कामरेड माओ त्सेतुङ की इस उक्ति का तात्पर्य यह है कि क्रान्ति का नेतृत्व करने वाला चीनी औद्योगिक सर्वहारा वर्ग चीन की पूरी आबादी की दृष्टि से अल्पसंख्या में है, और इसी तरह प्रतिक्रियावादी बड़े जमींदारों का वर्ग और बड़े पूंजीपतियों का वर्ग भी अल्पसंख्या में हैं। देखिए : "शेनशी-कानसू-निङश्या सीमान्त क्षेत्र की प्रतिनिधि-सभा में भाषण" ("माओ त्सेतुङ की संकलित रचनाएं", ग्रन्थ ३)।

毛泽东选集
第二卷

外文出版社出版（北京）
1973年（50开）第一版
编号：（印地）1050—2113
00200
1—H—888Pc